विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष १६ } नवम्बर, १६४३ ई०] कात्तिक २००० [दयानन्दाब्द १२० { अङ्क ६

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् मयिवर्चो अथो यशोऽथो यज्ञस्य यत् पयः ।
परमेष्ठी प्रजापतिर्दिविद्यामिवदंहतु ॥ (सामवेद)

शब्दार्थ—(परमेष्ठी प्रजापतिः) सारी प्रजा का स्वामी परमेश्वर (दिवि द्यामिव) आकाश मे सूर्य के समान (मयि) मुझ में (वर्चः) उत्तम तेज (अथो यशः) और कीर्ति (अथो यज्ञस्य यत् पयः) तथा यज्ञ का जो रस—यथार्थ यज्ञमय स्वार्थ त्याग और परोपकार की भावना इनको (दृंहतु) दृढ़ करे ।

विनय—हे परमेश्वर । आप सारे ससार के स्वामी और रक्षक हैं। आपने अपनी अनन्त शक्ति से सूर्यादि समस्त अद्भुत वस्तुओं को रचकर उन्हें नियम में रखा हुआ है। आप शक्ति के भण्डार हैं अत हम आपसे शक्ति की वृद्धि के लिये प्रार्थना करते हैं। आप सर्वथा पवित्र हैं इसी कारण आपके यश का सर्वत्र विस्तार हो रहा है हमें भी शक्ति दीजिये कि सदा उत्तम कर्म करते हुए हम यशस्वी बनें। आप यज्ञ स्वरूप हैं हमारे अन्दर भी यज्ञ की पवित्र भावना—स्वार्थ त्याग तथा परोपकार—सदा दृढ़ रहे ऐसी शक्ति आप हमें प्रदान करें।

वेदोपदेश—

तप की महिमा

(१) ओं यदग्ने तपसा तप उपतप्यामहे तपः। प्रिया श्रुतस्य भूयास्मा युष्मन्तः सुमेधसः। (अथर्व ७ । ६१ । १)

(२) ओ३म् अग्ने तपस्तप्यामह उप तप्यामहे तपः। श्रुतानि शृण्वन्तो वयमायुष्मन्तः सुमेधसः। (अ० ७ । ६१ । २)

(३) ओं ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वरामरत्। (अ० ११ । ५ । १६)

शब्दार्थ —(१) (अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर हम (तपसा) ज्ञान तथा मनन और एकाग्रता द्वारा—"तप-पर्यालोचने" (यत् तप) जो तप किया जाता है (तप उप तप्यामहे) उस तप को भली भाँति करते हैं जिससे हम (श्रुतस्य प्रिया.) श्रवण किये हुए वेद तथा ब्रह्मज्ञान के प्यारे (आयुष्मन्त) दीर्घायु वाले और (सुमेधस) उत्तम विवेक सम्पन्न बुद्धि से युक्त (भूयास्म) होवें।

(२) (अग्ने) हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर हम (यत् तप तप्यामहे) जो चित्त एकाग्रतारूप तप करते हैं (तप उप तप्यामहे) और उस तप को तेरी समीपता का अनुभव करते हुए करते हैं उसके प्रभाव से हम (श्रुतानि शृण्वन्त.) श्रुति वाक्यों का श्रवण करते हुए (आयुष्मन्त) दीर्घायु और (सुमेधस.) उत्तम मेधा बुद्धि सम्पन्न हों।

(३) (देवा) सत्यनिष्ठ ज्ञानी लोग (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य और (तपसा) तप से (मृत्युम् उपाघ्नत) मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं। (ह) निश्चय से (इन्द्र.) आत्मा (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य के द्वारा (देवेभ्य.) इन्द्रियों के लिये (स्व आभरत्) सुख सम्पादन करता है।

वेद के इन मन्त्रों में तप की महिमा का बड़ी उत्तमता से प्रतिपादन किया गया है। तप के अनुष्ठान से उत्तम ज्ञान दीर्घ आयु और उत्तम विवेक शालिनी बुद्धि की प्राप्ति हो सकती है तथा मृत्यु पर भी विजय प्राप्त किया जा सकता है ऐसा

इन वेद मन्त्रों में बताया गया है। जिस तप की इतनी महिमा वेदादि सत्य शास्त्रों में गाई गई है उसके अर्थ को भली भाँति समझ कर उसे आचरण मे लाना प्रत्येक आर्य नर नारी का कर्तव्य है। साधारणतया सर्दी गर्मी को सहना यही तप का अर्थ समझा जाता है किन्तु यह तो तप का एक छोटा सा अङ्ग है 'द्वन्द्व सहिष्णुत्व तप' ऐसा योग दर्शन के भाष्य मे महर्षि व्यास ने कहा है जिसका तात्पर्य यह है कि सर्दी गर्मी, सुख दु ख, मान अपमान जय पराजय, शोक हर्ष इत्यादि द्वन्द्वों को सहन करना, प्रत्येक अवस्था मे समानता प्रदर्शित करना चित्त में विक्षोभ न उत्पन्न होने देना यह तप है। तैत्तिरीय ग्य मे ऋत तप सत्य तप श्रुत तप शान्त तप, शमस्तप, दमस्तप दान तप यज्ञस्तप इत्यादि रूप से ऋत अर्थात् वेद ज्ञान प्राप्त करना, सत्य के व्रत का पूर्णतया पालन करना, मन तथा इन्द्रियों को अपने अधीन रखकर सदा शान्त रखना, दान देना यज्ञ करना इत्यादि तप के अनेक भेद हैं। ऐसा बताया गया है। वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तप परमिहोच्यते।" (मनु) अर्थात् ब्राह्मणों के लिये वेदों का अच्छी प्रकार स्वाध्याय और प्रवचन द्वारा अभ्यास करना बड़ा भारी तप है ऐसा मनु महाराज ने अपने धर्म शास्त्र मे कहा है। 'मनसश्चेन्द्रियाणाञ्च ऐकाग्र्य तप उच्यते॥' यह आर्ष वाक्य सायणाचार्यादि वेद भाष्यकारों ने इस वेद मन्त्र के भाष्य मे उद्धृत किया है जिसका अर्थ यह है कि मन और इन्द्रियों की एकाग्रता को तप कहते हैं तप पर्यालोचने इस धातु पाठ में दिये अर्थ से भी तप के अन्दर वेदादि शास्त्रों तथा आत्मा परमात्मा आदि गूढ़ तत्वों के मनन और बार २ चिन्तन का भाव आता है। वेदों उपनिषदों तथा मनुस्मृत्यादि के उपर्युक्त वचनों के आधार पर योगिराज श्री कृष्ण महाराज ने गीता के १७ वें अध्याय में जो तप के ३ भेद शारीरिक वाचिक और मानसिक बताते हुए उनको निम्न श्लोकों द्वारा अत्युत्तम व्याख्या की है वह विशेष रूप से मनन करने योग्य है।

देव द्विज गुरुप्राज्ञ पूजन शौचमार्जवम्। ब्रह्मचर्यमहिंसाच शारीर तप उच्यते॥
(गी० १७)

अनुद्वेग कर वाक्य, सत्य प्रियहित च यत्। स्वाध्यायाभ्यसन चैव वाङ्मयतप उच्यते॥'
(गी० १७)

मन प्रसाद सौम्यत्व, मौनमात्मविनिग्रह। भाव संशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते॥

इन श्लोकों का अर्थ यह है कि सत्य निष्ठ विद्वानों, बुद्धि मानों, तथा

गुरु आदि मान्यों की पूजा पवित्रता सरलता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा यह शारीरिक तप है।

ऐसे वचन बोलना जो लोगों में उद्वेग वा घबराहट पैदा करने वाले न हों, जो सत्य, प्रिय और हितकारक हों तथा वेदादि शास्त्रों का स्वाध्याय करना यह वाणी का तप कहलाता है।

मन को सदा प्रसन्न रखना, सौम्यता (शान्तवृत्ति) मुनियों के समान आत्मा परमात्मादि सूक्ष्म विषयों का मनन, आत्मसंयम, भावों की पवित्रता यह मानसिक तप कहलाता है।

इस त्रिविध तप के फिर सात्विक राजस तामस भेद से तीन प्रकार बताते हुए श्री कृष्ण महाराज ने कहा है कि फल की इच्छा से रहित होकर तथा मन की प्रत्येक अवस्था में समता रखते हुए श्रद्धा पूर्वक जो तप किया जाता है वह सात्विक कहाता है। जो सत्कार मान तथा पूजा प्राप्त करने के उद्देश्य से दम्भ पूर्वक (लोगों को दिखाने के लिये तथा मक्कारी से) जो तप किया जाता है वह चंचल तथा अस्थिर तप राजस कहलाता है। जो मूर्खता पूर्वक केवल अपने को कष्ट पहुंचाते हुए अथवा अन्यों के नाश के लिये तप किया जाता है वह तामस कहा जाता है। ऐसे तप को राक्षस लोग स्वार्थ सिद्धि और जगत् के नाश के लिये किया करते हैं।

तप की इस उत्तम व्याख्या को स्मरण करते हुए प्रत्येक आर्य नरनारी तथा बालक बालिका का कर्तव्य है कि वह सात्विक तप का अधिक से अधिक अभ्यास करते हुए उत्तम ज्ञान, दीर्घ आयु तथा शुद्ध बुद्धि को प्राप्त करे। महर्षि दयानन्द जी जैसे महानुभावों को इस विषय में आदर्श रूप से स्वीकार करना चाहिये जिन्होंने इस आदर्श तप और ब्रह्मचर्य के बल से न केवल अद्भुत लोकोपकारक कार्य किये बल्कि हँसते २ मृत्यु का स्वागत करके परमेश्वर का स्मरण करते हुए मृत्यु पर विजय प्राप्त किया। परमेश्वर हम सब को आदर्श तपस्वी बनने का सामर्थ्य प्रदान करें।

धर्मदेव वि० वा०

अध्यात्म सुधा–

ध्यान का आनन्द

काल कैसे बीतता है ध्यान में मैं क्या कहूँ
ध्यान में भगवान के हर आन मैं तत्पर रहूँ।
शान्तिसुख की दायिनी, मंगलमयी की गोद है
बैठ उसमें भक्त सुत, पाता सदा आमोद है॥

कुछ नहीं मालूम होता, काल कितना जा रहा
बीत घण्टे जाय तो भी, है मजा ही आ रहा।
बस यही तो शान्ति का, आनन्द का शुभ मार्ग है
नित्य सुख की प्राप्ति का, नहि और कोई मार्ग है॥

कौन कहता है समय यह व्यर्थ इतना खो रहे
क्या पड़ा इस ध्यान में जो, मग्न इतना हो रहे।
सत्य कहता हू यही, मेरा परम विश्राम है
है यही स्वादिष्ठ भोजन, वेत बल आराम है॥

मैं बिना इसके नहीं आराम कुछ भी पा सकू
शान्तिसुख आनन्दके मैं, धामको नहि पा सकू।
और सारे काम पीछे, प्रथम यह मेरे लिये
मैं बिना इसके न जीऊ, प्राण यह मेरे लिये॥

लूट लो लौकिक सुखों को, मग्न हो दिन रात तुम
तृप्त होवोगे नहीं, आसक्त हो दिन रात तुम।
भक्ति अमृत किंतु शाश्वत, शान्ति दे सकता हमें
यह परम आनन्द सुख नित, तृप्ति दे सकता हमें।

लो चखो इसका मजा जो, शान्ति सुखको चाहते।
यह नशा सेवन करो जो, मस्त होना चाहते।
सब नशे हैं हानि कारक, बुद्धि बल के नाशकर
यह नशा पर शक्ति वर्धक, बुद्धि को करता प्रखर॥

भक्ति अमृत पान करके भक्त होते बेफ़िक्र
आंधियां तूफान कितने, भी चलें उनको न डर।
मस्त वे दिन रात रहते मात के गुण गान में
कर रहें शुभ काम में पर मन रहे भगवान में ॥

शान्ति का आनन्द का भण्डार उनके साथ जब
सर्व शक्ति निधान वह, भगवान उनका नाथ जब।
फिर उन्हें चिन्ता सतावे, किस तरह कोई यहा
देखते सबमे उसे वे, जो बनाता सब जहा ॥

"ध्रुव"

आर्यों की बहुत बड़ी कमी

(लेखक—श्री ब्रजनन्दनसिंह जी, प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना ।)

आर्य समाज में एक अत्यन्त खेदजनक दृश्य धार्मिक श्रद्धा की कमी है। आर्य समाज का साप्ताहिक सत्सग इसका जीवन है किन्तु इस मे प्रमुख समासद् भी प्राय अनुपस्थित पाये जाते हैं—यहा तक कि कहीं कहीं प्रधान और मन्त्री भी अपनी उपस्थिति में उदासीन देखे गये हैं । एक दृढ आर्य जिसने समाज की सेवा में अपना जीवन लगा दिया है उसकी सन्तान साप्ताहिक सत्सग में भी सम्मिलित होने मे आलस्य करती है, बल्कि समाज म पृथक् हो जाने में भी सकोच नहीं करती है। कितने खेद की बात है कि जिस धर्म प्रचार के लिए आर्यों का बहुत बहुत धन, समय तथा शक्ति लगती है उसकी अवहेलना स्वय सभासद् लोग तथा उन की सन्तान करें और परिणामस्वरूप प्रचार के प्रभाव को भी अपने जबरदस्त उदाहरण से बिगाड़ें। मेरी तुच्छ सम्मति में यह एक गम्भीर प्रश्न है जिस पर आर्य समाज के नेताओं का ध्यान देना चाहिए और इस रोग की निवृत्ति के लिए उन्हें यत्न करना चाहिये

विचारने से इस रोग का एक कारण यह जान पड़ता है कि आर्यसमाज मे तर्क की मात्रा आवश्यकता से अधिक हो गई है। यह ठीक है कि तर्क एक अच्छी चीज है पर चाहे अच्छी से अच्छी चीज क्यों न हो यदि वह आवश्यकता से अधिक मात्रामे व्यवहार में लाई जाय तो वह लाभ के बदले हानि करती है। प्राय आर्यसमाजियों का तर्क अपनी सीमा का अतिक्रमण कर कुतर्क की कोटि मे चला जाता है और उसका एक यह फल होता है कि उनके हृदय में श्रद्धा का अभाव हो जाता है। यद्यपि साप्ताहिक सत्सग का विधान स्वय महर्षि दयानन्द ने किया है पर स्वतन्त्रताभिमानी आर्य-समाजी कहता है कि जब साप्ताहिक सत्सग मे सत्यार्थ प्रकाश का पाठ ही सुनना है तो क्यों नहीं हम घर पर ही सत्यार्थ प्रकाश का स्वय पाठ करलें। वैयक्तिक उन्नति के अतिरिक्त सामाजिक उन्नति की भी आवश्यकता है इस बातपर वह विचार ही नहीं करता है । मुसलमान लोग जिस श्रद्धा से जुम्मा की नमाज मे सम्मिलित होते हैं यदि इसका उदाहरण उसके सामने रक्खा जाता है तो उसे वह अन्ध विश्वास कहता है। सामाजिक सगठन के लिये

उसकी कितनी आवश्यकता है इस पर वह ध्यान ही नहीं देता है।

यदि कोई आर्य-समाजी केवल तर्क का बहाना बना कर साप्ताहिक सत्सगों से बचना नहीं चाहता है —यदि वह सचमुच इस विषय पर विचार करके साप्ताहिक सत्सगों में सम्मिलित होना चाहता है तो इसके लिये उसे बहुत सामग्री मिल सकती है। वेद का वचन प्रत्येक आर्य के लिये मान्य होना ही चाहिये। वेद में लिखा है:—

सहृदयं साम्मनस्यमविद्वेषं कृणोमिवः।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सजात मिवाघ्न्या॥ (अथर्व ३।३०।१)

इसमें परमात्मा का आदेश है कि हम लोगों को एक दूसरे से ऐसा प्रेम करना चाहिये जैसा कि गौ अपने नवजात बच्चे के साथ करती है। यदि कोई आय इतना अधिक स्वतन्त्रता प्रेमी हो कि वह वेद के वाक्य पर भी अटल विश्वास करना पसन्द नहीं करे तो उसे भी यह मानना पडेगा कि जीवन के ध्येय आनन्द प्राप्ति के लिये प्रेम की नितान्त आवश्यकता है। प्रेम में ही सबसे बड़ा आनन्द है और जहा आनन्द है वहाँ प्रेम है। अर्थात् प्रेम और आनन्द पर्यायवाची हैं।

सृष्टि का ऐसा नियम प्रत्यक्ष होने के कारण इस वेदवाक्य को परमात्मा का आदेश मानने में किसी आस्तिक को आपत्ति नहीं हो सकती है। आनन्द के अभिलाषी को प्रेम का सचार करना अनिवार्य है। परमात्मा की पूजा की यथार्थ विधि भी यही है। उस सर्वशक्तिमान् को अपने लिये क्या चाहिये? कुछ नहीं। उसकी प्रसन्नता तो इसी में है कि हम लोग एक दूसरे से प्रेम पूर्वक व्यवहार करें ठीक जैसा कि एक पिता अपने पुत्रों के बीच चाहता है।

प्रेम के सचार के लिये पहली आवश्यक बात यह है कि समानता का भाव हृदय में उत्पन्न हो। ऊ च नीच, बडे छोटे के ख्याल को जब तक हृदय से हटाया नहीं जाय तब तक सच्चे प्रेम का आविर्भाव असम्भव है। क्यों कि ये दोनों विरोधी गुण हैं जो कभी एक साथ रह नहीं सकते हैं। समानता का भाव पैदा करने के लिये सबसे उत्तम स्थान धम मन्दिर ही है जहाँ कि धनी और निर्धन, सबल और निर्बल, विद्वान् और मूर्ख एक साथ बैठ कर परमात्मा से "शंयोरभिस्रवन्तुन" "धियो योन प्रचोदयात्" आदि मन्त्रों के द्वारा प्रार्थना करते हुए अनिवार्य रूप से अनुभव करेंगे कि हम लोग सब के सब उसी एक परम पिता की

सन्तान हैं और सबों को परस्पर के कल्याण के लिये यत्नशील होना चाहिये जैसा कि परिवार में एक भाई को दूसरे भाई के साथ बर्ताव करना चाहिये। यही भावना प्रेम भवन के निर्माण में आधार शिला के तुल्य है, यदि इस आधार शिला को पुष्ट नहीं किया जाय तो भवन कभी मजबूत नहीं बन सकेगा।

ऐसी दशा में क्या किसी तार्किक आर्य-समाजी को साप्ताहिक सत्संग के महत्त्व से इनकार हो सकता है यदि उसका मस्तिष्क कुतर्क के विष से दूषित नहीं हुआ हो? मेरी अल्प बुद्धि में तो ऐसी इनकारी असम्भव है। तर्क द्वारा उपर्युक्त वेद-मन्त्र का तथा साप्ताहिक सत्संग का महत्त्व और उपयोगिता सिद्ध हो जाने पर क्या प्रत्येक आर्य का यह कर्त्तव्य नहीं हो जाता है कि वह ईश्वर और महर्षि दयानन्द के आदेश का पालन करे? यदि नहीं पालन करे तो क्या वह पाप का भागी नहीं होता है? ये प्रश्न हैं जिनका उत्तर प्रत्येक आर्य को अपने हृदय में ढूंढना चाहिये। हमें पूरी आशा है कि तर्क द्वारा ही उनमें साप्ताहिक सत्संग के लिये श्रद्धा अवश्य उत्पन्न हो जायगी जिस पर उनकी तथा समाज की उन्नति निर्भर है। इसका प्रमाण मुसलमान भाइयों के बीच हम पाते हैं।

प्राचीन आर्य्यावर्त में विमान विद्या

(लेखक—श्री प० गंगाप्रसादजी एम० ए० प्रधान सार्वदेशिक आ० प्र० सभा)

ऋषि दयानन्द ने माना है कि वेदों में आध्यात्मिक शिक्षा के सिवाय भौतिक विज्ञान की शिक्षा भी है, पश्चिमी शिक्षा प्राप्त बहुत से लोग इसका उपहास किया करते हैं, परन्तु इस में कोई आश्चर्य्य की बात नहीं, मनुष्य के लिये जैसे आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता है वैसे ही भौतिक ज्ञान की भी है। शास्त्रों में धर्म का लक्षण इस प्रकार किया गया है—"यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्म" अर्थात् जिससे अभ्युदय वा सांसारिक सुख व उन्नति तथा निःश्रेयस वा मोक्ष दोनों की सिद्धि हो वह धर्म है। मोक्ष प्राप्ति के लिये आध्यात्मिक ज्ञान, और सांसारिक उन्नति के लिये भौतिक ज्ञान की आवश्यकता है। वेद में जो ईश्वरीय ज्ञान है दोनों ही का मूल पाया जाता है।

(१) यह ऋषि दयानन्द का कोई नया मत नहीं। सब प्राचीन आचार्य्यों का यही मत रहा है—कि वेदों में सब विद्याओं का बीज है उनका विस्तार अन्य शास्त्रों में है। इसलिये वे सब उपवेद, वेदांग और उपांग कहलाते हैं।

(२) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में ऋषि दयानन्द ने बहुत से वेद मन्त्र उदाहरण रूप से दिये हैं जिनसे वेदों में नौ विमान आदि अनेक भौतिक विद्याओं का बीज होना सिद्ध होता है। मैं इस लेख में केवल विमान विद्या के विषय में लिखूंगा। जिसका आधुनिक समय में विशेष महत्त्व है। योग्य वैदिक रिसर्च स्कालर श्री प्रियरत्न आर्ष ने महर्षि भारद्वाज कृत "यन्त्र सर्वस्व" के वैमानिक प्रकरण के आधार पर जिसका केवल छोटा सा भाग उनको प्राप्त हुआ "विमान शास्त्र" नामक पुस्तक लिखी है। इस से सिद्ध होता है कि महर्षि भरद्वाज कृत पूरे ग्रन्थ में जो अप्राप्य है विमान शास्त्र का वर्णन बहुत विस्तार से रहा होगा।

(३) वाल्मीकि रामायण से यह बात प्रसिद्ध है कि श्री रामचन्द्र लंका विजय के पश्चात् सीता, लक्ष्मण, हनुमान् आदि सहित रावण के पुष्पक विमान में बैठकर लंका से अयोध्या आये थे। पुराणों में देवताओं के विमानों का बहुत स्थलों में वर्णन आया है। पश्चिमी शिक्षा प्राप्त लोग इन बातों को बहुधा निरी कल्पना समझा करते हैं।

(४) श्री वामन डा० कोकटनूर ने अमरीकन केमिकल सोसायटी के अधि-

वेशन में पढ़े हुए अपने लेख में हस्तलिखित अगस्त्य संहिता का नाम दिया जिस में विमान उड़ाने का वर्णन है। श्री प्रियरत्न आर्ष अगस्त्य संहिता की तलाश में बड़ौदा राज्य की लाइब्रेरी में गये जहाँ हस्तलिखित पुस्तकों का बहुत बड़ा संग्रह है, वहाँ अगस्त्य संहिता तो नहीं मिली, परन्तु भरद्वाज वृत्ति "यन्त्र सर्वस्व" के वैमानिक प्रकरण का एक भाग बोधानन्द कृत सहित मिला जिसको उन्होंने पूर्वोक्त पुस्तक के रूप में छपवाया है और जो सार्वदेशिक आर्य प्र० सभा से मिलता है।

(५) पुस्तक से पाया जाता है कि "यन्त्र सर्वस्व" बहुत बड़ा ग्रन्थ रहा होगा जिसमें बहुत से यन्त्रों का वर्णन होगा जैसा उसके नाम से ही स्पष्ट है। हस्तलिखित भाग में जो सूची मिली उससे पाया जाता है कि वैमानिक प्रकरण भी बहुत विस्तृत था जिसमें ८ अध्याय, १०० अधिकरण और ५०० सूत्र थे। इनमें से केवल प्रथम अध्याय के ४ सूत्र बोधानन्द की वृत्ति सहित मिल सके हैं, परन्तु इतने से ही यह विश्वास होता है कि यह भाग जो प्राप्त हुआ बनावटी नहीं है और "वैमानिक प्रकरण" में विमान को बनाने चलाने आदि की क्रिया बहुत विस्तार और क्रम से वर्णित होगी।

(६) पहले अध्याय से पूर्व भरद्वाज कृत मंगला चरण है जिसमें विज्ञान के पूर्व आचार्यों का हवाला है। बोधानन्द ने वृत्ति में उनके नाम दिये हैं। हस्तलिखित भाग में जो प्राप्त हुआ २५ विज्ञान ग्रन्थों की एक सूची है। इनमें "अगस्त्य कृत" ग्रन्थ (शक्ति सूत्र) का भी नाम है जिसका श्री डा० कोकटनूर ने अपने अमरीका के लेख में हवाला दिया मालूम होता है।

(७) प्रथम सूत्र ("वेग साम्याद् विमानोऽण्ड जानामिति") में विमान शब्द का अर्थ दिया गया है जो इस प्रकार है कि गृध्रादि पक्षियों के वेग साम्य से आकाश की माप या यात्रा करने से विमान कहलाता है। आजकल जो हवाई जहाज Aeroplane बनते हैं वे रूपमें भी गृध्रादि पक्षियों से मिलते होते हैं। ऋग्वेद के मन्त्र १।११८।१ "आ वांरथो अश्विना श्येनपत्वा सुमृळीकः स्व वा यात्वर्वाङ्" में भी श्येन पक्षी की उपमा विमान यान का दी गई है।

(८) दूसरा सूत्र है—"रहस्यज्ञोऽधिकारी"—बोधानन्द ने वृत्ति में लिखा है कि विमान को बनाने, उस पर आरोहण करने चलाने, रोकने, उस के वेग की

तुलना करने व घटाने व बढ़ाने आदि क्रियाओं के ३२ रहस्य हैं जिनको जान कर ही कोई मनुष्य विमान चलाने का अधिकारी हो सकता है। इन ३२ रहस्यों का वर्णन उसने रहस्य लहरी नामक किसी पुस्तक से लेकर दिया है जिसमें लिखा है कि वे ३२ रहस्य गुरु के मुख से समझ कर तब कार्य करना चाहिये। यदि शत्रु का विमान आ जावे और उसके आक्रमण करने का भय हो तो उससे अपनी रक्षा करने, उसका नष्ट करने की क्रियाओं का उल्लेख है। अपनी रक्षा के लिये धूम्रादि से अपने को अदृश्य करने का वर्णन है, शत्रु के विमानस्थ लोगों का किसी धूम्र से मूर्छित करने का भी वर्णन है। इन रहस्यों की व्याख्या में विमान में कई प्रकार की नाल, व कीलें, कई प्रकार के अम्ल (तेजाब वा Acid), लवण (Salts) तैल आदि का वर्णन आया है।

(६) तीसरा सूत्र है—"पञ्चम्नश्च" अर्थात् विमान चलाने वाले को पांच आवर्तों से भी जानकारी होनी चाहिये जिन की व्याख्या बोधानन्द ने शौनकीय ग्रन्थ से की है। इनमें विमानों के रेखा मार्गों मे होने वाले ५ प्रकार के आवर्त या भवर बतलाये हैं जिन से विमान की रक्षा करनी चाहिये। रेखा मार्गों की संख्या वाल्मीकि गणित के अनुसार (जिसका ऊपर लिखे २५ विज्ञान ग्रन्थों की सूची में नाम है) कितने ही कोटि व करोड़ होनी लिखी है। इन संख्याओं का असली भाव क्या है केवल इस पुस्तक से जाना नहीं जा सकता।

(१०) चौथा सूत्र है—"अङ्गान्येक त्रिंशत्"—अर्थात् विमान के ३१ अंग व भाग होते हैं, जिन के नाम दिये गये हैं और विमान में उनके स्थान भी बतलाये गये हैं। इन में विद्युत् या बिजली का स्थान, नालक का तोप का स्थान (जिसके सबंध में मैं आगे लिखूंगा) भी हैं।

(११) शुक्रनीति शुक्राचार्य का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ राजनीति का है जो पहले अप्राप्य था। लगभग ६० या ७० वर्ष हुए डा० राजेन्द्र लाल मित्र को वह बंगाल में मिला और एशियाटिक सोसाइटी बंगाल की ओर से छपवाया गया। उस में तोप व बन्दूक के बनाने आदि का सविस्तार वर्णन है। उनको नालिक कहते हैं, तोप का नाम बृहन्नालिक और बन्दूक का क्षुद्र नालिक है। बन्दूक नाल के मुख से गोली भरने वाली (Muzzle loading) ही वर्णित है, कारतूसी

(Breech loading) नहीं नाल और गोली किन धातुओं की बनाई जावें, किस प्रकार भरी और चलाई जावें बारूद (या अग्नि चूर्ण) कैसे बनें इन सब का विस्तार से वर्णन है। तोप को घुमाकर शकटादि पर ले जाना उसके मुख को एक यन्त्र द्वारा घुमाकर निशाने पर लगाना आदि बतलाया गया है।

(१२) जब "शुक्रनीति" पहली बार छपी तो बहुधा विद्वानों ने यह सन्देह किया कि उपर्युक्त वर्णन आधुनिक तोप व बन्दूक को देख कर किसी ने घड़ कर शुक्रनीति मे डाल दिया है। महाभारत में नालिक मन्थ का वर्णन है पर आर्यों के परस्पर युद्ध में उसका प्रयोग वर्जित था, इङ्गलैण्ड के सुयोग्य विद्वान् बेकन Lord Bacon ने अपने प्रसिद्ध पुस्तक Essays मे ससार में विज्ञान के विस्मरण का उदाहरण देते हुए लिखा है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय तोपें भारतवर्ष में थीं और उनके प्रयोग के कारण ही उसकी फौज ने सतलज पार जाने से इनकार कर दिया था। सिकन्दर के साथ जो विद्वान् यहा आये थे उनके लेखों से इस बात का समर्थन होता है। सिकन्दर की फौज ने तोपों से जानकारी न होने के कारण दूरस्थ किलों से जो तोपों के गोले उन पर फेंके गये उनको Magic, Thunder and lightning अर्थात् "जादू, बिजली की कड़क और चमक" के नाम से वर्णन किया।

मैंने इस विषय पर एक लेख सन् १९०६ ई० के लगभग लिखा था जिसको मेरठ निवासी स्वर्गीय प० तुलसीराम जी ने अपने स्वामी प्रेस में "नालिकाविष्कार" के नाम से पुस्तक रूप से छपवाया था जो शायद उस प्रेस में अब भी छपता हो।

(१३) श्री प्रियरत्न जी आर्ष ने जो वर्षों से बड़ी तत्परता के साथ वैदिक खोज मे सलग्न हैं यह प्रशसनीय कार्य्य किया है कि पूर्वोक्त हस्त लिखित पुस्तक की खोज करके ' विमान शास्त्र" नामक पुस्तक को प्रकाशित किया। सभव है कुछ लोग 'शुक्रनीति' के नालिक यन्त्र वर्णन के समान इसको भी बनावटी समझें, यदि कोई विद्वान् जो आधुनिक हवाई जहाजों की क्रियाओं से पूर्ण जानकारी रखते हों इस पुस्तक में वर्णित क्रियाओं का उनसे मिलान करें तो सभव है इस बात पर प्रकाश पड़े कि पुस्तक मे दिया हुआ विमान का वर्णन कहाँ तक विश्वास योग्य और प्राचीन समय का लिखा हुआ हो सकता है। यदि पूरा "वैमानिक प्रकरण" जिसमें ५०० सूत्र होने लिखे हैं और केवल ४ सूत्र प्राप्त हुए हैं मिल सके तो यह भी ज्ञात हो सकता है कि वह कहाँ तक व्यवहार में लाने योग्य है। आशा है श्री आर्ष जी तथा अन्य खोज Research Scholar करने वाले विद्वान् पूर्वोक्त पूरे ग्रन्थ की तथा अगस्त्य-सहिता की खोज जारी रक्खेंगे॥

म० अमरसिंह जी की मांसाहार के पक्ष में अन्तिम चाल

"स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों पर जाल"

(लेखक—श्री पं० जयदेव जी शर्मा विद्यालङ्कार, चतुर्वेद-भाष्यकार, अजमेर,)

म० अमरसिंह जी ने अपनी पुस्तक का अन्तिम अध्याय 'स्वामी जी के ग्रन्थों में जालसाजियें' लिख कर मांसाहार की बात को स्वा० दयानन्द के गले मढ़ने का बड़ा प्रबल यत्न किया है। इस लेखांक में अब हमें इसकी भी आलोचना करनी आवश्यक है। आप लिखते हैं—

(१) "पाठक खुर्दबीन से भी कोई एक उद्धरणों का लवलेश वर्त्तमान स्वामी जी के सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि के नये संस्करणों में नहीं पा सकता। सम्भवतः वैदिक यन्त्रालय अजमेर के प्रबन्धकर्त्ताओं की सम्मति या आज्ञा से उनकी वास्तविक प्रेस-कापियों २ य संस्करण के पश्चात् गायब कर दी गई हैं। पता लगता है कि जालसाज अपने काम में पूर्ण स्वतन्त्र था क्योंकि एक संस्करण से दूसरा संस्करण बदलता चला गया है। कहीं कम व कहीं अधिक परिवर्तन हुए। पाठक को पुराने और नये संस्करणों के वाक्यों की तुलना का कार्य मनोरञ्जक प्रतीत न होगा। दोनों की बातों को अब जैन-टाईप का (हिंसा-शून्य) कर दिया है। नमूने के लिये दयानन्द ग्रन्थमाला (जो ५० साला अर्ध शताब्दी के अवसर पर छपी) और संस्कार-विधि का ८ वा संस्करण है।

(२) "संस्कारविधि में होम के योग्य चार प्रकार के द्रव्य १ म संस्करण में बतलाये थे जिनमें लिखा था—'पुष्टि गुणयुक्त वस्तु जैसे दूध, घी मांसादि।" दूसरे संस्करण में इसे बदल दिया, द्वितीय संस्करण में कर दिया—पुष्टि कारक घृत दुग्ध फल कन्द अन्न चावल गेहूं आदि।

इसके आगे सत्यार्थप्रकाश (१ म संस्करण) के १० वें समुल्लास का मांसविषयक उद्धरण वर्त्तमान सत्यार्थप्रकाश में बहुत बदल कर रख दिया है। इसी प्रकार अश्वमेध आदि का उद्धरण भी वर्त्तमान सत्यार्थ प्रकाश में नहीं है। संस्कारविधि पृष्ठ ३७ का लेख विशेष पुत्र-उत्पत्ति के सम्बन्ध में मांस ओदन पाक वाला भी संस्कारविधि के नये संस्करण में से हटा दिया है। और अन्न-प्राशन

संस्कार में तीतर के मांस वाला विधान आश्वलायन गृह्यसूत्र का सूत्र भी नवीन संस्कारविधि में से निकाल दिया है।

(३) "ऐसा क्यों किया गया ? पाठकों को जान कर आश्चर्य होगा कि यह एक जाल किया गया है। प्रथम संस्करण सत्यार्थप्रकाश १८७५ में निकला, संस्कारविधि १८७७ में निकली, १८७८ में स्वामीजी ने तर्पण और श्राद्ध सम्बन्धी लेख से अपना सम्मतिभेद सूचक विज्ञापन निकाला तो भी उन्होंने मांस भोजन के सम्बन्ध में अपना मतभेद नहीं बतलाया। इसका यही मतलब था कि स्वामी जी अपने ग्रन्थों के अगले संस्करणों में से केवल श्राद्ध और तर्पण सम्बन्धी लेख को हटाना चाहते थे।

"अगस्त १८८२ ई० (भाद्रपद शु० १९३९ वि०) मे स्वामी जी ने नये सत्यार्थप्रकाश की भूमिका लिखी। जिसमे यही बतलाया है कि स्वामी जी ने केवल अपनी भाषा मे परिवर्त्तन किया है, परन्तु अपने आशय में परिवर्त्तन नहीं किया है।

"इसी प्रकार जून जुलाई १८८३ (आषाढ बदी १३।१९४०वि०) संस्कारविधि की भूमिका लिखी, जिसमें लिखा है कि अनावश्यक भागों को छोड़ दिया गया है। बस, इतना ही परिवर्त्तन किया गया है। सम्मतिभेद के सम्बन्ध उन्होंने कोई शब्द नहीं लिखा, यदि ऐसा परिवर्त्तन होता तो भूमिका में भी उसकी सूचना होती। पता चलता है कि मृत्यु से ४ मास पूर्व भी स्वामी जी की यही सम्मति थी। स्वामी जी की सम्मति बदलने का कोई लिखित आधार नहीं है।

(४) 'स्वामी जी के देहावसान के पूर्व सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि दोनों की प्रेस कापी भी तैयार हो चुकी थी। ३० अकतूबर १८८३ को विष के कारण अकस्मात् स्वामी जी का देहावसान हो गया, उन्होंने कोई बात मांसाहार की अपने ग्रन्थों में से निकाल देने की नहीं लिखी। अत निकालने और जोड़ने की सब बातें उनके मरणोपरान्त हुई हैं।

(५) रायबहादुर मूलराज एम० ए० ने एक छोटी सी पुस्तक अंग्रेजी में छपाई, जिसका नाम "स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य-समाज" था उसमें मांसाहार के सम्बन्ध में लेखों को स्वामी जी के ग्रन्थों से निकाल देने पर अच्छा प्रकाश डाला है उसमें लिखा है कि—

(क) "१८६१ ई० में मुन्शी समर्थदान मेरे पास आये, उस समय मैं अमृतसर में छोटी कचहरी में जज था। वे बोले कि— मैने (मुन्शी समर्थदान ने) एक बड़ा अन्याय किया, जब मैं अलाहाबाद में प्रेस का मैनेजर था, तब मैंने भक्ष्याभक्ष्य प्रकरण में सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे संस्करण में स्वामी दयानन्द ने जो अपने हाथ से हाशिये में मासाहार करने की आज्ञा देते हुए लिखा था, वह नहीं छापा। वह बोला कि मैं शाकाहार का बड़ा जबरदस्त प्रचारक था। मासाहार पक्ष में स्वामी जी के हस्त लेख को भक्ष्याभक्ष्य के समुल्लास में नहीं छपने दिया। मुन्शी ने कहा कि स्वामी जी का वह हस्तलेख (Hand-writing) जो मासाहार का पोषक था, वैदिक यन्त्रालय अजमेर मे अभी तक विद्यमान है। १८६१ सेप्टेम्बर में मुझे परोपकारिणी सभा के अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिये जाना पड़ा, मुन्शी समर्थदान ने उस अवसर पर मुझे प्रेसकापी का हस्त लेख दिखाया। हाशिये पर स्वामी जी ने अपने हाथों से मासाहार के पक्ष मे लिखा था। अन्य भी कई आर्य सभासदों ने वह हस्तलेख देखा। अभी भी वह वैदिक यन्त्रालय अजमेर में है।

(ख) "परोपकारिणी सभा का वह अधिवेशन १८६१ ई० के सितम्बर मास में हुआ था। जिसमें यह प्रस्ताव बहुसम्मति से पास हुआ था, कि ६ सदस्यों की एक उपसमिति बनाई गई, जिसे अधिकार दिया कि वह अपने और भी सदस्य चुन सके। वह स्वामी जी के ग्रन्थों में जो त्रुटियां आगई हैं उनकी रिपोर्ट पेश करे, उसके मन्त्री भगवान् दीन बनाये गये।

यह एक ऐसा प्रमाण है कि स्वामी जी के ग्रन्थों में फेरफार हुआ है, और गलतियों अनायास आगई हैं, या जालसाजी की गई है। गलतियों के आने देने के उत्तरदाता लोगों के नाम व उनको दण्ड देने की कोई बात उस प्रस्ताव में न थी। परिणाम यह हुआ कि कमेटी बनने पर भी अशुद्धिया बनी रहीं।

ऊपर लिखी पुस्तिका रायबहादुर मूलराज ने 'दयानन्द कामैमोरेशन वाल्यूम' में छपाने के निमित्त छपाई थी, परन्तु हरविलासजी शारदा ने उसको उक्त वाल्यूम में स्थान नहीं दिया। और भी खेद की बात है कि साहित्यिक बेईमानी को प्रक्षेप करने वालों ने सच्चा सिद्ध कर दिया।

(६) "इसका एक और ताजा नमूना यह है कि बृहदारण्यक उपनिषद् के संस्कृत शब्द "मासौदन" को 'माषौदन' बना डाला है। इस प्रकार साहित्यिक

चालाकों ने मास को दाल मे बदल दिया। यह पण्डितों की भीरु प्रवृत्ति है जो स्वामी जी के ग्रन्थों में प्रक्षेप आने के लिये जबाव दे हैं। वे मुर्गी के बच्चे के समान कोमल दिल के लोग नहीं समझते कि विशाल मस्तिष्क दयानन्द ने आर्य-समाज को अपनी सम्मति का दास नहीं बनाया। १० नियम और ४० उपनियम आर्यसमाज के १८७७ ई० मे स्वामी जी के तत्त्वावधान मे बनाये गये। आर्य-समाज के प्रवेश फार्म से ज्ञात होता है कि उनमें केवल १० नियमों के अनुसार आचरण करना ही पर्याप्त है। उस पर हस्ताक्षर करके उस पर स्वामी जी के वैयक्तिक सम्मति या विचारों का कोई बन्धन नहीं है। प्रवेश फार्म पर हस्ताक्षर करके उसे स्वामी जी के मन्तव्याम-तव्यों से कोई वास्ता नहीं है। न उसे स्वामी जी के दार्शनिक बिचारों से ही कुछ लेना है। स्वा० दयानन्द ने विचार स्वातन्त्र्य को नष्ट नहीं किया, केवल १० नियमों का मानना ही पर्याप्त से अधिक समझा गया है। जैसे केवल इस्लामी कलमा मान लेने से एक आदमी मुसलमान बन जाता है, उसी प्रकार आर्य समाज के १० नियम मानने से मनुष्य आर्य बन जाता है। स्वामी जी ने अपनी सम्मति से किसी को नहीं बाँधा। नहीं तो वे 'गुरुडम' चला जाते जिससे वे हृदय से घृणा करते थे।

(७) "आर्यसमाज मे शाकाहारी लोग स्वामी जी की मासाहार की सम्मति से अलग भी रह सकते हैं, आर्य समाज ने स्वामी जी की स्वाध्याय और नियोग की योजना को पलट ही दिया है। उसी प्रकार वे स्वामी जी की मासा हार की सम्मति की भी उपेक्षा कर सकते है। परन्तु उनके ग्रन्थों में नई मिलावट करने वा छाँट देने का अधिकार किसी को नहीं है। स्वामी जी की सम्मति निर्भीक है। परन्तु उसका निकाल देना न्याय सगत नहीं है।

(८) सिक्ख गुरुओं ने आदि से अन्त तक मासाहार को प्रमुखता दी है और इसी बात ने उनको हिन्दुओं मे दृढ और आक्रमणकारी बना रखा है। स्वामी दयानन्द को भी मनुष्य स्वभाव पर माँसाहार के प्रभाव का भली भाति ज्ञान था उसने मास का निषेध नहीं किया। उसने उसका उपयोग विवेकपूर्वक किया है। जालसाज उसको उसके ग्रन्थों से निकाल कर स्वामी जी की सम्मति को अब भी दबा रहे हैं। दयानन्द की शिक्षाओं ने साधारण हिन्दुओं को अपेक्षया बहुत मजबूत और ऊचे विचार से एक व्यवस्थित सस्था बनाया था। दृढ बिचार शक्ति

दायक भोजन से ही समर्थित हो सकते हैं। बहुत कमजोरियों के बावजूद भी आर्यों के पास मस्तिष्क शक्ति है जो भारत के विभिन्न मतों के बीच में उसकी सत्ता को बनाये हुए हैं।

(६) यह देखकर दया आती है कि आर्यों के भोजन में दम नहीं है, वे अधिकाश ऐसा भोजन करते हैं जो शेर को भी भेड़ का बच्चा बना देता है। १६३६ ई० की ग्रीष्म ऋतु में आर्यों ने सत्याग्रह सग्राम में विजय पाई, वह भी सहनशीलता की परीक्षा थी। परन्तु उन्होंने वह लड़ाई भी कमजोरों के हाथों से लड़ी। मजबूत के हथियार उसकी शक्ति, उसके रग और पट्ठे होते हैं जो आर्यों के पास नहीं हैं। उनके पास जब तक न रहेंगे जब तक वे अपने भोजन मे मास को सम्मिलित न कर लेगें। वे मास को अमीरी चोचले के समान सेवन न करें। प्रत्युत उनको मास भोजन एक आवश्यक रूप से लेना चाहिए। उनको अहिसा के जैन विचार छोड़कर मासाहार के सम्बन्ध मे वैदिक ऋषियों, सिख गुरुओं और दयानन्द के विचार लेने चाहियें, समाजियो। चेतो। दयानन्द तुमको शेर बनाना चाहता था, जैन नहीं।

इस प्रकार हमने अमरसिंह जी के समस्त विचारों को पर्याप्त विस्तार से इसलिये रखा है कि पाठक उनकी बातों पर भली प्रकार विचार कर सकें। उनको यह कहने का अवसर न मिले कि उनकी बात को समझा नहीं गया। अस्तु

समीक्षा

(१) आपका प्रथम आक्षेप यह है कि परोपकारिणी सभा के अधिकारियों ने स्वामी जी के ग्रन्थों को जैन टाईप का कर दिया है। परन्तु अमरसिंह जी को विदित हो कि प्रथम सस्करण मे जो पण्डितों ने मिलावट की, उस में भी उन्हों ने स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ को 'हिंदू टाइप' का करने का यत्न किया है, उसमें 'आर्यन टाइप' न रहसका। क्योंकि अपेन्डिक्स V

मे आपने जो सत्यार्थप्रकाश (१म सस्क०) का उद्धरण दिया है उसमें कहीं भी मास खाने की बात को शेर बनने का नुसखा आप के या हरबर्ट स्पैंसर के समान बतलाने का यत्न नहीं किया। यह भी नहीं लिखा कि मास खाने से मनुष्य वीर-धीर हो जाता है। उसमे केवल विचार धर्माधर्म और-पाप पुण्य का किया है यदि स्वामी दयानन्द को मासाहार अभीष्ट होता तो वे अपने व्याख्यानों में

मांसाहार का प्रचार करने से न रुकते। वे शिकार-आखेट, और प्रत्यक्ष रूप से घर २ में ईद के तुल्य पशुवध कर के मास खाने की कोई सुन्दर योजना आर्यों के लिये अवश्य करते। लाखों के हस्ताक्षरों से जैसे गोरक्षा का आन्दोलन उठाया था वैसे वे वीर-निर्माण आन्दोलन उठाकर प्रत्येक आर्य घर को बूचड़ खाने का रूप देकर ही चैन लेते। और यह कोई कठिन बात नहीं थी। रजवाड़ों मे जैसे वर्ष में त्यौहारों के अवसरों पर राजपूत लोग भैंसों पर अपनी पैनी धार से राजपूती जोश को परखते हैं, वैसा ही एक त्यौहार या पर्व चला सकते थे, मुसलमानों की बकरईद के समान एक आर्यों का भी हिंसापर्व बड़े जोश से चलता। परन्तु स्वामी जी के किसी लेख वा व्याख्यान से ऐसी वीरता के पर्व का मार्ग प्रतीत नहीं होता। और न ज्वालादत्त जैसे पाखण्डी की मिलावट से ही प्रकट होता है। प्रत्युत उसका विरोध तो उनके व्याख्यानों व सवादों में अनेक बार पाया गया है जैसा हमने ६ठे अध्याय की आलोचना में दर्शाया है। इसलिये अमरसिंह जी का अपने पक्षपोषणार्थ मासाहार के लिये स्वामी जी की सम्मति बतलाना निराधार है, और सिवाय स्वार्थ सिद्धि के और कुछ नहीं है।

(२) सस्कार विधि (१म स०) में पुष्टिकारक पदार्थों में जो मास को गिनाया है, मिलाने वाले धूर्त ने यह न सोचा कि मास को अग्नि में जलाने से क्या लाभ होगा, मूसा आदि के जमाने मे धर्मयाजक लोग, और वाम मार्ग के जमाने में भारत में भी बकरा बकरी का मास जलाते रहे, परन्तु उससे सुगन्ध होना, वा रोग नाश या पुष्टि लाभ होना किसी वैज्ञानिक ने नहीं बतलाया। मास के जलने से नाक सड़ उठती है, मास के पकाने से ही सड़ाद उठती है, उससे अधिक और क्या आशा हो सकती है?

इसी प्रकार अमरसिंह जी की दृष्टि में एक अनर्थ की बात यह है कि उत्तम पुत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में किसी पण्डित ने 'मासौदन' का 'माषौदन' कर दिया है। अर्थात् मांस को दाल बना दिया। यह एक शास्त्रीय बात है। युजैनिकस से सम्बन्ध रखती है, क्या मास भात खाने से वैसा लड़का पैदा हो सकता है, यह तो निश्चित बात है कि माष (उड़द) और भात की खिचड़ी के खाने-खिलाने से माता पिता की सन्तान निश्चय से उत्तम उत्पन्न होती है। सीमान्तोन्नयन के अवसर पर शास्त्रों ने तिलों की खिचड़ी बना कर खाने का विधान किया है। संगति से प्रतीत होता है कि उपनिषत्कार को मांस खिचड़ी की अपेक्षा से 'माष-

ओदन' की अपेक्षा है, मास की अपेक्षा नही है। क्योकि (१) पूर्व के खण्डों मे भी क्रमसे दध्योदन, उद-ओदन, और तिल ओदन का विधान है। तब चतुर्थ मे एकदम मास पर पहुँचना आर्षग्रन्थों में सम्भव नहीं है। यहा यह भी प्रश्न है कि वह मास किसका हो ? शायद अमरसिंह जी कहदें कि लिखा है—'औक्षेणवा आर्षभेण वा' अर्थात्—साड, बैल, के मास के साथ भात पकाया जाय। क्या अमरसिंह जी इस गोहत्या का काम अपने ऊपर लेंगे। उसका समर्थन करेंगे, या इस क्रूरकर्म का पुण्य-पाप हिन्दुओं के गले मढ़ेंगे ?

सत्य बात तो यह है कि इस वाक्य का अभिप्राय नहीं समझा जा रहा है, और पाखण्डी धूर्तों ने माष' शब्द को मास बना कर अनर्थ किया है। यह पजाब की आमशैली है कि लोग 'माह' की दाल के साथ चावल खाते हैं, और हृष्टपुष्ट होते हैं, माष की दाल वृष्य होती है, और वीय वधक होतो है, वृष्य और वीर्यवर्धक रूप से पाक बनाने की अन्य भी अनेक शैली थीं जिनको 'औक्ष' और 'आर्षभ' शैली कहा जाता था उसी प्रकार बना कर खाने का विधान बृहदारण्यक में है, एक विद्वान के विचार में उक्ष और ऋषभ नाम दो विशेष औषधि हैं जिनका कन्द बैल के सींग के समान होता है, उन के रस या गूदे के साथ भात खाने का विधान भी सम्भव है। परन्तु बैल, साड मार कर उसके मास के साथ भात खाने का तो कोई प्रसग ही नहीं है और फिर हिंदू शास्त्रों मे ऐसा तो नितान्त असभव है, परन्तु अमरसिंह जी को तो वीर शेर बनने की धुन है, वे कब हमारा कथन मानेंगे। वे तो आर्यों के गले 'बीफ', मटन, लटका कर छोडना चाहते हैं।

सस्कार विधि के १म सस्करण मे यदि उसका उल्लेख भी किया है तो तीतर आदि के मास के विधानों के समान ये सब विधान ऋषि दयानन्द की दृष्टि मे एक देशी मत है, ऋषि दयानन्द का अपना मत नहीं है। यदि इन बातों को ऋषि दयानन्द स्वय मानते तो वे अवश्य इस अवसर पर शेर का बच्चा पैदा करने का नुसखा कभी न भूलते। प्रत्युत इसकी पुष्टि करते, और उस पर बल देते।

(३) अमरसिंह जी बतलाना चाहते हैं कि नये सस्करणों में स्वामी जी ने भाषा बदली, आशय नही, इसलिये स्वामी जी ने १म सस्करण वाले मास प्रकरण को दूसरे में भी स्थान दिया था। अमरसिंह जी का ऐसा समझना नितान्त भूल है। यदि उनको उस मास प्रकरण को स्थान देना अत्यन्त अभीष्ट होता तो

प्रश्न यह है कि मूल पत्रों में उसको स्थान क्यों नहीं मिला। हाशिये पर ही लिखने की क्या आवश्यकता थी। हाशिये पर लिखवाने वाले ने इस बात को खूब पतली कलम से लिखा है और उस मे एक अक्षर भी ऋषि दयानन्द की कलम का बना हुआ नहीं है। इसीसे मुन्शी समर्थदान को शक हुआ और (पत्र द्वारा पूछा) और सचाई निकल आई। यदि ऋषि दयानन्द को हाशिये की कलम अभिमत थी तो निर्भीक होकर पत्र द्वारा आज्ञा देदेनी चाहिये थी कि सशोधन मेरा है, ज्यों का त्यों छापो, परन्तु प्रतीत होता है, स्वामी जी ने वैसा नहीं किया। इस सचाई को मुन्शी समर्थदान का पत्र ही बतलाता है। पत्र निम्न प्रकार से है।

श्री महाराज नमस्ते—निवेदन है कि वेद भाष्य में जो मास भक्षण का विधान आया था उसको तो आपने निकाल दिया था। और मुझको भी आज्ञा दी थी कि मास का विधान न आवे, इस प्रकार से छाप दो, सो मैंने छाप दिया था। अब सत्यार्थपकाश का भक्ष्याभक्ष्य का प्रकरण पाया, इसमें भी आपने मास खाने की आज्ञा स्पष्ट दी है, प्रथम जब पुस्तक लिखा गया था जब तो मास की आज्ञा नहीं दी। पीछे से शोधते समय क्या आपने दी है? ऊपर से आपने बनाया है।, इस लिये मेरी शक्ति नहीं है कि मैं इसे काट दू। इस लिये आप से निवेदन किया, आपकी जैसी आज्ञा हो वैसा किया जाय। . . .
सत्यार्थप्रकाश का एक फार्म तो और छपेगा पीछे से आपका पत्र आवेगा तब छपेगा। कृपा करके पत्र शीघ्र दीजिये।"

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि (१) सत्यार्थप्रकाश के ६ समुल्लास स्वामी जी के समय छप चुके थे। (२) सत्यार्थप्रकाश की प्रेस कापी जब प्रथम लिखी गई उसमें मास का विधान नहीं था। (३) वह लेख बाद मे हाशिये में बनाया गया। (४) मुन्शीसमर्थदान स्वामी जी की आज्ञा का उल्लघन नहीं कर सकता था, (५) वह धूर्तों की चालों से भी परिचित था। इसलिये उसने पत्र लिखा और ऋषि की आज्ञा पाकर ही उस मुन्शी ने उस अश को नहीं छापा। भला बताइये, इसमें परोपकारिणी सभा के कार्यकर्ताओं की क्या बेईमानी थी? उन्हों ने क्या जालसाजी की? क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि ऋषि दयानन्द के दो मत हो सकते हैं? एक मासाहार के पक्ष में दूसरा विपक्ष में? यह कभी सम्भव नहीं। इसी से स्पष्ट है कि ऋषि ने मूल सत्यार्थ प्रकाश (२ य स०) की कापी में मासाहार सम्बन्धी कोई वाक्य नहीं लिखाया था। और न प्रथम सस्करण के लिखाने के अवसर में

लिखाया था। प्रथम बार भी धूर्त्त पण्डितों ने धोखाधड़ी की दूसरी बार भी की। पहली बार की पकड़ी नहीं गई, दूसरी बार की मु० समर्थदान ने पकड़ ली और स्वामी जी को बतला दी। इसी से स्वामीजी का यही लेख ठीक है कि उन्होंने भाषा में परिवर्त्तन किया है आशय मे नहीं। मांसाहार का पक्ष पोषण न प्रथमबार सम्मत था, न द्वितीय बार। पहली बार बालादत्त ने धूर्तता की, दूसरे बार फिर उसने हाशिये पर लिखने की चेष्टा की।

(४) अमरसिंहजी कहते हैं कि मांसाहार का प्रकरण निकालने आदि का काम स्वामीजी के मरणोपरान्त हुआ है। जीवन काल में उन्होंने ऐसा कहीं लिखा नहीं। अमरसिंहजी का यह लिखना प्रथम तो मुंशी समर्थदान के पत्र से ही खण्डित होजाता है। अमरसिंहजी का यह लिखना कि सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि की प्रेस कापी प्रेस में देते ही देहावसान होगया और भी असत्य सिद्ध होगया। मुंशी समर्थदान के पत्र से विदित हो गया कि सत्यार्थ प्रकाश २ य संस्करण के १० समुल्लास छप चुके थे। मुंशी समर्थदान का एक और पत्र आश्विन कृष्णपक्ष १९३९ (२८ सित० से १२ अक्टूबर १८८२ ई०) का लिखा हुआ है जिसमें उसने माना है कि सत्यार्थ प्रकाश ११ वें समुल्लास तक छपा है। इसके अलावा यह भी पत्र व्यवहार से स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संस्करण के अवसर पर धूर्तों से बहुत सावधान थे। वे सत्यार्थ प्रकाश के प्रूफ भी स्वय देखते थे।

(१) स्वामीजी का पत्र उदयपुर से भेजा—आश्विन सुदी ३ रविवार १९३९ (१५ अक्टूबर १८८२ ई०) का—

"११ वा १२ बजे तक (हम) वेद भाष्य बनाते हैं, पश्चात् अन्य काम शोधने आदि का, और यह काम ऐसा है कि बिना हमारे बन नहीं सकता। जो कहीं भाषा असम्बद्ध हो अभिप्राय व अक्षर मात्रादि से अशुद्ध हो उसको तुम ही शोध लिया करो।"

(२) "कल तुम्हारे पास ३३ पृष्ठ से ५, तक सत्यार्थ-प्रकाश के पन्ने और पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ तथा जितना यहाँ वेदार्थ का यत्न के अंक हैं, अर्थात् २० अक सब भेजेंगे। तुम हमको यह लिखना कि सत्यार्थ प्रकाश के कितने पृष्ठ एक मास में लगते हैं। सो व्यौरे वार जब लिख भेजोगे तब हम यहां से अनुमान करके लिख देंगे कि सब सत्यार्थ प्रकाश के इतने फारम होंगे।"

(३) "आज सत्यार्थ प्रकाश के शुद्ध करके ४ पृष्ठ भूमिका के और ३५ पृष्ठ

१ म समुल्लास के भेजे हैं पहुँचेंगे।"

(राज मेवाड़ उदयपुर भाद्र बदी १ मंगलवार १६३६)

(४) प्रथम, सत्यार्थ प्रकाश के पत्रे २५० तक तुम्हारे पास भेजे थे और तीन पृष्ठ राम सनेही के पश्चात् धरे हैं। सो ४८, ४६, ५० अक धरे हैं। तुमको भ्रम न हो, परन्तु इतना अवश्य करना कि जो वहा २५० पृष्ठ हैं उसके अत और और २४८ पृष्ठ के आदि की सगति तुम मिला लेना। २५१ के पृष्ठ के आदि और जो अब २५० वॉ भेजा है उसकी सभी सगति मिला लेना और ११ समुल्लास की समाप्ति तक सब पत्र भेज दिये हैं। द०) दयानन्द सरस्वती जोधपुर राजमारवाड़ भाद्र बदी ३०।१६४० वि०)

इस पत्र से विदित होता है कि स्वामीजी ने जीवन काल मे ही ११ वें समुल्लास तक का पूर्ण सत्यार्थ प्रकाश स्वय शोध दिया था इसी से रा० ब० मूलराजजी की बात भी असत्य जँचती है

(५) मु शी समर्थदान का पत्र २० अगस्त १८८३ ई० का—

"सत्याथ प्रकाश का ३८ वा फार्म छप चुका है। और ११ वा समुल्लास छप रहा है।"

(६) स्वामीजी ने मु० समर्थदान को लिखा है—

"मै सत्यार्थ प्रकाश के २४८ से २७६ पृष्ठ भेज रहा हूँ।" अब तक ११ वें समुल्लास तक सब पृष्ठ भेज चुका हूँ

(७) आश्विन बदी १, १६४० मे स्वामीजी ने पत्र लिखा—"मैं २७२ से ३१६ पृष्ठ तक सत्यार्थ प्रकाश १२ वें समुल्लास के भेज रहा हूँ।"

(८) आश्विन बदी ८ सोमवार (२४ सित० १८८३) पत्र स्वामीजी का मुं० समर्थदान को—"संस्कार विधि के ४७ पृष्ठ भेज दिये हैं।"

(६) आ० बदी १३ शनिवार १६४० (२६—सित० १८८३) स्वामीजी का पत्र मु० समर्थदान को—मैं १ पृष्ठ भूमि का सत्यार्थ प्रकाश के ३२० से ३४४ पृष्ठ तौरेत और जबूर के भेज रहा हूँ। मैंने सस्कार विधि के ४७ पृष्ठ भेजे थे वे भी मिले होंगे।

(१०) "चारण नवलदास ने स्वयं स्वीकार किया कि सत्यार्थ प्रकाश के ३४६ पृष्ठ छपे हुए ठा० गिरधरसिह के निमित्त पाये।" यह प्रेस कापी में पृष्ठ १८३ तक है, इसमें सब भक्ष्याभक्ष्य प्रकरण आगया है। अर्थात् ये पृ3 स्वामीजी के जीवन काल में उनके प्रूफ सशोधन करते हुए छप चुके थे और स्वामीजी १३ वें समुल्लास के अंश भी शोधकर दे चुके थे। इस प्रकार सत्यार्थ प्रकाश और सस्कार विधि में कुछ जोड़ने वा निकालने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

(शेष अगले अङ्क में)

सत्यार्थ प्रकाश की रोशनी में इस्लाम

(लेखक—तार्किक शिरोमणि श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी)

(२)

मैंने अपने पहले लेख में बताया था कि स० प्र० की रोशनी मे मुसल्मान विद्वान् अपने सिद्धान्तों को बुद्धि के अनुकूल सिद्ध करने का कितना प्रयत्न कर रहे हैं और कुछ अश में सफल भी हुए हैं परन्तु इतने सफल नहीं हुए हैं कि कुर्आन् के शब्दों से अपनी नई व्याख्या का अक्लिष्ट और सुगम सबध सिद्ध कर सकें। पुराने प्रामाणिक भाष्यकारों से भी कई बातों मे बहुत बडा भेद है।

मौलाना मुहम्मदअली साहब एम० ए० जमाअत् अहमदी (लाहौरी) ने तो कुर्आन् पर होने वाले तमाम आक्षेपों का अपनी बुद्धि विद्या व शक्ति के अनुकूल पूर्ण समाधान कर दिया है परन्तु वे स्वय भी उस से सतुष्ट हैं इस मे मुझे सदेह है। उनसे अन्य फ़िर्के वालों का मत भेद तो निश्चित् ही है। सात, सत्तर और सातसौ को अर्बी में बहुधा बहु सख्या सूचक मान कर आसमानों के सात होने को भिन्न २ प्रकार से समझाना, जिसका कुर्आन् के मूल से कोई सबध न हो स्वय भाष्यकर्त्ता के भ्रान्त होने को प्रकट करना है।

सृष्टयुत्पत्ति के विषय मे कुर्आन स० ४१ में आ० ६ से १२ तक यह कहता है—

कुल् अइन्नकुम् लतक्फुरून बिल्लज़ी ख़लक़ल् अर्ज़ा फ़ी यौमैनि, व तजअलून लहू अन्दादन् ज़ालिक रब्बुल् आलमीन् आ० ६

व जअल फ़ीहा रवासिय मिन् फ़ौक़िहा व बारक फ़ीहा व क़द्दर फ़ीहा अक्वातहा फ़ी अर्बअति अय्याम् सवाअल्लिस्साइलीन् आ० १०

सुम्मस्तवा इलस्समाइ व हिय दुख़ानुन् फ़ क़ाल लहा व लिल् अर्ज़िअतिया त्वौअन् औ कर्हन्, क़ालता अतैना त्वाइअीन् आ० ११

फ़क़ज़ाहुन्न सब्अ समावातिन् फ़ी यौमैनि व औहा फ़ी कुल्लि समाइन् अम्रहा, व ज़य्यन्न स्समाअद्दुनिया बिमसाबीह व हिफ़्ज़न्, ज़ालिक तक़्दीरुल् अज़ीज़िल् अलीम् आ० १२

अर्थ—कह, क्या तुम मुकिर हो इससे जिसने बनाई जमीन दो दिन में

और बराबर करते हो उसके साथ औरों को, वह है रब जहान का। आ० ६

और रखे उसमें बोझ ऊपर से, और बरकत रखी उसके अन्दर, और ठहराई पहाड़ उसमें खुराकें चार दिन में पूरी पूछने वालों को। आ० १०

फिर चढ़ा आसमान को और वह धुँआ हो रहा था फिर कहा इसको और जमीन को, आवो दोनों खुशी से या जोर से, वह बोले हम आए खुशी से। आ० ११

फिर ठहराए वह सात आसमान उन दो दिन में और उतारा हर आसमान में हुक्म उसका, और रौनक दी हमने वर्ले आसमान को चिरागों से और निगहबानी, यह साधा है जबरदस्त खबरदार का। आ० १२

यह तर्जुमा मौलाना शाह अब्दुल् कादिर साहब देहलवी का है और तफसीर जो नीचे दे रहा हूं वह उर्दू तर्जुमा तफ़सीर मआलमुत्तञ्जील का है जिसको मौलाना मौलवी मुफ्ती मुहम्मद अजीजुर्रहमान साहब देवबन्दी ने किया है।

"कहदे क्या तुम कुफ़ व इकार करते हो उस क़ादिर मुतलक का जिसने जमीन को दो दिन यानी इतवार व पीर में बनाया। और ठहराते हो तुम उसके लिए शरीक (साझी-समान) यह है रब तमाम जहान का

और बनाए अल्लाह ने जमीन के ऊपर पहाड़ कायम रहने वाले और उसमें बर्कत दी साथ दर्याओं और नहरों और दरख्तों और फलों के, और रखी उसमें रोजी (भोजन) उसकी। यानी आदमियों और जानवरों की रोजी उसमें पैदा फ़र्माई चार दिन में—यानी यह मजमुआ जमीन (सर्व पार्थिव पदार्थों) का पैदा फ़र्माना और उसके अन्दर रोजी वगैर. रखना चार दिन में हुआ है, इतवार व पीर पहले जमीन के पैदा करने की बयान हुई, बाक़ी दो दिन मगल और बुद्ध में उसके अन्दर रोजी वगैरः रखी। पूरा जवाब है यह सवाल करने वालों के लिए, यानी इसमें कमी बेशी नहीं इसी तरह से हुआ है।

फिर इरादा फ़र्माया आसमान के पैदा फ़र्माने का, पस फ़र्माया उसको और जमीन को कि करो तुम जो तुमको हुक्म हुआ है खुशी से या जबरदस्ती से, ग़र्ज़ यह कि जो कुछ तुम्हारे अन्दर पैदा फर्माया है उसको निकालो (इब्न अब्बास फ़र्माते हैं कि आसमान को यह हुक्म फर्माया कि चांद व सूरज व सितारे निकाल और जमीन को यह हुक्म फर्माया कि नहरें व नबातात व फल निकाल) उन दोनों ने अर्ज किया कि हम लाए जो कुछ हमारे अन्दर है और हमको उसका हुक्म

हुआ है खुशी से, पस पूरा फर्माया इक तआला ने उनको सात आसमान दो दिन में यानी पंज शबा (बृहस्पति) जुमाअ (शुक्र) में और वही की हर एक आसमान की तरफ़ उस चीज़ की जो उससे इरादा किया। और ज़ीनत दी हमने आसमान दुनिया को साथ चिरागो यानी सितारों के और उनकी हिफ़ाज़त की सितारों से यानी शैतान चोरी से कुछ नहीं सुन सकते। यह जो कुछ ज़िक्र किया गया बनाया हुआ है अल्लाह गालिब बहुत जानने वाले का।

उपयुक्त आयतों में कई बातें विचार के योग्य हैं। मैं पहले आकाश की उत्पत्ति का लेता हू, जिसका, उत्पत्ति से पूव, कुर्आन् ने धुआ बताया है।

सेल साहब अपने अंग्रेजी तर्जुमे मे यह नोट देते हैं —

Or darkness Al zamakhshari says this smoke proceeded from the waters under the throne of God (which throne was one of the things created before the Heavens and the earth), and rose above the water, that the water being dried up, the earth was formed out of it, and the heavens out of the smoke which had mounted aloft

अथ —आकाश धूआ अर्थात् अधकार था। अल् जमख्शरी का कहना है कि यह धूआ ईश्वर के तख्त के नीचे पानी मे से निकला (जो तख्त, आकाश और पृथिवी से पूर्व उत्पन्न की हुई चीजों मे से एक था) और पानी से ऊपर उठा, जब पानी सूख गया तो उससे पृथिवी बनाई गई और जो धूआ ऊपर चढ़ गया था उससे आकाश बनाए गए।

एक जगह आकाश को क़ुर्आन् ने छत बताया है और पृथिवी को बिछौना। यह सातों आकाश ऊपर तले हैं। और सब से पहले आकाश मे, जो हमारी दुनिया का आकाश है, उसमे, चिराग या कदीलें जड दी हैं (जो तारे हैं) यह तारों के चिराग आकाश की रक्षा का भी काम देते हैं, अर्थात् जब शयातीन (शैतान का बहु वचन है) आकाश की छिपी बातें सुनने के लिए ऊपर चढ़ते हैं, तो फ़रिश्ते उन पर तारों को फेंक २ कर खदेड़ देते हैं, बारहवीं आयत में "हिफ़्ज़न्" इसी बात की ओर सकेत करता है।

सेल साहब बैज़ावी के हवाले से फ़र्माते हैं —

For the Mohamedans imagine that the devils endeavour

to ascend to the constellations, to pry into the actions and overhear the discourse of the inhabitants of heaven, and to tempt them

For when a star seems to fall or shoot, the Mohammedans suppose the angels, who keep guard in the constellations, dart them at the devies who approach too near.

अर्थ –मुसल्मानों का विचार है कि शैतान लाग आकाश वासियों की बातें चुपचाप सुनने, उनके कामों की खोज लगाने और उनको बहकाने के लिए तारामण्डल में चढ़ जाने का प्रयत्न करते हैं।

इस लिए जब काई तारा गिरता या टूटता दिखाई देता है तो मुसल्मानों का विचार है कि फ़रिश्ते, जो तारा मडल की चौकसी करते हैं, उन शैतानों पर तारे फेंक कर मारते हैं जो बहुत निकट पहुँच जाते है।

डिपूटी नज़ीर अहमद साहब अपने तर्जुमे कुर्आन् में नोट देकर फ़र्माते हैं—'हिफ़ाजत का इशारा शायद उस मजमून की तरफ़ है कि शयातीन आलमे बालाको वहा की बातें सुनने जाते हैं तो उनको शहाब (टूटने वाला सितारा) फेंक कर खदेड़ दिया जाता है और यह मुआमिला दाखिल इस्रार ए इलाही (ईश्वरीय रहस्य) है जिनको खुदा ने किमी मस्लहते (भलाई) से हम पर जाहिर नहीं फ़र्माया।

मौलाना मुहम्मद अली साहब 'हिफ़्ज़न्' के सबध में बिल्कुल चुप हैं। उनको मुसल्मानों के उपर्युक्त विचार के विरुद्ध या जुदा कोईबुद्धिपूर्वक समाधान नहीं हुआ। क़ुर्आन् नक्षत्र राशि और तारामडल का सातों आसमानों से जुदी चीज़ वर्णन करता है और उनको पहले आसमान में चिरागों की तरह जडे हुए बताता है। बाकी के छ आसमानों से इन तारों और नक्षत्रों का कोई सबध नहीं बताया गया है। और न सातों आसमानों में एक ही प्रकार का हुक्म या नियम है।

इससे साफ़ पता चलता है कि मौ० मुहम्मद अली सा० का इस सबध में समाधान मानने के योग्य नहीं है हा, इतना मान सकते हैं कि उनकी कोशिश प्रशसनीय है जो वह सत्यार्थ प्रकाश की रोशनी मे कर रहे हैं।

डि० नज़ीर अहमद साहब देहलवी ने तो स्पष्ट कह दिया कि यह भेद की बात है जो किसी कारण से हमको बताई नहीं गई है।

दूसरी बात जिसपर विचार करना है वह दुनिया की पैदाइश के ६ दिन की है।

तफ्सीर मआलमुत्तज़ीन पहले दो दिन को आदित्य और सोमवार बताती है, बीच के चार दिनों मे से आदित्य और सोम निकाल कर जोकि इन चार दिनों में सम्मिलित हैं बाकी दो दिन मगल और बुद्ध में ज़मीन में रोज़ी वगैर (भोजनादि) का रखना बताती है और इस बात पर बल दिया है इस सख्या में कोई न्यूनाधिकता नहीं है और जो कुछ हुआ है इसी तरह हुआ है। अत में सात आसमानों को दो दिन अर्थात् बृहस्पति व शुक्र को उत्पन्न किया है।

सेल साहब भी पहले दो दिनों को "The two first days of the week" अप्ताह के पहले दो दिन बताते हैं। और बीच के चार दिनों में दो दिन बताते हैं। और बीच के चार दिनों में पहले दो दिन शामिल मानते हैं—That is, incl uding the two former days where in the earth was created "

और अन्त के दो दिन के सम्बन्ध में बैज़ावी के हवाले से सेल साहब फर्माते हैं।

It is said the heavens were created on Thursday, and the sun, moon and stars on Friday, in the evening of which last day Adam was made

अथ —यह कहा जाता है कि आसमान बृहस्पतिवार को उत्पन्न किए गए और सूर्य्य, चन्द्र, और तारे शुक्र को और इस अतिम दिन की शाम को आदम बनाया गया।

मौ० मुहम्मद अली सा० पृथिवी का छ अवस्थाओं में से गुज़रना बताते हैं जिसकी अवधिका कोई वर्णन नहीं है।

The first stage was that in which it was in a fiery state and the second that in which a crust was formed Then there are the four stages of Verse 10, the making of mountains, then blessing the earth or causing the waters to flow in it, and lastly the creations therein of foods which includes the creation of Vegetable life in the third stage and that of animal life in the fourth

अर्थ—पहली अवस्था वह थी जिसमें पृथिवी आग्नेय दशा में थी और दूसरी अवस्था वह थी जिसमें वह पड़त के रूपमें थी। फिर आयत १० की चार अवस्था हैं—पहाड़ों का उत्पन्न करना, फिर सुख की स्थापना अथवा जलों का प्रवाहित करना और अंत में भोजन का निर्माण जिसमें वनस्पति तीसरी अवस्था में, और जीवधारी चौथी अवस्था में हुए।

अहमदी फ़िर्के के बानी मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहब अपनी किताब "चश्म-ए-मरफ़त" के सफ़े १११ पर तहरीर फ़र्माते हैं कि "छः दिन से मुराद एक बड़ा ज़माना है"। (शेष फिर)

"आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य और ऋषि दयानन्द"

(लेखक-आचार्य प० चन्द्रकान्तजी वेदवाचस्पति 'गुरुकुल सूपा' (नवसारी)

मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र ने अनार्यों को हराकर आर्यावर्त को आर्य-विजय से अलंकृत किया। योगेश्वर कृष्णचन्द्र ने अपने चातुर्य से कंस, जरासंध तथा दुर्योधन जैसे शत्रुओं को नष्ट करके भारतवर्ष के अखंड साम्राज्य की नींव डाली "एतद्‌द्द गुरुभार। भारतवर्षमद्य मम वर्तते वशे" बुद्धदेव ने राजपाट को छोड़कर मार-पराजय से आत्म विजय किया। इसी प्रकार महर्षि दयानन्द ने भारत की लूटी हुई-नष्ट हुई संस्कृति को लौटाकर इस शताब्दि में आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य का स्वप्न देखा और दिखाया। इनके एक एक ग्रन्थ में जगह जगह पर यह स्वप्न खड़ा किया गया है। (१) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के 'राजा' प्रजा और धर्म विषय में "राजा मे प्राणों अमृत ७ सम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम्" य० अ० २०।३।६ की व्याख्या मे ये लिखते हैं—अमृत स्वरूप जो ब्रह्म और मोक्ष सुख है वही मेरा चक्रवर्ती राजा है। इससे स्पष्ट है कि महर्षि की दृष्टि में चक्रवर्तित्व मोक्ष सुख के समान अन्तिम ध्येय है।

(२) आगे इसी प्रकरण में लिखते हैं—परमेश्वर की कृपा से मनुष्य के राजकर्म, चक्रवर्ती राज्य-भोग का राज्य-अपना राज्य विविध राज्य और अपने वश का राज्य इत्यादि उत्तम उत्तम सुख बढ़ते हैं। इसलिये उस परमात्मा को मेरा बारम्बार नमस्कार है। जिसका नाम इन्द्र अर्थात् परमैश्वर्य युक्त है वही हमारा सम्राट् अर्थात् चक्रवर्ती राजा और वही हमको भी चक्रवर्ती राज्य देनेवाला है।

महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में यह भावना इतने उत्कृष्ट रूप में प्रकट हुई है कि भावावेश में ऋषि प्रकरण का भी विस्मरण कर गये प्रतीत होते हैं। इनके रोम रोम में भारत के प्राचीन सांस्कृतिक विजय की विद्युत् संचार कर रही थी। अष्टम समुल्लास मे आर्य-दस्यु के विषय के स्पष्टीकरण में लिख गये हैं—"इक्ष्वाकु से लेकर कौरव पांडव तक सर्व भूगोल में आर्यों का राज्य और वेदों का थोड़ा थोड़ा प्रचार आर्यावर्त से भिन्न भिन्न देशों में भी रहता था। इसमें यह प्रमाण है कि ब्रह्मा का पुत्र विराट, विराट् का मनु, मनु के मरीच्यादि दश, इनके

स्वायम्भवादि सात राजा और उनके संतान इक्ष्वाकु आदि राजा जो आर्यावर्त के प्रथम राजा हुये जिन्होंने यह आर्यावर्त बसाया है। अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी; किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतंत्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है, जो कुछ है सो भी विदेशियों के नीचे पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतंत्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने पराये के पक्षपात से शून्य, प्रजापर माता पिता के समान कृपा न्याय, और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायी नहीं है। परन्तु भिन्न २ भाषा, पृथक् २ शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है"।

दशम समुल्लास में गौरक्षा के बारे में स्पष्टीकरण करते हुए लिखते हैं कि— देखो। जब आर्यों का राज्य था तब वे महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे। तभी आर्यावर्त का अन्य भूगोल देशों मे बड़े आनन्द मे मनुष्यादि प्राणी वर्तते थे क्योंकि दूध, घी, बैल आदि पशुओं की बहुताई हने से अन्न रस पुष्कल प्राप्त होते थे। जब से विदेशी मांसाहारी इस देश मे आके गौ आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमश आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है।"

दशम समुल्लास में ही आगे लिखते हैं कि देखो महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भूगोल के राजा-ऋषि महर्षि आये थे एक ही पाकशाला से भोजन किया करते थे। देखो, काबुल, कंधार ईरान, अमेरिका, यूरोप आदि देशों की राज घरानों की कन्यायें गांधारी, माद्री, उलोपी आदि के साथ आर्यावर्त देशीय राजा लोग विवाह आदि व्यवहार करते थे। शकुनि आदि कौरव, पांडवों के साथ खाते पीते थे। कुछ विरोध नहीं करते थे। क्योंकि उस समय सर्व भूगोल में वेदोक्त एक मत था। उसी में सबकी निष्ठा थी। और एक दूसरे का सुख, दुःख, हानि, लाभ, आपस में अपने समान समझते थे। तभी भूगोल मे सुख था।

तृतीय समुल्लास में स्त्री शिक्षा के बारे में विचार करते हुए लिखा है" देखो, आर्यावर्त के राजपुरुषों की स्त्रियों धनुर्वेद अर्थात् युद्ध विद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं क्योंकि जो न जानती होती तो केकयी आदि दशरथ आदि के

साथ युद्ध में क्योंकर जा सकतीं ? और युद्ध कर सकतीं ? इसी समुल्लास में दृष्टान्त रूप में ' पठन पाठन विधि" का वर्णन करते हुए लिखते हैं—जैसे चक्रवर्ती राजा के राज्य मे माण्डलिक और भूमि वालों की प्रवृत्ति होती है। वैसे माण्डलिक राजादि के राज्य में चक्रवर्ती की प्रवृत्ति नहीं होती। इसी प्रकार पाणिनि महर्षि ने सहस्र श्लोकों के बीच में अखिल शब्द, अर्थ, और सम्बन्धों की विद्या प्रतिपादित करदी है। उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि स्वामीजी की आखों के सामने हर समय चक्रवर्ती साम्राज्य की भावना ही खड़ी रहती थी।

दशम समुल्लास में पूर्वपक्षी के "विदेश यात्रा करने पर आचार नष्ट होता है वा नहीं" इस प्रश्न के उत्तर में स्वामीजी ने अनेक ऐतिहासिक प्रमाण देकर यह साबित किया है कि देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में जाकर व्यापार वाणिज्य तथा धर्म प्रचार की वृद्धि अवश्य करनी चाहिये। उदाहरण के लिये वे लिखते हैं "माद्री पाण्डु की स्त्री" "ईरान" के राजा की कन्या थी और अर्जुन का विवाह पाताल में जिसको अमेरिका कहते हैं वहाँ के राजा की लड़की उलोपी के साथ हुआ था। जो देश देशान्तर, द्वीप द्वीपान्तर में न जाते होते तो ये सब बातें क्योंकर हो सकतीं ? मनुस्मृति में जो समुद्र में जानेवाली नौकापर कर लेना लिखा है वह भी आर्यावर्त से द्वीप द्वीपान्तर में जाने के कारण है। और जब महाराजा युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया था उसमें सब भूगोल के राजाओं को बुलाने को निमन्त्रण देने के लिये भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव चारों दिशाओं में गये थे, जो दोष मानते होते तो कभी न जाते। सो प्रथम आर्यावर्तीय लोग व्यापार राजकार्य और भ्रमण के लिये सब भूगोल में घूमते थे, 'जो मनुष्य देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर आने जाने मे शका नहीं करते वे देश देशान्तर के समागम, रीति भाति देखने, अपना राज्य और व्यवहार बढ़ाने से निर्भय, शूरवीर होने लगते और अच्छे व्यवहार का ग्रहण, बुरी बातों के छोड़ने में तत्पर होके बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं।

"क्या देश-देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में राज्य वा व्यापार किये बिना स्वदेश की उन्नति कभी हो सकती है ? जब स्वदेश ही मे स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यापार वा राज्य करें तो बिना दारिद्रय और दुःख के दूसरा कुछ नहीं हो सकता। पाखण्डी लोग यह समझते हैं कि—जो हम इनको विद्या पढ़ावेंगे और देश देशान्तर में जाने की आज्ञा देवेंगे तो ये बुद्धिमान, होकर हमारे

पाखण्ड जाल में न फँसने से हमारी प्रतिष्ठा और जीविका नष्ट हो जायगी। इसलिए भोजन छादन में बखेड़ा डालते हैं कि वे दूसरे देश मे न जा सकें।

उपर्युक्त उद्धरणों मे स्वामी दयानन्दजी महाराज के हृदय की आग दिखाई देती है। वे आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य के उपासक थे। मध्यकाल में पण्डितों ने प्रजा को अंधकार में रखकर विदेश यात्रा से पराङ्मुख रक्खा था। परन्तु स्वामीजी ने वैदिक साहित्य की आत्मा को हमारे सम्मुख खोलकर रक्खा और बताया कि "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का नाद गुंजाने वाले आर्य "वसुधैव कुटुम्बकम्" को मानते हैं। वे विश्व को अमर संस्कृति परिवार समझते हैं।" सा प्रथमा संस्कृति विश्व-वारा "आर्य इस दुनिया में नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में शांति फैलाने वाला है। "द्यौ शान्ति अन्तरिक्ष शान्ति शान्तिरव शान्ति" स्वामीजी कूप मण्डूक न थे परन्तु विश्व विहारी विहगम थे। उन्होंने वेदों में से संपूर्ण विज्ञानों के बीज बताकर हमे प्रकृति विजय सिखाया है। समुद्र गच्छ स्वाहा" 'दिव गच्छ स्वाहा" सूर्यं गच्छ स्वाहा" हम द्यु समुद्र सब लोकों के यात्री हैं। आर्यों की सेना की यात्रा बिना रोक टोक के हर जगह के लिये है। मनु महाराज ने कहा है—' एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन स्व स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वे मानवा " कि आर्य लोग समस्त ससार पर संस्कृति विजय किया करते थे। वह विजय ' अग्रत चतुरो वेदान् पृष्ठत सशर धनु इद ब्रह्मम् इद क्षात्र शापादपि शरादपि"के अनुसार ब्रह्म शक्ति तथा क्षात्रशक्ति दोनों की सहायतासे हुआ करता है। वैदिक धर्म के सार्वदेशिक,सार्वकालिक धर्म होते हुए भी कहना होगा कि जब भारतवर्ष वैदिक धर्म के प्रचार का केन्द्र था और यहाँ से विद्वान् प्रचारक विविध देशों में जाया करते थे। तब भारत एक संसार व्यापी राष्ट्र संघ का भी केन्द्र स्थान था। तब भारत के सम्राट् बलुचिस्तान, तिब्बत, अफगानिस्तान, चीन, फ़ारस, के स्थानीय राजाओं को सम्मति प्रदान किया करते थे। उन दिनों भारतीय लोग कम्बोडिया चम्पा, लंका, फिलिपाइन्स, रोम, यूनान, मिश्र, आस्ट्रेलिया द्वीप, पेरू मेक्सिको न्यूज़ीलेन्ड, पूर्वं तथा दक्षिण अफ्रिका में Colonies (उपनिवेश) बसाते थे। ये आधुनिक यूरोपियन, अमेरिकन, अफ्रीकन आदि सभी हमारे पुरखाओं के वंशज हैं। इस सचाई को ऐतिहासिक लोगों ने प्रमाणित किया है। डाक्टर रिवर्स ने ' संस्कृति-प्रसार" का सिद्धान्त स्थापित किया था। परम्परा के आधार पर यह विश्वास किया जाता है कि इजिप्त, मिश्र

तथा अन्य प्राचीन देशों में सस्कृति का प्रसार सूर्य पुत्रों ने किया है। जिनकी वशावली को पुराने भारत में ही ढू ढा जा सकता है। थोड़े अरसे पूर्व अमेरिका में बुद्ध या किसी भारतीय सन्त की मूर्तियाँ भारतीय वेश मे ही ध्यान मुद्रा में मग्न पैर पर पैर रक्खे हुए पाई गई हैं। जब यूरोपियन लोग पेरू पहुंचे तो उन्होंने देखा कि वहा राम सीता उत्सव मनाया जाता है। अमेरिका में एक अनुश्रुति है कि मेक्सिको में सभ्यता का प्रचार करने वाला पूर्व से, लंका से आया था। जिसका नाम सालकटन्कट था।

कहने का तात्पर्य यह कि आर्य सस्कृति का प्रभाव सारे ससार पर हुआ है। इस शताब्दि में यह सत्य स्वामी दयानन्द ने हमें बताया। और हमें अमर बनाया

(शेष अगले अङ्क में)

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास सम्बन्धी कुछ टिप्पणियां

(लेखक—श्री प० चन्द्रभानुजी सिद्धान्त भूषण पुरोहित आर्य्य समाज हनुमानरोड नई देहली)

सत्यार्थ-प्रकाश के स्वाध्याय और प्रचार में सहायता देने तथा ऋषि दयानन्द के विशाल अध्ययन और सकलन का यत्किंचित् परिचय देने की दृष्टि से एकादश समुल्लास सम्बन्धी कुछ टिप्पणी दी जाती हैं। ऋषि के मूल लेख की पृष्ठ सख्या तथा पक्ति सख्या वैदिक यन्त्रालय मुद्रित सत्यार्थ-प्रकाश के १९ वें सस्करण सवत् १९८२ के अनुसार लिखी गयी है।

(१) मूल—देखो। कि एक "जकालियट' साहब पेरिस अर्थात् फ्रांस देश निवासी अपनी "बाइबिल इन इन्डिया" में लिखते हैं कि सब विद्या और भलाइयों का भण्डार आर्यावर्त्त देश है और सब विद्या तथा मत इसी देश से फैले हैं। और परमात्मा की प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर। जैसी उन्नति आर्यावर्त्त देश की पूर्वकाल में थी वैसी ही हमारे देश की कीजिये (पृष्ठ १७८ पक्ति २३ से)

टिप्पणी—श्री "जकालियट" महोदय चन्द्रनगर French के चीफ जस्टिस थे। इनकी Bible in India पुस्तक २५ फर्वरी सन् १८६९ ई० को प्रकाशित हुई। इसका हिन्दी अनुवाद श्री सन्तराम जी बी० ए० द्वारा कृत प्रकाशित हो चुका है। पुस्तक का आरम्भिक अनुवाद इस प्रकार है "प्राचीन भारत भूमि, मनुष्य जाति के जन्म स्थान, तेरी जय हो। पूजनीय और समर्थ धात्री, जिसको नृशस आक्रमणों की शताब्दियों ने अभी तक विस्मृति की धूल के नीचे नही दबाया, तेरी जय हो।

श्रद्धा, प्रेम, कविता और विज्ञान की पितृभूमि, तेरी जय हो। क्या कभी ऐसा दिन भी आवेगा, जब हम अपने पाश्चात्य देशों मे तेरे अतीत काल की सी उन्नति देखेंगे।

(२) मूल—जब ब्राह्मण लोग विद्याहीन हुए तब क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के अविद्वान् होने में तो कथा ही क्या कहनी। जो परम्परा से वेदादि शास्त्रों का अर्थ सहित पढ़ने का प्रचार था वह भी छूट गया। सम्मति करके यही निश्चय कर क्षत्रिय आदि को उपदेश करने लगे कि हम ही तुम्हारे पूज्य देव हैं। बिना हमारी सेवा किये तुमको स्वर्ग वा मुक्ति न मिलेगी यहा तक किया कि

"हम भूदेव हैं" हमारी सेवा के बिना देवलोक किसी को नहीं मिल सकता। (पृष्ठ १७६ पंक्ति ७ से)।

टिप्पणी—केवल नामधारी ब्राह्मणों की इस भावना को पुष्ट करने के लिये पौराणिक साहित्य के निम्न श्लोक द्रष्टव्य हैं—

यस्य विप्राः प्रसीदन्ति तस्य विष्णुः प्रसीदति।
तस्माद् ब्राह्मणशुश्रूषु परं ब्रह्माधिगच्छति॥

भविष्य पुराण मध्यम पर्व अध्याय ५

भावार्थ—जिससे ब्राह्मण प्रसन्न होते हैं उससे विष्णु खुश रहता है इसलिये ब्राह्मणों की सेवा करने वाले को परब्रह्म की प्राप्ति होती है

न यज्ञयोगैर्न तपोभिरन्यैर्न योग युक्त्या न समर्चनेन।
तथा विभुस्तुष्यति देवदेवो यथा महीदैवत तोषणेन॥

पद्मपुराण पाताल खण्ड अ० ८४

भावार्थ—देवों का देव परमात्मा जितना भूदेव (ब्राह्मण) को सन्तुष्ट करने पर प्रसन्न होता है उतना न तो यज्ञों से, न अन्य तपों से, न योग साधन से और न भक्ति करने से प्रसन्न होता है।

ब्राह्मणेषु पुराणेषु गङ्गायां गोषु पिप्पले।
नारायण धिया पुंभि र्भक्तिः कार्या ह्यहैतुकी॥

पद्मपुराण स्वर्ग खण्ड अ० ६१

भावार्थ—पुरुषों को ब्राह्मणों में, पुराणों में, गङ्गा में, गौवों में तथा पीपल में बिना किसी हेतु के नारायणबुद्धि से भक्ति रखनी चाहिये।

(३) मूल—"बहुतों ने इनका (जैनियों का) मत स्वीकार किया परन्तु कितने कहीं जो पर्वत, काशी, कन्नोज पश्चिम, दक्षिण देशवाले थे उन्होंने जैनों का मत स्वीकार नहीं किया था वे जैनी वेद का अर्थ न जान कर बाहर की पोपलीला भ्रान्ति से वेद पर मान कर वेदों की ही निन्दा करने लगे।" (पृष्ठ १८४ पंक्ति २६ से)

टिप्पणी—प्रसिद्ध वर्तमान इतिहास लेखक श्री हरिमंगल मिश्र एम० ए० ने अपने ग्रन्थ "प्राचीन भारत के इतिहास" के पृष्ठ १९६ ९७ पर लिखा है "जैन मत ने कभी भारत में अधिक बल नहीं पकड़ा, पर कभी २ किसी २ राज्य के

राजाओं ने इस मत को स्वीकार करके कुछ प्रचार किया; इस मत ने वेदों को प्रामाणिक नहीं माना।"

(४) मूल—"धिक् धिक् कपालं भस्म रुद्राक्षहीनम् ॥१॥
रुद्राक्षान् कण्ठदेशे दशन परिमितान्मस्तके विशती द्वे
षट् षट् कर्णप्रदेशे कर युगल गतान् द्वादशान्द्वादशैव।
बाह्वोरिन्दोः कलाभि' पृथगिति गदितमेकमेव शिखायाम्,
वक्षस्यष्टाऽधिकं य' कलयति शतकं स स्वय नीलकण्ठः ॥२॥

इत्यादि बहुत प्रकार के श्लोक [इन लोगों ने] बनाये और कहने लगे कि जिसके कपाल में भस्म और कण्ठ में रुद्राक्ष नहीं है उसको धिक्कार है। तं त्यजेदन्त्यजं यथा "उसको चाडाल के तुल्य त्याग करना चाहिये ॥१॥ जो कण्ठ में ३२, शिर में ४०, छः छ' कानों मे, बारह २ करों में, सोलह २ भुजाओं में, १ शिखा में और हृदय में १०८ रुद्राक्ष धारण करता है वह साक्षात् महादेव के सदृश है।" (पृष्ठ १६२ पंक्ति २२ से)

टिप्पणी—सत्यार्थ-प्रकाश में लिखित इन श्लोकों को शिवपुराणोक्त निम्न श्लोकों के साथ तुलनात्मक दृष्टि से पढ़ें—

धिग्भस्मरहित भाल धिग्राममशिवालयम्।
धिगनीशार्चनं जन्म धिग्विद्यामशिवाश्रयाम ॥

शिवपुराण विद्येश्वरसहिता अ० २४ श्लोक ४५

भावार्थ—जिस माथे पर भस्म न लगी हो उसे धिक्कार है, जो ग्राम शिवालय शून्य हो उसे धिक्कार है ईश वन्दना रहित जीवन को धिक्कार है तथा शिवाश्रयविहीना विद्या को धिक्कार है।

विभूतिर्यस्य नो भाले नाङ्गे रुद्राक्षधारणम्।
नास्ये शिवमयी वाणी तं त्यजेदधम यथा ॥

विद्येश्वर संहिता अध्याय २३ श्लोक १३

भावार्थ—जिसके माथे पर भभूत (भस्म) न हो, अंग में रुद्राक्ष न पहने हो, मुख में जय शिव जय शिव अथवा नम शिवाय व इत्यादिक वाणी न हो उसको चाण्डाल के तुल्य त्याग देना चाहिये।

शिखायां च त्रयं प्रोक्तं रुद्राक्षाणां महेश्वरि ।
कर्णयो: षट् च षट् चैव वामदक्षिणयोस्तथा ॥
शतमेकोत्तरं कण्ठे बाह्वोर्वै रुद्रसंख्यया ।
कर्पूर द्वारयोस्तत्र मणिबन्धे तथा पुनः ॥
उपवीते त्रयं धार्यं शिवभक्ति रतैर्नरैः ।
शेषानुवर्तिताम पंच सम्मितान् धारयेत्कटौ ॥
एतत् संख्या धृता येन रुद्राक्षा: परमेश्वरि ।
तद्रूपं तु प्रणम्यं हि स्तुत्य सर्वै महेशवत् ॥

विद्येश्वर संहिता अ० २५ श्लोक २८ से ३१ तक

भावार्थ—हे पार्वति । शिखा में तीन रुद्राक्षों का धारण करना कहा है और दायें तथा बायें दोनों कानों में छः छः धारण करने चाहियें ॥२८॥ एक सौ एक कण्ठ में तथा दोनों भुजाओं में ग्यारह धारण करे और कर्पूर के द्वारों में, मणिबन्ध में और यज्ञोपवीत में शिव के भक्तों को तीन तीन रुद्राक्ष धारण करने चाहियें । शेष बचे हुए पाच को कटि प्रदेश में धारण करे ॥२९-३०) हे देवि । इतनी संख्या में जिसने रुद्राक्ष धारण किये हों. उसका रूप शिव के समान ही स्तुति तथा प्रणाम करने योग्य है ॥३१॥

अन्य टिप्पणी लिखने से लेख बढ़ जावेगा । सम्प्रति आवश्यकता है कि सत्यार्थप्रकाश सम्बन्धी आन्दोलन और उसके प्रचार के साथ २ सत्यार्थप्रकाश की विस्तृत व्याख्या अथवा भाष्य की ओर भी हमारी शिरोमणि सभायें विशेष ध्यान दें । आर्यप्रादेसिक सभा की ओर से भी केवल दो समुल्लासों का भाष्य निकल कर रह गया है । इस ओर हमारी विशेष प्रगति हो, प्रगति हो ।

हमारा प्यारा वैदिक धर्म

ज्ञान का उज्ज्वल शुभ्र प्रकाश।
करे अज्ञान निशा का नाश॥
काटता प्रकृति अन्य भव-पाश।
दिलाता ईश-प्राप्ति की आश॥
सिखाता सदाचार सत्कर्म।
हमारा प्यारा वैदिक धर्म॥

गुँजाता वेदों का नित नाद।
विश्व भर में भरता आल्हाद॥
कभी न छोड़े निज मर्याद।
प्राप्त कर प्रभु का पुण्य-प्रसाद॥
सत्य का नित धारे शुचि वर्म।
हमारा प्यारा वैदिक धर्म॥

जगत को सदा शान्ति सन्देश।
दिया करता है यह निश्शेष॥
जनों के मन के हरता क्लेश।
त्रिविध दुख का मेटे लव-लेश॥
सुखद अति सुप्रभ, सुहृद अति नर्म।
हमारा प्यारा वैदिक धर्म॥

दिये जिसके हित ऋषि ने प्राण।
सहा जिसके हित नित अपमान॥
कहीं पर ईंट कहीं पाषाण।
सहे पर तजी न 'रवि' निज आन॥
होंय उस पर बलि तजि भय शर्म।
हमारा प्यारा वैदिक धर्म॥

न आर्य धर्म, देश, हित काम।
धरणि धन धान्य रत्न अभिराम॥
भव्य भूधर से भवन ललाम।
व्यर्थ फिर ये सारे आराम॥
वृथा नर-देह अखिल अरु चर्म।
हमारा प्यारा वैदिक धर्म॥

रविवर्मा आर्य 'रवि'
प्रधानाध्यापक
ए. डी. वी. स्कूल आर्य समाज उज्जैन

आर्य समाज के एक चमकते रत्न

पूर्व अफ्रीका के स्वर्गीय सेठ मथुरादास जी

(लेखक—स्वामी भवानी दयाल जी)

ऐसे सेठ-साहूकारों को मैं भारत माता की छाती पर एक भार समझता हूँ और उनके लिये मेरे हृदय मे आदर-भावना का सर्वथा अभाव ही है। जो येन केन प्रकारेण अपनी व्यक्तिगत समृद्धि की अभिवृद्धि में सन्नद्ध रहते हैं और देश राष्ट्र एव समाज के प्रति अपने मानवी कर्तव्य की उपेक्षा करने में कोई संकोच नहीं करते। ऐसे सूम और स्वार्थी मनुष्यों के लिये एक हिन्दी कवि ने उचित ही कहा है—

"तुच्छ धूल में उपजा था वह, उस ही में मिल जावेगा।
उस पापी के लिये न कोई, आंसू एक बहावेगा॥

पर पूर्वीय अफ्रीका अन्तर्गत (टगेनिका) प्रदेश के दारस्सलाम निवासी सेठ मथुरादास कालिदास मेहता इससे भिन्न श्रेणी के सौदागर थे। उनके पास एक ऐसा हृदय था, जिसमें देश के उत्थान, राष्ट्र के कल्याण और समाज के सम्मान के लिये अविच्छिन्न कामना थी। वे एक सहृदय, सदाचारी, सत्यनिष्ठ, स्नेहशील और सर्वप्रिय सौदागर थे। जनता मे उनका मान था और सरकार में सम्मान। उनका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक था उनमें कार्य-सम्पादन की अद्भुत क्षमता थी और अहकार एव आत्मश्लाघा से वे विरक्त थे। समीप से देखने पर उनकी विशुद्ध मनोवृत्ति, उच्चाशय और सद्गुणों का परिचय मिल जाता था।

लगभग एक दशाब्दी तक उनसे मेरा परिचय रहा और इस दरम्यान में मैं उनके जीवन की कार्य पद्धति का बराबर अध्ययन करता रहा। सन् १९३९ में उनसे मेरी घनिष्टता बहुत बढ़ गई। उस साल मैं नेटाल इण्डियन काँग्रेस के प्रधान की हैसियत से हिन्दुस्तान आ रहा रहा था, उस पृथक्करण योजना के विरोध में यहाँ की जनता को जगाने तथा सरकार का दरवाजा खटखटाने, जो दक्षिण अफ्रीका के आन्तरिक मन्त्री मि० (स्टाटफोर्ड) ने प्रवासी भारतीयों को अछूतों की भाँति

अलग बसाने के लिये बनाई थी। जब मेरा जहाज (दारस्सलाम) के बन्दरगाह पर पहुँचा तो सबसे पहले मथुरादास के दर्शन हुए। क्षीण शरीर, मध्यम कद, श्याम वर्ण, मुख पर प्रतिभा, आँखों में दिव्य ज्योति, बातों में माधुर्य और स्वभाव में सरलता की झलक। उनकी सादगी और निरभिमानता देख कर यह कल्पना भी करना कठिन था कि वह कोई समृद्धिशाली सौदागर और कुशल काश्तकार हैं।

उस दिन शाम को (दारस्सलाम) के इंडियन एसोसियेशन में सार्वजनिक व्याख्यान देकर मुझे शहर से कुछ दूरीपर समुद्र-तटपर स्थित सेठ मथुरादास जी के "चन्द्रविला" पर जाना पड़ा था। चान्दनी रात में "चन्द्रविला" चमक रहा था, उस शांत और एकान्त स्थान की सुषमा और समुद्र की उमड़ती हुई लहरें 'चन्द्रविला को शाभावृद्धि में सहयोग दे रही थीं। वैसा अनुपम दृश्य भाग्य ही से दृष्टिगोचर होता है। अफ्रीका का महाद्वीप में ऐसे सुन्दर और सौन्दर्य पूर्ण स्थान में और किसी हिन्दुस्थानी का बगला मेरे देखने में नहीं आया। 'चन्द्रविला' पर सेठ मथुरादास जी की ओर से मुझे एक प्रीतिभोज भी दिया गया था जिसमे नगर के अनेक गण्यमान्य सज्जनों के सिवा टंगेनिका की धारा सभा के सदस्य माननीय डाक्टर एस० बी० मलिक और माननीय डो० के० पटेल (टगेनिका) आपिनियन, के सम्पादक श्री यू० के० ओझा और टंगेनिका हेरल्ड के सम्पादक श्री बी० आर० बोल भी शरीक हुए थे। सेठ मथुरादास की आतिथ्य-सत्कार की भावना, उनका सौजन्यता नम्रता और विनयशीलता उनके आर्यत्व और श्रेष्ठ व्यक्तित्व का सूचक था।

सेठ मथुरादास पोरबन्दर के निवासी थे। वे अत्यन्त साधारण स्थिति में रोजी की खोज मे अफ्रिका गये थे। वहा अपने लगातार अध्यवसाय, पुरुषार्थ और परिश्रम से इतना धन पैदाकर लिया कि टगेनिका प्रदेश मे वे सर्वोपरि भारतीय व्यापारी और किसान माने जाने लगे। इनके ज्येष्ठ भ्राता श्री नानजी कालीदास मेहता भी एक मामूली मुनीम के पद से निरन्तर उन्नति करते हुए आज अफ्रिका और भारत के उच्च श्रेणी के व्यापारियों की पक्ति में पहुँच गये हैं। पूर्व अफ्रिका के यूगाण्डा प्रदेश में गन्ने की खेती और चीनी का कारखाना और पोरबन्दर मे कपडे की मिलों के सिवा और भी अनेक प्रकार के व्यवसाय के प्रताप से भारतके लक्ष्मी पुत्रों मे उनकी गणना

होने लगी है। केनिया और यूगान्डाके आर्य समाज और आर्य शिक्षा-संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य सार्वजनिक संस्थाएं भी आपसे आर्थिक सहायता प्राप्त कर चुकी हैं। आप अपने ही धन से पोरबन्दर मे आर्य कन्या गुरुकुल का निर्माण और सञ्चालन कर रहे हैं। इस लिये श्री नानजी भाई स्वदेश और विदेशों में पर्याप्त प्रसिद्ध हो चुके हैं और उनको प्राय लोग दानवीर की उपाधि से अलकृत करते हैं।

दोनों भाइयों के चरित्र का विश्लेषण करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा हू कि यदि नानजी भाई एक चतुर सौदागर हैं तो मथुरादास जी कर्म से व्यापारी होते हुए भी स्वभाव से साधु थे। इनके पास मस्तिष्क है, उनके पास हृदय था। अब कुछ दिनों से नानजी भाई की दान प्रणाली बदल गई है उन्होंने केवल अपनी संस्थाओं को आर्थिक सहायता देने का सकल्प कर लिया है किन्तु मथुरादास जी ने अपनी कोई संस्था नहीं बनाई—सभी सार्वजनिक संस्थाए उनसे सहायता पाती थीं। उनके दरवाजे से कोई खाली हाथ नहीं लौटता था। उनसे याचना करने वालों को कभी निराश नहीं होना पड़ता था। वे सात्विक दानी थे और आत्म विज्ञप्ति तथा प्रसिद्धि से विरक्त रहते थे। पूर्व अफ्रिका की कोई भी लोक-हितैषी संस्था उनकी सहायता से वचित नहीं थी।

दारस्सलाम के आर्यसमाज, आर्य विद्यालय और आर्य पुस्तकालय आदि संस्थाओं पर उनका विशेष अनुराग था और उनकी आर्थिक सहायता से आर्य-सामाजिक संस्थाएँ वहाँ ऐसी फूल फल रही हैं जिनपर आर्य जगत् अभिमान कर सकता है। प्रवासी भाइयों के तो वे ए० गौरवस्तम्भ थे ही, किन्तु हाल ही में सरकार ने भी उनके सद्गुणों पर मुग्ध होकर उनको (M B E) एम० बी० इ० की उपाधि से अलकृत किया था।

सन् १६४१ में उनस मेरी अन्तिम मुलाकात हुई थी। डरबन से बम्बई आते समय मेरा स्टीमर एक दिवस के लिये दारस्सलाम के बन्दरगाह पर ठहर गया था। वहा के भाइयों ने ऐसा कार्यक्रम बनाया था कि सारादिन मुझे अत्यन्त व्यस्त रहना पड़ा था, फिर भी मथुरादासजी का साथ एक क्षण के लिये भी नहीं छूटा। विदा होते समय उन्होंने पाच सौ रुपये का एक अग्रेजी टाइपराइटर मुझे भेंट किया था, जिसका मै प्रवासी भाइयों की सेवा मे ही उपयोग कर रहा हूँ। बिछुड़ते समय मेरे मन मे यह कल्पना भी नहीं हुई थी कि उनसे यह मेरा अन्तिम

मिलन है और इस जीवन में पुनर्मिलन की आशा नहीं है।

सेठ मथुरादास केवल ५१ वर्ष की आयु में अपने कार्यक्षेत्र दारस्सलाम में ही परलोक सिधार गये। उनकी मृत्यु से प्रवासी भारतीयों की भारी हानि हुई है, उनका एक सच्चा हितैषी उठ गया। विशेषतः (टगेनिका) प्रदेश में आर्य समाज के वे सुदृढ़-स्तम्भ थे और हिन्दुत्वके सच्चे हिमायती, किन्तु उन्होंने साम्प्रदायिकता का नग्न प्रदर्शन कर राष्ट्रीय मर्यादा का कभी उल्लंघन नहीं किया। वे एक परोपकारी, दानशील उदार भावनापूर्ण, सच्चरित्र और सहृदय सद्गृहस्थ थे; उनके रिक्त स्थान की पूर्ति कठिन ही है। टगेनिका प्रदेश के भाग्य की अन्धकारमयी रजनी में मार्ग प्रदर्शन करने वाला एक विशाल दीपक बुझ गया।

परमात्मा से मेरी विनय पूर्वक प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अनन्त शांति और उनके परिवार को वियोग जन्य वेदना सहने की शक्ति प्रदान करें।

(दारेसलाम आर्य समाज ने स्व० मथुरादास जी की बहुमूल्य सेवाओं की प्रशंसा करते हुए उनके देहावसान पर शोक सूचक प्रस्ताव प्रकाशनार्थ भेजा है हम भी आर्य जगत् की ओर से स्व० मथुरादास जी के सब सम्बन्धियों से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं—सम्पादक सा० दे०)

आर्य वर की आवश्यकता

हैदराबाद (दक्षिण) निवासी एक दृढ़ आर्य की कन्या के लिये जिसकी आयु २१ वर्ष है और जो दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, की राष्ट्र भाषा' और प्रयाग की हिन्दी विद्याविनोदिनी तथा विदुषी प्रथम खण्ड परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुकी है और गृह कार्य में निपुण है योग्य स्वावलम्बी सुशिक्षित दृढ़ आर्य वर की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार निम्न पते पर करें।

मार्फत—मन्त्री सार्वदेशिक आ० प्र० सभा

बलिदान भवन, देहली।

ऋषि दयानन्द के दर्शन

१५० वर्ष के वृद्ध योगी द्वारा

लेखक—श्री अलखधारी मुरादाबाद प्रधान आर्यसमाज पटियाला

मार्च १६४३ में मुझे एक वयोवृद्ध योगी का अकस्मात् दर्शन हुआ आपका शुभ नाम श्री सुखानन्दजी सरस्वती है। आप अपनी अवस्था लगभग १५० वर्ष की बताते हैं। सुखानन्द (योगी) जी का कथन है कि जब स्वामी विरजानन्दजी से उनका प्रथम साक्षात् हुआ उस समय दण्डीजी की अवस्था ४० वर्ष के लगभग थी। दण्डीजी २१, २२ वर्ष की आयु में प्रज्ञाचक्षु हुये थे। अष्टाध्यायी तथा चारों वेद मूलमत्र दण्डीजी को कण्ठस्थ थे देहावसान के समय दण्डीजी की अवस्था लगभग १०० वर्ष थी। सुखानन्दजी उस समय हिमालय में विचरा करते थे।

युवावस्था

योगीजी को जब ऋषि का प्रथमदर्शन हुआ तो स्वामी दयानन्दजी की आयु लगभग २५ वर्ष की थी लम्बा चौड़ा बलिष्ठ शरीर था मुख पर चेचक के हल्के चिन्ह अंकित थे आठों याम लंगोट बाँधे रहते। कमर पर एक अंगोछा मात्र लपेट लेते थे। शान्तमुखमण्डल संयम तथा सहनशीलता की आभा से दीप्तिमान् रहता था। दयानन्द और विरजानन्दजी का सम्मिलन अभी नहीं हुआ था।

वेदाध्ययन

दूसरी बार जब योगीजी का दयानन्दजी से समागम हुआ तो वे स्वामी विरजानन्दजी के पास विद्याध्ययन कर रहे थे। सुखानन्दजी ने ऋषि के सहपाठियों में से कुछ के नाम इस प्रकार बताये—मुकुन्ददेव, बला चौबे, प० केशवदेव, प० मनिराम, ज्वाला पण्डितादि। विद्याध्ययन काल में सुखानन्दजी कई बार दयानन्दजी स मिले। युवक ऋषि की विद्वत्ता व उनका तपोबल चित्ताकर्षक था। उनकी स्मरणशक्ति विलक्षण एवम् प्रशंसनीय थी। एक बार कोई सूत्र पढ़ लेते तो कभी भूलते न थे। पाठ याद करने तथा सूत्र कण्ठ करने के उपरान्त दयानन्दजी दण्डीजी से तर्क वितर्क करते। विरजानन्दजी इस वार्तालाप से प्रसन्न होते थे और

कह उठते "दयानन्द। 'तूने बहुत उच्च कोटि पर" जाना है। वैदिक धर्म को पुन स्थापित करना है। ससार की सोई हुई जातियों को जगाने का गुरुतर कार्य करना है। जिस वेदमत को ससार भूल गया है उस ईश्वरीय ज्ञान को 'पुन प्रकाशित करना है।'"

विरजानन्दजी दयानन्दजी से सदैव प्रसन्न रहते और स्नेह करते थे।

दयानन्द के सहपाठी उदयप्रकाश अर्वाचीन मत के अनुयायी थे। उदयप्रकाश और दय नन्द में कभी कभी शास्त्रार्थ हो जाता था। दयानन्दजी को उदयप्रकाश के विचारों से ग्लानि होगई थी।

पुरुषात्तमदासजी वल्लभाचार्य मत के गुसाई मथुरा में निवास करते थे। उन्होंने अपने आश्रम मे एक पाठशाला खोल रक्खी थी। इस पाठशाला मे विद्यार्थियों को सस्कृत की शिक्षा दी जाती थी। विरजानन्दजी कभी कभी अष्टाध्यायी की शिक्षा देने के लिये पुरुषोत्तमदासजी के आश्रम पर जाया करते थे। एक दिन शिक्षा देते समय अकस्मात् गु साईजी के शरीर से उनका करस्पर्श होगया। विद्यार्थियों ने हाहाकार मचाया। गु साईजी छिव गये (छू गये), स्नान करना होगा।

विरजानन्दजी ने कहा कि जो मास, मज्जा अस्थि, रुधिर आदि मेरे शरीर में है, जो दिव्य ज्योति मेरे अन्त करण मे प्रकाशत है, वही गु साईजी के हृदय में विद्यमान है, फिर छूत किससे, किस में क्यों और किस प्रकार लगी?

पुरुषोत्तमदासजी के तर्क करने पर विरजानन्दजी ने उन्हें फटकारा और उनके आश्रम में जाना बन्द कर दिया।

दयानन्दजी इस दृश्य को देख रहे थे विरजानन्दजी ने उनसे कहा 'इस अज्ञान एवम् छूत अछूत के पाखण्ड को नष्ट करने का भार तुम पर छोड़ते हैं। देववाणी के प्रकाश से ससार को आलोकित करने की आवश्यकता है। इसी महान् कार्य का पूरा करने के लिये ससार मे तुमने अवतार लिया है"

दयानन्दजी की अवस्था इस समय लगभग ४० वर्ष की थी। सदैव प्रफुल्लचित्त अभय और ईश्वराराधना में लीन रहते थे। परमात्मा का उनको साक्षात्कार था।

विशुद्धानन्दजी महाराष्ट्रीय ब्राह्मण वेद विद्या एवम् कर्मकाण्ड के धुरन्धर विद्वान् थे। दयानन्दजी ने उनसे निरुक्त समेत वेदाध्ययन किया और अल्पकाल

में ही वेद वेदांगादि समस्त ग्रन्थों को सम्पूर्णतया समाप्त कर लिया। दयानन्द के हृदय में यही तीव्र अभिलाषा थी कि मैं वेदों का अनुवाद ऐसी उत्तम आर्यभाषा में करू कि साधारण जनता भी सरलतापूर्वक समझ सके और लाभ उठावे।

योगाभ्यास

सुखानन्दजी ने दयानन्दजी को यमुना तट पर समाधि लगाकर योगाभ्यास करते देखा। दयानन्द की समाधि भीषण समाधि होती थी और ऋषि उसमे ऐसे तल्लीन हो जाते कि यदि उस समय कोई उन्हें जल में डुबा देता अथवा उनका शरीर प्रज्वलित चिता मे रख देता तो भी उनकी समाधि नहीं टूटती। दयानन्द प्रति दिन ५-६ घंटे समाधि लगाते थे—रात्रि को दो बजे तक नित्य नियम शौच स्नानादि से निवृत्त होकर निश्चेष्टभाव से समाधिस्थ हो जाते थे। शीतकाल माघ और पौष के महीनों मे सर्दी के प्रकोप से जब लोगों के दाँत से दाँत कट कटाते मनुष्य पशु पक्षी सभी तीव्र शीत के कारण त्राहि २ पुकारते, उस समय आकाश के साये, व खुले मैदान, मे कमर पर एक कौपीन तथा नीचे एक सादा लट्ठे का अगोछा बिछाये रात्रि के दो बजे दयानन्द समाधि में मग्न रहते थे।

वेदभाष्य

दयानन्द ने वेदांगादि समस्त विद्याओं को अल्पकाल में ही ग्रहण कर लिया तथा उनके गूढ़ तत्वों का ऋषि को पूर्ण अनुभव होगया।

ऋषि ने मिथ्या क्रिया—कीर्ति का त्याग कर वैदिक धर्म के मुख्य २ सिद्धान्तों का प्रचार किया—एवम् उन्हीं सिद्धान्तों पर ग्रन्थनिर्माण किये।

वेदभाष्यानुवाद काल में भी सुखानन्दजी दयानन्दजी से मिले और अनुभव किया कि दयानन्दजी प्रति क्षण वेद चिन्तन मे ही लीन रहते थे। उनके मस्तिष्क मे केवल एक ही विचार था और वह था वेदभाष्य का।

दयानन्दजी दिन मे कभी नहीं सोते थे।

नियोग

एक वार सुखानन्दजी ने नियोग के विषय में स्वामीजी से वार्तालाप किया। ऋषि ने उत्तर दिया कि वर्तमान काल की हीनावस्था एवम् आर्यजाति के पतन पर दृष्टि रखते हुये गुरु महाराज ने इस सिद्धान्त के प्रचार करने की आज्ञा दी है। इसी कारण मैंने नियोग विषय का अपने ग्रन्थों में प्रतिपादन किया है।

कर्म की प्रधानता

कर्मकाण्ड पर दयानन्दजी ने विशेष रूप से जोर दिया। उनका विचार था कि जबतक आर्यावर्त की समस्त जनता के आचरण शुद्ध व उच्च न होंगे उनकी मानसिक तथा आत्मिक उन्नति दुष्कर है। इसी मन्तव्य पर दृष्टिपात करते हुये ऋषि ने इस विषय का विस्तृत रूप से उल्लेख किया और प्रचार भी किया। ज्ञान एवम् उपासना के विषय में भी उनके ग्रन्थों में उल्लेख है किन्तु सूक्ष्म रूप से। कर्मकाण्ड विषय की भाँति विस्तारपूर्वक नहीं।

मुक्तजीव

स्वामी जी वास्तविक मुक्तात्मा थे उनके दर्शन एवम् सत्सग से चित्त में आनन्द और उल्लास का प्रादुर्भाव होता था मनोग्नि स्वत विलक्षण रूप से आच्छादित हो जाती ऐसा बोध होता कि आत्मा किसी श्रेष्ठ व पवित्र वायुमण्डल में विचरण कर रहा है।

ईश्वर प्रधान

ऋषि के सत्सग से स्पष्ट होता था कि वे ईश्वर के अनन्य भक्त हैं। उनका अटल विश्वास था कि आर्य जाति एवम् वैदिक धर्म के पुनरुद्धार में वे केवल ईश्वराज्ञा का ही पालन कर रहे हैं। उनके आयत्त्र म प्रभुरक्षा का हाथ सदैव विद्यमान रहता है। जिस कल्पतरु का बीज उन्होंने आर्यावर्त में बोया है तथा तन मन व आत्मसमर्पण द्वारा सिंचन किया है वह वृक्ष दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति को प्राप्त होगा। शीघ्र ही वह दिन आवेगा जब ससार के कोने २ मे वैदिक-धर्म का झंडा फहराता हुआ दृष्टिगोचर होगा।

THE VEDIC VARNA VYAVASTHA AND MODERN SOCIALISM

(By Shri Pt GANGA PRASAD JI M A President Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha)

(*Continued from August issue*)

21 Comparative values of knowledge, power and wealth The Vedic system of Varnas described above gives the first and foremost place to learning and character second place to power or physical strength, and assigns only the third place to wealth or riches This is most reasonable and also natural Do we not find that in the human body the head or brain which is the organ of knowledge has been placed at the top, then come the arms which are symbolical of strength, then the trunk which stands for wealth, and last of all the feet which administer the whole body, and are symbolical of service ? It may be further remarked that learning relates to the mind, strength to the body, while wealth is exterior ever to the body

22 Evils of giving predominance to wealth Most of the ills to which human society is subjected not only in this country, but throughout the world are due to the regertt able fact that wealth has improperly usurped the highest place in human affairs Whatever the form of Government in a country, whether absoulte, monarchy, or constitutional monarchy or republic or even socalled democracy, wealth, or the power of the purse as the phrase goes, predominates everything Even in democratical states nothing for parliamentary institutions is controlled and manipulated by the rich people, and thus the reins of government are practically in their hands, It is chiefly for such reasons that the socialists are so hostile to capitalism and the capitalists

23 Other Shastras also opposed to hereditary Caste System I have so far quoted and explained only one Veda Mantra (Rigveda x,90,11) to show that the Vedas do not sanction the hereditary system of castes I may quote some passages from other Shastras also Manu clearly says —

शूद्रो ब्राह्मणतामेति, ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातमेव तु, विद्याद्वैश्यात्तथैव च ॥
मनु० १० । ६५

"A Shudra can be elevated to the state of Brahman, and a Brahman may be degraded to the state of Shudra Similarly a man born of Kshatriya parents or Vaishya parents may be elevated or degraded (according to his actions) ' (Manu Y, 65)

Here are a few passages from Mahabharat and some other works

न विशेषोऽस्ति वर्णाना, सर्वं ब्राह्ममिद जगत् ।
ब्रह्मणा पूर्वं सृष्ट हि, कर्मणा वर्णता गतम् ॥
महाभारत शान्ति पर्व ।

"There is no ditinction of castes this whole world is created by God, Having been first created by God, it be came divided into varnas or classes accoding to their works (M B, Shanti Parva)

न कुलेन न जात्या वा, क्रियाभिर्ब्राह्मणो भवेत् ।
चाण्डालोऽपिहि वृत्तस्थो ब्राह्मण स युधिष्ठिर ॥

"Neither by family nor by birth, but by actions does a man become a Brahman, Even if a Chandal possesses a good character, he is a Brahman, O, Yudhishthira !"

न जात्या ब्राह्मणश्चात्र, क्षत्रियो वैश्य एव न ।
न शूद्रो न च वै म्लेच्छो भेदिता गुण कर्मभि ॥ (शुक्रनीति)

"It is not by birth that a man becomes a Brahman, or a Kshatriya, or a Vaishya or a Shudra, or even a Mlacchha All are divided by their qualities and actions" (Shukra Niti)

For a fuller and more detailed discussion on this subject the reader may be referred to Chapter I of the author's "caste system

24 **Dr Bhagwan Das Anicent versus modern scientific socialism** Dr Bhagwan Das who is a profound Sanskrit Scholar of great fame and has made a specially critical study of Manusmriti, has in his excellent treatise "Ancient versus Modern Scientific Socialism ', tried to establish that the varnashrama taught by Manu forms a "Plan of the Individual Life and the social life in combination for the whole of the Human Race He is of opinion that there are a good many features ln modern socialism, and even in Bolshevism "which are thoroughly in keeping with, are even derivable from, nay are even possible to maintain permanently only on the principles of Manu, e g planned agricultural and industrial production, and distribution for consumption rather than profit, planned birth regulation and provision for maternity and child walfare, planned defence , planned distribution of population, planned medical help,

" (page 9)

He however points to some very serious defects in Bolshevism to which I shall rovert later

25 **Separate privileges of Varnas** Dr Bhagwan Das has in his book indicated a fairly complete scheme of administration of society in accordance with Manu's Varna Ashram plan He says that legislative and judicial functions "should be entrusted to the person of the Brahman character and he must not be subordinated to the executive, Kshatriya" In his opinion neither Brahmana nor Kshattriya

should get fat salaries or accumulate riches The former should be content with the highest honour, and the latter with political or executive power and of course both should get the necessaries of life on a liberal scale The Vaishya alone can accumulate wealth Even in his case a certain standard should be fixed, and any further savings or accumulation, if not transferred to the public treasury, should be considered as kept by him in trust os deposit to be spent by him on public works as directed His great satisfaction would be in his being the agent of the benefaction and the recipient of compensatory recognition and honour from the State andthe Public '. (p 122)

Dr Bhagwan Das has thus proposed the highest honour for the Brahman only the greatest power of authority for Kahatriya only, the largest wealth for Vaishya only and the heartiest play for the Shudra He calls this 'the partition of luxuries, and says All these luxuries should be dis-associated from each other as far as possible (p 108 109)

The above is just in keeping with the spirit of Manu, and our ancient Vedic culture, according to which the Brahman lived a perpetual life of tapasya or asceticism in order to gain more of knowledge and wisdom, the Kshatriya though exercising political power did not dare to oppose him

26 Many people would however consider such idea as strange, unpractical and unreasonable in this age, when, as already stated in para 22 wealth is given the highest place and power and even learning are looked upon as its hand maids Dr Bhagawan Das argues, and rightly too, that the combination of highest power and honour with wealth in the same person would naturally lead to arrogance and pride, and in the case of rulers, to autocracy, despotism and disregard for the needs of the people

आर्य्य कुमार परिषद्--

परीक्षाओं के पारितोषिक

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् की सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर तथा शास्त्री की परीक्षा में उत्तीर्ण छात्रों को उस उस परीक्षा का प्रमाण-पत्र प्रदान किया जावेगा, जिसमें वे उत्तीर्ण होंगे। सिद्धान्त सरोज व सिद्धान्त रत्न की परीक्षा में सर्व प्रथम, द्वितीय और तृतीय आने वाले परीक्षार्थियों को तथा सिद्धान्त भास्कर व सिद्धान्त शास्त्री की परीक्षा मे सर्व प्रथम तथा द्वितीय आने वाले परीक्षार्थियों को परिषद् की ओर से पुरस्कार दिये जावेंगे तथा परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाली लड़कियों मे से प्रत्येक परीक्षा में सर्व प्रथम आने वाली लड़की को विशेष पारितोषिक दिया जावेगा।

देवव्रत धर्मेन्दु
परीक्षा मन्त्री
भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् देहली

(पृष्ठ ४६१ का शेष)

27. Scale of pay suggested It is interesting to note that Dr Bhagwan Das has also tentatively suggested a scale of pay for the four varnas or the 4 Guilds as he calls them, giving the pay separate names It is as follows —

(i) Wages for unskilled labourers or Shudras Rs. 10 to 25/- p m
Wages for skilled manual workers upto Rs 100/- p m

(ii) Honoraria for men of learning or Brahmans Rs 250/- p m.

(iii) Salaria for executive workers or Kshatriyas Rs 500/- p m

(iv) Profits for business men or Vaishyas Rs. 500/- to Rs 20000/-

(see pp 123-130)

(To be continued)

आर्य कुमार आरती

रचयिताः—भिषगाचार्य श्री प० ईश्वरदत्त जी विद्यालंकार

आर्य कुमारो वैदिक पथ पर,
चलकर तन मन उच्च बनादो ॥

(१) वीरो ! ब्रह्मचर्य व्रत धार,
कामादिक रिपुओं को मार,
मन में सत्यासत्य विचार,
दुर्गुण सारे दूर भगा दो ॥ आर्य कुमारो ॥

(२) जग में उज्वल प्रेम पसार,
कर दो वैदिक धर्म प्रचार,
जीवन का सर्वस्व निसार,
जग को फिर से आर्य बनादो ॥ आर्य कुमारो ॥

(३) वैदिक झण्डे को फहराय,
हिन्दू दल को पुनि गुहराय,
मन्त्र एकता का बतलाय,
"संगच्छध्वं" मन्त्र पढ़ा दो ॥ आर्य कुमारो ॥

(४) कर्तव्यों पर करो विचार,
होवे जिससे वेद प्रचार,
फूले फलें सब आर्य कुमार,
झण्डा आर्यों का फहरादो ॥ आर्य कुमारो ॥

उठो कुमारो आगे बढ़कर, काम तुम्हें करना होगा।
आर्य जाति के हेतु तुम्हें अब, आगे पग धरना होगा ॥
विमल प्रेम से धवल धार में, अब हमको बहना होगा।
कठिन आपदाये आने पर, हमें धैर्य धरना होगा ॥
वैदिक जीवन ज्योति जगाकर, विमल प्रेम भरना होगा।
विधवाओं के दुखित नाद को, अब हमको सुनना होगा ॥
शुद्ध रहें अरु शुद्ध बनावें, काम हमें करना होगा।
दलित जाति के घर आ आकर, उन्हें स्वच्छ करना होगा ॥

स्व० लाला लाजपतराय जी की पुण्य स्मृति में

लेखक—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक

---

१७ नवम्बर का दिन वह दिन है जिस दिन स्वनाम धन्य श्री लाला लाजपतरायजी ने मानवी लीला सवरण की थी और देश-प्रेम की वेदि पर अपने प्राणों की बलि देकर हुतात्माओं की नामावलि में उच्च स्थान प्राप्त किया था।

किसी वीर की सेवाओं और उपकारों से उपकृत समाज अथवा देश का सर्व प्रथम कर्त्तव्य है कि वह उस वीर की पुण्य स्मृति में वीर पूजा का अनुष्ठान करे और उसके जीवन के आदर्शों से प्रकाश ग्रहण करे जिसके लिए वह जिया और मरा हो।

स्वर्गीय लाला जी ने देश और समाज की बड़ी सेवाएं की हैं भारतीय राष्ट्र के पुनर्निर्माण में बहुमूल्य योग दिया है और अपनी शहादत से देश की स्वतन्त्रता के मार्ग का निर्माण किया है। भारतीय राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि वह १७ नवम्बर को इस वीर की पुण्य स्मृति में वीर-पूजा का अनुष्ठान करे।

स्व० लाला जी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के जन्म जात नेता, प्रसिद्ध वक्ता, उच्च कोटि के साहित्य सेवी, उत्साही, मौलिक समाज-सुधारक और अच्छे शिक्षा-शास्त्री थे। क्या राजनीति में, क्या साहित्य में, क्या समाज-सुधार में क्या शिक्षा में गरज कि देश की भिन्न २ अनेक प्रगतियों में उनका हाथ था, और उनकी सेवाएं स्मरणीय हैं। वस्तुतः लाला जी का व्यक्तित्व एक संस्था थी। उनके व्यक्तित्व की तस्वीर को हम जिस ओर से देखते हैं, उधर से ही उसमें हमें एक नवीन स्फूर्ति, नया जीवन और भव्यता के दर्शन होते हैं।

श्री लाला जी को बनाने वाला आर्य समाज ही था। अपने आत्म चरित्र में जो श्रीराजपाल ऐण्ड सन्स के यहा से प्रकाशित हुआ है, उन्होंने आर्य समाज को अपने सार्वजनिक जीवन का गुरु माना है। और उसके प्रति उन्होंने बड़ी कृतज्ञता प्रकट की है।

वे लिखते हैं:—

'मुझे कभी इस बात का अफ़सोस नहीं हुआ कि मैं आर्य समाज में क्यों

दाखिल हुआ। मैं हमेशा से इस घटना को अपनी जिन्दगी की महत्व पूर्ण परिवर्तन कारी बात समझता हू और मैं इसे प्रसन्नता और अभिमान से याद करता हूँ'।

सन् १९०६ ई० में देश निकाले से वापिस आने के बाद जो व्याख्यान मैंने लाहौर आर्य समाज के प्लेटफार्म से दिया था उसमें मैंने यह कहा था कि मेरे जीवन में जो हिस्सा खराब है, वह मेरा अपना है। वह या तो मुझको विरासत में मिला है या मेरे पूर्व जन्म के सस्कारो का फल है। लेकिन मेरे जीवन का जो हिस्सा अच्छा और लोगों में प्रशसा योग्य है वह सब आर्य समाज की बदौलत है। मैंने सार्वजनिक सेवा के तमाम सबक आर्य समाज में रहते हुए आर्य समाज से सीखे। आर्य समाज के काम मे ही मैंने सार्वजनिक जीवन के पवित्र नमूने देखे। यदि मेरा बाल २ भी आर्य समाज पर न्यौछावर हो जाय तो भी मैं उन उपकारों से उऋण नहीं हो सकता"

यदि मैं आर्यसमाज में दाखिल न होता तो ईश्वर ही जाने कि क्या होता मगर सच है कि मैं आज जो कुछ हू वह न होता।"

श्री लालाजी के पिता इस्लाम से बहुत प्रभावित थे उनके विचारों रहन सहन और खान पान आदि में मुसलमानीपन था। वे कुरान पढते थे, रोजा भी रखते थे। श्री लालाजी लिखते हैं —

मेरे पिता ने "मुझे भी कुरान का कुछ हिस्सा पढाया था। मुझे अच्छी तरह से याद है कि मैं नमाज भी पढ़ता रहा और कभी कभी मैंने रमजान मे रोजा रखने का भी यत्न किया।"

अपनी उम्र से पहले २५, ३० साल तक उनका (पिताजी का) इस्लाम धम पर विश्वास था। नमाज पढ़ते थे। रोजा रखते थे। जब सैयद अहमद खा ने अपना धार्मिक और सामाजिक कार्य शुरू किया तब उनके लेख पढ़कर मेरे पिता उनक अनुयायी बन गए। ४० वर्ष की उम्र तक वे सैयद अहमदखानी फिर्के के मुसलमान रहे। इस समय वे हिन्दू धर्म आर्यसमाज के सिद्धान्तों और उपदेशों के कट्टर विरोधी रहे। लेकिन जब मैं आर्यसमाज में दाखिल हो गया तब उनके विचारों में बहुत परिवर्तन होगया।

ऐसे वातावरण में पले हुए बच्चे का आर्यसमाज में आना स्वय उसके लिए ही नहीं वरन् समूचे परिवार के लिए जो अर्थ रखता है वह सहज ही जाना जा सकता है।—

आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण पाठ ४

आर्य वीर दल का विधान

उसका आर्य समाज से सम्बन्ध

[लेखक—श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति तथा सार्वदेशिक आ० प्र० सभा दिल्ली]

आर्यसमाज का विधान प्रजा सत्तात्मक शासन के असूल पर आश्रित है। प्रत्येक आर्य सभासद् विधान के निर्माण में सम्मति देने का अधिकारी है। आर्यसमाजों के सभासदों से प्रान्तिक प्रतिनिधि सभायें और प्रान्तिक सभाओं के प्रतिनिधियों से सार्वदेशिक सभा का विधान नीचे से ऊपर की ओर आता है। सार्वदेशिक सभा के हरेक मन्तव्य की पीठ पर पृथ्वी पर के प्रत्येक आर्य सभासद् की सम्मति विद्यमान समझी जा सकती है। सब प्रजा सत्तात्मक शासनों के दीवानी प्रबन्ध का यही मूल सिद्धान्त है।

(पृष्ठ ४६५ का शेष)

एक बार श्री स्व० दीनबन्धु ऐंड्रूज ने कहा था कि आर्यसमाज ने ही लालाजी को मौलिक समाज सुधारक और राजनीति-विशारद बनाया और सबसे अधिक उन्हें पीड़ित समाज का मित्र बनाया था।

वे देश मे रहे या विदेश में उन्होंने कहीं पर भी आर्यसमाजको नहीं भुलाया। जब १९२४ में म०गाधी ने आर्यसमाज की अनुचित आलोचना की थी तब लाला जी ने जर्मनी से उस आलोचना का विरोध किया था।

लगभग २५, ३० वर्ष पर्यन्त श्री लालाजी ने दलितों की सेवा की इसमें उन्होंने अपना समय ही नहीं वरन् अपना धन भी व्यय किया था।

श्री लालाजी ने कई पुस्तकें लिखी थी। उनमें सबसे लोकप्रिय Unhapny India है जो उन्होंने (मदर इण्डिया) नामक गदी पुस्तक के उत्तर रूप में लिखी।

श्री लालजी पजाब में आर्यसमाज के निर्माताओं में से थे और श्री स्वर्गीय ला० हसराज जी और प० गुरुदत्त जी एम० ए० के सहकारियों में थे।— पजाब के दयानन्द कालेज के लिए उन्होंने बहुत कुछ कार्य किया था।—

राजनैतिक क्षेत्र की उनकी सेवाओं का वर्णन करने की हमें आवश्यकता नहीं है। देश और आर्यसमाज को अपने इस महा पुरुष पर अभिमान होना चाहिए क्योंकि उसने अपने कार्य्य और आचरण से इन दोनों की ख्याति को बहुत बढ़ाया था और भारतीय मात्र को उनका निर्वाणोत्सव बडे उत्साह और समारोह के साथ मनाना चाहिए।

आर्य वीर दल आर्य समाज का क्षात्र बल होगा। उसकी समानता हमें राज्यों की सेनाओं के सगठन में मिलेगी। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, जो कि सब आर्य समाजों के प्रतिनिधियों की सभा है एक सार्वदेशिक आर्य वीर दल समिति का निर्माण करती है। वह समिति प्रान्तिक प्रतिनिधि सभाओं को प्रेरणा करती है कि वह अपने अपने प्रान्त में आर्य वीर दल समितियें स्थापित करे और उन समितियों के निरीक्षण और प्रेरणा से प्रान्त में आर्य वीर दलों का सगठन हो। प्रान्तिक सभायें प्रान्तिक आर्य वीर दल समिति के सदस्यों की प्रस्तावित सूची सार्वदेशिक आर्य वीर दल समिति के पास भेजती है और जब सार्वदेशिक समिति उस सूची का स्वीकार कर लेती है, तभी वह नियमानुसार स्वीकृत समझी जाती है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रान्तिक आर्य वीर दल समितियों का असली निर्माण सार्वदेशिक आर्य वीर दल समिति ही करती है।

जो सम्बन्ध प्रान्तिक आर्य वीर दल समितियों का सार्वदेशिक समिति से है, वही सम्बन्ध स्थानिक समितियों का प्रान्तिक समितियों से होगा। प्रत्येक नगर और ग्राम में आर्य समाज द्वारा आर्य वीर दल के सगठन का यत्न होगा। कम से कम ११ आर्य वीर हो जाने पर दल स्थापित हो सकेगा, जिसके शिक्षण और नियन्त्रण के लिये एक दलपति बनाया जायेगा। दलपति का चुनाव इस प्रकार होगा कि आर्यसमाज की अन्तरग सभा और आर्य वीर दल के स्वय सेवक मिल कर दलपति के नाम का प्रस्ताव करेंगे। यदि वे सब सहमत हो गये तो सर्वसम्मत एक ही नाम प्रस्ताव रूप से प्रान्तिक आर्य वीर दल समिति के पास स्वीकृति के लिये भेजा जायेगा। परन्तु यदि सब एक मत न हो सके और आर्यसमाज की अन्तरग सभा तथा आर्य वीर दल के स्वयसेवकों में दलपति के नाम के सम्बन्ध में मतभेद रहा तो दो या दो से अधिक नाम भी प्रस्ताव रूप से प्रान्तिक समिति के पास भेजे जा सकते हैं। उन में से एक दलपति के चुनाव के सम्बन्ध में प्रान्तिक समिति का निश्चय निर्णयात्मक होगा। दलपति के बन जाने पर स्थानिक दल का प्रबन्ध उसी के अधीन रहेगा।

यह तो हुई निर्माण की व्यवस्था। इस में निर्माण का क्रम ऊपर से नीचे की तरफ रहेगा। प्रत्येक शासन में मता का निर्माण इसी सिद्धान्त पर होता है। अब मैं कार्य सचालन के व्यावहारिक रूप पर कुछ निर्देश लिखना आवश्यक

समझता हूँ। इस विषय में कई प्रकार की उलझनें पैदा होने की सम्भावना है। उसका कारण यह है कि अभी तक आर्य समाज को सेना के सिद्धान्त पर बने हुए दल से वास्ता नहीं पड़ा। थोड़ासा व्यावहारिक अनुभव हो जाने पर कार्य बड़ी आसानी से चल पड़ेगा और कोई उलझन पैदा नहीं होगी। इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य निर्देश मैं नीचे देता हूँ।

(१) प्रत्येक स्थानिक दल के शिक्षण और नियन्त्रण स्थानिक दलपति के के आदेशानुसार होंगे।

(२) स्थानिक दलपति को प्रान्तिक समिति प्रान्तिक समिति द्वारा नियुक्त प्रान्तिक दलपति अथवा यदि मण्डल का अलग दलपति नियुक्त किया गया हो तो उसके आदेशानुसार कार्य करना होगा।

(३) प्रत्येक स्थानिक आर्य वीर दल का कर्तव्य होगा कि स्थानिक आर्य समाज के प्रधान द्वारा निर्देश होने पर सेवा तथा रक्षा के कार्य का सम्पादन करें। प्रधान दलपति को निर्देश देंगे और दलपति तदनुसार दल से कार्य करायेंगे।

(४) स्थानिक आर्यसमाजों को अपने अपने यहां के आर्य वीर दलों की आर्थिक तथा अन्य सब प्रकार की सहायता करनी चाहिये।

(५) यदि किसी आर्यसमाज को वहां के आर्य वीर दल अथवा दलपति के कार्य से कोई शिकायत हो तो उन्हें प्रान्तिक आर्य वीर दल समिति को लिखना चाहिये। प्रान्तिक समिति का निर्णय ऐसे झगड़ों के सम्बन्ध में अन्तिम होगा।

आर्य वीर दल के निर्माण और कार्य सचालन के सामान्य नियमों के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञातव्य बातें मैंने यहां लिख दी हैं। कार्य की वृद्धि के साथ समस्यायें भी पैदा होंगी। यदि हम व्यवहारिक बुद्धि से काम लेकर उन्हें हल करते जायेंगे तो कार्य में किसी प्रकार की बाधा नहीं हो सकती। सम्भव है, अनुभव के पश्चात् हमें दल की योजना को अधिक विस्तृत और पूर्ण बनाना पड़े। इस समय कार्य-संचालन के लिये यह सामान्य निर्देश पर्याप्त है।

बंगाल का आर्तनाद

किसी माननीय संस्था के जीवित होने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि मानव जाति के शरीर में कहीं भी दुःख होने पर वह संस्था हाथ की तरह उस स्थान पर मरहम लगाने के लिए पहुँच जाये। इस कसौटी पर कसा जाय तो निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि आर्य समाज एक जीवित संस्था है। आर्य समाज ने बंगाल के आर्तनाद को सुना और बिना किसी विलम्ब के सेवा के लिए पहुँच गया। यह आर्य-मात्र के लिए सन्तोष की बात है। गत वर्ष जब मिदनापुर में बाढ़ ने प्रलय मचा कर प्रजा को कष्ट में डाल दिया था, तब भी बंगाल की प्रान्तिक प्रतिनिधि सभा ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा सभा की सहायता से प्रशसनीय कार्य किया था। सिन्ध में जल का उत्पात होने पर पंजाब की आर्य प्रतिनिधि सभा ने जो काय किया, उससे भी आर्य समाज का सिर ऊँचा हुआ। परन्तु इस वर्ष बंगाल पर जो आपत्ति आयी है और जो धीरे धीरे उड़ीसा और बिहार से होती हुई शेष भारत में फैलने के लक्षण दिखा रही है, वह गत वर्ष की आपत्तियों से कहीं अधिक भयंकर है अंग्रेजी राज्य के प्रारम्भिक कम्पनी के समय के दुर्भिक्षों को वर्तमान दुर्भिक्ष और महामारी ने भयंकरता में मात कर दिया है। गत युद्ध के पीछे इन्फ्लुएंजा के रूप में जो संकट भारत पर अवतीर्ण हुआ था, उससे कहीं अधिक घोर संकट इस वर्ष युद्ध के बीच में ही भारत पर उतर आया है। उस समय केवल रोग का हमला था, इस बार रोग और भूख दोनों का हमला है। जाति के इस अपूर्व संकट के समय में यदि आर्य समाज कुछ न करता तो वह उसकी मृत्यु का सूचक होता, परन्तु हर्ष की बात है कि कर्तव्य की पुकार आते समाज ही आर्य ने उसे सुना और कर्तव्य पालन के मैदान में उतर आया।

गत तीन चार महीनों में आर्य समाज की ओर से बंगाल में सेवा की जो विशाल योजना काम में लायी गयी है, उसके समाचार अखबारों में प्रकाशित होते रहते हैं। बंगाल की प्रान्तिक प्रतिनिधि सभा और कलकत्ता आर्य समाज की ओर से प्रान्त में गत वर्ष से ही सेवा का कार्य हो रहा था, नया संकट आते ही उस कार्य का एकदम फैला दिया गया और शहर और ग्रामों में अन्न, वस्त्र बाँटने तथा दवा देने का कार्य जारी कर दिया गया। लाहौर की प्रादेशिक आर्य प्रति-

निधि सभा ने जिस तत्परता और शीघ्रता से सेवा के मैदान में कदम रखा उसकी जितनी प्रशंसा की जाय कम है। प्रादेशिक सभा की ओर से भेजे हुए धन, अन्न और कार्यकर्त्ताओं से प्रान्तिक कार्यकर्त्ताओं को बहुत भारी सहायता मिली। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य जगत् से धन और जन की जो अभ्यर्थना की थी, उसका भी काफी अच्छा उत्तर प्राप्त हो रहा है। सितम्बर मास मे सार्वदेशिक सभा के प्रमुख कार्यकर्त्ता प० ओमप्रकाश त्यागी को स्वयं सेवकों के साथ बंगाल भेज दिया गया था। उनके कार्य के सम्बन्ध में प्रान्त से जो समाचार आ रहे हैं वे सराहनीय हैं। सार्वदेशिक सभा के प्रान्तिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजों और आर्य नर-नारियों से जो आर्थिक सहायता प्राप्त हो रही है, वह बंगाल भेजी जा रही है।

बंगाल मे आर्यसमाज की ओर से जो कार्य हो रहा है, वह एक ही केन्द्र में संगठित है। वह केन्द्र प्रान्त मे सेवा-कार्य करने वाली हिन्दू सभा, 'मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी और पंजाबी रिलीफ सोसायटी आदि संस्थाओं के साथ मिल कर डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी के परामर्श से अपना कार्य कर रहा है। यह तो मैंने कार्य के सम्बन्ध में सन्तोष की बातें सुनायीं, परन्तु इनसे सन्तुष्ट होकर बैठने का हमें कोई अधिकार नहीं है। ज्यों-ज्यों समय गुजरता जाता है, बंगाल का आर्तनाद अधिक ही अधिक ऊँचा होता जा रहा है। धन और जन की जितनी सहायता भेजी गयी है, वह आवश्यकता के समुद्र मे बून्द के समान है। भूखों की संख्या बढ़ रही है और बीमारों की भी। परिणाम यह है कि अनेक यत्नों के होते हुए भी मरने वालों की संख्या बढ़ रही है। आर्यसमाज ने सेवा का जो कार्य आरम्भ किया है, उसे न केवल इतना ही कि उसे जारी रखने की आवश्यकता है प्रत्युत इसे निरन्तर बढ़ाना आवश्यक है। इस समय बंगाल से निम्नलिखित वस्तुओं की मांग विशेष रूप से आ रही है।

(१) धन—चलते हुए सेवा कार्य को जारी रखने और आवश्यक क्षेत्रों में बढ़ाने के लिए अभी बहुत धन की आवश्यकता है। केवल आर्यसमाज द्वारा चलाये गये केन्द्रों के लिए ही कम से कम एक लाख रुपये की तत्काल जरूरत है। आर्यसमाज में न दानियों की कमी है और न दान देने की इच्छा की। उन्हें केवल अनुभव कराने की आवश्यकता है। इसी विश्वास पर मैंने कलकत्ते के कार्यकर्त्ताओं को आश्वासन दे दिया है कि आवश्यक धन उन्हें शीघ्र ही भेज

दिया जायेगा। मेरी आर्य नर नारियों तथा समाजों से प्रार्थना है कि वह रुपया भेजने में विलम्ब न करें। 'का वर्षा जब कृषि सुखाने"। यदि भेजने में देर हुई तो उस धन से क्या लाभ होगा।

(२) कपड़े—रुपये की सूरत में सहायता भेजने के अतिरिक्त कपड़े की सूरत में भी भेजना बहुत लाभदायक है। सभी चीजें बंगाल में दुर्लभ हो रही हैं। धोती, कुड़ता, चादर, कम्बल—जो भी कुछ भेजा जा सके आर्य रिलीफ सोसायटी के मन्त्री के नाम आर्य समाज, कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ते के पते से सीधा भेज देना चाहिए। उसकी सूचना सार्वदेशिक सभा, दिल्ली के कार्यालय में भी भेजने की कृपा करें।

(३) स्वयं सेवक—मैंने ऊपर लिखा है कि सार्वदेशिक सभा के प्रमुख कार्यकर्ता प० ओमप्रकाशजी त्यागी डाक्टर सुखदेवजी और प० शिवचन्द्रजी अनेक स्वयं सेवकों के साथ सेवा करने के लिये बंगाल भेजे गये हैं और वे बहुत परिश्रम पूर्वक सेवा कर रहे हैं। आर्य समाज की ओर से लगभग २४ केन्द्र चलाये जा रहे हैं जिनसे कई सहस्र मनुष्यों का प्रतिदिन अन्न मिल रहा है। अभी कल सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा के सदस्य श्री मिहिरचन्द्रजी धीमान् कलकत्ते से आकर मुझे मिले थे। आप प्रान्तिक प्रतिनिधि सभा के मन्त्री हैं और आर्यसमाज की ओर से किये जाने वाले सेवा-कार्य के जीवन प्राण हैं। आपने प० ओमप्रकाश जी के इस सन्देश की पुष्टि की है कि त्यागभाव से सेवा करने वाले स्वयं सेवकों की बहुत भारी आवश्यकता है। जो सज्जन सेवाकार्य के लिए बंगाल जाना चाहें वह सार्वदेशिक सभा को सूचित करें। आवश्यकतानुसार उन्हें यहाँ से निर्देश भेजा जायेगा और उस समय उन्हें तत्काल ही बंगाल के लिए रवाना हो जाना चाहिये।

निवेदकः—

इन्द्र विद्यावाचस्पति

२५—१०—४३ मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।



दहेज की कुप्रथा की वेदी पर:—

अभी कुछ दिन पूर्व निम्न हृदय विदारक समाचार समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है:—

"फतहगढ़ गाँव की निवासिनी 'शान्तिदेवी नामक एक हिन्दू युवति की मंगनी गुजरावाला के एक नवयुवक से हुई थी। विवाह होने से पूर्व लड़के वालों ने १० हज़ार रु० नकद और एक मोटर दहेज में माँगी इसके अतिरिक्त लड़के के विलायत भिजवाये जाने की गारन्टी भी मागी। लड़की के माता पिता ये मागें पूरी न कर सके और परिणामस्वरूप लड़की ने निराश होकर अपने कपड़ों पर तेल छिड़ककर आत्महत्या कर ली।"

दहेज की आसुरी प्रथा के परिणाम स्वरूप ऐसी दुर्घटनाए प्रतिवर्ष सैकड़ों होती रहती हैं जिन में से बहुत कम जनता के सामने आती हैं जैसे कि बंगाल की स्नेहलता देवी का इसी दहेज की वेदी पर बलिदान. किन्तु बडे ही दु ख और आश्चर्य की बात है कि अनेक शिक्षित युवक तथ उनके सम्बन्धी ऐसी विनाशक प्रथा का समूलोन्मूलन करने के स्थान में उसे अधिक प्रोत्साहित करते और निर्लज्जतापूर्वक ऐसी अनुचित मागें प्रस्तुत करते हुए पाये जाते हैं। विचारशील युवकों को इस कुप्रथा के विरुद्ध बहुत जोर से आन्दोलन करना चाहिये ताकि निरपराध कन्याओं के शाप से समाज कलङ्कित न होने पाये। आर्य कुमार परिषद् आदि की ओर से इस विषयक जो प्रयत्न किया जाता रहा है वह प्रशसनीय है किन्तु उसको अधिक प्रबल और व्यापक बनाने की आवश्यकता है इस प्रकार निर्लज्जतापूर्वक दहेज मागने वालों का यदि सामाजिक बहिष्कार भी किया जाए तो अनुचित न होगा।

देवियों का मार्ग भ्रष्ट पतियों के विरुद्ध अनशन—

सत्याग्रह की शक्ति-गतमास कुछ पौराणिक पण्डितों ने घोषणा की थी कि वे महिला अधिकार बिल के विरुद्ध प्रतिवाद रूप मे भारत सरकार के कानूनी सदस्य के घरपर भूख हड़ताल करेंगे कुछ दिन बाद उन्होंने उद्घोषित किया कि वे भूखहड़ताल कानूनी सदस्य के घर पर नहीं बल्कि असम्बली के द्वारा पर करेंगे। इन पौराणिक पण्डितों की धर्म पत्नियों ने अपने इन मार्ग भ्रष्ट पतियों की भूख हड़ताल के विरुद्ध अनशन सत्याग्रह का निश्चय किया क्योंकि उनके विचार मे इस प्रस्तुत बिल द्वारा महिलाहित की रक्षा होती है। देवियों की इस भूख हड़ताल से उनके पति इतने प्रभावित हुए कि न केवल उन्होंने भूख हड़ताल करने का विचार छोड़ दिया अपितु इस महिला अधिकार बिल का समर्थन करने की घोषणा की।

हम यहा प्रस्तुत उत्तराधिकार बिल विस्तार मे जाना अनावश्यक समझते हैं किन्तु उन देवियों के साहस और त्याग भावना की प्रशसा किये बिना हम नहीं रह सकते जो अपने पथ भ्रष्ट पतियों को सत्याग्रह द्वारा सीधे रास्ते पर लाने में सफल हुईं। शुद्ध भाव से किये गये सत्याग्रह की शक्ति का यह एक प्रबल प्रमाण है। अपनी दैवी शक्ति द्वारा देवियां मद्य मास द्यूत आदि व्यसनासक्त पतियों को सीधे रास्ते पर लाने में सफल हो सकती हैं इसमें जरा भी सन्देह नहीं॥

पाश्चात्य सभ्यता का नया नमूना—

गत यूरोपियन महा युद्ध के समय इङ्गलैंड के प्रधान मन्त्री सुप्रसिद्ध वक्ता मि० लायड जार्ज ने गत २३ अक्टूबर को ८० वर्ष की आयु में कुमारी फ्रान्सिस स्टीवन्सन नामक ५५ वर्ष की महिला से लन्डन में विवाह कर लिया यह समाचार पढ़कर किसका आश्चर्य न होगा? क्या पाश्चात्य सभ्यता का जिसके दिवाला निकलने में जरा भी सन्देह नहीं रहा यह एक नया नमूना है जिस पर कोई भी विचार शील लज्जित हुए बिना न रहेगा? भारतीय सस्कृति के अनुसार जो आयु संन्यासाश्रम में प्रवेश करके सारे जगत् के उपकारार्थ तन मन धन अर्पित करने की है उसमें सासारिक भोग विलास को ही जीवन का लक्ष्य समझने वाले मि० लायड जार्ज जैसे पाश्चात्य राजनीतिज्ञ यदि नये विवाह में सन्तोष मनाएं तो कितने आश्चर्य की बात है?

मैसूर मे गोवध निषेध—

हमे मैसूर रियासत के वर्तमान दीवान श्री माधवराव की २० अक्टूबर को असम्बली में की गई इस घोषणा को पढ़कर अत्यधिक प्रसन्नता हुई है कि 'मैसूर सरकार ने १० वर्ष तक के बैलों, दुधारू गायों गर्भवती गायों व जवान गायों का मारना या मारने के लिए उनकी खरीद फरोख्त और आना जाना बन्द करने का निश्चय किया है।"

मैसूर रियासत में गो वध निषेध विषयक आन्दोलन गत अनेक वर्षों से चल रहा था यह हर्ष की बात है कि सरकार ने अब उसकी ओर विशेष रूप से ध्यान दिया है। हम चाहते हैं कि गाय बैल आदि की हत्या पर पूर्णतया प्रतिबन्ध लगा दिया जाए और इस आदेश का उल्लङ्घन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाए।

देहली मे दुधारू और गर्भधारी पशुओं का वध—

जहां एक ओर मैसूर रियासत में गाय और बैल इत्यादि की हत्या का कानून द्वारा बन्द करने का प्रशंसनीय कार्य किया जा रहा है वहां देहली जैसी भारत की राजधानी में प्रतिवर्ष लगभग एक लाख ऐसे जानवर मारे जाते हैं जिनके पेटों में बच्चे होते हैं यह समाचार कितना हृदय विदारक और निन्दनीय है। कहा जाता है कि देहली म्युनिसिपलिटी द्वारा स्वीकृत उपनियमों के अनुसार भी ऐसे पशुओं का वध सर्वथा वर्जित है किन्तु इस नियम के पालन की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता यह अत्यन्त खेद की बात है। देहली के बूचड़ खाने में लगभग १६०० से २००० तक जानवर प्रतिदिन मारे जाते हैं जिनमें से १०–१२ प्रतिशत ऐसे होते हैं जिनके पेटों में बच्चे होते हैं ऐसी सूचना 'हिन्दुस्तान' आदि स्थानीय पत्रों के १५–१०–४३ के अङ्क में प्रकाशित हुई हैं। हम स्थानीय म्युनिसपलिटी तथा सरकार का ध्यान इस गम्भीर विषय की ओर आकर्षित करते हुए आशा करते हैं कि गाय बैल तथा अन्य पशुओं की ऐसी क्रूर हत्या को शीघ्र बन्द कराने की व्यवस्था की जाएगी। गाय आदि पशु देश की सच्ची सम्पत्ति हैं इस बात को कभी न भूलना चाहिये। गो हत्या को बन्द करने का प्रश्न धार्मिक नहीं बल्कि आर्थिक है इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिये। दूध घी मक्खन आदि की शुद्ध रूप में दुर्लभता तथा मंहगाई से देशवासियों का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन खराब होता जा रहा है यह बात उपेक्षणीय नहीं है। महर्षि दयानन्द जी ने गो वध

निषेध तथा गो रक्षा विषयक जो उत्तम आन्दोलन प्रारम्भ किया था उसे प्रबल तथा व्यापक रूप मे सर्वत्र चलाने की आवश्यकता है अन्यथा देश की वास्तविक सम्पत्ति और स्वास्थ्य का अधिकाधिक नाश होता जाएगा।

नये वायसराय से आशाएं—

भारत के नये वायसराय लार्ड वेवल से कई आशावादी भारतीय बड़ी २ आशाएं कर रहे थे कि वे भारत देश में पदार्पण करते ही महात्मा गांधी जी तथा देश के अन्य गण्य मान्य नेताओं का बन्धन मुक्त करके वर्तमान गति अवरोध को दूर कर देंगे इत्यादि। अभी तक इस प्रकार की आशाओं की पूर्ति नहीं हुई और न उनकी पूर्ति के कोई लक्षण दिखाई देते हैं। मि० चर्चिल के प्राइममिनिस्टर और मि० ऐमरी के भारत मन्त्री रहते हुए ऐसी आशाएं करना सिवाय निराशा उठाने अथवा आत्म प्रवञ्चन के कुछ नहीं कहा जा सकता तथापि जगत् आशाओं पर जीता है। यदि लार्ड वेवल ने लण्डन के सुप्रसिद्ध पत्र Observer के २५ अक्टूबर के अग्र लेख की इन पंक्तियों की ओर ध्यान देकर कुछ क्रियात्मक कार्य करके दिखा दिया तो वे निस्सन्देह भारतीय तथा अन्य देशीय विचारशील उदार जनता के धन्यवाद के पात्र होंगे। 'लार्ड वेवल को भारत को सुरक्षा तथा भारतीयों की स्वतन्त्रता और आत्म सम्मान प्रदान करने के अधिकार दिये गये हैं

यदि भारतीयों की फूट का लाभ उठाकर आपने भारत में साम्राज्य वाद को दृढ़ बनाने का प्रयत्न किया तो तमाम पश्चिमी संसार मे आपकी निन्दा होगी। भारत केवल ब्रिटिश साम्राज्य का ही नहीं अपि तु सारे संसार की समस्या है। महात्मा गांधी तथा मि० जिन्ना के मिल जाने या राजनीति से अलग हो जाने की प्रतीक्षा न करके शीघ्र ही नया कदम उठाना चाहिये। भारत के कष्टों को दूर करने के लिये एक विशेष कार्यक्रम बनाया जाए। भारत सरकार का कार्य अधिकाधिक मात्रा में भारतीयों को सौंपा जाए तथा भारतीयों को भारत की नीति निर्मित करने का अधिकार दिया जाए। इस प्रकार ही लार्ड वेवल भारत तथा संसार को सन्तुष्ट कर सकते हैं।"—

जोधपुर सिटी आर्य समाज का रजिस्ट्रेशन

पाठकों को समाचार पत्रों द्वारा ज्ञात हो चुका होगा कि कुछ समय से जोधपुर सरकार इस बात पर बल दे रही थी कि जोधपुर सिटी आर्य समाज मन्दिर का सन् १९४० के जोधपुर पब्लिक सोसाइटीज ऐक्ट के अनुसार रजिस्टर्ड

करा लिया जाए और इसके लिये ५ अक्टूबर अन्तिम तिथि निश्चित कर ली गई थी। आर्य समाज का कथन यथार्थ था कि जब शैव वैष्णव मन्दिर, मस्जिद, गिरजा घर, गुरुद्वारा, जैन मन्दिर आदि की रजिस्ट्री सरकार अनावश्यक समझती है क्योंकि ये धर्म मन्दिर हैं फिर आर्य समाज मन्दिर पर ही इसका लागू करना कैसे न्याय युक्त हो सकता है? जयपुर राज्य के विचार शील होममिनिस्टर ने प्रधान आर्यसमाज जयपुर को २१ मार्च १९३९ को उनके प्रश्न के उत्तर में स्पष्ट सूचित किया था क्योंकि आर्यसमाज धर्म का प्रचार करनेवाली संस्था है अत पब्लिक सोसाइटीज ऐक्ट के अनुसार इसको रजिस्टर्ड कराना अनावश्यक है। कोई कारण नहीं कि जोधपुर सरकार आर्यसमाज जैसी धार्मिक संस्था पर इस ऐक्ट को क्यों लागू करे जबकि इसके कारण अनेक प्रतिबन्ध लग जाते हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि चीफमिनिस्टर साहब के अ० पोलिटिकल सेक्रेटरी प० जयनारायण कु जरू ने १ नवम्बर को आर्यसमाज जोधपुर के अधिकारियों को मुलाकात के लिए बुलाया। हमें आशा रखनी चाहिये कि जोधपुर सरकार आर्यसमाज को अन्यधार्मिक संस्थाओं के सर्वथा समान समझकर उसके रजिस्टर्ड करने की मांग न करेगी अन्यथा समस्त आर्य जगत् में जो घोर असन्तोष की ज्वाला प्रज्वलित होगी उसके लिए उसकी अपनी उत्तर दायिता होगी विशेषत जबकि स्वयं जोधपुर के एक महाराज स्व: महाराज धीरजसिंह सर जसवन्तसिंहजी बहादुर ने वहां आर्यसमाज की स्थापना करवाई थी।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति

अक्टूबर मास में सार्वदेशिक सभा की दान सूची

बंगाल अकाल पीड़ित सहायता निधि

२५) आर्य समाज रेलवे क्वार्टर्स मोर सराय देहली
१७५) आर्य समाज सक्खर (सिन्ध)
४२) " " लुधियाना
१००) " " कल्हापुर
१००) आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई
१५०) गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ
८३)। श्री पवतीय सत्यनारायण मण्डली देहली
६१७॥) आर्य समाज गाजियाबाद
१०८) स्त्री आर्य समाज गाजियाबाद
१०१) पब्लिशर्स एसोसियशन, देहली
५७३॥।) आर्य समाज सक्खर (सिन्ध)
२५) आर्य कुमार सभा जयनगर (दर्भंगा)
२५) शारदा विद्यालय सब्जी मंडी देहली
१००) श्री पुरुषोत्तमजी कालाल (पंच महल) बम्बई प्रांत
१५७) आर्य समाज, महू छावनी दूसरी किश्त
६६॥) सेवा मण्डल इस्लामकोट
६०) आर्य समाज बबेरू (बांदा)
५०) श्री वृन्दावनसिंह सर्राफ, प्रतापगढ़
५०) आर्य समाज कारंजा (अकोला)
५०) श्री गंगाप्रसाद जियालाल जी फैजाबाद
२५) श्री लालमणि जी गुप्त बजाज विधूना (इटावा)
२५) आर्य समाज नवाबगंज (गोंडा)
२४) " " रामगढ़
२०) श्री इन्द्रदेव जी गुप्त सुपुत्र ला० श्यामलाल जी गुप्तगंज, मुरादाबाद
२०) श्री मानसिंह कोठारी आयुर्वेद विशारद श्री नगर रोड अजमेर
१८) आर्य समाज गुजरांवाला
१५॥) चौ० जगत्सिंहजी फलावदा (मेरठ)
१४) आर्य समाज गुजरांवाला
११) नानपाड़ा (बहराइच)
११) जैन बाल सभा जिनरा भरतपुर
१०) आर्य समाज शाहाबाद (हरदोई)
२१) श्री सूतसिंह सुपुत्र श्री रूपलालसिंह रापाडही (मसूरपुर)
१०) श्री राजनारायणजी आमलगोरीगंज बरली
१०) श्री ज्योतीप्रसादजी आर्य बजाज नजीबाबाद बिजनौर)
१०) आर्य समाज धनौरा (बिजनौर)
१०) श्री नानकचन्द्र बंसल,छाबड़(मेरठ)
७) आर्य समाज इस्लाम नगर बदायूं
७) श्री रमेशचन्द्र आर्य, कीरतपुर (बिजनौर)
५) श्री गोविन्दराम रामगोपाल घिरोर (मैनपुरी)
२) आर्य समाज,असमोली(मुरादाबाद)
२) " " गुजरांवाला
३) " " बांसी (बस्ती)
२) " " रघुनाथराय जी सत्यदेव जी मुरली खड़ा (गुजरांवाला)

१) श्री बसन्तलाल गुप्त ताल ग्राम (फरुखाबाद)

४) श्री परमानन्द मता गली मथुरा

५) श्री लक्ष्मीनारायणजी नाजिम कामदार कारथल (कोटा स्टेट)

६) श्री गज्जूसिंह जी देहली कनाथ मिल देहली।

८२॥) आ० स० बौक्स ७७ डा. एम. एम, बम्बई

दाताओं को सभा की ओर से हार्दिक धन्यवाद। अन्य महानुभावों और आर्य समाजों को भी धन और वस्त्र एकत्रित करके सार्वदेशिक सभा कार्यालय में तुरन्त भिजवाने चाहिये। अभी रु० और वस्त्रों की बड़ी आवश्यकता है।

धर्मदेव वि० वा०

स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

आर्यसमाज स्थापना दिवस

(दक्षिण भारत)

१) आर्य समाज हिरियडक

२५) आर्य समाज काकल

(संयुक्त प्रान्त)

१०) फतहपुर यू० पी०

६।) आर्य समाज बासी (बस्ती)

५=) " " शिकोहाबाद

५) " " नवादा

२) " " केराकत (जौनपुर

५४।=

गत योग १२८५।।=)

सर्व योग १३४०।)

दाताओं को धन्यवाद

जिन आर्य समाजों ने अभी तक आर्य समाज स्थापना निधि का रुपया नहीं भेजा उन्हें अब भी एकत्रित करके अन्यथा अपने समाज कोष से अच्छी राशि इस निधि में भेज कर अपने कर्तव्य और अनुशासन का पालन करना चाहिये।

म० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

वेद प्रचार निधि

१०) श्रीमती देवकी बाई जी बैंक रोड कालीकट

३) माही मिचहोतू राधा मिचहातू होम केनानोर

२) श्री एन. पी. नायर केनानोर

२) श्री सजीव कामथ कलसक उडपी

१) के अनन्तैयाजी मन्त्री आ० स० हिरियडक।

२०) आर्य समाज गुना (ग्वालियर)

४) आर्य समाज बालानगर (पटना स्टेट)

६६) आर्यसमाज दीवानहाल देहली

---

११३) योग

दाताओं को हार्दिक धन्यवाद

स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि का स्वरूप, मुक्ति के साधनआदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण।=)

(३) उपनिषद् रहस्य

केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यक उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

।=), =), =)॥, =)॥, -)॥, =)।, ।), ।=)॥, २)

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय मे रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।

श्रद्धानन्द बलिदानाङ्क



[illegible] स्वामी [illegible] जी

दिसम्बर १६४३ ई० मार्गशीर्ष २००० सं०	सम्पादक— श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति साहित्य भूषण	वार्षिक मूल्य स्वदेश ३) विदेश ७ शि० १ प्रति का ।।)

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सा देशिक आर्य ार्तिनि ा भा दहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष १६ } दिसम्बर १९४३ ई०] मार्ग शीर्ष २००० [यानन्दाब्द १२० { अङ्क १०

* वैदिक प्रार्थना

ओ३म् अग्ने समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे ।

स मे श्रद्धां च मेधां च जात वेदाः प्रयच्छतु ॥ अथव १९ । ६४ । १

शब्दाथ —(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर । (बृहते जातवेदसे) महान् सर्वव्यापक और सवज्ञ तुझ परमात्मा के लिये समिधम् आहार्षम्) अपनी आत्मारूपी समिधा को मैं लाया हू (स) व (ज तवेद) सवव्यापक सवज्ञ परमेश्वर (मे) मुझे (श्रद्धा च मेधा च) सत्यधारण करने की शक्ति और विवेक शालिनी शुद्ध बुद्धि को (प्रयच्छतु) प्रदान करे ।

विनय—हे सर्वव्यापक सवज्ञ परमात्मन । हम तुम्हारे प्रति अपनी आत्माओं को समर्पित करते हैं । हम री तुमसे प्रार्थना यह है कि तुम कृपा कर के हम में श्रद्धा और मेधा—सत्यधारण करने की शक्ति और सत्य असत्य, धर्माधर्म, पाप पुण्य का विवेचन करने वाली शुद्धि बुद्धि को धारण कराओ जिससे हम धमवीर स्वामी श्रद्धानन्दजी आदि क तरह सच्चे आर्य बनकर जगत् को आर्य बनाने मे समर्थ हो सकें ।

वेदोपदेश

(लेखक—धर्मवीर स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज)

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधिविश्वे निषेदुः।
यस्तन्न वेद किं ऋचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते॥

उपदेश

नदी के किनारे पर देखो कैसे मीठे स्वर से ध्वनि निकल रही है। आगे बढ़कर देखो एक दिव्य धोती धारण किये, टीका लगाये, वेदपाठी ब्राह्मण सामवेद का गायन कर रहा है। दूसरी ओर यजुर्वेद के मन्त्रों के उच्चारण से एक दूसरा तैलंग ब्राह्मण आकाश को गुंजा रहा है। तीसरी ओर मधुर स्वर वाला महाराष्ट्र ऋग्वेद की ऋचाओं का उच्चारण कर रहा है। हज़ारों हिन्दू इकट्ठे हैं और धन्य। धन्य॥ के शब्दों से आसमान सिर पर उठा रहे हैं। सतयुग आ-गया। कैसा धर्म का प्रभाव है। अब संसार में शान्ति क्यों न फैलेगी?" इस तरह के शब्द चारों ओर से उठ रहे हैं। मैं भी इस जोश के दरया में बहकर धन्य। धन्य॥ करता हुआ घर को चल दिया। इनमें से कई वेदमन्त्रों के अर्थ सुने हुए थे। कैसी पवित्र शिक्षा उनसे मिल रही थी। मन ने कहा—"तेरा सब प्रयत्न व्यर्थ है। जिन वेदों की थोड़ी सी शिक्षा सुनकर तू आर्यावर्त्त को सुधारना चाहता है उसके सम्पूर्ण जानने वाले ये उपस्थित हैं। अब क्या चिन्ता है? तेरे सब प्रयत्न निर्मूल हैं।" मैं शान्त होगया। परन्तु जब सायंकाल को बाजार गया तो एक शराब की दूकान के पास से गुज़रा तो क्या देखता हूँ तीनों वेदपाठी एक दूसरे की सेहत के जाम पी रहे हैं। आह। क्या घोर कष्ट मन को पहुंचा। वेदपाठ और यह करतूत। आश्चर्य के साथ उनसे पूछा। "महाशय आज प्रातः तुम क्या उत्तम उपदेश दे रहे थे, अब तुम्हें क्या होगया?" सामवेदी बोले 'क्या उपदेश? हम तो उजरत (वेतन) लेकर वेद पाठ कर देते हैं। हमें उपदेश से क्या अभि-प्राय?" मन में तरह तरह के विचार उठने लगे। कभी उस पर अविश्वास—कभी उससे निराशा। अर्थात् मनुष्य मात्र पर से विश्वास उठाकर मैं घर पहुँचकर चिन्ता के समुद्र में निमग्न होगया। मन की अवस्था शिथिल पड़ गई। काम धन्धे से दिल उचाट होगया। इसलिए दूसरे दिन फिर समय व्यतीत करने के लिये बाहिर निकला। क्या देखता हूँ कि जंगल में एक बड़ी मनोहर वाटिका है। उसके मध्य

में एक विस्तृत थड़ा है जिसके चारों ओर फुलवाड़ी की बहार आँखों को तरावट दे रही है। थड़े पर एक चौकी पर क्या सुन्दर आसन बिछा हुआ है और उस आसन पर कैसे दिव्य मूर्ति महात्मा बैठे हुए हैं। चेहरे से शान्ति तथा प्रसन्नता की वर्षा हो रही है। होठों पर कैसी मोहनी मुस्कराहट नजर आ रही है। चारों ओर चुपचाप सैकड़ों आदमी बैठे हुए हैं और महात्मा वेदमन्त्रों का उच्चारण कर उनका पदच्छेद, अन्वय आदि करते हुए कैसे मीठो और प्रभावात्मक वाणी में उनका अर्थ समझा रहे हैं। ऐसी प्रचलित भाषा में ऐसे उत्तम दृष्टान्त देते हैं कि मूर्ख से मूर्ख भी अपने मार्ग प्रदर्शन के लिए कुछ शिक्षा उस स्थान से लेकर जाता है। मोहित होकर मैं उसी स्थान पर बैठ गया। कैसे उच्च आचरण की शिक्षा मिल रही है। हिंसा, चोरी निन्दा, छल कपट ईर्ष्या और क्रोध आदि त्याग के कैसे कैसे उत्तम उपाय बताये जाते हैं। आज तो मेरे आनन्द की सीमा न रही। जिस प्रकार कल निराश हुआ था उससे चार गुणी आशायें बध रही हैं। वेदार्थ जानने वाले महात्मा के जब दर्शन होगये तो अब बेड़ा पार है। अभ्यास तथा वैराग्य के कैसे कैसे उत्तम उपदेश सुन चुका हू स्वभाव मानता नहीं कि योग के नियमों से एक क्षण भी अब वञ्चित रहूँ। प्रात ही महात्मा के दर्शनों के लिये पहुँचता हू। आशा थी कि महात्मा अभ्यास मे लगे होंगे समाधि से आँखें खोलेंगे तो दर्शन करूंगा परन्तु वहाँ जाकर देखता हूँ कि अब तक महात्मा शौच ही नहीं गये। महात्मा का एक मुकदमा है और उसके लिए चन्दा जमा करने के अभिप्राय से आये हैं। इन दिनों भक्त जनों से चन्दा एकत्र हो रहा है। दिल पर ऐसी चोट लगती है कि पागलों की तरह जगल में भागता हू ससार से निराश होकर ऐसे समाज से पृथक होने की सूझती है जिसमे ऐसे आडम्बर भरे जाते हैं उस समय आगे से ऋषि चले आते दिखाई देते हैं। मेरी अवस्था देखकर उन्हे दया आती है और हाथ पकड़कर कहते हैं "कुल वेद उस अविनाशी परमरक्षक परमात्मा में निवास करते हैं। जिसके अन्दर सब दिव्य गुण वास कर रहे है। इसलिये जो कोई उस परमात्मा को नही जानता, वह वेद से क्या कर लेगा और जो मनुष्य उस परमात्मा को जानते है, वही ससार के दुःखो से छूटकर मुक्त होते हैं।" ऋषि की आवाज ने जादू का काम किया। मेरी आखें खुलीं और मैंने जाना कि जब तक वेद के स्वामी परमात्मा को नहीं जानता तब तक वेद मुझे क्या लाभ पहुचा सकते हैं? जब तक गुणको नहीं जानता गुणीको कैसे समझ सकता है। प्रभु! मुझे अपनी सेवा में लो॥

अध्यात्म सुधा

[लेखक—धर्मवीर श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज]

समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः ।
जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशोकः ॥ मुण्डकोप०

उपदेश

सूर्य उदय होने के पश्चात् जब अंधेरा दूर होजाता है और चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश का राज्य प्रतीत होने लगता है—कैसे विश्वास के साथ मनुष्य उस समय कदम रखते हैं और कैसे विश्वास के साथ हरेक काम को करते हैं ? वही मनुष्य जो अपनी दुर्गन्धमय कोठरी से पग बाहर रखते हुए घबराता था, जो कि प्राण डालने वाली शुद्ध वायु के भंडार से अंधकार में ठोकरों के भय के मारे घबराता था, वह आनन्द पूर्वक वायु सेवन कर रहा है। शान्त हृदय होकर तथा निर्भय इधर उधर घूम रहा है। वही गृह है वही स्थान है, वही वृक्ष हैं, वही प्राकृतिक पदार्थ हैं फिर इतना भारी परिवर्तन क्यों ? इसलिये कि सुख और दुःख, आनन्द और क्लेश, शान्ति और अशान्ति इन सब अवस्थाओं के लाने वाली ये वस्तुएं नहीं हैं। प्राकृतिक पदार्थों के अन्दर स्वयं दुःख सुख के साधन उपस्थित नहीं हैं—नाहीं प्रकृति के असंख्य नियमों के अन्दर मनुष्य के हृदय को शान्त व अशान्त करने की शक्ति विद्यमान है। सुख और दुःख, बन्ध और मोक्ष इन सब का मूल कारण अन्तःकरण है। जिस प्रकार बाह्य दुःख और सुख की उपस्थिति को हम जड़ प्रकाश व अन्धकार की अवस्था पर निर्भर देखते हैं—इसी प्रकार आन्तरिक दुःख और सुख का निर्भर होना, आत्मिक प्रकाश से सम्बन्ध व उससे पृथक् होने पर हमें स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। सूर्य अपनी सारी शक्तियों के साथ कैसा ही उत्तम प्रकाश क्यों न दे रहा हो यदि चक्षु ठीक नहीं हैं उनकी शक्ति में कुछ अन्तर है तो आनन्द कदाचित् नहीं मिल सकता। यही अवस्था जीवात्मा की है। चारों ओर जीवात्मा को प्रकृति घेरे हुए है। बुद्धि रूपी चक्षु मिले हुए तो हैं परन्तु उनको खोलने का अभ्यास नहीं। अन्धकारमय प्रकृति ने अपने संसर्ग से आँखें खोलने के योग्य ही नहीं छोड़ा। हृदय के आत्मिक सूर्य का प्रकाश होते हुए भी देखना कठिन हो रहा है। स्वतन्त्र होते हुए भी परतन्त्र

हैं। कैसी शोचनीय दशा है? स्वयं चेतनात्मा होते हुए अपने स्वरूप को भूला हुआ अचेतन और अनात्मा का सेवक बन रहा है। ऐसी हीन अवस्था में व्याकुलता बढ़ती जाती है। शोकसागर के अन्दर डूबा हुआ भी अपनी शोचनीय अवस्था पर विचार करने योग्य नहीं रहता। इससे बढ़कर और क्या दुःखदायक अवस्था हो सकती है जो अपने स्वरूप को ही भूल जावे। इससे अधिक दयनीय अवस्था किसकी हो सकती है? परन्तु प्रकाश तो अन्तःकरण के अन्दर ही उपस्थित है। आत्मिक सूर्य की रोशनी मनुष्य की बनावट के एक एक परमाणु के अन्दर भी हो रही है। इसलिए पापी से पापी जीवात्मा के अन्दर आत्मिक भावों का चमत्कार दिखलाई देता है। ऐसा समय आता है कि प्रकृति के घोर अन्धकार में लिप्त हुए आत्मा को भी अकस्मात् जगमगाहट चुन्धिया देती है। जब ज्ञानरूपी नेत्र स्पष्ट खुल जाते हैं—आत्मिक सूर्य का प्रकाश स्पष्ट दिखाई देने लगता है—वह समय बड़ा ही कठिन होता है। यदि एक आँख, इस आश्चर्यकारक दृश्य को देखकर आँखें बन्द कर लेवे तो मनुष्य की फिर वही दुःखदायक अवस्था हो जाती है। किन्तु यदि उन खुली हुई आँखों से काम लेना आरम्भ करदे, यदि उनके द्वारा प्रकाशस्वरूप परमात्मा की महिमा का अवलोकन आरम्भ देवे और इस महिमा में लीन होजावे तो फिर प्रकृति का अंधेरा उसे अपनी ओर खींच नहीं सकता। इसलिए ऋषि कहते हैं कि **जीवात्मा अपने समान अनादि छिन्न भिन्न होने वाले प्रकृति के पदार्थों में डूबा हुआ परतन्त्रता से अज्ञानवश शोक करता है। परन्तु जब अपने में व्यापक और अपने से पृथक् स्वप्रकाश स्वरूप परमात्मा को देखकर उसकी महिमा में मग्न होता है तब शोक रहित होजाता है और आनन्द हासिल करता है।"**

प्रिय पाठकगण! क्या तुम्हारे हृदय के अन्दर होते हुए, घोर पाप करते हुए भी उस आत्मिक सूर्य का चमत्कार दृष्टिगोचर हुआ है? और क्या तुमने उस समय उस मार्गदर्शक प्रकाश से सहायता लेने का यत्न किया? अगर नहीं तो तुमसे बढ़कर मन्दभाग्य कौन है? किन्तु निराश मत होवो। चमत्कार तुम्हें फिर कभी दिखाई देगा। अत्यन्त पाप करने पर भी फिर कभी तुम्हारा अन्तरात्मा प्रकाशित हो जावेगा उस समय अवसर को न छोड़ते हुए अपितु बुद्धि के चक्षुओं को उस दृश्य के अन्दर मग्न करके शान्तचित्त हो जाना।

भगवान् को प्रणाम

[लेखक—श्री स्वा० व्रतानन्द जी आचार्य गुरुकुल चित्तौड़गढ़]

ओ३म् नम शम्भवाय च। मयोभवाय च।
नम शङ्कराय च। मयस्कराय च॥
नम शिवाय च। शिवतराय च॥ (यजुर्वेद अ० १६)

ओ३म् सुखों के दाता, तुमको लाखों प्रणाम॥ ध्रुवपद॥
तुमको जब हम मन मे लाते। उस समय सब भय भग जाते।
निर्भय पद के दाता तुमको० ॥१॥
सब धामों यामों के कर्त्ता, दैन्य आदि दुखों के हर्त्ता।
भौतिक सुख के दाता तुमको० ॥२॥
सब के सुख हित सूय बनाया, चन्द्र वायु जल अन्न अनाया।
दसदिश सुख के दाता तुमको० ॥३॥
सत्य आदि मे श्रद्धा धर दी, अश्रद्धा पापों में भर दी।
चार वेद के दाता तुमको० ॥४॥
सब रोगों के हरने वाले, सकल भद्र को भरने वाले।
आत्मिक सुख के दाता तुमको० ॥५॥
ओ३म् सुखों के दाता, तुमको लाखों प्रणाम॥

मांसाहार समर्थक यत्न और स्वामी श्रद्धानन्द जी

(६)

[लेखक—श्री प० जयदेव जी शर्मा विद्यालङ्कार चतुर्वेद भाष्यकार अजमेर]

(गताङ्क से आगे)

(५) रा० ब० मूलराज M A ने ऋषि निर्वाण अर्धशताब्दी के अवसर पर निकलने वाले दयानन्द स्मारक ग्रन्थ (Dayananda Conmemtration Volume) के लिये जो पुस्तक लिखकर छपायी है, उसका जो उद्धरण मि० अमरसिंह ने दिया है उसमें बहुत रहस्य हैं। मुझे तो सन्देह है कि जिस मुंशी समर्थदान ने निर्भीक होकर हाशिये का धोखा पकड़ा था वह मूलराज जी के सामने वैसा कहेगा, हमे विश्वास नहीं होता क्यों कि एक तो ऋषि दयानन्द उस समय स्वय भी बहुत सावधान थे और छापने वालों को भी सावधान करते थे। इस सम्बन्ध मे श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी ने अपने एक ट्रैक्ट 'वेद और आर्य समाज' मे जा लिखा है वह बहुत ही अधिक प्रकाश डालता है। पृष्ठ स० २६ पर आपने 'यन्त्रालय के सशोधकों की कुटिलता का एक नमूना" शीर्षक देकर मासविषयक इसी प्रकरण को खोलकर लिखा है। जो नीचे देते हैं—

"पुराने आर्य पुरुषों को जिन्होंने आय समाज के घरेलू युद्ध के आरम्भ से ही सब घटनाओं को विचार दृष्टि से देखा है, विस्मृत नहीं हुआ होगा कि जब नवम्बर सन् १८९७ ई० के वार्षिकोत्सव पर लाहौर मे धर्म चर्चा के समय रायबहादुर मूलराज एम० ए० ने मासभक्षण का समथन करते हुए कहा था कि मासभक्षण को ठीक समझते हुए भी वह आर्य समाज के सभासद् रहसकते हैं, उस समय उन्होंने अपने चेले शकरनाथ द्वारा पुराने सत्याथ प्रकाश और पुरानी सस्कारविधि का भी प्रमाण दिलवाया था और साथ ही शकर नाथ ने यह भी दावा किया था कि श्री स्वामी दयानन्द जी ने नये सत्याथ प्रकाश मे भी मासभक्षण का मण्डन किया था, परन्तु उसे पण्डितों ने कटवा दिया। उस रमणीय धर्म चर्चा की रिपोर्ट आर्य समाज के वृद्ध पितामह श्री लाला जीवनदास जी ने छपवाई थी, जिसमे से प० शकरनाथ की वक्तृता और उसका भक्त रैमल जी की ओर से उत्तर ज्यों के त्यों छापने से मेरा आगे आने वाला लेख समझ में आजाएगा।

(रिपोर्ट का अंश)

इसके बाद प० शकरनाथ ने उठकर जो तकरीर की उसका खुलासा यह है—(१) पिछले साल अजमेर में जब परोपकारिणी का जलसा हुआ था तो यह बात जाहिर हुई थी कि स्वामी जी ने नये सत्यार्थ प्रकाश के मसौदे में मास खाने की इजाजत लिख दी थी। मगर चकि छापने का काम वैष्णव लोगों के हाथ में था इसलिये वह तहरीर छापी नहीं गई।

इसके बाद भक्त रैमलदासजी ने (जो वैदिक यन्त्रालय के मैनेजर रह चुके हैं) आकर कहा कि प० शकरनाथ ने जो अजमेर का हाल ब्यान किया है उसकी निसबत मै कुछ कहना चाहता हूँ क्योंकि मै मौके पर मौजूद था। भक्त जी ने जो बाद मे तकरीर की उसका खुलासा यह है—(१) नये सत्यार्थ प्रकाश के मसौदे मे जो मास विषय की तहरीर है वह मतन (मूल) मे सिर्फ हाशिये पर है। और कलम से काटी हुई, और न वह तहरीर स्वामीजी के अपने हाथ की है, और यजुर्वेद भाष्य के मसौदे में भी इसी किस्म की कटी हुई तहरीर हाशिये पर दर्ज है। जिससे साफ पाया जाता है कि जिस तरह मृतक पितरों के श्राद्ध की हिदायत बाज खुद गर्जों ने पहले सत्यार्थ प्रकाश मे दर्ज करदी थी (जिसका खण्डन स्वामी जी को एक नोटिस के जरिये करना पड़ा) इसी तरह शायद बाज मासाहारी पुरुषों ने मौका पाकर मास का विषय अपने मुफीद मतलब, नये सत्यार्थ प्रकाश और यजुर्वेद के मसौदों में दर्ज कराकर कटवा दिया होगा। ताकि इससे उनको अपने पक्ष की पुष्टि मे एक प्रमाण मिल जाय, वरना कयास नहीं चाहता कि स्वामी जी को दोनों पुस्तकों में माँस विषय लिखना ऐसे मौके पर याद आया जबकि उनके मूल में गुजाइश न रही, और हाशिये पर लिखना पड़ा।"

"यह विवाद मेरे सम्मुख हुआ। उस वर्ष पहली बार चुनाव में प्रधान पद मुझे दिया गया था। तत्पश्चात् मास विषय पर कालिज पार्टी की ओर से बहुत बल दिया जाने लगा और मुझे उनके विरोध से आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा आर्य सिद्धान्तों की रक्षा के लिए, बड़ा प्रयत्न करना पड़ा। इसी रक्षा का काम करते हुए सन् १८९८ ई० के अगस्त मास में पहली बार मैं अजमेर पहुचा था। लाला वजीरचन्द्र तथा मास्टर आत्माराम मेरे साथ थे। बाबू रामविलास जी से सत्यार्थ प्रकाश की असली हस्तलिखित कापी (Manuscript) देखी। वह

हस्तलिखित पुस्तक ऋषिदयानन्द की हस्तलिखित न थी। लेख अन्यों का था, परन्तु कहीं २ सशोधन ऋषिदयानन्द के हाथ का किया हुआ था, और प्रत्येक पृष्ठ पर हस्ताक्षर ऋषि के थे किन्तु इसके साथ ही बहुत स्थानों मे भीमसेन के हाथों से सशोधन हुआ था। मैंने दशम समुल्लास खोलकर मास का विषय निकाला तो हस्तलिखित पुस्तक क पृ० १८३ के हाशिय पर कुछ लिखकर काटा दिखाई दिया। मैंने उसके सम्बन्ध म सारी इबारत अक्षरश वारीक कागज ऊपर रखकर नकल करली थी और उसका वणन आगे करता हूँ। आवश्यक तो यह था कि उस लेख का ज्यों का त्यों फ़ोटा सर्व साधारण के सामने रखा जाता। परन्तु मेरी आर्थिक अवस्था ऐसा करन को आज्ञा नहीं देती, इसलिए जो कुछ वहा, जिस क्रम से दिया हुआ है वह यहा दज करता हू। एक पक्ति में जितना लेख रहा है, उतना हो यहा भी देकर जो साधारण सशोधन है वह मै देदूगा।

(सत्यार्थ प्रकाश समु० १० । पृ० १८३)

चाहे (खाय चाहे) कुत्ते आदि मामाहारियों को खिला देवें (वा जला देवें) अथवा काई मासाहारी खावे तो भी ससार की कुछ हानि नहीं (होती)

[• नोट—ब्रेकेट मे दिया अश चिन्ह देकर हाशिये पर लिखा है]

इतने लेख मे भी कुछ विचारणीय बातें हैं जिनकी ओर दृष्टि डालने से ही पण्डितों को कुटिलता का पता लगेगा (खाय चाहे) ये शब्द हाशिये पर बना है [और कटा भी हुआ है] किसने कटवाये यह आगे चलकर पता लगेगा। क्योंकि मु शी समर्थदान के पत्र से ज्ञात होगा जब पहले प्रबन्ध कर्त्ता समर्थदान को ऋषि दयानन्द ने हस्तलिखित पुस्तक दी थी ता खाने की आज्ञा युक्त लेखन था। ज्ञात होता है कि यह तथा हाशिये का लेख ऋषि की आज्ञा मगाकर मनाषी समर्थदान ने ही काट दिया था। जितना लेख मैं दे चुका हू उसके पश्चात् नीचे दिया लेख है, जिसकी सगति ऊपर के लेख के साथ ठीक २ होजाती है। "किन्तु उस मनुष्य का स्वभाव मासाहारी होकर हिसक हा सकता है।"

इस लेख के आरम्भ मे किन्तु शब्द से पहले इस प्रकार का चिन्ह (ˇ‸) है और हाशिये पर नीचे दिया लेख कई परिवतनों के साथ प० ज्वालादत्त के हाथ का इस प्रकार है।

हाशिये का लेख

प्रश्न-सब मांस भक्ष्य वा अभक्ष्य है ? (उत्तर) अभक्ष्यो ग्राम कुक्कुटोऽभक्ष्यो ग्राम्य शूकरः। जो ग्राम में कुक्कुट और सूवर तथा मांसाहारी सब पशु पक्षी तिर्यक् जो पेट से चलते हैं, अशुद्धाहारी मत्स्यादि हैं वे सब अभक्ष्य और इनसे भिन्न शुद्धाहार जांगल सब भक्ष्य हैं, परन्तु यह बात राजवर्गी मनुष्यों के लिये है, अन्य के लिये नहीं। (प्रश्न) ग्राम के कुक्कुट आदि अभक्ष्य और वनस्थ भक्ष्य हैं, इसमें क्या युक्ति है ? (उत्तर) ग्रामस्थ कुक्कुट आदि उपकारक अशुद्धाहारी अभक्ष्य और जंगल वासी हानिकारक शुद्धाहारी भक्ष्य हैं।"

'निष्पक्ष पाठक स्वयम् देखें कि इस लेख के साथ ऋषि दयानन्द की इबारत की भाषा तथा युक्ति ऐसी पाच है कि उसका ऋषि दयानन्द के साथ कोई सम्बन्ध ही नहीं हो सकता "

"उस समय मुझे और अन्य भाइयों को भी यही सन्देह रहा कि शायद मनीषी समर्थदान ने राय मूलराज के काबू आकर यह लेख लिखकर काट दिया है, मेरा विचार भी उस समय भक्त रेमल जी के साथ मिलता था, और इसलिये मु० समर्थदान के लेखों के साथ उपरोक्त लेख को मिलाया भी गया। परन्तु यह लेख मनीषी जी के लेख से भिन्न प्रतीत हुआ और मेरे लिये यह लेख पहेली ही रहा। यह पहेली उस समय बूझी गई जब मैं (स्वा० श्रद्धानन्द उर्फ मुंशीराम जिज्ञासु) वैदिक यन्त्रालय का अध्यक्ष बनाया गया और ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार ठीक करते हुए मुझे (मुंशी समर्थदान का पूर्वोक्त) पत्र मिला।

"......मनीषी समर्थदान का ऊपर दिया पत्र पढ़कर मैंने ऋषि के पत्र व्यवहार की तिथि क्रमसे पड़ताल की। तब मांस वाला हाशिये का लेख निःसन्देह ज्वालादत्त का लिखा हुआ प्रतीत हुआ। पं० ज्वालादत्त के कई पत्र मिले जिनके साथ हाशिये के अक्षर मिलगये। इसीलिये ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार छपाते हुए मैंने उस पुस्तक की भूमिका में पृष्ठ ४२, ४३ पर लिखा था—"

इस प्रकार धूर्त्त ज्वालादत्त पण्डित की धूर्तता का भण्डा फोड़ स्वामी श्रद्धानन्द जी के उद्धरणों से हो जाता है और रायबहादुर तथा उनके पक्षपाती

म० अमरसिंह किस पानी में खड़े होकर मास खाने का पक्ष करते हैं वह स्पष्ट हो जाता है। पं० ज्वालादत्त को इसी प्रकार की छल-कपट की बातों के कारण ही निकाल दिया गया था, और फिर कई बार उसे रक्खा गया था तो भी वह अपनी चालों से बाज न आया। अस्तु।

मुझे खेद है कि म० अमरसिंह जी के शेर बनने का नुमस्खा तो प० ज्वालादत्त की धूर्तता में भी न मिला, परन्तु क्यों कि उसमें भी ग्राम के सूअर व मुर्गों के मास खाने को रोका है, परन्तु गाव क बकरी बकरा, भेड के मास म० अमरसिंहजो खाते हैं, उनके खाने का कहीं जिकर ही नहीं है, अस्तु।

(६) म० अमरसिंह जी के मत केवल १० नियमों पर हस्ताक्षर करने से आर्य समाजी बन जाता है। परन्तु यह उनको ध्यान में रखना चाहिये कि यदि कोई रावण राक्षस के समान कच्चा नर मास रोज खाया करे तो वह एक नहीं लाख प्रवेश पत्र भी भरदे तो क्या वह 'आर्य' कहा जा सकेगा? क्यों नहीं? क्योंकि नरमास खाना आर्योचित कार्य नहीं है, राक्षसोचित है। इसी प्रकार जब तक कोई एक वर्ष सदाचार से, शिष्टाचार से न रहले, तब तक कोई आर्य सभासद केवल प्रवेश फार्म भर कर ही आर्य सदस्य नहीं बन सकता। आर्य सभासद् बनने के लिये उसको वेदोक्त सदाचार का पालन करना होगा।

(७) म० अमरसिंह चाहते हैं कि कलमा' पढ़कर जैसे कोई मुसलमान बन जाता है ऐसे ही प्रवेश फार्म भरके आर्य बन जाया करें तो यदि ऐसे ही आर्य समाज की भरती होने लगे तो घोर मासाहारी भी आर्य व हिन्दू क्या ईसाई व मुसलमान भी आर्य क्यों न बनें।

अमरसिंह जो अश्वमेध मे अश्व का घात करना मानते हैं। तो वे अवश्य नरमेध में नरबलि होती भी मानेंगे? फिर आपको आर्य और राक्षसों मे क्या भेद प्रतीत होगा? अमरसिंह जी थोड़ा धैर्य से इन प्रश्नों पर विचार करें कि वे सिंह बनने के मार्ग में कैसे बेतहाशा दौड़ना चाहते हैं। केवल झटके का मास खाने से गुरु गोविन्दसिंह का सिख नहीं बनता। वह तो गुरु गोविन्दसिंह के समान देश के काम मे बलि होने की साध करने से 'सिख' बनता है। यदि पाच ककके सिखों के धारण कर पाच मम्मे (मकार) वाममार्गियों के भोगने लगे और जीवन भर पूंछ हिलौवल कुत्तागीरी की सेवा में लगा रहे तो ऐसा सिखपन गुरु गोविन्दसिंह के चेलों का लक्षण कोई न मानेगा।

मेरी सम्मति में सिखों में जो वीरता है वह गुरु गोविन्दसिंह के शिष्य होने का गौरव अनुभव होने के कारण है न कि मांस खाने के कारण। चिड़िया को चिड़िया का मांस खिलाकर गुरु गोविन्द ने बाज नहीं बनाया प्रत्युत चिड़िया को बाज से लड़ाकर बाज बनाया था। वह आत्मिक साधना थी, नकि मांसाहार।

(८) म० अमरसिंह जी के मनमें सिखगुरुओं ने मासाहार को प्रमुखता दी, इसी से वे हिन्दुओं मे दृढ़ और प्रमुख हैं। यह उनका विचार ठीक नहीं है। सिखगुरुओं ने मुसलमानी शासन के प्रति उसे उलट डालने की धार्मिक और राजनैतिक क्रान्ति कर देने पर बल दिया था इसीसे वे वीर बने। मास भोजन तो सिखों और मुसलमानों दोनों मे 'झटका' और 'बिस्मिल्ला' समान कोटिके हैं। मुसलमानी सेनाएँ भाडे की थीं और सिख सेनाए स्वय सेवकों के समान अपने धार्मिक दृढ़ सकल्प वालों की बनी थीं, इसलिए उनमें से एक एक सवा लाख से लड़ सका। सिख मुसलमान से सवाया या दुगना मास खाने से अधिक वीर नहीं हैं।

अंग्रेजी शासन के प्रारम्भ में सिख लोग दाल-चावल खाने वाले पुरबियों से पछाड़ खा गये थे और बाद में जाकर वे ही सरकार का सहयोग पाकर पुरबियों के दमन में पराधीन हथियार बने। अब भी जो वे वीर हैं, गुरुभक्ति की लाज से हैं, किसी गुरु ने मासाहार को सिंह बनने का नुसखा नहीं बतलाया। यदि सिखों में मासाहार की प्रमुखता होती तो सिख लोग 'कड़ा' (हलुआ) की जगह मास का बटलोआ चढ़ाते और बाँटा करते। परन्तु ऐसा कभी नहीं हुआ। मास के लिये सारे गुरुग्रन्थ साहब में एक भी दोहा, चौपाई, कवित्त मास की प्रशसा में नहीं है। न मास खाने को उकसाता है, न उसे वीरता का नुसखा बतलाता है।

म० अमरसिंह चाहते हैं कि मास को भोजन का आवश्यक अंग बनाया जावे। ठीक है। यदि अमरसिंह लिखते कि सिवाय कच्चे मास के दूसरा भोजन अन्न आदि न खाना चाहिए तब वे सच्चे सिंह बन जाते। नहीं तो वे भोजन की दृष्टि से आधा (आदमी) और आधा पशु तो हैं ही इसमें उनको क्या लाभ मिला?

(६) हमें म० अमरसिंह जी पर दया आती है, उनकी मांस लुब्ध बुद्धि ने केवल मांस को ही सर्वोपरि 'दमदार भोजन' मान लिया है और उसी पर तुले हुए हैं जबकि उनकी शिक्षा-दीक्षा दाता योरप व अमरीका के विद्वान् कमर कसके (Wheat) गेहूं का ही सर्वोपरि पौष्टिक भोजन मानते हैं और कहते हैं कि जगत् का राज्य उसके हाथ मे होगा जिसके हाथ में संसार का गेहूं (Wheat) होगा। अब पाठक विचारें कौन सच्चा है, म० अमरसिंह या योरोपीयन लोग।

उपसंहार

इस लेख को समाप्त करने के पूर्व उपसंहार मे हम रा० ब० मूलराज जी के सम्बन्ध में इतना प्रकाश डालना चाहते हैं कि रा० ब० मूलराज जी ने मॉस के सम्बन्ध में 'दशप्रश्नी' नाम की पुस्तक छपवायी थी, जिसमें ६वाँ प्रश्न था सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में। उसी का आशय म० अमरसिंह जी ने अपनी पुस्तक मे हवाला दिया है और मुंशी समर्थदान वाला किस्सा लिखा है। परन्तु पाठकों को विदित होना चाहिये कि दश प्रश्नी के इस प्रश्न का मुंहतोड़ जवाब कुछ तो ऊपर लिखा जा चुका है और कुछ उनके सैक्शन (कालिज पार्टी आर्य समाज) के प्रमुख नेता (स्व०) महात्मा हंसराज जी ने दिया, जिसके कुछ उद्धरण नीचे देते हैं।

(१) 'स्वामी जी ने कई स्थलों पर माँसभक्षण का खंडन भी किया है, और राय सा० ने भी उनके व्याख्यान सुने होंगे। स्वामी जी महाराज ने वेद भाष्य की पत्रिकाओं मे अपने जीवन ही में कई बार नोटिस दिया कि उनके सत्यार्थ प्रकाश आदि में कई गलत बातें छप गई हैं, उन्होंने गो करुणानिधि पुस्तक को भी अपने जीवन काल में ही प्रकाशित किया था, जिसमे उन्होंने केवल गोरक्षा का मंडन ही न किया था बल्कि सामान्य मांस भक्षण के विरुद्ध भी लिखा था। मुझे अच्छी तरह ज्ञान है कि गोकरुणानिधि की हस्तलिखित कापी स्वामी जी के अपने हाथ से ठीक की हुई राय सा० के पास विद्यमान थी और उन्होंने वह कापी मुझे (म० हंसराज) को दिखलाई थी। इस अवस्था में क्या राय साहब का कर्त्तव्य नहीं था कि वे स्वामी जी महाराज से निवेदन करते कि आप पहले मांस के पक्ष में थे और अब आप मांस का विरोध करते हैं, उनके जीवन में तो रायसाहब को यह साहस नहीं हुआ कि वे उनसे किसी प्रकार का प्रश्न करें और हमारे सामने आक्षेप

पेश करते हैं। हमारा तो उत्तर यही है कि जो नोटिस स्वामी जी महाराज ने दिया है वह ठीक है।

(२) दो तीन वर्ष हुए एक उप सभा संस्कार विधि के शोधने के लिये नियत हुई थी, और मुझे (म० हंसराज) को भी उसका सदस्य बनाया गया था। वर्त्तमान संस्कार विधि की असली हस्तलिखित संस्कार विधि के साथ तुलना करके संशोधन किया गया, इस समय भी परोपकारिणी सभा इस बात में संलग्न है कि स्वामी जी महाराज के हस्तलिखित पुस्तकों की फ़ोटो ली जाय और सत्यार्थ प्रकाश के पुस्तक की फ़ोटो ली जा चुकी है। इससे स्पष्ट है कि परोपकारिणी सभा अपने कर्त्तव्य का पूरी ईमानदारी से पालन कर रही है। (पृष्ठ १३व १४)

इस प्रकार रा० मूलराज जी एम ए की आड़ लेकर जो प० अमरसिंह जी ने मासमक्षण के सम्बन्ध में परोपकारिणी को जाल साज़ बनाकर ज्वालादत्त आदि जालकारियों की वकालत की और ऋषि दयानन्द को बदनाम करने की चेष्टा की है उसका भण्डा फोड़ स्वामी श्रद्धानन्द जी और महात्मा हंसराज जी दोनों आर्य समाज विभागों के नेताओं के हाथों भली प्रकार होजाता है। इसे देख अब कभी आर्य पुरुष भ्रम में न पड़ेंगे।

आर्य्य भाइयों के लिए अमर शहीद
श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का सन्देश

[लेखक—स्व० स्वामी जी के परमभक्त श्री लब्भूराम जी आनन्द आश्रम, लुधियाना]

सन् १६२८ की बात है जबकि आर्यों पर चारों ओर से मुसीबतों के बादल मँडरा रहे थे, परन्तु आर्य समाज के भाग्यशाली होने का परिणाम था कि उस समय नेता महात्मा मुन्शीराम जी जैसे निडर आर्य वीर थे कि जिन्होंने २८-११-१६०८ को आर्य समाज लाहौर के वार्षिकोत्सव पर एक मार्के का व्याख्यान दिया (जो कि एक ऐतिहासिक भाषण था जो सदा याद रहेगा।) जिसका अन्तिम सन्देश आज भी (जबकि आर्य समाज की प्रबल शक्ति से भयभीत होते हुये ऋषि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध तूफाने बेतमीजी (अविवेक पूर्ण आन्दोलन) उठा रहे हैं) आर्य समाज के लिये आज भी कल्याणकारी है जिसके उद्धरण निम्नलिखित हैं—

"तीन वर्ष पहिले जबकि ऐन्ड्रो जैकमन डैविड ने आर्य समाज के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट की थी कि ससार मे दयानन्द की धूम मचने वाली है तो लोग हंसा करते थे परन्तु आज इस पर कोई हस नहीं सकता। आज भयानक से भयानक शकलें सामने आ रही हैं, अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये लोग गवर्नमैण्ट को इसके खिलाफ भड़काते हैं" परन्तु आपके दिल में इनके लिये रहम होना चाहिये जब आपकी यह अवस्था होगी तो कोई सासारिक शक्ति आपको कष्ट नहीं पहुँचा सकेगी। यदि आपके अन्दर इस प्रकार सहन शक्ति का बल नहीं तो आर्य समाज से पृथक् होजावो।

परमात्मा की शरण लो

वैदिक धर्म्म के अनुयायियो आप कदाचित् आशा न रखो कि मुसीबत के समय कोई तुम्हारी सहायता करेगा। तुम्हारे दिलमें परमात्मा पर विश्वास होना चाहिये।

जब तुम्हारा धर्म्म दया है तो तुमको संशयात्मक होने की आवश्यकता नहीं। हमारे अन्दर वह आत्मा है जिसको कोई बड़ी से बड़ी शक्ति हिला नहीं सकती, अग्नि जला नहीं सकती, हवा असर नहीं कर सकती, कोई शस्त्र काट नहीं सकता। यदि यह सत्य है तो इस आत्मा का नाश कौन कर सकता है।

यदि शक्ति है और अनुभव करते हो कि आत्मा परमात्मा का पुत्र है क्योंकि वेद में अमृत पुत्र कहा गया है यदि अजर और अमर हो और तुमको कोई शक्ति काट नहीं सकती तो फिर शरण किसकी लो ?

उस माता की जिसकी गोद से कोई हिला नहीं सकता। मानवीय शक्तियों की क्या शरण ढूंढते हो ? यदि वेद सत्य है, यदि वेद का कर्त्ता ईश्वर सत्य है तो जैसे ऋषि दयानन्द कहता है कि जब तक मेरे साथ सत्य की शक्ति है तो मेरे सामने कोई आ नहीं सकता। इसी तरह ठीक जब तक आर्य समाज का दारोमदार सच्चाई पर है कोई सांसारिक शक्ति उसको कुचल नहीं सकती। जैसे कहा है:— "कि वेद एक है ईश्वर एक है, धर्म्म एक है मैं इसके साथ जोड़ता हू कि इस युग का ऋषि दयानन्द भी एक है। सच्चरित्र और ऋषि दयानन्द को अपने साथ रखते हुये किसी का भय न रखिये। डर अपने अन्दर का होता है अन्दरूनी डर निकाल दो फिर कोई शक्ति आपको हिला नहीं सकेगी। आपको आपके कर्म्म डरा रहे हैं इसलिये बुरे कर्म्मों का नाश करदो। अपने आचरणों को पवित्र करो और प्राचीन वैदिक धर्म्म की शरण लो। अपने बेरहम से बेरहम (निर्दय) दुश्मन के लिये भी कभी ख्याल न करो कि वह जलील (अपमानित) हो। दुश्मनों की तमाम सख्तियों को सहन करते हुये अपनी उन्नति करो। यदि कोई शब्द निकले तो यह "सरे तसलीम खम है जो मिजाजे यार में आए" वह समय जब तुम लाओगे तो स्वयं आपके सामने सर तसलीम करेंगे। यदि इसी तरह आर्यों के अन्दर धर्म्म के लिये श्रद्धा रहेगी तो मेरा पूर्ण निश्चय है कि सब आर्यों पर फूलों की वर्षा करेंगे। तुम्हारी जय होगी, आर्य समाज की जय होगी, वैदिक धर्म्म की जय होगी और परमात्मा के सत्यराज्य की जय होगी।"

प्रभु परमात्मा हमें बल दें कि हम अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस मनाते हुवे उनके सत्य उपदेशों को अपने हृदय मे ढाल सकें।

जीवन की झांकियाँ—

बन्धन से मोक्ष की ओर

पूज्य पिता जी के कुछ संस्मरण

[लेखक—श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति]

(१)

जैसे पर्वत की ऊंची चोटी से पानी की धारा निकल कर किसी गहरे स्थान में इकट्ठी होती रहती है, जिससे झील भर जाती है और जब झील लबालब भर जाती है, तब पानी रास्ता तलाश करके एक निश्चित दिशा में नदी का रूप धारण करके बहने लगता है, उसी प्रकार पिता जी का जीवन बड़ी बहन वेदकुमारी जी के विवाह के पश्चात् निश्चित मार्ग बनाकर धर्म-सेवा की नदी के रूप में सर्वमेध यज्ञ की ओर को बहने लगा। इस लेख मे मैं उनकी नयी जीवनधारा के पहले पड़ाव के कुछ संस्मरण लिखूंगा।

एक दिन प्रातःकाल हवेली के अन्दर खबर पहुँची कि बाहर बाबू जी से मिलने वाले लोगों की भीड़ लग रही है। क्या मामला है—यह जानने के लिए हम दोनों भाई भाग कर बाहर आये। दफ्तर के बरामदे में कुर्सियों पर बहुत से लोग बैठे थे और पिताजी एक अंगरेजी का अखबार सुना रहे थे। प्राय सभी उपस्थित लोगों के हाथों में अखबार दिखाई देता था। हम दोनों अंगरेजी नहीं समझ सकते थे, इस कारण पूरी बात तो समझ में नहीं आयी, परन्तु लेख पढ़े जाने के पश्चात् जो आपस की बातचीत हुई और जिस प्रकार सब लोग ताली दे-दे कर हंस रहे थे, उससे हमने यह अवश्य समझ लिया कि मामला कोई मजाक का है और अखबार के किसी लेख से लोग धोखे में आ गये हैं। उसी समय हमने यह भी देखा कि तार वाला कई तारें लेकर आया है। वह भी पढ़ी गयीं और उन पर भी कहकहा लगा।

उस समय तो हम लोग अच्छी तरह नहीं समझ सके कि क्या बात थी, परन्तु पीछे से सब भेद समझ में आगया। बात यह थी कि कुछ समय पहले पिता जी ने समाज मन्दिर में रहतियों को शुद्ध किया था। रहतियों की गिनती उस

समय अछूत हिन्दुओं से की जाती थी। आर्य समाज सिद्धान्तरूप में प्रारम्भ से ही छूआछूत को नहीं मानता था, परन्तु तब तक उसकी ओर से अछूतपन को दूर करने का कोई उपाय नहीं किया गया था। पिता जी के जीवन की सब से बड़ी विशेषता यही थी कि जिस बात पर विश्वास करते थे, उसे कार्य में ला डाले बिना उन्हें चैन नहीं पड़ती थी। वह उस समय जालन्धर आर्यसमाज के प्रधान थे। एक शुभ अवसर निकाल कर आर्य समाज मन्दिर में बहुत से आर्य समाज सभासदों और दो-तीन पण्डितों की उपस्थिति मे कई रहतिये भाई शुद्ध करके आर्य समाज मे शामिल कर लिये गये। उपस्थित सभासदों ने उनके हाथ से लेकर हलवा खाया और जल पिया। हिन्दु-जाति के लिये यह एक नयी चीज थी। सनातनधर्म सभा ने इस मामले का लेकर हिन्दू जनता को खूब भड़काया जिसके फलस्वरूप बहुत से आर्य समाजी बिरादरी से खारिज किये गये। इस प्रकार समाज सुधार के युद्ध मे एक नया पर्व शुरू हुआ।

यह तो हुई घटना। लाहौर के 'ट्रिब्यून' के सम्पादक को इस पर एक मजाक सूझा। पहली अप्रैल के पर्चे मे उसने एक सनसनीपूर्ण समाचार बनाकर प्रकाशित किया। समाचार का साराश यह था—जालन्धर से समाचार मिला है कि जालन्धर की हिन्दू जनता रहतियों की शुद्धि से विक्षुब्ध होकर आर्य समाज के प्रधान ला० मुन्शीराम के मकान पर चढ़ गयी। उनको पकड़ लिया और समाज मन्दिर में घसीट ले गयी। वहा जाकर उन्हे रस्सियों से बान्धा गया और समाज मन्दिर में जा पीपल का पेड़ है, उससे लटका दिया गया। इतनी कहानी लिखकर सम्पादक ने यह टिप्पणी दी कि लोग इतने भोले हैं कि यदि अप्रैल की पहली तारीख को उपर्युक्त समाचार प्रकाशित किया जाय तो उसे भी सत्य मान लेंगे। जब १ अप्रैल के प्रातः काल ट्रिब्यून का पर्चा लोगों के हाथों मे पहुँचा तो वह बड़ी दिलचस्पी से उस समाचार को पढ़ गये। हितैषी घबड़ा उठे और विरोधी बगलें बजाने लगे, परन्तु अन्तिम पङ्क्तियें पढ़ने का शायद दो-चार ने ही कष्ट उठाया हो सारे लेख के अन्त में A F. (एप्रिल फूल) लिखा हुआ था। पाठक समझ सकते हैं कि इस सम्पादकीय हथकन्डे ने कितनी व्यापक हलचल पैदा की होगी। कई दिनों तक तार और पत्र आते रहे जिन सब के उत्तर पिताजी ने अपनी आदत के अनुसार अवश्य दिये होंगे। वह किसी पत्र को उत्तर दिये बिनानहीं छोड़ते थे।

समाज सुधार के इस आक्रमणात्मक कार्य को 'ट्रिब्यून' के मजाक से काफी प्रसिद्धि मिली और अखबार पढ़ने वाले लोगों की जिह्वा पर पिताजी का नाम चढ़ने लगा।

(२)

मैंने अपने एक पूर्व संस्मरण में लिखा था कि पिता जी के दफ्तर के रोशनदान हवेली के आंगन में खुलते थे। जब कभी दफ्तर या दफ्तर के बरामदे में जोर की बातचीत होती थी तो उसकी भनक आंगन में पहुंच जाती थी। एक दिन की बात है कि आंगन में जोर जोर से बोलने की आवाज सुनाई देने लगी, जिसमें हम लोगों को दो से अधिक स्वर मिले हुए प्रतीत होते थे। दोनों स्वर तो पहचाने हुए थे—एक पिता जी का था और दूसरा हमारे मामा लाला देवराज जी का। बीच बीच में एक तीसरा स्वर भी सुनाई देता था। तीनों के स्वर काफी ऊंचे और तेज थे, जिनसे हम लोगों ने अनुमान लगाया कि कोई झगड़ा हो रहा है। पिताजी से कोई झगड़े यह हम बच्चों के लिये बिल्कुल नयी बात थी। यूं तो सभी बच्चे छोटी उम्र में अपने पिताओं को संसार में सब से अधिक शक्तिशाली और समझदार मानते हैं (यद्यपि बड़ी उम्र में ज्ञान लवदुर्विदग्ध होकर उनको सम्मति बदल जाती है) परन्तु हमारे लिए तो पिता जी का किसी से झगड़ना बहुत ही असाधारण चीज थी। वे घर में कभी किसी को गुस्से तक नहीं होते थे। यह जान कर कि कोई उनसे झगड़ रहा है, हम दोनों भाई देखने और खबर लाने के लिए भागकर बाहर गये और बैठक में छुप कर सुनने लगे। हमने जो कुछ सुना उससे उस समय इतना ही समझ में आया कि झगड़ा कन्या महाविद्यालय के सम्बन्ध में है और पिताजी और मामाजी के अतिरिक्त तीसरे सज्जन डाबा ह ईस्कूल के हेड मास्टर, मास्टर लक्ष्मणदास जी हैं। पिताजी मास्टर लक्ष्मणदास जी का समर्थन कर रहे थे मामाजी बहुत विक्षुब्ध थे और अन्त में मास्टरजी यह कहते हुए चले गये कि खैर तुमने यहाँ मुझे सब कुछ कह लिया अब मैं तुम्हें कोट किशनचन्द में देख लूंगा।

शायद पाठकों को सब बातें समझने में आसानी हो यदि मैं कुछ थोड़ा सा वृत्तान्त अपने नानके (ननसाल) का सुना दूं। नानाजी जालन्धर के बहुत बड़े—शायद अपने समय में सबसे बड़े रईस थे। रईसों के पास जो कुछ होता है,

यह सब कुछ उनके पास था। शहर के बाहर उनकी हवेली थी, जिसके साथ लगता हुआ "कोट किशनचन्द" नाम का मुहल्ला था, जिसके अधिकांश के मालिक वही थे। मैंने जब होश सम्भाला तब हमारे तीन मामा विद्यमान थे। बड़े मामा देवराज जी को सारा देश कन्या महाविद्यालय जालन्धर के संस्थापक और जीवन पर्यन्त सञ्चालक के रूप मे जानता है। दूसरे मामा रायजादा भगत-राम थे, जो अपने समय मे पंजाब के मूर्धन्य फौजदारी वकील समझे जाते थे। उनके बारे में यह जनश्रुति मशहूर थी कि जब कोई जाट गाव की लड़ाई लड़ने के लिये घर से निकलता था और कोई हितैषी उसे यह कह कर रोकता था कि भाई लड़ो मत, किसीको मार दोगे तो फांसी होगी। तो वह जाट उत्तर देकर लड़ने चला जाता था कि कोई डर नहीं जालन्धर जाकर भगतराम को वकील कर लेना, वह छुड़ा लेगा। मामा भगतराम बैरिस्टर थे।

तीसरे मामा हंसराजजी पंजाब के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता हैं और बहुत वर्षों से केन्द्रीय असेम्बली के कांग्रेसी सदस्य हैं। सबसे बड़े मामा मेरी होश से पहले ही स्वर्गवासी हो गये थे। इन चार भाइयों की एक ही बहिन थी और वह हम ५ भाई-बहिनों की मा थी। मेरी स्मृति पर उनका कोई चिन्ह नहीं है। यह उस समय का दोष समझें या आकस्मिक दुर्घटना मानी जाय कि माताजी का कोई चित्र भी विद्यमान नहीं है। दादाजी के और नानाजी के चित्र तो हैं, इस लिये समय को अधिक दोष क्या दें। इसे आकस्मिक दुर्घटना समझ कर ही सन्तोष कर लेना उचित प्रतीत होता है।

इतना विषयान्तर करके अब मैं उस घटना पर आता हूँ, जहां से मैंने बात शुरू की थी पिता जी का और मामा देवराज जी का झगड़ा बहुत ही आश्चर्य मे डालने वाला था, क्यों कि दोनों लगभग इकट्ठे ही आर्य समाजी बने, इकट्ठे ही समाजसेवा में संलग्न हुए और कन्या महाविद्यालय का प्रारम्भ भी दोनों के सम्मिलित प्रयत्न से ही हुआ। ऐसे साथियों में किन कारणों से मनमुटाव पैदा हुआ, इस प्रश्न का उत्तर देने का यह स्थान नहीं है। यहा तो केवल इतना ही बतलाना प्रसगागत है कि पिताजी और मामा जी के परस्पर मतभेद और झगड़े से हम बच्चे बहुत ही खिन्न हुए थे क्योंकि उनके कारण हमारा को मैंठे भाभोजी (नानी जी) के पास जाना रुक सा गया था। सब परिवार वाले नानी जी

को भाभोजी कहते थे। वह सब से बहुत प्यार करती थीं और सारा परिवार भी उन्हें बहुत प्यार करता था। हम लोगों के लिए कोट में सब से बड़ा आकर्षण उन्हीं का था।

मामा जी का पिता जी से उस समय जो मत भेद आरम्भ हुआ, वह समय के साथ अधिक विस्तृत और गहरा ही होता गया। यहां तक कि उन दोनों प्रारम्भिक साथियों के दृष्टिकोण प्राय सभी व्यावहारिक विषयों में अलग-अलग हो गये थे। पिता जी के आगामी सामाजिक जीवन में बन्धुओं के इस मतभेद का काफ़ी प्रभाव दिखाई देता रहा।

(३)

इस लेख को मैं एक छोटी सी घटना के, संस्मरण के साथ समाप्त करता हूँ। पारिवारिक बन्धनों को तोड़ कर समाज सेवा के खुले क्षेत्र में स्वतन्त्र घूमने के लिये जिस मानसिक तैयारी की आवश्यकता थी, वह उस घटना से पूरी हो गयी। हमारे घर पर एक विधवा विवाह हुआ। डाक्टर गुरुदत्त जी (वर्तमान स्वामी आत्मानन्द जी) एक दृढ आर्य—युवक थे और श्रीमती सुमित्रादेवी ईसाइयों से आयी हुई एक सुशिक्षित देवी थीं, जिनका दोष हिन्दू समाज की दृष्टि में इतना ही था कि वे विधवा थीं। वह पूना के ईसाई मिशन से बच कर आई थीं। उस समय विधवा-विवाह हिन्दुओं के लिये ही नहीं आर्य समाजियों के लिये भी एक नयी और साहसिक चीज थी। नया और साहसिक चीज़ को कर डालना पिता जी का स्वभाव था। उन्होंने लड़की के पिता जी बनकर कोठी पर वैदिक रीति से डाक्टर गुरुदत्त जी का सुमित्रादेवी जी से विवाह करा दिया। वधू के भाई हम दोनों बने। यह जोड़ी फलों और पुष्पों से सुसज्जित रूप में कोटे में विद्यमान है भेद इतना ही आया है कि डाक्टर जी ने सन्यास ले लिया है। जब वह कोटे में रहते थे, अब घर मे न रह कर आश्रम में रहते हैं।

इस विवाह का हमारे परिवार में घोर विरोध हुआ। सबसे अधिक तीव्र विरोध हमारी ताई जी ने किया, जिनकी धार्मिक भावनाओं को इससे भारी ठेस पहुंची। हमारे नानके (ननसाल) की ओर से भी इस विवाह का विरोध हुआ। इन दोनों विरोधों की परवाह न करके पिताजी ने अपने घर पर विधवा-विवाह रचा दिया ताई जी और अन्य सम्बन्धियों के विरोध से पिता जी के हृदय पर बहुत गहरी चोट लगी॥ (वी० अ०)

"हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश"

(ले०—श्री पं० सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालकार, सिद्धान्त शास्त्री, एम ए एल टी अजमेर)

(१)

हमारे गुरु का आशीर्वाद, हमारे ऋषि का अमर विधान।
मिटाकर जग का विषम विषाद, करेगा वही विश्व कल्यान ॥
इष्ट फल देगा नित्य नवीन, कल्पपादप का पुण्याभास।
कौन सकता है हमसे छीन हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश ? ॥

(२)

निगम का, आगम का अवतार, भव्य भावों का भुवि भडार।
प्रेम के पय का पारावार ज्ञान का गुण का गम्यागार ॥
चमकते जिसमें रत्न अनेक, नित्य प्रति पाते विविध विकास।
सत्य का सागर बस वह एक, हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश ॥

(३)

वही है दिव्य तेज तिग्मांशु, तोडता तमस्तोम प्रातान।
वही है सुकलित सौम्य सुधांशु, कराता अमृत पय का पान ॥
वही है पावस पुण्य पयोद, हटाता अघ निदाघ सत्रास।
वही बुधजन का बुद्धि विनोद, हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश ॥

(४)

विविध पथों का तामस तोम, भरा था भू पर भ्रम भर पूर।
अखिल आच्छादित था वर व्योम, न कर सकता था कोई दूर ॥
गगन में हुआ ज्ञान विस्फोट, किया अज्ञान अघ का ह्रास।
असत् पर भारी भारी चोट, हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश ॥

(५)

किया द्रुत खड खड पाखड, चलाकर तेज तर्क का तीर।
आक्रमण हुआ प्रभूत प्रचड, दम्भगढ गिरा सहित प्राचीर ॥
बिलखते हैं मतवादी आज, करें किसकी कैसे अब आश ?
तमस् पर गिरा गर्ज कर गाज, हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश।

६)

अनिल का अमित अजस्र प्रवाह, बाँध सकता है जग में कौन ?
अनल का प्रबल प्रचड प्रदाह, साध सकता है जग में कौन ?
'सूर्य" का नभ में प्रखर प्रताप रोक सकता है कौन प्रकाश ?
कौन है जोकि कराये अन्त, हमारा प्रिय सत्यार्थ प्रकाश ? ॥

श्रद्धानन्द दल का दिव्य संदेश !!!

(ले०—श्री प० ईश्वरदत्त जी मेधार्थी, विद्यालंकार, बुद्धपुरी, कानपुर)

आर्य जनता को स्मरण होगा कि आर्यों का एक दल आर्य समाज में क्रान्ति लाने के लिये उत्पन्न हुआ है। वह क्रान्ति जो शान्तिमय धर्म मार्ग की ओर ले जाने वाली हो और मृत प्राय आर्य समाज म नव जीवन का संचार करदे। श्रद्धानन्द दल वह क्रान्ति लाना चाहता है जो वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और राजनैतिक जीवनों की निर्बलताओं का समूलोच्छेद करदे, वह क्रान्ति लाना चाहता है जो 'मन्तव्य' और 'आचरण' के वर्तमान विरोध को दूर करके सब सज्जनों को कर्मवीर सच्चा आर्य बनाए। महर्षि दयानन्द इसी क्रान्तिके प्रवर्तक थे। हमारे आचार्य श्रद्धेय श्रद्धानन्द जी इसी क्रान्ति के समर्थक व प्रचारक थे। स्वामी श्रद्धानन्द की सी सत्यनिष्ठता, निर्भयता, सरलता और उदारता आज कितने आर्य नेताओं मे पाई जाती है ? ऐसे सच्चे आर्य नेता के दर्शन करने के लिये आज जनता की आँखें लालायित हैं।

इस (दल) का नाम 'श्रद्धानन्द-दल' रखने का प्रधान कारण यही है कि वैयक्तिक, पारिवारिक और राजनैतिक जीवनों को पवित्रता की ओर जितना ध्यान श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्दजी आकर्षित किया करते थे, उतना शायद ही कोई कर सके ? प्रमाण स्वरूप ता० २१ मई १९२५ को देहली से श्री पं० धर्मदेवजी के द्वारा आर्य समाज मगलोर के सदस्यों के नाम भेजे हुए दिव्य सदेश मे से निम्न पंक्तियां स्वर्णाक्षरों मे लिखने और हृदय पटल पर अंकित करने योग्य हैं।

प्राचीन काल में तुम आर्यों को वह चाबी (Key) दी गई थी जो असंख्य आत्मिक कोषों को खोलती थी और अब भी यह तुम्हारा अधिकार है कि तुम पीडित जगत् को शान्ति प्रदान कर सको। परन्तु ऐसा करने से पूर्व तुम्हें अपने को सब अपवित्रताओं से दूर करना होगा। आज से यह पवित्र व्रत ग्रहण करो कि तुम 'पंचमहायज्ञों' के अनुष्ठान में कभी प्रमाद न करोगे। एवं तुम अस्वाभाविक जाति भेद के बन्धनों को तोड़ डालोगे और अपने जीवनों में वैदिक वर्णव्यवस्था को कार्य में

लाओगे। अपरंच—तुम अपनी मातृ-भूमि से अस्पृश्यता रूप कलंक को समूल नाश कर दोगे और धर्म मन्दिरों के द्वारों को जाति भेद का प्रपंच किये बिना ही मनुष्य मात्र के लिये खोल दोगे।"

'श्रद्धानन्द-दल' इस दिव्य संदेश की ओर आर्य समाज का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करता है, क्योंकि शुद्धि, दलितोद्धार और स्वदेशोद्धार के आन्दोलन तब तक कभी पूर्णतया सफल नहीं हो सकते हैं जब तक आर्य लोग जात पात के झगडे में जकडे पडे हुए हैं

बहुत से श्रेष्ठ चरित्र और विद्वान् आर्य पुरुष आर्य समाज से निराश हो चुके दिखाई देते हैं। इस प्रकार के महानुभावों के कई लेख मेरे पास विद्यमान हैं। बात चीत मे तो बहुत से सभ्य पुरुषों के अन्दर आर्य समाज की वर्तमान अवस्था के लिए अति घोर निराशा दिखाई देती है। मैं स्वय 'श्रद्धानन्द-दल' का सस्थापक होकर निराशतापूर्वक आर्य बौद्ध का कोट पहिने आर्य समाज से अलग हुआ बैठा हूँ। मुझे आर्य समाज की गुण कर्मानुसारिणी वर्णव्यवस्था से कोई मत भेद नहीं है, क्योंकि मैं उसे वण व्यवस्था न कहकर वर्ग व्यवस्था कहा करता हूँ। परन्तु बिना आर्य राज्य की स्थापना के वेदोक्त वर्ग व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती है इसलिये वर्ण व्यवस्था या वग व्यवस्था के गुण कर्मानुसार सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए भी आर्य समाज का इस समय सारी शक्ति जात पात के क़िले को चकना चूर करने में लगानी चाहिए अन्यथा स्वराज्य प्राप्ति से पूर्व ही बैकवर्ड और डिप्रेस्ड क्लासज़ की अधिकार प्राप्ति का झगडा खड़ा होकर भारत का शताब्दियों के लिये गुलामी का तौक़ पहिना देगा। बैक वर्ड और डिप्रेस्ड अर्थात् सछूत शूद्र और अछूत शूद्र यह जन्मानुसार वर्ण व्यवस्था की ही देन है। पौराणिकों की वर्ण व्यवस्था से बिलकुल बचने के लिये मेरे विचार में यह अत्यन्त आवश्यक है कि वर्णव्यवस्था शब्द को ही छोड दिया जावे। इसीलिये मैं प्राय प्रचार किया करता हूँ कि वर्णव्यवस्था का विध्वस करना चाहिये। उससे मेरा अभिप्राय यही होता है कि जन्म मूलक वर्णव्यवस्था होती है और गुण कर्ममूलक वर्गव्यवस्था होती है।

मनुस्मृति में एक श्लोक इस विषय में आया है।

(१) (२) (३)
अव्रतानाम् अमन्त्राणा जातिमात्रोपजीविनाम्।
सहस्रश समेताना परिषत्त्व न विद्यते॥

अर्थात् यदि किसी सभा या समाज मे सहस्रों व्यक्ति ऐसे सम्मिलित हो जावें जो न सन्ध्या व सयम का व्रत ग्रहण करें और न वेद मन्त्रादिकों का स्वाध्याय करें। केवल जात पाँत के आधार पर ही अपना सगठन करना चाहते हों तो निश्चय से ऐसे समाज का अस्तित्व नाम मात्र ही होता है। इसीलिये "श्रद्धानन्द दल" का सदस्य बनने के लिये सिर्फ यही तीन प्रतिज्ञायें आवश्यक रखी गई हैं।

(१) मै प्रति दिन सन्ध्या और सयम का अभ्यास करूगा।

(२) मैं प्रति दिन वेद, उपनिषद्, आदि का स्वाध्याय करूगा।

(३) मै जन्ममूलक जात पात छोडकर ही अपना या अपनी सतति का विवाह करूगा।

मैने अभी बिलकुल आशा नहीं छोडी है जब से "श्रद्धानन्द-दल" की सस्थापना हुई है और इस सम्बन्ध मे बहुत से आर्य भाइयों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है। तब से मुझे भी आशा हो रही है कि आर्य समाज की शिथिलता अभी दूर की जा सकती है। यह काम 'श्रद्धानन्द-दल' कर सकता है। इसीलिये मैं कहा करता हूँ कि 'श्रद्धानन्द-दल' आर्य समाज की आशा है। वास्तव मे 'श्रद्धानन्द दल' का मुख्य उद्देश्य आर्य समाज मे उत्पन्न शिथिलता को दूर करना ही है। इसलिए अधिक से अधिक आर्य पुरुषों व स्त्रियों का कर्तव्य है कि 'श्रद्धानन्द-दल' को अपनावें।

आजकल "श्रद्धानन्द दल" के अध्यक्ष प्रिन्सिपल महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री M A. (लखनऊ) और प्रधानमत्री युवक सम्राट् प० चन्द्रगुप्त जी वेदालकार (देहली) हैं। मैं तो परीक्षामत्री का कार्य कर रहा हूँ। यदि आर्य समाज के अग्रणी आर्य पुरुष चाहें तो मैं 'प्रचार मत्री' बनकर "श्रद्धानन्द-दल के दिव्य सदेश को नगर नगर में प्रचार करने के लिये पुन जुट सकता हूँ, क्योंकि आचार्य श्रद्धानन्द का मैं परम ऋणी हूँ। मैं उनकी सेवा में सर्वस्व समर्पण करने को सनद्ध हू। मैं आशा

करता हूं कि "श्रद्धानन्द बलिदान दिवस" के दिन देहली में कोई ऐसा कार्य क्रम अवश्य प्रारंभ होगा जिससे आचार्य श्रद्धानन्द का दिव्य संदेश संसार भर में फैल जावे। मैं तो ऊर्ध्वबाहु होकर कहने की इच्छा किया करता हू किः—

न ह्यार्य सदने कश्चित्, सन्ध्या स्वाध्याय वर्जितः।
स्वदेश प्रीति रहित संस्कारै हींन एव वा।
न च स्वयम्बर द्वेषी, नार्यनार्या कुतस्तदा॥

अर्थात अब हमारे आर्य गृहों में सन्ध्या स्वाध्याय से शून्य, संस्कार हीन, स्वदेश विमुख और स्वयम्बर द्वेषी एक भी पुरुष नहीं है तो अनार्या नारी कैसे हो?

मातृत्व की ओर

लेखक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक
प्रकाशक—शारदा मन्दिर लिमिटेड, नई सड़क, देहली
मूल्य १।) अजिल्द १॥) सजिल्द

इससे पूर्व हम इस पुस्तक के सम्बन्ध में श्री पूज्य नारायण स्वामी जी, श्री. प्रो० सुधाकर जी एम ए श्री प० गंगाप्रसाद जी एम. ए रिटायर्ड चीफ जस्टिस प्रधान सार्वदेशिक सभा, श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्व० सभा, श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए, 'आर्य मार्तण्ड' और 'वीर अर्जुन' की सम्मति प्रकाशित कर चुके हैं। अब हम श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी भूतपूर्व कार्य कर्ता प्रधान सार्व० सभा, प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी आर्य विद्वान् श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी की सम्मति उद्धृत करते हैं।

मैंने 'मातृत्व की ओर' नामक पुस्तक को पढ़ा। पुस्तक उपयोगी है। विशेषकर नवयुवतियां का अवश्य पढ़नी चाहिए। —स्वतन्त्रानन्द

"मुझे श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक की लिखी हुई पुस्तिका 'मातृत्व की ओर' के देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पहले तो मैंने समझा कि साधारण बातें होंगी जो गृहस्थ धर्म से सम्बन्ध रखती होंगी परन्तु जैसे २ मैं आगे पढ़ा, मेरा मन लगता गया और मैंने यह देखा कि लेखक ने बड़ी चतुराई व युक्ति से अपने विचारों को रखा है। वेद में 'गृहस्थ' को 'स्वर्ग' कहा है। इसलिए यदि कोई इस पुस्तक मे लिखी हुई बातों पर चले तो वास्तव में अपने घर को स्वर्ग बना सकता है। यह पुस्तक स्त्री व पुरुष दोनों के लिए शिक्षाप्रद है।"
—रामचन्द्र देहलवी

नोट—यह पुस्तक सार्वदेशिक सभा के पुस्तक भंडार से भी मिलती है।

शुद्धि आन्दोलन का सच्चा स्वरूप और उसकी सफलता

[लेखक—श्री प० मदनमोहन जी विद्यासागर वेदालंकार]

शुद्धि का एक अर्थ साफ होना या साफ करना है। परन्तु धार्मिक क्षेत्र में इसको लागू करते समय इसका पूरा भाव समझ लेना अत्यावश्यक है।

एक बार एक महानुभाव मुसलमान से आर्य समाजी बने व्यक्ति के बुरे चरित्र को देखकर आर्य समाज से नाराजगी जाहिर करते हुए आक्षेप कर रहे थे कि इसके शुद्ध होने से क्या लाभ? ऐसे शुद्धि आन्दोलन से तो नुकसान ही है जो कि चरित्र की शुद्धता की तरफ ध्यान ही न देता हो। इसी से मिलते जुलते भाव महात्मा गान्धी जी ने शुद्धि संगठन के विषय में प्रकट किये थे। उनके दृष्टि बिन्दु से शुद्धि मानसिक पवित्रता का नाम है, 'मत परिवर्तन', 'ख्यालातों में तबदीली' शुद्धि नहीं है।

आइये जरा इस पर गौर से विचार करें। एक व्यक्ति 'मूर्ति' को परमेश्वर समझ उसकी पूजा करता है। गलती से एक दिन आर्य समाज के सत्संग में आ बैठता है या खण्डन करने की भावना से ऋषि दयानन्द की पावमानी अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ लेता है। उसकी बुद्धि पर पड़ी 'मैल' धुल जाती है। और "भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।" वह मूर्ति पूजा को छोड़ सन्ध्योपासन में प्रवृत्त हो जाता है। स्पष्ट है कि उसमें विचार परिवर्त्तन हो गया। चाहे आप किन्हीं शब्दों में इस बात को व्यक्त कीजिये कुछ न कुछ शुद्धि अवश्य हुई, और वह आर्य समाज में शामिल हो गया।

वही मनुष्य एक किसी दुर्गुण से मान लीजिये ग्रस्त है। असत्य व्यवहार करता है। महा पुरुषों की जीवनियां उसके हाथ लग गई। आर्य समाज के सत्संग में अष्टांग योग की सारयुक्त व्याख्या दो-चार बार सुन ली। उसका 'असत्य व्यवहार' रूप दुर्गुण छूट जाता है। स्पष्ट है कि उसमें 'आचार परिवर्तन' हो गया। चाहे आप इसे कुछ ही समझिये इस दशा में भी कुछ न कुछ शुद्धि अवश्य हुई।

प्रथम दशा में उसमें विचार परिवर्तन रूप शुद्धि हुई तब वह 'आर्य समाज' का सदस्य बन गया। 'आचार परिवर्तन' के पश्चात् उसमें 'मानवता' का विकास अधिक हो गया और वह ठीक अर्थ में 'सच्चा आर्य बन गया।

मेरे लिखने का अभिप्राय यह है कि संसार में विचार परिवर्त्तन एक स्थिति है और आचार परिवर्त्तन दूसरी। पहली मे एक मनुष्य की 'विचार धारा' सोचने के तरीके मे 'दर्शन शृंखला' में भारी भेद हो जाता है। वह सोचता है कि उसका ऐसा मानना तर्क प्रतिष्ठित होने से सर्वथा त्याज्य है। एक क्षणके लिये मान लीजिये अपनी निर्बलतावश वह शराब, सिगरेट पीने का आदी है। अब यदि तो वह विवाद उपस्थित होने पर इसका पक्ष समर्थन नहीं करता और उसे अपनी कमजोरी समझता है तब उसे समाजी कहने में क्या आपत्ति? क्योंकि जहाँ पहले वह सिगरेट का पक्ष समर्थन करता था अब उसमें विचार परिवर्त्तन हो जाने से उसका खण्डन करता है। हजारों समाजी भाई हैं जो दैनिक अग्नि होत्र नहीं करते परन्तु क्योंकि उनकी बुद्धि मे तर्क पूर्वक यह बात जमी हुई है कि ऐसा करना चाहिये वे समाज के सदस्य हैं। इस दशा में 'विचार परिवर्तन' ही पर्याप्त है।

दूसरी दशा में वही मनुष्य अपने जीवन के सुधार में लगता है। सोचता है कि जब मुझे यह समझ में आ गया कि शराब सिगरेट पीना अधार्मिक है। स्वास्थ्य के लिये हानिकर है तब मेरा ऐसा करना बुरा पाप है। वह शिव सकल्प करता है और इस आदत से मुक्त हो जाता है। अब उसके आचार मे भी परिवर्त्तन या शुद्धि हो गई। जब मैं समाज में आ गया हूँ, अग्निहोत्र से वायु शुद्धि मानता हूँ तो ऐसे उत्तम परोपकार युक्त कार्य को न करना पाप है, वह प्रारम्भ कर देता है।

इन दोनों ही दशाओं में वह व्यक्ति समाज का सदस्य बन सकता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि 'विचार परिवर्त्तन तथा आचार परिवर्त्तन' दोनों भिन्न २ दशायें हैं। यद्यपि इनमें घनिष्ठ सम्बन्ध है, दोनों परस्पराश्रित भी हैं। हर एक सम्प्रदाय का सदस्य होने के लिये 'विचार परिवर्त्तन' प्रथम है।

एक मुसलमान है, वह परमेश्वर के नाम पर मेमना भेंट देता है। वह उसके मत विषयक अन्ध विश्वास का परिणाम है। परन्तु अपने जीवन में वह अधिक से अधिक उत्तमाचरण करता है। दूसरी तरफ एक सनातनी भाई है जो कि 'जीवब्रह्म' की एकता वा 'शुनिचैवश्वपाके च पण्डिता समदर्शिन' का राग अलापता हुआ एक नीची जाति वाले को अपनी गली से भी नहीं गुजरने देना चाहता है। बड़ा तार्किक है विचार धारा साफ है पर है आचार भ्रष्ट।

यहाँ पहले को विचारों की दृष्टि से शुद्ध करना आवश्यक है ताकि वह मानव जाति का अधिक से अधिक लाभ कर सके। दूसरे की आचार शुद्धि आवश्यक है। दोनों को छोड़ना महा मूर्खता है। इस प्रकार मैं दोनों विचार व आचार के परिवर्तन का नाम शुद्धि समझता हूँ, दोनों का होना जरूरी समझता हू।

परन्तु व्यवहार में प्रथम करने योग्य बात 'विचार परिवर्तन' समझता हूँ। 'आचार परिवर्तन' इसके बाद की हालत है। नहीं तो कोई भी सस्था संसार में चल नहीं सकेगी। ससार में क्या कोई इस बात का दावा कर सकता है कि आचार के दृष्टि विन्दु से वह पूर्णता के समीप पहुच गया है? क्या कोई समाजी कह सकता है कि उसने अष्टाग योग का अपने जीवन में पूर्ण पालन कर लिया है।

प्रथम हमारा कार्य यही होना चाहिये कि विचारों की शुद्धि करते हुए हम सबको अपने पास लावें और तब आचार शुद्धि प्रारम्भ करें। रेतीला मैदान है। चोर पीछे लगे हैं। सवार के पास सोना है। अचानक पोटली गिर पड़ती है। सोना बिखर कर रेत मे मिल जाता है। अब सवार क्या करे? रेत में से सोना छाँटने बैठे या सोना भरी रेत को उठा भागे और चोरों से बच घर जा साने को प्राप्त करले? मेरे सूक्ष्म मस्तिष्क मे तो यही स्थूल बात घुसती है कि 'सुवर्ण मिश्रित सिकता' को ले भागे।

इसी प्रकार से सस्थाओं की वृद्धि व चलन में भी यही नियम कार्य करता है। विचारों की शुद्धि करते हुए 'अच्छे बुरों' को अपने पास ले आओ और फिर अपनी तपस्या की अग्नि से उनका आचार शोधन करो। आचार शोधन पहले और विचार परिवर्तन पीछे तो कभी २ कोई सस्था नहीं चल सकेगी। मानव जाति पाप पुण्यों शुभाशुभ विचारों से ओत प्रोत है। व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। उसकी समाज व सस्था व सघ के बिना पृथक् कोई सत्ता ही नहीं है। जब उसने—चाहे वह अच्छा हो या बुरा—किसी न किसी सघ में रहना ही है तो क्यों न उसे उत्तम विचारों वाली समाज का सदस्य बनाकर उसके उठने का मार्ग सरल कर दिया जावे? बुरे आचार वालों से समाज की बदनामी जरूर होती है। परन्तु इसका उपाय यही है कि समाज के सचालन के उत्तर दायित्व कार्य उन्हें न सौंपे जावें।

सेना में हजारों व्यक्ति उजड्ड गँवार महा मूर्ख होंगे। परन्तु उन पर कोई

जिम्मेवारी नहीं। इसी लिये सेना का सगठन ठीक बना रहता है, विजय हो जाती है।

❀ ❀ ❀

इस प्रकार सोचते हुए यदि हम परिणाम निकालें तो यह निकलेगा कि इस समय आर्य समाज के सामने शुद्धि की दो भूमिया हैं।

पहली का भाव यह है कि आर्य समाज से भिन्न मत मतान्तर वालों की दर्शन धारा में भारी बौद्धिक परिवर्त्तन लाकर उन्हें वैदिक धर्म का अनुयायी बनाया जावे और इस प्रकार आर्य समाज का जाल विश्व में फैला दिया जावे। दूसरी का भाव यह है कि मनुष्य मात्र के आचार म शुद्धि करने का महान् प्रयत्न किया जावे। जनता को (केवल समाजियों को ही नहीं) दु:ख से छूटने का सच्चा रास्ता बताया जावे। उनके जीवन सरल सादे बनाये जावें।

साधारण तौर पर मुसलमानों व ईसाइयों का आर्य समाज का सदस्य बन जाना ही 'शुद्धि' समझा जाता है। उसके लिये नियमपूर्वक विधि-पद्धति का निर्माण भी किया गया है। इस में ख्याल यह किया जाता है कि जो भाई हिन्दू जाति से बिछुड़ चुके हैं (पिछले दो हजार वर्षों में, वह भी हिन्दुस्तान मे) उन्हें इस संगठन द्वारा मिलाना चाहिये। परन्तु यदि एक सनातनी, जैनी व बौद्ध भाई आर्य समाजी बनना चाहता है तो रजिस्टर मे नाम चढ़ा देना मात्र ही पर्याप्त समझा जाता है। यह क्यों? मेरी समझ में अभी तक नहीं आया। जब दोनों दशाओं में विचार परिवर्तन है तो विधि पूर्वक प्रवेश दोनों का किया जाना चाहिये। इस बात को सब जानते हैं कि 'बाह्य विधि पूर्वक' आचार परिवर्तन किसी का नही होता।

वेदों का साबुन लगा हमने विश्व को आर्य बनाना है उसके विचारों की शुद्धि करते हुए। सब को सच्चा अमृत पुत्र बनाना है आचार मे शुद्धि करते हुए।

(शेष अगले अङ्क में)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली की २१ । ११ । ४३ की अन्तरंग सभा का महत्त्वपूर्ण निश्चय

सत्यार्थप्रकाश की प्राण पण से रक्षा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (इन्टर नैशनल आर्यन लीग) देहली की अन्तरंग सभा को आश्चर्य है कि मुस्लिम लीग ने जिसमे मुसलमानों का केवल एक भाग सम्मिलित है और जो एक राजनैतिक संस्था होने का दावा करती है अपने कार्य क्षेत्र से बाहर जाकर अपनी अन्तरग सभा में जो देहली में ता० १४ । ११ । ४३ को हुई थी यह प्रस्ताव पास करना उचित समझा कि भारत सरकार सत्यार्थप्रकाश के कुछ भागों को जब्त कर देवे क्यों कि उनमें अन्य धर्म संस्थापकों विशेषत. इस्लाम के संस्थापक के विरुद्ध आक्षेपयोग्य और अपमानजनक बातें लिखी हुई हैं।

सत्यार्थप्रकाश लाखों आर्यों की धर्म पुस्तक है और इसने करोड़ों हिन्दुओं के लिये ही नहीं वरन् भारत तथा विदेशों के निवासियों के लिये भी प्रकाश स्रोत का कार्य किया है। लगभग ६० वर्ष से सत्यार्थप्रकाश संसार के सामने है और भारत की समस्त भाषाओं और योरोप की कई मुख्य २ भाषाओं मे इसका अनुवाद हो चुका है और कहीं से भी कभी इसके किसी भाग की जब्ती का प्रश्न गम्भीरतापूर्वक उपस्थित नहीं किया गया।

जिन आर्यों और अन्य व्यक्तियों ने सत्यार्थ प्रकाश से प्रकाश ग्रहण किया है वे सब मतान्ध मुसलमानों द्वारा उत्तेजित होने पर भी इस लम्बे समय में अहिंसात्मक रहे हैं। इससे स्पष्ट है कि इस ग्रन्थ के मान्य लेखक जिस उदात्त भावना से प्रेरित थे और जो उनके अनुयायियों को प्रेरित करती रहती है वह यह है कि संसार में शान्ति पूर्वक धार्मिक और सामाजिक सुधार का कार्य किया जाये।

सत्यार्थप्रकाश के मान्य लेखक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ग्रन्थ की भूमिका में और अन्य मतों की आलोचना विषयक समुल्लासों की अनुभूमिकाओं में स्पष्ट रूप से लिख दिया है कि उनका उद्देश्य न उन मतों के संस्थापकों का अपमान करना है और न उनके अनुयायियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाना है अपितु

उनका उद्देश्य सत्य की खोज करना कराना है जो मानव जीवन का उच्चतम उद्देश्य है।

सभा का यह भी विश्वास है कि इस्लाम और अन्य मतों के सम्बन्ध में सत्यार्थप्रकाश में प्रकट की हुई सम्मति उचित आलोचना की सीमा का अतिक्रमण नहीं करती। इसके विपरीत कुरान और हदीसों में कई ऐसे वाक्य हैं जो काफिरों अथवा गैरमुस्लिमों के विरुद्ध हिंसा का स्पष्ट रूप से प्रचार करते हैं जिसके परिणामस्वरूप, आर्य समाज के कई प्रसिद्ध नेता मुसलमानों की मतान्धता की बलि चढ़ चुके हैं। इस पर भी आर्य समाज ने कुरान और हदीसों के ऊपर वर्णित वाक्यों के निकाले जाने की मांग करने का कभी विचार तक नहीं किया।

सभा का पूर्ण विश्वास है कि मुस्लिम लीग कौंसिल के प्रस्ताव मे जिस अनुचित और सर्वथा अनावश्यक कार्यवाही का निर्देश किया गया है भारत सरकार उस कार्यवाही के करने की भूल नहीं करेगी।

अन्त में यह सभा अपनी पूर्व घोषणा को बलपूर्व पुनः दुहराना चाहती है कि यदि दुर्भाग्यवश भारत सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध कोई निश्चय किया तो आर्य और करोड़ों हिन्दू जिन मे सेना की सेवा में लगे हुये जाट और अन्य सम्मिलित हैं अपने इस पवित्र धर्म ग्रन्थ के प्रत्येक शब्द की रक्षा के लिये सब प्रकार के त्याग और बलिदान पूर्वक उसका विरोध करने को विवश होंगे।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली
२२। ११। ४३

International Aryan League's Resolution on Satyarthaprakash Passed by the Working Committee at its Meeting Held at Balidan Bhavan, Delhi.

ON 21-11-43.

The Working Committee of the International Aryan League, Delhi notes with surprise that the Muslim League, which is professedly a political body consisting of a section of Muslims, should have gone out of its way and thought it proper to pass a resolution in the meeting of its working committee held at Delhi on 14/11/43. urging the Government of India to proscribe certain portions of the Satyarthaprakash on the ground that they contain objectionable and insulting remarks against founders of other religions, particularly against the prophet of Islam.

The Satyarthaprakash is the religious book of millions of Aryas and has served as the source of inspiration to crores of Hindus and even to other inhabitants of India and foreign lands It has now been before the world for the last sixty years and has been translated into all vernaculars of India and several important languages of Europe without the qnestion of proscription of any of its part being raised seriously from any quarters.

The fact that the Aryas and others who have drawn their inspiration from the Satyarthaprakash have throughout these long years remained absolutely non-violent, even when provoked by fanatic Muslims, clearly shows that the spirit that inspired the author of the book and continues to inspire his followers is that of carrying on religious and social reforms peacefully in the world.

The author of the Satyarthaprakash, M a h a r s h i Dayananda Saraswati, has stated in the clearest possible

terms, in the introduction as well as in the prefaces to the chapaters containing reviews and criticism of other religions, that his intention and object is not to insult the advocates of those religions or to hurt in any way the feelings of their followers, but to asertain truth which should be the highest aim of human life.

The Committee also believes that the views on Islam and other religions expressed in the Satyarthaprakash do not transgress the limits of propriety and fair criticism. On the other hand, in the Qoran and Hadis, there are several passages which openly preach violence against Kafirs and infidels i e non-Muslims As a consequence of which, several eminent leaders of the Aryasamaj have actually been victims of the fanaticism of a number of Muslims, still the Aryasamaj never thought of demanding the expurgation or suppression of the aforesaid passages of the Qoran and Hadis

The Commmittee fully trusts that the Government of India will not allow itself to be misled into taking such unreasonable and uncalled-for action as has been suggested in the resolution of the council of the Muslim League

Finally the Committee emphatically reiterates what it has already declared previously, that if unfortunately any adverse decision is arrived at by the Government of India, the Aryas and millions of Hindus including Jats and others who are on active military service will feel compelled to resist it at all costs, in order to protect and preserve each and every word of their sacred book.

INDRA VIDYA VACHASPATI,

Secretary,

International Aryan League, Delhi.

22/11/43

श्रद्धाञ्जलि

[समर्पक—पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति]

१ गुरुवर का जब चिन्तन करता, चित्त हर्ष से भर जाता।
उनका साहस तेज जोश सब, मेरे दिल घर कर जाता॥

२ उनकी दिव्यभव्य आकृति माँ, के सम प्रेम भरा व्यवहार।
उनके मधुर वचन ओजस्वी, स्मरण सभी का कर पाता॥

३ श्रद्धा का भण्डार हृदय था, उनका करुणा रस भरपूर।
उनका सरल तपस्वी जीवन, किसके मनको नहि भाता ?॥

४ नस नस में बिजली थी व्यापक, वे थे साहस के अवतार।
उनका स्मरण महा कायर में, भी निर्भयता को लाता॥

५ शुद्धि दलित उद्धार सगठन, शिक्षा में दिन रात निरत।
है उदार वह कौन सुजन जो उनके गुण गण नहि गाता ?॥

६ जीवन जैसा वीरोचित था, वैसा ही बलिदान हुआ।
अमर हुए उस लोक गये वे, जिसे योगिवर है पाता॥

७ हे आचार्य शिरोमणि हम पर, वह वरदायक कर धर दो।
हों तव चरणों के अनुगामी, आन देव को हम माता॥

८ सब की आँखें तरस रही हैं, तुम सा नायक पाने को।
ओजस्वी तेजस्वी नेता, तुम सा नजर नहीं आता॥

९ श्रद्धा से जननी सम रक्षित, तुम आनन्द मनाते थे।
शुष्क तर्क नीरस हृदयों का, जोड़ो श्रद्धा से नाता॥

१० आर्य धर्म शुभ आर्य सभ्यता, के तुम अद्भुत दीवाने।
आर्यों में वह मस्ती भर दो, जिससे भव भय भग जाता॥

आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण पाठ ६

आर्यत्व की व्याख्या

(लेखक—श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री अखिल भारतीय आर्य वीरदल समिति)

१—आर्य शब्द के यौगिक अर्थ

आर्य वीर दल का तीसरा उद्देश्य निम्न लिखित है—

"आर्य धर्म, सभ्यता तथा संस्कृति की समस्त उचित उपायों द्वारा रक्षा करना।"

हमें यह स्पष्ट रूप से जानने का यत्न करना चाहिये कि आर्यत्व क्या है, और आर्य धर्म, आर्य संस्कृति, आर्य जाति और आर्यावर्त आदि शब्दों में आने वाले आर्य पद का क्या अभिप्राय है ?

आर्य शब्द के यौगिक अर्थ हैं—श्रेष्ठ और साहित्य में उसका प्रयोग श्रेष्ठ कुलोत्पन्न के लिये भी होता है। उसकी शास्त्रीय व्याख्या निम्न लिखित है—

कर्तव्यमाचरन् कार्यं मकर्तव्यमनाचरन्। तिष्ठति प्रकृताचारे स तु आर्य इतिस्मृत ॥

जो कर्तव्य कर्म का पालन करे, अकर्तव्य से बचे, और सदाचार की मर्यादा पर स्थिर रहे उसे आर्य कहते हैं यह आर्य शब्द का यौगिक और व्यापक अर्थ है।

परन्तु जब हम आर्य शब्द को धर्म संस्कृति या जाति शब्द के साथ लगा देते हैं, तब उसका केवल यौगिक अर्थ नहीं होता। उस दशा में उसका योगरूढ़ि अर्थ लेना चाहिए। आर्य शब्द के योगरूढ़ि अर्थ को समझने के लिए हमें थोड़ा ऐतिहासिक दिग्दर्शन करना होगा।

२—"आर्यत्व का उद्भव

ऐतिहासिक खोज से यह सत्य प्रमाणित हो चुका है कि वर्तमान सभ्यता संस्कृति और धर्म सभी का आदि उद्भव स्थान किसी एक केन्द्र में ही था। भूमि के सभी भागों की गहराई में सभ्यता के उस एक प्रारंभिक केन्द्र के प्रमाण मिलते हैं। वह स्थान उत्तरीय ध्रुव था, या मध्य एशिया का कोई उच्च भाग था, तिब्बत अथवा हिमालय की कोई ऊँची तलैटी थी, इन सम्भावनाओं में मतभेद हो सकता है। परन्तु भाषा, धर्म और भूगर्भ से निकलने वाले प्रमाणों की छान बीन से इस

मन्तव्य को लगभग सर्व सम्मत कर दिया है कि संसार की सभी जातियों में जो भिन्न भिन्न संस्कृतियां पाई जाती हैं; उनकी जननी कोई एक ही संस्कृति थी।

इसके के साथ ही साथ यह भी सर्वसम्मत सी बात है कि सबसे प्राचीन उपलभ्यमान शब्दबद्ध ज्ञान वेद है। पाश्चात्य विद्वान् भी मानते हैं कि ऋग् वेद से पूर्व की कोई भी क्रम बद्ध धार्मिक ऋचायें प्राप्त नहीं होती ऐसी दशा में यह मान लेने में कोई अनौचित्य नहीं है कि जिस समय मनुष्य जाति एक ही पालने में पल रही थी, उस समय उसका जो धर्म था और जो संस्कृति थी, ऋग्वेद में वही विद्यमान है।

उस प्रारम्भ काल में, वे लोग आर्य कहलाते थे, उनका धर्म आर्य धर्म था और वह जाति आर्य जाति थी।

वह जाति अपने धर्म और संस्कृति को लेकर पृथ्वी पर फैल गई। युग व्यतीत हो गये। भिन्न भिन्न भूमि भागों पर उस पर भिन्न भिन्न तरह के भौतिक और मानुषिक प्रभाव पड़ते रहे, जिसके कारण देश काल के भेद से उसके अनेक रूप हो गये। कहीं पुराना रूप बिल्कुल लुप्त हो गया, कहीं वह छुपे रूप में विद्यमान रहा और कहीं वह न्यूनाधिक मूल रूप में बना रहा। जिस देश में वह अपने मूल रूप में अधिक से अधिक विद्यमान रहा, वह भारतवर्ष है जिसका प्राचीन नाम आर्यावर्त है। आर्य धर्म और आर्य संस्कृति भी अपने सर्वथा विशुद्ध रूप में न होते हुए भी मूल से मिलते जुलते रूप में इसी देश में विद्यमान है। इसी कारण इस देश को पुण्य भूमि आर्यावर्त माना गया है।

महाभारत में कहा है—

> गायन्तिदेवाः कलुगीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे।
> स्वर्गापवर्गास्पदहेतुभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥

इस भारतवर्ष के निवासी धन्य हैं। देवलोक में भी उनकी प्रशंसा के गीत गाये जाते हैं, क्योंकि यहीं पर स्वर्ग और अपवर्ग का मार्ग बताने के साधन उपलब्ध होते हैं।

महाभारत के इस श्लोक से एक बड़ी महत्त्वपूर्ण सचाई प्रकट होती है। भारतवर्ष धन्य था, क्योंकि वह स्वर्ग और अपवर्ग का मार्ग बताने वाले धर्म का स्थान था। कोई देश केवल मिट्टी और पानी के कारण धन्य या मान्य नहीं

हो सकता, उसकी संस्कृति, उसका ज्ञान भण्डार ही उसकी असली सम्पत्ति है आर्यावर्त प्राचीन आर्यों को प्यारा था क्योंकि वह आर्य धर्म और आर्य संस्कृति का निवास स्थान था।

आर्यधर्म की अत्यन्त संक्षिप्त परिभाषा यह है कि जो धर्म वेदों पर आश्रित है, वह आर्य धर्म है, वेद आर्यों के आदि धर्म के मूल स्थान हैं। परम्परारूप में उन पर आश्रित धर्म ही "आर्य धर्म" इस नाम का अधिकारी है।

आर्य धर्म पर आश्रित संस्कृति आर्य संस्कृति कहलाती है। जिस देश में वह आर्य संस्कृति अटूट परम्परा से चली आई है, आज अत्यन्त छिन्न भिन्न दशा में भी जहां आर्य संस्कृति के अधिकतम अवशेष विद्यमान हैं, उस देश का नाम आर्यावर्त अथवा भारतवर्ष है।

जो नर नारी उस आर्यावर्त को अपनी मातृभूमि और धर्मभूमि मानते हैं, वह आर्य कहलाने के अधिकारी हैं, और उनका समुदाय जातिरूप में आकर "आर्य जाति" कहलाता है।

आर्य जाति ने युगों तक आर्यावर्त की न केवल रक्षा की, अपितु उसके राजनीतिक प्रभाव को विश्व व्यापी बनाया, परन्तु समय आया, जब सामाजिक और नैतिक दोषों ने उसे दबा लिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि अन्य जातियों ने उसे राजनीतिक दृष्टि से परास्त कर दिया। आर्यावर्त राजनीतिक दृष्टि से दास होगया, जिसका फल यह हुआ कि आर्यधर्म आर्य संस्कृति की रक्षा असम्भव होगई।

देश की ऐसी दशा थी, जब ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज का प्रधान लक्ष्य वेदों पर आश्रित आर्य धर्म और आर्य संस्कृति में श्रद्धा रखने वाले ऐसे आर्यों को संगठित करना है, जो आर्य जाति और आर्यावर्त के पुराने गौरव को स्थापित करना अपना परम धर्म समझें।

आर्य वीरदल में आर्य समाज की क्षात्र शक्ति का निवास होना चाहिये।

इस विचार परम्परा से आर्य वीरों को स्पष्टरूप में यह प्रतीत हो जायगा कि उनका आर्य धर्म, आर्य संस्कृति, आर्य जाति और आर्य समाज से क्या सम्बन्ध है।

बंगाल सरकार आर्य समाज को भी सुविधायें देगी!
बंगाल सरकार के प्रधान मन्त्री से सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि की भेंट !!

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने बंगाल के असहायों को बंगाल से बाहर ले जाने के लिये बंगाल सरकार से सुविधायें मांगी थीं परन्तु उक्त सरकार ने सुविधायें देने से इन्कार कर दिया था। समाचार पत्रों में पढ़कर कि बंगाल सरकार ने खाकसारों को सुविधायें दी हैं सार्वदेशिक सभा के मन्त्री ने इसी आशय का एक पत्र बंगाल सरकार के प्रधान मन्त्री श्री सर नजीमउद्दीन को लिखा। सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि श्रीयुत शिवचन्द्र जी उक्त पत्र को लेकर नई दिल्ली में सर नजीमउद्दीन के पास (जो उस समय नई दिल्ली में ठहरे थे) भेंट करने के लिये गये। प्रधान मन्त्री ने इस भेंट में बातचीत के दौरान में श्रीयुत शिवचन्द्र जी से कहा कि बंगाल सरकार ने असहायों को बंगाल से हटाने के सम्बन्ध में हाल ही में अपनी नीति बदली है तथा बंगाल सरकार इस विषय में आर्य समाज को भी वे सब सुविधायें देगी जो वह खाकसारों को देगी।

प्रधान मन्त्री ने यह भी सलाह दी कि सार्वदेशिक सभा बंगाल सरकार के रेवेन्यू विभाग से इस सम्बन्ध में पत्र व्यवहार करे जो आर्य समाज को उक्त विषय में सब प्रकार की सूचनायें तथा सुविधायें देगा। इसके अनुसार सार्वदेशिक सभा ने बंगाल सरकार के रेवेन्यू विभाग को लिख दिया है तथा कलकत्ता स्थित आर्य समाज बंगाल रिलीफ सोसायटी को भी लिखा है कि वह इस सम्बन्ध में बंगाल के प्रधान मन्त्री की अनुमति के अनुसार शीघ्र ही बंगाल सरकार के रेवेन्यू विभाग के निकट सम्पर्क में आवे और इस विषय में उचित कार्यवाही करे।

अन्त में श्री शिवचन्द्रजी ने बंगाल के प्रधान मन्त्री को "Origin scope and Mission of Arya Samaj" नामक अँग्रेजी की पुस्तक भी भेंट की।

गुरु ग्रन्थसाहेब में इस्लाम मत खण्डन

[लेखक—श्री 'देव' जी हरदोवानपुर ज़िला होशियारपुर पंजाब]

इस्लाम मत खण्डन

(१) सुन्नत खण्डन

मूल—काजी तै कवन कतेब बखानी।

पढ़त गुनत ऐसे सभ मारे किनहू खबर न जानी।
सकति सनेह करि सुन्नति करीयै मैन बदउगा भाई।
जउरे खुदाइ मोहि तुर्क करेगा आप नहीं कटि जाई॥
सुन्नति कीये तुर्क जो होइगा औरत का किआ करीयै।
अर्ध शरीरी नारि न छोड़े ताते हिन्दू ही रहीयै॥
छाडि कतेब राम भजु बउरे जुलम करत है भारी।
कबीरै पकरी टेक राम की तुर्क रहे पचि हारी।

(राग आसा० कबीर पृ० ४७७)

टीका—कबीर जी कहते हैं ओ काजी तू कौनसी किताब का बखान करता है। पढ़ते हुये, विचारते हुये सब को ऐसे मार दिया जिनको पता ही नहीं चला। जो धर्म के प्रेम में सख्ती के साथ मेरी सुन्नत करेगा सो मैं नहीं कराऊँगा। यदि खुदा सुन्नत करने ही से मुसलमान करेगा तो अपने आप लिंग नहीं कट जावेगा। यदि सुन्नत करने ही से मुसलमान होगा तो औरत का क्या करोगे? अर्थात् कुछ नहीं। और अर्धांगी नारी को छोड़ते नहीं इससे हिन्दू ही रहना अच्छा है। ओ काजी! कुरान को छोड़, पागल! राम भज! तू बहुत भारी जुल्म (अत्याचार) कर रहा है, मैंने तो राम की टेक पकड़ ली है, मुसलमान सभी हार के पछता रहे हैं।

टिप्पणी—इसमें साफ मुसलमानों की सुन्नत का तर्क पूर्ण खण्डन करने के साथ ही कहा गया कि ओ पागल काजी! कुरान छोड़। तनिक यवन भाई विचार करें क्या ये शब्द आप को प्रिय हैं? यदि प्रिय हैं तो कदाचित सत्यार्थ-प्रकाश में ऐसे शब्द न देखते हुए भी आर्य समाज के साथ कौन से वैर का राग कब रहे हो, क्या आर्य वीर इन धमकियों में आ जायेंगे? कदापि नहीं।

(२) रोजा, निमाज, कलमा, काबा, खण्डन

मूल—रोजा धरे निमाज गुजारै, कलमा भिसति न होई।
सत्तरि काबा घटि ही भीतर जे करि जानै कोई॥
(राम आसा कबीर पृ० ४८०)

टीका—मुसलमान रोजा रखते हैं निमाज गुजारते हैं। कलमा पढ़ते हैं कबीर जी कहते हैं इन किसी से भी बहिश्त न होगी। इस घट (शरीर) के अन्दर ही ७० काबा हैं यदि कोई विचार कर के देखे।

मूल—कबीर हज काबे हउ जाइथा आगे मिलिआ खुदाइ।
साईं मुझसों लरिपरिआ तुझे किनि फुरमाई गाइ॥
(पृ० १३७५)

टीका—कबीर जी कहते हैं कि मैं हज करने काबे जा रहा था आगे खुदा मिल गया वह खुदा मुझसे लड़ पड़ा और बोला ओ कबीर। तुझे किसने बहका दिया।

टिप्पणी—इन शब्दों से भी ज्यादा लिखने की जरूरत है? मेरी समझ में यवन भाई विचार करें क्या ये कोई नर्म शब्द हैं तथा यह तुम्हारा खण्डन नहीं है?

(३) बांग खण्डन

मूल—कबीर मुला मुनारे किया, चढ़हि साईं न बहिरा होइ।
जा कारन तू बांग देहि, दिल ही भीतरि जोइ॥
(पृ० १३७४)

टीका—कबीर जी कहते हैं कि ओ मुल्ला। खुदा बहरा नहीं जो ऊपर चढ़ कर के बांग दे रहा है। जिस कारण तू बांग दे रहा है उसको दिल ही में तलाश कर।

टिप्पणी—देखो ग्रन्थसाहब में मुसलमानों की कौन सी रसूमात की ओर तर्क दृष्टि नहीं की गई है जरा विचारणीय विषय है, प्यारे यवन तथा सिक्ख भाई विचार पूर्वक मैदान में बढ़ें। इसी में भला है।

(४) हिंसा (कुरबानी) खण्डन

मूल—जब सभ महि एक खुदाइ कहत हौ तौ किउ मुरगी मारै।
मुला कहहु निआउ खुदाई। तेरे मन का भरम न जाई॥

पकरि जीउ आनियां देह बिनासी, माटी को बिसमल कीआ।
किआ उजू पाक कीआ मुहु धोया किया मसीति सिरु लाइया॥
(बिभास प्रभाती कबीर पृ० १३५०)

टीका—कबीर जी कहते हैं कि ओ मुसलमानो! जब तुम सब में एक ही खुदा बतलाते हो तो तुम मुर्गी को क्यों मारते हो। ओ मुल्ला! खुदा का न्याय विचार कर कह। तेरे मन का भ्रम नहीं गया है। पकड़ करके जीव ले आया, उसकी देह को नाश कर दिया, कहो मिट्टी को ही तो बिस्मिल किया। तेरे ऐसा करने से तेरा पाक उजू क्या, मुंह धोना क्या, मसजिद में सिजदा करने से क्या, अर्थात् हिंसा करने से तेरे सभी काम बेकार हैं।

टिप्पणी—अब मुसलमान विचार करें कहां तो कुरबानी को जायज़ करार देते हैं और कहां यहां कुरबानी करना सभी को नाजायज़ बताया है।

मूल—कबीर भांग माछुली सुरापान जो २ प्रानी खांहि।
तीरथ व्रत नेम किये ते सभै रसातल जांहि॥
(पृ० १३७७)

टीका—कबीर जी कहते हैं कि जो प्राणी भाग, मछली, शराब पीते हैं उनके तीर्थ-व्रत, नेम करने पर भी सभी रसातल को जावेंगे।

मूल—रोजा धरै मनावै अलहु सुआदति जी उर संघारै।
आपा देखि अवर नहीं देखै काहे कउ झख मारै॥
काजी साहिब एक तोही महि तेरा सोचि बिचार न देखै।
खबरि न करहि दीन के बउरे ताते जनमु अलेखै॥
(राग आसा कबीर ४८३)

टीका—ओ काजी साहब तू! रोजा रखता है अल्लाह को याद करता है, स्वाद के कारण जीवों को मारता है। अपना देखता है दूसरे को नहीं देखता है क्यों समय बरबाद कर रहा है। तेरे ही अंदर तेरा एक खुदा है, सोच विचार के नहीं देखता है। ओ दीन के पागल! खबर नहीं करता है इसलिये तेरा जन्म व्यर्थ है।

मूल—बेदु पढ़ै मुखि मीठी बाणी।
जीआं कुहत न संगै पराणी॥ (राग गौडी म. ५ पृ २०१)

टीका—गुरु अर्जुन देवजी कहते हैं कि मीठी वाणी से वेद पढ़ता है और जीवों को भी मारता है। प्राणी शर्म नहीं करता है। "इत्यादि अनेक वाक्य हैं।"

टिप्पणी—जो दावेदार मांसाहारी सिख लोग हैं वह अपने गुरुओं की वाणी को सुनें देखो ग्रन्थसाहब मे मांस खाना कहीं नहीं लिखा है फिर भी हठात् मांस भक्षण सिद्ध करना सरासर मूर्खता है फिर अपने तक ही सीमित रखते तो भी उचित था किन्तु स्वामी दयानन्द जी सरस्वती जो कि आधुनिक युग के निर्माता हैं उनके ऊपर यह लाछन फेंकना कितनी कृतघ्नता है। भाग शराब पीना इत्यादिक इन्हीं बुराइयों को देखकर स्वामी दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश पृ० ५०५ में लिखते हैं, संस्करण शताब्दी दयानन्द ग्रंथ माला "ब्रह्मज्ञानी आप परमेश्वर बन के उस पर कर्मोपासना छोड़कर इनके शिष्य झुकते आये इसने बहुत बिगाड़ कर दिया। नहीं तो जो नानक जी ने कुछ युक्ति विशेष ईश्वर की लिखी थी उसे करते आते तो अच्छा था" परन्तु इन सबने भोजन का बखेड़ा बहुत सा हटा दिया है जैसे इसको हटाया वैसे विषयासक्ति दुरभिमान को भी हटा कर वेद मत की उन्नति करें तो बहुत अच्छी बात है।"

यह एक ऋषि की उच्च भावना का सन्देश है क्या इसी को देखकर ही आज सिख चिढ़ते हैं बड़े खेद की बात है। यदि ग्रंथ साहब को देखें तो जितनी कड़ी आलोचना अन्य सम्प्रदायों की जैसे यत्किंचित् लिखी गई है वैसी सत्यार्थ प्रकाश में नहीं है। आशा है सभी सिक्ख भाई इस पर विचार करके अपने हठ को छोड़ देंगे। यदि नहीं, तो मुसलमान भाइयों को चाहिये उपरोक्त विषयों पर विचार करें।

(३) नास्तिक वाद खण्डन।

मूल—'ते साकत चोर जिन नाम विसारया, (म० ४ पृ १७०)

"सति गुरु न सेवहि मूरख अंध गंवारा" (म० ३ पृ ११५)

टीका—वे दुष्ट, चोर हैं जिन्होंने परमात्मा का नाम भुला दिया। मूर्ख, अंधे, गंवार, सच्चेगुरु की सेवा नहीं करते हैं।

टिप्पणी—इत्यादि ऐसे वाक्य ग्रंथ साहब के पत्ते २ पर पाये जाते हैं क्योंकि ग्रंथ साहब का विषय ही नास्तिक को आस्तिक करना है। अब सज्जन वर्ग विचारें

ग्रथ साहब में कठोर शब्दों तथा खण्डन विषय का प्रयोग सीमा से उल्लंघन कर गया है या नहीं।

[गुरु ग्रथ साहब से ऊपर उद्धृत इस्लाम मत खण्डन विषयक वाक्य इस दृष्टि से विशेष महत्त्व पूर्ण हैं कि मा तारासिंह जी के अनुयायी कुछ अकाली मतान्ध मुसलमानों के साथ मिलकर सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती का पजाब में आन्दोलन कर रहे हैं। यदि कट्टर मुसलमान ऊपर उद्धृत वाक्यों के आधार पर गुरु ग्रथ साहब को जब्त कराने का आन्दोलन शुरू करें तो उन्हें कैसा मालूम होगा इस बात का उन्हें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये और इस हानिकारक असङ्गत आन्दोलन से सर्वथा हाथ खेंच लेना चाहिए— सम्पादक]

श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी के कुछ अप्रकाशित महत्त्वपूर्ण पत्र

गुरुकुल कांगड़ी के प्रारम्भिक दिन

[स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी के पूर्व आश्रम के दामाद डा० गुरुदत्त जी ने जिन्होंने अब सन्यास लेकर श्री आत्मानन्द भिक्षु नाम रक्खा हुआ है निम्न लिखित कुछ पत्र प्रकाशनार्थ भेजे हैं जिनसे गुरुकुल के प्रारम्भिक दिनों पर उत्तम प्रकाश पड़ता है]

जालन्धर शहर
३० अक्टूबर १९०१

प्रिय पुत्र गुरुदत्त जी !

नमस्ते ! आपका पत्र पहुंच गया वजह जवाब न लिखने की यह हुई, कि मैं फिर सभा की प्रधान पदवी पर फँस गया हूँ। काम सख्त है, ५ नवम्बर को तो तुम चल ही होगे, यहा कुल बात चीत होजावेगी। लेकिन मुख्तसिर यह कि मैं प्रधान मुकर्रर होगया हूँ। गुरुकुल का मुआमला गले पड़ गया है। मुखालफत का जोर है। पस अब दुन्यावी झगड़ों से अलग होकर काम करने की जरूरत है। पस बाद ३० नवम्बर के सब लड़कियों को अपनी २ जगह भेजदूंगा, और गुरुकुल के पीछे लगूंगा। परमेश्वर पर भरोसा करके काम करना है।

मुन्शीराम

बरास्ता हरद्वार
१२ मार्च १९०२

प्रिय पुत्र गुरुदत्त जी ! नमस्ते !

अफ़सोस कि मै तुम्हे खत न लिख सका, २२ फ़रवरी को यहा से चलकर ३२ ब्रह्मचारियों को ४ मार्च तक यहा ले आया हू। अब यहा जगल में आनन्द पूर्वक ब्रह्मचारी पढ़ते हैं। एक पल को मुझे फ़ुर्सत नहीं है। यही वजह है कि न तुम्हें खत लिख सका, न सुमित्रा को जवाब दे सका। जलन्धर से आकर अमृत-कला को भी कोई पत्र नहीं लिख सका।

मै दिनरात काम में रहता हूँ। एक पल का अवकाश नहीं। एक तरफ इमारत बन रही है दूसरी तरफ ब्रह्मचारियों के भोजन आदि का फ़िक्र है, तीसरी तर्फ उनकी तालीम और सारे जग से निराली! ईश्वर की दया से आशा है कि काम चल निकलेगा।

मुन्शीराम

कनखल
६-१-१६०२

मेरी प्यारी पुत्री सुमित्रा । नमस्ते ।

मैं ६ जनवरी की दोपहर को यहा पहुंच गया था, तब से बराबर गुरुकुल के स्थान का काम कर रहा हूँ ! अब तक किसी ने यहा कुछ भी न किया था, अतएव होलियों तक यहा गुरुकुल खोलने के लिये बहुत ही परिश्रम करना पड़ेगा। तुम्हें ज्ञात होगा, कि गुरुकुल के लिये एक ग्राम मिला है। जहा गुरुकुल मन्दिर बनाना है। आज मैं अपना सब सामान लेकर वहां चला जाऊँगा, छप्परों में रहना होगा, तथा जंगल का सहवास होगा। यहां से वह स्थान २½ मील दूर है। ईश्वर पर भरोसा करके चला हूँ। वही जगदीश्वर इस कार्य्य को भी पूर्ण करेंगे।

तुम्हारा शु० चिं० पिता,
मुन्शीराम

Gurukul Bhumi
Kangari Via Hardwar
२-२-१६०२

प्यारी पुत्री सुमित्रा । नमस्ते ।

तुम्हारा १६ जनवरी का पत्र फिरता फिराता आज मुझे यहा ही फिर आमिला। इस अन्तर में कितना कष्ट मुझे हुआ और कहा २ मैं फिरा इसके लिखने की आवश्यकता नहीं रही, अब यहा आ गया हूँ और यहा ही रहूँगा। प्रधान सभा का पद मैंने छोड़ दिया है। केवल गुरुकुल की सेवा में अब जीवन व्यतीत करना चाहता हूं। यदि आर्य्य पुरुषों को स्वीकार हुआ तो ठीक है। नहीं तो अपने परिवार की उन्नति में लगूंगा।

(२) अब मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। झोंपड़ी का रहना मेरे अनुकूल पड़ेगा।

(३) मेरा समय विभाग यह है कि ४ बजे प्रातः उठकर २½ घण्टा लेख का काम करता हूँ। फिर स्नान सन्ध्या के पश्चात् व्यायाम करके १½ मील परे गुरुकुल मन्दिर का काम देखने जाता हू। ११ बजे लौटकर भोजन, ३ तक फिर लेख का काम, ५½ तक फिर मन्दिर का काम, सन्ध्या भोजन के पश्चात् १० तक फिर लेख का काम, अवकाश नहीं मिलता, तुम अवश्य पत्र लिखा करो।

मुन्शीराम

जालन्धर शहर
१९६७ वि०

प्रिय पुत्र गुरुदत्त जी। नमस्ते।

आपका पत्र पहुंचा, बड़ी गड़बड़ के पश्चात् अब फिर यही निश्चय किया है कि गुरुकुल की रक्षा के लिये उद्यत होऊँ। यदि मैं शीघ्र वहां न गया, तो उसके टूट जाने की सम्भावना है। अतएव सब कुछ बेचबाच के चल देने का निश्चय पक्का हो गया, परमात्मा सहायता करेंगे, इसी कारण अब किसी उत्सव पर न जा सकूँगा।

मुन्शीराम

सामाजिक जगत्

दौराला (जिला मेरठ) का तीसरा वार्षिकोत्सव

यह उत्सव १५ से १७ अक्टूबर तक बड़े समारोह से मनाया गया। ६ से १४ अक्टूबर तक श्री स्वामी केवलानन्दजी ने रात्रि के ६ से १०½ बजे तक प्रतिदिन कथा की। १५ अक्टूबर को प्रात श्री चौधरी जयदेवसिंहजी के सभापतित्व में गोरक्षा सम्मेलन हुआ और एक गो प्रदर्शनी की गई जिसमें उत्तम नस्ल की १० गौओं पर ४० रु० के इनाम बाँटे गये। १५ अक्टूबर को साय श्री प० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा के सभापतित्व में आर्य वीर दल सम्मेलन किया गया। १६ अक्टूबर को आर्य स्त्री सम्मेलन और समाजसुधार सम्मेलन हुए। १७ अक्टूबर को प्रात श्री रामसिंहजी एम० ए० के सभापतित्व में आर्य सम्मेलन किया गया जिसके स्वागताध्यक्ष श्री लाला हरशरणदासजी रईस गाजियाबाद प्रधान आर्य उपप्रतिनिधि सभा मेरठ थे। तीनों दिन भजनों और व्याख्यानों द्वारा प्रचार कराया गया। व्याख्यानों में श्री प० सिद्धगोपालजी साहित्य वाचस्पति, प० यशपालजी शास्त्री, प० हरदयालु शास्त्री, श्री० प० ओंप्रकाशजी शास्त्री तथा प० रामदत्तजी गौतम के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

सत्यभूषण वेदालङ्कार
मन्त्री आर्य समाज दौराला

मुलतान आर्य सम्मेलन—मुलतान छावनी आर्य समाज के उत्सव पर आर्य सम्मेलन श्री० प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति आचार्य गुरुकुल कांगड़ी और सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन श्री प० यश पाल जी सिद्धान्तालङ्कार वेद प्रचाराधिष्ठाता आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के सभापतित्व में बड़े धूमधाम से १८ अक्टूबर को मनाये गये। दोनों महानुभावों का मुलतान की आठों आर्य समाजों की ओर से शानदार स्वागत किया गया। कविराज पुरुषोत्तमदेव जी आयुर्वेदालङ्कार ने सब आर्य समाजों की ओर से श्री आचार्य प्रियव्रत जी को अभिनन्दन पत्र अर्पित किया। यह उत्सव उपस्थिति भाषण तथा उत्साह की दृष्टि से अत्यन्त सफल रहा। —मन्त्री आर्य समाज मुलतान छावनी

महिला सभा सगड़िया—२३-१०-४३ को आर्य समाज मन्दिर में आर्य कुमार परिषद् के सहयोग से लगभग ११० प्रगतिशील महिलाओं द्वारा श्रीमती सुशीलादेवी जी के नेतृत्व में महिला सभा की स्थापना की गई। श्रीमती सुशीलादेवी जी सभा नेत्री, कुमारी सावित्रीदेवी प्रधान मन्त्रिणी कुमारी भारती जी सयुक्त मन्त्रिणी चुनी गईं। इनके अतिरिक्त श्रीमती गायत्रीदेवी जी श्रीमती जानकीदेवी जी आदि महिलाओं के ओजस्वी भाषण हुए

कुमारी सावित्रीदेवी
प्रधान मन्त्रिणी

दयानन्द संन्यासी-वानप्रस्थ मंडल का वार्षिक चुनाव

मडल की साधारण बैठक २० अक्टूबर सन् १९४३ ई० को वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर में महात्मा नारायण स्वामी जी की अध्यक्षता में हुई, जिसमें मडल का नाम सार्वदेशिक दयानन्द भिक्षु मडल के स्थान पर सार्वदेशिक दयानन्द संन्यासी-वानप्रस्थ मडल रक्खा गया। अधिकारियों का चुनाव निम्न प्रकार हुआ।

प्रधान—महात्मा नारायण स्वामी जी, मन्त्री—स्वामी जीवन मुनि जी, उपमन्त्री—प० ज्ञानेन्द्र जी शिक्षित, कोषाध्यक्ष—ला० नारायणदत्त जी, पुस्तकाध्यक्ष—प० गगाप्रसाद जी, एम० ए०

इसी अवसर पर श्रीमान् राय बहादुर चुन्नीसिंह जी नेटौर निवासी की सुपुत्री श्रीमती सत्यवती जी ने सन्यास आश्रम की दीक्षा महात्मा नारायण स्वामी जी से ली।

मन्त्री दयानन्द सन्यासी वा० मण्डल

विद्यालय-प्रवेश-सूचना

श्री दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय वैदिकाश्रम, कृष्णनगर, लाहौर में शास्त्री तथा विद्यारत्न की श्रेणियें पूर्ववत् खुल गई हैं। सुयोग्य अध्यापक नियुक्त किए गए हैं। इस वर्ष पजाब यूनिवर्सिटी की शास्त्री परीक्षा देने वाले, तथा सस्कृत शिक्षा के प्रेमी विद्यार्थी उक्त सस्था के आचार्य से नियमावली मगाएँ। अधिकारी विद्यार्थियों को १०) मासिक छात्र वृत्ति मिलेगी। भोजन तथा निवास का सुन्दर प्रबन्ध विद्यालय के आश्रम में है। शीघ्र ही पत्र व्यवहार कीजिए।

ऋषिराम आचार्य

आर्य कुमार परिषत् की सूचनाएं—

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्

का

२८वा अधिवेशन मुरादाबाद में !

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की अन्तरग सभा ने अपनी ता० ३१-१०-४३ की बैठक मे २८वा भारतवर्षीय आर्य कुमार सम्मेलन सयुक्त प्रान्त के प्रमुख नगर मुरादाबाद मे करने का निश्चय किया है।

स्वागत समिति

श्री मन्त्री जी, आर्य कुमार सभा मुरादाबाद सूचित करते हैं कि सम्मेलन की स्वागत समिति के सदस्यों के बनाने का काय आरम्भ कर दिया गया है।

पचास रुपया धार्मिक परीक्षा के लिये

श्री प्रो० मुन्शीराम जी डी ए वी कालेज कानपुर ने ५०) वैदिक प्रचार निधि कार्यालय परिषत् मे भेजे हैं जा सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा प्रथम में उत्तीर्ण होंगे उनको यह पुरस्कार दिया जावेगा।

देवीदयाल उपमन्त्री
भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्, देहली।

मास अक्टोबर ४३ की अवशिष्ट दान सूची

बंगाल अकाल पीड़ित सहायता निधि

१०) श्री ऐन सी वर्मा इन्दौर
१००) श्री मन्त्री आर्य समाज खैर
१००) ,, रामकृष्णदास शान्तिलाल सर्राफ खुर्जा
१३॥) श्री प० सुन्दर राम जी द्वारा क्लाथ पेट बगलौर से सगृहीत
१८१) आ स बालातरा
१५०) श्री चुन्नीलाल जी आर्य जानूशेर (जलधर)
१००) आ. स हल्दौर (बिजनौर)
८०) ,, ,, इटारसी
६०) ,, ,, खरड (मुजफ्फर नगर)
६०) , ,, धनौरा (मुरादाबाद)
५०) ,, ,, हसनपुर ,
५०) आ स गुलाबठी (बुलदशहर)
१६) श्री बांकेलाल C/o बलदेवप्रसाद जी बाबूराम—बजाज जौहरी बाजार जयपुर
१२६॥) आ. स मोर सराय देहली
३००) आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई द्वारा
१२६) आ स रामपुर स्टेट
१००) आ स. कार्कल (मदरास प्रान्त)
१२५) , , अम्बहटा (सहारनपुर)
११८) ,, , बहावलपुर स्टेट
५०) ,, ,, थानाभवन (मुजफ्फरनगर)
१८) ,, फफूंद हा खरखौदा (मेरठ)
५०) ,, ,, गगोह (सहारनपुर)
६) आ स गुजरावाला
२७) , ,, कलवारी
२५) बाबू दीनानाथ जी रामपुर
७८॥) आ स हनुमान रोड नई देहली

सब दाताओं को हार्दिक धन्यवाद

धर्मदेव वि. वा
स मन्त्री सार्वदेशिक सभा

आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में वेद प्रचारार्थ दान

५०) श्री हितैषी जी द्वारा श्री प लक्ष्मण राव जी ओघले बम्बई

दान

२१॥≈) आ. स मेरठ शहर
२०) श्री पुरुषोत्तम से कलोल (बड़ौदा)

४१॥≈)

सत्यार्थ प्रकाश निधि

५०) आ स बिरला लाइन्ज देहली
१०) श्री गुरुदत्त जी गौतम इञ्जीनियर बिरला मिल्स देहली
५) आ स इटारसी

---

६५)

दान सूची सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा मास नवम्बर १९४३

बंगाल अकाल पीड़ित सहायता निधि

५) श्री श्यामबिहारीलाल जी शाहजहाँपुर
५) श्री डा० अमरनाथ जी ७५ गली बताशा चावड़ी बाजार देहली
२) श्री गज्जूसिंह जी देहली क्लाथ मिल्स देहली
४०) श्रीमती चौधरानी अशर्फीदेवी जी तथा भगवतीदेवी जी देहली
२५) श्री डा० लालचन्दजी वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर (सहारनपुर)
१००) मन्त्री आ स० जगाधरी (पंजाब)
१०) श्री प० गुरुदत्त जी गौतम बिरला लाइन्स देहली
२५०) आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई द्वारा
१२।=) आर्य समाज सिघौला डा० नरेला (देहली)
१०१) श्री पं० जनकदेव जी विद्यालंकार (देहली)
२५०) श्री आर्य समाज मेरा (पंजाब)
१५) श्री नरसिंहदेव जी स्वतंत्र आर्योपदेशक आ० स० गोमल (शाहपुर) जि०—मुजफ्फरनगर
५) आ० स० चेला (झंग)
५) श्री प० धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री द्वारा देहली
३००) आ० स० भिवानी(हिसार)
२) श्री वजीरचन्द जी चेला (झंग)
२) श्री मन्त्री वेद प्रचारिणी चेला झंग)
१००) श्री विजयपालसिंह जी टुबलिस २० वर्ष के (इस नवयुवक ने अपनी मृत्यु के समय यह धन दान किया) द्वारा श्री आनन्दस्वरूप जी टुबलिस वकील मेरठ
४४) श्री वेद प्रकाश जी आय मलौत मन्डी (फ़ीरोजपुर)
२५) श्री राजरूपजी सुपरि० पोलीटिकल डिपार्टमेन्ट नई देहली
२५) श्री मन्त्री आ० स० काजी आरफ़
१६) श्री तोताराम श्यामलाल जी सर्राफ़ आगरा
१०) डा. ऐल के उपमन्यु खुजनेर
७०) श्री मन्त्री आ स. क़िला शोभासिंह
१०) आ० स० करहल (मैनपुरी)
१०) श्री गिरधारीलाल जी, मीरपुर खास (सिंध)
१०) आ० स० जलालपुर P० केसरगंज (बहराइच)
१०) आ० स० एटा
५) परमात्माशरण जी चतुर्वेदी तिर्वा आर्य समाज
५) श्री जगदीशचन्द्र जी तिर्वा
१) गुप्त दान

४॥=) श्री मी॰ बी॰ शर्मा आ॰ स॰
इटारसी
१७) आ॰ स॰ (एटा इनके अतिरिक्त
१२) मदरास तथा अजमेर के बाढ़
पीड़ितों की सहायतार्थ)
३३) आ॰ स॰ सिहोर
३) आ॰ स॰ लखौड़ी (शाहाबाद)
२) आ॰ स॰ शाहाबाद (हर्दोई)
२॥) आ॰ स॰ रामनगर (गुजरॉवाला)
१०) श्री ऐल. के उपमन्यु सुजनेर दान
की दूसरी किस्त
२०) श्री राजाराम जी आर्य हेमकुंज
(पूर्णिया)
२६) आ स आगरा छावनी
३००) „ „ जयपुर सिटी
१००) श्री कुँवर चान्दकिरण जी
शारदा अजमेर
२५) „ जगदीश कृष्ण जी आनन्द
गोपाल त्यागी रत्नगढ़ (बिजनौर)
१३१) आ स कोटा
२००) श्री बिहारी लाल जी प्रधान
आ स शोलापुर
८७) आ. स महू छावनी
३४॥) „ , अल्वर
३०) „ „ काल्पी उरई
२२) „ „ फीरोजाबाद आगरा
८) (गुप्त दान)
१०) „ „ जलायमपुर P O
केसरगंज (बहराइच)
५०) श्रीमती किरण माला जैन
ननौता (सहारनपुर)
१००) श्री पी डी चौपड़ा नई देहली

२४७१-)

सब दानियों को सभा की ओर से हार्दिक धन्यवाद। धन और वस्त्रों की सहायता अभी जारी रहनी चाहिये।

आर्य समाज स्थापना दिवस निधि

१५) आ स सन्यासी गुड्डे मगलौर
(मदराम प्रान्त)

दाताओं को हार्दिक धन्यवाद। जिन आर्य समाजों ने अभी तक आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में अपना भाग नहीं भेजा उन्हें भी शीघ्र भेजकर अपने कर्तव्य और शिरोमणि सभा के आदेश का पालन करना चाहिये।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति
स मन्त्री सार्वदेशिक सभा

दान

३) श्री सुमेरचन्द्र देहली (विवाहोप-
लक्ष्य में)
५००) श्री ठाकुर लालसिंह जी रि
सूबेदार खरक कलॉ (रोहतक)
१०) श्री मूलचन्द्र जी डिडवानी
(शोलापुर)
४॥=) आर्य समाज महू

सम्पादकीय

अमर धर्मवीर की पुण्य स्मृति में:—

'सार्वदेशिक' के इस अङ्क में अधिकतर लेख अमर धर्मवीर श्री स्वामी श्रद्धानन्द महाराज के कार्य और सन्देश विषयक हैं जिनके सुवर्णाक्षरों में लिखने योग्य बलिदान दिवस की १७ वीं वर्ष गांठ २४ दिसम्बर को समस्त आर्य जगत् में श्रद्धा और उत्साह पूर्वक मनाई जाएगी। अमर शहीद की ईश्वर भक्ति, पवित्रता निर्भयता, सत्यनिष्ठता, कर्तव्यपरायणता, परोपकार, त्याग अदम्यउत्साह और साहस आदि उत्तम गुणों का स्मरण करते हुए हमें अपने जीवनों में उन्हें धारण करने का दृढ़ निश्चय तथा तदर्थ प्रयत्न करना चाहिये। शुद्धि, दलितोद्धार, संगठन, गुरुकुल शिक्षाप्रणाली का पुनरुद्धार इत्यादि जिन पवित्र कार्यों के लिये श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज दिन रात प्रयत्न किया करते थे उनकी उत्तरोत्तर उन्नति के लिये यथाशक्ति यत्न करना प्रत्येक आर्य को जो स्व० स्वामी जी के लिये श्रद्धा का भाव रखता है अपना कर्तव्य समझना चाहिये। जन्ममूलक वर्णव्यवस्था वा जात-पात और अस्पृश्यता के क्रियात्मक आचरण के कारण ही शुद्धि और दलितोद्धार के आन्दोलनों में यथेष्ट सफलता नहीं हो रही इस बात को जानते हुए इन्हें निर्मूल करने का पूर्ण प्रयत्न प्रत्येक आर्य को अवश्य करना चाहिये।

स्वर्गीय आचार्य रामदेव जी का एक सच्चा स्मारक:—

गुरुकुल कांगड़ी के भूतपूर्व आचार्य और कन्या गुरुकुल देहरादून के मुख्याधिष्ठाता, वैदिक मैगज़ीन नामक उच्च कोटि की अंग्रेज़ी मासिक पत्रिका के यशस्वी सम्पादक, आर्य धर्म और संस्कृति के अद्भुत दीवाने, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान आचार्य रामदेव जी को हमसे जुदा हुए ४ वर्ष ९ दिस० को हो जाएंगे। गुरुकुल कांगड़ी तथा कन्या गुरुकुल देहरादून (जिसका वार्षिकोत्सव ३१ दिस० १९४३ तथा १, २ जनवरी १९४४ को होना निश्चित

हुआ है) जैसी स्व० आचार्य जी की अत्यन्त प्रिय संस्थाओं को अधिकाधिक उन्नत करने का प्रयत्न निस्सन्देह अभिनन्दनीय और आवश्यक है किन्तु इसके साथ जिस वैदिक धर्म के देश देशान्तरों मे प्रचार की स्व० आचार्य जी को दिन रात धुन लगी रही थी और जिस के साधनरूप में ही वे बड़ी योग्यता से वैदिक मेगजीन नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन करते थे उसके लिये उत्तम आर्य साहित्य का निर्माण और 'वैदिक मैगज़ीन" जैसी पत्रिका का पुनरुज्जीवन उनका सच्चा स्मारक हो सकता है इस में सन्देह नहीं। यह खेद की बात है कि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा वैदिक मैगजीन के पुनरुज्जीवन का प्रयत्न जिसकी आशा गत वर्ष दिस० १६४२ के अङ्क में की गई थी अभी तक कई अनिवार्य कारणों से क्रियात्मकरूप नहीं ग्रहण कर सकी। सार्वदेशिक सभा पंजाब तथा अन्य प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं के पूर्ण सहयोग से उसका पुनरुद्धार दक्षिण भारत तथा विदेशों मे प्रचार की दृष्टि से अत्यावश्यक समझती है ऐसे ही वेदों उपनिषदों और दर्शन शास्त्रों के प्रामाणिक अंग्रेजी आदि विदेशों की भाषाओं में अनुवाद तथा आर्य सिद्धान्तों की वैज्ञानिक दार्शनिक उत्तम व्याख्या करने वाले ग्रन्थों के प्रकाशन की बड़ी भारी आवश्यकता है ताकि युद्धोत्तरवर्ती जगत् के पुनर्निर्माण में आर्य समाज अपने कर्तव्य का पालन कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अच्छी आर्थिक सहायता अत्यावश्यक है। आशा है स्व० आचार्य रामदेव जी की पुण्यस्मृति मे आर्य जनता इस विषयक उदार सहायता देकर अपने कर्तव्य का पालन करेगी। भगवान् कृपा करें कि आचार्य रामदेव जी जैसे लगन वाले उच्च कोटि के विचारक आर्यों मे अधिक संख्या मे उत्पन्न हों। स्व० आचार्य जी की सरलता, विद्वत्ता और वैदिक धर्म प्रचारार्थ अदम्य उत्साह के प्रति हम विशेषरूप से श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हैं।

जोधपुर सरकार का विवेक पूर्ण निश्चयः—

'सार्वदेशिक' के नवम्बर मास के सम्पादकीय मे जोधपुर सरकार के जोधपुर आर्य समाज के रजिस्टर्ड करने पर बल देने की मांग का अनुचित बताते हुए हमने लिखा था कि "हमें आशा रखनी चाहिये कि जोधपुर सरकार आर्य समाज को अन्य धार्मिक संस्थाओं के सर्वथा समान समझ कर उसके रजिस्टर्ड करने की मांग न करेगी अन्यथा समस्त आर्य जगत् में जो घोर असन्तोष की ज्वाला

प्रज्वलित होगी उसके लिये उसकी अपनी उत्तर दायित्ता होगी विशेषत जब कि स्वर्ग जोधपुर के स्व० महाराजाधिराज (अशुद्धि से महाराज बीरजसिंह छप गया था जिसे पाठक ठीक कर लें) सर जसवन्तसिंह जी बहादुर ने वहा आर्य समाज की स्थापना करवाई थी।"

हमें यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि ९ नवम्बर को जोधपुर रियासत के चीफ मिनिस्टर सर डौनल्ड फील्ड ने एक सरकारी विज्ञप्ति में प्रकाशित किया है कि

His Highness the Maharaja Sahib Bahadur has been pleased to order that the Arya Samaj Jodhpur city be exempted from registration under the provisions of the Jodhpur Public Societies 'Act 1940 and the Marwar Societies Registration Act 1939 as a special case.

अर्थात् महाराज साहब बहादुर ने यह आज्ञा देन की कृपा की है कि जोधपुर सिटी आर्य समाज को १९४० और १९३९ के ऐक्टों के अनुसार रजिस्टर्ड कराने से विशेष रूप से मुक्त किया जाय हम जोधपुर नरेश, चीफ मिनिस्टर और उनके सहायक पालिटिकल सेक्रेटरी प० जयनाथ कुँजरू जी आदि जोधपुर सरकार के अधिकारियों का आर्य जगत् की ओर से इस विवेकपूर्ण कार्य के लिए बधाई तथा धन्यवाद देते हुए यह प्रबल आशा रखते हैं कि आर्य समाजों के रजिस्टर्ड कराने की माँग को अब सर्वथा छोड़ दिया जाएगा और ऊपर उद्धृत आज्ञा में प्रयुक्त विशेषदशा सूचक 'As a special case' इन शब्दों की आड़ मे रियासत की अन्य आर्य समाजों पर इसे लागू करने का विचार न किया जायगा अन्यथा पुन समस्त आर्य जनता मे असन्तोष की ज्वाला प्रज्वलित हो उठेगी। सार्वदेशिक सभा की ओर से जोधपुर के महाराज तथा प्रधान मन्त्री महोदय को धन्यवाद सूचक तार और पत्र भेजे जा चुके हैं। इस प्रकार हमें बड़ा हर्ष है कि आर्यों की दृढ़ता सार्वदेशिक सभा के प्रोत्साहन और जोधपुर सरकार की विवेक शीलता से इस आप्रब काण्ड का यहीं अन्त होगया है।

हैदराबाद (सिन्ध) आर्य समाज के नगर कीर्तन पर प्रतिबन्ध—

जहाँ जोधपुर आर्य समाज के मामले का रियासत के अधिकारियों की बुद्धिमत्ता से सन्तोषजनक रीति से निपटारा होगया वहाँ यह अत्यन्त दु ख और

और आश्चर्य की बात है कि हैदराबाद (सिन्ध) के पोलीस अधिकारियों तथा डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट आदि के आर्य समाज के नगर कीर्तन को जो वार्षिकोत्सव के आवश्यक भाग के तौर पर लगभग ५४ वर्षों से होता आया है बन्द करके अपनी अदूरदर्शिता का परिचय दिया है तथा सवत्र असन्तोष की अग्नि को भड़का दिया है। इस सम्बन्ध में हैदराबाद आर्य समाज के प्रधान के ९⁄४३ और २३⁄४३ के नगर कीर्तन की आज्ञा देने विषयक पत्रों का उत्तर देते हुए डिस्ट्रिक्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट पोलिस ने ७७–९–४३ के पत्र मे इतना ही लिखा कि It is regretted peim ission can not be granted for this procession

अर्थात् खेद है कि इस जलूस की आज्ञा नहीं दी जा सकती। जब इस विषय में आर्य समाज के प्रधान जी ने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट से अपील की तो उसने भी ७–१०–४३ के पत्र मे लिखा कि After careful consideration the District magistrate rgrets he is unable to interfere with the discretion and decisioi of the District Superintendent of Police Hyderabad अर्थात् गम्भीरता पूर्वक विचार के पश्चात् डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का खेद है कि वह पोलिस के डिस्ट्रिक्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट के विवेक और निर्णय में हस्तक्षेप करने में असमर्थ है। इस पर आर्य समाज के प्रधान ने सिन्ध सरकार के होम डिपार्टमेन्ट से इस आज्ञा के विरुद्ध अपील की तो उन्हें वही पुराना घिसा हुआ उत्तर मिला कि 'Governments do not propose to in terfere in the order passed by District magistiate Hyderabad अर्थात् सरकार का डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की आज्ञा में हस्तक्षेप करने का कोई विचार नहीं है। उन्हीं दिनों ईद के जलूस की आज्ञा मुसलमानों को बिना किसी रुकावट के देदी गई। इससे जनता का यह समझना स्वाभाविक है कि सिन्ध मे मुसलमानों का कितना पक्षपात किया जाता है और आर्य हिन्दू जनता के धार्मिक अधिकारों को भी कुचलने का प्रयत्न किस प्रकार जारी है। पाठकों को— अभी सिन्ध सरकार की सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती विषयक विचार सूचक विज्ञप्ति भूली न होगी। उसमें जब समस्त भारत में प्रबल आन्दोलन के कारण सफलता न मिली तो इस प्रकार आर्यों के धार्मिक अधिकारों में सर्वथा अनुचित हस्तक्षेप का प्रयत्न किया जा रहा है जो अत्यन्त निन्दनीय है। इस अनुचित आज्ञा के प्रतिवाद स्वरूप आर्य समाज ने अपना उत्सव स्थगित कर दिया और पुन नगर

से आज्ञा मागी है। हम आशा करते हैं कि पोलीस तथा सिन्ध सरकार के अधिकारी हैदराबाद (दक्षिण) के चरण चिन्हों पर चलकर उसी प्रकार के प्रबल असन्तोष का शिकार होने से अपने को बचाएंगे अन्यथा जो परिणाम होगा उसकी कल्पना सुगमता से की जा सकती है और उसके लिए उत्तर दायित्व सिन्ध सरकार का अपना होगा। बिना किसी उचित कारण तक का निर्देश किये हुए एक लगभग ५४ वर्षों से बर्ते जा रहे नगर कीर्तन के धार्मिक अधिकार को कुचल डालना कभी उचित नहीं कहा जा सकता।

अकालीदल मुस्लिमलीग गठजोड़ा—

समाचार पत्रों के पाठकों से यह बात छिपी नहीं कि गत कई मासों से मा० तारासिंह जी के अनुयायी कुछ अकाली सिक्ख मुस्लिमलीगियों के साथ अपना सम्बन्ध अधिकाधिक बढाते जाते हैं यहा तक कि गोमास भक्षण आदि के विषय में उनके अखबार 'अजीत' में निम्नलिखित आशय के शब्द प्रकाशित किये गये हैं। "सिक्ख गाय को माता नहीं समझते। रहा गोमास भक्षण के सम्बन्ध में—पहले तो गोश्त सिक्खों की खुराक नहीं फिर मासमास सभी एक हैं—क्या गाय क्या सुअर ? इस सिद्धान्त पर यदि कोई सिक्ख गाय के मास को खा भीले तो वह सिक्खी मज़हब से पतित नहीं हो सकता। हिन्दुओं की तुलना में मुसलमान और सिक्ख दोनों ही जातिया एक ईश्वर को मानती हैं—दोनों के आधारभूत सिद्धान्त एक ही हैं, फ़ारसी भाषा का ज्ञान सिक्खों के लिये आवश्यक है, दोनों जातियों की चालढाल और वार्तालाप का ढग एक सा है—अर्थात् सिक्ख मुसलमानों के अति निकट हैं।" (यहा 'विजय' अजमेर १५-१०-४२ के अङ्क से उद्धृत)

इस प्रकार के विचार जिस विचित्र मनोवृत्ति के सूचक हैं उसकी आलोचना मे शेर पजाब सरदार अमरसिंह ने जो शब्द लिखे हैं उनको उद्धृत किये बिना हम नहीं रह सकते। उन्होंने लिखा है "अकाली नेताओं की मति मारी गई है और अब उन्होंने भलाबुरा सोचना छोड़ दिया है। वे अपनी इन बेहूदगियों से न केवल देश और उसकी स्वतन्त्रता के राह में काटे बिछा रहे हैं अपितु सिक्खों की राह में भी गढ़े खोद रहे हैं। मुसलमानों से मेल जोल रखना अच्छी बात है किन्तु इसके यह अर्थ नहीं कि हम अपने जन्म-मरण के

साथी हिन्दुओं से सम्बन्ध तोड़ लें। जो बात अकबर जहांगीर तथा शाहजहां आदि भी सहन नहीं कर सके तो क्या आज उस गोवध को सिक्ख सहन कर लेंगे ? (विजय २५-१०-४३ से उद्धृत) वस्तुत सिक्खों के धर्म ग्रन्थ तथा इतिहास के निष्पक्षपात अनुशीलन से यह बात सर्वथा स्पष्टतया प्रमाणित होती है कि श्री गुरु नानकदेव जी से लेकर गुरु गोविन्दसिंह जी तक सब गुरु वैदिक आर्य (हिन्दू) धर्म के मानने वाले थे और उसी की रक्षा के लिये उनमे से अनेकों ने अपने प्राणों तक की आहुति देदी। उदाहरणार्थ पन्थ प्रकाश संस्करण ५ म पृ० २५ में गुरु नानकदेव जी के विषय मे लिखा है "पालन हेत सनातन नेतै, वैदिकधर्म रखन के हेतैं। आप प्रभु गुरु नानक रूप, प्रगट भये जग मे सुख भूपम्। अर्थात् सनातन वैदिक धर्म की रक्षा के लिये भगवान् गुरु नानकजी के रूप में प्रकट हुए। गुरु तेगबहादुर जी के निम्नलिखित वचन बलिदान देते समय पथ प्रकाश कथा ६ में लिखे हैं।

हो हिन्दू धर्म के काज आज मम देह लटेगी ॥

अर्थात हिन्दू धर्म के लिये आज मेरे शरीर का अन्त होगा। औरंगजेब ने जब गुरुतेग बहादुर जी से पूछा कि आप किस धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि देने को तैयार हो रहे हैं तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि—

आज्ञा जो करतार की, वेद चार उचार।
धर्म तास को खास लख, हम तिह करत प्रचार ॥
वेद विरुद्ध अधर्म जो, हम नहीं करत पसन्द।
वेदोक्त गुरुधर्म सो, तीन लोक में चन्द ॥
(श्री गुरुधर्म धुजा पृ ४८ अङ्क ३ कवि सुचेतसिंह रचित)

अर्थात् ईश्वर की आज्ञा रूप जो चार वेद हैं उनमें जिस धर्म का प्रतिपादन है उसका ही हम प्रचार करते हैं। वेद विरुद्ध अधर्म होता है उसे हम पसन्द नहीं करते। वेदोक्त गुरुधर्म ही तीनों लोकों में चन्द्र के समान सबके लिये आनन्द दायक है।

श्री गुरुगोविन्दसिंह जी के पुत्र जोरावरसिंह और फतहसिंह जी को जब मुसल्मान होने को कहा गया तो उन्होंने जो उत्तर दिया उसके अन्तिम शब्द 'पन्थ प्रकाश' में इस प्रकार दिये गये हैं 'गिरि से गिरावो काली नाग से डसावो हा हा

प्रीत नां छुड़ावो इक हिन्दू धर्म पालसों ॥ अर्थात् तुम हमे चाहे पहाड़ से गिरावो चाहे साप से कटवाओ पर एक हिन्दू धर्म से प्रेम न छुड़वाओ ॥ आदि ग्रन्थ में वेदों की महिमा बताते हुए कहा है कि 'वाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़ु पाप तजाया।' अर्थात् वेद ईश्वर की वाणी है उसके धर्म पर दृढ़ रहो ऐसा गुरुओं ने कहा है और पाप छुड़ाया है। (आदि ग्रन्थ साहब राग सूही मुहल्ला ४ बाबा शब्द छन्द २ तुक २) आदि ग्रन्थ राग सूही की वार मुहल्ला १ शब्द १७में यहाँ तक लिखा है कि 'दीवा बले अन्धेरा जाय वेद पाठ मति पापां खाय।

वेद पाठ ससार की कार पढ़ पढ़ पण्डित करहि विचार।

बिन बूझे सम होहि खुआर, नानक गुरुमुख उतरसि पार ॥

अर्थात् जैसे दीपक जलाने से अन्धेरा दूर हो जाता है ऐसे ही वेद का पाठ करके मनन करने से पाप खाये जाते हैं। वेदों का पाठ ससार का एक मुख्य कर्तव्य है। जो पण्डित लोग उनका विचार करते हैं वे संसार से पार हो जाते हैं। वेदों के बिना जाने मनुष्य खुवार (नष्ट) हो जाते हैं। इत्यादि

ऐसे सैकड़ों उद्धारण वेद और वैदिक धर्म की महिमा के गुरु ग्रन्थसाहब आदि से दिये जा सकते हैं। जहा कहीं कुछ निन्दा सूचक वाक्य प्रतीत होते हैं उनसे तात्पर्य केवल ऐसे वेद पाठियों का है जो वेदों की शिक्षाके अनुसार आचरण नहीं करते। गुरु ग्रन्थसाहब मे श्री नानकदेवजी की यह उक्ति दर्ज है कि वेद कतेब कहो मत झूठे, झूठा जो ना विचारे। अर्थात् वेदों को झूठा मत कहो झूठा वह है जो विचार नहीं करता। सिख गुरुओं का उद्देश्य तो उस समय हिन्दुओं में आये हुए अनेक धार्मिक और सामाजिक (मृतक श्राद्ध जात पात तर्पण आदि) दोषों को दूर करके उन्हें सच्चा ईश्वर भक्त और शूरवीर बनाना था। इस्लाम की निन्दा गुरुवाणी में स्पष्ट पाई जाती है जैसे कि इसी अङ्क में श्री देव जी ने अपने लेख में बताया है। ऐसी अवस्था में कुछ मार्ग भ्रष्ट अकालियों का (विचारशील नामधारी तथा अन्य सिक्खों की बहुत बड़ी सख्या इससे सहमत नहीं यह बात निस्सन्दिग्ध है) मुस्लिम लीग के साथ यह विचित्र गठ जोड़ा सचमुच उपहासास्पद तथा राजनैतिक स्वार्थों से प्रेरित है जो विवेक उत्पन्न होते ही टूट जायगा ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है। विचार शील सिक्ख भाई इन मार्ग भ्रष्ट भाइयों को सीधे रास्ते में लाने में समर्थ हों यही हमारी हार्दिक कामना है।

श्री ओंप्रकाश जी, डा० सुखदेव जी आदि का अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य—

बंगाल के अकाल पीड़ितों की सहायता और सेवा का कार्य आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता बंगाल आर्य प्र० सभा, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर के सहयोग से अत्यन्त प्रशंसनीय रीति से कर रहा है। इस समय इस सोसाइटी की ओर से ४० से अधिक केन्द्र खुले हुए हैं जिनके द्वारा लगभग ५० हजार अकाल पीड़ितों को भोजन, वस्त्र औषधिवितरणादि द्वारा सहायता पहुँचाई जा रही है। सार्वदेशिक सभा की ओर से भेजे हुए श्री ओंप्रकाश जी त्यागी स० प्रधान सेनापति आर्य वीरदल, श्री डा० सुखदेव जी, प० वीरेन्द्र जी सिद्धान्त-भूषण पुरोहित आर्य समाज दीवानहाल, श्री प्रभुदयाल जी श्री सत्यपाल जी वैद्य तथा अन्य सज्जन जिस तत्परता और कर्तव्यनिष्ठा से बंगाल के ग्रामों में इन गरीब तथा अकालपीड़ित नर-नारियों की सेवा कर रहे हैं उसकी जितनी प्रशंसा की जाए थोड़ी है। इन भाइयों की निस्स्वार्थ सेवा का यहा तक आशातीत परिणाम कई स्थानों पर हुआ है कि जहा कई मृत्युएं प्रतिदिन होती थीं वहा यह मृत्यु संख्या बहुत ही कम या बन्द तक हो गई है। आर्य समाज के प्रति लोगों का प्रेम बहुत ही बढ़ गया है। यहाँ तक कि श्री ओंप्रकाश जी के कुछ दिन पूर्व प्राप्त पत्र से यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि कई नई आर्य समाजें उनके प्रयत्न से उधर स्थापित होगई हैं। जो उच्च जात्यभिमानी आर्यों के हाथ का छुआ हुआ भोजन करने से भी घृणा करते थे अब आर्य समाजी बन गये हैं। एक सज्जन ने समुद्र के किनारे ६० बीघा जमीन गुरुकुल तथा औषधालय के लिए दी है। श्री डा० सुखदेव जी ने जो सुप्रसिद्ध समाज सेवी ७० वर्ष से अधिक आयु के सिद्धहस्त चिकित्सक हैं (श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज के पूर्वाश्रम के दामाद) औषधियों द्वारा सेवा के अतिरिक्त विवर्ताहाट मे एक अनाथआश्रम खोला है जहा १०० अनाथों के भोजन रहन सहन आदि का पूर्ण प्रबन्ध है। ऐसी सेवा भावना अनुकरणीय और अभिनन्दनीय है।

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

'सार्वदेशिक' के प्रेमी पाठकों से—

आज कल कागज और छपाई की दुर्लभता तथा मँहगाई के कारण हमारी कठिनाइयां बहुत बढ़ गई हैं तथापि पत्र को शिरोमणि सभा के गौरव के अनुरूप उच्च कोटि का बनाये रखने के लिये प्रयत्न निरन्तर जारी है। प्रत्येक प्रेमी पाठक अपने कम से कम ५ इष्टमित्रों को पत्र का ग्राहक बनाकर हमारे उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हो यह हमारा निवेदन है। दारेसलाम (अफ्रीका समीपस्थ) आर्य समाज ने लगभग २० ग्राहक बनाकर एक अनुकरणीय उदाहरण रखा है।

—व्यवस्थापक "सार्वदेशिक"

उपदेशक की आवश्यकता

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद स्टेट को एक दृढ़ आर्य समाजी विद्वान् तथा ओजस्वी व्याख्याता की आवश्यकता है। जो आर्य सिद्धान्तों का प्रचार व्याख्यान द्वारा कर सके। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा। प्रार्थना पत्र योग्यता के प्रमाण पत्र सहित १५ दिसम्बर १९४३ ई० तक निम्न पते से आजाना चाहिये।

नरेन्द्र मन्त्री व अधिष्ठाता
वेद प्रचार विभाग
आर्य प्रतिनिधि सभा
सुल्तान बाजार,
हैदराबाद स्टेट

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि का स्वरूप, मुक्ति के साधनआदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ।।=)

(२) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण।-)

(३) उपनिषद् रहस्य

केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यक उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

।-), ≡), =)।।, =)।।, -)।, ≡)।, ।), ।=)।।, २)

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय मे रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिण्टिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष १७ | पौष १९९९ | जनवरी, १९४३ ई०] [दयानन्दाब्द ११८ | अङ्क ११

* वैदिक प्रार्थना *

ओं सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।

सनिं मेधामयासिषं स्वाहा ॥

शब्दार्थ —(अद्भुतम्) अत्यन्त अद्भुत वा आश्चर्य स्वरूप गुण कर्म स्वभाव वाले (सदसस्पतिम्) संसार के स्वामी (इन्द्रस्य) जीवात्मा के (काम्यम् प्रियम्) कामना करने योग्य प्रिय परमात्मा से (सनिम्) सत्यासत्य, धर्माधर्म, पाप-पुण्य इत्यादि का ठीक विवेचन करनेवाली (मेधाम्) शुद्ध बुद्धि की (अयासिषम्) प्रार्थना करता हूं (स्वाहा) मैं उस परमात्मा के प्रति अपनें आपको पूर्ण रूप से समर्पण करता हूं तथा मेरी वाणी सदा उत्तम सत्य शब्दों का ही उच्चारण करती रहे ।

विनय—हे संसार के अद्भुत स्वामिन् ! आप ही वस्तुत पवित्र जीवात्मा के लिये सब से अधिक प्रिय मित्र हैं। हम आप से यह प्रार्थना करते हैं कि आपकी कृपा से हमें विवेकपूर्ण शुद्ध बुद्धि प्राप्त हो जिस से हम कल्याण मार्ग पर चल सकें । हमारा जीवन पवित्र हो कर आपके प्रति पूर्णतया समर्पित हो ।

वेदामृत—

श्रद्धा ही तरन तारन है

(लेखक—स्व० श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज)

ओ३म् कस्तमिन्द्र त्वा वसवामर्त्यो दधर्षति ।
श्रद्धा हि ते भगवान् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥ (साम प्र० ३। अर्द्ध २।१।८)

"हे सबके निवास स्थान, सबके स्वामी परमात्मन्! उसका कौन मरण धर्मा (मनुष्य) ग्रहण कर सकता है? हे सर्वपूज्य! तेरा ज्ञानी पुरुष ही (ऊपर उठ कर) द्यु लोक में श्रद्धा द्वारा ज्ञान में जीवन डालता है।"

यह और वह दोनों का ही मेल नैतिक जीवन में अनुभव होता है। ससार को स्वप्नवत् समझने वाले मनमाने ब्रह्मज्ञानी को भी शारीरिक तथा मानसिक क्लेश, झटका देकर जगा देते हैं। तब पता लगता है कि यह और है और वह और। यह शरीर परिवर्त्तनशील, नाशवान् और वह एक रस, अनादि अनन्त। आकाश और पाताल का अन्तर है। परन्तु वह आंखों से दिखाई नहीं देता इन कानों से सुनाई नहीं देता, इन इन्द्रियों का ग्राह्य नही और ग्राह्य हो भी कैसे सकता है? जो इन्द्रियों का विषय न हो, जो मन के वश में न आने वाला हो, जो बुद्धि से भी परे हो, जो सूक्ष्म वस्तुओं से भी अधिक सूक्ष्म हो, उसे कौन मरणधर्मा प्राणी अपनी परिमित बुद्धि की सीमा में बाध सकता है?

तब विवश, तपहीन, गिरा हुआ मनुष्य और भी नीचे गिर जाता है अपनी निर्बलताओं का एक ओर ज्ञान और दूसरी ओर आश्रय का अभाव देखकर उसे चारों ओर अन्धकार प्रतीत होता है। हाय प्रकाश! हाय प्रकाश! यह आर्त्त-नाद आकाश मे गूञ्जने लगता है। ऐसी अवस्था में शायद ही कोई विरला तपस्वी हो, जिसका सिर घूमने न लग जाय। एक ओर अन्त करण में अपनी निर्बलता, अपनी निस्सहाय अवस्था का प्रत्यक्ष ज्ञान, और दूसरी ओर उस निबलता को दूर करने वाले की आवश्यकता का अनुभव परन्तु प्रत्यक्ष में उसका अभाव सा। आखें चौंधिया जाती हैं, कान बहरे हो जाते हैं, बुद्धि चकरा जाती है, तब व्याकुल जीवात्मा उस आशा के प्रकाश की रेखा को भी भुलाने का प्रयत्न करता है जो प्रकाश की रेखा उसको किसी ज्योति-स्तम्भ का पता दे रही है। उतना प्रकाश भी आखों को चौंधिया रहा है। तब व्याकुल जीवात्मा हठात् आँखें बन्द कर लेता है।

मूदौ आंख कतहुँ कोऊ नाहीं।

परन्तु अविद्या में ग्रस्त भूल जाता है कि चूहे के आख मूदने से क्या बिल्ली से छुटकारा हो सकता है? आखें मूद कर मृत्यु के मुह में घुसा चला जाता है। भोले मूर्ख! ससार को भले ही

धोखा दे ले परन्तु सत्य को कौन धोखे में डाल सकता है ? बन्द हुई आखें भी खुलने लगती हैं। मौत समीप आती है और आख प्रयत्न करने स भी मूदी नहीं जा सकतीं। यदि मर जाय तब भी तो उसके सम्बन्धी जड़ अवस्था में बल से आखें बन्द कर देवें, परन्तु वहा तो अभी सिस कता पड़ा है। आखों की पुतलिया घूमती हुई निराशा के स्वरूप में डरावनी मालूम होती है।

यह भयानक अवस्था ससार को डावाडोल कर देती है। एक का बिलाप सैकड़ों की शान्ति का नाश करने के लिए पर्याप्त है। तो क्या करोड़ों का मानसिक रोना पशुपक्षी तथा वनस्पति तक के हृदयों को न दहलाता होगा ?

यही दीनदशा ससार की देखकर उसका ज्ञान रखने वाले, उसी का नित्य दर्शन करने वाले तथा उसी मे अपने आपकी स्थिति समझने वाले ज्ञानियों के हृदय करुणारस की मूर्ति बन जाते हैं। तब वे अपने गिरे हुए भाइयों को उठाने के लिए ज्ञान की बाहु पसार देते हैं। भाइयों को उठाने की प्रबल इच्छा भी है, उसके लिए प्रयत्न भी है किन्तु केवल ज्ञान रूपी बाहु अशक्त सिद्ध होती है। उठने के स्थान मे वे गिरे हुए आत्मा, उस ज्ञानरूपी बाहु को खींचने लगते हैं। उस समय देवी सरस्वती का विकाश होता है और उसकी प्रदान की हुई श्रद्धा रूपी अमृत-धारा का स्रोत खुल जाता है। मरते हुओं के अन्दर जीवन आ जाता है और वे अपने उठाने वाले बड़े भाई को स्वय अपने उठने मे सहायता देते हैं और तब भाई भाई के हाथ मे हाथ दिए जीवन स भरपूर एक होकर कहते हैं—

श्रुतिमात्ररसाः सूक्ष्माः प्रधानः पुरुषेश्वरः।
श्रद्धा मात्रेण गृह्यन्ते न करेण न चक्षुषा॥
श्रद्धाविधि समायुक्तं कर्म यत्क्रियते नृभिः।
सविशुद्धेन भावेन तदानन्त्याय कल्पते॥

अर्थात् वेद प्रतिपाद्य जीवेश्वरादि सूक्ष्म विशेष का ग्रहण हाथ आख आदि बाह्य इन्द्रियों से नहीं हो सकता है। वह तो श्रद्धा द्वारा ही हो सकता है मनुष्य श्रद्धा युक्त होकर पवित्र भाव से जो वेदशास्त्र विहित कर्म करते हैं उसी स मोक्ष की प्राप्ति के योग्य बनते हैं। ('मुक्ति सोपान' से)

अध्यात्म सुधा

अपने चेतन स्वरूप को मत भूलो

(लेखक—स्व० स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज)

ओ३म् । न विजानामि यदि वेदमस्मि निण्यः सन्नद्धो मनसा चरामि। यदा मागन्प्रथमजा ऋतस्यादिद्वाचो अश्नुवे भागमस्याः ॥ अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः । ता शश्वन्ता विषूचीना वियन्ता न्य१न्यं चिक्युर्न निचिक्युरन्यम् ॥ऋ० मं० १ सू० १६४ । मं० ३७ । ३८ ॥

"ठीक जैसा हू वैसा नहीं जानता कि यह मैं हूँ, (किन्तु) विचार से ठीक बंधा हुआ (जब) अन्तर्हित हो विचारता हूँ (तब पता लगता है कि) जब पहिले प्रकाशित हुए पच भूत मुक्त जीवात्मा को प्राप्त हुए, उसके पीछे ही मै सत्यज्ञान और (उस सत्यज्ञान को दूसरों तक पहुँचाने वाली) इस वाणीरूपी भाग को प्राप्त होता हूँ। ३७।

मैं क्या हूँ । यह प्रश्न सृष्टि के आदि काल में जैसे आकाश मे गूँज उठा था वैसा ही आज भी वायुमण्डल में भरपूर हो रहा है। सब कुछ मेरे लिए ही है मै सर्वोपरि हू, मै ही सृष्टि का स्वामी हूँ। इस प्रकार की अन्धी लहरें किस हृदय के अन्दर नहीं उठ चुकीं ? किन्तु क्या उस लहर में बहे जाते हुए, कभी यह भी विचार किया है कि मैं वास्तव में क्या हूँ ? जब वह विचार उत्पन्न होता है तभी तो अन्दर की आखों के पट खुलते हैं और मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को देखने का प्रयत्न करता है। जिस प्रकार बल से फैंकी हुई लहरें सामने से टक्कर लगने पर एक दम पीछे हटकर गिर पड़ती हैं, वैसे ही मनुष्य को इस विचार रूपी लहर की एक प्रबल टक्कर लगती है। इतिहास में प्रसिद्ध आंग्ल राजा की तरह जब वह उन्मत्त होकर जल वायु तक को शासन की धमकी देने लगता है तब इन दैवी शक्तियों से पटखनी खाकर कहीं का कहीं जा गिरता है। अब न वह ऊर्ध्वारोहण है, और न आकाश की सैर, अब पाताल की सुधि लेने जा रहा है। हैं! कहा चला गया ? कहाँ तेज और कहा मैं ? मिट्टी का जब हू तब मिट्टी ही मैं क्यों न आनन्द ढढू ?

पच भूतों का शरीर प्राप्त करके ही तो मैं मन और वाणी का स्वामी बना। तब यही मेरे स्वामी हैं। इनका हो रहूँगा तो आनन्द मिलेगा। यह आकाश मे उड़ना अब दूर हो गया। मिट्टी में लथपथ होकर मिट्टी ही बन गया। जब भौतिक जगत् को सर्वथा स्वप्नवत् जानता था, जब अपने आपको ही सर्वोपरि समझता था तब एक प्रकार का आल्हाद था, तब कोई बलात् नीचे तो नहीं

धकेल रहा था। किन्तु अब तो बोझ के मारे दब रहा है। उठ सकता नहीं, अपने आपको जड़ का बना समझ कर चेतनता को जवाब दे बैठा है। देखते हुए भी नहीं देखता है, सुनते हुए भी नहीं सुनता है, जीते हुए अपने आपको धोखा दे बैठा है। अपने आपको भौतिक समझता हुआ जिधर भौतिक भोग ले जाते हैं उधर ही चल देता है। अन्दर वाला अपने स्वरूप को कभी ? समझने लगता है, उसे चेतनता का भ्रम सा होने लगता है, परन्तु भोग रूपी जादू की छड़ी फिर सिर पर घूम जाती है, और वह उसी के इशारे पर उल्टा सीधा होता हुआ विविध प्रकार की बोलियां बोलने लगता है। हा! मरणधर्मा शरीर के साथ मिल कर अमर की कैसी शोचनीय दशा हो गई है? ऐसे विकट समय में भगवती श्रुति मधुर स्वर से कैसा शान्ति दायक उपदेश देती है। "अन्नादि भोग पदार्थों से उल्टा सीधा होता हुआ मरण धर्म रहित जीवात्मा, मरण धर्म सहित शरीरादि के साथ एक स्थान वाला हो रहा है। इन दोनों के मिलाप का ही परिणाम गति और अनेक प्रकार की क्रिया करना है। एक (इस रहस्य) को निरन्तर जानते और दूसरे नहीं जानते हैं।"

मुर्दा क्या जान सकता है? सजीव मनुष्य ही कुछ जान सकता है। अविद्वान् उठेगा तो उठता ही रहेगा और यदि गिरेगा तो कीचड़ में लथपथ होकर सड़ाद का कीड़ा हो जायगा। किन्तु विद्वान् जानता है कि वह क्या है। वह अपने स्वरूप को पहचानता है। वह जानता है कि पांच भौतिक शरीर रूपी साधन को लेकर ही वह इस जगत् में अपना उद्देश्य पूर्ण करने के लिए आया है किन्तु साथ ही वह भली प्रकार अनुभव करता है कि वह जड़ नहीं है। प्रकृति के साथ जिस प्रकार परम पुरुष का मेल सनातन है उसी प्रकार जीवात्मा का सम्बन्ध भी प्राकृतिक जगत् के साथ सदा रहता है। इस लिये प्रकृति का सवथा भुला कर वह अपने स्वरूप को ही भूल जाता है जिसका परिणाम दुःख होता है। भौतिक शरीर रखते हुए जिन भूले भटकों ने इन्द्रियों को भोगों से सर्वथा जुदा रखा उन्होंने ठोकर खाई। रुकावट सामने आने पर जब उनकी इच्छाओं को पलटा मिला तो वे दूसरी सीमा पर पहुँच कर नियमों के ही दास हो गये। उन्होंने सवथा भुला दिया कि वे अमर हैं और आत्मा हैं। इसी लिये श्रुति ने स्थान २ पर समता की अवस्था स्थिर करने का उपदेश दिया है। वेद का उपदेश सर्व काल मे स्मरण रखने योग्य है। भौतिक शरीर को भौतिक भोजन की जितनी आवश्यकता है उससे बढ़ कर मानसिक शरीर को आत्मिक भोजन की आवश्यकता है। इस लिये, हे आत्मा के स्वामी और ज्ञान के भण्डारी! अपने निज रूप को हम प्रकाशहीन दीनों के लिए प्रकाशित करो जिससे हम आपके प्रकाश रूपी दर्पण में अपने स्वरूप को देख कर उसकी वास्तविक उन्नति का प्रयत्न करते रहें।

श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी के संस्मरण

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम ए रिटायर्ड चीफ जज प्रधान सार्वदेशिक सभा)

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का नाम आर्य समाज के इतिहास में सदा अमर रहेगा। आर्य समाज के प्रथम श्रेणी के पुराने नेताओं में उनका उच्च स्थान था।

लिखित और मौखिक प्रचार, प्रबन्ध और संगठन, दलितोद्धार और शुद्धि, तथा शिक्षा आदि सभी विभागों मे उनका कार्य्य बहुत महत्त्वपूर्ण था और राजनैतिक क्षेत्र में कम महत्त्व का नहीं था।

शिक्षा—के सम्बन्ध में स्वामी जी का नाम केवल आर्य समाज नहीं किन्तु भारतवर्ष की शिक्षा के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखे जाने योग्य है।

आर्य्यावर्त की प्राचीन शिक्षा प्रणाली गुरुकुल शिक्षा प्रणाली थी, इस में किसी को सन्देह नहीं। ऋषि दयानन्द ने अपने "सत्यार्थ प्रकाश" में उसका संक्षेप से उपदेश दिया। परन्तु उसको कार्य्य रूप में परिणत करने का श्रेय स्वामी श्रद्धानन्द जी को ही है। जब उन्होंने सन् १८९८ में गुरुकुल खोलने का प्रण किया तो बहुत से आर्य्य उनके विचार वा योजना को दुःसाध्य और कुछ लोग तो असाध्य ही समझते थे। हर नये काम के लिये पहला प्रश्न धन का होता है। स्वामी जी ने अगस्त १८९८ मे अपने "सद्धर्म प्रचारक" पत्र में यह घोषणा कर दी कि वे जब तक गुरुकुल के लिये ३० हजार रुपया इकट्ठा न कर लेंगे तब तक घर में पैर नहीं रक्खेंगे। और देश भर मे दौरा किया। उनकी भीष्म प्रतिज्ञा पूरी हुई और कुछ ही समय में ४००००) इकट्ठा हो गया।

सन् १९०२ में कांगड़ी में गुरुकुल की स्थापना हुई। मैं १९०२ से १९०५ तक गढ़वाल जिले के लैंसडौन इलाके में डिप्टी कलक्टर रहा। इस लिये मुझको पहले तीन वर्ष तक गुरुकुल के उत्सवों में शामिल होने का वहीं से सुअवसर मिलता रहा। स्वामी जी की मेरे ऊपर विशेष कृपा थी। सन् १९२० में जब मैंने कटारपुर की घटना के कारण डिप्टी कलक्टरी पद से त्याग पत्र दिया तो स्वामी जी की इच्छा थी कि मैं उनके स्थान में कांगड़ी गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता व आचार्य्य पद का भार लेलू और स्वामी जी ने इस प्रस्ताव को पंजाब आर्य प्रतिनिधि की अन्तरंग सभा में रक्खा। परन्तु कई कारणों से ऐसा न हो सका और उस समय मुझ को वृन्दावन गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता का पद जो तब रिक्त था सम्हालना पड़ा।

ब्रह्मचर्य्य का पालन आदि गुरुकुल के कतिपय अन्य महत्त्वपूर्ण गुणों के अतिरिक्त गुरुकुल शिक्षा का एक विशेष उद्देश्य यह है कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिये।

आज कल यह विषय विवादस्पद नहीं समझा जाता और इस को कुछ अंश में सरकार ने भी मान लिया है। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के समय में इस बात को बहुत से सुशिक्षित लोग भी सर्वथा असम्भव मानते थे। देश वा जनता तथा कुछ अंश तक विदेशी सरकार की भी मनोवृत्ति मे इस शुभ परिवर्तन का श्रेय आर्य समाज ही को और स्वामी श्रद्धानन्द जी को रहेगा।

आर्य समाज के सगठन की पूर्त्ति मे भी स्वामी जी ने विशेष प्रयत्न किया। प्रान्तिक प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना हो जाने पर सभी आर्य नेताओं को इच्छा उनके प्रतिनिधियों से बनी हुई एक सार्व भौमिक सभा स्थापित करने की थी। सन् १६ ६ मे श्रीमती परोपकारिणी सभा ने सब प्रान्तों के नेताओं को निमन्त्रित किया और इस विषय पर विचार हुआ। महात्मा मुंशीरामजी ने कहा कहाथा कि यदि परोपकारिणी सभा जैसी बनी बनाई सभा पूर्वोक्त कार्य्य के लिये मिल जाय जो ऋषि दयानन्द की स्थापित की हुई है, और जिस के पास धन भी है, गौरव भी है तो किसी नई सभा के स्थापित करने की क्या आवश्यकता है। इस उद्देश्य से उपस्थित नेताओं में से चुन कर ७ सज्जनों की एक उप समिति बनाई गई जिस के सयोजक वा अध्यक्ष श्री पूज्य नारायण स्वामी जी (उस समय के श्री नारायणप्रसाद जी) थे। इस उपसमिति ने सर्व सम्मति से कुछ बातें निश्चय कर के परोपकारिणी सभा में पेश कीं जिन का सारांश यह था कि यदि सभा के रिक्त स्थानों की पूर्त्ति प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा के निर्वाचित प्रतिनिधियों से इस प्रकार की जाय कि श्रीमती सभा के ⅔ सभासद् ऐसे निर्वाचित प्रतिनिधि हों तो पूर्वोक्त उद्देश्य पूरा होना सम्भव है। परन्तु श्रीमती परोपकारिणी सभा ने उक्त प्रस्तावों को स्वीकार नहीं किया। इस प्रकार श्रीमती सभा को आर्य समाजों की एकमात्र शिरोमणि सभा बनने का अवसर जाता रहा। सन् १६०८ मे देहली में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना हो गई जिस के प्रथम प्रधान स्वा० श्रद्धानन्द जी हुए और जीवन के अन्त समय तक इस सभा के प्रधान निर्वाचित होते रहे।

श्री स्वामी जी ने ७० वर्ष की आयु तक अनथक परिश्रम और उद्योग कर के देश और धर्म की विविध प्रकार से सेवा की, और अन्त मे एक हत्यारे की पिस्तौल से प्राण विसर्जन कर के वे अमर पद को प्राप्त हुए। ईश्वर हम सब को ऐसा उत्साह देवे कि हम स्वामी जी के जीवन से शिक्षा प्राप्त कर के अपने २ जीवन को उन्नत करें और देश व समाज की अधिकाधिक सेवा के योग्य बनें।

श्रद्धाञ्जलि

(समर्पक—श्री प० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार गुरुकुल कांगड़ी)

मानवता शून्य महीपर, तुम आये मानव बनकर ॥
प्रभु की सर्वोत्तम रचना, जब विकल कराह रही थी,
पद पद पर ठोकर खाती, पा किन्तु न राह रही थी
जब देव दूत भी कितने, थे आये दानव बनकर,
मानवता शून्य मही पर तुम आये मानव बनकर ॥ १ ॥

निश्चिन्त शान्ति की मदिरा पीकर सुरगण थे सोये
अपने ही सुख सुपनों की, रजनी मे खोये खोये,
यह त्राहि त्राहि करती थी, जब वसुधा रौरव बनकर
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बनकर ॥ २ ॥

उठ जा ऐ पापी प्राणी, चरणों में आजा मेरे,
प्रभु का इकलौता बेटा मै कष्ट हरूंगा तेरे
देखो यह अभी हँसेगी, दुनिया उपवन नव बन कर",
मानवता शून्य मही पर तुम आये मानव बन कर ॥ ३ ॥

सन्देश शान्ति का लेकर, यह आये प्रेम पुजारी
उस विश्व प्रेम की मानस में, सुलगादी चिनगारी
जगती को जला रही है, जो आज महादव बनकर
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बन कर ॥ ४ ॥

ले खड्ग लेखनी कोई लिख गये रक्त की स्याही—
से विश्व भ्रातृता की हा अति करुण कथा अनचाही,
पृथिवी के वक्ष स्थल पर पैगम्बर भैरव बनकर।
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बन कर ॥ ५ ॥

भारत के मलिन गगन में, अकुता रजनी मतवाली
घुनती ही जाती थी जब, वह आली काली काली,
दीपक ही बढ़ा रहे थे जब तम को विसव बन कर
मानवता शून्य मही पर तुम आये मानव बनकर ॥ ६ ॥

गीत

[रचयिता— श्री उमाकान्त गुप्त "किरण" M A M S सि० शास्त्री आयुर्वेदाचार्य्य]

(१)

कवि, गा मस्ती के गीत आज।
गीतों में हो उन्माद अनिल,
गा गा के हो उत्थान करिल,
उन भावों मे हो अन्तराग
बीते जीवन का एक साज
कवि, गा मस्ती के गीत आज।

(२)

जागृत करदे जो जीवन को
झंकृत करदे जो प्रिय मन को,
आशा लतिका खिल जावे फिर,
मस्ती गावे सारा समाज।
कवि गा मस्ती के गीत आज।

(३)

देखो उसम है अजब शान,
करतल गत कर लो आन-बान
बिखरे न अरे इन गीतों मे,
तेरे जीवन की एक लाज।
कवि, गा मस्ती के गीत आज।

अचल से लोकान्तर के ले रवि की किरण सुनहली
भरते नव विकसित सुमनों मे, सौरभ पहली पहली,
जागृति की सुभग उषा के तुम आये शैशव बन कर,
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बनकर ॥ ७ ॥

दुख देख सके दुनिया का, तुम खडे न निष्क्रिय रह कर,
हो सकी न तृप्ति तुम्हारी, कोरी कुछ बातें कह कर
तुम कूद पडे कालिय के फनवन मे केशव बनकर,
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बनकर ॥ ८ ॥

जो गिरे उठाया उनको, बिछुडों को गले लगाया,
थे जो कि मर रहे उन को जीवन का पाठ पढाया
तुम गूंज उठे आशाओं मे विजय शख रव बनकर।
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बन कर ॥ ६ ॥

फल दिये सफलताओं के सुमनों की माला डाली,
जीवन की जोत जगाई, पूजा की खूब निराली,
चढ़ गये उन्हीं चरणों मे, फिर खुद भी पल्लव बनकर।
मानवता शून्य मही पर, तुम आये मानव बनकर ॥ १० ॥

दार्शनिक भूल-भुलैय्यां

(लेखक—श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय एम० ए० प्रधान संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा)

गत लेख में हमने अध्यास की भूल भुलैयों का वर्णन किया था। आज हम नैसर्गिक अविवेक की मीमांसा करेंगे।

श्री शंकराचार्य जी लिखते हैं —

(१) विषयिणस्तद् धर्माणां च विषयेऽध्यासो मिथ्येति भवितुं युक्तम्।

(२)तथाप्यन्योन्यस्मिन्नन्योन्यात्मकतामन्योन्य धर्मांश्चाध्यस्येतरेतराविवेकेनात्यन्त विविक्तयोर्धर्म-धर्मिणोर्मिथ्या ज्ञान निमित्त सत्यानृते मिथुनीकृत्य 'अहमिदं' 'ममेदमिति' नैसर्गिकोऽयं लोकव्यवहार

अर्थात् (१) विषय में विषयी का अध्यास मिथ्या है।

(२) परन्तु अविवेक के कारण एक का दूसरे में अध्यास करते हैं।

(३) यह व्यवहार 'नैसर्गिक है।

श्री वाचस्पति मिश्र भामती में 'नैसर्गिक' का अर्थ करते हैं—

स्वाभाविकोऽनादिरयं व्यवहार । व्यवहारानादितया तत् कारणस्यानादितोक्ता, ततश्च पूर्व-पूर्वमिथ्याज्ञानोपदर्शितस्य बुद्धीन्द्रिय शरीरादेरुत्तरोत्तराध्यासोपयोग इत्यनादित्वाद् बीजांकुरवत्र परम्पराश्रयत्वम्। इत्यर्थ ।

यह व्यवहार स्वाभाविक है और अनादि है। जो चीज स्वाभाविक और अनादि हो उसका कारण कैसा? अनादि तो कहते ही उसको हैं जिसका कारण न हो। जिसमें कारण कार्य का सम्बन्ध है वह अनादि कैसे हो सकता है? परन्तु वाचस्पति जी कहते हैं व्यवहार की अनादिता से उसके कारण की अनादिता बताई। अर्थात् जब अध्यास का व्यवहार अनादि है तो उसका कारण अविवेक भी अनादि हुआ। कहिये 'है न यह भूल भुलैया। यहां यह नहीं बताया कि यह स्वाभाविक और अनादि अविवेक किसका है? यह अविवेकी कौन है और यदि यह अविवेक नैसर्गिक और अनादि है तो दूर कैसे हो सकेगा?

यह बात खटकी तो गोविन्दानन्द और आनन्दगिरि आदि भाष्यकारों को भी थी। परन्तु वह भ्रम की जड़ में कुल्हाड़ा मारना नहीं चाहते थे। भ्रम तो शांकर मत की आधारशिला है। इसको हिलाने का प्रयत्न ही वृथा है। आनन्द गिरि कहते हैं —

नैसर्गिक इति—प्रत्यक् चैतन्य सत्तामात्र—अनुबन्धी। प्रवाह रूपेणानादिरिति यावत्।

अर्थात् अनादि प्रवाह है स्वरूप नहीं, अर्थात् अध्यास का यह अविवेक पूर्वक व्यवहार स्वरूप से अनादि नहीं किन्तु प्रवाह से अनादि है प्रवाह' शब्द अच्छा मिल गया। इससे शंका दूर हो जायगी। परन्तु कैसे? प्रवाह कहते किसको हैं? अविवेक रूपी प्रवाह की धारा बहेगी कहां? गंगा के प्रवाह के लिये नदी का स्थल चाहिये। और वह धारा निरन्तर बहती रहे इसके लिये

गंगोत्तरी का स्रोत चाहिये। केवल प्रवाह कह देने से छुट्टी कैसे मिलेगी ?

आनन्दगिरि कहते हैं —

नच प्रवाहरूपस्य प्रवाहिव्यतिरेकिणोऽसत्त्वात्। प्रवाहिव्यक्तीना च सादित्वात्, कुतो नैसर्गिकत्वमिति वाच्यम॥

अर्थात् एक है प्रवाह दूसरा प्रवाही। प्रवाही व्यक्ति तो सादि हैं अनादि नहीं और प्रवाही से अलग प्रवाह कैसा ? तो इसको नैसर्गिक क्यों कहा ?

गोविन्दानन्द ने रत्नप्रभा मे भी यही प्रश्न उठाया है —

ननु प्रवाहस्यावस्तुत्वात् अध्यासव्यक्तीना सादित्वात् कथमनादित्वमिति चेत्।

आनन्दगिरि का उत्तर सुनिये —

प्रवाहि व्यक्तीनामन्यतमव्यक्त्या विना पूर्वकालानवस्थान कार्येष्वनादितेत्यभ्युपगमात्।

अर्थात् प्रवाही से भिन्नतम वस्तु के बिना पूर्वकाल मे अनवस्था होगी। इसलिए कार्यों में अनादिता मान ली गई

यद्वा कारणरूपेणास्यानादित्वम्। कार्यात्मना नैमित्तिकत्वमिति उभयम् अविरुद्धम्॥

या कारण रूप से अनादित्व हुआ और कार्य रूप से नैमित्तिकत्व।

ये दोनों अविरुद्ध कैसे ? क्या उलझन सुलझ गई या बढ़ गई।

रत्नप्रभा कहती है :—

अध्यासत्व-अवच्छिन्न व्यक्तीना मध्येऽन्यतमया व्यक्त्या विनाऽनादिकालस्यावर्त्तन कार्य्यानादित्वमित्यङ्गीकारात्।

अर्थात् अध्यास से अवच्छिन्न व्यक्तियों में अनादिकाल का आवर्त्तन ही कार्य्य-अनादित्व है। यहा समस्त दोष अनादिकाल को सौंप दिया गया। परन्तु इस से कार्य्य का अनादित्व तो सिद्ध नहीं होता।

परन्तु रत्न प्रभा का स्व-सतोष देखिये :—

एतेन कारणाभावादितिकल्पो निरस्त

अर्थात् कारण के अभाव का दोष नहीं रहा। परन्तु कथ निरस्त ? सस्कारस्य निमित्तस्य नैसर्गिकपदेन उक्तत्वात्।

यहा सस्कार को निमित्त माना। परन्तु सस्कार क्या वस्तु है ? युक्ति शृङ्खला पर विचार कीजिये —

न च पूर्वप्रमाजन्य एव सस्कारो हेतुरितिवाच्यम्।

प्रश्न यह है कि पूर्व प्रमा जन्य सस्कार कैसे आया।

(१) लाघवेन पूर्वानुभवजन्यसंस्कारस्य हेतुत्वात्।
(२) अत पूर्वाध्यासजन्य सस्कारोऽस्तीति सिद्धम्॥

कहते हैं पूर्व अनुभव का सस्कार ही हेतु है, इस से सिद्ध हो गया कि पहले के अध्यास से उत्पन्न हुआ सस्कार होता है।

जिस को पूर्व-अनुभव कहते हैं उसी को पूर्व अध्यास भी।

पाठकों को याद होगा कि शकर स्वामी अभ्यास की नीव स्मृति पर रखते हैं, यह तो उचित ही है क्यों कि बिना स्मृति के अभ्यास कैसा ? जब तक किसी की स्मृति मे सर्प दर्शन का सस्कार न हो वह रस्सी मे साप का अभ्यास करही नहीं सकता। परन्तु यदि शकर स्वामी यह मान लेते कि यह पहला सर्प दर्शन वास्तविक था तो उन का समस्त सिद्धान्त ही असिद्ध हो जाता। बनाबनाया महल बालू की नींव पर स्थित होने के कारण गिर पडता। अत उन्होंने उस का नैसर्गिक अविवेक का पुट दे दिया। अर्थात् यह पहला सर्पदर्शन का सस्कार भी अभ्यास था। अब यदि कोइ पूछे कि इस पिछले अभ्यास के लिये भी तो स्मृति चाहिये। तो उत्तर देंगे कि यह स्मृति किसी दूसरे पूर्व अभ्यास की है। और उस अभ्यास के लिये कोई तीसरा अभ्यास चाहिये। इस प्रकार अभ्यास का प्रवाह अनादि हो जायगा। परन्तु क्या अनवस्था दोष होगा ? इस की क्या परवाह ? अनवस्था ही जिसका सिद्धान्त हो उस को इस का क्या डर ? यदि आप कहें कि पूर्वस्मृति के भी अभ्यास होने का क्या प्रमाण ? तो उत्तर मिलेगा कि हम प्रमाण को ही अविद्या मानते हैं। प्रमाण की हमको क्या परवाह।

क्या पाठक इस को भूलभुलया न कहेंगे ?

शक्ति का स्रोत संघर्ष

(लेखक— श्री प० कृष्णचन्द्र जी विद्यालङ्कार देहली)

किसी एक आर्य नेता ने एक दीवाली के मौके पर कहा था कि "प्रतिवर्ष आने वाली दीवाली साधारण हिन्दू जनत के लिए भले ही केवल खुशिया मनाने का उत्सव हो, आयसमाज और आर्यजनता के लिए यह उससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है" आर्यनेता के इस कथन मे वस्तुत आधी सचाई है। ऋषि दयानन्द केवल आर्य समाज या सत्यार्थप्रकाश पढने वाली जनता के नहीं हैं और उन के महान् कार्य केवल आर्य समाज तक सीमित नहीं है। उनके विराट रूप ने समस्त भारत में अपूर्व जीवन का सचार किया है और सचमुच भारत मे एक क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया। इसी से वे नवयुग के आचार्य हैं, नवयुग के प्रवर्तक नेता है।

ऋषि की अद्भुत शिक्षा व उनका महान् सदेश यदि आर्यजनता को उत्तराधिकार में मिला है तो उसका उद्देश्य सिर्फ इतना है कि आर्य समाज के द्वारा ऋषि अपने सदेश का प्रचार अधिक सभव मानते थे। वे जिन सिद्धान्तों और मौलिक शिक्षाओं के आधार पर भारत का पुन सगठन करना चाहते थे उनके लिए प्रारभ में एक सीमित समुदाय को सगठित करना आवश्यक था, जिसके जिम्मे वह सब काम छोड कर जा सकते। बस यही उनका आर्य समाज है। आर्य समाज का कर्तव्य है कि वह ऋषि के सिद्धान्तों के आधार पर समस्त जगत् की सेवा करे।

इसमें सदेह नहीं कि ऋषि ने जिन सिद्धान्तों का प्रचार किया, आयसमाज ने अपनी पूर्ण शक्ति के साथ उनको एक व्यापक क्षेत्र तक पहुँचा दिया। कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है, जिसमें आर्यसमाज ने कार्य न किया हो और उसकी शिक्षा का प्रभाव न पडा हो, किन्तु आज भी क्या हम यह कह सकते हैं कि सभी क्षेत्रों मे आर्यसमाज भारत का नेतृत्व कर रहा है। हमे सन्देह है कि अधिक से अधिक आशावादी आर्यसमाजी भी आज इसका उत्तर हाँ मे नहीं देगा। आर्यसमाज की विविध शिक्षाओं को हिन्दूसमाज ने आज से १५ २० साल पूर्व जिस सीमा तक अपना लिया था उससे अधिक उनके प्रचार में आय समाज सफल नहीं हो रहा। आज हिन्दू समाज की स्फूर्ति का स्रोत आर्यसमाज नहीं रहा, वह स्फूर्ति तो ले रहा है उस दिशा में उन्नति तो कर रहा है किन्तु सचाई यह है कि उसका श्रेय आर्यसमाज को नहीं दिया जासकता। इसका सबसे बडा प्रमाण यह है कि (दक्षिण भारत की चर्चा छोड दीजिये) उत्तर भारत में आर्य आर्यसमाजियों—केवल रजिस्टर पर नाम लिखाने वालों की नहीं, बल्कि उसके सिद्धान्तों को वस्तुत स्वीकार करने वालों की सख्या बढ नहीं रही। यदि बढ भी रही है, तो वह आर्यपरिवारों

में से ही वृद्धि हो रही है न कि पौराणिक हिन्दू परिवारों में से। इसके विपरीत बहुत से वृद्ध दृढ आर्यसमाजियों की नयी युवक सन्तति में आर्य समाज के प्रति आस्था लगातार कम होती जा रही है। पुराने आर्य नेताओं ने जो यहां की पूंजी कमा ली है, उसी का उपयोग वह आज भी कर रहा है।

आखिर, इस दुःखमय परिवर्तन का कारण क्या है? मेरा ख्याल है कि किसी संस्था या व्यक्ति का उत्साहयुक्त जीवन ही सबसे बड़ा आकर्षण हो सकता है और यह उत्साह आता है संघर्षमय जीवन से। जब तक आर्यसमाज लोकप्रियता की उपेक्षा किये बिना संघर्ष में से गुजरता रहा, वह लोकप्रिय होता रहा और जब उसने लोकप्रियता की खातिर संघर्ष से बचने की कोशिश की, उसकी लोकप्रियता और आकर्षणशीलता भी कम होती गई। आज कांग्रेस की लोकप्रियता व आकर्षणशीलता का मुख्य कारण उसका संघर्षमय जीवन है। आर्य समाज ने हैदराबाद में संघर्षयुद्ध किया और दक्षिण भारत में उसे सफलता भी मिली। साधारणतः आर्यसमाज और उसके अधिकारी संघर्ष से बचते रहते हैं और उसके नेताओं ने जो लीक बनादी है, उसी पर चलते रहना निरापद समझते हैं। नये मार्ग प्रदर्शन के लिए आवश्यक संघर्ष शक्ति व उत्साह का उनमें अभाव है।

हम रचनात्मक कार्य की निन्दा नहीं करते, वह भी आवश्यक है। किन्तु आज भी हिन्दू समाज में सैकड़ों ऐसी बुराइयां हैं, जिनके विरुद्ध युद्ध करना पड़ेगा। सम्भव है कि उसके कारण आर्य समाज व उसके कार्यकर्ताओं को संघर्ष में कष्ट में से गुजरना पड़े, अपने सगे सम्बन्धियों और भाइयों का विरोध सहन करना पड़े, किन्तु इसके सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। संघर्ष के पालने में ही वह फला फूला है और इसी से उसने शक्ति प्राप्त की है। आज भी उसे इसी संघर्ष से ही शक्ति प्राप्त हो सकती है।

संघर्ष से मेरा अभिप्राय जिस किसी से लड़ने-भिड़ने का नहीं है और न मूर्ति पूजा व श्राद्ध के सिद्धान्तों पर पौराणिक भाइयों से सिर फुटव्वल करने का है मेरी नम्र सम्मति में बाल विवाह मृतकभोज, अनमेल विवाह आदि सामाजिक कुरीतियों तथा राजनीतिक दासता के विरुद्ध अब भी मजबूत कदम उठाया जा सकता है। लेख बढ़ जाने के भय से इस के विस्तार में मैं न जाकर आर्य नेताओं से इस दिशा में सोचने और विचार करने का अनुरोध अवश्य करता हूँ।

[श्री प० कृष्णचन्द्र जी ने यह लेख 'सार्वदेशिक के ऋष्यङ्क के लिये लिखा था। खेद है कि देर में पहुँचने के कारण उसे ऋष्यङ्क में प्रकाशित न किया जा सका था। लेख में जो विचार प्रकाशित किये गये हैं उन में कहीं कहीं कुछ अतिशयोक्ति प्रतीत होती है तथापि उन पर गम्भीर विचार करने की आवश्यकता है। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध युद्ध करना वस्तुतः अत्यावश्यक है। सम्पादक सा० दे०]

नेताओं की श्रद्धाञ्जलियां

सच्चे महापुरुष स्वा० श्रद्धानन्द जी

(लेखक—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी रामगढ़)

श्री स्वामी श्रद्धानन्द सच्चे अर्थों मे एक महापुरुष थे। आर्य धर्म और आर्य संस्कृति के लिए उनके हृदय मे बड़ा दर्द था उन्होंने अपना सर्वस्व अपने इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये न्यौछावर कर दिया था। गुरुकुल कांगड़ी उनकी अमर कीर्ति है। इस संस्था के लिए उन्होंने अपनी आयु का बड़ा मूल्यवान् भाग खर्च किया था और वे जो कुछ भी कर सकते थे उसके करने मे कुछ भी कसर नहीं उठा रक्खी थी—जैसी लग्न उनके हृदय मे थी यदि इसी प्रकार के उन्हें अध्यापक मिल गये होते तो आज गुरुकुल की और अवस्था होती।

पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी

(लेखक—डा० बा० शि० मुञ्जे प्रधान मन्त्री भोंसला मिलिटरी स्कूल नासिक)

"स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दू समाज के महान् व्यक्तियों में से एक थे। हिन्दू समाज उनको हमेशा पूज्य मानता था। हिन्दुस्तान के हिन्दू-मुसलमानों को फिर से अपने पूर्वजों के हिन्दू-धर्म मे दीक्षित करना यह वे अपना पवित्र कर्तव्य समझते थे। उन्होंने कभी भी मुगलों के राज्य में जैसा जुलुम जबरदस्ती से हिन्दुओं को मुसलमान किया जाता था उस प्रकार का कार्य करना योग्य नहीं समझा। हमेशा वे हिन्दू-मुसलमानों को हिन्दुस्थान का मुगल राज्य का इतिहास बताकर और हिन्दू धर्म की पवित्रता समझाकर उनका मन परावृत्त करते थे और फिर उनको हिन्दू-धर्म की शिक्षा देते थे।

इस प्रकार अपना कर्तव्य उचित प्रकार से करने की दृढ़ता से आजकल के मुसलमानों को बड़ा क्रोध आया और उनमें से एक ने स्वामीजी को बिस्तरे में बिमारी से असहाय पड़े होते समय पिस्तौल से उनको कतल किया।

हिन्दू समाज इस बात को कभी भूल सकता नहीं जैसा महमूद गजनवी ने सोरटी सोमनाथ पर आक्रमण कर वहा का मन्दिर तोड़ा और प्रतिमा का विध्वस किया। उसी प्रकार यह स्वामीजी के जीवित शरीर पर का आक्रमण है। जैसा हिन्दू समाज सोरटी सोमनाथ भूल नहीं सकता, उसी प्रकार यह स्वामीजी के शरीर पर के आक्रमण की कृति भी भूलेगा नही। परमेश्वर स्वामीजी के आत्मा को सद्गति देवे, और हिन्दू-समाज अपने ऋणों से मुक्त होवे।"

धार्मिक-चर्चा

(लेखक—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)

'सार्वदेशिक' पत्र मास नवम्बर १६४२ के पृष्ठ ३६४ पर शका समाधान शीर्षक से मास्टर लक्ष्मण जी आर्योपदेशक देहली ने मेरे अक्टोबर मास वाले प्रश्न का उत्तर दिया है। मैंने उस लेख को पूरे ध्यान से पढा है। उस लेख मे तीन चौथाई भाग ऐसा है जिसका मेरे प्रश्न से सम्बन्ध ही नहीं है और शेष भाग में जो उत्तर दिया है उसके पढने से प्रतीत होता है कि श्री मास्टर जी ने मेरे प्रश्न को ध्यान से नहीं देखा अथवा मै अपना भाव समझाने में असफल रहा हूँ, अत मै पुन लिख कर अपना भाव समझाने का यत्न करता हूँ।

अविद्या शब्द के अर्थ सत्यार्थप्रकाश मे कर्मोपासना लिखे हैं और सब ही टीकाकार वही अर्थ करते हैं अत मै और श्री मास्टरजो भी अविद्या के अर्थ कर्मोपासना ही मानते हैं। कर्मोपासना करने वाले इस साधन से मृत्यु को तर जाते हैं इसमे भी मतभेद नहीं है। मत भेद इसमे है, जिस अविद्या से मृत्यु को तर जाते हैं वह अविद्या योग दर्शन प्रतिपादित "अनित्या शुचि दु खानात्म सुनित्य शुचि सुखात्म ख्यातिरविद्या है वा नहीं। मास्टर जी कहते है यही है मैं कहता हू यह नहीं है, क्योंकि यह अविद्या तो क्लेश है इससे मृत्यु तरना असम्भव है। इसी अविद्या को न्याय दर्शन में "मिथ्या ज्ञान" लिखा है।

श्री मास्टर जी ने लिखा है —

यह याद रहे कि विवादस्पद वेद मन्त्र में विद्या और अविद्या का स्वरूप लक्षण नही दिया गया उनका फल बताया गया है यह ठीक है मृत्यु तीर्त्वा फल है। प्रश्न यह है यह फल किस अविद्या का है अनित्याशुचि का वा किसी और का जिसका यह फल है यहा उसी का उल्लेख होना चाहिए। मेरी सम्मति मे अनित्याशुचि का फल मृत्यु तरना नहीं है अत इस सूत्र को यहा से उठाकर इसके स्थान पर ही रखना चाहिये।

मै समझता हूँ मैने अपने भाव को समझाने में कुछ लम्बा लिख दिया है ताकि श्री मास्टरजी को भ्रम न रहे कि मै क्या चाहता हू और आशा करता हू श्री मास्टरजी मेरे भाव को समझ जायेंगे। यदि अब भी मैं समझाने में असफल रहा तो सम्भव है किसी समय मौखिक बात करनी पडे।

यदि सम्पादक महाशय उचित समझें तो छाप दें, परन्तु मै इस विषय को लम्बा करना नहीं चाहता हू अब मैं श्री मास्टरजी को पुन उत्तर न दू गा यदि किसी अन्य सज्जन ने कुछ लिखा तो सम्भव है कुछ लिखू अन्यथा चुप ही रहूगा।

शंकासमाधान

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० प्रयाग)

मैंने अक्टूबर तथा नवम्बर मास के सार्वदेशिक में श्री स्वामी स्वतत्रानन्दजी तथा श्री मास्टर लक्ष्मण जी के 'अविद्या' विषयक लेख पढे। मेरा विचार है कि वेद मत्र में अविद्या का वही अर्थ है जो योगदर्शन में बताया गया है। 'अल्पविद्या' या 'दुष्ट' ज्ञान को भी अविद्या कह सकते हैं क्यों कि ज्ञान की अल्पता और अज्ञान में भेद नहीं, अल्प-उदरा का अर्थ है छोटे उदर वाली, अल्प-धन का अर्थ है, थोड़ा धन, अल्प शक्ति का अर्थ है, थोड़ी शक्ति, परन्तु अल्प ज्ञान का यदि थोड़ा ज्ञान अर्थ लिया जाय तो काम न चलेगा। यदि अल्पज्ञान का अर्थ यह है कि अल्प-ज्ञेय का पूर्ण ज्ञान, तो यह अविद्या नहीं किन्तु विद्या है, यदि अल्प ज्ञान का अर्थ लिया जाय "किसी ज्ञेय का ऐसा ज्ञान जिस में कुछ ठीक है और कुछ बे-ठीक। तो यह भ्रम अर्थात् अविद्या है और इस से कभी मृत्यु से तैरा नही जा सकता। अविद्या यदि 'अज्ञान' है तो भी मृत्यु-तरण मे साधक नहीं हो सकती और यदि भ्रम-पूर्ण या अल्प-ज्ञान है तो भी साधक नहीं हो सकती।

वेद मत्र के शब्दों पर विचार कीजिये—

विद्या चाविद्या च यस्तद्वेदोभय सह।
अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥

(य) जो (तद् उभय) उन दोनो को (विद्या च अवद्या च वेद) विद्या और अविद्या दोनों के "स्वरूप को साथ ही साथ जानता है।" यहा तात्पर्य एक ही मनुष्य से है जो विद्या के स्वरूप को भी जानता है और अविद्या के स्वरूप को भी। ऐसे मनुष्य को दो काम करने हैं मृत्यु से तैरना और अमृत की प्राप्ति। पहले उद्देश्य का साधन होगा "अविद्या के स्वरूप का ज्ञान।" दूसरे उद्देश्य का साधन होगा 'विद्या के स्वरूप का ज्ञान"। यह दोनों लक्षण तत्वदर्शी के हैं। अविद्वान् न तो अविद्या के स्वरूप को समझता है न विद्या के स्वरूप को। विद्वान् दोनों के स्वरूप को समझता है। He knows what is error and what is knowledge 'अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा' का अर्थ है 'अावद्याया ज्ञानेन मृत्यु तीर्त्वा"। यहा ऊपर से 'वेद' शब्द की अनुवृत्ति लेनी चाहिये। इसी प्रकार 'विद्ययाऽमृतमश्नुते' का अर्थ होगा "विद्याया ज्ञानेन।" यहा भी वेद' शब्द की अनुवृत्ति है। यदि ऐसा न होता तो 'उभय वेद' निरर्थक हो जाता। यदि अल्पज्ञान या अज्ञान से मृत्यु तैरी जासकती तो समस्त मूर्ख मण्डल मृत्यु को तैर सकता। मृत्यु पर विजय और अमृत की प्राप्ति मे बहुत बड़ा अन्तर नहीं। एक पहली मजिल है और दूसरी दूसरी मजिल। मृत्यु को तैरते ही अमृत का भान होने लगता है। विद्या और अविद्या दोनों के 'स्वरूप का ज्ञान' एक ही आत्मा को होना है और उसी को ये दोनों मजिलें तै करनी हैं। मैं

समझता हू कि मन्त्र के पहले टुकड़े से 'वेद' शब्द की अनुवृत्ति दूसरे में न लेकर ही शका उत्पन्न हुई है।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि 'अविद्या' का अर्थ 'कर्मोपासना' कैसे हो गया। मेरी समझ में अविद्या का अर्थ 'कर्मोपासना' हो ही नहीं सकता मैंने इस सम्बन्ध में जितने व्याख्यान पढ़े हैं वे सब मुझे असन्तोष प्रद प्रतीत होते हैं। केवल नवीन वेदान्ती ही कर्मोपासना को अविद्या मान सकते हैं, क्योंकि उनके मत मे अविद्या है ही कोई और चीज। इसी आधार पर वे यज्ञों का विरोध करते हैं। हा एक बात है, जो अविद्वान है वह ता निकृष्ट कर्मों (चोरी जारी, असत्य भाषण आदि) मे फसा रहता है और उत्तरोत्तर अधोगति को प्राप्त होता है, परन्तु जो अविद्या के स्वरूप को समझने वाला विद्वान् है वह जानता है कि गत काल मे अविद्या (मिथ्याज्ञान) के के कारण ही उस का जन्म और दुःख आदि भोगने पड़े हैं। न्याय कहता है —

दुःख जन्म प्रवृत्ति दोष मिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये तदनन्तरापायादपवर्गः।

मिथ्याज्ञान के स्वरूप को समझकर वह दुष्ट कर्मों को त्याग कर 'कर्मोपासना' का आश्रय लेता है जिस से मिथ्याज्ञान द्वारा निर्मित बन्धन छूट जाय यही मृत्यु का तैरना है। इसीलिये कहा है कि कर्मोपासना से मृत्यु को तेर सकते हैं।

जो लोग अविद्या का अर्थ लेते हैं अ + विद्या = विद्येतर काण्ड = कर्मकाण्ड (वह काण्ड जो विद्या या ज्ञान काण्ड से इतर है) उनके प्रति मुझे केवल इतना कहना है कि अन्यत्र कहीं अविद्या का यह अर्थ नहीं लिया गया। यह अर्थ शायद शाकर मत के अयथार्थ सिद्धान्त के साथ समन्वय करने के लिये सोचा गया हो।

इस सम्बन्ध मे एक बात और याद रखनी चाहिये। मृत्यु तरण का अर्थ यह नहीं कि मृत्यु हो ही नहीं किन्तु मृत्यु का भय न हो। मृत्यु का भय अविद्या के कारण होता है। जब अविद्या का वह स्वरूप ज्ञात हो गया जिसके कारण मृत्यु से भयभीत हो रहे थे तो फिर मृत्यु आयेगी परन्तु उसका दुःख न होगा।

आचार्य श्रद्धानन्द

(लेखक—श्री प० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार वेदोपाध्याय गुरुकुल कांगड़ी)

[इस लेख के श्री० प० विश्वनाथजी विद्यालङ्कार गुरुकुल के सुप्रसिद्ध और सुयोग्य स्नातक हैं। आपने भी स्वा० श्रद्धानन्दजी के आचार्यत्व का जो स्वानुभव सिद्ध चित्रण किया है वह सर्वथा यथार्थ है। गुरुकुल के अधिकारी और कर्मचारी जब तक और जिस मात्रा तक स्वर्गीय आदर्श आचार्य स्वा० श्रद्धानन्दजी महाराज के चरण चिन्हों पर चलेंगे तब तक और उतनी मात्रा तक ही गुरुकुल अपना महत्व स्थिर रख सकेगा, इसमें सन्देह नहीं। अत हम गुरुकुल और अन्य शिक्षक संस्थाओं के सब संचालकों से निवेदन करते हैं कि वे इस लेख को बहुत ध्यानपूर्वक पढ़कर तदनुसार आचरण करने का दृढ़ निश्चय करें तथा इस विषयक त्रुटियों को आत्म निरीक्षण द्वारा दूर करें। —सम्पादक]

स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दजी की यादगारों में सब से बड़ी यादगार गुरुकुल शिक्षा पद्धति है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति के पुनरुज्जीवन के यश का भागी एक मात्र स्वामी श्रद्धानन्द हैं। स्वामी श्रद्धानन्दजी ने अपने क्रियात्मक जीवन में सदाचार की महिमा को अच्छी प्रकार से समझा था। संसार की बेरुनी परिस्थितियां, सदाचार ब्रह्मचर्य और आत्मिक उन्नति के लिये कितनी घातक हैं, इस का मर्म स्वामी श्रद्धानन्दजी से छिपा हुआ न था।

गुरुकुल पद्धति का पुनरुद्धार स्वामी श्रद्धानन्द की कटु अनुभूतियों का एक स्वाभाविक परिणाम था। स्वामी श्रद्धानन्दने गुरुकुल स्थापित किया। अपने जीवन का उत्तम भाग उसने इस गुरुकुल की स्थापना तथा उसे उन्नत करने में लगाया। स्वामी श्रद्धानन्दजी जब कभी भी परिस्थितियों से दबाये जाकर गुरुकुल छोड़ने पर मजबूर होते थे, तो गुरुकुल से अलग रहते हुए भी उन की आशाओं का एक मात्र केन्द्र गुरुकुल बना रहता था। गुरुकुल से आखिरी छुट्टी पाने पर भी स्वामी श्रद्धानन्द के हृदय से गुरुकुल की वासना कभी दूर नहीं हुई। अपने गुरुकुल के जीवन में स्वामी श्रद्धानन्द या महात्मा मुन्शीराम ने अपना आचार्य पद कैसा निभाया, इसका थोड़े से शब्दों में यहां दिग्दर्शन किया जायगा। आचार्य श्रद्धानन्द गुरुकुल रूपी वाटिका का एक परिश्रमी माली था। उस ने एक २ पेड़ चुन कर उस में लगाया था। अपने ब्रह्मचारियों को गुरुकुल में भेजने के लिये ब्रह्मचारियों के माता-पिताओं को वह अपनी अपूर्व शक्ति से मोहित किया करता था। भर्ती के लिये जब बालक अपने संरक्षकों समेत गुरुकुल आते थे, तो उन के चुनाव की कमेटी में आचार्य श्रद्धानन्द खुद बैठ कर बड़े परिश्रम से ब्रह्मचारियों को चुना करता था, और अपने चुने हुए हरएक ब्रह्मचारी पर न जाने आचार्य की कितनी आशायें

बनी रहती थीं। आचार्य श्रद्धानन्द को यह गुरुकुल बाग बड़ा ही प्यारा था। उस का कभी जी न चाहता था, कि वह उस गुरुकुल से बहुत दिनों के लिये बाहर रहे। कार्यवश बाहर जाना ही हो, तो वह बहुत जल्द अपने गुरुकुल में लौटने का यत्न किया करता था। वह एक दिन भी व्यर्थ गुरुकुल से बाहर रहना नहीं चाहता था। गुरुकुल से बाहर वह जितने दिनों भी रहा करता था, उन दिनों में भी पत्रों द्वारा हररोज़ गुरुकुल में परामर्श भेजा करता था और गुरुकुल से खबरें मँगवाता रहता था, ताकि गुरुकुल के रोज़ाना समाचारों का उसे ज्ञान रहे। आचार्य श्रद्धानन्द अगर बीमार होता, तो उस के लिये सेनीटोरियम (आरोग्य सदन) सदा गुरुकुल मे बना रहता। आचार्य श्रद्धानन्द को गुरुकुल की सच्ची धुन थी, सच्ची लगन थी। वह गुरुकुल को आर्य समाज की तथा ससार की जरूरतों मे एक भारी जरूरत समझा करता था, इस लिये उसने अपने जीवन का अमूल्य समय इस के अर्पण कर दिया। उस की जबरदस्त इच्छा थी, कि इस गुरुकुल रूपी बाग के एक २ पौदे की वह खुद देख भाल करे, इसके बढने तथा फलने फूलने में उसका कृपालु हाथ हमेशा बना रहा। आचार्य श्रद्धानन्द अपने ब्रह्मचारियों को अपने सामने व्यायाम कराता था, और इन्हीं ब्रह्मचारियों में बहुत देर तक खुद भी व्यायाम करता था, ब्रह्मचारियों के प्रात, दोपहर और रात्री के भोजन में वह अकसर मौजूद रहता था और देखा करता था, कि भोजन क्या बना है, और कौन २ ब्रह्मचारी रुचि से भोजन करते हैं और कौन २ नहीं। बहुत समय तक तो आचार्य श्रद्धानन्द खुद ब्रह्मचारियों में बैठ कर भोजन करता रहा। इसमें वह बहुत आनन्द अनुभव करता था। आचार्य श्रद्धानन्द खुद गुरुकुल के दो मास के अवकाश में ब्रह्मचारियों समेत भिन्न २ स्थानों यात्रा में जाया करता था। वह ब्रह्मचारियों की उन यात्राओं को ज्ञान की दृष्टि से बहुत उपयोगी मानता था, इस लिये आचार्य श्रद्धानन्द ने उन यात्राओं का नाम सरस्वती यात्रा रक्खा था। वह उन यात्राओं पर ब्रह्मचारियों से निबन्ध लिखवाता था और उत्तम लेखक को इनाम दिया करता था। आचार्य श्रद्धानन्द को ये सरस्वती यात्राये इतनी प्यारी थीं कि किसी भी स्थान पर ब्रह्मचारियों को अपने साथ ले जाने से पहले वह खुद उस स्थान के वृत्तान्तों को पढ़ा करता था, और यात्रा के समय ब्रह्मचारियों को उन स्थानों के महत्व समझाया करता था। वह असमर्थता की अवस्था में ही उन यात्राओं का अध्यक्ष किसी और को नियत किया करता था। आचार्य श्रद्धानन्द रात दिन इस बाग के पौदों की रक्षा के लिये सदा चक्कर लगाता नज़र आया करता था। चलती-फिरती उसकी दिव्य मूर्ति और उसके अन्दर प्रेम का बहता हुआ अगाध स्रोत ब्रह्मचारियों को अपनी तरफ़ आकर्षित कर लेने में जादू का सा काम करता था। आचार्य श्रद्धानन्द ब्रह्मचारियों के सो जाने के पश्चात् सोया करता था, और ब्रह्मचारियों के प्रात उठने से पहले ही जाग जाया करता था। वह ब्रह्मचारियों और गुरुकुल की रक्षा के निमित्त रात में एक या दो बार निद्रा देवी की सुखमयी

गोद का निरादर कर सोते हुए ब्रह्मचारियों का तथा बाकी गुरुकुल का निरीक्षण किया करता था, सर्दियों गर्मियों, में आचार्य श्रद्धानन्द की यह प्रथा सदा दृष्टिगोचर होती थी। रात के समय ब्रह्मचारियों पर कपड़ा उढाना और उनकी नैतिक दृष्टि से भी रक्षा करना इस आचार्य पिता का विशेष कार्य था आचार्य श्रद्धानन्द को ब्रह्मचारी इतने प्यारे थे, कि अपराध पर भी किसी ब्रह्मचारी को गुरुकुल से अलग करना नहीं चाहता था। वह सदा यथा तथा उन्हें समझाने की कोशिश किया करता था। अगर बाधित होकर किसी को अलग करना पड़ता था, तो आचार्य श्रद्धानन्द समझा करता था, कि उसके शरीर का एक सारा अंग अलग होरहा है। हे आचार्य। तेरा आचार्यत्व धन्य हुआ, सफल हुआ। सच्चे आर्य। मेरी श्रद्धाञ्जलि को स्वीकार करो।

स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन पर एक दृष्टि

(लेखक—श्री प० भीमसेन जी विद्यालङ्कार, मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब, लाहौर)

स्वामी श्रद्धानन्द का नाम आर्य समाज का एक जीता-जागता चित्र है। इनका नाम ही आर्य समाजों तथा प्रचारकों के हृदय मे विशेष भावों को पैदा करता है। खास कर २३ दिसम्बर के दिन जब कि एक मूर्ख मुसलमान ने उन पर कायरता पूर्वक आक्रमण किया, ये भावनायें हर आर्य पुरुष के दिल में बडे जोर से उठती हैं, आर्य सामाजिक जगत् स्वामी श्रद्धानन्द के गुण चिन्तन और वर्णन में मस्त है। हम आर्य भाइयों के सामने स्वामी जी के जीवन की तीन विशेषतायें रखना चाहते हैं।

(१)

स्वामी श्रद्धानन्द जी आर्य समाज की सेवा किस भावना से करते थे, यदि हम स्वामी जी के जीवन को देखें, तो पता लगता है, कि वे आर्यसमाज की सेवा इसलिये करते थे, कि आर्यसमाज ने उन्हे जीवन दिया था। आर्य समाज मे प्रवेश करते समय वे अनुभव करते थे, कि उन्हे आत्मिक बल, मानसिक बल, तथा अनथक कार्य शक्ति प्राप्त हुई है। इन शक्तियों को देने वाली सस्था के प्रति वे अपना विशेष कर्तव्य समझते थे। वे आर्य समाज की सेवा इसलिये करते थे, कि उन्हें इस से जीवन शक्ति मिली थी। उन्होंने यह नियम बनाया हुआ था, कि वह किसी भी विशेष उद्देश्य से किसी स्थान पर क्यों न हों, उस स्थान के साप्ताहिक सत्सग में जरूर सम्मिलित होते थे। वे यह अनुभव नहीं करते थे, कि वह लोगों की सेवा के लिये आर्य समाज में सम्मिलित हुए हैं बल्कि वह समझते थे, कि आर्य समाज में जाने से उनको जीवन शक्ति मिलती है, इसलिये वे समाज जाते थे। आज हमे भी इस भावना से समाज मे काम करना चाहिये। हमे समाज में दूसरों के लिये प्रवेश नहीं करना चाहिये। हम पहले अपने लिये समाज मे प्रवेश करें। यदि हम इस भावना से काम करेंगे, तो विपरीत अवस्थाओं से भी हमारा आत्मा अशान्त न होगा, इस मे निराशा तथा असन्तोष के भाव पैदा न होंगे। इसके स्थान पर कार्यबुद्धि की भावना पैदा होगी। आर्य समाज के प्रति अपने कर्तव्यों के पूरा करने की मनोवृत्ति पैदा होगी।

(२)

स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन की दूसरी विशेषता उनके स्वाध्याय करने की प्रवृति थी। उनकी दैनिक चर्या मे स्वाध्याय के लिये विशेष स्थान था। जालधर मे रहते हुए वे नियम पूर्वक वेदों के स्वाध्याय मे समय लगाते थे। स्वामी जी कहा करते थे कि वेदों का स्वाध्याय करते हुए जब मेरे सामने वेद मन्त्र आया, जिसका अर्थ है पर्वतों के समीप, नदियों के सगम पर ब्राह्मण लोग ज्ञान युक्त हुए थे, तब इस मत्र के चिन्तन ने ही मेरे दिल में गुरुकुल स्थापना करने के भाव को दृढ़ किया था। गुरुकुल जीवन के बाद राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन मे प्रवेश करने पर आये दिन किसी न किसी नये आन्दोलन मे मसरूफ

(लगे रहने पर) होने पर भी वे स्वाध्याय के नियम का पालन करने में तत्पर रहते थे, प्रातः काल तीन बजे उठ कर अन्य कार्यों को आरम्भ करने से पहले वे आर्ष ग्रन्थों का चिन्तन तथा पाठ अवश्य करते थे। इस ज्ञान बल के कारण ही हम इनमें मौलिकता तथा नये काम आरम्भ करने की प्रवृत्ति देखते हैं। आज आर्य पुरुषों में स्वाध्याय करने की कितनी आवश्यकता है, इस पर अधिक लिखने की जरूरत नहीं। आज आर्य समाज के कार्यक्रम मे मौलिकता की कमी अनुभव की जा रही है। इस के दूर करने मे हमे इस दृष्टि से विचार करना चाहिये।

(३)

स्वामी जी ने सार्वजनिक जीवन का आरम्भ धर्म प्रचार के साथ किया था, इससे पहले विद्या प्रचार और शिक्षा सम्बन्धी काम मे समय लगाया। इस के बाद राजनैतिक जीवन मे प्रवेश किया। उस समय स्वामी जी सन्यास आश्रम मे प्रविष्ट हो चुके थे। प्रचलित प्रथाओं के अनुसार किसी सन्यासी का सासारिक धन्धों मे खास कर राजनैतिक आन्दोलन मे हिस्सा लेना अनुचित माना जाता है। सन्यासी लोग आत्म चिन्तन तथा परमात्मा के चिन्तन मे ही समय लगाना अपना मुख्य धर्म समझते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द ने इस रिवाज को बदल दिया। इसका कारण यह था, कि वे कर्महीन सन्यास नहीं मानते थे। वे धर्म शब्द को केवल आत्मा तथा परमात्मा तक ही सीमित न समझते थे। वे मानते थे कि धर्म प्रचारकों तथा सत्य प्रचारकों को सब ससार में फैले हुए अधर्म तथा असत्य का विरोध करना चाहिये। वे वैदिक धर्म तथा आर्य-समाज को केवल सामाजिक और आध्यात्मिक आन्दोलन नहीं मानते थे। वे आर्य समाज के आन्दोलन को मनुष्य जाति की प्रत्येक आवश्यकता को पूरा करने वाला मानते थे। सन्यास आश्रम से पहले सभा सोसाइटियों के बन्धनों मे रहते हुए स्वामी जी इन सोसाइटियों के अनुसार काम करते थे, परन्तु सन्यास लेने के पश्चात् बन्धनों से ऊपर उठ जाने से पीछे वैदिक सन्यासी की भाँति सब क्षेत्रों मे काम करना अपना धर्म समझा, इसलिये वृद्ध अवस्था मे उन्होंने कष्ट सहन करके राजनैतिक आन्दोलन मे काम किया। स्वामी जी के राजनैतिक आन्दोलन मे अर्थात् स्वतन्त्रता के युद्ध मे कूद पड़ने का परिणाम यह हुआ, कि उस समय देश के सन्यासियों मे से कई एक सन्यासियों ने राजनैतिक सेवा की। आज इस बात की जरूरत है, कि देश के सन्यासी धर्म के विस्तृत रूप को सामने रखते हुए राजनैतिक अधर्म का रोकने का यत्न करें।

स्वामी श्रद्धानन्द ने पुराने रिवाजों के बन्धनों में जकडे हुए सन्यास धम को विशाल तथा स्वतन्त्र बनाने की तरफ कदम उठाया था। आर्य जनता तथा हिन्दू जाति को चाहिए, कि वह अपने पूज्य सन्यासियों की सेवा में राष्ट्रीय धर्म का उपदेश सुनाने की प्रार्थना करें। आशा है, आर्य पुरुष स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द की इन तीन विशेषताओं पर विचार करेंगे, और अपने हृदय में पैदा हो रही भावनाओं को स्थिर रूप देने का प्रयत्न करेंगे।

श्रद्धाँजलि

(समर्पक—प्र० स्वा० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति साहित्य भूषण, स० मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली)

१ गुरुवर के पावन चरणों में, हो मेरा सौ बार प्रणाम
नव जीवन सचार करे जिनका, मृतकों में भी शुभ नाम।
जिनकी करुणा से श्रुति अमृत, का था मैंने पान किया
दिव्य भक्ति पीयूष पिलाकर, मुझे उन्होंने तृप्त किया॥

२ उनका सरल विमल दिल श्रद्धा, का था अति सुन्दर मन्दिर
शान्ति सलिल बहता था शीतल, निर्मल नित जिसके अन्दर
जो आता सम्पर्क उसी मे, श्रद्धा घर कर जाती थी
चिन्ता निर्बलता व्याकुलता, सभी दूर भग जाती थी॥

३ वीर केसरी का वह गर्जन, जब सुनने में आता था
भय के सारे भूतों को वह, कोसों दूर भगाता था।
ऐक्य सगठन बिगुल बजाया, जब निर्भय सन्यासी ने
बिछुडे भाई गले लगाये, लाखों प्रभु विश्वासी ने॥

४ जहा कहीं अन्याय दमन का, चक्र चला उसने देखा
बाजी अपने प्राणों तक की, उसे लगाते जग देखा।
जलिया वाला बाग उपद्रव, अथवा सिक्खों का गुरु बाग
अत्याचार जहा भी पाया, वहीं लगा दी उसने आग॥

५ त्याग त्याग कहते हैं सारे, किन्तु कहा वह त्याग मिले
तन मन धन सर्वस्व समर्पक कहा धर्म अनुराग मिले।
इससे बढ़ कर कहो दान क्या, जो उसने कर दिखलाया ?
धर्म वेदि पर निज बलि देना, हँसते हँसते सिखलाया॥

६. क्यों न धन्य अपने को मानें, जिनने ऐसे गुरु पाये
माता पिता मित्र सब ही का, नेह निभाते गुरु पाये।
करें कृपा प्रभु उनके हावें, हम सब सच्चे अनुयायी
बना यज्ञ मय जीवन अपना, होवें सब के सुखदायी॥

महिला-जगत्

मातृ शक्ति

[लेखिका— श्रीमती प्रेमसुलभा जी यति मन्त्रिणी महिला सुधार मण्डल संयुक्त प्रान्त आ० प्र० सभा]

सृष्टि रचना विचित्र है। जिधर दृष्टिपात करो उधर ही अनोखापन दिखाई देता है। माता और सन्तान का अलौकिक प्रेम कितना निराला है? पशु-पक्षियों और मनुष्य माताओं मे सतान-प्रेम की मात्रा एक समान निःस्वार्थ है, परन्तु इन पशु पक्षियों और मनुष्य माताओं में स्वाभाविक भेद यह है कि पशु पक्षियों में स्वाभाविक ज्ञान अधिक होता है, इस लिये उनके बच्चों की सहायता प्रकृति करती है। पशुओं के बच्चे कुछ ही घण्टों मे चलने-फिरने लगते हैं। जब तक उन बच्चो मे स्वय भोजन प्राप्त करने की सामर्थ्य नहीं होती तभी तक माता अपने बच्चे को भोजन देती है।

इसके विपरीत मनुष्य मे स्वाभाविक ज्ञान अल्प होता है। इस लिये उसकी बुद्धि को विकसित करने के लिये शिक्षा की आवश्यकता होती है। मनुष्यों के बच्चो का पालन-पोषण करने मे बड़ी सावधानी रखने की आवश्यकता है, क्यों कि बच्चों का जीवन माता पर ही निर्भर है। इसी लिये प्रभु ने माता में स्वाभाविक प्रेम दिया है।

माता में एक विशेष शक्ति होती है जिसके द्वारा वह अपनी मानसिक भावनाओं का प्रभाव गर्भ से लेकर ५ वष की आयु तक बच्चों के मन पर स्वाभाविक रीति से डाला करती है। इस हेतु माता के मानसिक विचारों में श्रेष्ठता, गम्भीरता और साहस होना अति आवश्यक है। धर्म, देश और जाति के उत्थानार्थ सन्तान को योग्य बनाने के लिये भविष्य मे माता बनने वाली बालिका को प्रथम मातृत्व की विशेष शिक्षा देनी चाहिये।

ऐतिहासिकों का मत है कि किसी देश या जाति की उन्नति देखना चाहते हो तो उस देश और जाति की स्त्री समाज को देखो। मातृशक्ति एक महान् शक्ति है। इसी पर देश और जाति की उन्नति निभर है माता अपनी सन्तान को जैसा चाहे वैसा बना सकती है। माता अपने दूध के साथ बच्चे मे जो संस्कार डाल देती है उसे अन्त तक कोई दूर नहीं कर सकता। बच्चों मे पूर्व जन्म के संस्कार भी होते हैं परन्तु मुझे यहाँ केवल माता के दिये हुए संस्कार पर ही विचार करना है।

यह निश्चित मत है कि जिस देश और जाति को अपना उत्थान करना हो तो उसे अपनी नारी समाज की यथार्थ उन्नति और सम्मान करना चाहिये। यह अंग्रेज जाति जो आज विश्व-विजयिनी और अनेक सद्गुण सम्पन्न बनी हुई है इसका मुख्य कारण अंग्रेज नारी समाज ही है। ये स्त्रियां अपने गृह धर्म निर्वाह और सतान

का लालन पालन अपनी सभ्यता के अनुसार ऐसी उत्तम रीति से करती हैं कि उनमें स्वदेशानुरागादि श्रेष्ठ गुण युवा होने पर स्वयं विकसित हो जाते हैं। अंग्रेज जाति में अपनी महिला समाज के लिये यथेष्ट सम्मान है। इसलिये वे श्रेष्ठ सन्तान बनाने में समर्थ हैं।

किंतु अनेक भारत वासियों के हृदय में अपनी नारी समाज के लिये यथार्थ आदर के भाव नहीं हैं। यही कारण है कि भारत का अधिकतर मातृ मण्डल अभी घोर अन्धकार में है। जिसके फल स्वरूप कई जगह एक हजार में से चार सौ तक बच्चे पैदा होते ही काल के ग्रास हो जाते हैं और हजार में से तीन सौ तक मातायें प्रसूत रोग से अल्पायु में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं और जो मातायें और बच्चे जीवित रहते हैं उनमें से प्राय निर्बल हो जाते हैं। कुछ बालक अपने पूर्व संस्कारों और शिक्षा के प्रभाव से प्रभावित हो देश वा जाति के सेवक बनने का यत्न करते हैं परन्तु बाह्य शिक्षा में उतनी दृढ़ता नहीं होती इसी कारण बहुत से देश वा जाति के सेवक, कुछ दिन जोश से काम करके फिर मैदान से हट जाते हैं या निज स्वार्थ में फंस जाते हैं जैसे कच्चा रंग उतर जाता है। इसी कारण वे संगठन में नहीं आते, परन्तु माता के धर्ममय कर्तव्य दुग्ध को पान करने वाला बालक कर्तव्य पथ पर निर्भयता पूर्वक कठोरताओं को सहते हुए आगे बढ़ता है। जिस उद्देश को लेकर वह चलता है उसे पूरा करके ही छोड़ता है। प्रभु वह दिन शीघ्र ही भारत को दिखावे कि देश वासी पुरुष समाज के हृदय में नारी समाज के लिये यथार्थ मान हो जिससे मातृ शक्ति अपने कर्तव्य का पालन कर और अधिक संख्या में कर्तव्य परायण बालक बालिकायें देश सेवक बनें। स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज इस विषय में विशेष प्रयत्नशील थे इसी लिये उन्होंने बालक और बालिकाओं के लिये गुरुकुल खोले थे।

स्वा० श्रद्धानन्द जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि

[श्रीमती संगिनी देवी भू० अध्यक्षा राष्ट्रीय महासभा]

मेरी स्मृति और मेरे अनुराग के स्वामी श्रद्धानन्द वर्तमान सन्तति की एक ऐतिहासिक मूर्ति के रूप में विराजमान हैं। मैं सदैव अनुभव करती हूँ कि स्वामी श्रद्धानन्द भारत के वीर काल की एक दिव्य विभूति थे। अपनी भव्य मूर्ति और ऊँचे व्यक्तित्व के द्वारा वे अपने साथियों के ऊपर बड़े देव की नाईं रहा करते थे। वे अपने जीवन की अन्तिम घड़ियों तक जिनका शहीद की मृत्यु में अन्त हुआ साहस और कर्मयोग की अनुपम मूर्ति रहे और भारतीय जीवन के धार्मिक आध्यात्मिक क्षेत्र में राष्ट्र सुधार के कार्य में इनका सुन्दर परिचय देते रहे। उनके मानव समाज की सेवा के उच्चभाव का मैं बड़ा आदर किया करती थी।



नवीन पाठ विधि तथा आवेदन-पत्र

भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं की जनवरी १६४४ के लिए नवीन पाठ विधि छप रही है। जिन सज्जनों को चाहिए वे शीघ्र ही कार्यालय को लिखें। कृपया पाठ विधि आवश्यकतानुसार ही मँगाए क्योंकि कागज बहुत महँगा तथा कठिनाई से प्राप्त हो रहा है।

पाठविधि पढते ही परीक्षाओं के आवेदन पत्र भी शीघ्र ही मगालें। बहुत से सज्जन केवल इतना ही लिख देते हैं कि आवेदन-पत्र भेज दीजिए। कृपया साथ ही यह भी लिखने का कष्ट किया करें कि किस २ परीक्षा के कितने २ आवेदन पत्र भेजे जाए।

देवव्रत, धर्मेन्दु
परीक्षा मन्त्री

दानी सज्जन ध्यान दें।

भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की सिद्धात सरोज, सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तभास्कर तथा सिद्धान्तशास्त्री की धार्मिक परीक्षाएँ विगत २६ वर्षों से प्रचलित हैं। इन परीक्षाओं का एक मात्र उद्देश्य भारत के स्त्री पुरुषों और नव-युवकों को अपना २ साधारण शिक्षण प्राप्त करते हुए, अपने प्राचीन वैदिक साहित्य से परिचित कराना और साधारणतया सभी परीक्षा देने वाले आबाल वृद्ध, स्त्री पुरुषों को स्वाध्याय के पथ का पथिक बनाना है तथा उन्हें आर्य्य समाज की ओर आकर्षित करना है। परीक्षाओं के लगभग २०० केन्द्र भारत के प्राय सभी मुख्य २ स्थानों मे स्थापित हो चुके हैं जिनसे प्रतिवर्ष ३ ४ हजार परीक्षार्थी सम्मिलित होते हैं। कुछ आर्य्य कन्या पाठशालाए और विद्यालय इन परीक्षाओं को अपनी पाठ-विधि का आवश्यक अग बना चुके हैं। युक्त-प्रान्त और मध्य प्रान्त आर्य्य प्रतिनिधि सभा ने इन परीक्षाओं को सारे प्रान्त के लिए स्वीकार कर लिया है। सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा ने भी इनको स्वीकृत और प्रचलित करने का आश्वासन दिया है।

इन परीक्षाओं का शुल्क बहुत कम है जिससे केवल पत्र व्यवहार तथा प्रचार आदि का ही कार्य्य होता है। हम परीक्षार्थियों मे एक नवीन उत्साह का सचार करना चाहते हैं जिससे वे भी

भविष्य में इनका प्रचार करे। और इसका एक मात्र साधन उनको छात्रवृत्ति देना है। परीक्षाओं की इतनी आय नहीं जिससे यह परिषद् इस कार्य को करे और परीक्षार्थियों को उपरोक्त साधन से परीक्षाओं की ओर आकर्षित कर सके।

अत धर्म प्रेमी दानी सज्जनोंसे प्रार्थना है कि इन धार्मिक परीक्षाओं के अत्यधिक प्रचार के लिए कुछ न कुछ दान अथवा छात्रवृत्ति देने की कृपा करें।

आशा है दानी सज्जन धर्म प्रेम से प्रेरित होकर धर्म ग्रन्थों के स्वाध्याय के प्रचार के इस पवित्र यज्ञ में अवश्य हमारी सहायता करेंगे जिसके लिए हम उनके अत्यन्त आभारी होंगे। धन निम्न पते पर भेजें।

देवव्रत धर्मेन्दु परीक्षा मंत्री—
भारत वर्षीय आर्य्य कुमार परिषद्, देहली।

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की परीक्षाएं

गत २६ वर्षों से भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषत् सिद्धान्त सरोज, सिद्धान्त रत्न, सिद्धान्त भास्कर और सिद्धान्त शास्त्री नामक धार्मिक परीक्षाओं के आयोजन द्वारा आर्य कुमारों और कुमारियों मे विशेषतया और सभी आर्य सज्जनों मे तथा देवियों में साधारणतया धार्मिक स्वाध्याय शीलता की प्रवृत्ति को जो बढ़ा रही है उस की जितनी प्रशसा की जाए उतनी ही थोडी है। इन परीक्षाओं का मुख्य उद्देश्य परीक्षा मन्त्री श्री पं० देवव्रतजी 'धर्मेन्दु' के शब्दों मे 'विशेषत आर्यकुमार और कुमारियों को अपना साधारण शिक्षण प्राप्त करते हुए वैदिक साहित्य व आर्य ग्रन्थों से परिचय कराना तथा साधारणतया सभी परीक्षा देने वाले आबाल वृद्ध स्त्री पुरुषों को धार्मिक ग्रन्थों के स्वाध्याय के पथ का पथिक बनाना और उन्हें आर्य समाज की ओर आकर्षित करना है।" जैसे शरीर को बलवान् और स्वस्थ रखने के लिये हमारे लिये भोजन का नियमितरूप से सेवन अत्यावश्यक और अनिवार्य है ऐसेही मन और आत्मा की शक्ति की वृद्धि के लिये वेदादि सत्यशास्त्रों के स्वाध्यायकी आवश्यकता होती है, इसी लिये शास्त्रकारों ने ब्रह्मयज्ञ को जिस में सन्ध्या और स्वाध्याय सम्मिलित हैं दैनिक पञ्च महायज्ञों में से प्रथम स्थान दिया है।

पाकिस्तान नहीं होगा

(लेखक—जयप्रकाश धनुर्धर दीवानहाल दिल्ली]

॥ इसका अपमान नही होगा ॥

यह भारत देश हमारा है, प्राणों से भी यह प्यारा है।
सारी सस्तृति से न्यारा है फिर किस को ध्यान नहीं होगा।
यह भूमि सकल सकट हरणी दु ख द्वन्द हरन मङ्गल करणी,
इसकी महिमा सब ने वरणी, दु ख का सामान नही होगा।
जिन्ना जिद खण्डन की छोडो, नाता नित भारत से जोडो,
यह माता है मुख मत मोडो, क्या तुमको ज्ञान नहीं होगा।
यह सीख धनुर्धर, की माना, यह भारत है भारत जानो,
मत टुकडे करने की ठानो, यह पाकिस्तान नहीं होगा॥

'स्वाध्यायो ऽध्येतव्य" "स्वाध्यायान्माप्रमद" इत्यादि ऋषिप्रोक्त वचन इसी स्वाध्याय का विधान करते हुए उस मे कभी प्रमाद न करने का आदेश करते हैं। मनुष्य जीवन को पवित्रता के लिये स्वाध्याय अत्यावश्यक है क्यों कि इस के द्वारा पवित्रभाव हृदय मे अङ्कित हो जाते हैं। ऋषि दयानन्दजी स्वामी श्रद्धानन्दजी जैसे महात्माओं के जीवन चरित्र भी स्फूर्तिदायक होने से मनुष्य जीवन को पवित्र बनाने में विशेष रूप से सहायक होते हैं अत. इन परीक्षाओं मे 'हमारे स्वामी' 'स्वामी श्रद्धानन्द' 'आर्य समाज के उज्ज्वल रत्न' 'श्रीमद्दयानन्दप्रकाश' इत्यादि ग्रन्थों को स्थान दिया गया है। ऋषि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, आर्योद्देश्य रत्नमाला, पञ्चमहायज्ञविधि, गोकरुणानिधि इत्यादि ग्रन्थ वैदिक धर्म के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कितने उपयोगी है यह लिखने की आवश्यकता नहीं क्यों कि यह अब सर्व सम्मत बात है कि ऋषि की इन अमर कृतियों ने अन्धकार मे भटकते हुओं के लिये सचमुच प्रकाशस्तम्भ का काम किया है और लाखों की आंखें खोल दी हैं। ऐसे ग्रन्थ रत्नों का इन परीक्षाओं में बड़ी उत्तमता से समावेश किया गया है। वैदिकधर्म के तुलनात्मक अनुशीलन की भी बड़ी आवश्यकता है जिस से दृष्टि विशाल बन सके। इस दृष्टि से 'धर्म का आदि स्रोत', 'आस्तिकवाद' 'वैदिक सिद्धान्त' 'विश्व की पहेली' इत्यादि ग्रन्थों को इन परीक्षाओं में यथोचित स्थान दिया गया है। आर्य कुमार और कुमारियों को अपने देश और समाज का इतिहास जब तक ज्ञात न हो तब तक वे अपने को समाज और देश की सच्ची सेवा के योग्य नही बना सकते इस लिये स्वर्गीय आचार्य रामदेवजी कृत भारतवर्ष के इतिहास तथा प० हरिश्चन्द्रजी विद्यालङ्कार कृत आर्यसमाज के इतिहास को भी परीक्षाओं के पाठ्यक्रम मे सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार इन परीक्षाओं की पाठविधि पर एक सरसरी दृष्टि डालने से पाठक-पाठिकाओं को इन की उपयोगिता मे ज़रा भी सन्देह नहीं रहेगा ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है पर॒क्षा देने से जो आत्मविश्वास उत्पन्न होता है तथा निश्चित पाठक्रम चल सकता है वह अन्यथा होना अत्यन्त कठिन है साथ ही वर्तमान विद्यालयों और महाविद्यालयों में धार्मिक शिक्षा के शोचनीय अभाव की पूर्ति के लिये भी इन परीक्षाओं मे सम्मिलित होना अत्यन्त उपयोगी है। इस लिये मेरा सब आर्य कुमारों और कुमारियों से, आर्य युवकों और युवतियों से अनुरोध है कि आर्य कुमार परिषत् की प्रतिवर्ष जनवरी मास में होने वाली इन परीक्षाओं में अधिक से अधिक सख्या मे सम्मिलित हो कर स्वाध्याय और धर्म ज्ञान का लाभ उठाए और इस कार्यार्थ अपने २ ग्रामों और नगरों मे परीक्षाकेन्द्र खुलवाए जो ५ परीक्षार्थियों के होने पर खुल सकते हैं। हमारी बहिनें भी इस ओर जितना अधिक ध्यान देंगी उतना ही भावि सन्तति का वायु मण्डल धार्मिक बन सकेगा और इस प्रकार आर्यसमाज की सच्ची उन्नति होगी।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति—
सम्पादक 'सार्वदेशिक'

श्री श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी और आर्य नवयुवक

(लेखक — श्री गङ्गाविष्णु जी, मौरिशस निवासी)

श्री स्वामी जी महाराज अपने युग मे एक महान् पुरुष थे, इसी नाते से उन्होंने आय जगत् को एक सुन्दर ढग से ले चलने के लिए बहुत प्रयत्न किया था। जिससे कि उन आर्यों के हृदय में शुद्ध आर्यत्व आजाय जिसके द्वारा अपने प्राचीन सभ्य पुरुषों के विशुद्ध जीवन चरित्रों को ठीक २ समझ जायें कि हमारे सभ्य भारत के अन्दर कैसे बडे २ योद्धा एव शूर वीर पुरुष हुए है? उन नर श्रेष्ठों मे से सबसे पहिले आनन्दकन्द योगिराज श्री कृष्णचन्द्रजी के नाम का उल्लेख कर देना चाहता हू, जिससे पाठक और पाठिकाओं की अभिरुचि इस ओर आकर्षित हो जाये। प्यारे पाठको। पहिले जमाने में जब अत्याचारी शिशुपाल इस पुण्य भूमि भारत मे घोर अत्याचार कर रहा था, तब उस समय मे उस नर पापी के त्रास से सारा ससार आतङ्कित हो उठा, और विशेष रूप से हमारे वेद पाठियों के कामल हृदय मे उस क्रूर आत्मा के भय ने मानो अपना अटल साम्राज्य क़ायम कर लिया है। तब उसके घोर अत्याचार की प्रचण्ड ज्वालाओं से मानो नवोद्यान भारत को जला कर खाक कर रहा था, तब इस प्रकार के भयङ्कर दृश्य को देखकर किसी भी माई के लाल को यह हिम्मत नहीं पडती थी, कि मै उस नर अधम को अपने मनोमुग्धकारी उपदेश से शान्त करू या अपनी नीति के बल से उस पापाचारी का दमन करू। तब ऐसे विकट समय में योगिराज कृष्णचन्द्र जी का शुभागमन हुआ। तदनन्तर कुछ विश्राम करने के बाद उस नर श्रेष्ठ ने उस हत्यारे को अपनी कठिन भुजाओं के कठोर प्रहार से इस प्रकार चूर २ कर दिया जैसे कोई कोमल दर्पण को उठा कर कठोर पत्थर पर फेंक देने से होता है? ठीक उसी प्रकार उस भीषण परिस्थिति में श्री कृष्णचन्द्र जी ने अपनी माता से भी अधिक प्यारी आर्य सस्कृति एवं प्राणों से भी प्यारे वैदिक धर्म की रक्षा की थी? ठीक उसी प्रकार आर्य सभ्य पुरुष गण भी इस सकटापन्न समय में आर्य सभ्यता की समर जन्य भयङ्कर तूफानों के प्रचण्ड झोकों से रक्षा करेंगे और युद्ध कालीन परिस्थितिके गर्त में पडे हुए वैदिक धर्म का उद्धार करेंगे तभी आप लोग आर्य सस्कृति के परम उपासक समझे जा सकेंगे और तभी आप लोग अपने को वैदिक धर्म के सच्चे प्रेमी कहलने के पूरे अधिकारी बन सकेंगे। इसी के उद्धार करने से कल्याण होगा और इस की रक्षा करने स अत्यन्त लाभ होगा, तभी हम लोग स्वर्गीय आनन्द का अनुभव करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकेंगे। प्यारे धर्म के प्रेमियों! महर्षि दयानन्द सरस्वती जी भी इस वेद प्रचार में विष खाकर स्वगवासी हो गये और इसी की रक्षा करने मे धर्मवीर प० लेखराम जी पेट मे छुरा खाकर बैकुण्ठ सिधारे थे। इसी सभ्यता के बचाव करने मे श्री स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज गोली के शिकार बने थे।

प्यारे पाठको। आप लोग जानते हैं कि हम लोग कौन हैं? हम ऋषि दयानन्द महाराज के वीर सिपाही हैं और हम सब श्री स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द महाराज के वशज हैं। यही नहीं, हम तो प० लेखराम जी के वशजों में से हैं। अन्त मे मै जगदीश्वर के कल्याणमय चरणों में यह समभ्यर्थना करता हूँ कि हे दीनबन्धु परमेश्वर! आप उन वीरों को एवम् उन वीराङ्गनाओं को धैर्य और शक्ति प्रदान करें जिससे वे अपनी जाति और देशवासियों को यथेष्ट सेवा और लाभ पहुँचा सकें।

आर्य समाज के चमकते रत्न

स्व० आचार्य रामदेव जी

(ले० श्री प० रामगोपाल जी विद्यालकार सम्पादक 'वीर अर्जुन' देहली)

बात तो बहुत पुरानी है—लगभग चौथाई सदी पुरानी—परन्तु है मनुष्य के चरित्र का चित्र खींच देने वाली। प्रसिद्ध तर्कशास्त्री डा० पी० के० राय गुरुकुल विश्व विद्यालय कागडी देखने गये थे उन दिनों इन डा० राय की विद्वत्ता का इतना सम्मान था कि भारत की कई यूनिवर्सिटियों मे कालिजों के जो लडके 'फिलासफी' का बी० ए० पास करते थे वे इन्हीं डा० राय की लिखी 'लाजिक" पुस्तक पढकर वैसा करते थे। अब भी वह पुस्तक कालिजों की पाठ विधि मे है या नहीं हमे ज्ञात नहीं।

अच्छा, तो डा० पी० के० राय गुरुकुल विश्व विद्यालय देखने गये उन्हे विश्वविद्यालय दिखाने का काम जिस व्यक्ति को सौंपा गया वह इतना जबरदस्त और कट्टर आर्य समाजी था कि उसने पाश्चात्य दार्शनिकों की निन्दा तथा अपने भारतीय दर्शन शास्त्रों की प्रशसा कर-करके डा० राय की नाक मे दम करदिया। बोलने वाला वह इतना था कि उसके सामने डा० राय बार-बार निरुत्तर हो जाते थे। अन्त को उन्होंने परेशान होकर अपने 'गाइड' से कहा कि 'भाई' मै यहा अपना विचार-परिवतन करने या तुम से बहस करने नहीं आया, मै तुम्हारा विद्यालय देखने आया हूँ।

डा० रायका यह 'गाइड' और कोई नहीं, स्व० आचार्य रामदेव जी थे। उनको अपने विचारों का प्रचार करने की प्रतिक्षण इतनी धुन रहती थी कि वह छोटे-बडे, अपने पराये और साधारण-असाधारण किसी भी व्यक्ति से इस कार्य के लिये किसी भी क्षण उलझ पडने मे सकोच नहीं करते थे।

पेशे के लिहाज से उनकी गणना शिक्षकों अथवा शिक्षा-शास्त्रियों मे की जायेगी परन्तु वस्तुत वह आर्यसमाज के एक जोशीले मिशनरी थे। उन्हों ने शिक्षक का पेशा भी इसी लिये स्वीकार किया था कि इस द्वारा आर्यसमाज का प्रचार करने की अपनी धुन पूरी करने का अवसर मिलता था।

यदि वह अन्य अनेक अध्यापकों की भाति निरे 'शिक्षक' ही होते तो वह अपने जीवन के आदि से लेकर अन्त तक, केवल ७५) रु० मासिक पर गुरुकुल कागडी मे न पडे रहते, अपितु उन अनेक अवसरों का पूरा लाभ उठाते, जो कि उनके जीवनमे कईबार आये और जिनसे उनको न केवल अर्थ प्राप्ति असाधारण हो जाती, वरन् शिक्षा के क्षेत्र मे उनके यश और सम्मान भी बहुत अधिक बढ जाते। परन्तु उन्होंने इन वस्तुओं को कभी चाहा ही नहीं, और जा ऐसे अवसर स्वय उनके

मार्ग मे आये उनको उपेक्षा वृत्ति से ठुकरा कर वह आगे बढ़ गये।

इस बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जमाना ऐसा था कि योग्य अयोग्य सभी ग्रेजुएटों की बड़ी पूछ थी। तिस पर रामदेव जी तो उस जमाने के भी विशिष्ट ग्रेजुएटों में से थे। बाईस वर्ष की आयु मे ही केवल एफ० ए० तक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आप विक्टर हाईस्कूल जालन्धर के हैड-मास्टर बन गये थे। वहा रहते हुए ही आपने 'प्राइवेट' बी० ए० पास किया। और वहीं आपकी असाधारण योग्यता देखकर, स्कूलों के इन्सपेक्टर ने विशेष सिफ़ारिश करके, आपको लाहौर के ट्रेनिंग कालिज की छात्रवृत्ति दिलवा दी। ट्रेनिंग कालिज की शिक्षा समाप्त करते ही आपको रियासत जींद मे स्कूल इन्स्पेक्टरी का पद मिल गया। आप वहा जाने को तैयार ही थे, जाने के लिये सामान-असबाब भी बन्ध गया था, कि स्व० महात्मा मुन्शीराम जी ने आपको ब्राह्मण वृत्ति धारण करके गुरुकुल कागड़ी चलने का निमन्त्रण दिया और आपने तार द्वारा जींद की स्कूल इन्सपेक्टरी ठुकरा कर उक्त निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

लगभग १२। १३ वर्ष गुरुकुल में कार्य कर चुकने के पश्चात् सन् १९१७-१८ में आप कारण-वश वहा की आचार्यतासे पृथक् हो गये और तब आपको रियासत कोल्हापुर ने ६५०) रु० मासिक पर अपने राजाराम कालिज के प्रिन्सिपल पद पर प्रतिष्ठित करना चाहा, परन्तु आपने उसे भी यह कहकर अस्वीकार करदिया कि मेरा जीवन गुरुकुल के अर्पण हो चुका है, उसे छोड़कर मैं दूसरी किसी सस्था का कार्य नहीं करता।

अध्यापन कार्य करते हुए भी आपका अध्ययन अधिकतर आर्यसमाज के मिशन की पूर्ति के लिये ही होता था। इतिहास, साहित्य, राजनीति विविध धर्मों के ग्रन्थ आदि आप जो पढ़ते थे उन सबका एक मात्र लक्ष्य यह होता था कि उसमें से आर्यसमाज अथवा प्राचीन आर्य-वैदिक सस्कृति के समर्थन की सामग्री उपलब्ध हो जाय। इसी प्रयोजन से विस्तृत अध्ययन के पश्चात् आपने "भारतवर्ष का इतिहास" नामक इतिहास का एक स्वतन्त्र वृहद् ग्रथ लिखा, जिसमे दिखलाया कि आर्य-कालीन भारत की सभ्यता कितनी ऊ ची थी। आपके भाषणों मे भी बहुधा आपके विस्तृत अध्ययन की अद्भुत छाप श्रुति-गोचर होती थी।

सन् १९२० में अकस्मात् आपके घरमे आग लग गयी। उसमें आपका विविध प्रकारकी पुस्तकों का विशाल और मूल्यवान् सग्रह भी भस्म हो गया। कोई साधारण सासारिक व्यक्ति होता तो इतनी सम्पत्ति के विनाश से वह बहुत दु:खी होता परन्तु आपने उस समय भी हसकर यही कहा कि देखो, पाश्चात्य सभ्यता के साहित्य की होली हो रही है।

गुरुकुल कागड़ी की पाठ-विधिमें से आपने ब्रह्म-सूत्रों का शांकर-भाष्य और ब्राह्मण ग्रन्थ आदि अनेक ग्रन्थ, उनकी प्राचीनता और सर्व मान्यता की परवाह न करते हुए, केवल इस कारण निकलवा दिये थे कि वे वैदिक (आर्य

समाज) सिद्धान्तानुकूल न थे, अथवा तब उनका अर्थ वेदानुकूल करने वाले अध्यापक सुगमतासे उपलब्ध नहीं होते थे। आप जिस किसी आर्य समाजी को विद्वान् समझते थे उससे निःसकोच यह अनुरोध करते थे कि आप ब्राह्मण ग्रन्थों की वेदानुकूल टीका लिखिये।

सन् १९०७-८ मे जब ब्रिटिश सरकार आर्य समाज पर राजद्रोही सस्था होने का सन्देह करने लगी थी और इस कारण यह भय हो गया था कि महर्षि स्वामी दयानन्द कृत 'सत्यार्थप्रकाश' आदि ग्रन्थ कहीं सरकार जब्त न कर ले तब आचार्य रामदेवजी ने आर्यसमाज बच्छोवाली (लाहौर) के वार्षिकोत्सव पर असाधारण दृढता और उत्साहके साथ घोषणा की थी कि जिस प्रकार हमारे पूर्वजोंने वेदादि शास्त्रों को कण्ठाग्र करके जीवित रक्खा उसी प्रकार हम भी महर्षि-कृत 'सत्यार्थप्रकाश' आदि ग्रन्थों को अक्षर-अक्षर कण्ठ कर लेंगे और इन पर कानून का कठोरतम प्रहार होने पर भी इन्हें नष्ट न होने देंगे।

स्त्री-शिक्षा और स्त्रियों की उन्नति से आपको असाधारण प्रेम था। देहरादून के कन्या गुरुकुल को वर्तमान् स्थिति तक पहुँचाने का श्रेय यदि किसी एक व्यक्ति को देना हो तो वह आपको ही दिया जा सकता है। यद्यपि आपका विवाह केवल तेरह वर्ष की आयु में हो गया था, परन्तु आपको अपनी पत्नी का परदा छुड़ाने की धुन उस बाल्यावस्था में भी थी। उसका परदा छुड़ाने पर ही आपका अपने पिता से झगड़ा हुआ और आपको गृह त्याग करना पड़ा। जालन्धर में रहते हुए आपने एक आर्य-भ्रातृ सभा का सगठन किया था, जिसका एक मुख्य नियम यह भी था कि उसके सब सदस्यों को सभा की बैठकों में सपरिवार आना पड़ता था। गुरुकुल कागड़ी में आपने अपनी और अपने कुछ मित्रों की कन्याओं को इकट्ठा करके अपने घरमें ही एक 'कन्या गुरुकुल' खोला हुआ था, जिसमें पठन-पाठन के अतिरिक्त कन्याओं की दिनचर्या भी गुरुकुल के नियमों के अनुसार रखी हुई थी।

आर्य समाज और आर्य समाज की सस्थाओं के लिये धन-सग्रह के कार्य मे आपने असाधारण सफलता प्राप्त की थी। कन्या-गुरुकुल, देहरादून को वर्तमान स्थिति तक पहुँचाने मे आपके भाग का तो ऊपर जिक्र आया ही है गुरुकुल कागड़ी के वर्तमान स्थानपर निर्माण में भी आपका ही सबसे बड़ा हाथ था। कागड़ी ग्राम के समीप गगा-पार की सब इमारतें गगाकी बाढ से नष्ट हो जाने पर उन्हें ज्वालापुर के समीप वर्तमान स्थान पर पुन बनवाने के लिये जितने धन की आवश्यकता थी उससे अधिक सग्रह करने में आप सफल हुए थे।

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे निरन्तर रोगी रहते हुए भी आप कन्या गुरुकुल को नहीं भूले थे और रोग-शैया पर पड़े-पड़े भी उसके लिये जो हो सकता था सा करने को सदा उद्यत रहते थे।

आपका सारा जीवन दृढ लगन और उस लगन के लिये त्यागका एक असाधारण उदाहरण है। क्या बालक और क्या वृद्ध सभी को उससे मूल्यवान् प्रेरणा मिल सकती है।

SRI SWAMI SHRADDHANAND JI

(By Pandit Keshava Deva ji Siddhantalankar)

It is over one and half decades when Sri Swami Shraddhanand ji laid down his earthly life He lived like a hero and he died like a martyr A journalist of Bombay had called him Fighting Sanyasi" A fighter truly he was While young he fought against the old fossilized customs and conventions at home When he grew up he fought against, the deep-rooted prejudices and perversities of the Society And in old age he fought against the strong citadels of Bureaucracy

His monumental achievement is, undoubtedly, the Gurukula-Kangri at Haridwar With a prophetic vision he saw the essential need of Hindu Society if it had to live and thrive That need was the revival of ancient Aryan culture and civilization. Which other institution could serve this need better than the Gurukula? Naturally enough he had to encounter a lot of opposition But it was soon overcome Gradually the Gurukula grew popular And now, when the country attains independence and the educational programe is cast on national lines, the Gurukla is destined to play a very important part

Swami Shraddhanand was a man of noble impulses He was also ever optimistic The harder the task the greater was his enthusiasm During the evening of his life he engaged himself in the re-organization (Sangathan) of Hindu Society He felt quite certain that unless and until the Hindu Society got mobilised on the right lines the social as well as political problems of the country could not be solved How true and realistic he was we realize it today when the dark clouds of Pakistan threaten the Indian Horizon

While writing the above, I have imagined, as if Swami Shraddhanand is alive today He has to face the Pakistan problem I see him standing erect in full stature with a grim resolve He makes up his mind He goes to his table and prepares a statement He sends it to the Press Now he gets busy in calling a Conference of Hindus of all shades and opinions He invites Sikhs and leaders of other groups who are avowedly against the sinister scheme of Pakistan Next he leaves Delhi on an All India Tour He will visit every nook and corner of the country and organize public opinion. He is not afraid either of Jinnah or Rajgopalachary He is fully conscious of his right position

This is just an imaginary picture Alas Swami Shraddhanand is not in our midst in his physical form But his indomitable spirit is ever present It seems to din into our ears

WAKE UP O ARYANS ! THERE IS A GREAT DANGER AHEAD. UNITE TOGETHER AND FIGHT THE DEMON OF PAKISTAN.

स्वामी जी के अप्रकाशित् पत्र

(लेखक—श्री प० हरिदत्त जी वेदालंकार गुरुकुल कांगड़ी)

अब हम स्वामी जी ने जिन सज्जनों को पत्र लिखे उनका संक्षिप्त परिचय तथा उन पत्रों का साराश देना चाहते हैं।

स्वामीजी ने दो पत्र श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को लिखे हैं। हरिश्चन्द्र चिंतामणि बम्बई का एक कुशल फोटोग्राफर था। बम्बई मे स्वामीजी के प्रारम्भिक सहायकों मे से था बम्बई आर्य समाज का प्रधान चुना गया था और कर्नल अल्काट से स्वामी जी का जो पत्रव्यवहार होता था, उसमे कर्नल के अंग्रेजी पत्रों का हिन्दी अनुवाद करने तथा स्वामी जी के हिन्दी पत्रों का अंग्रेजी अनुवाद करने का काय स्वामी जी ने हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, श्याम जी कृष्ण वर्मा और मूलराज पर छोड़ा हुआ था। श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि द्वारा ही स्वामी जी का तथा कर्नल अल्काट का बहुत सा पत्र व्यवहार हुआ। जब कर्नल अल्काट अमेरिका मे थे तब स्वामी दयानन्द जी के सिद्धान्तों से अवगत होना चाहते थे, उस समय स्वामीजी ने श्री हरिश्चन्द्र को आर्योद्देश्य रत्नमाला का अंग्रेजी अनुवाद करके अमेरिका भेजने का आदेश दिया। १५ फरवरी १८७६ को कर्नल अल्काट तथा मैडम ब्लेवेट्स्की जब बम्बई पहुँची तो उन्हे हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के बँगले पर ठहराया गया। कर्नल अल्काट ने अमेरिका से स्वामीजी के पास हरिश्चन्द्र चिंतामणि द्वारा ७००) भेजे थे। इसी समय से श्री हरिश्चन्द्र की धूर्त्तता प्रकट होने लगी। उसने ये रुपये आर्य समाज बम्बई को नहीं दिये, न किसी को यह बतलाया कि अमेरिका से रुपया आया है और इस बात को गुप्त रखने के लिये बम्बई आर्य समाज के सभासदों को कर्नल व मैडम से मिलने से रोक दिया। हरिश्चद्र के इस कपटपूर्ण व्यवहार पर कर्नल को बहुत दुःख हुआ। उन्होंने हरिश्चद्र से रुपये मागे। हरिश्चद्र ने पहले तो इधर उधर की बातें की फिर यह बहाना बनाया कि मैने यह रुपया इसलिये नही दिया कि स्वामीजी ने मुझे ऐसी आज्ञा दी थी। यह कोरा झूठ था। स्वामी जी ने २५ मई १८७६ के पत्र म अलीगढ से मुशी समर्थदान को स्पष्ट लिखा था कि अमेरिका से जो धन आये उसे दाताओं के नाम सहित पत्रों मे मुद्रित करा दो। हम ने उससे कह दिया था कि जो धन प्राप्त हो उसे तीन कार्यों मे व्यय करना—(१) वेदों के सम्बध मे ज्ञान और पुस्तक प्रचार में (२) सदाचार की शिक्षा देने वाली सभाओं की सहायता मे (३) दीन दरिद्रों की सहायता मे।

हरिश्चद्र ने वह रुपया अपने पास रखा और इन कार्यों मे से कोई कार्य नहीं किया। हरिश्चद्र को कर्नल के आग्रह से वह रुपया लौटाना पड़ा। बम्बई आर्य समाज ने चैत्र शु० १ स० १९३६ को एक विशेष अधिवेशन मे प्रस्ताव स्वीकार करके उसे निकाल दिया। हरिश्चंद्र ने

यह कहना शुरू किया कि आर्य समाज के सभासदों के घृणित बर्ताव के कारण, मैंने आर्यसमाज के सभापतित्व को स्वय त्याग दिया है। उधर हरिश्चद्र थियोसोफिकल सोसायटी का सदस्य बना हुआ था। कर्नल और मैडम भी हरिश्चद्र को पहचान गये थे। उनका भी अब हरिश्चन्द्र से सम्बध उत्तम न रहा। हरिश्चद्र ने यह कहना शुरू किया कि मैडम के क्रूर स्वभाव के कारण मेरा उनसे सम्बन्ध शिथिल हो गया है। इसी आशय का एक पत्र उस ने थियोसोफिकल सोसायटी न्यूयार्क कारेस्पाडिग सेक्रेटरी डब्ल्यू क्यू. जज को ५४ मार्च १८७६ को लिखा और नेटिव ओपिनियन मे ऐसी बातें प्रकाशित करवायीं। इस पर कनल ने जनता के सामने हरिश्चद्र की सारी पोल खोल कर रख दी।

हरिश्चद्र सार्वजनिक एव सामाजिक कार्यों मे बहुत भाग लेता था। उसने भगवद्गीता पर एक भाष्य भी लिखा था किंतु उस के नीच कार्यों के जनता में प्रकट होने से, उस की सारी प्रतिष्ठा धूल मे मिल गयी। वह आर्य समाज व थियोसोफिकल सासायटी दोनों से भ्रष्ट होकर, इतो भ्रष्ट स्ततो भ्रष्ट, धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का, वाली मिसाल का शिकार हुआ। इण्डियन स्पैक्टेटर ने तो उसको वह छीछालेदर की कि बम्बई में मुँह दिखाना उसके लिये दूभर हो गया।

स्वामी जी का वेद भाष्य पहले बम्बई से प्रकाशित हाता था। स्वामी जी ने वेद भाष्य के लिये चन्दा करने, वेद भाष्य छपवाने तथा ग्राहकों से भिजवाने का कार्य भी हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को सौंपा हुआ था। श्री हरिश्चन्द्र स्वामी जी को उचित परामर्श भी दिया करता था। प्रस्तुत समह में, स्वामी जी ने श्री हरिचन्द्र चिन्तामणि को जो पत्र लिखे हैं उनमें एक का विषय वेद भाष्य सम्बन्धी व्यवस्था ही है।

ऐसा जान पड़ता है कि श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने स्वामी जी को यह परामर्श दिया था कि वे अपने वेद भाष्य के प्रकाशन के साथ उन्हें श्री हरिश्चन्द्र को वेद भाष्य के अंग्रेजी तथा उर्दू आदि भाषाओं में अनुवाद की आज्ञा दें। स्वामी जी ने अपने पत्र मे इस विचार का घोर विरोध किया। स्वामी जी के अंग्रेजी पत्र में इसका जो कारण दिया गया है— वह स्वामी जी के सस्कृत तथा आर्य भाषा के प्रेम को भली भांति सूचित करता है— स्वामी जी ने लिखा—

Because if translated into English or Urdu, it will weaken the hearts of people to study Sanskrit, thinking that they would be able to gain their object by either English or Urdu without caring for Sanskrit or Bhasha. Under such circumstances, we need not try to translate the work in English or Urdu which instead of producing any good results will bring forth something bad in the end Let the भाष्य first be reached its completion in pure Sanskrit and Bhasha Only, afterwards, if it would be thought proper to translate into other languages, you all would get liberty to work according to your wishes, with the view

of public benefit अर्थात् यदि भाष्य का अंग्रेजी या उर्दू में अनुवाद होगा तो लोगों को संस्कृत अध्ययन के लिये कमजोर बना देगा। लोग यह सोचेंगे कि वे संस्कृत या भाषा की परवाह किये बिना अपना उद्देश्य पूर्ण कर सकेंगे इन अवस्थाओं में, हमें वेद भाष्य को अंग्रेजी या उर्दू में अनूदित करने की आवश्यकता नहीं। यह उत्तम परिणाम उत्पन्न करने की अपेक्षा अन्त में बुरा परिणाम उत्पन्न करेगा। पहले संस्कृत और भाषा में वेद भाष्य पूरा होने दीजिये, बाद मे यदि दूसरी भाषाओं में इसका अनुवाद उचित समझा जाय तो सार्वजनिक लाभकी दृष्टिसे आपका अपनी इच्छानुसार कार्य करने की स्वतत्रता होगी।

दूसरा पत्र १२ एप्रिल १८७७ को लुधियाना से लिखा गया है। हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने स्वामी जी का अपने पत्र में यह समाचार दिया था कि श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा का इगलैण्ड जाकर विद्याभ्यास करने का संकल्प है। स्वामी जी ने इस बात पर अत्यधिक हर्ष प्रकट किया है। स्वामी जी ने लिखा है—I was overjoyed to learn the delightful intention of Mr Shamji to visit England for 3 years इसके बाद स्वामी जी ने लिखा है कि मेरी सम्मति में उसके लिये यह अनुपम अवसर है। उसे यह बिना चूके पकड़ना चाहिये यह दोनों देशों के लिये लाभ प्रद है। मै यह अपनी उत्तम सम्मति प्रकट करने में प्रसन्न हूँ कि श्री शाम जी ने इस गौरवपूर्ण कार्य से अपना पाव पीछे मोड़ा तो वह बुद्धिमान् आदमी नहीं समझा जायगा। इससे स्पष्ट है कि स्वामी जी विदेशों में भारतीयों के जाने का तथा वहा जाकर नाना विद्याओं और कलाओं के सीखने को बहुत महत्व पूर्ण समझते थे।

स्वामी जी ने वेद भाष्य के चन्दे तथा प्रकाशन का भार सबसे पहिले श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को सौंपा था। हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने प्रारम्भ में तो इस कार्य में उत्साह दिखाया किंतु बाद मे वह उत्साह शिथिल हो गया। हरिश्चंद्र के कारण, वेद भाष्य का कार्य बहुत पिछड़ने लगा। स्वामी जी ने वैदिक यन्त्रालय का दूसरा मैनेजर श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा को बनाया श्यामजी कृष्ण वर्मा जब इगलैण्ड चले गये तो उस का तीसरा प्रबन्धक मुशी समर्थदान को नियतकिया। हरिश्चंद्र चितामणि ने वेदभाष्य के चंदे का हिसाब न तो श्याम जी को दिया और न ही मुशी समर्थदान को। स्वामी जी सार्वजनिक धन को एक पवित्र धरोहर समझते थे और उसकी पाई २ का पूरा सदुपयोग करना चाहते थे। हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के इगलैंड भागजाने पर भी, स्वामी जी ने श्यामजी कृष्ण वर्माको मुशी समर्थ दान द्वारा एक पत्र ३० जून ८७९ का आक्सिफार्ड लिखवाया। इस मे इस विषय का इस प्रकार उल्लेख है।

'बाबू हरिश्चन्द्र, अमेरिका वालों केशवलाल निर्भयराम का हाल आपको इस पत्र मे डालता हू उससे मालूम होगा। उक्त बाबू बहुत रुपये खा गया है इस लिए उस पर नालिश करने का विचार है आप तलाश करके लिखें कि बाबू किस शहर मे किस ठिकाने पर है। लन्दन मे है तो उसका एड्रेस भी लिख भेजें। आप वहा के समाचार पत्रों में ऐसा प्रकट करदें कि बाबू मुम्बई आर्य-समाजके प्रधान पदसे निकाल दिया गया है। "

स्वामी जी के पत्र से प्रकट है कि वे सार्वजनिक धन के सदुपयोग के बारे मे कितने सतर्क थे। इस विषय मे, वे हरिश्चन्द्र चिन्तामणि पर नालिश करने को तय्यार थे। इसके कुछ वर्ष बाद मुशी इन्द्रमणि से भी सार्वजनिक धन के उपयोग के सम्बन्ध मे उनका झगड़ा हुआ। जब उन्हें यह निश्चय हो गया कि मुशी जी ने रुपया गबन कर लिया है तो आर्य समाज मुरादाबाद ने स्वामी जी की सम्मत्यनुसार २९ मई सन् १८८२ को मुशी इन्द्रमणि तथा उनके शिष्य को आर्य समाज की सदस्यता से पृथक् कर दिया।

अजमेर में आदर्श विवाह

गत २० दिसम्बर को अजमेर अन्तर्गत आदर्श नगर के प्रवासी भवन मे प्रवासी भारतियों के प्रख्यात नेता स्वामी भवानीदयालजी के छोटे पुत्र श्री ब्रह्मदत्त का विवाह नागपुर के स्वर्गीय अध्यापक श्री लक्ष्मण राव डागे बी० ए० की कन्या श्रीमती निर्मला देवी के साथ चारों वेदों के हिंदी भाष्यकार प० जयदेवजी विद्यालङ्कार ने विधिवत् वैदिक विधि से कराया। वर बिहारी है और कन्या मराठी अत यह अन्त-प्रान्तीय सम्बन्ध राष्ट्रीय दृष्टि कोण से महत्वपूर्ण है। वर की आयु २४ वर्ष है और वधू की २० वष। निर्मलादेवी ने नागपुर के हिस्लप कॉलेज मे एफ० ए० तक शिक्षा पाई है एव मराठी तथा हिन्दी में भी अच्छी योग्यता प्राप्त की है। निर्मला देवी एक ईसाई कन्या है जो हाल ही मे आगरा आर्य समाज द्वारा शुद्ध होकर वैदिक धर्म की शरण मे आई है। सस्कार के समय वर और वधू ने स्वय वेदमन्त्रों से प्रतिज्ञाए कीं। इस प्रसग पर प्रवासी भवन मे लगभग पॉच सौ स्त्री, पुरुष और बालक उपस्थित थे जिनमे शारदा कानून के निर्माता वयोवृद्ध दीवान बहादुर हरविलास शारदा, रायबहादुर मिट्ठनलाल जी भार्गव, राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान कुवर चादकरणजी शारदा, श्री गौरीशकर भार्गव दयानन्द कालेज के सथापक प० जियालालजी राजस्थान प्रान्तीय हिन्दू सभा के प्रधान ऐडवोकेट अक्षयसिहजी शागी प्रो० देवकीनन्दन शर्मा ऐडवोकेट दत्तात्रेय वाब्ले, प्रो० हरचरणदास कपूर, वर्मा के राय साहब डाक्टर शर्मा, दयानन्द कालेज के प्रिन्सिपल प० सूर्यदेव शर्मा, ऐडवोकेट परमात्मास्वरूपजी, श्री मथुराप्रसाद शिवहरे, डा० बी० डी० शर्मा, श्री प० ब्रह्मदत्त शर्मा, राजवैद्य डाक्टर घनश्याम शर्मा, प्रो० मदनसिहजी, श्री दानकरणजी, दक्षिण अफ्रिका के प्रसिद्ध व्यापारी श्री चुन्नीलाल आवर्स लिमिटेड के मालिक श्री चुन्नीलाल राघवजी, श्री शिवचरणलालजी, श्री छोटेलालजी आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रवासी भवन, ध्वजा पताका, वन्दनवार और वेदमन्त्रो के मोटो से भली भाति सजाया गया था। महर्षि दयानन्द का एक विशाल चित्र मण्डप की शोभा बढ़ा रहा था। सस्कार के बाद अजमेर के मुख्य-मुख्य नेताओं ने अपने भाषणों मे वर वधू को आशीर्वाद दिये कवियों ने प्रसगानुकूल कविताएँ पढ़ीं जिनमे श्री रामगोपालजी की उर्दू कविता बहुत पसन्द की गई। इसके बाद प्रो० देवकी नन्दन शर्मा ने बाहर से आये हुए अग्रेजी मे सन्देश और श्री शिवचरण लालजी ने हिन्दीमे सन्देश पढ़कर सुनाये, जिनमे राजा सर महाराजसिह, कुवर सर जगदीश प्रसाद भारत सरकार के प्रवास मन्त्री माननीय माधव श्री हरि अणे, सर पुरुषोत्तम दास ठाकुर दास, राजा नारायण लाल पीत्ती, फेडरेशन ऑफ इडियन चेम्बर्स आफ कामर्स एण्ड इन्डस्ट्री के सभापति श्री गगनबिहारीलाल मेहता, 'बम्बई क्रोनिकल' के सम्पादक सैयद अब्दुल्ला ब्रेल्वी, आनरेबल पी० एन० सप्रू साउथ अफ्रीकन इण्डियन कांग्रेस, नेटाल इण्डियन कांग्रेस, रावराजा राय बहादुर डाक्टर श्याम बिहारी मिश्र प्रवासी नेता जनाब अब्दुल्ला इस्माइल काजी, इम्पीरियल सिटीजन इडियन शिप एसोसियेशन के मन्त्री श्री० एस० ए० वरजू 'इण्डियन रिव्यू' के सम्पादक श्री जी० ए० नटेसन केप इण्डियन कांग्रेस के मन्त्री श्री० सी० सी० पलसानिया, जामनगर के व्यापारी सचिव डाक्टर बिहारीलाल अनन्तानी, जूनागढ़ के वजीर, श्री यू० के० ओझा, महात्मा

नारायणस्वामीजी, स्वामी शकरा न्दजी, स्वामी ज्ञानानन्दजी, स्वामी केवलानन्दजी, महाकवि मैथिली शरण गुप्त 'सरस्वती' सम्पादक प० देवीदत्त शुक्ल, 'किशोर' सम्पादक प० रामदहिन, मिश्र, 'बालक' सम्पादक रायसाहब रामलोचन शरण बिहारी, कविवर सियारामशरणजी गुप्त, श्री वेङ्कटेश्वर 'समाचार' सम्पादक ठाकुर राज बहादुरसिंह, विशाल भारत सम्पादक श्री मोहन सिंह सेंगर, 'बिजली' सम्पादक प० प्रफुल्लचन्द्र ओझा मुक्त, सार्वदेशिक' सम्पादक प० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति गुरुकुल सूपा के आचार्य प० चन्द्रकान्त वेदवाचस्पति, जालन्धर कन्या महा विद्यालय की आचार्या कुमारी लज्जावती देवी, गुरुकुल सोनगढ के अधिष्ठाता श्री चतुरभाई पटेल, बड़ौदा आर्य कन्या महाविद्यालय के सचालक प० आनन्दप्रियजी, गुरुकुल वैद्यनाथधाम के अधिष्ठाता प० महादेवशरणजी, लाहौर बाल महाविद्यालय के आचार्य प० ऋषिरामजी, डाक्टर ईश्वरदत्त विद्यालकार प्रभृति के अतिरिक्त देश विदेशों से और भी सैकड़ों सन्देश आये थे। वर श्री ब्रह्मदत्त और वधू श्री निमलादेवी ने सक्षिप्त सम्भाषण मे आगत सज्जनों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की और अन्त मे स्वामी भवानी दयालजी ने सबका धन्यवाद देकर उत्सव विसर्जन किया। आगन्तुक अतिथियों का मिष्टान्न वितरण कर विदा किया गया। (एक प्रेक्षक)

श्रीयुत बा० बसतलाल जी पटना सिटी ने ४०००) मे भूमि ७ गट्ठा सोनपुर (सारण) में लेकर आर्य प्रतिनिधि सभा, बिहार, को मेला प्रचार-आर्य्य समाज मन्दिर-श्री श्रद्धानन्द कन्या पाठशाला के लिए प्रदान किया है। इस वर्ष प्रचार भी उसी मे हुआ है। और उपज के ११) तथा दुकान भाड़ा ७।।) सभा को प्राप्त हुए आपको हार्दिक धन्यवाद है। —भजनानन्द

गुरुकुल कांगड़ी में छात्र परीक्षाओं की नवीन आयोजना

हिन्दू जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि उसकी सस्था गुरुकुल कागड़ी की प्रबन्ध कर्तृ विद्यासभा ने गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी की शिक्षा का लाभ उठाने का अवसर बाह्य विद्यार्थियों को भी देने का निश्चय किया है। इसके लिये सस्कृत हिंदी, वेद, सगीत, सम्पादन-कला इतिहास, गृह विज्ञान, धर्म शास्त्र आदि विषयों मे छात्र परीक्षाओं की आयोजना की गई है।

छात्र परीक्षाओं की सम्पूर्ण योजना बन कर तय्यार हो गई है। इनकी पाठविधि नियम और पुस्तकों की सूची यन्त्रालय में जा रहे है। आशा है आर्य सस्कृति के प्रेमी तथा विद्याव्यसनी भाई और बहन इस योजना का पूरा लाभ उठायेंगे।

अधिष्ठाता छात्र परीक्षा विभाग—
गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी

शोक प्रस्ताव

निश्चय मासाहिक अधिवेशन आर्यसमाज सिवहारा

(बिजनौर) २८।१२।४२

आर्य समाज सिवहारा (बिजनौर) श्री प० लालमणि जी शर्मा कोषाध्यक्ष की मृत्यु पर हार्दिक दुःख प्रकट करता है। पण्डित जी की मृत्यु से आर्य समाज सिवहारा की बड़ी क्षति हुई है। समाज के प्रति उनकी सेवाए बहुमूल्य थीं। परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि श्रद्धास्पद पण्डित जी की आत्मा को सद् गति तथा उनके परिवार को शान्ति एव धैर्य प्रदान करे।

प्यारेलाल मन्त्री— आर्य समाज सिवहारा।

साहित्य समीक्षा

Works of Maharshi Dayanand and Paropakarini Sabha by Shri Har Bilas Sharda published at the Vedic Press Ajmer Price Re 1

"महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ और परोपकारिणी विषयक प्रस्तुत पुस्तक लाहौर के श्री अमरसिंहजी एडवोकेट की Views on meat diet नामक पुस्तक का (जिसमे उन्होंने यह सिद्ध करने की निष्फल और निन्दित चेष्टा की थी कि ऋषि दयानन्द मास भक्षण के पक्षपाती थे और सत्यार्थ प्रकाश तथा सस्कार विधि के केवल प्रथम सस्करण ही प्रामाणिक हैं अन्यों मे बहुत सी मिलावट की गई तथा मास समथक भाग निकाल दिये गये इत्यादि) मुह तोड़ जवाब है। अत्यन्त वृद्धावस्था मे भी श्री हरविलास शारदा जी ने जिस योग्यता और परिश्रम से इस पुस्तक को लिखकर आयसमाज की सेवा की है उसकी जितनी प्रशसा की जाए थोड़ी है। पुस्तक में अत्यन्त प्रबल प्रमाणों से सिद्ध किया गया है कि मास भक्षण वेदविरुद्ध है और ऋषि दयानन्द इसके प्रबल विरोधी थे तथा सत्यार्थ प्रकाश और सस्कार विधि के प्रथम सस्करण मे मास समथक भाग प्रक्षिप्त थे। रा० ब० मूलराज जी एम० ए० ने ऋषि दयानन्द के साथ 'गोकरुणानिधि' के अंग्रेजी अनुवाद करने मे जिस टालमटोल से काम लिया और पीछे से ऋषि को मासाहार समथक सिद्ध करने का जो निन्दनीय प्रयत्न किया ऋषि के पत्रों द्वारा उस पर पूर्ण प्रकाश डालते हुए उनकी पोल खोली गई है। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी, प्रामाणिक और प्रभावात्मक है। इसका अनुवाद अन्य भाषाओं में भी होना चाहिए ताकि इस विषयक भ्रम दूर हो सकें। इस पुस्तक का खूब प्रचार होना चाहिए। प्रत्येक आय समाज के पुस्तकालय में इसकी १ प्रति रहनी चाहिये। धर्मदेव वि० वा०

"कांग्रेस के सभापति" (सचित्र) प्रकाशक और सम्पादक श्री रलियाराम गुप्त सम्पादक "सात्विक जीवन" जेनरल प्रिंटिंग वर्क्स ८३ पुराना चीना बाजार स्ट्रीट कलकत्ता पृष्ठ सख्या १८३ मू० ।)

शाखा—प्रिंटिंग हाउस हौज कटरा बनारस

सदाचार का महत्त्व—लेखक श्री मनोहर मालवीय पृष्ठ सख्या ६४ मूल्य ─)

देश के नौनिहालों से पृष्ठ सख्या ६४ मूल्य ─)

राष्ट्रीय जागरण का इतिहास— पृष्ठ सख्या १४० मूल्य ।)

सदाचार डायरी सम्पादक श्री रलियाराम गुप्त मूल्य ।≡)

ये सब जनरल प्रिन्टिंग वर्क्स के प्रकाशन हैं जो प्रत्येक युवक और युवती के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। विषय नाम से ही स्पष्ट है। अत्यन्त सरल और ओजस्विनी भाषा में राष्ट्रीय महासभा के कार्य और इतिहास पर राष्ट्रीय जागरण के इतिहास और कांग्रेस के सभापति नामक पुस्तकों मे प्रकाश डाला गया है। शेष तीनों में सदाचार ब्रह्मचर्य आदर्श जीवन, स्वास्थ्य नियम शिक्षा इत्यादि पर उत्तमता से विचार किया गया है सदाचार डायरी के पहले ४० पृष्ठों मे ब्रह्मचर्य सदाचार स्वास्थ्य नियमादि विषयक अत्युत्तम निर्देश सरल और प्रभाव जनक भाषा में दिये गये हैं प० देवराज जी बेरालङ्कार द्वारा लिखित 'श्रद्धा का दीपक जलाओ' विचारों का रथ बनाओ' 'हँसो, जीवन पुष्प में प्रेम पराग भरो' इत्यादि लेख (३ से ८६ पृष्ठ तक) विशेष मननीय और स्फूर्तिदायक हैं। सात्विक जीवन ग्रन्थमाला' के अन्य हिन्दी और अंग्रेजी ग्रन्थों की समालोचना अगले अङ्क मे की जायगी। ध० दे०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दान-सूची दिसम्बर १९४२

आर्य समाज स्थापना दिवस

संयुक्त प्रान्त

आर्य समाज		बस्ती	५)
,,	,,	शाहजहांपुर	१०)
,,	,,	हल्द्वानी (नैनीताल)	१०)
,,	,,	खुर्जा	१०)
,,	,,	उरई	१८)
,,	,,	बाराबंकी	७)

पंजाब प्रान्त

,,	,,	पटियाला	६॥-)
,,	,,	तान्दलियावाला	।)
,,	,,	लाहौर सदर	५।)
,,	,,	डेराइस्मालखां	१।)
,,	,,	डेरा गाजीखां	१)।
,,	,,	अम्बाला कैंट	११)

सिंध प्रान्त

श्री धनपतराय जी कराची १७०)

मद्रास प्रान्त

आर्य समाज सदपी ५॥)

विविध

श्री पुत्तूराम जी २)

२६२॥-)।

पिछला जोड़ ११४७॥=)

१४१०॥)।

बंगाल तूफान पीड़ित सहायता निधि

१०१) व्यवस्थापक 'वीर अर्जुन' देहली

१०१) श्री ला० छोटेलाल सावलदास जी लोहिया, देहली

१०) श्रीमती अशर्फीदेवी जी 'वीर अर्जुन' देहली

५) कुछ कन्याओं का भाग द्वारा श्री. प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति देहली

७५) श्रीमती चन्द्रवती देवी जी धर्मपत्नी श्री प० इन्द्र जी 'वीर अर्जुन' देहली

१०) श्री रामदास जी देहली

५) श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्व० सभा

३१) श्री मन्त्री जी आर्यसमाज हनुमान रोड नई देहली

१५) श्री भीमसैन जी महाराज नौशहरा दोआबा (पंजाब)

१५) श्री रामस्वरूप जी शर्मा जयपुर

१०) श्री प० बद्रीप्रसाद जी किसरौल मुरादाबाद

५) श्री जुगलकिशोर जी मुरादाबाद

१२३) स्टाफ़ इन्श्योरेन्स ब्राच आव कामर्स डिपार्टमेंट गवन० आव इण्डिया शिमला

६) श्री कुमारी पुष्पावती जी पटियाला बैंक पटियाला

५) श्री गुरुदत्त जी गौतम सब्जीमंडी देहली

२५०) श्री मन्त्रीजी आर्यसमाज सरगोधा

५) श्री राजनारायणजी आलमगीरी गंज बरेली

१५) श्री मगलदास छबीलदासजी ललाही सूरत

५) श्री मन्त्री जी आर्य समाज झावरिया (सरगोधा)

योग ७४२)

अन्य दान

२) श्री मन्त्रीजी आर्यसमाज डिबाई (बुलन्दशहर)

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

देहली

THE GURUKULA AND ITS FOUNDER

(By Prof LALACHAND JI M A Vice Principal Gurukula Kangri)

(Continued from the last issue)

Strong bodies, Sharp intellects, pure Character fearless hearts these make a nation great and these the Gurukula undertakes to develop. Feats of physical strength of skill in archery are every year displayed by Gurukula Brahmcharies and Gurukula graduates on the occasion of the Gurukula anniversary Among those who have distinguished themselves in this direction, may be mentioned Desh Bandhu and Viveka Nanda Pt Desh Bandhu ji is at present working unassumingly in a silent honest earnest manner as the asstt Governor of Gurukula Kangri and has recently been appointed Pradhan Senapati or Commander-in chief of Arya Vir Dal Strength firmness determination dedication radiate from his brow and bearing Pt Indra ji Vidya Vachaspati the present Governor of Gurukula is well known as the chief editor and Director of the Arjun, a popular Hindi daily and as a notable national worker He is so cool headed s clear h aded so Steady, so balanced At present he is honorary Governor of Gurukula Kangri and secretary of the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha Pt Dharma Deva ji Vidya Vachaspati a great Sanskrit Scholar and a most successful Vedic Missionary has spent several years in the south, spreading the Gospel of the Vedic Dharma He can Speak fluently and eloquently in Sanskrit, English Hindi Karnatak etc At present he is asstt Secretary of the Sarvadeshik Sabha and does his work in that capacity with characteristic devotion and efficiency

Pt Jaichandra ji Vidyalankar has achieved special distinction for valuable original research in ancient Indian History Pandit Satya ketu ji Vidyalankar D Litt has won the All India prize for the best book in Hindi by writing an original and authoritative book on the history of the Maurya Empire

The pure Character of pandit Yudhishthir ji (Swami Vratananda) Pt Deva Sharma ji (Swami Abhya Deva) and Pandit Dev raj ji 'Muni' shines like the sun To live with them is to lift oneself morally and

spiritually Their lives are eloquent sermons on the Ten Commandments Pt. Dev Sharma is endowed with great qualities of head and heart Austere, self denying, a Raj Yogi, a Karma Yogi a Hath Yogi a Profound Vedic scholar a devoted Patriot a steady tireless worker a youth of stern resolves and dedicated life he is verily the Gandhi of Gurukula Pt Dharma Pal ji the unarmed captor of the fanatic who was armed with loaded revolver the muslim who shot Shraddhanand ji Pandit Satya palji and Pandit IshwarDutt ji who while they were students attacked a wild leopard with hockey sticks in their hands and lots of other Pals and Dutts yet unknown to fame but possessed of hearts no less brave these the Gurukula is rightly prowd of

Buddha Deva and Deva Sharma both fine products of Gurukula are each great in their own way Buddh Deva is poetical, Deva Sharma is puritanical Buddh Deva is impulsive and ardent Deva Sharma is slow and steady Buddh-Deva is heroic and excites admiration Deva Sharma is saintly and evokes respect Power, poetry fine frenzy' radiate from Buddh Deva Peace, holiness austerity radiate from Deva Sharma Both have produc d first class Vedic literature Pt Buddh Deva ji has now succeded Swami Abhaya Deva ji as Acharya of Gurukul Kangri

Such are some of the flowers of the garden of Gurukula planted by Mahatma Munshi Ram While admiring the flowers, we naturally forget the gardener But with the small space at our disposal we must hurry to say something more about him In Gurukula, Mahatma Munshi Ram led a very austere and ideal life Young men it has been well said are more easily led than driven Mahatma Munshi Ram him self first practised what he preached to the students He woke up at 3 30 in the morning every day took vigorous exercise and cold water bath performed sandhya and Agnihotra and meditated on the Gayatri for one hour After this he attended to other business His students looked upto him with great respect, and loved him as their father Gurukula was certainly his 'Kula All students were his children

After establishing a beautiful home for his children and entrusting them to other guardians Mahatma Munshi Ram took Sannyas left Gurukula and began to work for the social and political uplift of India Many were the activities

in which he took a leading part From wherever throughout the length and breadth of India, a cry of distress, or need of service arose, there Swami Sharddhanand—whom henceforth we must call by his new name—with the utmost expedition arrived He went to the Punjab after the Jallianwala massacre during the Martial Law Regime, visited the orphans and the widows, wiped their tears and comforted their hearts When the Satyagrah of Guru ka bagh was going on, Swami ji arrived on the spot to help the Akalis and was put into jail When Malkanas expressed a desire to be brought back into the Hindu fold, Swami ji at once ran to embrace them Hindu Sangathan, uplift of the so called untouchables Satyagrah these and several other movements gained a great impetus by his tireless work and unflagging zeal Himself full of life he infused life into every sphere in which he worked

Swami Sharddhanand was tall and strongly built He had a very powerful personality His appearance, his gait his speech all bore the heroic stamp He was a khshatriya both by birth and worth Whatever he did he did with the air of a hero Whatever he achieved he achieved with the confidence of a hero He marched on—this pilgrim of the path of righteousness—and obstacles flew from his presence like chaff before the wind. He was born to conquer and subdue He lived like a giant amidst a generation of pigmies He was mighty and magnanimous By serving the lowly and the lost he satisfied the hunger of his soul He never disowned the poor He never bent the knee before insolent might The vigour with which he was pushing on the work of shuddhi and sangathan was very keenly resented by a section of the Muslims who deputed a fanatic to finish the Swami Consequently one day (23rd Dec 1926) while Swami ji was lying on sick bed one Abdul Rashid came upstairs and expressed a desire to talk to Swami ji on religious matters Swami ji replied that as soon as he recovered he would appoint some time for the purpose. The visitor asked for a cup of water, the water was at once brought The man drank it quieted his agitated mind and finding himself alone with Swamiji tookout his revolver and sent three shots right through the breast of the martyr finishing him at once Hearing the sound of shots the servant who had brought water

(*to be Continued*)

सम्पादकीय

एक अभिनन्दनीय विवाहः—

पाठक अन्यत्र प्रवासी भारतीयों के प्रख्यात नेता श्री स्वामी भवानीदयाल जी सन्यासी के सुपुत्र श्री ब्रह्मदत्त जी का श्रीमती निर्मला देवी जी के साथ शुभ विवाह का जो गत २० दिस० को 'प्रवासी भवन' अजमेर मे चतुर्वेद भाष्य कार श्री प० जयदेव जी शर्मा विद्यालङ्कार के पौरोहित्य में वैदिक विधि से सम्पन्न हुआ वृत्तान्त पढ चुके हैं। हम इस शुभ मङ्गलोत्सव के अवसर पर आर्य जगत् की ओर से नवदम्पती का हार्दिक अभिनन्दन करते और उनके आरोग्य दीर्घायु और सुख समृद्धि के लिये मङ्गलमय भगवान् से प्रार्थना करते है। यह न केवल अन्त प्रान्तीय विवाह सम्बन्ध था अपितु एक ईसाई मत छोड़ कर शुद्धि संस्कार द्वारा वैदिक धर्म मे दीक्षित शिक्षित कन्या के साथ जाति बन्धन और रूढ़ियों की पर्वाह न कर के श्री ब्रह्मदत्त जी ने जो आदर्श आर्य जनता के सन्मुख रखा है उसके लिये वे विशेषतया अभिनन्दनीय हैं। हम इन स्तम्भों में अनेक बार प्रकट कर चुके हैं कि जाति बन्धन तोड़ कर शुद्धि शुदा व्यक्तियों के साथ पूर्ण समानता का व्यवहार (रोटी-बेटी व्यवहार) किये बिना शुद्धि आन्दोलन कभी सफल नहीं हो सकता। इस दृष्टि से भी हम इस मङ्गलोत्सव पर विशेष प्रसन्नता अनुभव करते हुए आशा करते हैं कि नव दम्पती गृहस्थाश्रम के वैदिक आदर्श के अनुसरण का पूर्ण प्रयत्न करेंगे।

भारत विभाजन के निन्दनीय प्रयत्न और हिन्दू महासभाः—

मुस्लिम लीग के हठी प्रधान मि० मुहम्मद अली जिन्ना ने 'पाकिस्तान' विषयक आन्दोलन उठा कर भारतदेश की अखण्डता पर कुठाराघात करने का जो निन्दनीय प्रयत्न किया है कोई सच्चा देश प्रेमी उसका समर्थन नहीं कर सकता। पर खेद की बात है कि श्री राजगोपालाचार्य तथा निर्दल सम्मेलन के कई तथा कथित नेताओं ने इस अनुचित अयुक्तियुक्त आत्मघातक माग का समर्थन करने में ही भारत का हित समझा तथा एतदर्थ प्रयत्न शुरू किया। क्रिप्स प्रस्तावों में इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया गया और आश्चर्य तो यह है कि हिन्दू महासभा के अन्दर भी सम्भवत कुछ लोग इस विषय में समझौता करने को तय्यार हो गये थे किन्तु हिन्दू महासभा के सुयोग्य प्रधान वीर सावरकर जी और कार्य कर्त्ता प्रधान डा० श्यामा प्रसाद मुकर्जी ने इस माग की निस्सारता और हानिकारकता को अत्यन्त स्पष्ट शब्दों मे जनता के सामने रख दिया और हिन्दू महा सभा के गत वार्षिक अधिवेशन में भारत की अखण्डता और स्वतन्त्रता के आधार पर ही अन्य राजनैतिक दलों से समझौते का निश्चय किया गया यह प्रसन्नता की बात है समझौता और एकता के लिये प्रयत्न अवश्य अभिनन्दनीय है किन्तु मौलिक सिद्धान्तों की वेदी पर किया गया ऐसा प्रयत्न प्रशसनीय

और वस्तुत चिरस्थायी वा सफल नहीं हो सकता। आशा है श्री राजगोपालाचार्य जैसे महानुभाव अपने व्यर्थ और निन्दनीय प्रयत्न का परित्याग करके किसी उपयोगी कार्य में अपने समय तथा शक्ति का सदुपयोग करेंगे। पाकिस्तान विरोधी आन्दोलन को अधिक सगठित और दृढ बनाने की आवश्यकता है और हमारा विश्वास है कि विचारशील देश प्रेमी मुसलमानों का भी सहयोग इस विषय में अवश्य प्राप्त होगा।

मैसूर रियासत के मन्दिरो मे हरिजन प्रवेश विषयक प्रस्ताव

गत मास मैसूर रियासत की धारा सभा मे मैसूर सरकार द्वारा नियत्रित मुजराई मदिरों मे हरिजनों के प्रवेशाधिकार विषयक जो प्रस्ताव स्वीकृत हुआ है वह प्रशसनीय है। वर्तमान धर्म मदिरों मे बहुत सुधारों की आवश्यकता है इसमे सदेह नहीं तथापि धर्म मदिरों मे प्रवेश का अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य होना चाहिये क्योंकि सभी परमात्मा के समान पुत्र हैं। इस दृष्टि से मूर्ति पूजा मे विश्वास न रखते हुए भी हम इस प्रस्ताव पर प्रसन्नता प्रकट करते हैं और मैसूर सरकारसे अनुरोध करते हैं कि सुधार प्रिय जनता की उदार भावना का स्वागत करते हुए त्रावन्कोर रियासत की तरह इस प्रस्ताव को शीघ्र क्रियात्मक रूप देकर पुण्य भागिनी बने।

तृतीय दक्षिण भारत आर्य सम्मेलन

गत २८ २९ और ३० दिसम्बर को बगलौर मे दक्षिण भारत आर्य्य सम्मेलन का तृतीय अधिवेशन मैसूर कौंसिल के प्रथम सदस्य राजमत्री पूजनीय श्री के० वी० अनन्तरामम् के सभापतित्व मे सार्वदेशिक सभा के उत्साही प्रचारक श्री शिवचन्द्र जी, बगलौर छावनी आर्य समाज के प्रधान श्री शङ्करराव जी एडवोकेट उत्साही मन्त्री श्री दरनामदास जी कपूर आदि के उद्योग से समारोह पूर्वक किया गया। इसमे सार्वदेशिक सभाके मान्य प्रधान श्री प०गङ्गाप्रसादजी एम ए रिटायर्ड चीफ जज और उपप्रधान श्री प० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय एम ए प्रधान सयुक्त प्रातीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी विशेष सक्रिय भाग लिया जिस का विस्तृत वृत्तात पाठक अगले अङ्क मे पढगे हम इस सम्मेलन के सब सयोजकों और उत्साही कार्यकर्ताओं का हार्दिक अभिनदन करते हैं।

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिण्टिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।



१९४२ ई०
१९९९ सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश ५ शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष १७ } फरवरी, १९४३ ई०] माघ १९९९ [दयानन्दाब्द ११८ { अङ्क १२

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि, चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे ।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां, स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् ॥

अर्थ — (इन्द्र) हे परमेश्वर । (अस्मे) हमारे में (श्रेष्ठानि द्रविणानि) उत्तम अनेक प्रकार के ऐश्वर्य को (धेहि) धारण करा दक्षस्य चित्तिम्) कार्य कुशल कर्मयोगी के ज्ञान को तथा (सुभगत्वम्) उत्तम धर्म, यश और सौभाग्य को हमें प्राप्त करा। (रयीणा पोषम्) विद्यादि धनों की पुष्टि-वृद्धि (तनूनाम् अरिष्टिम्) शरीरों की नीरोगता स्वस्थता (वाच. स्वाद्मानम्) वाणी की मधुरता (अह्नाम् सुदिनत्वम्) दिनों वा समय का सदुपयोग इन सबको हमे (धेहि) धारण वा प्राप्त करा।

विनय— हे परमैश्वर्य युक्त प्रभो । हम सब तेरे पुत्र उत्तम ज्ञानादि ऐश्वर्य को धारण करना चाहते हैं जिस से हमारे शरीर, वाणी, मन, आत्मा सब को पुष्टि मिले और सब की वास्तविक उन्नति हो। तू ऐसी कृपा कर जिस से हम सर्वतो मुखी उन्नति करते हुए अपने समय और शक्तियों का सदा उत्तम उपयोग करते रहें तथा इस प्रकार सच्चे सौभाग्य शाली बनें।

वेदामृत—

वरुण राजा का साम्राज्य

(ले०—श्री प० रामनाथ जी वेदालङ्कार गुरुकुल काङ्गड़ी)

(१) बृहन्नेषामधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति ।
यस्तायन्मन्यते चरन्त्सर्वं देवा इद विदु ॥
(२) यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति,
यो निलाय चरति य प्रतङ्कम् ।
द्वौ सन्निषद्य यन्मन्त्रयेते,
राजा तद् वेद वरुणस्तृतीय ॥
(३) उतेय भूमिर्वरुणस्य राज्ञ,
उतासौ द्यौर्बृहती दूरे अन्ता ।
उतो समुद्रौ वरुणस्य कुक्षी,
उतास्मिन्नल्प उदके निलीन ॥
(४) उत यो द्यामतिसर्पात् परस्तात् ,
न स मुच्यातै वरुणस्य राज्ञ ।
दिव स्पश प्रचरन्तीदमस्य,
सहस्राक्षा अतिपश्यन्ति भूमिम ॥
अथर्व० ४।१६।१–४

(५) नहि ते क्षत्र न सहो न मन्यु,
वयश्च नामी पतयन्त आपु ।
नेमा आपो अनिमिष चरन्तीर्न,
ये वातस्य प्रमिनन्त्यभ्वम् ॥
(६) अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा,
नक्त ददृश्रे कुहचिद्दिवेयु ।
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशच्चन्द्रमा,
नक्तमेति ॥ ऋग० १।२४।६,१०

अर्थ—[१] (एषाम् अधिष्ठाता बृहत्) ब्रह्माण्ड की इन सब वस्तुओं का अधिष्ठाता बड़ा महान् है (अन्तिकात् इव पश्यति) वह मानो सब का समीप से निरीक्षण कर रहा है (य) जो अधिष्ठाता (चरन्) सर्वत्र विचरता हुआ (तायत्) फैले हुए इस सब ससार को (मन्यते) जानता है। (देवा) जो विद्वान् हैं वे (इद सर्वं विदु) इस सब रहस्य को जानते हैं।

[२] (य तिष्ठति) जो कोई खड़ा है, (चरति) या चल रहा है (य च वञ्चति) और जो कोई किसी को ठग रहा है (य निलाय चरति) जो छिप कर कोई करतूत करता है (य प्रतङ्क चरति) जो किसी को कष्ट देने वाला कोई काम करता है, (द्वौ सन्निषद्य यत् मन्त्रयेते) दो व्यक्ति पास बैठ कर जो कोई गुप्त सलाह करते हैं (तत्) उस सबको (राजा वरुण) ब्रह्माण्ड का राजा वरुण (तृतीय) उनके बीच में तीसरा होकर (वेद) जान लेता है।

[३] (उत इय भूमि वरुणस्य राज्ञ) और यह भूमि उस वरुण राजा की ही है (उत असौ द्यौ) और वह द्युलोक भी, जो कि (बृहती) बड़ा विशाल है और (दूरे अन्ता) दूर अन्त तक चला गया है, उस वरुण राजा का ही है। (उतो समुद्रौ) और ये दो समुद्र—पार्थिव समुद्र तथा आकाशीय समुद्र (वरुणस्य कुक्षी) उस वरुण की मानो दो कोखें हैं, (उत अस्मिन् अल्पे उदके निलीन) और वह छोटी सी पानी की बूँद में भी छिपा बैठा है।

[४] (उत य) और यदि जो कोई (द्याम् अति) द्यु लोक को पार करके (परस्तात् सर्पात्) उससे भी परे चला जाय तो भी (स) वह (वरुणस्य राज्ञ न मुच्यातै) वरुण राजा की दृष्टि से नहीं छूट सकता, क्योंकि (अस्य दिव) इस देदीप्यमान, तेजस्वी वरुण देव के (स्पश) गुप्तचर (इद प्रचरन्ति) इस सब जगत् में फिर रहे हैं और वे (सहस्राक्षा) हजारों आँखों वाले होकर (भूमि अति पश्यन्ति) भूमि से परे तक देख रहे हैं।

[५] हे वरुण देव। (नहि ते क्षत्रम्) न तेरी क्षात्र-शक्ति को—क्षत से त्राण करने के सामर्थ्य को (न सह) न सहनशक्ति को (न मन्युम्) न ही मन्यु को (अमी पतयन्त वय आपु) ये उड़ते हुए पक्षी पहुँच सके हैं, (न इमा अनिमिष चरन्ती आप) न ये निरन्तर बहती हुई नदियाँ पहुँच सकी हैं और (न) न वे ही तेरी इन महिमाओं का पार पा सके हैं (ये) जो पहाड़, टीले, बड़ेर वृक्ष आदि (वातस्य अभ्वम्) वायु के वेग को (प्रमिनन्ति) हिंसित कर देते हैं, रोक लेते हैं।

[६] (अमी ये ऋक्षा) ये जो तारे (उच्चा निहितास) ऊपर आकाश में रखे हुए हैं (नक्त ददृश्रे) रात को दिखाई देते हैं (दिवा कुहचिद् ईयु.) दिन में कहीं चले जाते हैं, छिप जाते हैं, (वरुणस्य व्रतानि) ये सब वरुण के नियम (अदब्धानि) अटल हैं। देखो, (चन्द्रमा) चाँद (विचाकशत्) चमकता हुआ (नक्तम् एति) रात को निकला करता है।

इन उपर्युक्त मन्त्रों में वरुण के साम्राज्य का वर्णन किया गया है। वरुण परमेश्वर के अनेक नामों में से एक नाम है। महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश प्रथम समुल्लास में परमेश्वर के सौ नामों की व्याख्या करते हुए वरुण के लिये लिखा है, "य सर्वान् शिष्टान् मुमुक्षून् धर्मात्मनो वृणोति, अथवा य शिष्टैर्मुमुक्षुभिर्धर्मात्मभिर्व्रियते वर्य्यते वा स वरुण परमेश्वर" अर्थात् जो सज्जन, मुमुक्षु, धर्मात्मा लोगों को वरता है, अपनी शरण में लेता है, अथवा जिसे सज्जन, मुमुक्षु, धर्मात्मा भक्तजन वरते हैं उस परमेश्वर का नाम वरुण है। यह 'वृञ्' धातु से बनता है। 'वृञ्' धातु के वरण करना, आच्छादित करना निवारण करना आदि कई अर्थ हैं। ये सब अर्थ परमेश्वर में घटते हैं। वह भक्तजनों को वरता है, उन्हें अपनी रक्षा से आच्छादित करता है और उनके कष्टों का निवारण करता है। इस प्रकार परमेश्वर के ये सब गुण उसके वरुण नाम से सूचित होते हैं।

प्रथम मन्त्र में बताया गया है कि वह वरुण इस ब्रह्माण्ड का राजा है। सृष्टि मे जो सब कार्य नियमपूर्वक चल रहा है वह इस वरुण की ही अध्यक्षता मे हो रहा है। वही सब चराचर जगत् का अधिष्ठाता है और वह बड़ा महान् है। वह छोटे मोटे ससारी राजाओं के समान परिमित शक्ति वाला नहीं है। वह अपने राज्य की प्रत्येक घटना का और प्राणियों के प्रत्येक व्यापार का समीप होकर निरीक्षण कर रहा है। वह ससार के कोने-कोने में व्यापक है। उसकी सर्वव्यापकता को बताने के लिये यहा यह कहा गया है कि वह सब जगह विचर रहा है। जैसे कोई दुनियावी अधिष्ठाता अपने अधिष्ठित स्थान मे सब जगह

घूम घूमकर निरीक्षण करता है और देखता रहता है कि कहा क्या हो रहा है, वैसे ही वह वरुण सब स्थानों पर रमा हुआ है और इसीलिये वह सब जगह की जानकारी रखता है। इसीलिये दूसरे मन्त्र मे कहा है कि उस वरुण राजा से कुछ भी छिपा नहीं रहता। जो कुछ जिस क्षण होता है उसी क्षण वह उसे जान लेता है, क्योंकि सब कुछ उसके सामने ही होता है। कोई खड़ा है, चल रहा है, किसी को ठग रहा है, लुक-छिपकर कुछ करतूत कर रहा है, किसी को कष्ट पहुँचा रहा है या कहीं एकान्त मे बैठकर अपने साथी के साथ चुपके चुपके कुछ गुप्त मन्त्रणा कर रहा है, वरुण राजा सब कुछ जान लेता है। उससे छिप कर कुछ भी कर सकना असम्भव है। प्राय हम लोग कोई पाप-कर्म करना चाहते हैं तो कोई ऐसा एकान्त स्थान खोजते हैं जहा कोई हमें देखनेवाला न हो पर यदि हम यह याद रखें कि ऐसा कोई स्थान नहीं है जहा वरुण राजा हमें न देख रहा हो तो हम पाप करने से बच जायें। इसी बात को समझाने के लिये चतुर्थ मन्त्र में भी कहा है कि तुम यह मत समझो कि उस वरुण से छिप कर कुछ कर सकते हो, क्योंकि उसके गुप्त चर उसके सी० आई० डी० इस ससार मे सब जगह फिर रहे हैं। मत समझो कि उनकी आखों में धूल झोंककर चालाकी से तुम कोई काम कर लोगे और उन्हे पता नहीं चलेगा। वरुण के गुप्त चर तो ऐसे विलक्षण हैं कि उनकी हजारों आखें हैं। जब दो आखों वाले मानवीय गुप्तचर तक को धोखा दे सकना कठिन है तब भला इन सहस्रों आखों वाले गुप्तचरों की तो बात ही क्या है। यह भी मत समझो कि वरुण राजा ने हमें कोई अपराध करते हुए या अपने राज्य का कोई नियम भग करते हुए देख लिया तो क्या हुआ, हम भागकर किसी ऐसे स्थान पर चले जायेंगे जहा वरुण का राज्य न हो। वरुण के राज्य से भाग कर कोई कहीं नहीं जा सकता, उसका राज्य सब जगह है कोई इस पृथ्वी से भाग कर द्यु लोक मे चला जाय, और चाहे द्यु लोक से भी परे कहीं चला जाय तो वहा भी वह वरुण के ही राज्य में रहेगा। वहा भी उसे वरुण के दण्ड का भागी होना पड़ेगा। वरुण के राज्य की कोई सीमा नहीं है। पृथ्वी में, आकाश में, ग्रहों में, उपग्रहों मे सर्वत्र उसका राज्य है। यही दिखाने के लिये तीसरे मन्त्र में कहा है कि यह भूमि वरुण राजा की है और वह महान् दूर तक फैला हुआ द्यु लोक भी उसी वरुण राजा का है। वह निचला पार्थिव समुद्र और वह ऊपरला आकाश का मेघमय समुद्र ये दोनों मानो 'वरुण राजा की दो कोखें हैं। इसलिये इनके अन्दर जो कुछ है वह तो मानो उस वरुण की कोखों में ही रखा हुआ है। उस सबसे वह उतनी ही अच्छी तरह से परिचित है जैसे कोई व्यक्ति अपनी कोख में रखी वस्तु से होता है। और वह वरुण पानी की एक छोटी सी बूद तक मे छिपा बैठा है। इस प्रकार वह ससार की छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी वस्तु में रमा हुआ है और ससार की प्रत्येक छोटी से छोटी तथा बड़ी से बड़ी वस्तु उसी की है। अज्ञानी लोग वरुण राजा के इस अलौकिक रूप को नहीं जानते पर "देवा इद विदु" जो देव-

पुरुष हैं विद्वान् और अनुभवी पुरुष हैं वे इस सब रहस्य को जानते हैं।

इस वरुण राजा के नियम अटल हैं। उसके नीचे काम करने वाले अग्नि वायु, सूर्य, चॉद, तारे, ग्रह, उपग्रह, वृक्ष, वनस्पति आदि सब ऐसी तत्परता से और ऐसे नियम में बँध कर काम कर रहे हैं कि कभी कोई गलती नहीं हो पाती। छठे मन्त्र में उसके अटल नियमों का दिग्दर्शन कराने के लिये कहा गया है कि देखो, वरुण राजा के नियम कैसे अटल हैं, रात्रि आने पर ये तारे चमकने लगते हैं और दिन मे वे छिप जाते हैं, रात्रि को चमकता हुआ चॉद भी समय पर निकल आता है। अभिप्राय यह है कि वरुण राजा ने जिस समय के लिये जो काम जिसके सुपुर्द किया हुआ है उसे वह नियमपूर्वक करता चलता है। इस प्रकार प्रतिदिन सूर्य समय पर उदय और अस्त हो जाया करता है, चन्द्रमा नियम से अपनी कलाओं के साथ घटता-बढ़ता हुआ अपनी तारों की सेना सहित रात को गगनमण्डल में उदित होकर चमकने लगता है, ऋतुयें समय पर आ जाती हैं, वृक्ष वनस्पतिया समय पर फल पैदा कर देती हैं। ये सब वरुण राजा के अटल राज नियमों की ही सूचना दे रहे हैं।

और, उस वरुण राजा के 'क्षत्र' का, 'सह' का तथा 'मन्यु' का भला कौन पार पा सकता है। राजा के राजत्व की पहिचान 'क्षत्र' से ही होती है, जिसमें 'क्षत्र' नहीं है जो क्षात्र शक्ति से खाली है, वह राजा होने योग्य नहीं है। महाकवि कालिदास के शब्दों मे, 'क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्र क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढ"—क्षत से, चोट से, आपत्ति से प्रजा की रक्षा करने का गुण 'क्षत्र' है। वह गुण वरुण के अन्दर पराकाष्ठा में विद्यमान है। वह वरुण राजा नाना आपत्तियों से भयों से, चिन्ताओं से, दुःखों से, व्याधियों से प्राणिमात्र की रक्षा करता है। यदि उसकी रक्षा हमे प्राप्त न हो तो हम एक क्षण के लिये भी जीवित न रह सकें, ससार की कोई भी शक्ति क्षण भर में हमे निगल सकती है। हमारे चारों ओर मौत मुह बाये खड़ी है, राजा वरुण की रक्षा से ही हम रक्षित है। इसी प्रकार वरुण के अन्दर 'सह' अर्थात् सहन शक्ति या मर्षणशक्ति, अत्याचारियों का मसल डालने की शक्ति भी अपार है। और वरुण के 'मन्यु' का तो कहना ही क्या है, जब वह दुष्टों पर कोप करता है तो ये द्यावा-पृथिवी तक कॉप उठते हैं। दुनियॉ का कौन ऐसा बडे से बडा राजा है जो इन तीनों गुणों मे वरुण राजा की बराबरी कर सके। बराबरी करना तो दूर रहा, कोई इनके शतांश को भी नहीं पा सकता। ये पक्षी आकाश में उड रहे हैं, क्या ये उस वरुण राजा के 'क्षत्र', सह' और 'मन्यु' को पाने के लिये ही पख फड़फड़ा रहे हैं? ये नदिया बिना रुके निरन्तर बहती चली जा रही हैं क्या राजा वरुण के इन तीनों गुणों को ही पाने के लिये? ये वायु के रोक लेने वाले ऊंचे ऊंचे पहाड़, टीले खडे हैं, क्या ये वायु के वेग को रोककर यह दिखाना चाहते हैं कि हम भी 'क्षत्र' 'सह' और 'मन्यु' मे वरुण राजा की बराबरी कर सकते हैं? नहीं, न ये पक्षी न ये नदियॉ और न ही ये ऊँचे ऊँचे विशाल पर्वत इन गुणों मे वरुण की महिमा का पार पा सकते हैं। उस वरुण राजा की महिमा अपार है, उसका साम्राज्य महान् है।

आर्य समाज के दार्शनिक तथा धार्मिक सिद्धान्त

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० उप प्रधान सार्वदेशिक आ० प्र० सभा)

(१)

आर्य समाज के दार्शनिक सिद्धान्तों का मूल मन्त्र नीचे की ऋचा है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥ (ऋग्वेद १ । १६४ । २०)

आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में इस मन्त्र का यह अर्थ किया है:—

"(द्वा) जो ब्रह्म और जीव दोनों (सुपर्णा) चेतनता और पालनादि गुणों से सदृश (सयुजा) व्याप्य व्यापक भाव से संयुक्त (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त सनातन अनादि हैं और (समानम्) वैसा ही (वृक्षम्) अनादि मूलरूप कारण और शाखारूप कार्य युक्त वृक्ष अर्थात् जो स्थूल हो कर प्रलय में छिन्न भिन्न हो जाता है वह तीसरा अनादि पदार्थ इन तीनों के गुण, कर्म और स्वभाव भी अनादि पदार्थ इन तीनों के गुण, कर्म और स्वभाव भी अनादि हैं। इन जीव और ब्रह्म में से एक जो जीव है वह इस वृक्षरूप संसार में पाप पुण्यरूप फलों को (स्वाद्वत्ति) अच्छे प्रकार भोगता है और दूसरा परमात्मा कर्मों के फलों को (अनश्नन्) न भोगता हुआ चारों ओर अर्थात् भीतर बाहर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। जीव से ईश्वर, ईश्वर * से जीव और दोनों से प्रकृति भिन्न स्वरूप तीनों अनादि हैं।

(२)

इस प्रकार आर्य्य समाज के मत में तीन पदार्थ अनादि हैं—

(१) एक जड़ प्रकृति जो मूल रूप से इस संसार का उपादान कारण है और शाखा रूप से प्राणियों के अन्यान्य शरीरों से लेकर भौतिक जगत् के जितने भी पदार्थ हैं वे सब इसी प्रकृति का विकृत रूप हैं। जिस प्रकार उपादान मिट्टी से घड़े, शरावे आदि भिन्न २ बर्तन बनते और बिगड़ने पर फिर मिट्टी हो जाते हैं उसी प्रकार समस्त भौतिक जगत् उपादान कारण प्रकृति से

* सायणाचार्य ने इस मन्त्र का भाष्य इस प्रकार किया है—

अत्र लौकिक पक्षिद्वय दृष्टान्तेन जीव परमात्मानौ स्तूयेते। यथा लोके द्वौ (सुपर्णौ) सुपतनौ शोभन-गमनौ (सयुजा) समान योगौ (सखायौ) समान ख्यानौ (समान वृक्ष परिषस्व जाते) एक मेव वृक्ष परिषस्व जाते आश्रयत (तयोरन्य) एक पिप्पल पक्व फल स्वाद्वत्ति स्वादुतरमत्ति अपर अनश्नन् (अभिचाकशीति) अभिपश्यति तद्वत् द्वौ सुपर्ण स्थानीयौ क्षेत्रज्ञ परमात्मानौ सयुजा समानयोगौ इत्यादि।

बनता और प्रलय अवस्था में फिर प्रकृति हो जाता है।

(२) जीव-ये चेतन सत्तायें हैं। जीव संख्या में अनन्त हैं। ये अणु हैं। सामान्यतया जीव के यह लक्षण किया जा सकता है—

"ज्ञातृत्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्ववानणु"। अणु होने से जीव का ज्ञान, जीव की शक्ति और जीव का आनन्द अल्प है। इसको अपने काम चलाने के लिये प्राकृतिक शरीर और प्राकृतिक वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है। वेद मन्त्र में तयोरन्य पिप्पलं स्वाद्वत्ति' का संकेत इसी ओर है कि यह समस्त सृष्टि जीव के ज्ञातृत्व, कर्तृत्व और भोक्तृत्व के विकास के लिये है। यही सृष्टि का प्रयोजन है।

(३) ईश्वर अथवा ब्रह्म। यह एक सब से बड़ी चेतन सत्ता है जो जीव तथा प्रकृति सब में व्यापक, सब की स्वामिनी और सब को नियन्त्रण में रखती है। ब्रह्म 'सच्चिदानन्द' है। और उसका अपना ज्ञान और आनन्द परिपूर्ण है। उसको इनके लिये जीव या प्रकृति की आवश्यकता नहीं पड़ती। "अन्य अनश्नन् अभिचाकशीति", ईश्वर फलता नहीं भोगता नहीं। अपने लिये किसी चीज़ को बनाता नहीं। परन्तु जीवों के लिये कार्य क्षेत्र अथवा भोगक्षेत्र को तैयार करता है। ब्रह्म एक है, अनन्त है विभु है। अखण्ड है, एकरस है।

(३)

आर्य समाज का यह सिद्धान्त अन्य मतों से भिन्न है। आप इसको एक-ईश्वर-वाद या अद्वैत-वाद भी कह सकते हैं क्योंकि इस सिद्धान्त मे अनेक ईश्वर अभिमत नहीं हैं। द्वैतवाद भी कह सकते है क्योंकि अचेतन प्रकृति और चेतन ईश्वर तथा चेतन जीव दोनों का अस्तित्व अभि-प्रेत है। त्रैतवाद भी कह सकते हैं क्योंकि ईश्वर, जीव, तथा प्रकृति तीनों को अनादि माना गया है। यह तो शब्दों के अर्थों की अपेक्षा से है, परन्तु शांकर मत के समान न तो यह विवर्तवाद है और न अभिन्न-निमित्त उपादान-कारण वाद। अर्थात् आर्य समाज नहीं मानता कि केवल ब्रह्म ही ब्रह्म तात्विक सत्ता है। अन्य सब भ्रम, स्वप्न या माया है। दृष्टि-गत होता है परन्तु है नहीं, या अकेला ब्रह्म ही इस संसार का निमित्त कारण भी है और उपादान कारण भी, इसी प्रकार आर्य समाज न तो तत्वैकवादी है, न कारणैकवादी। मुसल्मान या ईसाइयों के समान आर्य्य समाज यह भी नहीं मानता कि ईश्वर केवल निमित्त कारण है और वह बिना उपादान प्रकृति के सृष्टि बना देता है।

(४)

किसी काम के लिये तीन चीज़ें चाहियें —

(१) बनाने वाला (दृष्टान्त-कुम्हार)—इसको निमित्त कारण कहते हैं।

(२) जिस से चीज़ बनाई जाय (दृष्टान्त–मिट्टी इसको उपादान कारण कहते हैं।

(३) जिसके लिये चीज़ बनाई जाय (दृष्टान्त-वे लोग जिन के लिये कुम्हार बर्तन बनाता है)।

कारणैक्यवाद के मानने में यह कठिनाई होगी कि केवल ईश्वर ही निमित्त भी होगा और उपादान भी और जीवों की अलग सत्ता न मानने के कारण ब्रह्म जो कुछ बनायेगा वह अपने लिये

ही, क्योंकि अन्य तो कोई है हो नहीं। ऐसी दशा मे ब्रह्म पूर्ण और अखण्ड न रह सकेगा। शायद इसी आपत्ति से बचने के लिये विवर्तवाद का आश्रय लिया गया होगा। अर्थात् ईश्वर वस्तुत कुछ नहीं बनाता। "अतात्विकोऽन्यथाभावो विवर्त इति उच्यते" है नहीं, प्रतीत होता है। आर्य्य समाज को विवर्तवाद इस लिये अभिमत नहीं है कि अतात्विक मे अन्यथा भाव करने वाला ब्रह्म को ही मानना पडेगा। स्वप्न देखना या भ्रम में पड़ना या विवर्त्त मानना तो अज्ञानी या मिथ्या-ज्ञानी जीव के लिये सभव है पूर्ण ज्ञानी ईश्वर के लिये नहीं। यदि जीव का अल्पज्ञ, अनादि माना जाय जैसा कि आर्य्य समाज मानता है तो जीव के लिये अतात्विक मिथ्याज्ञानी होना भी सभव है और तत्ववेत्ता ज्ञानी होना भी। परन्तु जीव के अनादित्व न मानने मे भ्रम, माया, स्वप्न, या सृष्टि का प्रयोजन ब्रह्म ही में मानना पडेगा। आर्य्य समाज को ऐसा मानने में घोर आपत्ति है।

(५)

आर्य समाज रामानुज मत के समान जीव या प्रकृति को ब्रह्म का प्रकार मात्र मानने के लिये भी तैय्यार नहीं अर्थात् यह विशिष्टाद्वैतवादी भी नहीं क्योंकि 'सत्य ज्ञानम् अनन्त ब्रह्म' का जड प्रकृति या अल्पज्ञ जीव किसी प्रकार प्रकार' नहीं कहा जा सकता। विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैताद्वैत आदि सम्प्रदायों का एक मात्र कारण यह प्रतीत होता है कि शाकर माया-वाद की आपत्तियों का निराकरण करने की प्रबल इच्छा होते हुए भी शाकर अद्वैतवाद से छुटकारा पाना आचार्यों को इष्ट न हुआ। शाखाओं को काटा मूल को यों ही छोड़ दिया। यह ऋषि दयानन्द का ही काम था कि उन्होंने आपत्ति की जड़ को कुल्हाड़ा मारा, जब तक अद्वैत किसी रूप में रहेगा कठिनाई दूर नहीं होगी। द्वा सुपर्णा' मानने से ही छुटकारा हो सकता है।

(६)

वेदान्त—सम्प्रदाय ने ब्रह्म ईश्वर, हिरण्य गर्भ आदि प्राचीन वैदिक शब्दों के जो अर्थ-भेद कल्पित कर रक्खे हैं वे भी आर्य समाज को मान्य नहीं, वेदान्तियों का 'ब्रह्म' सर्वथा निरपेक्षक सत्ता है। और ईश्वर माया की उपाधि से युक्त ब्रह्म है, वेद ऐसा नहीं कहते। नीचे की ऋचा में देखिये —

यस्य भूमि प्रमान्तरिक्षमुतोदरम् । दिव यश्चक्रे मूर्धान तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नम ॥

यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णव । अग्नि यश्चक्र आस्य तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नम ॥

यस्य वात प्राणापानौ चक्षुरङ्गिरसोऽभवन्। दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नम ॥

(अथर्व वेद १०।७।३२, ३३, ३४)

(७)

ईश्वर, जीव और प्रकृति तीन पदार्थों को अनादि मानकर आर्य्य समाज ने पौराणिक देव-ताओं को भी अमान्य ठहराया है। वैदिक देव भौतिक भी हैं जैसे अग्नि, सूर्य्य आदि। जीव भी हैं जैसे विद्वान् ऋषि मुनि। और ईश्वर को भी देव कहा है। परन्तु पौराणिक देवता विशेष सभाए हैं जो न जीव हैं न ब्रह्म, पुराण इस विषय में निश्चयात्मक नहीं हैं। क्या अखण्ड एक रस ब्रह्म की किसी अवस्था का नाम देव है

अथवा जीव ही विशेष उन्नति पाकर देव हो जाते हैं, इस प्रश्न का उत्तर पुराण नहीं देते। आर्य्य समाज इन कल्पनाओं को भ्रममूलक मानता है इसके मत मे देव कोई ऐसी सत्ता नहीं है जो ब्रह्म और जीव के बीच की हो अर्थात् ब्रह्म से कुछ छोटी और जीव से कुछ बडी, गणेश के समान उत्पन्न तो हुए हों परन्तु फिर भी अमर हों, मन चाहा शरीर धारण कर सकते हों या पर्वतों, नदियों आदि के अधिष्ठातृ-देव हों।

(८)

सर्व व्यापक और अखण्ड तथा अपरिवर्त्तनशील होने के कारण ईश्वर का अवतार भी मान्य नहीं। हाँ अल्प-शक्ति वाले जीव को शरीर की अपेक्षा हाती है और वह एक शरीर छोडकर दूसरा शरीर धारण कर लेता है इसी को आवागमन कहते है। चेतन जीव का जड शरीर को धारण करना ही अवतार है अर्थात् जीव नित्य अववार लिया करते है कोई मनुष्य का, कोई बन्दर का, कोई चींटी का और कोई मच्छर का, जब जीव इस अवतार-बन्धन या जन्म बन्धन से छूट जाता है और पूर्ण विश्राम की अवस्था प्राप्त कर लेता है तो उसी को मुक्ति या मोक्ष कहते हैं। वेदों मे इस को 'परम पद' या 'अपवर्ग' कहा है। यह परम पद एक जन्म में नहीं किन्तु जन्म जन्मान्तरों की उत्तरोत्तर उन्नति के पश्चात् प्राप्त होता है। राम, कृष्ण आदि को आर्य्य समाज महापुरुष मानता है परन्तु ईश्वर नहीं।

(९)

जीव अल्पज्ञ और अल्प शक्ति वाले हैं। इनको अपनी उन्नति के लिए शरीर आदि साधनों की आवश्यकता होती है। शरीर में ज्ञान-इन्द्रिया भी हैं और कर्म-इन्द्रिया भी। ज्ञान और कर्म एक दूसरे के साध्य साधक होते हैं। हम आख से देखते और पैरों से चलते हैं। देखना ज्ञान की प्राप्ति का साधन है और चलना कर्म। पैर न होते तो चल न सकते और आख न होती तो स्थान विशेष पर पहुच कर देख भी न सकते। इस प्रकार कर्म काण्ड ज्ञान काण्ड का और ज्ञान काण्ड कर्म काण्ड का साधक होता है और ये दोनों मिलकर आत्मा को आनन्द पहुँचाते हैं। इस प्रकार जीवन के तीन विभाग हो जाते हैं कर्म काण्ड, ज्ञान काण्ड और उपासना काण्ड। ज्यों ज्यों जीव उन्नति करता है ये तीनों विभाग विशद होते जाते हैं। पूर्ण जीवन इन तीनों काण्डों का समन्वय है। ज्ञान काण्ड के दोष से कर्म काण्ड दूषित हो जाता है और उससे उपासना काण्ड बिगड़ जाता है अर्थात् अज्ञान या भ्रम-पूर्ण ज्ञान से कुकर्म और कुकर्मों से दुःख होता है, इसलिये ज्ञान की प्राप्ति करके श्रेष्ठ कर्म करने चाहियें। श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा ही दुःख को पार कर सकते हैं। आर्य समाज ज्ञान मार्ग, कर्म माग और भक्ति मार्ग में भेदक भित्ति नहीं बनाता, वस्तुत ये तीनों अलग अलग माग हैं ही नहीं। बिना यत्न के ज्ञान कैसे प्राप्त होगा और बिना ज्ञान के आनन्द कैसे होगा? जीवन के समस्त व्यापार इन्हीं तीनों अर्थात् ज्ञान, कर्म और उपासना से समन्वित हैं।

(१०)

एक पाठशाला मे कई कक्षायें होती हैं और उन्नति करते करते विद्यार्थी निम्न श्रेणी से उच्च-

तम श्रेणी तक पहुँचता है। हर श्रेणी में कुछ ज्ञान प्राप्त करना होता है कुछ काम करना सीखना पड़ता है और कुछ सौन्दर्य से आनन्द प्राप्त करना होता है (Science, art aesthetics)। इसी प्रकार जीवन की भी बहुत सी श्रेणियां हैं और उन श्रेणियों मे ज्ञान, कर्म और उपासना (आनन्द) के तल अलग अलग हैं। हम कीट पतग, पशु, पक्षी आदि की योनियों से लेकर मनुष्य योनि के भिन्न भिन्न रूप देखते है। प्रत्येक जीव कुछ सीखता, कुछ करता और कुछ भोगता है। भोग का ज्ञान पर ज्ञान का कर्म पर कर्म का भोग पर प्रभाव पड़ता है। यह तीनों तल को उठाने या गिराने में सहायक होते हैं। कुवासनायें कुकर्म कराती और कुकर्म ज्ञान की प्राप्ति में बाधक होते हैं। जब सत्य असत्य का विवेक हो जाता है तो जीव कर्तव्य परायण हो जाता है। असत् कर्मों को त्याग कर सत् कर्मों में प्रवृत्त हो जाता है और कुवासनायें छूट कर उत्कृष्ट आनन्द की प्राप्ति होती है, इसी को वेदों ने सदाचार कहा है —

विश्वानि देवसवितर्दुरितानि
परासुव यद्भद्रतन्न आसुव।

सुमन-संचय

अपूर्व त्याग

यह घटना उस समय की है जब पाण्डव लोग अज्ञात वास में अपना वेष बदले इधर उधर छिपते फिरते थे। दैवयोग से माता कुन्ती को अपने पुत्रों के साथ एकचक्रा नगरी मे एक निर्धन ब्राह्मण के घर मे शरण लेनी पड़ी। ब्राह्मण ने पाण्डवों के साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया और जो कुछ बन पड़ता था, वह भोजनादि से उनकी सहायता भी किया करता था।

उन्हीं दिनों एकचक्रा नगरी मे बक नामक एक दुष्ट राक्षस ने बड़ा उत्पात मचा रखा था। उसके उपद्रवों और अत्याचारों से एकचक्रा नगरी में त्राहि त्राहि मच गई थी। वह जिसको जब चाहता पकड़ कर ले जाता और मार कर खा जाता था। लोग न सुख की नींद सो सकते थे और न स्वतन्त्रता से उठ-बैठ, चल-फिर और खा-पी सकते थे। सर्वत्र ही उसका आतङ्क और पीड़ितों का करुण क्रन्दन देख और सुन पड़ता था। माताएँ अपने जिगर के टुकड़ों के लिए, पत्नियाँ अपने पतियों के लिए और बहिनें अपने प्यारे भाइयों के लिए धाड़ मार २ कर रोती थीं।

जब नगर-निवासी प्रतिक्षण पकड़े जाने के भय से इधर-उधर छिपते २ तङ्ग आ गए और उनका जीवन प्रतिक्षण सकट में रहने लगा तब उन्होंने मिल कर बक के सम्मुख यह प्रस्ताव रक्खा कि प्रति दिन बारी २ से प्रति घर से एक आदमी भोजनार्थ उसके पास पहुँच जाया करेगा। बक ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और उस दिन से प्रति दिन एक आदमी भोजनार्थ नियत समय पर उसके पास पहुँच जाया करता था।

एक दिन सहसा ही ब्राह्मण के घर से रोने की आवाज सुन पड़ी। माता कुन्ती तत्काल ब्राह्मण के पास गई और उससे रोने का कारण पूछा। ब्राह्मण-पत्नी ने अवरुद्ध कण्ठ में रोते २ बक के उपद्रवों की कथा सुना कर और नगर की पचायत का निर्णय बतलाकर कहा 'माता'। आज हमारे घर का ओसरा (बारी) है। मै इन्हे (पतिदेव को) कह रही हु कि बक के पास मुझे जाने दो। मेरे जाने से ये इन छोटे २ बच्चों का भली भाँति पालन-पोषण करने में समर्थ हो सकेंगे। यदि ये ही चले गए तो पीछे हमारा पालन कौन करेगा? अपना कोई सगा-सम्बन्धी और पास मे पैसा भी नहीं? तुम देखती हो प्रतिदिन खाने के लाले पडे रहते हैं। ब्राह्मण ने अपनी देवी को बीच मे रोक कर कहा 'मेरे जाने से ही काम बनेगा। अपनी आँखों देखते मै क्योंकर तुम को मौत की भट्टी में झोंक सकता हूँ?' इतने मे ही ब्राह्मण का छोटा पुत्र अपनी तुतलाती भाषा में कहने लगा 'टलो अम सब उस राक्शस को मालेंगे" पुत्र की बालोचित अटपटी बात सुनकर और बनावटी हँसी हँसकर ब्राह्मण ने उसे अपनी छाती से लगाया और पुचकार कर कहा "हम सब ही उस

राक्षस के पास चलेंगे। बिना ऐसा किये काम न बनेगा" ब्राह्मण परिवार की इस दयनीय अवस्था ने माता कुन्ती को विचलित कर दिया। दया से उनकी छाती भर आई। ब्राह्मण कुमार को सस्नेह अपनी गोद मे उठा कर माता ने कहा 'तुम मे से किसी को राक्षस के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। मै अपने बेटे भीम को राक्षस के पास भेजूंगी।

ब्राह्मण ने कानों पर हाथ धरकर कहा, नहीं माता, ऐसा न होगा मैं यह पाप कर्म न होने दूँगा। आप मेरे अतिथि हैं। मै प्राण रहते आतिथ्य धर्म्म को कलुषित न होने दूँगा। ब्राह्मण पत्नी ने पतिदेव का समर्थन करके ऊर्ध्व श्वास मे कहा, 'माता। तुम पराई आग में क्यों कूदती हो? तुम्हारे पुत्र को काल के मुख में भेज देने से ससार हमें क्या कहेगा? हमें अपना मुँह छिपाने के लिए स्थान भी न मिलेगा?' माता कुन्ती ने हर्ष मिश्रित गर्व के साथ उन्हें उत्तर दिया 'मेरा पुत्र राक्षसों को मारने का मन्त्र जानता है। उसने बहुत से राक्षसों को मारा है।'

ब्राह्मण और ब्राह्मण-पत्नी को अपने प्रस्ताव से सहमत करने के पश्चात् माता कुन्ती अपने निवास गृह मे गई। जिस उल्लास और अभिमान से उन्होंने प्रतिज्ञा की थी वह पल भर में ही तिरोहित हो गया। उनकी मुख मुद्रा गभीर हो गई और पृथ्वी पर बैठकर वे विचार तरङ्गों में गोते खाने लगीं। मातृत्व के वात्सल्य ने तुरत ही उनके कोमल भावों को जगा दिया। अनिष्ट की आशकाएँ रह रह कर उनके हृदय को उद्वेलित करने लगीं 'माता, तुम पराई आग में क्यों कूदती हो।' ब्राह्मण पत्नी के इन मर्म भेदी शब्दों की यथार्थता उनके ममता मय नेत्रों के सामने मूर्तिमान् होकर उपस्थित हो गई। वे सोचने लगीं प्रत्युपकार का बदला अन्य प्रकार से भी दिया जा सकता है। उसके लिए भीम के प्राणों की बाजी लगा देना निरी मूर्खता होगी। यदि इस बदले के चुकाने में भीम का अनिष्ट हुआ तो वात्सल्य की मूर्ति विदुर सिर धुन धुन कर अपने प्राण दे देंगे। हस्तिनापुर के वायुमडल मे मेरे लिए सदैव धिक्धिक् की ध्वनि प्रतिध्वनित होगी। अपनी इस पवित्र धरोहर के साथ खिलवाड करने के अपराध के लिए महात्मा पाण्डु की आत्मा मुझे कदापि क्षमा न करेगी। इस प्रकार विचार तरङ्गों मे डूबी हुई कुन्ती उठकर चारपाई पर लेट गई, और थोडी देर बाद सो गई। सोते २ अकस्मात् ही उनकी आँखें खुलीं गई, वे हँसकर उठ बैठीं और कहने लगीं "महात्मन्। आपकी पुत्र वधू से पुनीत प्रतिज्ञा भङ्ग का दुष्कर्म न होगा। एक भीम क्या सहस्रों भीमों की बलि चढ़ाने मे भी मैं पीछे न रहूँगी। अपनी कुल-प्रतिष्ठा और मातृत्व की मान मर्य्यादा मेरे हाथ मे सुरक्षित समझिए। मुझे आशीर्वाद दें कि मै अपनी प्रतिज्ञा के इस अनुष्ठान को हँसते २ पूरा करूँ।" यह कहते हुए माता कुन्ती का हृदय श्रद्धा से पितामह भीष्म के अज्ञात चरणों में झुक गया। वे उठकर भीम के पास गई और उन्हें राक्षस के पास जाने की आज्ञा दी।

माता की आज्ञा पाकर भीमसेन प्रसन्न मन बन को चले गए। जब युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव चारों भाई भिक्षा करके घर लौटे

और उन्हें विदित हुआ कि भीम वन को गया है तो युधिष्ठिर अपनी माता की इस करतूत पर बड़े क्रुद्ध और दुखी हुए और भीम को स्मरण करके अपना मन भारी करने लगे।

माता कुन्ती को धर्म्मराज युधिष्ठिर की यह दुर्बलता सहन न हुई। उन्होंने कहा 'इस निर्धन ब्राह्मण के हमपर कितने अधिक उपकार हैं ? क्या इस सकट के समय मे हम लोग चुप बैठ सकते हैं ? फिर हम तो क्षत्रिय हैं। क्षत्रियों का धर्म्म दुखियों की सहायता करना है। अपने धर्म्म का पालन करते हुए यदि क्षत्री के प्राण भी चले जायँ तो इससे अधिक श्रेष्ठ और क्या बात हो सकती है ? यदि हम हाथ पर हाथ धरे ब्राह्मण परिवार की दुर्दशा देखते रहें तो बताओ कितनी बड़ी कृतघ्नता होगी ? तुम लोग भीम के लिए दुखी और चिन्तित मत हो।"

यह कह कर दयावती कुन्ती मौन हो गई। मात के उद्बोधन से युधिष्ठिर भी शात हो गए। उन्होंने आदर पूर्वक माता के चरणों में शिर रख कर क्षमा याचना की।

लगभग २-३ घटों के पश्चात् भीमसेन हँसते हुए घर लौट आए। माता ने छाती से लगा और चुमकार कर पूछा 'कहो ! राक्षस का क्या हुआ ?' भीमसेन ने मुस्करा कर लापरवाही के साथ कहा "माता, वह तो मेरे एक घूसे को भी सहन न कर सका। मैने बात की बात मे उसे ठिकाने लगा दिया। उसकी लाश नगर के उत्तरी भाग में लाकर डाल दी है जिस से लोग देख सकें कि वह किस मौत मरा है ?" माता कुन्ती के इस समय के हृदय की अवस्था अनुभव ही की जा सकती है उसका वर्णन एक कठिन कार्य्य है। बक के बध का समाचार बिजली की नाईं नगर में फैल गया और सर्वत्र चर्चा होने लगी कि इस दुष्ट राक्षस का बध कर्त्ता वीर पुण्यात्मा कौन है ?"

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सार्वदेशिक में विज्ञापन छपाई के रेट्स

स्थान	१ मास का	३ मास का	६ मास का	१ वर्ष का
दूसरा पृष्ठ	१०)	२५)	४०)	७५)
एक कालम	६)	१५)	२५)	४०)
आधा ,,	३॥)	८)	१५)	२५)
चौथाई ,,	२)	४)	८)	१५)

विज्ञापन छपाई का धन नियमानुसार पेशगी आना चाहिये।

अध्यात्म सुधा

प्रेममयी माता

१ तारे सारे महिमा गाते तेरी हैं प्रभु मिल मिलकर
भूल भूल कर फूल तुम्हारे, गाते गीत सदा खिल कर।
सूर्य चन्द्र पर्वत बन झण्डे, तेरी याद दिलाते हैं
भूले भटके लोगों को ये, तेरी जोत दिखाते हैं ॥

२ ऐसा कौन मूर्ख जो जग लख, जगपति को नहि याद करे
कौन अभागा सुखसागर में, रहते दुखिया दीन मरे ?
इससे बढ अचरज क्या हो जो, पानी में प्यासी हो मीन
ऐश्वर्यों की खान खुली पर, तो भी जन धन हीन सुदीन ॥

३ प्रेममयी मा को नहि जाने, उससे बढ नादान कहा
सर्व शक्तिमयि माता से बढ, हो सकती है शान कहा ?
रे नादान उसी जगदम्बा, का निशिदिन धर ध्यान यहा
जिस आनन्दमयी माता ने, सकल बनाया अजब जहा ॥

४ जिसकी अद्भुत रचना लखकर, सबकी मति चकराती है
जिसकी महिमा पात पात में, नजर रात दिन आती है।
उस आनन्दमयी माता की, गोदी में तू विचराकर
हे नादान, वही चिन्ताओं को तेरी लेवेगी हर ॥

५ चिन्ता भार दबाता तुझको, जो तू उस पर ही दे डाल
रख उसपर विश्वास अटल बस, वह करदेगी तुझे निहाल।
सकल काल मे उस को माता, मान समझ अपने को बाल
नहीं दुष्ट तब कोई बाका, कर सकता जो तेरा बाल ॥

६ कितने भी तूफान भयङ्कर, आवें तू नहि कुछ घबरा
उस माता की गोदी में रह, बन मस्ताना कर विचरा।
दुःख शोक सब दूर करेगी, पाप ताप सब हर लेगी
भक्ति सुधा का पान करा मा, तुझको निर्भय कर देगी ॥

७ घट घट में व्यापक जब मा को, जाने तब हो द्वेष कहा ?
अङ्ग सङ्ग उसको जब जाने, हो सकता तब क्लेश कहा ?
पाप पास आ सकता कैसे, जब माता की गोद रहे ?
नित निष्पाप भक्त के मन में, शान्ति सुमङ्गल मोद रहे ॥

८ बस अब अपने तनमन धनजन, सब उसके अर्पण करदे
भक्ति भावसे प्रेम मयी मा, का निशिदिन अर्चन करले।
उसे समर्पित कर कर्मों को, कर फल की हो चाह नहीं
नहीं शोक का अश रहेगा, तथा क्लेश का लेश कहीं ॥ "ध्रुव"

"अनोखा-आदर्श"

[लेखक—श्री बाबूलालजी दीक्षित "रसिक" उन्नाव]

"आज मैं अन्तिम निर्णय का विचार ले आपकी ही प्रतीक्षा मे यहा आ खडी हुई हूँ। क्या मैं आशा करूँ ?" सरोज ने सतृष्ण नेत्रों से विनोद की ओर मुस्कराते हुए कहा। अहो! मेरा सौभाग्य !! किन्तु खड़ी क्यों हो? बैठ क्यों न जाइये। यह कहते हुए मालतीको पादपके नीचे पडी हुई कोच पर कर खींच कर बिठला लिया और कहा—"सरोज! कुछ और सोचने तथा निश्चय करने का अवसर दो।"

"तब सम्भव है आपकी सरोज, आपकी न हो सके।" सरोज ने विषाद के स्वर में कहा। "सो कैसे? एक आश्चर्य भरे स्वर में विनोद ने प्रश्न का उत्तर देने की चेष्टा की।"

"समय के प्रवाह से, दुनिया की दुरगी चाल से, जाति, धर्म्म तथा समाज के भय और अड़गे से प्रत्येक मानव हृदय विवश है। हम चाहते है ऐसा करलें, वैसा करलें, समस्त विश्व को प्रेम पाश में आबद्ध करलें। अपना बनालें किन्तु विनोद बाबू ऐसा करना हमारे हाथ मे नहीं है। न हँसी खेल की बात है।

यह तो कायरों का सिद्धान्त है। मनुष्य क्या नहीं कर सकता? चाहिए उसमे केवल सच्ची लगन, दृढ़-सकल्प, आत्म शक्ति और उच्च हृदय की भावनाए उसके ध्येय के मार्ग मे जाति, धर्म्म, समाज, रूढ़ि परम्परा कुछ भी रोडे नहीं अटका सकते हैं। "आवेश पूर्ण शब्दों में विद्रोही हृदय की भावना ले विनोद ने कहा —

"जिस समाज, जाति, धर्म तथा रूढ़ि परम्परा का तुम्हे भय नहीं। जिस सच्ची लगन, दृढ सकल्प, आत्म शक्तिकी तुम डींगें हाक रहे हो उन्हीं से आपको विवश होना पडेगा। नत मस्तक होना पडेगा जब कि केवल बात करने का अवसर जाता रहता है तथा कार्य्य करने का महान् प्रश्न समक्ष उपस्थित हो जाता है तब क्षणिक आवेश में कही हुई बातें न जाने कहा तिरोहित हो जाती हैं। क्षणिक आवेश न तो चिरस्थायी होता है न विवेक पूर्ण। देश तथा समाज की वर्त्तमान दशा की ओर आँखें पसार कर न्याय की दृष्टि से देखिए कितनी अबला निरीह कुमारियों की चिर सचित आशाओं, अभिलाषाओं की, चिर सचित स्नेह, हत्याकर, उनके हृदय की उठती हुई नव उमङ्गों का, तरङ्गों का बलिदान कर उनकी भविष्य की भावनामयी दुनिया तहस नहस नहीं कर देती रसातल को नही पहुँचा दी जाती। धम, जाति और समाज, देश के कल्याण, पूज्य माता पिता, परिवार के सम्मान रक्षा नारीत्व की रक्षा निमित्त आत्म हत्याओं के करने के लिए नहीं विवश होना पडता। उन्हें कैसे कैसे प्रेम के चित्ताकर्षक, नाटक दिखलाए जाते हैं? कैसे कैसे भविष्य की कल्पना-मयी रगीन दुनिया के दिलकुश नज्जारे दिखलाये

जाते हैं। वे बेचारी इन अविश्वासी, स्वार्थी, क्रूर, कामी नवयुवकों के हथकण्डों, दुरंगी चालों, धूर्त्तता को न पहिचानते हुए उनके प्रेम के माया जाल मे, यौवन के आसव के नशे में अपने को आत्म विभोर कर भविष्य के सुखद कल्पना के साम्राज्य में विचरण करती हुई मनोमुग्ध हो जाती हैं। उन्हें भविष्य के सोचने का, कल्पना करने का अवसर ही नहीं दिया जाता। अन्त को अपना सब कुछ खो, लोक मर्य्यादा को ठुकरा कर, समाज, जाति, धर्म्म से बहिष्कृत हो अभाग्य को कोसती हुई अपना कलंकित अभिशापित-जीवन लिए या तो किसी गुण्डे की उजड़ी दुनिया बसाती हैं अथवा वेश्यालय आबाद करती हैं। उनके लिए मानव का हृदय दानव बनकर स्नेह शून्य हो जाता है।"

"जाने दीजिए। यह तो प्रेम की अल्हड़ दुनिया ही स्वार्थ और अविश्वास की नींव पर बसी हुई है किन्तु यहीं पर महान् त्याग, प्रेम के उत्कृष्ट आदर्श भी मौजूद हैं जिससे समस्त विश्व परिचित है।" विनोद ने दोहराया।

"यही सही। दहेज की अमानुषिक प्रथा से—कितने आबाद घर बीयाबान नहीं हो गए? यह वसुन्धरा कितनी बेकस, निरीह अबला कुमारियों के आत्म हत्याओं के रक्त से रक्त रञ्जित नहीं हो गयी। कितने सम्पन्न सद्गृहस्थ, दर दर भटकने और एक एक दाने के लिए मुहताज नहीं हो गए हैं। कितने अभागे पिता, अपनी मान-मर्य्यादा सम्मान की रक्षा निमित्त सदैव के लिए परिवार सहित धराशायी नहीं हो गए हैं। सारा संसार, मानव समाज नियति नटी की इस विभीषिका का करुणा पूर्ण नग्न दृश्य अपने नेत्रों से आए दिन देख रहा है, किन्तु किसने इस ओर ध्यान देने, सोचने तथा सुधार की भावना से कार्य्य करने का, इस पथ पर अग्रसर होने का साहस किया है? आपही मेरे समक्ष जीवित जागृत उदाहरण उपस्थित हैं कि जिन्हें युगों के युगों व्यतीत करने के पश्चात् भी आज सोचने तथा निश्चय करने के लिए समय का अभाव ही है। क्या आप पूज्य माता पिता के स्नेह की, सम्मान की, चिर संचित आशाओं पर कुठाराघात करते हुए उनकी आशा की अवज्ञा कर तथा समाज जाति, धर्म्म की अवहेलना कर मुझ निर्धन, अभागे पिता की सन्तान से पाणिग्रहण करेंगे? मुझे तो इस जीवन में आशा नहीं।"

"हां। इसी समय॥" विनोद ने आवेश पूर्ण शब्दों में त्याग के स्वरमे कहा। "मुझे न तो पूज्य माता पिता का, समाज, जाति धर्म्म का भय है न परवाह। ऐसे समाज, जाति, धर्म्म को जीता जागता होली में जला देने मे किंचित् मात्र भी दया न आयेगी। संसार से इनका सदैव के लिए उठ जाना ही श्रेयकर है।"

"भूलते हो विनोद बाबू। अब केवल डींगें मारने, मंच पर समाज-सुधारक, उपदेशक, धर्म्म के ठेकेदार, नव युग निर्माता आदि उपाधियों से अपने को विभूषित कर भाषण देने तथा संसार, समाज, धर्म की आंखों में जनता की धूल झोंक हिमायत करने का अवसर नहीं है। बल्कि कुछ कर दिखलाने का।"

मैं तो यहां तक कहने को प्रस्तुत हूँ कि जिन भारत के नव निहालों, लाड़ले लालों को, राष्ट्र का,

धर्म्म, जाति और समाज का नव निर्माता, भाग्य विधाता अनुभव करता है आज हमारा ही राष्ट्र, समाज और जाति जिन भारत के नवनिहालों पर ही देश की, राष्ट्र की, समाज और जाति की सारी कामनायें, आशायें उन्नति अवनति का सारा उत्तरदायित्व अवलम्बित है, जिन पर समस्त राष्ट्र गर्व करता है, जिनमें शिक्षा, दृढ सकल्प, आत्म शक्ति, साहस, महान् त्याग, उच्च भावना आदि किन्हीं भी गुणों का न तो अभाव होता है न कमी। किन्तु जब कभी अभागे, अभिशापित, निर्धन पिता, उनके पूज्य पिता जी के द्वार जा न जाने कितनी आशायें तथा कामनायें ले मानवता के नाते अपनी असमर्थता, निर्धनता तथा अपनी विषम परिस्थितियों का करुण-चित्रण चित्रित करते हुए याचना के स्वर में कन्या दान की भीख मागता है तब न जाने कहा—उन शिक्षित आदर्श नवयुवकों का वह दृढ सकल्प, साहस, आत्म शक्ति त्याग, उच्च शिक्षा और वे पूर्व की डींगें तिरोहित हो जाती हैं। उनमें इतना भी तो साहस नहीं होता कि वे अपने आत्म-विचारों को निर्भयता के साथ स्पष्टता पूर्वक व्यक्त कर सकें। वे अपने पूज्य पिता जी की लम्बी लम्बी मागों का विरोध कर दया की, क्षमा की प्रतिमा, आए हुए द्वार पर इस अभागे के प्रवाहित अश्रु प्रवाह को रोक उसे सान्त्वना प्रदान करते हुए एक नया अनोखा आदर्श समक्ष रख राष्ट्र का भाल उच्च कर सकें। इसमें कौन दोषी है। नव युवक अथवा उनके पूज्य पिता। आप ही बतलाइये।

❁ ❁ ❁ ❁

विनोद के पूज्य पिता प्रयाग के प्रतिष्ठित गण्य मान्य प्रतिभाशाली वकीलों में से थे। कान्य कुब्ज ब्राह्मण कट्टर सनातन धर्मी प्राचीन रूढ़ि परम्परा अनुयायी, धर्म भीरु। उन्ही के लाड़ प्यार का पोषित एक मात्र सन्तान विनोद शङ्कर था। प्रखर बुद्धि, होनहार, विवेकी, शिक्षित, सम्भ्रान्त नव युवक था। एम ए फाइनल का विद्यार्थी था। समाज, धर्म, जाति में—रूढ़ि परम्परा द्वारा उत्पन्न कुरीतियों का देशकी समाज और जाति की वर्त्तमान शोचनीय दशा का, दहेज की अमानुषिक प्रथा द्वारा आए दिन आर्थिक कठिनाइयों का हत्याओं का उसे पूर्ण अनुभव ही न था वरन् प्रतिशोध की भावना की प्रज्वलित ज्वाला उसके हृदय में सदैव दहका करती है। उसकी हृदय की छुपी हुई विद्रोही भावनायें उसके हृदय को उभारा करती है।

सरोज—उसका अभागा अभिशापित छोटा सा परिवार जिसमे वह थी उसका अभागा पिता, उसकी दो कनिष्ठ बहिनें। पूज्य पिता नगर के किसी कार्यालय मे क्लर्क थे। मास के अन्त में जब उसी का अभागा पिता चाँदी की २५ रजत मुद्राओं को उसके आचल में बिखेर देता तब न जाने कितना उस अभागे परिवार को आत्म सन्तोष विराम तथा सुख मिलता था। यही उनका जीविकोपार्जन का मुख्य साधन था।

सरोज—येन केन प्रकारेण मैट्रिक की तैयारी करती, तथा गृहस्थी की डगमगाती हुई नैय्या को खेती हुई अपनी अविचल विचार धारा में प्रवाहित बही चली जा रही थी। सरोज से—

आए दिन शोषित नारी समाज की हृदय विदारक शोचनीय दशा का, मानव के अध पतन का अत्याचारी, निर्दय समाज, जाति के अमानुषिक, वर्बरतापूर्ण अत्याचारों, सामाजिक कुरीतियों का,नव युवकों के कुटिल कुचक्रों का रहस्य छुपा हुआ न था। उसका विद्राही मन ससार की दुरंगी चालों से, मानव के अत्याचारों स जर्जर हुआ जा रहा था। हृदय में प्रतिहिंसा की भावना आठों याम सुलगा करती थी।

दोनों एक ही विश्व विद्यालय मे अध्ययन करते थे। यदा कदा—अवसर पा दोनों के दोनों मिलते। अपनी कहते, उनकी सुनते। जिस पथ आते उसी पथ मुड जाते। न जानें क्यों ? एक दूसरे की ओर खिचते चले जा रहे थे।

विनोद—सरोज की एक भोली भाली चित वन पर, मधुर मुस्कान पर, एक आकर्षण युक्त कटाक्ष पर आत्म विभोर हो, खोया सा, पागल सा अवसर की टोह में घूमा करता। किन्तु सरोज इन नवयुवकों के हथकण्डों से, चालों से कपट युक्त सलापों से न केवल पूर्ण विज्ञ थी वरन् सदैव सतर्क और सावधान रहा करती थी। एक प्रकार से उसे नवयुवक समाज से खिन्न थी, विरक्ति थी, चिढ थी और था विद्रोह। उसका चिर-सञ्चित साहस आत्म बल विवेक दृढ़ सकल्प की भावना अपने ध्येय के माग से उसे विचलित नहीं होने देते थे। उसके हृदय में विनोद के प्रति कितना स्नेह था श्रद्धा थी और था सम्मान उसे उसका ही हृदय बतला सकता था। उसके हृदय में सदैव एक अज्ञात अदृश्य टीस-कसक और वेदना का स्रोत प्रवाहित रहा करता था। किन्तु उसे यह भी ज्ञात था कि चाहते हुए भी उसे विनोद न प्राप्त कर सकेगा क्योंकि उसके पूज्य पिता श्री किस विचार तथा भावना के पोषक हैं, साथ ही उसका अभागा पिता उनकी लम्बी दहेज की माग को कभी भी पूर्ण न कर सकेगा।

विनोद में न इतना साहस है न आत्म शक्ति कि पिता जी के समक्ष निभयता के साथ अपना हृदय खोलकर रख सके, साथ ही अपनी माग का समर्थन करा सके। क्योंकि अभी उसे बहुत कुछ सोचने, निश्चय करने का अवसर चाहिए। यही कारण बाधक था उसके और विनोद के प्रेम पथ मे-घातक था दोनों की आशा फलवती होने मे-दोनों का हृदय रोया करता, छटपटाया करता और कोसा करता समाज, जाति और धर्म्म को विनोद न जाने कितना साहस बटोर याचक बन प्रेम की याचना सरोज के द्वार पर करता। सरोज भी अपने आराध्य देव की श्रद्धा भक्ति, भावना से प्रेमाश्रुओं से श्री चरणों मे श्रद्धाञ्जलि चढ़ा, पूजा, अर्चना का काल्पनिक स्वाँग रचा करती। किन्तु जिस आशा, अभिलाषा से अश्रुहार पिरोती उस पर दहेज की अमानुषिक प्रथा तुषार पात कर देती। कुठाराघात कर देती।

* * * *

आज नगरका दृश्य बहुत ही आकर्षक, मनोमुग्ध कारी था। प्रत्येक कोने से आनन्द का, प्रसन्नता का एक वेग उमड़ा सा पड़ता था। जन समूह के मुख मण्डल आशा, प्रसन्नता, हार्दिक आनन्द से ओत प्रोत थे। नगर चहल पहल और कोलाहल से परिपूर्ण था। कारण ? आज आर्य्य मन्दिर में बड़े समारोह के साथ आर्य समाज के

वार्षिकोत्सव का आयोजन किया गया था। मैं न जाने जीवन की किन विषम परिस्थितियों मे उलझा हुआ कवि की इन पक्तियों को दुहरा रहा था।

"उलझा जीवन सुलझा न सका"

नित नव नूतन नवला आशा,

शत दलमो कोमल अभिलाषा।

नयनों की हा। नीरव भाषा

मै अपना मन समझा न सका॥

सहसा रमेश बाबू ने कक्ष में प्रवेश किया। कहिए रसिक जी। चलियेगा नही। कहाँ? क्या बनते हैं आप? सच मुझे कुछ भी नहीं ज्ञात है। बडे भोले हैं न आप? रमेश यह कहता हुआ खिलखिलाकर हँस पडा और उसी के स्वर मे मै भी।

भाई रसिक जी। आज नगर के प्रतिष्ठित प्रतिभाशाली वकील प० शान्तिस्वरूपजी के सुपुत्र बाबू विनोदशङ्कर जी एम० ए० के साथ इसी नगर के क्लर्क प० अवनीकुमार शुक्ल की आयुष्मती कन्या का आर्य्य समाज मे पाणि ग्रहण होना निश्चित हुआ है।

देखा विनोद और सरोज वर-वधूकी वेषभूषा मे मडप तले वेदी के निकट बैठे हुए हैं, साथ ही वैदिक-विधि-विधान द्वारा वैवाहिक सभी विधि तथा सस्कार पूर्ण किये जा रहे हैं। मै पहुँचते ही बोल ही तो उठा। कहिए विनोद बाबू। क्या यह काय्य भी छुपा कर पूर्ण किया जाता है। भाई जो हुआ अब नयी भाभी से मेरा परिचय तो कराइयेगा। उत्तर में उसन केवल मुस्करा दिया और सरोज ने लज्जावश मस्तक नत कर लिया। आदर्श दम्पति का वैवाहिक सस्कार सकुशल बडे समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। उत्सव के उपलक्ष्य मे आर्य्य समाज की ओर से प्रीतिभोज दिया गया। मै उनके साहस सकल्प, आत्म त्याग की बिना सराहना किए न रह सका। हृदय गद्गद हो उठा।

आज जो 'अनोखा आदर्श" इस साहसी, त्यागी, शिक्षित नव-दम्पती ने हमारे समक्ष उपस्थित किया वह नवयुवक समाज की, दहेज के हिमायतियों की आँखें खोलने के लिए यथेष्ट है। आज नवयुवक समाज में इसी साहस, दृढ सकल्प आत्म त्याग-और विवेक की आवश्यकता है। तभी राष्ट्र, समाज और जाति के साथ साथ देश का कल्याण हो सकता है, नत मस्तक गर्व के साथ ऊँचा हो सकता है, साथ ही दहेज द्वारा उत्पन्न कुरीतियों का भी निवारण किया जा सकता है। कितनी अबला-कुमारिया, सद्गृहस्थ, सम्पन्न परिवार रसातल की ओर जाते हुए वापस किये जा सकते हैं। दहेज की अमानुषिक प्रथा का मूलोच्छेद किया जा सकता है॥

धार्मिक चर्चा-शंका समाधान

विद्या-अविद्या का विवेचन

(ले०— श्री प० वीरेन्द्र जी विद्यावाचस्पति, साहित्याचार्य, तीर्थ चतुष्टय, एम० ए० (द्वितीय),
आचार्य गुरुकुल वैद्यनाथ धाम)

नवम्बर १९४२ के 'सार्वदेशिक" को देखते हुए श्री लक्ष्मणजी आर्योपदेशक द्वारा लिखे हुये शका-समाधान पर ध्यान गया। उसको पढ़ने के बाद स्वाभाविक रूप मे श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के लिखे मूल लेख को पढ़ने की इच्छा हुई। अक्तूबर मास का अङ्क लेकर श्री स्वामी जी के सत्याथ प्रकाश मे किये जाने वाले पाठ-परिवर्तन के निर्देश को देखा गया। स्वामी जी ने जिस प्रकार की आशङ्का करके अपना निर्देश दिया है आपाततः प्रत्येक पढने वाले के दिल में वह भावना उठती है। उसके लिये यजुर्वेद के 'विद्या चाविद्या च ' इस मन्त्र मे आये अविद्या शब्द का योग दर्शन के 'अनित्याशुचिदु खानात्मसु नित्यशुचिसुखात्म-ख्यातिरविद्या' इस सूत्र में निर्दिष्ट पारिभाषिक अविद्या शब्द के साथ सामञ्जस्य करना कठिन हो जाता है। उस असामञ्जस्य का दूर करने के लिये स्वामी जी ने इस प्रकार का पाठ परिवर्तन बताया है जिसमे आचार्य के ग्रन्थ मे उन्हीं के शब्दों के स्थान विनिमय से विरोध जाता रहे। परन्तु यदि ध्यान से सोचा जाय तो आशङ्का का समाधान भली भाति हो जाता है और पाठ परिवर्तन को आवश्यकता नहीं रहती।

पाठ परिवर्तन करते हुए 'इसमें अविद्या का स्वरूप कह आये' इससे स्पष्ट बाधित होने वाले अविद्या के पूर्वस्वरूप का कथन भूलना नहीं चाहिए। स्वामी दयानन्द जी का आशय इस पक्ति से सत्यार्थप्रकाश नवम समुल्लास के प्रारम्भ में कहे हुए योग दर्शन सूत्र से ही है। परिवर्तन में इस पक्ति को भी निकाल देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त अष्टम समुल्लास की समाप्ति में 'इसके आगे विद्या, अविद्या, बन्ध और मोक्ष विषय में लिखा जायगा' इस पक्ति तथा नवम समुल्लास के प्रारम्भ मे 'अथ विद्याऽविद्याबन्ध मोक्ष विषयान् व्याख्यास्याम ' पक्ति के द्वारा विषय का निर्देश स्पष्ट करता है कि बन्ध और मोक्ष के विचार से पूर्व विद्या और अविद्या का विचार किया जायगा। वर्तमान पाठ के रखते हुए "अब मुक्ति बन्ध का वर्णन करते हैं" इस अवान्तर विषय-निर्देश की योजना भी ठीक बैठती है। इसलिये सत्यार्थ प्रकाश के छपते समय पाठ अपने स्थान से बदल कर दूसरे स्थान में आगया कथन आन्तरिक साक्षी से मेल नहीं खाता। स्वामी दयानन्द जी को उसी प्रकार का पाठ अभीष्ट था जैसा वर्तमान समय मे सत्यार्थ प्रकाश में मिलता है।

यदि आचार्य का—स्वामी दयानन्द जी का—पाठ उसी प्रकार का है जैसा इस समय मिलता है तो असामञ्जस्य की शका का निवारण कैसे होगा—यह प्रश्न उठता है। श्री लक्ष्मण जी ने अपने

तरीके से उसका उत्तर देने का प्रयत्न किया है। परन्तु इस विषय को और अच्छी तरह स्पष्ट किया जा सकता है। वास्तव में मंत्र की अविद्या और योग सूत्र की अविद्या एक नहीं है। योग सूत्र की अविद्या मंत्र में दिये गये विद्या के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये उद्धृत की गई है योग सूत्र की अविद्या अर्थात् मिथ्या ज्ञान (विपरीत ज्ञान) मन्त्र में निर्दिष्ट विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान (तत्व ज्ञान) की विरोधी है। दो विरोधी वस्तुओं का स्वरूप एक के स्वरूप ज्ञान से आपेक्षिक रूप मे समझा जा सकता है। इसलिये मंत्र का अर्थ कर देने के बाद स्वामी दयानन्दजी ने मंत्र के 'विद्या' पद की व्याख्या करने के लिये तद्विरोधी अविद्या का स्वरूप विवेचन किया।

मंत्र में आये विद्या पद का अर्थ तत्व ज्ञान, योग की परिभाषा में विवेक ख्याति (ज्ञान) है। योगदर्शन मे विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः (२-२७) में हेय दुःख के निराकरण के लिये उसके मूल (हेय कारण) प्रकृति पुरुष संयोग के उच्छेद द्वारा कैवल्य मोक्ष प्राप्ति का कारण विवेक ज्ञान कहा है। प्रकृति पुरुष संयोग का और दुःख समुदाय का प्रभव बीज 'अविद्या' है। यह क्लेश रूप अविद्या विद्या का अभाव मात्र नहीं है क्योंकि केवल ज्ञान न होना क्लेश मूल नहीं है। अविद्या से तात्पर्य विद्या से विपरीत का है। विपरीत ज्ञान मनुष्य के अनर्थों का कारण है। व्यास भाष्य और वाचस्पति मिश्र ने अविद्या पद को स्पष्ट करते हुए प्रसज्यप्रतिषेध (अभाव) आदि अर्थों का खण्डन करके जैसे अमित्र का अर्थ मित्र विरोधी अर्थात् शत्रु होता है वैसे ही अविद्या का अर्थ विद्या विरोधी ज्ञान अर्थात् विपरीत ज्ञान किया है। इसी विपरीत ज्ञान का स्वरूप 'अनित्याशुचि ' सूत्र मे अनित्य मे नित्य आदि का ज्ञान कहा गया है। व्यास भाष्य के 'विद्याविपरीत ज्ञानान्तरमविद्या' तथा वाचस्पति के 'विद्याविरुद्ध विपर्ययज्ञानमविद्या' का ही अनुसरण करते हुए स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश मे 'विपरीत बुद्धि होना अविद्या' और 'यह चार प्रकार का विपरीत ज्ञान अविद्या कहाती है' लिखा है। इस प्रकार अविद्या का, विपरीत ज्ञान का, स्वरूप लिखकर ठीक उसके आगे स्वामी जी विद्या का स्वरूप देते है —'इससे विपरीत अर्थात् अनित्य मे अनित्य और नित्य मे नित्य, अपवित्र मे अपवित्र, और पवित्र मे पवित्र, दुःख में दुःख, सुख मे सुख, अनात्मा मे अनात्मा और आत्मा मे आत्मा का ज्ञान होना विद्या है। अर्थात् 'वेत्ति यथा वत्तत्व पदार्थरूप यया सा विद्या यया तत्वस्वरूप न जानाति भ्रमादन्यस्मिन्नन्यन्निश्चिनोति यया साऽविद्या" जिससे पदार्थों का यथार्थ स्वरूप बोध होवे वह विद्या और जिससे तत्वस्वरूप न जान पडे अन्य मे अन्य बुद्धि होवे वह अविद्या कहाती है'। इस तरह अविद्या के स्वरूप निर्धारण से विरोधी विद्या का स्वरूप सर्वथा स्पष्ट हो जाता है। इसी मंत्रोक्त विद्या का अथवा योगदर्शन निर्दिष्ट विवेक ज्ञान का विस्तृत विचार मोक्ष के प्रथम साधन 'विवेक' मे आगे चल कर किया है।

मंत्र मे विद्या और अविद्या दोनों का साथ ज्ञान आवश्यक कहा गया है और अविद्या का फल मृत्यु तरण और विद्या का फल अमृत प्राप्ति कहा गया है इसलिये मृत्यु तरण का कारण भूत

अविद्या उपर्युक्त क्लेशात्मक विपरीत ज्ञान स्वरूप वाली योग सूत्रोक्त अविद्या तो नहीं हो सकता है यह स्पष्ट है। ऐसी अवस्था मे मन्त्र में अविद्या का क्या अर्थ है? इसका अर्थ स्वामीजी ने पहले मन्त्र के सामान्य अर्थ मे कर्मोपासना दे दिया है। मन्त्र के अर्थ दे देने के पश्चात् मन्त्र की विशद व्याख्या प्रारम्भ करते हुये विद्या के स्वरूप ज्ञान के लिये तद्विरोधी योग सूत्रोक्त अविद्या का किस प्रकार प्रवेश हुआ यह पहले स्पष्ट कर दिया गया है। विद्या का अर्थ स्पष्ट करने के बाद मन्त्रोक्त अविद्या का क्रम आता है। अविद्या का अर्थ कर्मोपासना कैसे है और वह विपरीत ज्ञानात्मक अविद्या नहीं है इसको दिखाने के लिये 'अर्थात् कर्म और उपासना अविद्या इसलिये है कि वह बाह्य और आन्तर क्रियाविशेष है ज्ञान विशेष नहीं' यह पंक्ति लिखी गई है।

इस पंक्ति को समझने के लिये हमे 'अविद्या' के समास में 'न विद्या अविद्या' मे आये नञ् शब्द का अर्थ जानना चाहिये। नञ् के अर्थ निम्न हैं—

तत्सादृश्यमभावश्च तदन्यत्वं तदल्पता।
अप्राशस्त्यं विरोधश्च नञर्थाः षट् प्रकीर्तिताः॥

योग सूत्रोक्त 'अविद्या' मे नञ् विरोध अर्थ में है यह प्रदर्शित किया जा चुका है। मंत्र की 'अविद्या' मे तो वह अर्थ हो नहीं सकता। ज्ञान का अभाव या अप्रशस्त ज्ञान (निन्दित ज्ञान) मृत्युतरण का मार्ग नहीं। शेष रह गये सादृश्य, अन्यत्व और अल्पता अर्थ। स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ने 'अनुदरा कन्या' में जिस प्रकार स्वल्पोदर वाली कन्या अर्थ है उसी प्रकार विद्या की अपेक्षा न्यून महत्व वाले होनेसे अविद्या का अर्थ अल्पविद्या अर्थात् कर्मोपासना निकाला है। परन्तु इस तरह कर्मोपासना अर्थ करना उचित नहीं। प्रथम तो अल्पविद्या का अर्थ थोड़ा ज्ञान है जैसे स्वल्पोदरा मे छोटा पेट, ज्ञान कर्म तो नहीं हो सकता चाहे वह थोड़ा हो या हीन हो। और फिर हीनता या न्यून महत्व वाला मन्त्रोक्त अविद्या को कहना मन्त्र के साथ अन्याय करना है। मन्त्र मे विद्या अविद्या दोनों महत्व पूर्ण हैं। न केवल इतना ही अपितु

'अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः'

के द्वारा तो विद्या मे रत को अविद्या की उपासना करने वाले से भी अधिक अन्धकार मे प्रविष्ट कराया है। इसलिये अविद्या मे अल्पार्थ करना ठीक नहीं है। यहां अन्यार्थ या भिन्नार्थ ही सादृश्यगर्भ होकर करना चाहिये। 'अब्राह्मण मानय' का अर्थ है ब्राह्मणेतर-ब्राह्मण भिन्न अर्थात् क्षत्रिय, वैश्य आदि को ले आओ। ब्राह्मण भिन्न गाय और बकरी आदि भी हो सकते हैं पर वहां सादृश्य नहीं इसलिये उन्हे छोड़ दिया जाता है। जिस प्रकार वर्णों का एक वर्ग है इसी प्रकार ज्ञान, कर्म और उपासना का एक वर्ग है। वर्ग में एक से भिन्न तत्सदृश दूसरे गृहीत होते है। अविद्या मे भी विद्या भिन्न उसी वर्ग के कर्म और उपासना लिये जायेंगे। प्राचीन समय से मुक्ति या परमेश्वर प्राप्ति के साधनों में ज्ञान, कर्म और उपासना की गणना होती रही है। तीनों में मुक्ति का साधन होना सादृश्य है। तीनों के विषय मे विशेष रूप मे ज्ञान और कर्म के विषय में, ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड, प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग के

विशेष रूप से विवाद चलता आया है। वेद मंत्र ने दोनों को आवश्यक बताकर समाप्त कर दी। इसी भिन्नार्थता के आधार पर स्वामी दयानन्द जी ने ज्ञान विशेष न होने से अपितु उससे भिन्न क्रिया विशेष होने से अविद्या को कर्मोपासना कहा। मंत्रोक्त अविद्या 'कर्मोपासना' योगदर्शन का क्रिया योग है।' तप स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रिया योग (२-१)। तप, स्वाध्याय। प्रणव-ओंकार जाप, और प्रणिधान (ईश्वरार्पण, उपासना) क्रियायोग कहलाते हैं। यह क्रियायोग और विवेक ज्ञान दूसरे शब्दों में मंत्रोक्त अविद्या और विद्या क्लेशों का नाश करके मुक्ति को देने वाले हैं। यह क्रियायोग पूर्णरूप से योगाङ्गों में समाविष्ट है। मोक्ष के साधनों में विवेक और वैराग्य के बाद इन्हीं का वर्णन अर्थात् मंत्रोक्त अविद्या (कर्मोपासना) का विस्तार सत्यार्थप्रकाश में किया गया है।

आशा है इस प्रकार विचार करने से असामञ्जस्य जाता रहेगा और योगदर्शनोक्त अविद्या का मंत्रोक्त अविद्या से सम्बन्ध स्पष्ट हो जाएगा। पाठ परिवर्तन की तो सुतराम् आवश्यकता ही नहीं।

भारत के पुराने गुरुकुल

(पढाई का समय और छुट्टियों की व्यवस्थादि)

[गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी (हरिद्वार) के सुयोग्य उपाचार्य श्री प्रो० लालचन्द्र जी एम० ए० ने रेडियो स्टेशन लखनऊ की प्रार्थना पर गत ३-८-४२ को जो उत्तम भाषण रेडियो पर दिया था उसे हम कुछ शाब्दिक परिवर्तनों के साथ पाठकों के लाभार्थ प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है पाठक इसे अत्यन्त उपयोगी पाएगे।

—सम्पादक]

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों से गो फलक है ना मेहरबा हमारा।

आओ जरा अपने पुराने जमाने की तरफ नजर डालें और मालूम करें कि वह कौनसी बात है जिससे हम और हमारी सभ्यता अभी तक जीवित है।

प्रभात वेला है, गगा का किनारा है, पवत का नजारा है, शहरों से बहुत दूर प्रकृति की गोद में एक छोटी सी बस्ती है वे कौन हैं ? वे सामने दस पन्द्रह ब्रह्मचारी पद्म आसन लगाकर बैठे हुए ये किसके ध्यान में लीन हैं ? भाई ये भारत के एक पुराने गुरुकुल के ब्रह्मचारी हैं, इनका समय विभाग ऐसा ही नियत हुआ है कि हर रोज सन्धि के समय जब रात और दिन का मेल हो तब यह जरूरी है कि हर इन्सान का अपने भगवान के साथ मेल हो, जबकि सारी प्रकृति रमणीय और शान्त होती है सूर्य निकलने से पहले ये ब्रह्मचारी स्नान आदि से निवृत्त होकर अपने परम गुरु परमात्मा के चरणों में बैठ जायें और दत्तचित्त होकर उसका ध्यान करें। समय में शान्ति है प्रकृति में शान्ति है इस शान्ति के सागर में ब्रह्मचारी लीन हो जाता है, और शान्त होकर, शुद्ध होकर बाहर निकलता है। सफलता का रहस्य है दृढ सकल्प। इन सब ब्रह्मचारियों का अपना अपना कोई दृढ सकल्प है। कोई आदर्श ब्राह्मण बनकर ससार में सत्य का प्रकाश फैलाना चाहता है, कोई आदर्श क्षत्रिय बन कर न्याय से राज्य करके अत्याचारियों का नष्ट करना चाहता है और दीन-दुखियों का सहारा बनना चाहता है, कोई आदर्श वैश्य बन कर सौ हाथों से कमा कर और हजार हाथों से दान देकर रोटी का सवाल हल करना चाहता है। ये सब अपने अपने सकल्प प्रभु के सामने रख रहे हैं। शान्त होकर प्रभु को साक्षी करके प्रभु से शक्ति लेकर अपने अपने सकल्प को-इरादे को-मजबूत कर रहे हैं। ब्रह्मचारी असल मे वह है जो ब्रह्म मे अर्थात् शान्ति मे, ज्ञान में, ईश्वर में विचरण करता है, जो हर रोज अपना ज्ञान अपनी शक्ति को बढ़ाता हुआ प्रभु को सदा याद रखता हुआ प्रभु के पास पहुँचता चला जाता है। गुरु असल मे वह है जो न केवल अपने विषय का विशेषज्ञ हो पर साथ ही पवित्र चरित्र रखता हो और ब्रह्मचारियों को अपने पुत्रों की तरह प्यार करता हो। जब ब्रह्मचारी गुरुकुल मे दाखिल होता था, गुरु पूछता था तू

किसका ब्रह्मचारी है, ब्रह्मचारी जवाब देता था मैं आपका ब्रह्मचारी हूँ। गुरु कहता था नहीं तू मेरा ब्रह्मचारी नहीं है, तू इन्द्र का ब्रह्मचारी है, तू अग्नि का ब्रह्मचारी है। मैं तो निमित्त मात्र हू असली गुरु तो परमात्मा ही है। इसलिए गुरु और शिष्य दोनों ही ब्राह्म मुहूर्त में उठ कर नित्य कर्म से फारिग होकर सबसे पहले परम गुरु परमात्मा के चरणों में बैठ कर शान्ति और शक्ति को अपने अन्दर जागृत किया करते थे। मुझे एक बार एक महात्मा ने इसी सम्बन्ध में फारसी का एक सुन्दर शेर सुनाया, वह मुझे इतना अच्छा लगता है कि मैने उसे कइयों को सुनाया है और सबने उसको सराहा है।

उसका भाव यह है—

वह सामान क्या है वह दिल है, यह दिल तो मिला था भक्ति करने को, मगर सोये रहे हम दुनिया चुरा के ले गई। श्री अरविन्द जो इस समय संसार के सबसे बडे योगी हैं।

एक जगह लिखते हैं

"As for love, love must be turned exclusively towards the Divine" जहा तक प्रेम का सम्बन्ध है प्रेम तो अनन्य भाव से भगवान की ओर फेर देना चाहिये एक और और जगह उनका ऐसा ही तेज वाक्य है।

"Always Keep the temple clean, if you wish to instal there the living presence" दिल का मन्दिर सदा साफ़ रखो अगर वहा प्रभु का जिन्दा स्वरूप स्थापित करना चाहते हो।

संध्या के बाद गुरु शिष्य हवन करते थे, जिसमें साफ़ सूखी लकडिया, जलाई जाती थीं और जिसमें शुद्ध सामग्री और शुद्ध घी की आहुतिया दी जाती थीं (यह हवन एक जीवित जागृत उपदेश था। जैसे लकड़िया साफ और सूखी हैं ऐसे ही तुम भी तपस्या से अपने चित्त को शुद्ध करो। सुगन्धित सामग्री की तरह अपने अन्दर शुभ गुण पैदा करो। शुद्ध घी की तरह अपने ज्ञान को शुद्ध करो और फिर इन सब शुद्ध उन्नत शक्तियों से यज्ञ करो, सेवा करो, पर उपकार करो। हवन दो चीज़ों का कितना सुन्दर और प्रभावशाली उपदेश देता है, पहले अपनी चौमुखी उन्नति करो फिर किसी ऊँचे लक्ष्य के लिये अपना जीवन समर्पित कर दो, कुर्बान करदो, (तभी हम ससार को पुष्ट और सुगन्धित कर सकते हैं) हवन की शुद्ध करने वाली और शक्ति देनेवाली सुगन्ध सबके लिये है अपनों के लिये भी, परायों के लिये भी, मित्र के लिये भी, शत्रु के लिये भी। इस यज्ञ द्वारा हम सब से एकता और प्रेम करना सीखते हैं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सब भाई भाई हैं।

मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर करना।
हिन्दी हैं हम वतन हैं हिन्दोस्ता हमारा॥

संध्या हवन के बाद करीब ८ से ११ तक नियमपूर्वक पढ़ाई होती थी। गुरु हर एक ब्रह्मचारी की तरफ़ अलग ध्यान देता था, क्योंकि साधारण तौर पर १०, १५ से ज्यादा विद्यार्थी एक गुरु के पास नहीं रहते थे, आगे पाठ तभी चलता था जब पिछला ठीक तरह याद हो जाये, आजकल की तरह ३ महीने, ६ महीने, या साल के बाद परीक्षा की व्यवस्था नहीं थी, उस जमाने में न बहुत पुस्तकें थी न कापिया, बहुत सा काम तो याद करने और समझने का होता था।

दोपहर को जब पढ़ाई समाप्त होती थी तो सब ब्रह्मचारी गाव में भिक्षा के लिये जाते थे। भिक्षा लाकर अपने गुरु के आगे रखते थे। गुरु सब को जरूरत के अनुसार बाट देते थे। भिक्षा की प्रथा से देने वाले और लेने वाले दोनों का भला होता था। गृहस्थी औरों के बच्चों को अपना बच्चा समझना सीखते थे। उनके अन्दर उदारता पैदा होती थी। उनके प्रेम का विस्तार होता था। दूसरी ओर ब्रह्मचारी शेष समाज के प्रति अपने कर्तव्य को अनुभव करते थे। वे अनुभव करते थे कि समाज हमें पाल रही है तो हमारा यह कर्तव्य है कि बड़े हो कर हम समाज की सेवा करें और सेवा करके ऋण उतारें। इस प्रथा से समाज का और ब्रह्मचारियों का एक सुन्दर सम्बन्ध जुड़ जाता था। पीछे आकर जब तक्ष-शिला और नालन्दा के विश्वविद्यालय खुले तो वहा यह प्रथा नहीं चल सकती थी, क्योंकि उनमें हजारों विद्यार्थी होते थे। उनके भोजन का प्रबन्ध अमीर लोग या राजा लोग कर देते थे।

दोपहर को भोजन के बाद ब्रह्मचारी आराम करते थे और आराम के बाद करीब २ से ४ तक फिर पढ़ाई होती थी, इस तरह पढ़ाई दो बार करने से जहा दिमाग नहीं थकता था वहा भोजन के बाद काफी आराम मिलने से हाज़मा भी ठीक रहता था। आजकल सवेरे ९ बजे ही रोटी जल्दी जल्दी बिना अच्छी तरह चबाये क्या विद्यार्थी क्या बाबू स्कूलों और दफ्तरों में भागे भागे जाते हैं और वहा जाकर लगातार ६ घंटे तक दिमाग़ी काम करते हैं। इससे आखें कमजोर होती हैं, हाज़मा खराब होता है, दिमाग़ थक जाता है और दिल मुर्झा जाता है।

४ बजे के बाद का प्रोग्राम तो बहुत ही सुन्दर होता था। ब्रह्मचारी बड़े चाव से उछलते-कूदते जगल जाते थे, हवन के लिये समिधायें इकट्ठी करते थे। वन में भ्रमण करते थे सुन्दर नज़ारे देखते थे और देखते ही कई उपयुक्त वेद मन्त्र अनायास उनकी ज़बान पर आ जाते थे और वे उनको खूब मर्पी से गाते थे, मिसाल के तौर पर—

अन्ति सन्तं न जहाति अन्ति सन्त न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्य न ममार न जीर्यति॥

इसका भाव है—

पास है भगवान तेरे पर नज़र आता नहीं।
देख लीला उसकी उसमें अक्स नज़र आ जायगा

कुदरत की लीला देखो न मरती है न मुर्झाती है। इस दिव्य काव्य को देखो यह अमर है, हरा भरा है। कभी यह वेद मंत्र उनके अन्दर जाग पड़ता होगा, देखिये कितना खूब सूरत है।

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्र रसया सहाहुः
यस्येमा प्र दिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम

इसका अर्थ है जिसकी महिमा का बखान ये बर्फीले पहाड़ कर रहे हैं और जिसकी महिमा का बखान नदियों के नाद के साथ महासागर की गम्भीर गर्जना कर रही है, ये दिशायें वे तरफें जिसके बाहुओं के समान चारों तरफ फैली हुई हमारी रक्षा कर रही हैं उस सुख स्वरूप परमात्मा की हवि (भक्ति) द्वारा हम पूजा करें।

(शेष अगले अङ्क में)

वसन्त

(लेखक—"विकल' कवि)

मेरे घर तो पतझड़ आया,
आया होगा जग में वसन्त।
मानव का हा! मानव के साथ,
दानव जैसा व्यवहार आज।
चल रही तपोबल के गल पै,
पशुबल द्वारा तलवार आज॥
क्या देख रही है आंख फाड़,
क्यों पड़ी हुई भू पर निढाल?
उस माता के उर से पूछो
सड़ रहे जेल मे जिसके लाल॥
निर्जीव हुआ सारा शरीर,
रुक रही विकल आंखों में जान।
आंसू बह बह कर कहते हैं,
रहते किसके सब दिन समान॥
जब उनके घर पतझड़ होगा,
तब मेरे घर होगा वसन्त।
मेरे घर तो पतझड़ आया,
आया होगा जग में वसन्त॥

धर्म वीर हकीक़तराय

१ धन्य धन्य तुम वीर हकीकत
धन्य तुम्हारा था बलिदान।
प्राण गवाये धर्म न छोड़ा
रख ली आर्य जाति की शान॥

२ शस्त्र न कोई इस दुनिया में
जो आत्मा को काट सके।
यही हकीक़त जिसे जान कर
तुमने दे दी अपनी जान॥

३ दिये प्रलोभन थे यवनों ने
सांसारिक सुख सम्पति के।
किन्तु डिगे नहि धर्म मार्ग से
करते हम तेरा गुण गान॥

४ तुम बालक थे नहि दुनिया को
कुछ भी तुमने देखा था।
मात किया पर ज्ञानि-जनों को
पा आत्मा का सच्चा ज्ञान॥

५ "लो काटो अपनी असिधारा
से तुम मेरी नश्वर देह।
पर न हकीकत काट सको तुम"
इन शब्दों मे कैसी शान॥

६ धर्म वेदि पर बलि दे करके
तुम न मरे पर अमर हुए।
कितनी ही सदियां बीतीं पर
तुमको याद करें मतिमान्॥

७ यह बसन्त उत्सव था जिसके
मद मे मस्त हुई दुनिया।
पर तुमने जीवन बसन्त का
अन्त किया रखने को आन॥

८ मात पिता गुरु बन्धु सभी थे
तुम्हें डिगाने खड़े हुए।
पर न डिगे तुम सत्य मार्ग से
क्यों न करें हम तेरा मान ?॥

९ निर्भयता का पाठ पढ़ाया
तुमने डरती दुनिया को।
दृढ़ता का धर्मानुराग का
रक्खा था आदर्श महान्॥

१० यही कामना तुमसे सारे
धर्म वीर जग में जनमें।
तुम से वीर सुतों को पाकर
भारत माता को अभिमान॥

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति



अगस्त की परीक्षाओं में प्रथम, द्वितीय व तृतीय

भारत वर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की अगस्त १९४२ में हुई सिद्धान्त सरोज सिद्धान्त रत्न, सिद्धान्त भास्कर और सिद्धान्त शास्त्री चारों परीक्षाओं मे प्रथम, द्वितीय, व तृतीय आने वाले परीक्षार्थियों के नाम घोषित कर दिये गए हैं जो निम्न प्रकार हैं।

सिद्धान्त सरोज परीक्षा

रोल न०	नाम	केन्द्र	श्रेणी
३१	श्रीमती प्रेमलता दीवान हाल	दिल्ली	प्रथम
१०	श्री सत्यदेव	रामगढ	द्वितीय
४५	श्रीमती सत्यवती	सुल्तानपुर लोधी	तृतीय

सिद्धान्त रत्न परीक्षा

२६	श्री मनोहरलाल	अ० वि अलीगढ	प्रथम
४९	श्री यमुनानद सन्यासी	हरिद्वार	द्वितीय
७९	तीर्थ प्रकाश सिहल	लश्कर	तृतीय
७७	श्रीमती सुशीलादेवी	लश्कर	कन्याओंमे सर्व प्रथम

सिद्धान्त भास्कर परीक्षा

१४	ओंकारानन्द सरस्वती	हरिद्वार	प्रथम
१५	गौरीदत्त जी	,,	द्वितीय

सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा

५	श्रीमती विद्यावती जी	पीलीभीत	प्रथम
४	श्री सतीशचन्द्र	भूडबरेली	द्वितीय

उपरोक्त परीक्षार्थियों का पारितोषिक तथा जनवरी १९४० मे हुई परीक्षाओं के प्रथम, द्वितीय व तृतीय परीक्षार्थियों के पारितोषिक उनके केन्द्र के व्यवस्थापक महोदयों को भेज दिये गए हैं। जिन परीक्षार्थियों को अभी तक उनका पारितोषिक नहीं मिला है वे शीघ्र ही कार्यालय को सूचित करें।

—देवव्रत धर्मेन्दु परीक्षा मन्त्री

[भारत वर्षीय आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं मे उत्तम अङ्क लेकर उत्तीर्ण सभी सज्जनों और विशेषत देवियों का हम सार्वदेशिक सभा और पत्रकी ओरसे हार्दिक अभिनन्दन करते है। यह प्रसन्नता की बात है कि देविया भी अच्छी सख्या मे इन परीक्षाओं में सम्मिलित हो रही हैं जो धार्मिक जागृति का शुभ चिन्ह है। सन्यासियों का इन परीक्षाओं में सम्मिलित होना भी विशेष प्रशसनीय है हम आशा करते हैं कि परिषद् के परीक्षार्थियों की सख्या मे प्रति वर्ष वृद्धि होती जाएगी।]

—सम्पादक- "सार्वदेशिक"

महिला-जगत्

मातृ-शक्ति निर्बल क्यों ?

अनेक बार यह प्रश्न उठता है कि मातृ शक्ति निर्बल क्यों है ? समाज मे उसका यथाथ आदर क्यों नहीं ? जो मातृ शक्ति मनुष्य समाज के उत्थान की जड़ है। किन्तु भारत वर्ष की हिन्दू समाज द्वारा बड़ी सामाजिक अत्याचारों से इतनी हीनता को प्राप्त हो चुकी है कि पद २ पर अपमानित की जाती है। मनुष्य समाज मे उसके जीवन का मूल्य पशुओं से अधिक नहीं है। पहाड़ी प्रान्तों मे तो गौ और स्त्री को समान ही समझते हैं। जैसे गौ दिन भर जगल मे चर कर सन्ध्या समय स्थान पर पहुँच अपने दूध और बछडे से मालिक की सेवा करती है। एक पहाड़ी बहिन का कहना है कि इसी प्रकार पर्वत की स्त्रिया दिन भर घर और जगल का काम करके पति की इच्छा पूर्ण कर बच्चे पैदा करती है। गौ और स्त्री पर मालिक का अधिक व्यय नही करना पड़ता। इसी प्रकार भारतवासियों मे मातृ शक्ति के जीवन का मूल्य समझा जाता है। इसी हेतु अपमानित, आदर रहित माता से उत्पन्न हुई सन्तान कहीं भी आदर नहीं प्राप्त कर सकती।

फिर प्रश्न होता है कि 'मातृ मान् पितृ मान् आचार्य मान् पुरुषो वेद', आर्ष ग्रन्थों मे, ऐसे श्रेष्ठ शब्द मातृ शक्ति के सम्मानार्थ उपस्थित होते हुये भी इतनी हीन अवस्था क्यों हुई ? मातृ शक्ति के अपमानित और कर्तव्य हीन होने का विशेष कारण स्वार्थी और विषयी पुरुषों की स्वार्थ मय विकृत बुद्धि का परिणाम है। जिस प्रथम पुरुष के चित्त मे प्रथम वार मातृ-शक्ति की उन्नति पर द्वेष भाव की जागृति होकर प्रथम दिन पुरुष समाज मे यह दुर्भावना फैलाई गई थी उसी दिन से भारत का दुर्भाग्य उदय हुआ था।

आज कई हजार वर्षों से स्त्री समाज धीरे-धीरे अवनति के गढे मे गिराई गई। सबसे प्रथम उसके ज्ञान प्राप्ति का मार्ग बन्द किया गया। नारी जाति के विरुद्ध ऐसे ऐसे अश्लील और गन्दे ग्रन्थ तैयार किये गये और उसमें लिखा गया कि स्त्रियों को वेद पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार नहीं है। उसका प्रचार बड़ी तत्परता से किया गया। उसके फलस्वरूप मातृशक्ति को अज्ञान की अवस्था में दासता की बेड़िया पहिराई गई। ज्ञान का स्रोत वेद हैं नारी समाज के लिये वेदों का पढ़ना-

(पृष्ठ ५४७ का शेष)

परीक्षाएं हो गईं

भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् की ओर से होने वाली धार्मिक परीक्षाए ३१ जनवरी १६४३ को भारत के लगभग १५० केन्द्रों में सुचारु रूप से समाप्त हो गई हैं। देश मे हुए आन्दोलन के कारण इस वर्ष परीक्षार्थियों तथा परीक्षा केन्द्रों की सख्या मे कुछ न्यूनता आ गई है। पुनरपि लगभग ढाई हजार परीक्षार्थियों ने परीक्षा दी।

—देवव्रत धर्मेन्दु

पढ़ाना और सुनना-सुनाना अन्यायपूर्वक अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये कठोरता से बन्द कर दिया गया। अब नारी समाज स्वभावत अन्धकार की ओर चल पड़ी क्यों कि ज्ञान का मार्ग बन्द होने पर अज्ञान की ओर चलना आवश्यक हो गया।

मातृ शक्ति के अज्ञान का फल यह हुआ कि सारी आर्य जाति रूढ़ियों की गुलाम बन गई। यह ईश्वरीय नियम है कि बबूल के वृक्ष में सिगनी के सिवा आम का मीठा फल कदापि नहीं लग सकता। इसी नियम के अनुसार अज्ञान के अन्धकार में चलने वाला नारी समाज कलह-प्रिय बन गया। तब कलह प्रिय, लोभी और गुलाम सन्तान पैदा हुई। अब राष्ट्र में विप्लव मच गया। भाई भाई का शत्रु होगया जिससे भारत के ब्राह्मण क्षत्रिय दोनों मानसिक गुलामी को धारण कर अपने अपने स्वार्थों पर मरने कटने लगे। अन्त में वह दिन आया कि ७३६ वर्षों से अर्थात् १२०६ ई० से आज १९४२ ई० तक ऐसी कठोर गुलामी की बेड़िया पहिनाई गई कि आज तक वह खोले नहीं खुल रहीं परन्तु फिर भी अनेक स्वार्थी पुरुषों की आखें अभी नही खुलीं। आज हिन्दू राष्ट्र रूपी शरीर सर्वाङ्ग कुष्ठ रोग से गलित हो रहा है। जिधर हाथ लगाओ उधर ही पीब निकलने लगती है

इस रोग ग्रस्त हिन्दू राष्ट्र रूपी शरीर को नीरोग करने क लिये भगवान् ऋषि दयानन्द का जन्म हुआ। उन्होंने महान् तपोबल से रोग को जड़ से मिटाने का विशेष यत्न किया। दो ऐसी औषधियों को दिव्य दृष्टि से ढूढ निकाला (१) सब विज्ञान का स्रोत वेद है। वैदिक सभ्यता के प्रचार के लिये वेद भाष्य किया और जनता का ध्यान उसकी ओर आकर्षित किया (२) मानव समाज की जड़ मातृ शक्ति है इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है कि अपने जीवन काल मे स्वामी जी तीन वर्ष की बालिका को नत मस्तक हो नमस्कार करते हैं। लोगों के पूछने पर उत्तर देते हैं कि मैं इस बालिका मे उस मातृ शक्तिको नमस्कार करता हूँ जो हम सब को जन्म देने वाली है। उनके रचे ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर नारी समाज के सम्मान सत्कार करने का वर्णन है। मातृ शक्ति के प्रति जो सम्मान ऋषि दयानन्द महाराज के हृदय मे था अभी उस का पूरा प्रसार नहीं हुआ। मुझे अटल विश्वास है कि जसे २ मातृ शक्ति के प्रति देश के पुरुष समाज मे सम्मान की भावना बढेगी वैसे वैसे देश उत्थान पथ की ओर होगा, साथ ही नारी समाज मे भी कर्तव्य पथ पर चलने की शक्ति जागृत होगी। तब अवश्य गुलामी की बेड़िया स्वय कट जायगी।

लेखिका प्रेम सुलभावती
मन्त्रिणी महिला सुधार मण्डल संयुक्त प्रान्त।

— —

THE GURUKULA AND ITS FOUNDER

(By Prof LALCHAND JI M A , Vice Principal Gurukula Kangri)

(Continued from the last issue)

Hearing the sound of shots, the servant (Dharma Singh) who had braught water, entered the room to capture the assasin, but was shot in leg Then Pandit Dharma Pal ji, a graduate of the Gurukula and personal secretary of Swamiji appeared on the scene, flung the assassin on the floor, got the hold of his wrist with a most powerful grip, so that he could not move his hands, kept him pressed beneath his knee till the police officer arrived and took from him his revolver

Truly may it be said of Swami Shraddhanand ji "A hero's life he lived, and a martyr s death he died" The day which beheld funeral procession in honour of Swami ji pass through the bozars of Delhi will long remain a memorable day in the history of that city Old people said that such a procession was never beheld even in honour of kings May the martyr rest in peace and may the Gurukula, his dearest creation thrive and prosper for ever

CHRONOLOGY.

1857 Born in Jullundhar (Punjab)

1877 Married

1878 Entered College (Allahabad)

1880 Became naib Tahsildar

1883 Passed first examination in law

1885 The tide turns of Munshi Ram, becomes a Mahatma

1890 Sad Dharma Pracharak started

1891 Wife died

1894 Arya samaj divided into two parties

1898 Resolution passed by the Sabha to start Gurukula.

1899 Went out to collect funds and vowed not to return till 30 000 Rs had been collected

1902 Gurukula started with 30 brahmacharis

1917 Took sannyas

1919 Stood unflinchingly before the bayonets of the Gurkhas while leading a procession of satyagrahis.

1919 Preached Hindu muslim unity from the pulpit of Jama mus jid Delhi

1919 Visited Punjab to console and help the orphans and the widows — the victims of the Martial Law regime in the Punjab

1919 Elected chairman of the Reception Committee for the Indian National Congress held in Amritsar

1919 Re-assumed charge of Gurukula for 2 years

1921 Came out to take part in satyagrah

1922 Imprisoned for supporting the the sikhs in the Guru ka bagh satyagrah

1923 A B Shuddhi Sabha started and Malkana Rajputs brought back into the Hindu fold Swami ji Elected president of the Shuddhi sabha Toured through out India and delivered about 100 lectures on shuddhi and sangathan

1923 Kanya Gurukula founded

1925 Dayanand centinery celebrated in Mathura under the presidentship of Swami ji

1926 Asgari begum converted into Vedic Dharma at her own request

1926 23 Dec shot to death

Resolutions passed at the Third South India Aryan Conference, held at Bangalore City on 28th, 29th and 30th December, 1942 Under the presidency of Shri K. V Anant Raman Finance Minister Mysore state and Pandit Ganga Prasadji, M A, President Sarvadeshik Sabha

1 This Conference places on record its sense of deep sorrow and grief at the sad demise of Pandit Davendra Nath Shastri, Achaiya of Gurukul Sikanderabad, and hereby authorises the Secretary of the Conference to convey the sincere condolences of the Conference to the members of the grieved family May his soul rest in peace

(MOVED by CHAIR)

2 This Conference recommends to the Hindu Public in South India the desirability and necessity of starting at as early a date as possible a Central Institute for the welfare of widows and other helpless women and orphans under the aegies of the Arya-Samaj

(MOVED by CHAIR)

3 In the opinion of this Conference, the present caste system based on birth and heredity is wholly opposed to the system of Varna propounded in the Vedas and that the prevalent caste system has been chiefly responsible for the disintegration of Hindu society This Conference therefore urges all Hindus to discard this pernicious system and make every endeavour to restore Vedic Varna Vyavastha.

(MOVED by CHAIR).

4. This Conference expresses its deep sense of gratitude to their Highnesses the Maharajas of Mysore, Travancore and other Hindu States in the South for their noble contribution towards the eradication of the evil of untouchability.

This Conference is definitely of opinion, that untouchability is opposed to Vedic Dharma and calls upon the Hindus to do everything in their power to put down untouchability which is a blot on real Hindu and Vedic religion and culture

Proposed by Shri Vishvamitraji
Seconded by Shri Hanumantha Raoji

5. This Conference requests the Government of His Highness the Maharaja of Mysore and other Governments in Indian States or otherwise in South India to give necessary facilities for the study of the Vedas by all persons irrespective of caste or creed

Proposed by Shri J B. Mallaradhyaji.
Seconded by Shri B. Shankar Raoji.
Supported by Shri S. N Bhaskar Panthji

6 This Conference welcomes with great pleasure and gratitude

the efforts made by the social workers Srirampuram Bangalore City for the establishment of a Veda Vidyalaya where the Vedas will be taught free to all who are willing to join Vidyalaya and appeals to all the public in South India-particularly to the public of Bangalore the Mysore State and the Covernment of His Highness the Maharaja of Mysore to give it every encour agement and support and place it on a firm and established footing

Proposed by Shri J B Mallaradhyaji
Seconded by Shri Swami Vishwanandji
Supported by shri K S Subbagiri Raoji

7 This Conference recommends to His Highness the Maharaja of Mysore and his Covernment to appoint a wholetime officer of the Government to investigate co-ordinate and systematise all religious charitable institutions and endow ments in the State so as to make them serve the purposes for which they came into existence

Proposed by Shri B Shankar Raoji
Seconded by Shri H Kapurji

8 This Conference declares that the Vedic Dharma and Aryan Culture are universal and that they are open to all who adhere to their lofty principles It considers the Shuddhi movement necessary for the consolidation of Hindus and Aryas and therefore calls upon them to accord their whole hearted support to the work of the Aryasamaj in this cause

Proposed by Shri S Chandraji
Seconded by Sadhu Shivaprasadji

9 This Conference is of emphatic opinion that Hindi should be adopted as the National Language of the Country and requests all educational authorities in South India to give a proper place to this language in the curriculam of instruction in Schools and Colleges It also calls up on the people in South India to learn and help in propagating the language

Proposed by Shri Madanmohan Vidyadharji Vedalankar
Seconded by Shri U Gopal Naikji
Supported by Shri Aiya Murthiji Sharmaj

10 This Conference requests the Mysore Durbar to enact a law to legalise and give legislative san ction to inter caste marriages sol emnised under Arya rites on the lines of the Arya Marriage Validation Act (Act 19 of 1937) of British India

(Moved by the Chair)

S CHANDRA, Organising Secy
H KAPUR, General Secy
S I Aryan Conference, Bangalore

A NOTABLE WEDDING IN AJMER

(From a Correspondent)

The Pravasi-Bhawan, the residence of Swami Bhawani Dayal of South Africa in Adarsh Nagara model town of Ajmer was the scene of a notable wedding during the afternoon of 20th Dec, 1942 when his youngest son Shri Brahma dutt B Dayal was married to Shrimati Nirmala Devi F A daughter of the late Shri Lakshman Rao Dane, B A of Nagpur according to Vedic Rites and the Arya Marriage Act The ceremony was performed by Pt Jaidevaji Vidyalankar, translator of the four Vedas in Hindi assisted by Pandit Yagyadutt Sharma The Pravasi Bhawan was very artistically decorated with flowers flags and buntings and the Mandap was most picturesque with a large portrait of Rishi Dayananda The bride and the bridegroom, both of them chanted Vedic Mantras containing the sacred oaths of the married life



Shri Brahmadutt Bhawani Dayal
&
Shrimati Nirmala Devi

Whose marr age was celebra ed o the 20 h ecember according to Vedic R tes and Arya Marriage Act at Pravas Bhawan Adarsh Nagar Ajmere Ind a

This union is an ideal in the sense of our social emancipation as the bridegroom is a Bihari, while the bride is a Marathi lady, a fine example for discarding the provincial barriers It is also notable that Nirmala Devi was a Christian by birth who has recently embraced the Vedic religion She is a fine scholar of Hindi and Marathi, and has passed her F A examination with distinction at the Hislop College of Nagpur

About five hundred guests were present on this occasion prominent among those were Diwan Bahadur Harbilas Sarda, the orginator of the famous Sarda Act, Rai Bahadur Advocate Mithanlal Bhargava, Advocate Akshay Singh Dangi M A, LL B, President Rajasthan Hindu Maha Sabha, Advocate Kanwar Chand Kiran Sarda President, Rajsthan Arya Pratinidhi Sabha Pandit Jiyalalji founder D A V Agricultural and Industrial College, Pandit Suryadeva Sharma, M A, Principal, D A. V College Shri Choonilal Ragbavjee of Messrs Choonilal Bros (Pty Ltd) Durban, Rai Sahab Dr Sharma of Burma, Pandit Bhagwan Swaroop Nyayabhooshan, and Shrimati Gulab Devi, founder of Arya Girls' School

There was a great cheer and mirth all around, when a few speeches were delivered by outstanding personalities of Ajmer blessing the married couple for their future prosperity and exhorting them to live up to the high traditions of the married life The guests were entertained by many Hindi and Urdu poets amongst whom Shri Ramgopal was the best Hundreds of messages were received from India and abroad but the selected messages of the following personalities were read and greatly appreciated —

Raja Sir Maharaj Singh, C I E, Ex-Minister for the Government of India, Hon M S Aney, Minister of Indians Overseas for the Government of India, Hon P. N Sapru, Member Council of State, Sir Purushotamdas Thakurdas, Raja Narayan lal Pitty, Shri G L Mehta, President Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry, South African Indian Congress, Natal Indian Congress, Mr A I Kajee, Shrf C C Palsania Secretary Cape Indian Congress, Mr S A Waiz, Secretary, Imperial Indian Citizenship Association, Shri T K Swaminathan Secretary Indian Colonial Society, Shri Prem Narain Agarwal, M A, Secretary, Indian Colonial Association, Shri G A. Nateson, Editor, *Indian Review*, Sayed Abdul-

lah Brelvi, Editor, *Bombay Chronicel*, Shri Mohansingh Sangar, Editor *Vishal Bharat*, Pandit Dharmadeva Vidyavachaspati, Editor *Sarvadeshik*, Mahatma Narayan Swamiji, Swami Shankaranandji, Swami Gyananandji (former Mehta Jaimini), Swami Kewalanandji, Dr. Biharilal N Anantani, Ph. D, Bar-at-law, Commerce Minister of Jamnagar State, Shri U K Oza B A, Minister of Junagarh, Rao Raja Dr Shyam Bihari Mishra, M.A, D Litt, Minister of Orchha State, Poet Maithili Sharan Gupta, Pandit Rishiram B A, Principal, Brahma Maha Vidyalaya Lahore, Pandit Anandpriya, B A LL B, Founder Arya Kanya Maha Vidyalaya, Baroda, Shri Hans Maghraj, Secretary Natal Indian Congress, Pandit Chandrakant Ved vachaspati, Principal, Gurukul-Supa, Pandit Mahadev Sharan, Principal Gurukul-Songad, Dr. Ishwar Datt Vidyalankar Ph D, Prof Patna College, Kumari Lajjawati Devi, Principal, Kanya Maha Vidyalaya, Jullunder, Rai Bahadur Pt Shukdeva Bihari Mishra and Poet Siyaram Sharan Gupta

In conclusion the bride and the bridegroom thanked the guests for their presence and also expressed their gratitude for the lovely presents and kind messages that were received from the relatives, friends and admirers. The function was terminated with a short speech by the host Swami Bhawani Dayal and distribution of sweetmeats to the guests The ceremony had been considerably simplified owing to stresses of modern conditions and was concluded in about three hours where formerly they were celebrated for a day or more, attended by prodigal expenses which often landed the parties in bankruptsy

आर्यों के अन्तर्जातीय विवाह

आर्य वर की आवश्यकता

एक आर्य कन्या के लिये जिसकी आयु लगभग १८ वर्ष है और जो सब विषयों में मैट्रिक पास है, घर के सब कार्यों मे निपुण और गौर वर्ण की है, जिसके पिता दृढ़ आर्य समाजी एक मिलिटरी इञ्जनीयरिंग ऑफिस में काम करते हैं एक योग्य, स्वावलम्बी, स्वस्थ सुशिक्षित आर्य युवक वर की आवश्यकता है जिसकी आयु २५ वर्षसे कम और ३० से अधिक न हो। कन्या राजपूत कुलोत्पन्न है।

पत्र व्यवहार का पता —

मन्त्री सार्वदेशिक सभा, बलिदान भवन, देहली।

साहित्य समीक्षा

(समालोचनार्थ पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी चाहियें)

हवन यज्ञ द्वारा क्षयरोग (तपेदिक) की चिकित्सा—लेखक डा० फुन्दनलाल जी वर्मा M D. D C. L M R A S (London) भूड़ बरेली

प्रकाशक—श्री दीनानाथ अग्रवाल बी एस सी भू० पू० विज्ञानाध्यापक नव भारत विद्यालय बर्धा मूल्य ~)॥

डा० फुन्दनलाल जी गत अनेक वर्षों से हवन यज्ञ द्वारा क्षयरोग की चिकित्सा करते रहे हैं। इस पुस्तक में उन्होंने क्षयरोग के कारणों पर प्रकाश डालते हुए हवनयज्ञ द्वारा उसकी चिकित्सा किस प्रकार की जा सकती है इसका भली भांति प्रतिपादन किया है। वेद तथा आयुर्वेद के प्रमाणों के अतिरिक्त होमियोपैथी और ऐलापैथी आदि की दृष्टि से भी उन्होंने अपने अनुभव सिद्ध विचार का अच्छी तरह समर्थन किया है। इस चिकित्सा के लिये कैसी हवन सामग्री होनी चाहिये तथा अन्य उपचार (स्नान पान आदि) कैसा रखना चाहिये इत्यादि विषयों को भी सरल रीति से उन्होंने इस पुस्तक में दिखा दिया है। इस पुस्तक तथा पद्धति का खूब प्रचार होना चाहिये। ऐसी उत्तम प्राचीन वैदिक पद्धति के पुनरुद्धार के लिये डा० फुन्दनलाल जी सबके धन्यवाद के पात्र हैं। इस पुस्तक का अनुवाद प्रचार की दृष्टि से प्रांतीय भाषाओं और अंग्रेजी मे भी शीघ्र होना चाहिये।

आदर्श सुधारक दयानन्द—मूल लेखक—स्व० श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय—अनुवादक—श्री स्वामी अनुभवानन्द जी सरस्वती प्रकाशक—श्री गोविंदराम हासानंदजी अध्यक्ष आर्यसाहित्य भवन, नई सड़क देहली तृतीय संस्करण। मूल्य ।=)

इस पुस्तक मे हिन्दू प्रकृति क्या है? हिन्दू जीवन क्या है? हिन्दू समाज क्या है? सुधारक का लक्षण क्या है? इत्यादि विषयों पर विचार करते हुए लेखक ने निष्पक्ष भाव से सप्रमाण यह सिद्ध किया है कि स्वामी दयानन्द जी आदर्श सुधारक थे। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। 'हिन्दू' शब्द का 'आर्य' की जगह बार बार प्रयोग वैदिक धर्मियों को अवश्य अखरता है पर यह न भूलना चाहिये कि लेखक आर्य समाजी न थे यद्यपि वे ऋषि दयानन्द के बहुत ही अधिक भक्त थे। अनुवाद और प्रकाशन प्रशंसनीय है। यह पुस्तक पुरस्कार रूप में, देने के लिये बहुत ही उपयोगी है।

जीवन सौरभ—लेखक—श्री मनोहर मालवीय प्रकाशक जेनरल प्रिंटिंग वर्क्स लि० ८३, पुराना चीना बाजार स्ट्रीट कलकत्ता पृष्ठ ८० मूल्य ।~)

यह युवक युवतियों के लिये अत्यन्त उपयोगी एक पुस्तक है जिसमे ब्रह्मचर्य की आवश्यकता, वीर्य रक्षा के नियम, आत्मसंयम, भारतीय गार्हस्थ्य जीवन, स्त्री और ब्रह्मचर्य इत्यादि पर बहुत उत्तम प्रकाश ओजस्विनी किन्तु सरल भाषा में डाला गया है। ऐसे साहित्य के प्रचार की आजकल अत्यधिक आवश्यकता है॥

सचित्र हठ-योग—मूल लेखक स्वा० शिवानन्द जी 'आनन्द कुटीर' हृषीकेश प्रकाशक—

जैनरल प्रिंटिंग वर्क्स ८३ पुराना चीना बाजार स्ट्रीट कलकत्ता पृष्ठ १५४ मूल्य १)

आसन प्राणायाम आदि का महत्व युवक युवतियों के हृदय पर अङ्कित करने के लिये स्वा० शिवानन्द जी ने इस ग्रन्थ की रचना की थी। पुस्तक में व्यायाम और ध्यान की दृष्टि से अनेक प्रकार के आसन, विविध प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध क्रिया आदि पर चित्र सहित बड़ी उत्तमरीति से प्रकाश डाला गया है। अपने अनुभव सिद्ध लाभ भी बताये गये हैं। पुस्तक प्रत्येक योगाभ्यासी और व्यायाम प्रेमी के लिये अत्यन्त उपयोगी है॥ ध० दे०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दान सूची जनवरी १९४३

आर्य समाज स्थापना दिवस विधि

संयुक्त प्रान्त

आर्य समाज मन्सूरी (देहरादून)		७)
" "	सरैया चौबेपुर (कानपुर)	१।)
" "	बिजनौर	५)
" "	चौक, इलाहाबाद	४।)
" "	बूढ़पुर, देहरादून	५)

राजस्थान

" "	ब्यावर	८७॥)
" "	मऊ छावनी	७।)
		११७॥)
	पिछला जोड़	१४१०॥)
		१५२८)।
शेष विविध दान		४०।)

दाताओं को सभा की ओर से हार्दिक धन्यवाद। सभा का आर्थिक वर्ष समाप्ति पर है अत अभी तक जिन आर्य समाजों ने आय समाज स्थापना और सत्याग्रह स्मारक निधि का रु० नहीं दिया उन्हें तुरन्त भेज देना चाहिये। मन्त्री—

सार्वदेशिक सभा

बंगाल तूफान पीड़ित सहायता निधि

आर्य समाज दीवान हाल, देहली	१४)
" " सरैया चौबेपुर (कानपुर)	१)
मा० वेदव्यास जी गोजरा	५)
गुप्त दान	६)
श्री विश्वम्भरदयाल जी अमीन पेन्शनर पीपरपुर डा० दिबियापुर (इटावा)	१०)
श्री त्रिलोक नाथजी ओवरसियर टांगे वाली (अम्बाला)	१०)
श्री हरजीत सिंहजी लाहौर	१५)
श्री गयाप्रसाद जियालालजी टाडा (फैजाबाद)	२०)
श्री आर्य समाज सालवन (करनाल)	५)
आर्य समाज तलवण्डी साना (पजाब)	१०)
आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद स्टेट	२५)
आय समाज लुध्याना रोड फीरोजपुर	२५)
श्री मुन्नालालजी राष्ट्र भाषा प्रचार समिति कराची	२५)
श्री आनन्ददेवजी कौशल, ऐडवाकेट अहमदगढ़	५०)
आर्य समाज अलवर (स्टेट)	१६)
	२३७)
पिछला जोड़	७४२)
	९७९)

दाताओं को सभा की ओर से हार्दिक धन्यवाद। इन्द्र विद्यावाचस्पति, मन्त्री सार्वदेशिक सभा।

सार्वदेशिक सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का आगामी वार्षिक अधिवेशन २७ और २८ मार्च १६५३ को देहली में होगा। इसी अधिवेशन के साथ सभा के नियमों के संशोधनार्थ सभा का नैमित्तिक अधिवेशन भी होगा। सभा के सदस्यों से प्रार्थना है कि वे इन अधिवेशनों में अवश्य सम्मिलित होने का कष्ट करें। कोरम न होने के कारण नियमों के संशोधन का विषय गत २ वर्ष से स्थगित चला आता है। अबकी बार यह कार्य समाप्त करने का यत्न किया जारहा है जिससे नए नियमों के अनुसार सभा का भावी कार्य होसके।

वार्षिक अधिवेशन में सभा के आगामी वर्ष के कार्य क्रम पर भी विचार होगा। मन्त्री सभा

आर्यसमाजों के मन्त्रियों के नाम आवश्यक पत्र

श्रीयुत मन्त्री जी नमस्ते।

कृपया निम्न विषयों की ओर अपनी समाज के सदस्यों का ध्यान विशेष रूपसे आकर्षित करते हुए उसका अधिक उन्नत करने का प्रयत्न करें।

(१) प्रत्येक सदस्य (नर नारी) अपने जीवन का अधिक से अधिक पवित्र सेवामय, सत्यमय और प्रेममय बनाने का यत्न करे।

(२) दैनिक और साप्ताहिक सत्सङ्गों के अतिरिक्त जो समाज मन्दिरों मे किये जाए और जिन्हें अधिक भक्तिमय उपयोगी और आकर्षक बनाने का प्रयत्न किया जाए, सदस्यों के घरों पर पारिवारिक सत्सगों की आयोजना की जाए जिससे आर्यों के पारिवारिक जीवन वेदानुकूल बनें। प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य है कि वह प्रेमपूर्वक अपने सारे परिवार मे वैदिक आचार-विचार लावे। वैदिक स्वाध्याय, यज्ञों और संस्कारों का प्रत्येक आर्य परिवार में प्रचार हो।

(३) आर्य वीर दल के संगठन में प्रत्येक आर्यसमाज पूर्ण सहयोग दे और कुछ उत्साही योग्य युवकों को आर्यवीर शिक्षण शिविरों में शिक्षणार्थ भेज कर उनके द्वारा अन्यों को शिक्षित कराया जाए। यथा सम्भव व्यायाम शालाओं की भी स्थापना की जाए।

(४) ऋषि दयानन्द जन्म तथा बोधोत्सव इस वर्ष ४ मार्च को पड़ता है २६ फरवरी से ४ मार्च तक वेद प्रचार सप्ताह सर्वत्र उत्साह के साथ मनाया जाए जिस में अधिक से अधिक नरनारियों तक वेद का सन्देश पहुँचाया जाए। आर्य साहित्य वितरण के साथ साथ इस सप्ताह में 'सार्वदेशिक' पत्र की ग्राहक संख्या बढ़ाने का भी विशेष प्रयत्न किया जाए जिसमे वेदों का पवित्र संदेश विशेषरूपसे जनताके सन्मुख रखा जाता है।

(५) यदि आपकी समाज ने अभी तक आर्य-समाज स्थापना निधि और सत्याग्रह स्मारक निधि का दान सार्वदेशिक सभा कार्यालय में नहीं पहुँचाया तो उसे अब भी संग्रह करके अथवा अपने कोष से तुरन्त भेज कर अपने कर्तव्य और अनुशासन का पालन करें। आगामी आर्य समाज स्थापना दिवस को जो ५ एप्रिल को पड़ता है विशेष सफल बनाने के लिये अभी से तय्यारी करें।

(६) सब आर्य नरनारिया जन्म मूलक जाति भेद और अस्पृश्यता का क्रियात्मक परित्याग कर के शुद्धि और दलितोद्धार कार्य को विशेष रूप से अपनाएं। भवदीय—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा।

सम्पादकीय

श्री रामचन्द्र जी 'वीर' का अनशनः—

पाठक महोदय समाचार पत्रों में इस समाचार को अवश्य पढ चुके होंगे कि प० रामचन्द्र जी शर्मा वीर' ने जो पहले भी अनेक बार गो-हत्या और पशुबलि निवारणार्थ अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपनी तपस्या के बल से उद्देश्य में बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर चुके हैं गत १५ जनवरी से जयपुर राज्य में निम्न सुधारों के लिये आमरणान्त उपवास कर रहे हैं।

(१) जयपुर राज्य में हिन्दी भाषियों की संख्या लगभग ९२ प्रतिशत होते हुए भी अदालतों में प्राय उर्दू फारसी प्रचलित है जिससे जनता को अनेक कठिनाइयां सहन करनी पड़ती हैं। राज्य को चाहिये कि शीघ्र ही हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को राज्य के समस्त विभागों में प्रचलित करने की कृपा करे।

(२) जयपुर जैसे गो पालक राज्य ने गत कुछ वर्षों से जगलों में चरनेवाली गौवों पर जो कर लगा दिया है वह अनुचित है अत इसको तत्काल हटा दिया जाए।

इसमें सन्देह नहीं हो सकता कि श्री वीर जी की ये दोनों मांगें सर्वथा न्यायपूर्ण और उचित हैं। यद्यपि ऐसी मांगों की पूर्ति के लिये आमरणान्त अनशन व भूख हडताल के शस्त्र का प्रयोग कहा तक उचित है इस विषय मे मतभेद सम्भव है। श्री रामचन्द्र जी 'वीर के साथ इस व्रत मे उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुमित्रा देवी जी तथा परिवार के कुछ अन्य व्यक्ति भी सम्मिलित हैं ऐसा 'वीर अर्जुन' जयपुर समाचार' आदि पत्रों से ज्ञात होता है। हम जयपुर दरबार से सानुरोध निवेदन करते हैं कि वह श्री वीर जी की उपर्युक्त न्याय सङ्गत मागों को तुरन्त पूरा करके उनके तथा उनके परिवार के प्राणों की रक्षा करे और प्रजा के घोर असन्तोष को दूर करके यश का भागी बने। जयपुर की जनता को भी इस विषयक प्रबल वैध आन्दोलन बड़े उत्साह के साथ तब तक जारी रखना चाहिये जब तक ये मागें पूरी न की जाए।

अत्यन्त प्रशंसनीय सेवा यज्ञ.—

पूर्वीय बगाल के मेदिनीपुर आदि भागों में तूफान बाढ आदि के कारण जो भीषण उपद्रव गत अक्तूबर मास में हुए और उनसे जो अत्यन्त भयङ्कर क्षति हुई उसका रोमाचकारी वर्णन पाठक समाचार पत्रों में जान चुके हैं। इस दैवी आपत्काल में सार्वदेशिक सभा की प्रेरणा से कलकत्ता में आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी की

स्थापना की गई और उसकी सहायतार्थ सभा ने अ० भा० आर्यवीर दल समिति के स० प्रधान सेनापति और प्रधान शिक्षक श्री ओंप्रकाशजी त्यागी को कुछ स्वय सेवकों सहित ७ दिसम्बर को मेदिनीपुर की ओर भेजा। आर्य समाज सेवा समिति ने आर्य वीर दल के कार्य कर्ताओं के सहयोग से तमलुक आदि डिवीजनों मे दिन रात जो सेवा यज्ञ चलाया वह अत्यन्त अभिनन्दनीय है। गत लगभग २ मासों मे पीड़ित भाई बहिनों को ८०१३।।)। का चावल बाटा गया ४०००) का हैशियन बाटा गया ४५००) के वस्त्र बाटे गये जिनमे धोती, साड़ी, कमीज कम्बल, चादर आदि सम्मिलित थे। ३६के लगभग आर्य कार्य कर्ताओं ने इस अभिन्दनीय सेवायज्ञ मे सक्रिय भाग लिया। आर्थिक आहुति डाल कर जिन आर्य देवियों और सज्जनों ने सेवा यज्ञ को सफल बनाने में सहायता दी वे सब धन्यवाद के पात्र हैं। श्री ओंप्रकाश जी के अनुभवों से लाभ उठाकर सभा आर्य वीर दल का एक केन्द्रीय स्थिर विभाग सेवा कार्यार्थ बनाने की योजना कर रही है जिससे भारत के किसी भी भाग मे बाढ़, तूफान, अकाल आदि दैवी आपत्ति की सूचना मिलते ही तत्काल इस केन्द्रीय सेवा समिति के स्वय सेवकों को वहा भेजा जा सके। ऐसी महत्वपूर्ण योजना को सफल बनाने के लिये सहयोग देना प्रत्येक धार्मिक नर नारी का कर्तव्य है। प्रत्येक आर्य को क्रियात्मक सेवा यज्ञ द्वारा जनता के हृदय में स्थान पाने का यत्न करना चाहिये। आर्य समाज गुल्बर्गा (हैदराबाद रियासत) ने बर्मा आदि के युद्ध पीड़ित अनाथ बालक बालिकाओं की रक्षार्थ अनाथालय स्थापित करके एक उत्तम आदर्श जनता के सम्मुख स्थापित किया है जो अनुकरणीय है। गुल्बर्गा आर्य समाज के उत्साही मन्त्री श्री तुकाराम जी और कोषाध्यक्ष श्री परसरामजी आदि का इस सेवायज्ञ विषयक उत्साह विशेष प्रशसनीय है।

"अदिति" का स्वागत:—

श्री अरविन्द इस युग के सुप्रसिद्ध विचारक और योगी हैं। उनका सन्देश हिन्दी जनता तक पहुँचाने तथा उनके योग साधना पद्धति, दर्शन आदि विषयक सिद्धान्तों और विचारों को प्रकाशित करने के उद्देश्य से श्री अभयदेव जी संन्यासी भू० पू० आचार्य गुरुकुल कांगड़ी के सम्पादकत्व में "अदिति" नामक त्रैमासिक पत्रिका फर्वरी मास से नई देहली से (डाक पेटी न० ८५ नई देहली) प्रकाशित होगी यह जान कर हमें प्रसन्नता हुई है। इस पत्रिका का अगाऊ मूल्य ४) वार्षिक होगा। हमारे विचार में यह अच्छा होता कि पत्रिका का उद्देश्य श्री अरविन्द के विचारों के प्रचार मात्र तक सीमित न हो कर वेदादि सत्य-शास्त्रों तथा अनुभव के आधार पर आध्यात्मिकता का प्रचार करना होता। हम उत्सुकता पूर्वक "अदिति" के उदय की प्रतीक्षा करते हैं और आशा रखते हैं कि सुयोग्य सम्पादक महोदय इसमें 'निर्भ्रान्त गुरुवाद' की सकुचित भावना को न लाकर इसे सर्व जनोपयोगी बनाने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे।

आर्य वीर दल संगठन :—

स्थान २ पर आर्य जनता के सहयोग से आर्य वीर दलों की स्थापना और संगठन के समाचार

प्राप्त होते रहते हैं किन्तु खेद है कि कई समाजों ने इस ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। समय की आवश्यकता को विशेष रूप से दृष्टि मे रखते हुए हम आर्य जनता का ध्यान पुन: इस अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य क्रम की ओर आकर्षित करते हैं। गत मास अखिल भारतीय आर्यवीर दल समिति के स० शिक्षक ब्र० सुखदेव जी ने (जो जन्मत दक्षिण अमेरिका निवासी हैं) देहली, पानीपत और नरेला (देहली प्रान्त) में आय वीरों को शिक्षण देने और संगठित करने का प्रशसनीय कार्य किया है तथा ३१-१-४३ को नरेला मे आर्य वीरों का प्रभाव जनक व्यायाम प्रदर्शन भी किया गया जिस मे श्री महात्मा नारायण स्वामी जी ने आर्यवीरों को आशीर्वाद तथा उत्तम निर्देश दिये। हमें विश्वास है कि इस अत्यन्त उपयोगी कार्य की प्रगति को तीव्र करने मे प्रत्येक प्रान्त की आर्य जनता पूर्ण सहयोग प्रदान करेगी।

दक्षिण भारतीय और सार्वदेशिक आर्य सम्मेलन

जैसे कि गत मास के अङ्क में हम सूचित कर चुके हैं गत २८ से ३० दिसम्बर सन् ४२ तक बगलौर में दक्षिण भारतीय आर्य सम्मेलन बडे समारोह के साथ किया गया इस। सम्मेलन मे सार्वदेशिक सभा के मान्य प्रधान श्री प० गङ्गा-प्रसाद जी एम० ए० रि० चीफजस्टिस और उप प्रधान श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० उपाध्याय ने विशेष क्रियात्मक भाग लिया था। इस सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्तावों को हम इस अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी (प्रधान सभा) का भाषण इतना महत्वपूर्ण है कि हम उसे सम्पूर्ण रूपेण पाठकों के सम्मुख रखना चाहते हैं। अगले अङ्क से उसको प्रकाशित किया जाएगा। ऐसे प्रान्तीय आर्य सम्मेलनों के द्वारा प्रान्त में धार्मिक जागृति और उत्साह उत्पन्न करने में विशेष सहायता मिलती है तथा कार्य कर्ताओं का परस्पर परिचय और अनुभव विनिमय होने से भविष्य कार्य क्रम निर्माण मे बड़ा लाभ होता है। इन प्रान्तीय आर्य सम्मेलनों के अतिरिक्त एक सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन का प्रति वर्ष होना भी अत्यावश्यक है जो धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक सब समस्याओं पर आर्यों के दृष्टि कोण से विचार करके जनता का मार्ग प्रदर्शन करे। इस वर्ष गुरुकुल विश्वविद्यालय काङ्गड़ी के वार्षिकोत्सव पर २५–२६ एप्रिल को इस पत्र मे सार्वदेशिक आर्य सम्मेलन की आयोजना की जा रही है जिसको सफल बनाने मे जनता का पूर्ण सहयोग अपेक्षित है।

राजाजी की नई सूझ:—

अब तक तो सब लोग यही सुनते आते थे कि एकता मे ही बल होता है पर अब भारत के "धुरन्धर राजनीतिज्ञ नेता" (जिनके अनुयायी नगण्य हैं) "अद्भुत प्रतिभा शाली", श्रीराजगोपालाचार्य ने एक नई घोषणा की है कि विभिन्नता में भी बल होता है और इस प्रकार वे 'पाकिस्तान' के द्वारा एक की जगह दो एकताएँ स्थापित करके देश की शक्ति बढ़ाना चाहते हैं। राजाजी की इस विचित्र सूझ पर क्या लिखा जाए कुछ समझ में नहीं आता। इस पर तो अवश्य उन्हें शान्ति स्थापनार्थ

प्रयत्न का नोबल पुरस्कार मिलना चाहिये। हमें तो राजा जी की वतमान निस्सार घोषणाओं और चालों को देखकर भर्तृहरि की यही उक्ति बार २ याद आती है कि 'विवेक भ्रष्टाना भवति विनिपात शतमुख।" भगवान् राजाजी को देशकी सच्ची सेवार्थ सुबुद्धि प्रदान करें यही हमारी प्रार्थना है।

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

'सार्वदेशिक' के श्रद्धानन्दाङ्क पर सम्मति 'वैदिक धर्म' औंध जिला सतारा :—

"हुतात्मा स्वर्गीय स्वा० श्रद्धानन्द जी के सम्बन्ध में लिखित अनेक पठनीय लेखों का सुन्दर संग्रह इस अङ्क में है। इस अङ्क का सम्पादन बडे अच्छे ढग से हुआ है। इसमें प्रकाशित लेखों के पढ़ने से अमर हुतात्मा श्री श्रद्धानन्दजी का एक अतीव प्रभावोत्पादक चित्र पाठकों के सन्मुख उपस्थित होता है। ऐसे सुन्दर और पठनीय अङ्क के सम्पादक (प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति) का जितना भी अभिनन्दन किया जाए थोड़ा ही है। अङ्क को पढ़ने से ही उसकी योग्यता भली भांति ध्यान में आ सकती है।"

('वैदिकधर्म' अन० ४३)

आर्य महा सम्मेलन के नियम तथा उद्देश्य—

१ आर्य जाति के सगठन को दृढ़ करना।

२ आर्य जाति के धार्मिक, राजनैतिक तथा नागरिक (Religious, Political & Civic) अधिकारों पर होनेवाले आक्रमणों के निवारण के उपाय सोचना तथा उपाय करना।

३ समय समय पर सरकार की धर्म सम्बन्धी नीति के सम्बन्ध में आर्य समाज (या आर्य जाति) की नीति का निर्णय करना।

४. उपर्युक्त विषयों पर आर्य जगत् को केन्द्रित करना तथा तत्सम्बन्धी नीति का प्रकाशित करना।

५. देश देशान्तरों में आर्य संस्कृति की रक्षा तथा प्रचार सम्बन्धी बाधाओं पर विचार करना।

संगठनः—

१. आर्य समाज का प्रत्येक सभासद् ही प्रतिनिधि होने का अधिकारी होगा।

२ प्रत्येक आर्यसमाज को जिनमें स्त्री-समाज भी सम्मलित हैं कम से कम एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा।

३ जिन समाजों के दस या दस से अधिक सभासद् होंगे उन्हें प्रत्येक १० सभासद् के पीछे एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा।

४ विषय निर्धारिणी सभा के सब सभ्य प्रतिनिधि समझे जावें।

५. सार्वदेशिक सभा तथा समस्त प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं के सदस्य निज अधिकार से प्रतिनिधि समझे जावेंगे।

६. सन्यासियों के सात तक प्रतिनिधि नियत करने का अधिकार सम्मेलन के सभापति को होगा।

७. प्रतिनिधि की फीस २) रु० होगी।

नोट:—(१) प्रतिनिधि में वह सदस्य भी शामिल समझे जावेंगे जो सार्वदेशिक सभा आदि की ओर से निज अधिकार से प्रतिनिधि स्वीकार किये गये हैं।

(२) सन्यासी प्रतिनिधि प्रतिनिधि फीस से मुक्त होंगे।

विषय निर्धारिणी समितिः—

विषय निर्धारिणी समिति के निम्न सदस्य (सभ्य) होंगे—

१. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के समस्त सभ्य निज अधिकार से।

२. परोपकारिणी सभा तथा आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर के ७।७ प्रतिनिधि।

३ इन्द्रप्रस्थ प्रतिनिधि सभा के ३ प्रतिनिधि।

४. स्वागतकारिणी सभा के ७ प्रतिनिधि परन्तु वे प्रतिनिधि डेलीगेट होने चाहियें।

५. जिन प्रान्तों वा प्रदेशों मे प्रतिनिधि सभायें नहीं हैं उन प्रान्तों की आर्यसमाजों के ५ प्रतिनिधि।

६. सभापति को अधिकार होगा कि वह ० तक सभासद् निज अधिकार से नियत कर सके।

मन्त्रीः—

सार्वदेशिक सभा का मन्त्री निज अधिकार से विषय निर्धारिणी सभा का मन्त्री समझा जावेगा।

प्रधानः—

१ आर्य सम्मेलन का प्रधान विषय निर्धारिणी समिति का प्रधान समझा जावेगा।

२. प्रत्येक प्रस्ताव पहले विषय निर्धारिणी सभा में उपस्थित होगा वहा से वह सम्मेलन में भेजा जावेगा।

३. सम्मेलन के प्रधान का चुनाव स्वागतकारिणी समिति करेगी परन्तु अन्तिम निश्चय से पूर्व आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा आर्य जनता से सम्मति लेना आवश्यक होगा।

विविध नियमः—

१ स्वागतकारिणी सभा के पास खर्च निकाल कर जो धन शेष रहे उसका आधा धन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के पास भेजना आवश्यक होगा और शेष आधा धन उस प्रान्त के आर्य समाज सम्बन्धी किसी उपयोगी कार्य में व्यय किया जायेगा जहा सम्मेलन सगठित हुआ हो।

२ स्वागतकारिणी सभा की सदस्य-फीस ५) रु० होगी।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
मन्त्री सार्वदेशिक सभा

शुभ समाचार—

'सार्व देशिक' पत्र आज साय (६-२-४३) को प्रेस से बाहर निकलने को ही था कि यह शुभ समाचार जानकर हमे अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि श्री रामचन्द्र शर्मा 'वीर' ने जो अनशन गत १५ जनवरी से जयपुर में प्रारम्भ किया हुआ था (जिस विषय में सम्पादकीय टिप्पणी' प्रकाशित हो चुकी है) वह दानवीर सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला तथा अ० भा० हिन्दू महासभा के सुयोग्य उत्साही मन्त्री गुरुकुल विश्वविद्यालय कागड़ी के सुप्रसिद्ध स्नातक प० चन्द्रगुप्त जी वेदालङ्कार आदि के प्रयत्न के परिणाम स्वरूप जयपुर दरबार द्वारा मागों की स्वीकृति का आश्वासन देने पर ४ फ़र्वरी साय समाप्त हो गया। श्री सेठ बिड़ला जी प० चन्द्रगुप्त जी और इस विषय मे प्रयत्न करने वाले सब धन्यवाद के पात्र हैं। सार्वदेशिक सभा ने इस विषय मे लगभग २ सप्ताह पूर्व जयपुर राज्य के प्रधान मन्त्री का इस आशय का का तार स्वय दिया था तथा अन्य सब प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं से दिलवाया था कि श्री रामचन्द्र जी वीर की मागें सर्वथा न्याय युक्त हैं उन्हें तत्काल स्वीकार करके उनके प्राण की रक्षा कीजिये तथा प्रजा के साथ न्याय कीजिये। सभा के पूज्य प्रधान श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ़ जस्टिस ने इस विषय मे सभा की ओर से एक विस्तृत पत्र भी राज्य के अधिकारियों को लिखा था। राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री कुवर चादकरण शारदा जी प्रधान मन्त्री जयपुर राज्य से इस सम्बन्ध मे स्वय भी मिले थे।

सम्पादक— सा० दे०

प्रशंसनीय शुद्धि चक्र—

उपर्युक्त शुभ समाचार के साथ आज ही (६-२-४३) यह हर्षजनक समाचार मिला है कि बुलन्दशहर के दो ग्रामों में पिछले दिनों भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की तरफ़ से प० करनदेवजी ने लगभग २०० ईसाइयों को शुद्ध करके आर्य धर्म की दीक्षा दी। इस शुद्धि कार्य की वास्तविक सफलता जन्ममूलक जाति भेद (जातपात) और अस्पृश्यता (अछूतपन) को सर्वथा त्याग कर समान व्यवहार पर निर्भर है जैसे कि गत ३-२-४३ को आर्य समाज दीवान हाल देहली के वार्षिकोत्सव के सम्बन्ध मे आयोजित शुद्धि सम्मेलन मे स्वीकृत प्रस्तावों मे बताया गया था जिन्हें हम अगले अङ्क मे प्रकाशित करेंगे।

लोहारू मे आर्य समाज मन्दिर तथा आर्य पाठशाला

लोहारू रियासत में (जहा दो वर्ष पूर्व आर्यों के जलूस पर कुछ उद्दण्ड मुसल्मानों की ओर से आक्रमण किया गया था) आर्यसमाज मन्दिर और आर्य पाठशाला के भवन निर्माणार्थ आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब गुरुदत्त भवन लाहौर ने ५०००) की अपील प्रकाशित की है जिस का हम सार्वदेशिक सभा की ओर से समर्थन करते हुए यह विश्वास रखते हैं कि आर्य जनता इस राशि को बहुत शीघ्र पूर्ण करके रियासत में स्थिर प्रचार कार्य की नींव डालने में सहायक होगी। इस विषयक सहायता तुरन्त पंजाब प्रतिनिधि सभा के नाम भिजवानी चाहिये अन्यथा भय है कि रियासत से दी हुई भूमि जब्त हो जाये और इस प्रकार आर्यसमाज के गौरव पर कलङ्क लगे।

ध० दे०

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयो पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है। मूल्य ॥=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर अद्भुत प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण।=)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।-), ≡), =)॥, =)॥. -)॥, ≡)॥, ।), ।=)॥

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्यसमाज की लायब्रेरियों में रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) प्राणायाम विधि अजिल्द	᠈)॥	(२२) कथा माला	।=)
(२) वैदिक सिद्धान्त अजिल्द		(२३) आर्य्य जीवन और गृहस्थ धर्म	=)
सजिल्द	१)	(२४) आर्य्यावर्त्त का वाणी	॥
(३) विरजानन्द विजय	=)	(२५ आ वरदल शिक्षण शिविर	)
(४) यमपितृ परिचय	२)	(२६) आय स याग	२॥)
(५) वेद में असित शब्द	-)	(२७) प चयज्ञ प्रकाश	॥।)
(६) वैदिक सूर्य्य विज्ञान	=)	(२८) आय समाज का इतिहास	॥।)
(७) ऋग वद म देवृकाम वा देवकामा	)	(२९) य ना क जात	॥)
(८) विदेशों में आर्य्य समाज	।)	(३०) भक्ति कुसुमाञ्जलि	॥)
(९) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	१)	(३१) ... tra W H B ...	२॥)
(१०) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श	१॥)	(३२) ... f ... ly ... eve ... wit	।-)
(११) भजन भास्कर	॥)	) ...	=)
(१२) समस्त आर्य्य समाजों की सूची	।)	(३४) ... ... Ir ... ... (... It ...	॥)
(१३) मा ... क ... स आ० म नल्द	)	(३५) ... Ic ...	१)
(१४) ...	।)	(३६) ... e Ar ... arti	=)
(१५) आ डायरेक्टरी आ० १) स० १।)		(३७) ... t ... in India	॥)
(१६) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	२)	(३८) ... M ... Ar ... B ...	१)
(१७) सत्यार्थ निर्णय	१॥)	...	॥)
(१८) संस्कृत सत्यार्थप्रकाश	आ)	(३९) The Glory of Vedas	=)॥
(१९) हिन्दू मुस्लिम इत्तहाद (उ म)	=)	(४०) Arya Samaj and Vedic Dharma	॥)
(२०) इकरार इकदाक्त (उर्दू में)	॥=)		
(२१) आर्य्यपर्वपद्धति म त ...	१)		

...

...

इस पुस्तक में आयुर्वेद ... द्वारा ... प्रयोग ... आपने अथर्ववेद के मन्त्रों द्वारा ... न ... ... वर्षा ... कर्मा ... चिकित्सा ... चिकित्सा और पशु चिकित्सा ... है। इन प्रकरणों में वेद के अनेक महत्वपूर्ण रहस्यों का उद्घाटन किया गया है। पुस्तक २०×२६ आठ पेजी पृष्ठ संख्या ३१२ मूल्य केवल) मात्र है। पोस्टेज व्यय ।) प्रति।

... डायरेक्टरी ...

... आर्य जगत् की समस्त संस्थाओं सभाओं और समाजों का सन् १९४१ ई० की विश्व व्यापी ... प्रगति ... आर्य समाज के नियम, ... कानून ... ... दल आदि अन्य आवश्यक ज्ञातव्य बातों का संग्रह। आज ही आर्डर भेजिये।

मूल्य अजिल्द १।) पोस्टेज ।)

मूल्य सजिल्द १॥) पोस्टेज ।=)

मिलने का पता—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।



सम्पादक—

वार्षिक मूल्य

विषय-सू

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष १८ } मार्च, १९४३ ई०] फाल्गुन १९९९ [दयानन्दाब्द ११९ { अङ्क १

* वैदिक प्रार्थना *

ओं विश्वाहात्वा सुमनसः सुचक्षसः प्रजावन्तो अनमीवा अनागसः ।
उद्यन्तं त्वा मित्रमहो दिवे दिवे ज्योग जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ॥ ऋ० ७।६६।१३

अर्थ—हे (मित्रमह सूर्य) मित्रों से पूजा करने योग्य संसार के उत्पादक ज्योतिर्मय प्रभो हम (जीवा) जीव (विश्वाहा) सदा (सुमनस) उत्तम मनसे युक्त तथा प्रसन्न रहते हुए (सुचक्षस) आंखों तथा अन्य इन्द्रियों की उत्तम शक्ति को धारण करते हुए (प्रजावन्त) उत्तम वीर्य शक्ति और सन्तान से युक्त होते हुए (अनमीवा) रोग रहित (अनागस) पाप रहित होकर (दिवे दिवे) प्रति दिन (ज्योग्) दीर्घकाल तक (उद्यन्त त्वा) हृदय में प्रकाशित होते हुए तुझे (पश्येम) देखते रहें— तेरे दर्शन सदा करते रहें

विनय— हे सूर्य समान सबके प्रकाशक ज्योतिर्मय परमात्मन् । तुम हमारे सारे अज्ञानान्धकार को दूर करने वाले हो । हम सब तुम्हारे मित्र और पुत्र तुम्हारी ज्योति का सदा दर्शन करते रहें । तुम्हारी कृपा से हम मन मे पवित्र विचार रखते हुए सदा प्रसन्न रहें पापों और रोगों से रहित होकर उत्तम शक्ति और सन्तान को प्राप्त करके तुम्हारा भजन कीर्तन आनन्दपूर्वक करते रहें ।

अध्यात्म-सुधा

"अमृत पुत्रो ! हृदयमन्दिर में उसकी खोज करो।"

यही उपासना का रहस्य है।

[ले०—स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, संग्रहीता (श्री लब्भूराम जी नैयड़, आनन्दाश्रम लुधियाना)]

ओं सूर्यस्य चक्षुरारोहाग्ने रक्ष्णः कनीनकम्।
यत्रैतशेभिरीयसे भ्राजमानो विपश्चिता॥

यजु० अ० ४ मन्त्र ३२

अर्थ—हे परमेश्वर! जहां आप विज्ञान आदि गुणों से प्रकाशमान विद्वान् से विज्ञात होते हैं। जहां आप सूर्य और अग्नि के देखने के साधन, प्रकाश करनेवाले नेत्रों को देखने के लिये शक्ति देते हैं, वहां पर आपकी असीम महिमा के साथ संयोग होता है।"

परमात्मा की उपासना किस प्रकार करनी चाहिये। परम पिता के समीप आसन किस प्रकार लग सकता है? ये बड़े गम्भीर प्रश्न हैं। परमात्मा को कहां ढूंढने जायँ! कोई स्थान भी तो उससे खाली नहीं। रोम रोम में वह रम रहा है। सूर्य और चांद पृथ्वी और आकाश उसी के सहारे स्थित हैं। जड़ और चेतन में वह व्यापक है। फिर कैसे भूल हैं, वे पुरुष जो जंगल और उजाड़ में उसे ढूंढने जाते हैं। पत्थर और पानी में उसकी खोज करते हैं। पहले जागृत अवस्था में उसकी जड़ जगत्के एक एक भागमें खोज करो। सब क्रिया उसीसे प्रकाशित होती है। सबसे बड़ा साधन प्रत्यक्ष आप्त है। बस, उसी की शक्ति में पहली मन्ज़िल परमात्मा की तलाश की समाप्त हो जाती है। फिर चेतन जगत् में प्रवेश होता है। ज्ञानियों के हृदयों से बढ़कर और कौनसी जगह परमात्मा की खोज के लिये हो सकती है। इसी जगह उसका उच्च प्रकाश होता है। इसलिये वेद कहता है कि वह परमात्मा उपासक के समीप से समीप और दुष्ट धर्म शत्रु से दूर ही दूर है। अमृत पुत्रो! हृदय मन्दिर में उसकी खोज करो। यही उपासना का आदर्श है।

प्रशर्धाय मारुताय स्वभान व इमा वाचमनजा पर्वतच्युते। घमस्तुभे दिव आ पृष्ठ यज्वने द्युम्न श्रवसे महि नृम्णमचत। ऋग्वेद। अ० ४।३।१४

अर्थ—"हे कामना करते हुए विद्वानो! आप लोग अपनी कान्ति बुद्धि तथा मनुष्यों के सम्बन्धी बल के लिये इस वर्तमान उत्तम प्रकार वाणी का उच्चारण कीजिये।" ईश्वर आज्ञा देते हैं कि विद्वान् पुरुष सदैव अज्ञानी पुरुषों को ज्ञान शिक्षा देते रहें जिससे कि अज्ञानी सत् असत् में विचार करते हुए सदैव सत् को प्राप्त करें। जिससे वे अपने इस दुःख से जो उन्हें अविद्या के कारण भोगना पड़ता है निवृत्त हो जावें। इसलिये विद्वान् सदैव ऐसा प्रयत्न करते रहें जिससे उनकी विद्या रूपी ज्योति के प्रकाश से अन्धकार दूर होता रहे ताकि सब मनुष्य अन्धकार को छोड़कर प्रकाश में विचरें।

ओं तत् सत्।

वेदामृत—

एकेश्वर पूजा

(१) ओं य एक इत् तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः । पतिर्जज्ञे वृषक्रतु ॥ ऋग्वेद अ०४।७।-४

(२) ओं माचिदन्यद् विशंसत सखायो मारिषण्यत । इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचासुते मुहुरुक्था च शंसत ॥ ऋग्वेद अ० ५।७।१७

(३) ओं दिव्यो गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यो विक्ष्वीड्यः । तं त्वायौमि ब्रह्मणा दिव्य देव नमस्ते अस्तुदिवि ते सधस्थम् ॥ अथर्व० २। २

(४) ओं त्वं हि न पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ । अधाते सुम्नमीमहे ॥ साम०३।४।२

अर्थ—(य एक इत्) जो परमात्मा एक ही है (तम् उ स्तुहि) हे मनुष्य तू सदा उसी की स्तुति कर । वह (वृषक्रतु पति जज्ञे) सुखों की वर्षा करनेवाला, सब शक्तिमान् स्वामी है ।

(२) हे (सखाय) मित्रो (अन्यत् चित् मा विशंसत) और किसी की तुम स्तुति मत करो (मा रिषण्यत) अन्यों की स्तुति पूजा करके दुःख मत उठाओ (सुते) यज्ञादि के अवसरों पर (सचा) तुम सब मिलकर (वृषणम् इन्द्रम् इत स्तोत) सुख वर्षक एक परमेश्वर की ही स्तुति करो (मुहु उक्था च शंसत) बार बार उसकी स्तुति में वेद मन्त्रों का उच्चारण करो ।

(३) (य) जो (दिव्य) दिव्यगुण कर्म स्वभाव युक्त (गन्धर्व) पृथिवी और वेद वाणी का धारक (भुवनस्य पति) सारे संसार का स्वामी (एक एव नमस्य) एक मात्र नमस्कार करने योग्य है (विक्षु ईड्य) जो सारी प्रजाओं में पूजनीय है । हे (दिव्य देव) दिव्य गुण युक्त सर्व प्रकाशक प्रभो (ब्रह्मणा) वेद ज्ञान के साथ (तं त्वायौमि) उस तेरे साथ मैं अपने आत्मा को मिलाता हूँ । (ते नम अस्तु) तुझे नमस्कार हो (ते दिवि सधस्थम्) ज्ञान प्रकाश में जीवात्मा का तुम्हारे साथ मेल और आनन्द होता है ।

(४) (शतक्रतो) हे अनन्त कर्म और ज्ञान वाले परमेश्वर (त्वं हि न पिता) तू ही हमारा पिता है (त्वं माता बभूविथ) तू ही हमारी माता है (अधा ते सुम्नम् ईमहे) इसलिये हम तुमसे ही सुख-कल्याण की प्रार्थना करते हैं ।

इन मन्त्रों में स्पष्ट उपदेश है कि मनुष्यों को सर्व व्यापक, सर्व शक्तिमान्, सर्वज्ञ एक परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना तथा उपासना करनी चाहिये अन्य किसी की नहीं । अन्य की स्तुति तथा पूजा करने से मनुष्य सच्चे सुख और आनन्द को कभी प्राप्त नहीं कर सकता । परमात्मा ही हमारे पिता माता के समान है । वह हमारा दयामय पिता और मङ्गलमयी माता है इसलिये उसकी उपासना और प्रार्थना करने से ही सुख मिल सकता है अन्यथा नहीं । उस एक परमात्मा के ही इन्द्र मित्र, वरुण, अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु, शिव-शङ्कर इत्यादि नाम हैं जैसे कि वेदों में स्पष्ट कहा

गया है कि 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'। एक परमात्मा को ही ज्ञानी लोग अनेक नामों से पुकारते हैं। सबसे बड़ा होने के कारण उसे ब्रह्मा, सर्व व्यापक होने के कारण विष्णु, कल्याणमय होने के कारण शिव और शान्ति देनेवाला होने से शङ्कर, शम्भु आदि नामोंसे पुकारा जाता है। वह सर्व व्यापक, सर्वान्तर्यामी है अत उसका कोई आकार नहीं। कोई उसको मूर्ति आदि नही हो सकती इस बात को "अकायम् अव्रणमस्नाविरम्।" यजु० ४०। ८॥

"न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश।" यजु० ३२। ३॥

इत्यादि वेद मन्त्रों में स्पष्टतया बताया गया है। शुद्ध हृदय द्वारा ही उसकी उपासना हो सकती है इसलिये सब मनुष्यों को अपने को सवदा पवित्र बनाते हुए उत्तम परोपकार के कार्य करने में सदा तत्पर रहना चाहिये।

ध० दे०

ऋषि दयानन्द और मूर्ति पूजा

(लेखक—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज ज्वालापुर)

१९२६ ई०की बात है जब काठियावाड के आर्य पुरुषोंने ऋषिदयानन्दके जन्म स्थान टकारेमे ऋषि दयानन्द का शताब्दी उत्सव मनाया था। वहा के पौराणिकों ने उस शिव मन्दिर पर, जिसमे ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र मे प्रसिद्ध चूहे की घटना घटित हुई थी, यह लिखकर लगा रक्खा था कि 'यह मन्दिर ऋषि दयानन्द के पिता करसन जी तिवारी ने बनवाया था" इसका मतलब केवल इतना था कि ऋषि दयानन्द के नाम के साथ मूर्ति पूजा का कुछ सम्बन्ध जोड देवें। अस्तु, देश मे मूर्ति पूजा असल मे जिस रूप में अब प्रचलित है और जिस प्रकार अब देवताओं का आवाहन करके मूर्ति को देवता का रूप दिया जाता है, इस सूरत मे अकबर के समय तक मे प्रचलित नहीं थी। मेरे सामने अबुल फजल की लिखी हुई आईन अकबरी का श्रीयुत ग्लेविन का किया हुआ अगरेजी अनुवाद है। अनुवाद की कुछ पक्तियों का भावानुवाद इस प्रकार है —

'वे (हिन्दू लोग) एक स लेकर सभी, ईश्वर के एकत्व मे विश्वास रखते है, यद्यपि वे मूर्तिया रखते हैं और उनका मान करते हैं तो भी वे कदापि मूर्ति पूजक (Idolaters) नहीं हैं जैसा कि मूर्ख लोग समझा करते हैं। ये मूर्तिया देवताओं की केवल स्मृति दिलाने के लिये हैं जिनकी वे प्रार्थना करते हैं। इन मूर्तियों को अपने सामने केवल इसलिये रखते हैं जिससे चित्त डावाडोल न होने पावे।"

स्वाभाविक रीति से प्रश्न यह होता है कि फिर इतनी मूर्ति पूजा और मन्दिरों का विस्तार क्यों हुआ? यह प्रश्न कुछ काल तक मेरे मस्तिष्क मे चक्कर लगाता रहा और उस समय तक इसका समाधान नहीं हुआ जब तक कौटिलीय अर्थ शास्त्र को मैने नहीं देखा। इस अर्थ शास्त्र के देखने से पता चला कि उस समय राजा के कोश की आय वृद्धि के लिये, राजा की ओर से इसका प्रचार किया जाता था। अर्थ शास्त्र की कुछेक पक्तियों का भावानुवाद इस प्रकार है —

"किसी भी पाखड (धर्मपथ) के सघ का धन या देश धन जिसे श्रोत्रिय न भोगते हों कृत्यकार(हथकडों मे उस्ताद) लोग यह कहकर खजाने मे पहुचा देवें कि हमने वह धन किसी ऐसे के यहा रक्खा था जो मर गया, या ऐसे घर में रक्खा था जो जल गया। ××× रात ही रात मे कहीं पर देव मन्दिर या चिता स्तूप या कोई सिद्ध स्थान या कोई अद्भुत घटना खड़ी करके वहा यात्रा और समाज लगवा देवें और उनसे धन कमावें। यदि चैत्य या वृक्ष में असमय फूल फल आ जावे तो देवता का आ जाना प्रसिद्ध करें। वृक्ष में किसी मनुष्य को छिपा कर, उसके द्वारा राक्षस का भय दिखला कर

सिद्ध का स्वाग बनाये हुये का पुर और देश वासियों के स्वर्ण से उसका प्रतीकार करावे। सोना भेंट चढ़ाने पर सुरङ्ग वाले कुएँ मे नाग दिखलावे जिसका सिर बधा रहे।

श्रद्धालुओंको नाग की प्रतिमामे जिसमें भीतर छेद हों या मन्दिर या समाधि के छेद में या वल्मीक के छेद मे प्रत्यक्ष नाग का दर्शन करावें। पहले उसे (नाग को) खिलाकर सुस्त बना देवें।

जो श्रद्धावान् न हों उनके आचमन और छींटा देने के पानी मे कोई नशे का रस मिलाकर (बेहोश होने पर) देवता का कोप बतावें। इत्यादि

(देखो कौटिलीयम् अर्थ शास्त्रम् पृष्ठ० २४४ (द्वितीय संस्करण) प्रकरण ६० कोषाभि-संहरणम्)।

स्पष्ट है कि मूर्ति पूजा का प्रचार राज्य की आय वृद्धि के लिये किया गया। अन्य प्रजावर्ग ने जब देखा कि राजा स्वय इस प्रकार का पाखण्ड करके पैसे कमाता है तो उन्होंने भी "यथा राजा तथा प्रजा" की कहावत चरितार्थ करते हुये, पैसे कमाने के इस नये पेशे को ग्रहण कर लिया और जगह जगह यह पैसे कमाने का व्यवसाय प्रचलित होगया। यदि आईन अकबरी के लेखानुसार, मूर्तिया केवल चित्त के एकाग्र रखने का साधन रहतीं, तो शायद ऋषि दयानन्द को इनके खण्डन करने की इतनी जरूरत न पड़ती। परन्तु उनके सम्मुख इसका रूप कुछ और ही था इसलिये उन्हें इसका प्रतिवाद करना पड़ा। जो लोग मूर्ति पूजा करते हैं उन्हें गम्भीरता के साथ इस विषय पर विचार करना चाहिये। कौटिलीय अर्थ शास्त्र के मूल वाक्य निम्न हैं —

५ अधिकरण ५ अध्याय प्रकरण ६०

१ पाखण्डसङ्घद्रव्यमश्रोत्रियभोग्य देवद्रव्य वा कृत्यकरा प्रेतस्य दग्धगृहस्य वा हस्ते न्यस्तमित्युपहरेयु ।।४३।।

२ देवताध्यक्षो दुर्गराष्ट्र देवताना यथा स्व मेकस्थ कोश कुर्यात् ।।४४।। तथैव चापहरेत् ।।४५।।

३ दैवत चैत्य सिद्धपुण्यस्थानमौपाधिक वा रात्रावुत्थाप्य यात्रा समाजाभ्यामाजीवेत् ।।४६।।

४ चैत्योपवन वृक्षेण वा देवताभिगमन मन तव पुष्प फल युक्तेन ख्यापयेत् ।।४७।।

५ मनुष्यकर वा वृक्षे रक्षोभय रूपयित्वा सिद्ध व्यञ्जना पौरजानपदाना हिरण्येन प्रति कुर्यु ।।४८।।

६ सुरङ्गायुक्ते वा कूपे नागमनियत शिरस्क हिरण्यापहारेण दर्शयेत् नागप्रतिमायामन्त-श्छिद्रायाम् ।।४९।।

७ चैत्यछिद्रे वल्मीकछिद्रे वा सर्प दर्शनमाहारेण प्रतिबन्धसज्ञ कृत्वा श्रद्धधानाना दर्शयेत् ।।५०।।

८ अश्रद्धधानानामाचमन प्रोक्षणेषु रस-मुपचार्य देवताभिशाप ब्रूयात् ।।५१।।

९ अभित्यक्त वा दर्शयित्वा योगदर्शन प्रतिकारेण वा कोपाभिसहरण कुर्यात् ।।५२।।

———

वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्य दयानन्द

वेदाध्ययन का अधिकार

ऋषि दयानन्द का अन्य आचार्यों से विशेष भेद

[लेखक—प० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक आ० प्र० सभा देहली]

'सार्वदेशिक' के नवम्बर ४२ के अक मे उपर्युक्त शीर्षक का प्रथम लेख लिखते हुए मैने सप्रमाण यह बतलाने का प्रयत्न किया था कि कलियुग के सब प्रसिद्ध आचार्यों मे से वेदों क विशुद्ध रूप में सब से अधिक प्रचार और सत्य सनातन वैदिक धर्म के उद्धार का श्रेय निस्सकोच ऋषि दयानन्द को दिया जा सकता है यद्यपि अपने २ दृष्टिकोण से प्रत्येक आचार्य ने धर्म रक्षा का प्रशसनीय प्रयत्न किया था। इस लेख मे जो मुख्यत वेद प्रचार सप्ताह तथा ऋषि दयानन्द के पुण्य जन्म-बोधोत्सव (शिवरात्रि) को दृष्टि मे रखते हुए लिखा जा रहा है मै वेद के अध्ययन के अधिकार के विषय में आचार्य दयानन्द का अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों—श्री शकराचार्य जी, श्री रामानुजाचार्य जी, श्री आनन्दतीर्थ जी (श्रीमध्वाचाय) श्री निम्बार्काचार्य इत्यादि से कितना मतभेद था और ऋषि दयानन्द का इस विषयक विचार किस प्रकार वेद सम्मत था इस पर कुछ प्रकाश डालना चाहता हूँ क्योंकि इस विषय को समझे बिना ऋषि दयानन्द को वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्य के नाम से पुकारना पक्षपात पूर्ण समझा जायगा।

सब से पहले मै श्री शकराचार्य जी का वेदाधिकार विषयक मत जो उनके ब्रह्म सूत्र भाष्य इत्यादि मे पाया जाता है पाठक महानुभावों के सम्मुख रखता हूँ। वेदान्तदर्शन प्रथम अध्याय के तृतीय पाद के भाष्य म श्री शकराचाय जी न यह पूव पक्ष रख कर कि "तत्र शूद्रस्याप्यधिकार स्यात् इति तावत्प्राप्तम् अर्थित्व सामर्थ्ययो सम्भवात्।" अर्थात् शूद्र का भी वेद के अध्ययन मे अधिकार हो सकता है क्योंकि उसका भी वेद पढने के लिये उत्सुक होना और उसके अध्ययन मे समर्थ होना सम्भव है उत्तर पक्ष दिया है कि न शूद्रस्याधिकार वेदाध्ययनाभावात्—न शूद्रस्य वेदाध्ययनमस्ति—शास्त्रीयस्य च सामर्थ्यस्य अध्ययन निराकरणेन निराकृतत्वात्॥ अर्थात् शूद्र का वेदाध्ययन मे अधिकार नहीं है। उसका निषेध शास्त्रों मे किया गया है। इतना ही नहीं कि शूद्र कुलोत्पन्न को वेद के अध्ययन का अधिकार नही बल्कि उसको वेद सुनने का भी अधिकार नहीं। वेदान्त १-३-३८ की व्याख्या में श्री शकराचार्य जी लिखते हैं कि—'इतश्च न शूद्रस्याधिकार। यदस्य स्मृते श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधो भवति वेद श्रवण प्रतिषेध, वेदाध्ययनप्रतिषेध, तदर्थज्ञानानुष्ठानयोश्च प्रतिषेध शूद्रस्य स्मर्यते। श्रवणप्रतिषेधस्तावत्—

'अथ हास्य (शूद्रस्य) वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्या श्रोत्रपरिपूरणमिति ।—भवति च वेदोच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीर भेद इति ।।" अर्थात् शूद्र कुलोत्पन्न को वेद का अधिकार नहीं क्योंकि उसके लिये वेद के सुनने, उसे पढने, उसके अर्थ को जानने और उसके अनुसार आचरण करने का स्मृति में सवथा निषेध किया है। वहा लिखा है कि यदि शूद्र वेद का शब्द सुन ले तो उसके कानों को लाख और सीसे से भर देना चाहिये, यदि वह वेद के शब्दों का उच्चारण करने लगे तो उसकी जिह्वा काट डालनी चाहिये और यद वह वेद मन्त्र को याद करने लगे तो उसके शरीर के टुकडे २ कर डालने चाहिये।

यह कितने आश्चय की बात है कि श्री शङ्कराचार्य जैसे परम विद्वान् ऐसे वेद विरुद्ध अत्यन्त क्रूरता और सकुचित हृदयता सूचक वचनों को प्रमाणरूप मे मानकर बिना सकोच के सिद्धान्तरूप से उन्हें उद्धृत करते हैं। जाति शूद्रस्यानधिकारात् । (पृ० २१० Works of Shri Shankaracharya) इत्यादि से यह भी अत्यन्त स्पष्ट है कि यह वेदाध्ययन और श्रवणादि विषयक निषेध श्री शङ्कराचार्य के मत मे सब शूद्र कुलोत्पन्नों पर लगता है चाहे व कितने भी बुद्धिमान् और पवित्राचरणवाले क्यों न हों।

श्री रामानुजाचार्य जी का मत—

श्री रामानुजाचार्य जो अन्य सब आचार्यों की अपेक्षा हीन जाति के लोगों के प्रति अत्यन्त उदार माना जाता है किन्तु इस वेदाधिकार के विषय में उनका अभिप्राय भी वही है जो श्री शङ्कराचार्य जी के वेदान्त भाष्य से उद्धृत किया गया है। वे वेदान्त दर्शन १।३।३८ के भाष्य में लिखते है। 'शूद्रस्य वेद श्रवण तदध्ययन तदर्थानुष्ठानानि प्रतिषिध्यन्ते पद्युह्वा एतच्छ्मशान यच्छूद्रस्तस्मात् शूद्र समीपे नाध्येतव्यम् ।" तस्माच्छूद्रो बहु पशुरयज्ञिय । बहु पशु पशु सदृश इत्यर्थ ।" अर्थात् शूद्र के लिये वेद के सुनने, पढ़ने और उसके अर्थ ज्ञान तथा तदनुसार आचरण करने का सर्वथा निषेध है। शूद्र साक्षात् श्मशान है उसके समीप वेद कभी न पढ़ना चाहिये। शूद्र पशु तुल्य और यज्ञ का अनधिकारी है इतना ही नहीं स्मृतेश्च—स्मयते च श्रवणादि निषेध "अथ हास्य (शूद्रस्य) वेद मुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्या श्रोत्र परिपूरणम् उदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीर भेद इति (गौतम ध० सू० ७।१२।३) न चास्योपदिशेद् धर्मं न चास्य व्रतमादिशेत्। इति च (मनु०४।८०) अत शूद्रस्यानधिकार इति सिद्धम् अर्थात् शूद्र के लिये वेद श्रवण करने आदि का निषेध है। स्मृति मे लिखा है कि यदि शूद्र वेद सुनले तो उसके कान सीसे और लाख स भर देने चाहिये, वह वेद के शब्द का उच्चारण करे तो उसकी जीभ काट देनी चाहिये और वेद मन्त्र याद करने पर उसको मार डालना चाहिये। शूद्र को धम और व्रत का उपदेश न देना चाहिये। इसलिये यह सिद्ध हुआ कि शूद्र को वेद के अध्ययनादि का अधिकार नहीं। श्री रामानुजाचार्य कृत श्री भाष्य पृ० ३३१ श्री रामानुजाचार्य कृत वेदान्त सार और वेदान्त दीप में भी उपर्युक्त कल्पित स्मृति वचनों को उद्धृत करते हुए शूद्र कुलोत्पन्नों के लिये वेदाध्ययन का निषेध किया गया है।

श्री स्वामी आनन्दतीर्थ (श्री मध्वाचार्य) जी का मतः—

श्री स्वामी आनन्दतीर्थ प्रसिद्ध द्वैतवादी आचार्य हुए हैं। इन्होंने भी निम्न स्मृति वचन शूद्रों के वेद श्रवण और अध्ययन के निषेध मे उद्धृत किया है "श्रवणे त्रपुजतुभ्या श्रोत्र परिपूरणम् अध्ययने जिह्वाच्छेद । अर्थावधारणे हृदयावधारणम् इतिप्रतिषेधात् नाग्निर्न यज्ञ शूद्रस्य, तथैवाध्ययन कुत । केवलैव तु शुश्रूषा त्रिवर्णाना विधीयते 'इति स्मृतेश्च "

(ब्रह्म सूत्र अणुभ ष्ये पृ० १७)

अर्थ पूर्व लिखित प्रकार है इतना विशेषता है कि वेद के अध्ययन पर इन्होंने शूद्र की जिह्वा काटने और अर्थ ज्ञान वा निश्चय करने पर उसके हृदय के टुकडे करने का विधान स्मृति के आधार पर करते हुए लिखा है कि शूद्र के लिये न अग्नि होत्र है, न यज्ञ है। वेद के अध्ययन का तो विधान हो ही कहा सकता है ? केवल तीन वर्णों की सेवा ही उसका धर्म है । ऐसे ही श्री निम्बार्काचार्य ने भी अपने वेदान्त भाष्य मे शूद्र कुलोत्पन्नों के लिये वेदाधिकार का निषेध करते हुए स्मृतेश्च' के व्याख्यान मे 'न चास्यो पदिशेद् धर्मम्' इस वचन को उद्धृत किया है। चतुर्वेद भाष्यकार श्री सायणाचार्य ने अपने ऋग्वेद भाष्य के उपोद्घात (भूमिका) मे स्पष्ट लिखा है कि—

स्त्री शूद्रयोस्तु सत्यामपि ज्ञानापेक्षायाम् उपनयनाभावेनाध्ययन राहित्याद् वेदऽधिकार प्रतिबद्ध ।

अर्थात् स्त्रियों और शूद्रों को भी यद्यपि ज्ञान की आवश्यकता है तो भी उनका उपनयन संस्कार न होने के कारण अध्ययन भी सम्भव नहीं इस लिये उनमे वेद के अधिकार का निषेध है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्यकाल के सब सुप्रसिद्ध आचार्य जिन में श्री शङ्कराचार्य श्री रामानुजाचार्य, श्री मध्वाचार्य, श्री निम्बार्काचार्य, श्री सायणाचार्य आदि सम्मलित हैं एक स्वर से यह घोषणा करते हैं कि शूद्र कुलोत्पन्न पुरुषों का वेदाध्ययन का अधिकार नहीं साथ ही श्री मध्वाचार्य (स्वामी आनन्द तीर्थ) को छोड कर शेष आचार्य स्त्रियों का भी वेदाध्ययन अधिकार नहीं स्वीकार करते किन्तु आचार्य ऋषि दयानन्द की उदारता देखिये जो स्पष्ट शब्दों मे यह घोषणा वेद के आधार पर करते हैं कि—

'वेदादि शास्त्र पठने सर्वेषामधिकारोऽस्ति आहोस्विन्नेति। सर्वेषामस्ति, वेदानामीश्वरोक्तत्वात् सर्वमनुष्योपकारार्थत्वात् सत्यविद्याप्रकाशकत्वाच्च। यद् यद्धिखलु परमेश्वर रचित वस्त्वस्ति तत् तत् सर्व सर्वार्थमस्तीति विजानीम । अत्र प्रमाणम्—

यथेमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य । ब्रह्मराजन्याभ्या ँ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय । यजु० २६ । २ ॥

अस्याभिप्राय परमेश्वर सर्वमनुष्यैर्वेदा पठनीया पाठ्या इत्याज्ञा ददाति तद् (यथा) येन प्रकारेण (इमाम्) प्रत्यक्ष भूताम् ऋग्वेदादि वेद चतुष्टयीं (कल्याणीम्) कल्याण साधिका (वाचम्) वाणीम् (जनेभ्य) सर्वेभ्यो मनुष्ये-

भ्योऽर्थात् सकलजीवोपकाराय (आवदानि) आसमन्तात् उपदिशानि तथैव सर्वैर्विद्वद्भि सर्व मनुष्येभ्यो वेदचतुष्टयी वागुपदेष्टव्येति । अत्र कश्चिदेव ब्रयात् जनेभ्यो द्विजेभ्य इत्यध्याहार्य वेदाध्ययनाध्यापने तेषामेवाधिकारत्वात् । नैव शक्यम् उत्तर मन्त्र भावार्थ विरोधात्।

तद् यथा कस्य कस्य वेदाध्ययनश्रवणे, ऽधिकारोऽस्तीत्या काक्षायामिदमुच्यते (ब्रह्मराजन्याभ्याम्) ब्राह्मणक्षत्रियाभ्याम् (अर्याय) वैश्याय (शूद्राय) (चारणाय) अतिशूद्रायान्त्यजाय (स्वाय) स्वात्मीयाय पुत्राय भृत्याय च सर्वे सैषा वेदचतुष्टयी श्राव्येति । यथाहमीश्वर पक्षपात विहाय सर्वोपकार करणेन सह वर्तमान सन् (देवाना) विदुषा प्रिय दातु दक्षिणायै सर्वस्व दानाय प्रियश्चस्या तथैव भवद्भिः सर्वं विद्वद्भिरपि सर्वोपकार सर्ता प्रियाचरणं मत्वा सर्वेभ्यो वेदवाणी श्राव्येति ।

यथा मया वेदविद्या सर्वार्था प्रकाशिता तथैव युष्माभिरपि सर्वाथयोपकर्तव्या नात्र वैषम्य किञ्चिदपि कर्तव्यमिति । कुत–यथा मम सर्व प्रियार्था पक्षपात रहिता च प्रवृत्तिरस्ति तथैव युष्माभिराचरणे कृते मम प्रसन्नता भवति नान्यथेति ॥ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका शताब्दी सस्करण पृ० ६४६–६४७ ।

अर्थात् वेदादिशास्त्रों के पढ़ने में सबका अधिकार है वा नहीं ? सबका है क्योंकि वेद ईश्वरोक्त हैं सब मनुष्यों का उपकार करना और सत्य विद्या को प्रकाशित करना उनका उद्देश्य है। जो २ ईश्वर कृत वस्तु है वह सबके लिये है इससे "यथेमा वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य ।" यजु० २६।२ इस वेद मन्त्र का प्रमाण है। इस वेद मन्त्र का तात्पर्य यह है कि परमेश्वर यह आज्ञा देता है कि सब मनुष्यों को वेद पढ़ना पढ़ाना चाहिये। जैसे मैं परमेश्वर इस सब का कल्याण करने वाली चार वेद रूप वाणी का ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अतिशूद्र स्त्री भृत्यादि सब मनुष्यों के लिये उपदेश देता हूँ ऐसे ही सब विद्वानों का कर्तव्य है कि वे सब का उपकार और प्रिय आचरण मानकर वेदवाणी सबको सुनाए। इस विषय मे विषमता या भेदभाव न रक्खे। जैसे मेरी प्रवृत्ति पक्षपात रहित होकर सब के हित के लिये है वैसे ही जब तुम्हारा आचरण होगा तभी मुझे प्रसन्नता होगी अन्यथा नहीं।

ऋषि दयानन्द के इस उदारता पूर्ण पक्षपात रहित विचार का समर्थन उपर्युक्त 'यथेमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य ।" (यजु० २६।२) मन्त्र के अतिरिक्त "समानो मन्त्र समिति समानी समान मन सह चित्तमेषाम्। समान मन्त्रमभिमन्त्रयेव समानेन वो हविषा जुहोमि ॥ (ऋग्वेद १०।१९०।३) पञ्च जना मम होत्र जुषध्वम् (ऋग्वेद १०।५३।४) इत्यादि वेद मन्त्रों से भी होता है जिनमें परमेश्वर की स्पष्ट घोषणा है कि मैने वेद मन्त्रों का उपदेश सब मनुष्यों के लिये किया है अत उनके अध्ययन का सबको समान अधिकार है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र निषाद (अतिशूद्र) सब मेरी स्तुति करो तथा यज्ञ में सम्मिलित हो।

ऋषि दयानन्द की वेद सम्मत इस घोषणा को देखकर जगद्विख्यात विचारक श्री रोमाँ रोलाँ ने ठीक ही लिखा है कि "It was in truth an epoch-making date for India when a Brahmin not only acknowledged that all human beings have the right to know the Vedas, whose study had been previously prohibited by orthodox Brahmins, but insisted that their study and propaganda was the duty of every Arya" (Life of Shri Rama Krishna Param Hans P 159)

अर्थात् वह सचमुच भारत के लिये एक स्वर्णीय नवयुग निर्मात्री तिथि थी जब एक ब्राह्मण (ऋषि दयानन्द) ने न केवल यह स्वीकार किया कि वेदों के अध्ययन का अधिकार (जो कट्टर पन्थी ब्राह्मणों ने बहुतों के लिये निषिद्ध ठहरा रक्खा था) सब मनुष्य मात्र को है बल्कि इस पर बल दिया कि वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। ऐसे वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्यवर को हमारा सौ बार प्रणाम हो।

आर्य समाज के धार्मिक तथा दार्शनिक सिद्धान्त

[लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय एम० ए० उप प्रधान सार्वदेशिक आ प्र० सभा
प्रधान सयुक्त प्रान्तीय सभा]

(गताङ्क से आगे)

(११)

आर्य्य समाज के माननीय ग्रन्थों की दो कोटिया हैं—

(१) स्वत प्रमाण—यह ईश्वर कृत चार वेद हैं जो सृष्टि के आरम्भ मे चार ऋषियों द्वारा प्राप्त हुये — ऋग्वेद अग्नि ऋषि द्वारा, यजुर्वेद वायु ऋषि द्वारा, सामवेद आदित्य ऋषि द्वारा और अथर्ववेद अगिरा ऋषि द्वारा इनमें मनुष्यों या जातियों का इतिहास नहीं है। वैदिक शब्दों के अर्थ भी यौगिक या योग-रूढि हैं। रूढि नहीं।

(२) परत प्रमाण—अर्थात् आर्ष ग्रन्थ जो वेदों के अनुकूल होने पर मान्य हैं। जैसे वेदाग—शिक्षा कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द ज्योतिष। ये ऋषियों के बनाय हैं। ब्राह्मण उपनिषद् आदि भी इन्हीं के अन्तगत हैं। वेदों के उपाग या छ दर्शन—न्याय साख्य, योग, वैशेषिक वेदान्त और पूर्व मीमासा।

(३) मनुस्मृति आदि।

(१२)

सदाचार एक विस्तृत शब्द है। जीवन की सभी अभीष्ट बातें इसके अन्तर्गत आ जाती हैं। सदाचारी होनेके लिये शारीरिक मानसिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति की आवश्यकता होती है। इसके लिये वैदिक साहित्य मे दो साधन दिये हैं। वर्णधर्म और आश्रम धर्म। वर्णधर्म समाज के विभाजन से सम्बन्ध रखता है और आश्रम धर्म व्यक्तिगत जीवन स। वर्णधर्म और आश्रम धर्म एक दूसरे से मिलकर मानव धर्म की उन्नति करते है। एक दूसरे का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। बिना आश्रम धर्म के वर्ण धर्म सभव ही नहीं और बिना वर्ण धर्म के आश्रम धर्म अधूरा है।

(१३)

मानव जीवन के चार आश्रम बताये गये हैं, पहला ब्रह्मचर्य आश्रम अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन, ज्ञान की वृद्धि और सदाचार के लिये प्रेम साधारणतया इसकी अवधि इस प्रकार है—माताके सरक्षण में ५ वें वर्ष तक पिता की देख-भाल मे ८ वें वर्ष तक और गुरु के आधीन २५ वें वर्ष तक। (स्त्रियों के लिये १६ वर्ष तक)

(१४)

यदि शरीर रोग रहित और पूर्ण विकसित हो जाय और मनुष्य गृहस्थ धर्म का पालन करने के योग्य हो तो विवाह करके गृहस्थ होवे। जो विकास ब्रह्मचर्य आश्रम में अपूर्ण रहता है उसकी गृहस्थ में पूर्ति होती है। धर्म परायण होने की वास्तविक शक्ति का परिचय गृहस्थ में ही होता है। जब कि कर्तव्य अकर्तव्य की जटिल सम-

स्थायें नित्य नये रूप में उपस्थित रहती हैं। जीविका के लिये उचित व्यवसाय का निर्वाचन, उस व्यवसाय को ऐसे ढग से करना कि उससे अधिक से अधिक अर्थ तथा यश की उपलब्धि हो। और उस अर्थ को बुद्धिमत्ता और धर्म-परायणता से व्यय करना ये ऐसे कठिन कार्य हैं कि वीर से वीर पुरुष को भी सकट मे डाल देते हैं। स्त्री और बच्चों का पालन उनके सुख मे सुख और दु ख मे दु ख मानना सम्बन्धियों और समाज के हित पर दृष्टि रखना यह है ससार का वास्तविक मागर जिसकी उठती हुई तरगें मनुष्य के पूर्ण विकास को आकाक्षा रखती हैं। इसी लये तो मनु ने कहा है —

अपत्य धम कर्माणि शुश्रूषा रतिरुत्तमा।
दारा धीनस्तथा स्वर्ग पितॄणामात्मन श्च ह ॥
यथा वायु समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वे जन्तव ।
तथा गृहस्थ माश्रित्य वर्तन्ते सर्वा आश्रमा ॥
(मनु० ६–२८ ७७)

(१५)

गृहस्थ भोग भी है और कर्म भी। जो कर्म समझकर भोग को गौण बनाकर रहते हैं वे उन्नति कर जाते हैं। जो भोग मे लिप्त हो जाते हैं वे अधोगति का आरम्भ कर बैठते है। और यह अध पतन निकृष्ट योनियों मे समाप्त होता है। इसलिये गृहस्थ सम्बन्धी भोगों को मर्यादित बनाने के लिये वानप्रस्थ की आवश्यकता होती है। भोजन स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है। परन्तु अति-भोजन मृत्यु का कारण हो जाता है। इसी प्रकार गृहस्थ के भोगों में अति न होने पावे इसलिये नियम बनाया कि—

गृही भूत्वा वनी भवेत। (मनु)
वार्धके मुनि वृत्तीनाम् (रघुवश)

अर्थात् जीवन के तीसरे प्रहर में गृहस्थ के भोगों को छोड कर वन मे तपस्या करे। गृहस्थ मे आ मा शरीर के सवथा आधीन था। वानप्रस्थ म आत्मा शरीर पर विजय पाना चाहता है। इसके लिये त्याग और तप की आवश्यकता होती ह।

(१६)

निरन्तर विचार और तप का अभ्यास करते करते जब बुद्धि ऋतम्भरा हो जाय तो

वनी भूत्वा प्रव्रजेत् ॥

अर्थात् वानप्रस्थ को त्याग कर चौथे आश्रम अर्थात् सन्यास मे प्रवेश करे। अब तक पुत्रैषणा वित्तैषणा, तथा लोकैषणा के द्वारा व्यक्तिगत और समष्टिगत उन्नति की। परन्तु जिस प्रकार आरम्भ में ठाठ बनाकर फिर उसके ऊपर डाट की छत बनाया करते है और जब डाट मजबूत बन जाती है तो उस ठाठ को अलग कर देते हैं इसी प्रकार जब मनुष्य का आत्मा इतना प्रबल हो जाय कि दु ख, सुख क्षोभ, मोह सताने न पावें तो सन्यासी हो जावे। सन्यासी स्वाथ तथा मोह को सर्वथा त्याग देता है उसका जीवन अन्य प्राणियों के उपकार के लिये होता है –

अय निज परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

(१७)

जिस प्रकार व्यक्तिगत जीवन के चार विभाग हुये उसी प्रकार मनुष्य समाज के भी चार विभाग हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, इनको वर्ण इसलिये कहते हैं कि (वृञ्=वरणे) मनुष्य इनको अपने लिये चुनता है। सब मनुष्य एक से नहीं होते। उनके गुण, उनके कर्म और उनके स्वभावों में विभिन्नता होती है। हर एक मनुष्य हर एक काम नहीं कर सकता। मनुष्य समाज के लिये भिन्न २ कार्यों की आवश्यक्ता होती है। इसलिये नियम बनाया गया कि मनुष्य को अपनी योग्यता और रुचि के अनुसार मनुष्य समाज में अपना स्थान छाट लेना चाहिये और उस स्थान के कर्तव्यों का पालन करना चाहिये। जिस प्रकार गाडी मे पाहया भी है, धुरा भी है, जुआ भी है। इन अवयवों के स्थान भिन्न भिन्न हैं और कर्तव्य भी भिन्न भिन्न। इसी प्रकार मनुष्यों मे भी विभिन्नतायें है। यदि जुए के स्थान मे पाहया लगा दिया जाय तो गाडी चल न सकेगी, इसी प्रकार यदि ऐसे मनुष्य को वैद्य बनाने के लिय बाधित किया जाय जिसमें वैद्य बनने की न योग्यता हो न रुचि तो ऐसा मनुष्य श्मशान भरने का ही तो काम करेगा। इसलिये आर्य समाज का सिद्धान्त है कि मनुष्य अपने वर्ण को अपनी योग्यता और रुचि के अनुसार चुने जिससे व्यक्तिगत विकास भी हो और समष्टि की उन्नति भी। इसी लिये वर्णों का आधार जन्म पर नहीं रक्खा किन्तु गुण कर्म, स्वभाव पर रक्खा है।

(१८)

यहा एक बात स्पष्ट हो जानी चाहिये। जब आर्य समाज कहता है कि वर्ण जन्म-परक नहीं तो इसका तात्पर्य इतना ही है कि किसी के माता पिता के वर्ण को देखकर ही उसके वर्ण का निश्चय नहीं कर सकते। यह देखा जाता है कि पैतृक योग्यता और पैतृक अभिरुचि का सन्तान मे आ जाना अनिवार्य नियम नहीं है। यह आवश्यक नहीं है कि पिता वैद्य है तो पुत्र भी वैद्य ही हो, या पिता व्यापार कुशल है तो पुत्र भी वैसा ही हो। कभी अनुकूलता होती है कभी नहीं होती। इसलिये व्यक्ति को अपना वर्ण चुनने की आज्ञा देने में उस व्यक्ति के गुण, कर्म और स्वभाव की पूरी जाच कर लेनी चाहिये। यह काम दोनों का है। व्यक्ति का भी और समाज का भी। क्योंकि प्रत्येक वर्ण के साथ न केवल कर्तव्य का ही प्रश्न है किन्तु अधिकार का भी। यदि कोई मनुष्य योग्यता न रखता हुआ भी इसलिये वैद्य बनना चाहता है कि वैद्य को बहुत से अधिकार प्राप्त हैं तो उससे मनुष्यों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचेगी। इसलिये समाज का कर्तव्य और अधिकार है कि ऐसे पुरुष को कदापि वैद्य बनने न दे।

(१९)

मनुष्य समाज मे सहस्रों पेशे वाले हैं। वैद्य अध्यापक, सैनिक, ठठेरा, बढई नाई, धोबी, चमार आदि। ये सब आवश्यक हैं। इस प्रकार वर्णों की सख्या सहस्रों तक पहुँच सकती है।

वैद्य भी कई प्रकार के हो सकते हैं कान के वैद्य, आख के वैद्य, गले के वैद्य इत्यादि। परन्तु कार्य्य सम्पादनार्थ वर्णों के चार मोटे मोटे विभाग किये गये हैं—

इनकी उपमा शरीर के चार अगों से दी गई है —

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहू राजन्य कृत ।
ऊरू तदस्य यद् वैश्य पद्भ्या ँ शूद्रा अजायत ॥
(यजुर्वेद ३१। ११)

अर्थात् शरीर मे जो काम मुख का है वह समाज में ब्राह्मण का। ब्राह्मण का मुख्य काम है विद्योपार्जन और विद्या का प्रचार। अन्य काम गौण हैं। मनु ने छ काम बताये हैं। विद्या पढ़ना, विद्या पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना। विद्या और यज्ञ के बहुत से विभाग हो सकते हैं वैज्ञानिक खोज, दर्शन-विचार। आदि आदि। ये सब ब्राह्मणत्व के अन्तर्गत हैं। शरीर मे जो काम भुजाओं का है वह समाज मे क्षत्रिय का। अर्थात् समाज का ऐसा प्रबन्ध रखना कि आन्तरिक बाधायें या बाह्य आक्रमण समाज या जाति को अस्त व्यस्त न करने पावें। मिलिटरी (Military) और सिविल (Civil) दोनों ही विभाग क्षत्रियों के हैं। तीसरा वर्ण है वैश्य। कृषि, कला कौशल, तथा व्यापार सब वैश्यत्व के अन्तर्गत हैं। चौथा वर्ण है शूद्र। शूद्र वे हैं जो अपनी कोई योग्यता या अभिरुचि नहीं रखते। उनमे स्वतन्त्र वर्ण की मात्रा अत्यन्त न्यून है। वे अन्य वर्णों के आधीन रहकर काम कर सकते हैं। जैसे कुली ब्राह्मण की पुस्तकें भी ढो सकता है, क्षत्रिय के शस्त्र भी और वैश्य की बोरी भी।

(२०)

आजकल पौराणिक हिन्दुओं मे जन्म-परक वर्ण माने जाते हैं और उनकी श्रेष्ठता या निकृष्टता की काल्पनिक श्रेणिया बन गई है। जैसे कुम्हार नीच समझा जाता है और ठठेरा ऊचा। आर्य्य समाज ऐसा भेद भाव नहीं करता। ये दोनों ही व्यवसाय हैं मिट्टी के बर्तनों के बनाने मे भी बहुत कुछ उन्नति हो सकती है और हुई है। इसी प्रकार तेली और गधी मे भी भेद नही है। याद रखना चाहिये कि चोरी आदि कुकर्मों से मनुष्य नीच होता है व्यवसायों से नहीं। यही आर्य समाज का सिद्धान्त है।

(२१)

वर्ण और आश्रम के चुनने में व्यक्ति किस मात्रा तक स्वतन्त्र है और किस मात्रा तक समाज या राज के परतन्त्र है यह भी एक मीमांसनीय विषय है। वैदिक सिद्धान्त ऐसा है कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता मे उस समय तक बाधा नही डाली जाती जब तक यह न देख लिया जाय कि उसकी स्वतन्त्रता से समाज को हानि तो नहीं पहुँचती। जैसे यदि कोई भीषण सांक्रामिक रोगों से पीड़ित है तो उसको गृहस्थ की आज्ञा नहीं होनी चाहिये अन्यथा वह समस्त समाज को रोगी कर सकेगा। या जिसने तीन एषणाओं को त्यागने की योग्यता प्राप्त नहीं की वह सन्यास का अधिकारी नहीं है। इसी लिये समाज की ओर से नियम है कि गृहस्थी बनने पर विवाह संस्कार करे। बनी बनने पर वानप्रस्थ संस्कार और सन्यासी बनने पर सन्यास

सस्कार। जिस से समाज यह देख सके कि अन धिकार चेष्टा तो नहीं हो रहा । ब्रह्मचर्य तो सब के लिये अनिवार्य है शेष तीन व्यक्ति गत रुचि और समाज द्वारा परीक्षण के आधीन हैं। इसी प्रकार वैश्यत्व, क्षत्रियत्व और ब्राह्मणत्व के वर्णों के लिये परीक्षण की आवश्यकता है । जो किसी परीक्षा मे उत्तीर्ण न हो सकेगा वह शूद्र तो है ही । इसी लिये तो किसी कवि का वचन है —

'जन्मना जायते शूद्र सस्काराद् द्विज उच्यते।'

अर्थात् योग्यता प्राप्ति के पश्चात् ही ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य हो सकता है । अन्यथा शूद्र है।

(२२)

विशेष अध्यवसाय के अतिरिक्त मनुष्य के साधारण धार्मिक कर्तव्यों के तीन भाग हैं। महायज्ञ, यज्ञ और सस्कार।

(२३)

महायज्ञ पाच है—

(१) ब्रह्म यज्ञ या सध्योपासन जो दिन मे दो बार साय प्रात करना चाहिये । (२) देव यज्ञ या दैनिक अग्नि होत्र । (३) बलिवैश्व देव या भूतयज्ञ अर्थात् कुत्ता, चींटी आदि को अपने भोजन मे से भाग निकाल कर देना। (४) पितृयज्ञ या श्राद्ध और तर्पण अर्थात्—जीवित माता पिता आदि की सेवा शुश्रूषा करनी, (आर्यसमाज मृतक श्राद्ध नहीं मानता । अर्थात् मरे हुये माता पिता को न तो भोजन पहुचाया जा सकता है न यत्न करना उचित है) । (५) अतिथि यज्ञ या साधु सन्यासी आदि अभ्यागतों को भोजन कराना । इनको महायज्ञ इसलिये कहते हैं कि मनुष्य के आचार निर्माण मे इनका बहु मूल्य भाग है । (देखो ऋषि दयानन्द कृत पच महायज्ञ विधि)।

(२४)

इनके अतिरिक्त कई इष्टिया या बडे यज्ञ हैं जैसे राजसूय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ आदि ये विशेष अवसरों पर किये जाते हैं।

(२५)

सोलह सस्कार है जो मनुष्य के जीवन के आरम्भ से लेकर अन्त तक चलते हैं । इनके नाम ये है—

(१) गर्भाधान, (२) पुसवन, (३) सीमन्तोन्नयन, (४) जातकर्म, (५) नाम करण, (६) निष्क्रमण, (७) अन्न प्राशन (८) चूडा कर्म (९) कर्णवेध, (१०) उपनयन, (११) वेदारम्भ, (१२) समावर्तन, (१३) विवाह, (१४) वानप्रस्थ, (१५) सन्यास और (१६) अन्त्येष्टि । (देखो सस्कार विधि)

(२६)

आर्य समाज मास मद्य आदि के सेवन का निषेध करता है । क्योंकि इन से हिंसा आदि अमानुषीय प्रवृत्तिया बढती है और सदाचार को हानि पहुँचती है।

(२७)

आर्य समाज धर्म को देश या काल के बन्धन मे नहीं बाधता किसी देश या किसी जाति का मनुष्य आर्य समाज मे प्रविष्ट हो सकता है यदि वह आर्य समाज के नियमों का स्वीकार करे। मुसलमान या ईसाई वैदिक धर्म को स्वीकार

"देशोद्धार का एक मात्र उपाय"

"महर्षि के शिष्यों ने एकाङ्गी बन कर भारी भूल की"

[ले०—ब्रह्मप्रकाश विद्यावाचस्पति, आयुर्वेद शास्त्री आर्य समाज सरदारपुरा जोधपुर]

पाठक गण। मेरा यह लेख आपकी दृष्टि में सम्भवतः विचित्रतापूर्ण सिद्ध हो, परन्तु आप गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे तो आपको इसमे वास्तविकता का प्रकाश मिलेगा।

सुधारक वृन्द। क्या आपने कभी यह विचार भी किया है कि हमे ऋषि के बतलाये वैदिक युग के निर्माण मे पूर्ण सफलता क्यों नहीं मिली? जैसे कि मै अपने विचार इससे प्रथम प्रकट कर चुका हू विदेशी और विधर्मी राज्य हमारे मार्ग मे सबसे बड़ा बाधक और घातक रहा है। दूसरा कारण असफलता का आज आपके सामने रखने जा रहा हू जो कि हम कर सकते थे, और जिसे न करके हमने भारी भूल की है। वह है हमारी एकाङ्गिता। इसे कौन आर्य नेता स्वीकार नहीं करता कि महर्षि दयानन्द निर्दिष्ट प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही वैदिक युग की जन्म दायिनी हो सकती है। परन्तु हत भाग्य भारत माँ के सपूतों ने माँ को अभी रुलाने और तड़फाने के लिए गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का ऊर्ध्वाङ्ग ही ग्रहण किया, अर्थात् वृक्ष के मूल को न गाड़ कर शाखाओं को उगाना चाहा। इस पर कभी भी ध्यान न गया कि—"नष्टे मूले नैव फल न पुष्पम्" अब मै आपका ध्यान अपने प्रतिपाद्य विषय की ओर आकृष्ट करता हूँ। वह है कन्या गुरुकुलों की आवश्यकता। ऋषि के भक्त गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रचार में ऐसे जुटे कि भारत भर मे लड़कों के गुरुकुलों का तॉता सा बॉध दिया। परन्तु इस मातृशक्ति के निर्माण की ओर कुछ बिरले ही बन्धुओं का ध्यान गया जिन्होंने कि दो चार कन्या गुरुकुल खोले, जिनमे कि महर्षि निर्दिष्ट नियमों का पालन करने वाले तो दो एक ही कहे जा सकते हैं। यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि जितना प्रयत्न बालकों के गुरुकुलों के खोलने और उनके सञ्चालन मे किया गया है उसके साथ २ उतना ही प्रयत्न कन्या-गुरुकुलों के खोलने और उनके सञ्चालन में किया जाता तो आज हम उन्नति के शिखर पर नहीं तो कम से कम मध्य मे तो अवश्य ही होते। इसे

(शेष पृष्ठ १६ का)

करने पर आर्य समाज मे आ सकते हैं। कोई छूत-छात की कैद नहीं।

(२८)

कुछ अन्य बातें भी है जो आर्य समाज के मन्तव्यों का भाग हैं। जैसे बाल विधवाओं का पुनर्विवाह, आर्य भाषा या हिन्दी का प्रचार, स्वदेशीय वस्तुओं का प्रयोग। फलित ज्योतिष, हाथ दिखाना आदि भ्रमजाल का उन्छेदन और अपव्यय आदि कुरीतियों का निवारण। बाल-विवाह या वृद्ध-विवाह निषेध है।

कौन अस्वीकार कर सकता है कि आर्य समाज के प्रचार से पूर्व भारत मे स्त्री शिक्षा का पूर्ण अभाव था और आज वे पर्याप्त सख्या में शिक्षिता हैं।

परन्तु हमारी सभ्यता उसे शिक्षा नहीं बतलाती जो भौतिकवाद के चगुल मे फँसा कर शरीर, मन व इन्द्रियों का गुलाम बनाती हो। आज की शिक्षा के परिणाम स्वरूप अत्यधिक फैशनों और आवश्यकताओं व व्यभिचार का बोलबाला है। ये फैशन और आवश्यकतायें हमें विनाश की ओर ले जा रहे है। यदि इस बहते हुए प्रवाह को शीघ्र ही रोकने का प्रयत्न न किया गया तो एक दिन आर्य जाति काल कराल के चगुल मे चली जायगी। परन्तु हम इसे सहन नहीं कर सकते, विषय अधिक विस्तृत हो सकता है परन्तु इसकी आवश्यकता न समझकर इसे कार्य रूप में परिणत करने के लिये ऋषि के सच्चे भक्तों से यह विनम्र निवेदन है कि वे तुरन्त ही इस ओर ध्यान दें। और सारे देश में अनेक ऋषि प्रणीत नि शुल्क कन्या गुरुकुलों की स्थापना का बीड़ा उठावे। फिर देखिये कि वैदिक गृहस्थ वाटिकायें किस भा त फलती फूलती हैं। इस कार्य मे सहयोग देने वाले सज्जन मुझसे पत्र व्यवहार करे। क्योंकि मैंने तथा मेरी धर्म पत्नी श्रीमती सरलादेवी 'सरस्वती" ने अपना जीवन मातृशक्ति के सुधारके लिए समर्पित करने का सकल्प किया है।

भारत माँ का तुच्छ सेवक—

ब्रह्मप्रकाश।

महिला-जगत्

देवियो निज रूप को निहारलो

[लेखिका -श्री सरलादेवी जी "सरस्वती" आर्य समाज सरदारपुरा (जोधपुर)]

समय परिवर्तनशील है। अन्धकार के पश्चात् प्रकाश और प्रकाश के पश्चात् अन्धकार इसका अपरिवर्तित स्वभाव है जिससे न नर बचें न नारियों। यही कारण है कि उत्थान पतन के इस झूले पर हम भी झूलते रहने से बच न सके। अत ऐसे समय मे जब भारत की नारियाँ पतन की सीमा पर पहुँच चुकी थीं सहसा ही भक्त वत्सल दयामय प्रभु ने अपनी अनुकम्पा स दिव्य दयानन्द का प्रादुर्भाव करके पुन नीचे गिरे पलडे को ऊँचा उठाया और बता दिया सारे ससार को कि भारत की नारियाँ पैरों की जूती समझी जानेवाली अबला नही देवी और देवताओं की जन्म दात्री है।

अत देवियो। न भूलो कि तुम्हीं राम-कृष्ण और हरिश्चन्द्र की माता हो और तुम्हीं हो आदर्श देवी। अतएव पहिचानो अपने स्वरूप को कि आज हमारी कैसी दुर्दशा हो चली है। महर्षि ने तुम्हारे सम्मुख सीता, सावित्री, सुलभा, गार्गी और दुर्गा तथा लक्ष्मी बाई जैसी आदर्श देवियों के चरित्र रक्खे, और देशोद्धार का एक मात्र उपाय तुम्हें ही बताया परन्तु शोक। तुमने इस ओर कुछ भी ध्यान न दिया। विदेशी राज्य और समझे उत्पन्न हुई शिक्षा व सभ्यता के प्रवाह में ऐसी बहीं कि गई बीतीं कुछ भी न रहीं। वर्तमान शिक्षा के प्रवाह ने भी वह उल्टी गगा बहाई कि देवी के स्थान पर आज हम फैश्नेबिल लेडी ही बन बैठी, सुशीलता के स्थान मे निलज्जता, सादगी के स्थान मे कृत्रिम शृगारमयी चटक मटक, ब्रह्मचर्य पालन के स्थान में कुमारावस्था से ही गन्दे और अश्लील सिनेमाओं इत्यादि का दिग्दर्शन हमने अपना धर्म बना लिया। लज्जा और आदर्श की देवी बनने के बदले प्रेमिकाओं का स्वाग भरना हमने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया।

आदरणीय बहिनो ? सत्य को सम्मुख रख कर बताओ तो सही कि क्या आप अपनी पूवजा बहिनों के चरित्रों तथा जीवनियों मे जिन्हें आप किसी न किसी अश मे स्कूलों व कालिजों मे पढती है यही रूप-रग और आचरण पाती हैं ? बस इसका तो एक मात्र उत्तर मौन अथवा उस आर्य सभ्यता को जगली और निकम्मी बताना है जिसमे कि वे पली थीं।

किन्तु मेरी बहिनो। जब कि इस युग के चतुर माली (महर्षि दयानन्द) ने चार फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) लाने वाले चार वेद रूपी चार पौदों को बडी सावधानता से धरातल मे

स्थान दे दिया और अपने पीछे उन्हें पुष्पित फलत व सुगन्धित रखकर ससार को उनके फलों का रसास्वादन कराने के उद्देश्य से आर्य समाज रूपी माली को अपना उत्तराधिकारी बना कर अपनी उस समस्त सम्पत्ति का पूर्ण अधिकार दे दिया तो फिर यह धाधलाबाजी कैसी ? अभी तक वह वैदिक वाटिका पूर्ण रूप से फलती फूलती क्यों नहीं दृष्टिगोचर हो रही है ? मेरे विचार से तो माली की असावधानी और अकृतज्ञता ही इसका कारण प्रतीत होती है जो आज तक भी मातृत्व की ओर उसने अपना सच्चा कदम नहीं बढाया।

अपने अन्दर रग रग मे समा जाने वाली अविद्या से पूर्णांशों मे आज तक भी हमें छुटकारा न मिल सका है। क्या इसका दु ख प्रत्येक देवी के हृदय मे न होगा ? माता हाने वाली इन असख्य बहिनों का सुशिक्षा का अभाव उनके उत्तर दायित्व में रोडा बन कर अटक रहा है।

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज ने गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को इन समस्त समस्याओं का हल बतलाया था। परन्तु खेद कि उस प्रभाव से जो दो चार कन्या गुरुकुल खुले भी तो वे पूर्ण रूप से लाभ पहुचाने में नितान्त असमर्थ। जिनमे इतने बडे विशाल देश की केवल कुछ ही अच्छी आर्थिक स्थिति की कन्याए शिक्षा पा रही हैं। आर्य समाज के लिये यह लज्जास्पद विषय है कि भारत मे एक भी निशुल्क कन्या गुरुकुल नहीं है। इसी विचार को सम्मुख रखते हुए मैंने तथा मेरे पू० पतिदेव श्री प० ब्रह्मप्रकाश जी विद्यावाचस्पति ने इस अभाव की पूर्ति के लिये सकल्प धारण किया है। प्रभु की इच्छा हुई तो इस भयङ्कर युद्ध जन्य स्थिति के बदलते ही इस ओर कदम बढाया जायगा। तब तक समय समय पर इस विषयक लेखों द्वारा आपकी सेवा की जायगी।

[इस लेख मे हमारी मान्या भगिनी श्रीमती सरलादेवी जी 'सरस्वती' और इससे पूर्व प्रकाशित 'देशोद्धार का एक मात्र उपाय' शीर्षक लेख मे उनके पूज्य पतिदेव श्री प० ब्रह्मप्रकाश जी विद्यावाचस्पति ने जो उत्तम विचार प्रकट किये हैं हम उनसे बहुत अश तक सहमत हैं और इस आदर्श आर्य दम्पति का हार्दिक अभिनन्दन करते है कि महिलाओं मे आर्य धर्म तथा सस्कृति विषयक विशेष जागृति उत्पन्न करने के लिये उन्होंने निश्शुल्क कन्या गुरुकुलों की स्थापना का पवित्र सकल्प किया है। हम सम्पादकीय स्तम्भों तथा अन्य लेखों मे इस बात को अत्यन्त स्पष्ट शब्दों मे बता चुके है कि जब तक देवियों के अन्दर वैदिक धर्म और सस्कृति के लिये प्रेम तथा उत्साह नहीं उत्पन्न होता तब तक वैदिक धर्म का सच्चा प्रचार असम्भव है इसीलिये हम पारिवारिक सत्सङ्गों की आयोजनादि पर इतना बल बार २ देते रहे हैं। उस दृष्टि से कन्या गुरुकुलों की बडी भारी आवश्यकता है इससे कोई विचारशील व्यक्ति इन्कार नहीं कर सकता। आदर्श की दृष्टि से निश्शुल्क कन्या गुरुकुलों की स्थापना के विचार का हार्दिक अभिनन्दन

और पूर्ण समर्थन करते हुए भी हम वर्तमान आर्थिक परिस्थिति जन्य कठिनाइयों से आखें नही मूंद सकते। उन कठिनाइयों का जब तक सन्तोष-जनक समाधान न मिल जाए तब तक कन्या गुरुकुलों को निश्शुल्क चलाना कैसे सम्भव होगा यह अत्यन्त विचारणीय प्रश्न है। हा हमारे देश के धनीमानी उदार सज्जन इस विषय की गम्भीरता को समझकर ऐसी आदर्श सस्थाओं की उदार सहायता करके आर्थिक चिन्ता से उन्हें मुक्त कर दें तो कुछ अशतक नाममात्र शुल्क पर इस प्रकार के कन्या गुरुकुलों का सचालन सम्भव है। आशा है सारी परिस्थिति और कठिनाइयों को दृष्टि मे रखते हुए ही उपर्युक्त आर्य दम्पती भविष्य कार्यक्रम का निर्माण करेंगे तथा आय जनता से उन्हें यथोचित सहयोग मिलेगा। हम इस पवित्र सकल्प की पूर्ति मे उनकी हृदय से सफलता चाहते हैं।

—सम्पादक सा० दे०]

महर्षि दयानन्द

[श्री उमाकान्त गुप्त 'किरण' एम० ए० एम० एस० सिद्धान्त शास्त्री विशारद]

हे आर्य्य महर्षि नमस्कार।
हे युग प्रवर्त्तक नमस्कार।
दीन अनाथों के दुख हर्त्ता
पाखण्ड पुञ्ज खण्डन कर्त्ता
विधवाओं का किया सुधार
दिखाया जग का ज्ञान सार
हे आर्य्य महर्षि नमस्कार
हे युग प्रवर्त्तक नमस्कार।
सत्य विद्याओं का अर्थ प्रकाश'
वेदों का पुन किया विकाश
देकर श्रुति की सुधा धार
हिन्दुओं का हटाया भार
हे आर्य्य महर्षि नमस्कार

हे युग प्रवर्त्तक नमस्कार
आर्यों का पुनरुत्थान किया
समाज का जग में ज्ञान दिया
हटाया जगत से साकार
बताया सबको निराकार
हे आर्य्य महर्षि नमस्कार
हे युग प्रवर्त्तक नमस्कार
अन्तिम चरण 'किरण' का वन्दन
चरण कमल में होवे अर्पण
यही हमारा हृदयोद्गार
ले आया करने सत्कार।
हे आर्य्य महर्षि नमस्कार
हे युग प्रवर्त्तक नमस्कार

महान् दयानन्द

[रचयिता —श्री वैद्यनाथ प्रसाद जी आर्य समाज पटना सिटी]

हे दयानन्द नरपति महान्।
भारत माता की दिव्य शान॥
हो आर्य जगत के दिव्य रूप,
तुम आर्य तीर के हो कमान।
आत्मा स्वरूप हो आर्य हृदय मे,
आर्य जगत के मूर्ति मान॥
हे दयानन्द नरपति महान्।
भारत माता की दिव्य शान॥
हो आर्य जगत के उद्धारक,
तुम आर्यों के गौरव महान।
हो भारत के सच्चे सपूत,
तुम आर्य रक के अतुल दान॥
हे दयानन्द नरपति महान।
भारत माता की दिव्य शान॥
ओ मौन तपस्या लीन यती,
पल भर तो दे तू इधर ध्यान।
पाखण्डों से दलित हो रहा,
आर्यों का भारत बगान॥
हे दयानन्द नरपति महान्।
भारत माता की दिव्य शान॥
तुम आर्य हृदय के हृदय राज,
हो आर्य बलों मे बल प्रधान।
हो अज्ञानी के ज्ञान सूर्य,
तुम अभिमानी रिपु महान॥
हे दयानन्द नरपति महान।
भारत माता की दिव्य शान॥
तुम आर्य हितों हित कष्ट सहे नित,
विपरीतों में जाय डटे,
पाखण्डों का मर्दन कर,
अज्ञान नष्ट कर आप डटे,
सत्य मार्ग पर अटल रहे,
विपरीत भाव का दमन किया,
अनगिनत विपक्षी बीच सिंहसम,
गरज गरज उपदेश किया,
परिचित है दुनिया जहान।
हे दयानन्द नरपति महान॥
देश-हित कष्ट सहे नित,
शूलों को भी फूल किया।
तुमने ही वैदिक धर्म सिखाकर
भूलों को निर्मूल किया॥
बस, आ जाओ लेकर विमान।
हे दयानन्द नरपति महान॥
हो सभी आर्य गण दयानन्द,
घर घर मे वेद प्रचार रहे।
हों सभी आर्य बलिदान देश हित,
देश वेद भण्डार रहे॥
सिर और रहे यह धर्मवान।
हे दयानन्द नरपति महान॥
हे ब्रह्मा! दया कहा तुझ मे,
मम दयानिधी को छीन लिया।
टुक दया करो मम आर्य जाति पर
दया-पूर्ण हों सभी जिया॥
दो दयानन्द का हमे दान।
हे दयानन्द नरपति महान॥

धार्मिक चर्चा-शंका समाधान

विद्या-अविद्या का विवेचन

[ले०—श्री पं० वीरेन्द्र जी विद्यावाचस्पति, साहित्याचार्य, तीर्थ चतुष्टय, एम० ए० आचार्य गुरुकुल वैद्यनाथधाम]

१२ फरवरी को आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के प्रधान रायबहादुर श्री ब्रजनन्दनसिंह जी ने आध्यात्मिक चर्चा के प्रसङ्ग मे मेरा ध्यान 'सार्वदेशिक' पत्र के जनवरी मास के अङ्क मे प्रकाशित श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय के विद्या-अविद्या शङ्का समाधान सम्बन्धी लेख की ओर खींचा। कार्यवश मै उस अङ्क को पहले न देख सका था अन्यथा अपने गत लेख मे ही श्री उपाध्याय जी के विचारों पर अपनी सम्मति प्रकट कर देता। श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को स्वामी दयानन्द जी तथा अन्य विचारकों द्वारा अभिमत अविद्या के कर्मोपासना अर्थ पर कोई आपत्ति न थी इस लिये अविद्या का अर्थ कर्मोपासना कैसे है इस पर विस्तृत विचार नहीं किया गया था। श्री मान्य उपाध्याय जी ने अविद्या का अर्थ योग दर्शनोक्त मिथ्या ज्ञान ही माना है और कर्मोपासना अर्थ असम्भव तथा असन्तोषप्रद समझा है। योग दर्शनोक्त अविद्या तो ससार बन्धन का कारण है इसलिये 'अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा' मे उन्होंने अविद्यया का अर्थ अविद्या ज्ञानेन कर लिया है और इस प्रकार मिथ्या ज्ञान के ज्ञान से मृत्युतरण को उचित बताया है। विचार का विषय है कि क्या उनका प्रतिपादित भाव यथार्थ है। मुझे तो उनका अर्थ आचार्य परम्परा से प्राप्त अर्थ से सर्वथा भिन्न और नवीन तथा अनावश्यक प्रतीत हुआ है।

जहा तक मेरा ज्ञान है उपनिषदों, गीता और शङ्कराचार्य से लेकर आज तक के भाष्यकारों ने अविद्या का अर्थ कर्मोपासना किया है। स्वामी दयानन्द जी ने तो यजुर्वेद भाष्य और सत्यार्थ प्रकाश मे विशेष तौर से यही अर्थ लिया है। वे स्पष्ट लिखते हैं इसी से (विद्या चाविद्याच) मन्त्र मे कहा है कि बिना शुद्ध कर्म और परमेश्वर की उपासना के मृत्यु दुःख से पार कोई नहीं होता अर्थात् पवित्र कर्म, पवित्रोपासना और पवित्र ज्ञान ही से मुक्ति होती है।' मनोवैज्ञानिक रूप मे हमारे अन्दर ज्ञान इच्छा और प्रयत्न शक्तिया निहित हैं। हम कोई न कोई ज्ञान, तदनुकूल इच्छा और उसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्न (कर्म) करते ही रहते हैं। उत्कट इच्छा मानसिक भाव में प्रेम का रूप धारण करती है। यदि ये ज्ञान, प्रेम और कर्म श्रद्धा के साथ समन्वित हो जाते हैं तो विवेक, भक्ति (उपासना) और शुभ आचरण का रूप ले लेते हैं अन्यथा मिथ्या ज्ञान, मोह (अन्ध उपासना) और पाप कृत्य का रूप ले सकते हैं। इसीलिये स्वामी जी ने "कोई भी मनुष्य क्षण मात्र भी कर्म, उपासना और ज्ञान से रहित

नहीं होता" इस मनोवैज्ञानिक तथ्य की ओर ध्यान खींचकर 'अपवित्र मिथ्या भाषणादि कर्म, पाषाण मूर्त्यादि की उपासना और मिथ्या ज्ञान से बन्ध होता है' प्रदर्शित करके इनसे बचकर तीनों की पवित्रता से मुक्ति प्राप्त करने का मन्त्र द्वारा उपदेश किया है।

यजुर्वेद मे यज्ञादि शुभ कर्मों का विधान करके वेद के अन्तिम ४० वें अध्याय मे वेद का परम सिद्धान्त (वेदान्त) ईशोपनिषद् के रूप में दिया गया है। ईशोपनिषद् मे भी ईश भजन-पूर्वक कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा' में एव' के अवधारण पूर्वक निरन्तर कर्तव्य भावना से कर्म करते रहने का ही आदेश दिया गया है। क्या मुक्ति का मार्ग बताते हुए यह सम्भावना की जा सकती है कि उपनिषद् अपनी सारी पूर्व शृंखला भूलकर कर्म को मुक्ति का साधन नहीं बतायगी ? यदि नहीं, तो स्पष्ट हो जाता है कि अविद्या से कर्मोपासना का ही तात्पर्य है जिसका विस्तृत विवेचन 'कर्मयोग' के नाम से गीता ने किया है। 'विद्या चाविद्या च ' इस मन्त्र से पूर्व ९ और १० मन्त्र हैं। नवम मन्त्र मे 'अन्धं तमः प्रविशन्ति ये ऽविद्या मुपासते' में अविद्योपासना अर्थात् अविद्या का सेवन अन्धकार में प्रवेश करने वाला कहा गया है। अविद्योपासना में उपाध्यायजी का अर्थ रखने के लिये अविद्याज्ञानोपासना अर्थ करना पड़ेगा। दसवें मन्त्र मे 'अन्य-दाहुर-विद्याया 'अविद्या का फल और ही है, इसमें भी 'अविद्या ज्ञान' का फल इस प्रकार कहना पड़ेगा। दोनों मन्त्रों मे ज्ञान की अनुवृत्ति तो कहीं से नहीं आ सकती। इसके बाद मन्त्र में भी 'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा' में साधन में तृतीया दी गई है। इसलिये अविद्या का अर्थ अविद्या ज्ञान (उपाध्याय जी की सम्मति में मिथ्या ज्ञान का ज्ञान) करना प्रकरण सगत और युक्ति युक्त नहीं।

दार्शनिक रूप मे विवेचन करने पर तो यह अर्थ सर्वथा अनावश्यक है। मिथ्या ज्ञान को मिथ्या ज्ञान के रूप में समझना तो तत्वज्ञान ही है। अविद्या का अविद्या (मिथ्या ज्ञान) के रूप मे ज्ञान तो विद्या ही है। विद्या से अलग अविद्या का ज्ञान कोई चीज भी नहीं रहती। सूर्य पृथिवी के चारों ओर घूमता है। यह ज्ञान ठीक नहीं है यह मालूम हो जाय तो ठीक ज्ञान ही हुआ। पृथिवी सूर्य के चारों ओर घूमती है इस ज्ञान को यदि ठीक रूप में समझा तो इस सम्बन्ध के सब मिथ्या ज्ञानों का निराकरण स्वयमेव हो जाता है। इसीलिये मिथ्या ज्ञान के विपर्यय से तत्व-ज्ञान की व्याख्या वात्स्यायन ने न्याय सूत्र १। १। २ मे की है और उसी के अनुसार स्वामी दयानन्द जी ने भी विपरीत ज्ञान के विरोधी ज्ञान के रूप में तत्वज्ञान की व्याख्या की है। न्यायसूत्र ने भी 'तत्वज्ञानाद् निःश्रेयसाधिगम' कहकर दुःख जन्म प्रवृत्ति दोष मिथ्या ज्ञानानाम् में तत्व ज्ञान से मिथ्याज्ञान के नाश पूर्वक अपवर्ग (मुक्ति) की प्राप्ति कही है। तत्वज्ञान से पृथक् मिथ्या ज्ञान के ज्ञान की आवश्यकता नहीं समझी। एक सुयोग्य दार्शनिक ने इसी प्रकार से परमेश्वर के विषय में रोचक आशङ्का उठाकर उसका समाधान किया है। परमेश्वर यदि सब बातों को जानता है तो उसका मिथ्या ज्ञान बहुत

अधिक होना चाहिये क्योंकि वह हम लोगों के मन की भी बातें जानता है जो प्राय मिथ्या ज्ञान पूर्ण हैं यह आशङ्का है। समाधान यह है कि परमेश्वर जानता है कि वह सब हमारा मिथ्या ज्ञान है इसलिये वह मिथ्या ज्ञान नहीं रहता अपितु यथार्थ ज्ञान होजाता है। इसलिये श्री उपाध्याय जी का अविद्या ज्ञान अर्थ सवथा अनावश्यक है। व्यर्थ होता हुआ अविद्या पद किसी और अर्थ को ज्ञापित करता है। वह है कर्मोपासना। 'नञ्' के ६ अर्थों मे से सादृश्यगर्भ अन्यार्थ लेकर कैसे यह अथ निकलता है गत लेख में दिखाया जा चुका है। परन्तु इसको और स्पष्ट करने के लिये अन्य शास्त्रों के साथ तुलनात्मक सक्षिप्त विवेचन जरूरी है। उसे करने से यह स्पष्ट हो जायगा कि मत्र मे अविद्या का अर्थ कर्मोपासना ही है।

मुंडक-उपनिषद् मे अपरा विद्या और परा विद्या के रूप मे दो विद्यायें रखी हैं। इस ससार के अभ्युदय मार्ग को बताने वाली, दूसरे शब्दों में धर्म, अर्थ और काम त्रिवर्ग का उपदेश देने वाली अपरा विद्या है और जिससे अक्षर (अविनश्वर ब्रह्म) का बोध हो वह ब्रह्म विद्या निःश्रेयस मार्ग को अथवा मुक्ति को बताने वाली परा विद्या है। अपरा विद्या का कर्म के रूप मे निरूपण द्वितीय खण्ड के प्रारम्भ मे है पर बिना ज्ञान के योग के इन अपरा विद्या प्रतिपाद्य यज्ञरूप कर्मों को हीन कह कर परा विद्या की प्रशसा की गई है। अपरा विद्या और परा विद्या मे से 'परा' अंश निकाल देने पर सक्षेपप्रिय अविद्या और विद्या का प्रयोग करता है।

कठोपनिषद् मे नचिकेता ने द्वितीयवर से सम्पूर्ण कर्मकाण्ड का सक्षिप्त ज्ञान प्राप्त किया और तृतीय वर से अध्यात्मज्ञान लिया। अध्यात्म ज्ञान देने से पूर्व यम ने भोग श्रेय कारक सासारिक उन्नति के मूल प्रेय मार्ग के सब फलों को देना चाहा पर नचिकेता ने श्रेय मार्ग के सामने उनको तिरस्कृत कर दिया। इसी प्रेय और श्रेय को उपनिषद् ने 'अविद्या' और 'विद्या' सज्ञा की है। अर्थात् कर्मकाण्ड 'अविद्या' है और ज्ञान काण्ड 'विद्या' है। मुण्डक और कठ मे बिना विवेक के कर्म का उपहास करके विद्या पर जोर दिया परन्तु ईश उपनिषद् ने दोनों को समतुलित कर कर्म और ज्ञान का सामजस्य किया। ब्राह्मणों के विधि भागों की कर्मकाण्ड पद्धति की कुछ प्रतिक्रिया पूर्व दोनों उपनिषदों में है परन्तु दोनों के अनुसार अविद्या कर्म और विद्या ज्ञान है।

निम्न सारणी अर्थ समझने मे सहायक होगी —

अविद्या (ईशोपनिषद्)	विद्या (ईशोपनिषद्)
मृत्यु सतरण ,,	अमृत प्राप्ति(ईशोपनिषद्)
कर्मकाण्ड (ब्राह्मण)	ज्ञानकाण्ड (आरण्यक)
स्वर्ग (,)	मुक्ति (,,)
अपरा विद्या (मुण्डक)	परा विद्या (मुण्डक)
प्रेय मार्ग (कठ)	श्रेय मार्ग (कठ)
पितृयाण (बृहदारण्यक छन्दोग्य)	देवयान (बृह०+छा०)
(इष्टापूर्तादि) धर्म, अर्थ, काम (स्मृतिशास्त्र)	मोक्ष (स्मृति शास्त्र)
प्रवृत्ति मार्ग	निवृत्ति मार्ग

(कर्म) योग (गीता)	सांख्य (ज्ञान) (गीता)
क्रिया योग (योग शास्त्र)	विवेक ख्याति (योग)
ऐहलौकिक उन्नति	पारलौकिक उन्नति
अधिभूत	अध्यात्म
अभ्युदय (वैशेषिक)	निःश्रेयस (वैशे०)

इन दो स्तम्भों में पृथक् पृथक् एक सी मिलती बातों का संग्रह है। यद्यपि कुछ न कुछ अवान्तर भेद अवश्य है परन्तु दोनों मार्गों का स्वरूप इस तुलना से स्पष्ट हो जाता है। किसी एक मार्ग का ही अवलम्बन करना और दूसरे का तिरस्कार करना मानव कर्म के उच्च लक्ष्य से पतित होना है। इसीलिये 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धि स धर्म' मे वैशेषिक ने दोनों का सम्मिलित रूप धर्म कहा है। इसी सामजस्य और मेल को विद्या चाविद्या च' मे ज्ञान, कर्म और उपासना (भक्ति) के सम्मिश्रण से प्रदर्शित किया गया है और किसी एक मार्ग का अवलम्बन अवनति का कारण कहा गया है।

आशा है श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, मान्य उपाध्याय जी तथा अन्य पाठकों को मेरे दोनों लेखों से विद्या अविद्या के विवेचन से सतोष होगा। यदि कोई विशेष ज्ञातव्य रह गया है तो वह आशङ्का करने पर पूरा किया जा सकता है।

आर्यों के अन्तर्जातीय विवाह
आर्य युवक वर की आवश्यकता

कन्या गुरुकुल देहरादून की एक स्नातिका के लिये जिसकी आयु २१ वर्ष और गौरवर्ण है और जो घर के सब कामों मे निपुण है एक सब प्रकार से स्वस्थ सुन्दर सुशिक्षित एव स्वाव लम्बी आर्य कुमार वर की आवश्यकता है जिसकी आय १००) मासिक से कम न हो और आयु २५ से ३० वर्ष के बीच हो। कन्या एक प्रतिष्ठित प्रसिद्ध एव सम्पन्न आर्य वैश्य परिवार की है। जाति व प्रान्त का कोई विचार नहीं।

पत्र व्यवहार का पता —

ब्रह्मदत्त स्नातक
आयुर्वेद शिरोमणि
शिरोमणि औषधालय,
अमरोहा सयुक्त प्रान्त

महापुरुषों की दिव्यवाणी

महात्मा गान्धी वचनामृत

(१) मेरा जीवन क्या है—यह तो सत्य की एक प्रयोगशाला है। मेरे सारे जीवन मे केवल एक ही प्रयत्न रहा है—वह है मोक्ष की प्राप्ति, ईश्वर का साक्षात् दर्शन। मै चाहे सोता हू या जागता हूँ उठता हूँ या बैठता हू खाता हू या पीता हू मेरे सामने एक ही ध्येय है। उसी को लेकर मैं जिन्दा हू। मेरे व्याख्यान वा लेख और मेरी सारी राजनैतिक हल चल, सभी उसी ध्येय को लक्ष्य में रखकर गति विधि पाते हैं।

(२) मेरा यह दावा नहीं है कि मैं भूल नहीं करता। मैं यह नहीं कहता कि मैने जो किया वह निर्दोष है। पर मै एक दावा अवश्य करता हू कि मैंने जिस समय जो ठीक माना उस समय वही किया। जिस समय मुझे जो 'धर्म' लगा उससे मै कभी विचलित नहीं हुआ।

(३) मेरा पूर्ण विश्वास है कि सेवा ही धर्म है और सेवा मे ही ईश्वर का साक्षात्कार है।

(४) मै सत्य को ही परमेश्वर मानता हू। मेरी अहिंसा सच्च होते हुए भी कच्ची है अपूर्ण है इसलिये मेरी सत्य की झाकी उस सत्यरूपी सूर्य के तेज की एक किरणमात्र के दर्शन के समान है जिसके तेज का माप हजारों साधारण सूर्यों को इकट्ठा करने पर भी नहीं मिल सकता। अत अब तक के मेरे प्रयोगों के आधार पर इतना तो मैं अवश्य कह सकता हू कि इस सत्य का सम्पूर्ण दर्शन सम्पूर्ण अहिंसा के अभाव में अशक्य है॥

(५) ऐसे व्यापक सत्य नारायण के प्रत्यक्ष दर्शन के लिये प्राणीमात्र के प्रति आत्मवत् (अपने समान) प्रेम की भारी जरूरत है। इस सत्य को पाने की इच्छा करने वाला मनुष्य जीवन के एक भी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि मेरी सत्यपूजा मुझे राजनैतिक क्षेत्र में घसीट ले गई।

आह !

[ले०—विकल]

मार मत, जालिम गरीब रो देगा।
यह जो तेरे महल बगीचे,
गम लहू से इसने सीचे॥
हाय! खाल तू उसकी खेचे।
धार मे असू की सब डुबो देगा॥१॥
यह निर्धन है तू धन वाला।
यह निर्बल है तू बल वाला॥
यह निर्मल तू उर का काला,
जाय मिल आखिर तुझे जो बो देगा॥२॥
मूरख तेरी कहा अकल है।
अरे देख यह दीन विकल है॥
इसके उर से गई निकल है।
आह! से तेरा निशान खो देगा॥३॥



भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषत् की सूचनाएं

परीक्षाओं की पुस्तकें

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से प्रति वर्ष होने वाली सिद्धान्त सरोज सिद्धान्त रत्न सिद्धान्त भास्कर तथा सिद्धान्त शास्त्री आदि चारों परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें निम्न स्थानों से मिल सकेंगी।

१ आर्य साहित्य भवन नई सडक देहली।
२ शारदा मन्दिर बुक डिपो नई सडक दिल्ली।
३ गोविन्द ब्रादर्स ऐण्ड कम्पनी अलीगढ यू पी।
४ आर्य साहित्य मण्डल लि० अजमेर।
५ कार्यालय भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् दिल्ली
६ कार्यालय पञ्जाब आर्य युवक परिषद् गुरुदत्त भवन लाहौर।
७ राजपाल ऐण्ड सन्स लाहौर।

अगस्त की परीक्षाएँ

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से विगत वर्ष अगस्त में भी परीक्षाएँ हुई थीं। ये अगस्त की परीक्षाए केवल पहाडी स्थानों की कठिनाइयों पर विचार करते हुए की गई थीं किन्तु पर्वतीय भाइयों ने इन से कोई विशेष लाभ नहीं उठाया गया। अत परीक्षा समिति की ७ फ़रवरी की बैठक ने यह निर्णय किया है कि परीक्षाए केवल जनवरी में ही हुआ करें। अत कोई सज्जन भविष्य में अगस्त की परीक्षाओं के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार न करें।

—परीक्षा मन्त्री

(शेष २९वे पृष्ठ से आगे)

(६) जो यह कहते हैं कि राजनीति से धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं है मैं निसंकोच होकर कहता हू कि वे धर्म को नहीं जानते॥

(७) बिना आत्म शुद्धि के प्राणीमात्र के साथ एकता का अनुभव नहीं किया जा सकता और आत्म शुद्धि के अभाव में अहिंसा धर्म का पालन करना भी असम्भव है।

(८) चूंकि अशुद्धात्मा परमात्मा के दर्शन करने में असमर्थ रहता है इसलिये जीवन पथ के सारे क्षेत्रों में शुद्धि की जरूरत रहती है॥

(९) शुद्ध होने का मतलब तो मन से, वचन से और काया से निर्विकार होना, राग द्वेषादि से रहित होना है। इस निर्विकार स्थिति तक पहुचने के लिये प्रतिपल प्रयत्न करने पर भी मैं उस तक पहुच नहीं सका हूँ। इस कारण लोगों की प्रशसा मुझे भुला नहीं सकती। उलटे बहुधा वह मेरे दुःख का कारण बन जाती है।

(१०) मैं तो मन के विकारों को जीतना, सारे ससार को शस्त्र युद्ध करके जीतने से भी कठिन समझता हू॥

आर्य वीर दल के सम्बन्ध में सार्वदेशिक आ० प्र० सभा का वक्तव्य

आर्य वीर दल के सगठन के प्रसग में एक प्रश्न कई स्थानों से पूछा गया है। प्रश्न आवश्यक है इस कारण उसका उत्तर इस वक्तव्य द्वारा दिया जा रहा है।

प्रश्न यह है कि जो आर्य पुरुष किसी अन्य स्वयसेवक दल यथा राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ अथवा हिन्दुस्तानी सेवा दल मे कार्य करते हों उनका आर्यवीर दल क प्रति क्या कर्तव्य है।

इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट रूप से यह है कि जहा प्रत्येक आर्य पुरुष को राष्ट्रीय तथा सामाजिक कर्तव्यों के पालन म पूरी स्वाधीनता है वहा वह आर्य समाज के प्रति अपने कर्तव्य के साथ धर्म के बन्धन से बधा हुआ है। यदि उसके पास इतना समय और इतनी शक्ति हो कि वह एक से अधिक परस्पर अविरोधी स्वयसेवक दलों मे क्रियात्मक काम कर सके तो कोई आपत्ति नहीं परन्तु यदि ऐसा न हो सके और उसे एक ही चुनाव करना हो तो आर्य समाज का अग होने के कारण उसका धर्म है कि वह आर्य वीर दल में कार्य करे।

अन्य अनेक स्वयसेवक दलों के होते हुए भी आर्य वीर दल के सगठन का निश्चय इस कारण किया गया है कि अनुभव ने उसकी आवश्यकता सिद्ध की है। आर्य समाज जैसी क्रियात्मक क्षेत्र मे अनथक काम करने वाली सार्वजनिक सस्था के पास कार्य करने का साधन होना ही चाहिये। आर्य वीर दल वही साधन है। प्रत्येक आर्य नर नारी का कर्तव्य है कि वह अपना धर्म समझकर आर्य वीर दल के सगठन मे सहायता दें। स्वयसेवक दल मे कार्य करने की प्रवृत्ति तथा शक्ति होने पर उस सबसे पहला चुनाव आर्य वीर दल का करना चाहिये। आर्य समाज भविष्य मे केवल एक क्लब का रूप धारण कर लेगा, या सामाजिक और धार्मिक क्रान्ति पैदा करने का साधन बनेगा इस प्रश्न का उत्तर आर्य वीर दल के सगठन की सफलता पर निभर है।

यह प्रश्न भी पूछा गया है कि आर्य समाज मन्दिरों में अन्य स्वयसेवक दलों को स्थान दिया जाय या नहीं। इस विषय में कोई भ्रान्ति नहीं रहनी चाहिये। किसी आर्य समाज मन्दिर में यदि स्वयसेवकों के शिक्षण का प्रबन्ध हो सकता हो तो वहा आर्य वीर दल की स्थापना और शिक्षा का प्रबन्ध होना ही चाहिए। कोई अन्य सस्था आर्य वीर दल का स्थानापन्न नहीं हो सकती।

मै स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि सार्वदेशिक सभा किसी अन्य स्वयसेवक दल का विरोध नहीं करती परन्तु आर्य समाज और आर्य पुरुषों का कर्तव्य स्पष्ट कर देना चाहती है वह कर्तव्य यह है कि शीघ्र से शीघ्र आर्य वीर दल के देशव्यापी सगठन को पूरा किया जाय। कोई ग्राम और कोई नगर ऐसा न होना चाहिये जहा आर्य समाज न हो और कोई आर्य समाज ऐसा न होना चाहिये जिसके पास एक दृढ आर्य वीर दल न हो।

इन्द्र विद्यावाचस्पति—

मन्त्री—सार्वदेशिक आ० प्र० सभा

आर्य समाज के चमकते रत्न

धर्मवीर पं० लेखराम जी के जीवन पर एक दृष्टि

६-३-४३ को श्री लेखराम तृतीया के उपलक्ष्य मे

[लेखक —श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक]

स्वर्गीय श्री पं० लेखराम जी का आर्य नर-नारियों को विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। वे आर्य समाज के उन नर रत्नों में से थे जिन्होंने आर्य समाज के मान और प्रतिष्ठा को बढाया है और जो आर्य समाज के लिए जिए और मरे हैं। उन में भी प० लेखराम जी एक बात में अग्रगामी रहे हैं अर्थात् आर्य समाज में शहादत का दर्वाजा खोलने में। आर्य समाज की बलि वेदि पर शहीद होने वालों में प० जी सब से पहली वीरात्मा थे।

प० लेखराम जी आर्य समाज के उस युग से सम्बन्धित थे जो बहुत उज्वल युग कहा जाता है और जिसकी स्मृतिया आज प्राय भूतकाल की वस्तु बन गई हैं। प० जी का यह सौभाग्य ही था।

यहा पं० लेखराम जी के बलिदान और उसके कारणों पर विचार करना और उनके जीवन की मोटी मोटी घटनाएँ देना अभीष्ट नहीं है। यहा केवल प०जी के जीवन पर जो विचार हमने किया है उस विचार के फल को प्रस्तुत करना ही अभीष्ट है। उस फल को इस आशा और विश्वास के साथ अपने पाठकों को अर्पण करते हैं कि वे स्व० पण्डित जी को समझने मे सहायक होगा और उससे जो लाभ उठाया जा सकता होगा उठाया जायगा, वैसे प० जी के जीवन पर सम्यक् विचार एक बडे ग्रन्थ का विषय है।

प० जी हमारे सामने एक धर्म प्रचारक के रूप में तथा दुनिया के लोगों के सामने धर्म पर जान निछावर करने वाले एक हिन्दू शहीद के रूप मे आते हैं। बाहरी दुनिया को मुख्यतया उनके बलिदान से ही सरोकार है हम उनके जीवन तथा बलिदान दोनों से ही सरोकार है। हमारे लिये दोनों ही स्फूर्ति और प्रेरणा के कारण हैं। हम प० जी में वैदिक धर्म और आर्य समाज के लिए अटूट प्रेम और उसके प्रचार के लिये अनुपम धुन पाते हैं। उनमे आर्यत्व मूर्तिमन् हुआ देखते हैं। उन्हे धर्म प्रचारक के उस आदर्श पर पहुँचा हुआ देखते हैं जिस पर पहुँचना शब्द के ठीक ठीक भाव मे धर्म प्रचारक का कर्त्तव्य है। हम उन्हे आर्य समाज का निर्माण तथा उसके लिये ठोस कार्य करते हुए देखते हैं। हम उन्हे आर्य समाज के शासन और अनुशासन का उतना ही सन्मान करता हुआ देखते हैं जितना उनकी प्रचार गति मे बाधक सद्ध नहीं होता है।

प० जी के हृदय मे वैदिक धर्म का अनुराग महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों के अध्ययन तथा महर्षि के साक्षात् सत्सग से पैदा हुआ था और वह भी

उस समय जब वह सच्चे धर्म की ऊहापोह मे लगा था। जब वह हृदय वेदात को आजमा चुका था, कृष्ण भक्ति से ऊब चुका था, और इस्लाम की भी छानबीन कर चुका था। उनके जीवन की यह घटना बतलाती है कि उत्तम ग्रन्थों का स्वाध्याय और महापुरुषों का सत्सग मनुष्य के हृदय पर उत्तम छाप डालते हैं और यदि वह छाप जिज्ञासु हृदय पर पड जाती है तो वह उस की जीवन धारा को बदल देती है।

प० जी के एक मित्र ने उन्हें मुहम्मदी मत की पुस्तकों का अधिकतर पाठ करते देख कर एक दिन पूछा कि आप मुसल्मानी मजहब की पुस्तकों को इतना क्यों पढते हैं, क्या यदि इस्लामी मत आपको सच्चा लगे तो आप मुसल्मान हो जायगे? वहा उत्तर के लिए सोचने की जरूरत न थी उत्तर मिला बेशक। यदि दस घडे रखे हों और यदि मलूम न हो कि ठडा पानी किसमे है तो जब तक थोडा थोडा पानी सब मे से न पिया जाय तब कैसे पता लग सकता है कि किस घडे का ठडा और मीठा है। इसी तरह सब मतों की पुस्तकों की पड़ताल करके पता लगाना चाहिए कि सच्चा धर्म कौन सा है?"

ऋषि के ग्रन्थों और उनके सत्सग से प० जी के हृदय पर पडी हुई छाप ने उनकी जीवन-धारा को बदल दिया और मामूली से एक कान्सटेबिल को आर्य पथिक लेखराम बना दिया। परमात्मा करे ऐसी ही छाप सदैव ससार के मनुष्यों पर पड़ती रहे। इसके आगे हम उस छाप के प्रभाव को प० जी के महान् व्रत के द्वारा व्यक्त होते देखते हैं। उस व्रत मे सफल होने के लिये उन्हें हर प्रकार योग्यता सम्पादन करते देखते हैं और उस व्रत मे उन्हें दीवाना हुआ देखते हैं। जिसे न मित्रों और घरवालों की मुहब्बत और न विरोधियों और परायों के विरोध और भय की पर्वाह है और उसी व्रत की खातिर पेट में एक मुसलमान का छुरा खाते देखते हैं। उच्च और पवित्र व्रत ही ऐसी अवस्था का कारण बनता है। प० जी का व्रत भी महान् था। वह वैदिक धर्म का प्रचारक बनने और रहने का था, कर्तव्य पालन के लिये न कि पेट पालन के लिये। ऐसे व्रत के धनी ही दुनिया में कोई काम कर पाते हैं और ऐसे ही लोगों का दुनिया मान करती है।

प० जी के हृदय में वैदिक धर्म का कितना अधिक प्रेम था और आर्य समाज की कितनी अधिक हितचिन्ता थी यह तो उनकी शहादत और अन्तिम वसीयत से कि आर्य समाज में तहरीर (लेख) का काम बन्द न हो, स्पष्ट है ही परन्तु फिर भी उनके जीवन की बहुत सी घटनाओं और भावनाओं से ये दोनों बातें व्यक्त होती हैं और उत्तम शिक्षा प्रदान करती हैं। उनमें से कुछ घटनाओं को जिस रूप मे हमने उन्हें लिया प्रस्तुत करेंगे।

(क्रमशः)

सामाजिक जगत्

विशेष उत्सव सम्मेलनादि

सार्वदेशिक आर्य सम्मेलन—

आर्य जनता को यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन का पञ्चम अधिवेशन इस वर्ष २५—२६ एप्रिल को गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सव के अवसर पर गुरुकुल कांगड़ी जिला सहारनपुर में होगा। इस विषयक तय्यारियां अभी से शुरू कर दी गई हैं और आर्य समाजों को विज्ञप्तियां भी भेजी जा चुकी हैं। उसे सफल बनाने के लिये जनता को पूर्ण सहयोग देना चाहिये।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
मन्त्री, सार्वदेशिक आ० प्र० सभा, देहली।

अखिल भारतीय आर्यवीर शिक्षण शिविर—

आर्य जनता को यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि अखिल भारतीय आर्य वीर शिक्षण शिविर १ एप्रिल से २६ एप्रिल तक गुरुकुल कांगड़ी (जिला सहारनपुर) में लगेगा जिसमें अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति के प्रधान सेनापति श्री प० देशबन्धु जी विद्यालङ्कार की अध्यक्षता में समिति के स० प्रधान सेनापति तथा प्रधान शिक्षक श्री ओंप्रकाश जी त्यागी शिक्षार्थियों को सङ्घ व्यायाम, लाठी आदि विषयक शिक्षा देंगे। व्यय १५) मासिक के हिसाब से शिक्षार्थियों अथवा उन्हें भेजनेवाली आर्य प्रतिनिधि सभाओं वा आर्य समाजों का देना होगा। इस विषयक पत्र व्यवहार निम्न पते पर करना चाहिये। इस शिक्षण शिविर से अधिक से अधिक आर्य युवकों को लाभ उठाने का प्रयत्न करना चाहिये।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
मन्त्री, अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति
"बलिदान भवन" देहली।

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का वार्षिकोत्सव

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का २७वाँ वार्षिकोत्सव विशेष समारोह से २७, २८ फरवरी को मनाया गया। उपस्थिति आशातीत थी। श्री प० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय के सभापतित्व में 'आर्य धर्म सम्मेलन" तथा श्री प्रो० इन्द्र जी की अध्यक्षता मे "कवि सम्मेलन" हुआ। श्री प० बुद्धदेव जी श्री प० भीमसेन जी मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब श्री प्रो० इन्द्र जी, श्री प० प्रियव्रत जी श्री प० चन्द्रगुप्त जी वेदालंकार, श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति आदि प्रसिद्ध विद्वानों के भाषण हुए। गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता श्री प० धर्मवीर

जी वेदालकार न अपील पर ११०००) ग्यारह हजार रुपयों की घोषणा सुनाई। श्री ला० बद्री-प्रसादजी की धर्मपत्नी श्रीमती यशोदा देवी जीने अपने पतिदेव के स्मारक मे एक मकान बनवाने के लिये ५० ०) श्री दानवीर सेठ जुगलकिशोरजी बिरलाने ३०००) श्री ला० श्रीरामजी गोटेवाले ने ५००) श्री ला० झम्मनलाल जी द्वारा २७६) श्री ला० रलाराम मेलाराम जी ने १५०) श्री ला० लछमनदास जी लोहिय ने १५१) इसी प्रकार कई महानुभावों ने सौ २ रुपये दान में दिये। इन महानुभावों का गुरुकुल हार्दिक धन्यवाद करता है।

वालीबाल के मैच, ब्रह्मचारियों के शारीरिक चित्ताकर्षक खेलें तथा मशहूर पहलवानों की कुश्तिया हुई। श्री पूज्य महात्मा गान्धीजी की दीर्घायु के लिये प्रतिदिन उत्सव मे प्रार्थना होती रही। आर्य वीर दल देहली के स्वयसेवकों ने सराहनीय सेवा कार्य किया।

[गुरुकुल इन्द्र प्रस्थ के उत्सव की सफलता पर हम गुरुकुल के सब अधिकारियों को हार्दिक बधाई देते हैं।

—सम्पादक]

आर्यकुमार सभा नई देहली का पाँचवां वार्षिकोत्सव

ता० २६, ३० और ३१ मार्च १६४३ को आर्य कुमार सभा ड० ए० बी० हाई स्कूल, नई देहली का पाचवा वार्षिक उत्सव बडे समारोह से डी० ए० बी लोअर मिडल स्कूल बेयर्ड रोड (गोल मारकेट) पर मनाया जाना निश्चित हुआ है उत्सव को सफल बनाने के लिये बडे उत्साह से तय्यारिया प्रारम्भ हो चुकी हैं। उत्सव पर बडे २ विद्वान् उपदेश भजनीक और कविगण पधारे गे। उत्सव पर बहुत से सम्मेलन भी रखे गये हैं। शारीरिक खेलों, और लेखों आदि में भी कुमारों के मुकाबले कराये जा रहे है॥ जिनमें कुमारों को पारितोषिक दिये जावेंगे॥ उत्सव के पहले दिन श्री बी० पी० जोशी M A L L B के सभापतित्व में कुमारों का "ईश्वर साकार है या निराकार" विषय पर इनामी वाद विवाद होगा। श्री० प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक आ० प्र० सभा तथा सम्पादक सार्वदेशिक" के सभापतित्व में "वेद सम्मेलन तथा श्री पुत्तूलाल जी करुणेश प्रधान हिन्दी कवि समाज के सभापतित्व मे कवि सम्मेलन होगा। दूसरे दिन श्री प० व्यासदेवजी शास्त्री M A I. L B के सभापतित्व में भाषण प्रतियोगिता विषय "आर्य समाज के कार्य" तथा "सङ्गीत सम्मेलन" श्री ला० श्यामलाल जी गोरोवाल के सभापतित्व मे होंगे। तीसरे दिन श्री प० सत्यदेव जी विद्यालकर के सभापतित्व मे कुमारों की भाषण प्रतियोगिता विषय स्वामी दयानन्द जी से हमें क्या मिला', श्री प०-रामचन्द्र जी देहलवी के सभापतित्व मे वाद विवाद "सिनेमा देखना हानिकारक है या अच्छा" और कुमार सम्मेलन" प्रधान श्री प० रूपलाल जी M A L L B, इस के अतिरिक्त श्री प० रामगोपालजी विद्यालङ्कार, सम्पादक वीर अर्जुन, श्री प० गोपाल जी बी० ए० तथा श्री०

पं० चन्द्र गुप्त जी विद्यालङ्कार मन्त्री हिन्दू महा-सभा के विशेष भाषण आदि भी होंगे। कुमारों को पारितोषिक वितरण श्री सत्यव्रतजी वानप्रस्थी के कर कमलों द्वारा ३१ मार्च को रात्रि को ९ बजे होकर उत्सव शान्ति पाठ आदि के साथ समाप्त होगा।

देवव्रत — धर्मेन्दु
"सचालक" आर्य कुमार सभा।

आर्यवीर दल संगठन

आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि जिस प्रकार गत मास मे पानीपत (पंजाब) नरेला (देहली) मे आर्य वीर दल की शाखायें स्थापित हुई और आर्य वीरों का नरेला मे प्रशंसनीय प्रदर्शन हुआ उससे कहीं अधिक उत्साह के साथ इस मास मे देहली शहर की आर्य समाजों मे आर्य वीर दल का प्रसार हुआ। नया बास सदर बाजार और बिड़ला लाइंस (सब्जी मन्डी) की आर्य समाजों में वीर दल की शाखायें स्थापित हुईं। करीब करीब सभी समाजों के प्रधानों और मन्त्रियों ने इस कार्य मे हमारा सहयोग दिया है। परन्तु जैसे सहयोग की हमको आशा थी वैसा नहीं। तो भी भविष्य में हमें इसकी पूरी आशा है। देहली प्रान्तीय आर्य वीर दल के दलपति लाला रामगोपाल जी और स० शिक्षक म० सुखदेव जी का कार्य बड़ा प्रशंसनीय है। उन्होंने अपना अधिक से अधिक समय देकर इस कार्य को उन्नति प्रदान की है। अब वीर दल की शाखाओं का प्रसार इतनी शीघ्रता से हो रहा है कि इनके लिये शिक्षकों की कमी का अनुभव करके दीवान हाल देहली में शाम को ६॥ बजे से ८ बजे तक और रात्रि में ९ बजे से ११ बजे तक दो शिक्षक शाखाये ता० २५-२-४३ से लगाई जा रही हैं। आर्य समाज देहली क्लाथ मिल्स में ५ मार्च से शिक्षक कैम्प लगेगा वहा के मजदूर इस कार्य में बड़ा उत्साह प्रकट कर रहे हैं। आशा है अन्य स्थानों की आर्य समाजें भी देहली के आर्य समाजों का अनुसरण करके अपने यहां आर्य वीर दल की शाखा का निर्माण करेंगी।

ओंप्रकाश त्यागी
स० प्रधान सेनापति
अ० भ० आर्यवीर दल समिति

ऋषि-बोधोत्सव पर आर्यों की
प्रतिज्ञा

हम सब आर्य आज के पुण्य पर्व पर प्रतिज्ञा करते है कि परमपूज्य महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के प्रदर्शित सनातन वैदिक-धर्म पर चल मतमतान्तरों को मिटा सारे विश्व को आर्य बनावेंगे। जन्म मूलक उच्चता नीचता के भावों तथा प्रथाओं को भस्मीभूत करेंगे तथा विश्वबन्धुत्व विश्वशान्ति के सूचक "ओ३म्" ध्वजको समस्त संसार मे सर्वोपरि स्थापित करेंगे।

सृष्टिकर्ता सर्वशक्तिमान् प्रभु हमें शक्ति प्रदान करें।

निवेदक— सभाजित् मिश्र,
मन्त्री, आर्य समाज-बम्बई।

आर्य वीर गीत

(आर्य वीर दलों के लिये निर्मित)

१ हम धीर आर्य वीर हैं, घबरायेगे नहीं।
दुष्टों के आगे सिर कभी, झुकाये गे नही ।।
२ तूफ़ान आँधिया चले डर का न काम है।
कर्त्तव्य पालन से कभी, कतराये गे नही ।।
३ कट जाये सिर न धर्म को छोड़ेंगे हम कभी।
हम हीन दुर्बल दीन को दबाये गे नहीं ।।
४ सेवा सहायता का हमने पुण्यव्रत लिया।
पापी बनेंगे उसको जो निभाये गे नहीं ।।
५ है श्रेष्ठ आर्य धर्म यह, यह श्रेष्ठ संस्कृत।
इसके प्रसार से कदम, हटायेंगे नही ।।
६ यह मातृ भूमि पूज्य है, प्यारी है प्राण से।
सेवा को इसकी हम कभी, भुलाय गे नहीं ।।
७ है कौन जो हमे कभी, जग मे डरा सके ?
सर्वत्र रक्षक देव जब बिसराय गे नहीं ।।
८ हैं बन्धु सब हम मे न कोइ उच्च नीच है।
घृणा का भाव दिल मे भी, हम लाये गे नहीं ।।
९ जगदीश भक्ति शक्ति दे, देशानुरक्ति दे।
वृथा मनुष्य जन्म यह, गँवाये गे नहीं ।।
१० आदर्श श्रद्धानन्द जी का रखके सामने।
निज जाति निज समाज को लजाएगे नहीं ।।

धर्मदेव— विद्यावाचस्पति

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर—

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर के प्रधान श्री ला० खुशहालचन्द जी ने अपनी सभा की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में म० हंसराज वेद प्रचार फण्ड के लिये १ लाख रु० की अपील प्रकाशित की है।

प्रशंसनीय दान

२०००) का दान

आर्य समाज शामली जिला मुजफ्फरनगर के मन्त्री, श्रीमान् प० बनारसीदास जी धीमान् ने अपने स्वर्गीय भ्राता प्रेमराज की स्मृति में 'प्रेमराज वैदिक पुस्तकालय', स्थापित करने के लिए २०००) आर्य समाज शामली को प्रदान किया है इस दान से पुस्तकालय भवन निर्माण हो रहा है। समस्त पुस्तक प्रकाशकों एव समाचार पत्रों से प्रार्थना है कि अपने अपने पत्र और सूची भेजें जिस से पुस्तकों और पत्रों का आर्डर दिया जावे।

चतुरसेन गुप्त
आर्य समाज, शामली

श्री लल्लूप्रसाद जी आर्य पेन्शनर का दान—

श्री लल्लूप्रसाद जी आर्य पेन्शनर छिन्दवाड़ा (मध्य प्रान्त) ने धर्म शास्त्र के अनुसार परिग्रह (जरूरत से ज्यादा रखना) पाप है यह तत्व समझकर १०५४६) सार्वजनिक संस्थाओं यथा गुरुकुल हिन्दू मिशन् सत्याश्रम, महात्मा गांधी गोशाला तथा हिन्दी पुस्तकालय छिन्दवाड़ा इत्यादि को दान रूप मे दे दिये। उनका यह दान प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

—एक सम्वाददाता

आर्यसमाज बम्बई का वार्षिक महोत्सव

आर्य समाज बम्बई की ता० ३१।१।४३ व्यवस्थापिका सभा के निश्चयानुसार आगामी ता० ३-४-५ अप्रैल १९४३ को आर्य समाज का वार्षिकोत्सव समारोह पूर्वक मनाया जायगा।

निवेदक— सभाजित्
मन्त्री आर्य समाज बम्बई।

साहित्य समीक्षा

समालोचनार्थ पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी चाहियें।

वेदवाणी—लेखक श्री प० बिहारीलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ प्रकाशक—कला प्रेस प्रयाग (इलाहाबाद) पृष्ठ ८० मूल्य ॥) इस पुस्तक मे सुयोग्य लेखक महोदय ने वेद क्या हैं और कितने? वेद मे क्या है? वेद अपौरुषेय है वेदार्थ का दृष्टिकोण, वेदार्थ मे सनातनी समक्ष हमारे ऋषि का वेदार्थ, श्रुतिसुधा स्वाध्याय इन शीर्षकों के ८ अध्यायों द्वारा वेदों पर उत्तम प्रकाश डाला है। वेदों के आध्यात्मिक और वैज्ञानिक तत्वों का दिग्दर्शन कराते हुए उनके सम्बन्ध में उठने वाली अनेक शङ्काओं का अच्छा उत्तर इस पुस्तक मे दिया गया है। छापे की अशुद्धिया कहीं २ रह गई है उन्हें आशा है द्वितीय संस्करण में ठीक कर दिया जायगा। उदाहरणार्थ पृ० ७६ पर मृत्युवे की जगह मृत्यये, निरय की जगह निराय पृ० ६२ पर 'शन्नोअस्तु द्विपदे' के स्थान में शन्नो भवन्तु द्विपदे इत्यादि। पुस्तक प्रत्येक धर्म प्रेमी के लिये उपादेय है।

भगवान् बुद्धावतार और उनके सांख्य वेदान्त एव योग के तत्व युक्त उपदेश—

लेखक—श्री प० विश्वनाथ जी शास्त्री वेद व्याकरण तीर्थ। प्रकाशक अखिल भारतीय हिन्दू धर्म सेवा सङ्घ १०२ मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट कलकत्ता पृष्ठ संख्या ४८ मूल्य ≈)

इस छोटी सी पुस्तक में योग्य लेखक ने सप्रमाण यह दिखाने का यत्न किया है कि श्री गौतम बुद्ध नास्तिक न थे। वे प्राचीन आर्य धर्म के उपदेष्टा थे। उनका निर्वाण शून्य रूप नहीं किन्तु परमानन्द (मोक्ष) है। काम क्रोध लोभ मोह आदि के परित्याग और योग दर्शनोक्त मैत्री करुणा मुदिता उपेक्षादि भावना द्वारा उन्होंने ब्रह्मसायुज्यका का उपदेश किया था। आर्य सत्य आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग तथा आर्य शब्द के धर्मात्माओं के लिये प्रयोग से भी यही सिद्ध होता है कि वे आर्य धर्म के ही पुनरुद्धारक थे। वे पुनर्जन्म तथा गुण कर्मानुसार वर्णव्यवस्था के सिद्धान्त को मानते थे। लेखक महोदय ने पौराणिक अवतार वाद को मानते हुए जिसे हम वेद और युक्ति विरुद्ध होने के कारण नहीं स्वीकार करते यह दिखाया है कि पुराणोक्त दस अवतारों मे बुद्ध भगवान् की भी गणना है अत बौद्ध मत सनातन आर्य धर्म की ही एक शाखा है। यह छोटी सी पुस्तक प्राचीन आर्य धर्म का तुलनात्मक अनुशीलन करने वालों के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

"उषा" का वसन्ताक—सम्पादिका कु० शकुन्तला सेठ—पुरानी मण्डी जम्मू वार्षिक चन्दा जम्मू मे ३) अन्यत्र ४) वस ताक ।≈)

उषा एक उच्च कोटि की हिन्दी की मासिक पत्रिका है जो गत नवम्बर मास से जम्मू से प्रकाशित हो रही है। इसमे लेखों और कविताओं का बहुत अच्छा सग्रह रहता है। फ़रवरी मास के इस विशेषाङ्क मे श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय, श्री राम कुमार वर्मा एम० ए०

श्री देवराज 'दिनेश' कुमारी विमला, कु० राजतुली श्री नरेन्द्र, श्री सूर्यप्रकाश 'दिवाकर' आदि की 'बसन्त' सुरभि, 'उषा 'अन्वेषण' आदि शीषक उत्तम कविताएँ हैं ऐसे ही श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक, कु० पुष्पा वाचस्पति, श्री रामनाथ शास्त्री श्री गायत्री देवी, कु० इन्दुरानी, कु० चाद सूरी कु० कृष्णा, प०महाव्रत जी विद्यालङ्कार आदि के बसन्त त्सव, 'प्राकृतिक शृङ्गार' घनघोर घटा आदि विषयक उत्तम लेख प्रकाशित हुए हैं। इस उत्तम पत्रिका द्वारा श्रीमती शकुन्तला देवी जी आद राष्ट्रभाषा (हिन्दी) की जो अमूल्य सेवा कर रही हैं उसके लिये उनका हार्दिक अभिनन्द करते हुए हम इस पत्रिका के दीघ जीवन तथा उत्तरात्तर उन्नति के लिये भगवान् से प्रार्थना करते हैं।

—सम्पादक सा० दे०

महात्मा मुन्शीराम जी का एक पत्र

नकल पत्र महात्मा मुन्शीराम जी

स्नातक गुरुकुल कागडी

जिज्ञासु

जो इन्होंने श्री० ला० लब्भूराम जी नैयड, लुधियाना निवासी को अपने सचारु आश्रम प्रवेश के समय १—७—१५ को गुरुकुल कागड़ी से लिखा।

गुरुकुलकागड़ी

मेरे प्यारे लब्भूराम जी, नमस्ते। ११-३-७२

आपको जो दुःख प्रचारक के बन्द होने से है वह मैं सब से बढ कर अनुभव कर सकता हूँ। प्रचारक तो अब बन्द ही होगा। मेरी अवस्था में भी तब्दीली होगी। आप मेरे साथ सब से पुराने काम करने वाले हैं और भी हैं। लेकिन आपको यकरग समझता हू। क्यों कि आप हमेशा एक रग मे ही रगे रहे हैं।

मैं चाहता हूँ कि अपने गृहस्थ के आखिरी दिनों मे आप से भी एक बार भेंट हो जावे। अब यहा मौसम निहायत खुशगवार है। ग्रीष्म ऋतु भी रुखसत हो चुकी है। क्यों न आप एक एक हफ्ते के लिये आजावे।

आपका— मुन्शीराम।

आर्य सत्याग्रह

इतिहास सक्षेप से बहुत ही अच्छा लिखा गया है। लेखक ने वास्तव मे सागर को गागर मे भर दिया है। इसके लिये आर्य जाति व सभा आपकी ऋणी रहेगी। मुझे हर्ष है कि महत्वपूर्ण बात एक भी छूटने नहीं पाई। सब बातें सुन्दर ढग से लिख दी गई है। मै चाहता हूँ कि इस पुस्तक को प्रत्येक आर्य खरीदे, इसको अपने पुस्तकालय मे रख कर उसकी शोभा बढ़ाये और सत्याग्रह में भाग लेनेवाले वीरों के प्रति इस प्रकार अपनी श्रद्धाजलि भेंट करे। भारतवर्ष की प्रत्येक आर्य समाज को हैदराबाद के सत्याग्रह की स्मृति स्वरूप इस पुस्तक की एक प्रति अवश्य खरीदनी चाहिये और अपने यहा सभाल कर रखनी चाहिये।" कुँवर चाद किरण शारदा

VEDIC DHARMA, RISHI DAYANANDA & ARYA SAMAJ

(Address of Sri Pandit Ganga Prasadji, M A Retired Chief Justice, President Sarvadeshik Sabha at the 3rd South India Aryan Conference held at Bangalore on 28/12/1942)

In *Gita* Lord Krishna has said

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

Whenever, O Arjun, there is decay of righteousness and exaltation of unrighteousness, then I myself come forth For the protection of the virtuous and the destruction of the evil doers and for firmly establishing righteousness I take birth from age to age."

Other Prophets and other reformers

What Krishna here says of himself is really true of all great men, reformers and prophets who have appeared in different countries from time to time A careful study of history discloses a Divine Law that whenever there are serious religious, social or political evils in any country, some great soul is sent out to put things right and introduce such reforms as are required in that particular age.

Buddha's reforms

Confining our survey to our own country we find that before the advent of Lord Buddha, more than two thousand years ago, the pure and sublime religion of the Vedas, which had prevailed in ancient times, had degenerated into dead forms and unmeaning ceremonies The Brahmins who were considered the repositories of learning and piety had begun to feel pride in their mere birth The ancient system of *Varnas* was replaced by the pernicious system of hereditary castes All thoughtful people, including European scholars like Max Muller, are agreed that hereditary caste system did not exist in the Vedic times The society was then divided into four Varnas *viz*, Brahmins, Kshatriyas, Vaisyas and Shudras, which were occupational classes The very word *Varna* is derived from *Vri* to choose and thus means choice of profession The son may choose his father's profession as he naturally did in many cases, but there was no compulsion that he must do so All

persons whether high or low by birth, had equal opportunities for their progress No body was barred from education or social progress, nor was anybody given a special honour by the mere accident of his birth In course of time this system had degenerated and given rise to the hereditary castes according to which the bulk of the people were classed as Shudras or low born, and were deprived not only from religious knowledge and religious rites, but also from education and social progress The *Smritis* or law books of these times show that there were different Laws for the different class The Brahmin was treated with undue leniency and the Shudras with great cruelty and severity.

Another great evil which had crept into the vedic religion was the slaughter of animals in Vedic *Yajnas* or Sacrifices.

Success of his Reforms

It was to remove these two great evils, which then disfigured the Vedic religion that Lord Buddha appeared about two thousand five hundred years ago. He strove valiently to reform the Aryan religion and succeeded to a very great extent

Buddism as Atheistic religion

If we make a close study of the history of religions, we find another law working, *viz*, that a religion or teaching is generally pure and sublime when it is first promulgated, but that subsequently it undergoes deterioration through diverse causes Buddhism in India was no exception to this Having originally been a noble protest against social injustice meted out to the low born Shudras and cruelty shown to the dumb animals, it subsequently assumed the form of an atheistic religion Buddha never uttered a word denying the existence of God or the sacredness of the Vedas But later on his followers formed themselves into a separate religion denying both Such a form of belief could hardly appeal to Indians who are by nature religious minded and the above mentioned change sealed the fate of Buddhism in India

Shankaracharya's Reforms

About one thousand years later Shri Swami Shankaracharya made his appearance to restore the Vedic Religion He fought strenuously against Buddhism and Jainism. He held many *Shastrarthas* (debates) and wrote many books to establish the existence of *Brahma*

and the authority of the Vedas, with the result that Buddhism was practically banished from the land of its birth and Jainism was restricted to small areas in this country

Rise of New-Vedantism

Swami Shankaracharya was hailed as the deliverer and saviour of the Vedic religion He was a philosopher of very high eminence In fact there is no greater name in the history of Indian Philosophy But his teaching led to New-Vedantism according to which this world is false or a mere illusion, and the individual soul has no separate or real existence *Brahma* alone is and all is *Brahma* Leaving aside the philosophical subtleties of the doctrine the reaction of such a teaching on the conduct of men can be easily imagined and it is writ large in the lives of most of the numberless *Sadhus* who roam in the country calling themselves Vedantins The majority of them are idlers being a burden on the society. The New Vedant teaches that *Jnana* or knowledge alone is necessary for attaining *Moksha* or salvation and that *Karma* or works and *Bhakti* or devotion are useless for the purpose This is in direct opposition to the teachings of the Vedas and Upanishads, according to which both are essential for *Moksha* For example in the Ishopanishad which is the most ancient Upanishad which also forms the 40th Chapter of Yajurveda, it has been clearly taught

अन्ध तम प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्याया रता ॥
अन्यदेवाहुर्विद्यया अन्यदाहुरविद्यया ।
इति शुश्रुम धीराणां येनस्तद्विचचक्षिरे ॥
विद्या चाविद्या च यस्तद्वेदो भयँसह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥

"Into utter darkness do they enter who pursue only works, in to greater darkness do they enter who pursue only knowledge. Different are said to be the results of knowledge, and different those of works. He who pursues both works and knowledge together he crossing death by works attains to immortality by knowledge ' The Vedantins assert that *works* are not only useless for *Moksha* but even harmful, as they lead to births While for *Bhakti* or Devotion there can be no room in a system which teaches that the soul has no separate existence from God

Gauranga or Chaitanya's Reforms

Lord Gauranga or Chaitanya made his appearance in Bengal to teach *Bhakti* and to bring the erring souls back to the devotion

of God, under the cult of Vaisnavism.

Idolatry

This teaching though very desirable in itself gave an impetus to image worship It is admitted even by European scholars that idolatry has no sanction in the Vedas or Upanishads and did not exist in Vedic times

Rise of Puranic Religion

Idolatary took its origin during the Buddhistic period When Buddhism declined, Puranic religion took its place with its numerous and conflicting sects (Shaiva Vaishnava, Shakta etc), and different or divergent forms of worship So in place of the one sublime and monotheistic religion of the Vedas there now sprang up in the country a congeries of polytheistic sects This was a great blow to the national Unity of the people

Revival of hereditary caste system --

With the advent of Puranic religion the caste system which had been temporarily suppressed during the ascendency of Buddhism revived with fresh vigour and became much more complicated than before For in place of about a hundred castes existing in Pre Buddhistic India there were now several thousands of them

Growth of Untouchability

A large number of lower castes began to be considered *untouchables* This was a new feature in the growth of the caste system for untouchability was unknown in Pre Buddhist India The lot of the Shudras was therefore now even worse than before, and they naturally sighed for a change.

Mohammedan Conquest— Conversion to Mohammedanism

No wonder that millions of them embraced Mohammedanism as the Moslems had meanwhile come to this country and conquered it,—as millions had become Buddhist before A fatal blow was thus struck at the solidarity of the Aryan Nation 'India of to day is a house divided against itself'

Other Social Evils

Many other social evils which are eating into the vitals of the Hindus also owe their origin to the Puranic religion *e g* early marriage, enforced widowhood, prohibition of female education

Kabir, Nanak and other Saint Reformers

Such deplorable conditions could not have failed to call forth reformers, Kabir, Guru Nanak, Dadu and several other renowned

Saints appeared in North India to preach the unity of God and equality of men, and also fought against other superstitions then prevailing Similarly many worthy saints like Tukaram and E k n a t h appeared in South India and fought bravely against the prevailing superstitions and caste intolerance preaching the unity of God and brotherhood of mankind All these reformers exerted a strong and healthy influence on the society and thousands of men became their followers But they did not base their teachings on the Vedas and so failed to attract the masses generally It may be noted that the teachings of Kabir, Nanak and Dadu were a form of compromise between the two great religions of their times, *viz* Hinduism and Mohammedanism

British Conquest

Meanwhile another formidable rival to Hinduism had appeared on the scene The British people who had originally come to India as traders were helped by the weaknesses and internecine quarrels of the people to assume sovereignty over a major part of India With them came Christianity which being backed by the great nations of Europe and America and supported by the rich literature and civilisation of the West was certainly to prove a much more formidable adversary to the Hindu religion,—with its weak adherents its endless superstitions and above all its unjust and unnatural caste system —than either Buddhism or Mohammedanism had been

Rise of Christianity

The first impact of Christianity was received in Bengal where the British East India Company originally made its settlement, and many learned and high born youths of Bengal were among the first converts to Christianity, to speak nothing of the semi-literate low born Shudras There was naturally a great stir in society which could not have failed to produce a reformer

Raja Ram Mohan Roy and Brahma Samaj

Raja Ram Mohun Roy who was a great English scholar and had also studied the Upanishads founded the Brahma Samaj which checked the growing tide of Christianity to some extent Raja Ram Mohun Roy in his propaganda appealed *to the authority of the* Vedas, but neither he nor any of his followers possessed a good knowledge of them, and they were

consequently unable to reply to the criticism levelled against their position about the Vedas by Christians After Ram Mohun Roy's death the Brahma Samaj deputed four young men to Benares with the object that they may acquire a first hand knowledge of the Vedas, and then report the result of their studies At Benares these youths could study the Vedas only according to the interpretation contained in the commentaries of Sayana etc which were written during the puranic age. It is not surprising that their report was unfavourable The Brahma Samaj thereupon renounced the authority of the Vedas and thus became "a Church without a Bible"

State of religion before Dayananda

Such was the state of the country before the advent of Rishi Dayananda In place of the one pure monotheistic religion of the Vedas there was a congeries of numerous sects all worshipping different gods or deities

Image Worship

Image worship was of course widely prevalent Numerous and large temples were constructed at a huge cost History shows how the riches of some of these temples lured the invader. Mahmud Ghaznavi invaded India about a dozen times, and each time carried away gold, silver and jewellery worth crores of rupees from these temples The greed for wealth was no less an incentive than iconoclastic zeal for these invasions

Rigour of Caste System

The caste system as already noted above, had become very complicated The whole society was split up into several thousand castes and subcastes who refused to inter marry with each other The untouchability was a new feature and a product of the puranic times and the number of these despised untouchables was several crores In South India not only *touch* but even *sight* of some low castes is considered a pollution, and people of such castes should not come within the prohibited distance of men of high castes

Position of Women

The woman had fallen from the high position which she had occupied in Vedic times She was classed with Shudras, and barred even from ordinary education The lot of widows who were not allowed to remarry was particularly woeful. In North India the prevalence of *Purdah* added further to the misery of women

Chi'd Marriage

Child marriage was another great social evil leading to the physical and mental degeneration of the race

Conversion to Mohammedanism and Christianity

It need hardly be stated that in such pitiful conditions, Muhammedans and Christians could easily reap a rich harvest of conversions especially from among the down-trodden low classes, and their work of proselytization made great progress Besides agnosticism and scepticism which had appeared with the Western education also played havoc with our educated youths who could hardly be expected to believe or accept the unmeaning superstitions and irrational customs and beliefs of the puranic religion

Advent of Dayananda

Conditions like these loudly called for a reformer of the first order, and God was pleased to send such a reformer Rishi Dayananda appeared on the stage He was well-equipped for his stupendous task He renounced his house at an early age, and took a vow of life-long celibacy or *Purna Brahmacharya*. He roamed far and wide in quest of *Yoga* and true knowledge and found both He made remarkable progress in *Yoga*, and performed great *Tapas* or austerity He finally sat at the feet of the Great Swami Virajanand who supplied him with the *keep* of true knowledge He admonished him to rely on the Vedas and Panini's *Ashtadhyayi*, *Mahabhashya* and other ancient books and not on the later books which were full of degenerate ideas He charged him with propagating the ancient knowledge Dayananda promised to do so and kept his word

His teachings—Supreme authority of the Vedas

Rishi Dayananda proclaimed that the Vedas, as the infallible word of God, were the supreme and final authority in religion and that other books were to be accepted only so far as they were in accord with the Vedas, and not otherwise

He rejected the authority of the Puranas as they were predominantly full of unvedic ideas

Vedic Monotheism

Rishi Dayananda has proved with irrefutable evidence that the religion of the Vedas is neither polytheistic nor pantheistic, but a pure monotheism and that the word *Agni*, *Vayu*, *Indra*, and etc

used in the Vedas in connection with worship are only different names of one God according to His different attributes

He cites *Rigveda* 146 46

इन्द्र मित्र वरुण मग्निमाहुरथो दिव्य स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एक सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्नि यम मातरिश्वान माहु ॥

'One true being the sages call by various names such as *Agni* (the adorable) *Yama* (the ruler) *Matarishva* (the mighty) He is Indra (the glorious) *Mitra* (the friendly) *Varuna* (the all compassing) He is protector of all pervades all things and gives life to all And similarly in *Yajurveda* XXXII

तदेवाग्निस्तदादित्य तद्वायुस्तदु चन्द्रमा ।
तदेव शुक्र तद् ब्रह्म ता आप स प्रजापति ॥

And He is *Agni* (the adorable) He is *Aditya* (the imperishable He is *Vayu* (the omnipresent He is *Chandra* (the beautiful) He is *Shukram* (the creator) He is *Brahma* (the greatest) He is *Apah* (all pervading) He is *Prajapati* (Lord of all creatures)

Vedic System of Varnas

Swami Dayananda has shown that the hereditary castes find no sanction in Vedas and that the system of Varnas taught therein was very different The only verse in the Vedas which is cited by our orthodox brethren in support of caste is from Yajurveda as follows

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य कृत ।
ऊरु तदस्य यद्वैश्य पद्भ्याꣳशूद्रो अजायत ॥

It has been translated to mean that the Brahmana was born from the head of God the Kshatriya from him arms the Vaisya from his belly and the Shudra from his feet This is however wholly incorrect The verse occurs in the *Purushasukta* where mankind has been described as a person or *Purusha* The question is then asked in the verse which precedes it —

यत्पुरुष व्यदधु कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुख किमस्यासीत् किबाहू किमूरु पादा उच्येते ॥

This literally means — You have spoken of a person or *purusha* (which has several limbs or parts) What was its head what its arms and what are said to be its belly and its feet The verse quoted above which follows is an answer to this question and its literal meaning is The *Brahman* (the man of learning) is its head, the *Kshatriya* (the soldier) has been made its arms the *Vaisya* (trader and agriculturist) is his belly and the *Shudra* (labourer) has been made its feet Needless to say

that the verse allegorically describes the different functions of the four principal classes into which all mankind can be divided and it does not give the least countenance to the false theory that these classes are hereditary The following verse will show how strongly and unequivocally the Vedas teach the equality and brotherhood of all men —

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते स भ्रातरो वावृधु सौभगाय ।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषा सुदुघा पृश्नि सुदिना मरुद्भ्य ॥

All men are brother there being no elder and no younger among them let them as such advance together towards highest prosperity Their father is the Almighty God the stern Lord of mighty deeds Their Mother is the earth or nature the giver of good milk and bringer of good times

Rigveda V 60, 5

Other reforms

Similarly Swami Dayananda has conclusively proved that the other evils prevailing in our society *e g* the degradation of women enforced widowhood child marriage etc do not find the least support from the Vedas which depict a state of society in which the women enjoyed the position of honour equal to that of the man, and marriage was allowed to take place at an adult age the minimum having been fixed in the books of Ayurveda as 16 for the wife and 25 for the husband

Results

The results achieved by Dayananda s compaign were marvellous The first Aryasamaj was founded by him at Bombay in 1875 There were about 75 Aryasamajars in 1883 when he completed his earthly life There are at present 2 500 Arya samajas in India which are controlled by ten Provincial Arya Pratinidhi Sabhas under the general supervision of the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha Besides there are about 500 Aryasamajes outside India controlled by five foreign Arya Pratinidhi Sabhas which too are affiliated to the Sarvadesik Arya Pratinidhi Sabha

Population of Aryas

The number of persons who were returned or recorded as Aryas at the Census of 1921 was 5 lakhs at 1931 it was 10 lakhs The complete figures for the last Census of 1941 have not yet been published But it is expected that the number recorded in 1941 will come up to about 40 lakhs

(To be continued)



महात्मा गान्धीजी अग्नि परीक्षा मे उत्तीर्ण—

आज (३-३-४३) प्रात ९ बजे के लगभग आधुनिक ससार की सर्वोत्कृष्ट विभूति, अहिसा सत्य और सरलता की मूर्ति, भारतीय हृदयों के अनभिषिक्त सम्राट् महात्मा गान्धी जी ने कठिन अग्नि परीक्षा मे आशातीत रीति से उत्तीर्ण होकर २१ दिनों के उपवास को समाप्त किया। यह शुभ समाचार सारे जगत् मे बड़ी प्रसन्नता के साथ सुना जायगा। लगभग ७५ वर्ष के जरा-जर्जरित कृश शरीर का २१ दिनों के कठिन उपवास के पश्चात् भी जीवित रहना महात्मा गान्धी जी की अद्भुत दिव्य आत्मिक शक्ति और भगवान् की अपरम्पार महिमा का एक चमत्कार समझा जायगा इस में सन्देह नहीं। इस घटना के साथ जिसने जगत् भर के सब सहृदय सज्जनों का ध्यान अपनी ओर न केवल आकर्षित किन्तु केन्द्रित सा कर दिया था महात्मा जी के वायसराय से पत्र व्यवहार— वायसराय की कार्यकारिणी से श्री माधव राव श्री हरि अणे, श्री नलिनीरजन सरकार और सर मोदी का त्याग पत्र, देहली १९-२० फ़र्वरी को आयोजित नायक सम्मेलन तथा सरकार की अत्यधिक रूक्षता पूर्ण मनोवृत्ति पर एक विहङ्गम दृष्टि डालना अथवा इन समस्त महत्व पूर्ण घटनाओं का सिंहावलोकन करना अनुचित न होगा। महात्मा गान्धी जी के १४ अगस्त सन् ४२, ३१ दिसम्बर सन् ४२, १९ और २९ जनवरी तथा ७ फ़र्वरी १९४३ को वायसराय और २३ सितम्बर १९४२ को भारत सरकार के मन्त्री के नाम लिखे पत्रों से कोई भी निष्पक्षपात विचारक इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकता कि महात्मा गान्धी जी का सत्य और अहिंसा पर विश्वास पूर्ववत् दृढ रहा है और वे वायसराय से मिल कर परामर्श किये बिना कोई सक्रिय आज्ञा भङ्ग आन्दोलन चलाने का विचार न रखते थे। ९ अगस्त को महात्मा गांधी जी तथा देश के अन्य प्राय सब गण्यमान्य नेताओं को सरकार द्वारा गिरफ्तार किये जाने से जो विषम परिस्थति सारे देश मे उत्पन्न हो गई और जो हिंसामय कार्य किये गये उसकी उत्तरदायिता महात्मा जी वा राष्ट्रीय महासभा पर नहीं किन्तु स्वय सरकार पर है। महात्मा जी ने अपने पत्रों में यहा तक लिखा था कि यदि मेरा कोई अपराध वा अशुद्धि है तो उसके विषय में विश्वास दिलाने पर मैं उसके लिये प्रायश्चित्त तक करने को तय्यार हू किन्तु वायसराय लार्ड लिनलिथ्गो ने २२ अगस्त सन् १९४२, १३ जनवरी और ५ फरवरी १९४३ को इन गम्भीर

महात्माजी के अन्तस्तल से निकले हुए महत्वपूर्ण पत्रों के जो उत्तर दिये वे सिवाय महात्माजी और राष्ट्रीय महासभा के नेताओं पर हिंसात्मक कार्यों के लिये व्यर्थ दोषारोपण के और कुछ नहीं। सरकार की ओर से इस बात का कोई प्रयत्न नहीं किया गया कि महात्मा गान्धी जी के सामने वे प्रमाण रक्खे जाए जिनसे कांग्रेस का हिंसात्मक कार्यों के लिये उत्तरदायित्व सिद्ध हो अथवा अन्य नेताओं से मिलकर देश की परिस्थिति को ठीक करने का उन्हे अवसर दिया जाए। अन्त में विवश होकर महात्मा जी ने १० फरवरी से २१ दिन के उपवास की घोषणा की। इस बीच में श्री राजगोपालाचार्य, श्री कन्हैयालाल मुन्शी आदि के प्रयत्न से देहली में १९-२० फरवरी को एक नायक सम्मेलन हुआ जिसमे प्राय सभी धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि विद्यमान थे, इसमें महात्माजी को बिना शर्त के तत्काल मुक्त करने की वायसराय तथा ब्रिटिश प्रधान मन्त्री को अपील की गई, इसी आशय के प्रस्ताव तथा तार वायसराय को भारत तथा विभिन्न देशों की प्राय सभी संस्थाओं ने (जिनमे आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा भी सम्मिलित थी जिसने ससार की शान्ति के हित में महात्मा गान्धी जी को तत्काल बिना शर्त के छोड़ने और उनके अमूल्य जीवन को बचाने, असन्तोष और अवरोध को दूर करने की वायसराय को अपील की) दिये किन्तु सारे जगत् ने बडे खेद और आश्चर्य के साथ देखा कि ससार के इस समय के सर्वोत्तम महापुरुष को मृत्यु के मुख में जाते देख करके भी भारत या ब्रिटिश सरकार टससे-मस न हुई प्रजातन्त्र शासन की डींग मारने वाली अमेरिका सरकार ने भी इस विषय मे कोई हस्तक्षेप करना उचित न समझा। सार्वदेशिक आर्य प्रति निधि सभा ने इस असहाय अवस्थामें विश्व की सर्वोत्तम विभूति के दीर्घजीवन तथा स्वास्थ्य के लिये सच्चे हृदय से भगवान् के प्रति प्रार्थना करने का आदेश सब आर्यों को दिया और अन्य सस्थाओं ने भी वैसा ही किया। वाय सराय, मि० ऐमरी और मि० चर्चिल ने नेताओं की अपील और माग को ठुकराते हुए जो टकासा जवाब दिया वह रूक्षता और पाषाण हृदयता के उदाहरण के रूप में चिरस्मरणीय रहेगा। जिस अलौकिक आत्मिक शक्ति के सहारे महात्मा गान्धी इस अग्नि परीक्षा में आशातीत रूप से उत्तीर्ण हुए हैं हमारा विश्वास है कि उसी से वह शासकवर्ग के कठिन हृदय को भी परिवर्तित करने में समर्थ हो सकेंगे यद्यपि अभी तक ऐसे परिवर्तन के लक्षण दृष्टिगोचर नहीं हो रहे। श्री अणे, श्री सरकार और सर मोदी ने अन्तत सरकार की नीति से असन्तुष्ट हो कर जो त्याग पत्र दिया इसके लिये हम उनका अभिनन्दन करते है (यद्यपि यह कार्य उनको अधिक से अधिक गत अगस्त में ही कर देना चाहिये था) तथा भगवान् को हार्दिक धन्यवाद देते हैं कि उसने महात्मा जी के अमूल्य जीवन की रक्षा की जो विश्व कल्याण के लिये अत्यावश्यक है।

दक्षिण भारत में अभिनन्दनीय अन्तर्जातीय विवाह :—

गत १४ फरवरी को मैसूर रियासत के सुप्रसिद्ध आर्य कार्यकर्ता स्व० हनुमन्त राजू जी

(जिनकी जीवनी हम अगले अङ्क में पाठकों के सन्मुख रखेंगे) की सुपुत्री डा० धर्मवती देवी L M P का जो मैसूर मेडिकल सर्विस में हैं शुभ विवाह डा० देवन्नैय्या B A M B B S के साथ—आर्य विवाह कानून और वैदिक रीति के अनुसार मेरे पौरोहित्य में बडे समारोह के साथ बंगलौर छावनी आर्य समाज भवन में सम्पन्न हुआ। डा० धर्मवती देवी आर्य क्षत्रिय कुल की हैं और डा० देवन्नैया (देवेन्द्र नाथ जी) लिङ्गायत वंशज हैं जिन्होंने वैदिक धर्म की दीक्षा ली है। दक्षिण भारत जैसे कट्टर पन्थियों के गढ में इस प्रकार का अन्तर्जातीय विवाह विशेष अभिनन्दनीय और अनुसरणीय है। ऐसे साहसी युवक युवतियों के द्वारा ही जाति बन्धन शृङ्खला को तोडा जा सकेगा। हम इन सुशिक्षित दम्पती का हार्दिक अभिनन्दन करते और उनकी दीर्घायु, सुखसम्पत्ति तथा उन्नति के लिये भगवान् से प्रार्थना करते हुए आशा रखते हैं कि कल्पित जाति बन्धनों पर कुठाराघात करने वाले ऐसे आर्य विवाहों की संख्या दिन प्रतिदिन बढती जायगी।

आन्ध्र प्रान्त में जाति भेदक सङ्घ :—

आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि जहा कर्णाटक प्रान्त मे उपर्युक्त प्रकार अनेक विवाह जाति बन्धन तोड कर हो रहे हैं वहा मद्रास प्रेजिडेन्सी के आन्ध्र प्रान्त में भी इस विषयक प्रबल आन्दोलन जारी है। सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य उत्साही प्रचारक श्री प० मदन-मोहन जी विद्यासागर वेदालङ्कार ने गत ८ फरवरी को मोप्पर्स नामक आन्ध्र प्रान्त के एक केन्द्र में "आन्ध्र देश जन्मगत जातिकुल भेदक सङ्घ" की स्थापना की है जिसका मुख्य उद्देश्य इस समाज संहारिणी विषमता वर्धिनी जातिभेदप्रथा का समूलोन्मूलन करना है। आन्ध्र (तिलगू) के लगभग १०० कार्य कर्ताओं की उपस्थिति मे इस सङ्घ की स्थापना की गई जिसका हम स्वागत करते हैं पर साथ ही हम यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं कि इस सङ्घ को जन्म-मूलक जातिभेद (जात पात) के तोडने में ही अपनी शक्ति को लगाना चाहिये न कि गुणकर्मा-नुसार वैदिक वर्ण व्यवस्था के आदर्श का विरोध करने में अन्यथा पजाब के जातपात तोडकमण्डल की तरह वह अपने उद्देश्य की पूर्ति मे सफल न हो सकेगा।

पूज्य प्रधान जी के दो महत्वपूर्ण निर्देशः—

सार्वदेशिक सभा के पूज्य प्रधान श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जस्टिस ने गत मास दो अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्देश सब आर्य प्रतिनिधि सभाओं को भिजवाये हैं। इनमें से प्रथम यह है कि आर्य प्रतिनिधि सभाए आगे को कुछ प्रचारक योग्यता आदि की दृष्टि से ऐसे रखें कि वे धार्मिक प्रचार के साथ रोगियों को औषधि भी दिया करें और वर्तमान प्रचारकों को भी यथा सम्भव ऐसा प्रोत्साहन दिया जाए कि वे इस कार्य को करें। इससे जनता की सेवा और लाभ होगा।"

दूसरा निर्देश यह है कि आर्य प्रतिनिधि सभाए उपदेशकों और भजनीकों के अतिरिक्त

कुछ उपदेशक ऐसे भी रखे जो योग या प्राणायामादि की शिक्षा दे सकें।"

इन दोनों की उपयोगिता के विषय मे कुछ अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। जब तक क्रियात्मक सेवा न की जाए केवल मौखिक व लिखित प्रचार स्थायी प्रभाव उत्पन्न नही कर सकता न वैसा करने वाले को वास्तविक सन्तोष हो सकता है ऐसा हमारा अनुभव सिद्ध विचार है। रोगि सेवा से बढकर दूसरी सच्ची सेवा दुर्लभ है अत ऐसे सेवा यज्ञ का अनुष्ठान सच्चे प्रचारकों को अवश्य करना चाहिये। योग विद्या और रहस्यवाद के नाम से कपटी लोग अनेक प्रकार के भ्रम जाल को फैलाते और अनेक बार भोले नर नारियों को फँसा कर उनके चरित्र तक का नाश कर डालते हैं अत सच्चे योग मार्ग के अनुभवी उपदेशकों की भी आवश्यकता है जो आर्य जनता मे सच्ची आध्यात्मिकता को ला सकें जिसकी न्यूनता प्राय सर्वत्र अनुभव होती है। हम आशा रखते है कि आर्य प्रतिनिधि सभाएँ तथा आर्य समाजें पूज्य प्रधान जी के इन महत्वपूर्ण निर्देशों पर ध्यान दे कर उचित व्यवस्था करेंगी।

"सार्वदेशिक" का नव वर्ष में पदार्पण:—

इस अक के साथ 'सार्वदेशिक' १८ वें वर्ष मे पदार्पण करता है। इन १७ वर्षों में इस पत्र ने जो अमूल्य सेवा जनता की की है वह सर्व विदित है। गत वर्ष इसे अत्यधिक उपयोगी और उच्च कोटि का पत्र बनाने का जो विशेष प्रयत्न किया गया है उसके विषय में प्रशसात्मक उत्साह वर्द्धक पत्र अनेक प्रेमी ग्राहक महानुभावों से प्राप्त हुए है जिनके लिये हम उनका धन्यवाद देते हैं और उन्हे विश्वास दिलाते हैं कि इस विषयक प्रयत्न हमारी ओर से निरन्तर जारी रहेगा कि आर्यों का शिरोमणि सभा का यह मुख पत्र उसके गौरव के अनुरूप ही रहे। किन्तु इस कार्य मे प्रेमी ग्राहक महोदयों के क्रियात्मक सहयोग की हमे विशेष आवश्यकता है। कागज और छपाई की मँहगाई आदि को दृष्टि में रखते हुए हमारे लिये दो ही विकल्प हैं या तो वार्षिक चन्दा बढा दिया जाए अन्यथा पृष्ठ सख्या कम करदी जाए। इनमे से क्या करना उचित होगा इस विषय मे हम अपने प्रेमी पाठक परिवार की सम्मति जानना चाहते है। यदि प्रत्येक पाठक महोदय इस मास पाच पाच नये ग्राहक बनाने का दृढ निश्चय करके इस दिशा मे विशेष प्रयत्न करे तो बिना पृष्ठ सख्या घटाये (जिसका पत्र के गौरव पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य है) और चन्दा बढ़ाये भी आर्थिक समस्या हल होना असम्भव नही है। हम इस विषय मे उदार तथा कृपालु पाठक पाठिकाओं के क्रियात्मक उत्तर की उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा करेंगे और हमे विश्वास है कि हमे निराश न होना पडेगा।

एक अनुकरणीय प्रयत्न—

उपर्युक्त टिप्पणी लिखने के पश्चात् हमे राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक प० रामसहाय जी विद्याभूषण का पत्र मिला है जिसमे वे लिखते है 'जबसे आपने इस पत्र का सम्पादन अपने हाथ में लिया है तब से पत्र और

भी अधिक आर्य जगत् मे उपयोगी सिद्ध हो रहा है मै १० नवीन ग्राहक बनाने का यत्न करूँगा।"

श्री प० रामसहाय जी की तरह अन्य ग्राहक महानुभाव भी 'सार्वदेशिक' के प्रचार में क्रियात्मक सहयोग का दृढ़ निश्चय करके प्रयत्न शुरू कर दें तो निस्सन्देह इसकी आर्थिक स्थिति सुधर सकती है और इसे और भी अधिक उन्नत बनाया जा सकता है जैसे कि हमारी प्रबल इच्छा है।

बङ्गाल असेम्बली मे एक समर्थनीय बिल—

हमें यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि बंगाल लेजिस्लेटिव असेम्बली के एक सदस्य द्वारा प्रस्तुत बिल में एक धारा इस आशय की है कि "कोई भी हिन्दू विधुर किसी ऐसी लडकी से विवाह न कर सकेगा जो विधवा नहीं होगी।" बिलका उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि यदि यह कानून बन गया तो ५ से २५ वर्ष तक की अधिकाश विधवाएं विवाहित हो जाएँगी और बगाल में उनके पुनर्विवाह की समस्या हल हो जाएगी।' अभी इस बिल को लोकमत जानने के लिये वितरित किया गया है। बगाल की जनता को इस न्यायसङ्गत बिल का पूर्ण समर्थन करके बाल विधवाओं के क्रन्दन को दूर करने के पुण्य का भागी बनना चाहिये और ऐसे ही बिल अन्य प्रान्तों की धारा सभाओं में भी अवश्य प्रस्तुत करने चाहिये जिससे वर्तमान काल में प्रचलित अन्याय्य प्रथा का शीघ्र अन्त हो।

आर्य समाज स्थापना दिवस

इस वर्ष आर्य समाज स्थापना दिवस ५-४-४३ को मनाया जायगा। सब आर्य समाजों को इसे बड़े उत्साह के साथ मनाना चाहिये और नगर के अधिक से अधिक नर-नारियों तथा समीपस्थ ग्रामवासियों तक वैदिक धर्म के सन्देश को पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिये। इस अवसर पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की वेद प्रचार निधि के लिये अधिक से अधिक दान सग्रह करके तुरन्त सभा कार्यालय देहली मे भिजवाना चाहिये जिससे सभा प्रचारादि कार्य का अधिक विस्तार कर सके। प्रत्येक सदस्य अपने परिवार के प्रत्येक व्यक्ति पर कमसे कम ४ आने के हिसाब से दान इस निधि मे अवश्य ही दे ऐसा नियम सभा ने गत अनेक वर्षों से बनाया हुआ है। खेद है कि अनेक समाजें इस कर्तव्य का उस अवसर पर पालन करने का ध्यान नहीं रखतीं और फिर उस दान राशि के सग्रह में विशेष यत्न करना पड़ता है। सब आर्य समाजों को अभी से इस विषयक तय्यारी शुरू कर देनी चाहिये जिससे नगर और ग्रामवासी इसके द्वारा अधिक से अधिक लाभ उठा सकें और सभा की वेद प्रचार निधि में भी अधिक तम दान राशि पहुँचाई जा सके। जैसे कि सार्वदेशिक सभा के मान्य मन्त्री श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने आर्य समाज करौल बाग के ऋषिबोधोत्सव में सभापति रूप से भाषण करते हुए कल (४ ३-४३) बताया था आर्य समाजों को इस समय आर्य वीर और वीराङ्गना दल सगठन, ग्राम प्रचार और दलितोद्धार की ओर अत्यधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इन तीनों अत्यावश्यक विषयों को दृष्टि में रखते हुए ही सब आर्य समाजो को अपने आगामी वर्ष के कार्य क्रम का निश्चय इस अवसर पर करना चाहिये।

पंजाब यूनिवर्सिटी का विचित्र आदेशः—

हमें कुछ दिन पूर्व जब एक मित्र ने कहा कि पंजाब युनिवर्सिटी ने हिन्दी परीक्षार्थियों के लिये भी अंग्रेजी में ही फार्म भरने की आज्ञा निकाली है तो हमें इस पर सहसा विश्वास नहीं हुआ। हमने समझा कि हमारे हिन्दी साहित्य प्रेमी मित्र को किसी ने अशुद्ध सूचना दे दी होगी किन्तु हमारे आश्चर्य और खेद की सीमा न रही जब हमारे अनुरोध पर उस मित्र ने कल पंजाब युनिवर्सिटी के छपे हुए फार्म हमारी मेज पर लाकर रख दिये। ये फार्म हिन्दी विद्यार्थियों के लिये है और उनका प्रारम्भ इन शब्दों से होता है।

(परीक्षार्थी को पूर्ति करनी चाहिये)

निवेदक का नाम और रोल नंबर भेजने का पूरा पता

(पता अंग्रेजी में भरना चाहिये)

अब तक हिन्दी परीक्षार्थी हिन्दी में ही इस फ़ार्म को भरकर भेजा करते थे और इस के कारण कोई कठिनाई उपस्थित न हुई थी किन्तु अब पंजाब युनिवर्सिटी की इस विचित्र आज्ञा के कारण उन विद्यार्थियों को जो अंगरेजी नहीं जानते बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। उन्हें अंग्रेजी जानने वालों के द्वार खटखटाने पड़ेंगे। न जाने पंजाब विश्व विद्यालय ने बेचारे सीधे सादे अंग्रेजी से अनभिज्ञ हिन्दी परीक्षार्थियों को इस प्रकार परेशानी में डालने से क्या लाभ सोचा है ? हिन्दी परीक्षार्थिनी महिलाओं की संख्या भी पंजाब में उत्तरोत्तर बढ़ रही है उनको एक विदेशी भाषा के ज्ञान के बिना इतनी परेशानी उठानी पड़े यह बात सर्वथा अनुचित और अन्याय्य है ? क्या पंजाब विश्व विद्यालय के अधिकारी यह आशा करते हैं कि हिन्दी परीक्षाओं में सम्मलित होने वाले सब विद्यार्थी और विद्यार्थिनियां अंग्रेजी भाषा से अवश्य परिचित होंगे यदि नहीं तो इस नादिरशाही हुक्म का क्या मतलब है ? हम पंजाब युनिवर्सिटी के अधिकारियों से अनुरोध करते हैं कि वे इस अनुचित आज्ञा को तुरन्त वापिस लेकर जनता के असन्तोष को दूर करें। ध० दे०

पंजाब हिन्दू धर्म स्थान प्रबन्धक बिल

जहा एक ओर हमे कट्टर पन्थियों ... गढ समझे जाने वाले दक्षिण भारत से जाति भेद निवारण विषयक सुधारों के समाचार प्रा त हो रहे हैं वहा जानकर हमें सचमुच आश्चर्य हुआ कि पजाब असेम्बली मे सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा और रा० ब० गोपालदास जी की ओर से एक पजाब हिन्दू धर्म स्थान प्रवन्धक बिल पेश किया जाने वाला है जिसका परिणाम प्रचलित जात पात के बन्धन को दृढ करना तथा सिक्ख भाइयों को हिन्दुओं से सवथा पृथक् करना होगा जो वाछनीय नहीं है। सनातन धर्मावलम्बी की परिभाषा करते हुए इस बिल मे कहा गया है कि जो जन्म की जात पात मे विश्वास रखता है और 'हिन्दू' की परिभाषा में लिखा है कि 'हिन्दू' का मतलब हिन्दुस्तान का कोई ऐसा वाशिन्दा (निवासी) है जो सिख न हो, जो हिन्दुओं की प्रचलित जातों में से किसी एक में पैदा हुआ हो, जो इस इस बात की घोषणा करे कि वह हिन्दू है इत्यादि। सनातन प्रतिनिधि सभा के सशोधन के अनुसार केवल ब्राह्मण पुजारियों को यह अधिकार दिया गया है कि वे जिला कमेटियों और केन्द्रीय बार्ड मे अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करके भेजें किन्तु अन्य सुशिक्षित अब्राह्मणों को ऐसा कोई अधिकार नहीं दिया गया। ऐसे ही अन्य अनेक आक्षेप योग्य बातें इस बिल मे हैं जो समाज हित के लिये घातक हैं अत प्रत्येक सुधारवादी पजाबी को इसका विरोध करके पजाब के प्राइम मिनिस्टर के पास भेजना चाहिये जैसे कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब ने आदेश दिया है।

भूल-सुधार

पृष्ठ १० ब्रह्मयक्षत्रियाभ्याम् के स्थान पर ब्राह्मणक्षत्रियाभ्याम् पढ़िये। अन्तिम टाइटल पेज में आर्य डाइरैक्टरी और अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र के विज्ञापन क्रमश दाईं बाईं तरफ पढें।

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है। मूल्य ॥=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण ।~)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।~), ≡), =)॥, =)॥. -)॥, ≡)॥, ।), ।=)॥

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्यसमाज की लायब्रेरियों में रहनी चाहिये।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) प्राणायाम विधि अजिल्द ॥)॥
(२) वैदिक सिद्धान्त अजिल्द ॥।)
सजिल्द १)
(३) विरजानन्द विजय ॥)
(४) धर्मपितृ परिचय २)
(५) वेद में असित शब्द ‑)॥
(६) वेद० मूर्त्त विज्ञान ॥)
(७) पूरा नद में देवृक मा या देवकामा ‑)
(८) विदेशों में आर्य समाज ॥)
(९) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १)
(१०) आर्य सिद्धान्त विमर्श १॥)
(११) भजन भास्कर ॥)
(१२) समस्त आर्य समाजों की सूची ॥)
(१३) सार्वदेशिक सभा का इतिहास अ० २)
सजिल्द २॥)
(१४) बलिदान ॥)
(१५) आ० डायरेक्टरी अ० १।) स० १॥)
(१६) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र २)
(१७) सत्यार्थ निर्णय १॥)
(१८) संस्कृत सत्यार्थप्रकाश अ० १)
(१९) हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद (उर्दू में) ॥)
(२०) इजहारे हकीकत (उर्दू में) ॥।=)
(२१) आर्यपर्वपद्धति सजिल्द १)
(२२) कथा माला ।=)
(२३) आर्य जीवन और गृहस्थ धर्म ।=)
(२४) आर्योदय का काव्य =)॥
(२५) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर =)
(२६) आर्य सत्याग्रह २॥)
(२७) पञ्चयज्ञ प्रकाश ॥।)
(२८) आर्य समाज का इतिहास ॥।)
(२९) बहिनों की बातें ॥)
(३०) भक्ति कुसुमाञ्जलि ॥।)
(३१) Agnihotra
Well Bound २॥)
(३२) Crucifixion by an eye
witness ।‑)
(३३) Truth and Vedas ।=)
(३४) Truth-bed rock of Aryan
Culture ॥)
(३५) Vedic Teachings १)
(३६) Voice of Arya Varta ॥)
(३७) Christianity in India ॥)
(३८) The Scope and Mission of
Arya Samaj Bound १)
Unbound ॥)
(३९) The Glory of Vedas ‑)॥
(४०) Arya Samaj and Vedic
Dharma ॥)

सभा के नए प्रकाशन

अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र

इस पुस्तक में आर्यसमाज के विद्वान् श्री पं० प्रियरत्न जी आर्ष ने अथर्ववेद के मन्त्रों द्वारा सूत्र स्थान, शरीर स्थान निदान स्थान और चिकित्सा स्थान का प्रतिपादन किया है। चिकित्सा स्थान में आश्वासन चिकित्सा, उपचार चिकित्सा, सूर्यकिरण चिकित्सा, जल चिकित्सा, होम चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, सर्पादि विष चिकित्सा, कृमि चिकित्सा, रोग चिकित्सा और पशु चिकित्सा दी है। इन प्रकरणों में वेद के अनेक महत्वपूर्ण रहस्यों का उद्घाटन किया गया है। पुस्तक २०×२६ अठ पेजी पृष्ठ संख्या ३१२ मूल्य केवल २) मात्र है। पोस्टेज व्यय ।) प्रति।

अर्थात् आर्य जगत् की समस्त संस्थाओं सभाओं और समाजों का सन् १९४१ ई० की विश्व व्यापी विविध प्रगतियों का वर्णन आर्य समाज के नियम, आर्य विवाह कानून, आर्य वीर दल आदि अन्य आवश्यक ज्ञातव्य बातों का संग्रह। आज ही आर्डर भेजिये।

मूल्य अजिल्द १।) पोस्टेज ।)
मूल्य सजिल्द १॥) पोस्टेज ।=)

मिलने का पता—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।



सम्पादक—

कांगड़ी

वार्षिक मूल्य
स्वदेश ३)
विदेश ७ शि
एक प्रति का

आर्य समाज अङ्क

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

❀ सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र ❀

वर्ष १८ } अप्रैल, १९४३ ई०] चैत्र १९९९ [दयानन्दाब्द ११९ } अङ्क २

❀ वैदिक प्रार्थना ❀

ओ३म् सं वर्चसा पयसा सं तनूभिरगन्महि मनसा सँ शिवेन ।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद् विलिष्टम् ॥ यजु० २। २४॥

शब्दार्थ— हम सब (वर्चसा) तेज से (पयसा) और वीर्य से— रेत. पयः शत० १२।४।१।७ (सम्) संयुक्त हों (तनूभिः सम्) उत्तम शारीरिक शक्ति से हम युक्त हों (शिवेन मनसा सम् अगन्महि) सब के कल्याण की भावनायुक्त मन से हम संयुक्त हों (सुदत्रः त्वष्टा) सर्वोत्तम दानी जगत्कर्ता परमेश्वर (राय विदधातु) हमें आध्यात्मिक ज्ञानादि तथा भौतिक धन को विशेष रूप से प्राप्त करावे वह भगवान् (तन्व यद् विलिष्टम्) हमारे शरीर की जो कमी है उसे (अनु मार्ष्टु) दूर कर के हमें पवित्र बनाए।

विनय— हे सर्वशक्ति सम्पन्न प्रभो। हम सब तुम्हारे पुत्र तुम से यह प्रार्थना करते हैं कि तुम्हारी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हमारी शारीरिक मानसिक आत्मिक सब प्रकार की शक्तियों का विकास हो। हम तेजस्वी, वीर, ज्ञानी तथा शक्तिशाली बनें। हमारे मन के अन्दर सदा शुभ विचार रहें। आप हमारी सब त्रुटियों को दूर करने में सहायक हों। हम सब प्रकार के उत्तम ऐश्वर्य से सम्पन्न हों।

वेदोपदेश—

सामाजिक उन्नति

(१) ओं सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथापूर्वे सं जानाना उपासते ॥ ऋ० १०।१६१।२

(२) ओं सं जानीध्वं सं पृच्यध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भाग यथा पूर्वे सं जानाना उपासते ॥ अथर्व० ६।६४।१

(३) ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥ अथर्व० ६।६४।३

(४) ओं सध्रीचीनान् व सं मनसस्कृणोम्येक श्रुष्टीन् सं वननेन सर्वान्। देवा इवामृत रक्षमाणाः सायंप्रात सौमनसो वो अस्तु ॥ अथर्व० ३।३०।७

शब्दार्थ—(१) हे मनुष्यो। (सं गच्छध्वम्) तुम मिलकर एक लक्ष्य की ओर जाओ (सं वदध्वम्) मिलकर परस्पर प्रेम पूर्वक बातचीत करो (व मनासि स जानताम्) तुम्हारे मन परस्पर मिले हुए हों और ज्ञान युक्त हों (यथा पूर्वे सं जानाना देवा) जैसे पूर्ण ज्ञान युक्त अनुभवी सत्यनिष्ठ विद्वान् (भागम् उपासते) अपने कर्तव्य भाग का पालन करते रहते हैं वैसे ही तुम भी किया करो।

(२) हे मनुष्यो। तुम (सं जानीध्वम्) मिलकर उत्तम ज्ञान प्राप्त करो (स पृच्यध्वम्) मिलकर एक दूसरे से सम्पर्क वा प्रेम बढ़ाओ (व मनासि सं जानताम्) तुम्हारे मन परस्पर प्रीतियुक्त और सुसंस्कृत हों। ज्ञानी सत्यनिष्ठ विद्वानों की तरह तुम भी अपने कर्तव्य का सदा पालन करते रहो।

(३) हे मनुष्यो। (व. आकूतिः समानी) तुम्हारा संकल्प एक समान शुद्ध तथा उत्तम हो (वः हृदयानि समाना) तुम्हारे हृदय समान रूप से पवित्र हों और समानता के भाव से परिपूर्ण हों (व मनः समानम् अस्तु) तुम्हारा मन समानता और प्रेम के भाव से युक्त हो (यथा व सुसह असति) जिससे तुम्हारा परस्पर पूर्ण सहयोग हो सके।

(४) मैं ईश्वर (व सर्वान्) तुम सब मनुष्यों को (सध्रीचीनान्) साथ मिलकर एक लक्ष्य की ओर जाने वाले और (सं मनस) समान-प्रेमयुक्त मन वाले (सं वननेन) समान रूपसे श्रम विभाग द्वारा-अपनी २ योग्यता प्रवृत्ति और शक्ति के अनुसार (एक श्रुष्टीन्) समाज और राष्ट्र के सुख तथा उसकी उन्नति का एकमात्र ध्यान रखने वाले (कृणोमि) बनाता हूँ। (अमृतं रक्षमाणा देवा इव) अपनी अमरता वा ज्ञान रूप अमृत की रक्षा करने वाले सत्य निष्ठ विद्वानों की तरह (व) तुम सब का आपस में (सायं प्रात) सवेरे शाम-हर समय (सौमनसः अस्तु) प्रसन्नता पूर्ण उत्तम व्यवहार हो ॥

इन वेद मन्त्रों में मनुष्यों की सामाजिक उन्नति के तत्वों का बड़ा उत्तम प्रतिपादन किया

गया है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अपनी शक्तियों के पूर्ण विकास के लिये क्षेत्र वह समाज में रहते हुए ही बना सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने को समाज का एक अङ्ग समझ कर उसकी उन्नति के लिये सदा प्रयत्न करना चाहिये। उसे सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिये जैसे कि ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज के नवम नियम में बताया है। सारे समाज की उन्नति हो, सबका कल्याण हो ऐसा एक लक्ष्य बनाकर सब मनुष्यों को अपनी शक्ति और योग्यता के अनुसार उसकी पूर्ति में लग जाना चाहिये। सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग वेद की आज्ञा के अनुसार जैसे अपने कर्तव्य का पालन करने में दिनरात तत्पर रहते हैं वैसे ही प्रत्येक मनुष्य—नरनारी को करना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपनी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का विकास करके समाज की उन्नति और सेवा में उन्हें लगा दे। अपने मन में सब के लिये प्रेम का भाव रखे और वाणी से भी मधुर शब्दों का सदा प्रयोग करे। प्रत्येक के मन में और हृदय में समाज और राष्ट्र की उन्नति के भाव समान रूप से सदा रहें—उनमें समानता का भाव कूट कूट कर भरा हुआ हो जिस से वे मिल कर समाज की उन्नति के कार्य करने में सदा तत्पर रहें। जन्मगत ऊंच नीच—छूत अछूत आदि के भाव किसी के मन में और आचरण में न रहने चाहिये। हम सब एक ही परमात्मा और भूमि माता के पुत्र हैं यह भाव मन में रखकर सदा प्रेम पूर्वक और और श्रम विभाग के सिद्धान्तानुसार समाज और देश की सेवा का कार्य सबको करते रहना चाहिये। ऐसा परस्पर प्रेम, सहानुभूति और समानता पूर्ण व्यवहार होने से ही समाज की उन्नति हो सकती है। जिस समाज मे लोग परस्पर ईर्ष्या द्वेष रखने वाले हों, केवल अपने ही स्वार्थ की परवाह करने वाले हों, समाज की उन्नति की जरा भी चिन्ता न करने वाले हों, उस समाज की कभी उन्नति नहीं हो सकती। आर्य समाज की सच्ची उन्नति इन वेद मन्त्रों में उत्तमता से निर्दिष्ट तत्वों पर आचरण करने से ही हो सकती है अन्यथा नहीं इसमें जरा भी सन्देह नहीं। आर्यों की वेदों के स्वाध्याय में जितनी प्रवृत्ति होगी, उनका परस्पर व्यवहार जितना प्रेम और सहानुभूति पूर्ण होगा, उनका वैयक्तिक पारिवारिक और सामाजिक जीवन जितना पवित्र होगा उतना ही अधिक आर्य समाज अपने पवित्र उद्देश्य की पूर्ति में सफल हो सकेगा।

ध० दे०

आत्मसुधा

(लेखक— धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज संग्रहीता ला० लब्भूराम जी नैयड़, आनन्दाश्रम लुधियाना)

[हम श्री लब्भूराम जी नैयड़ लुधियाना निवासी का धन्यवाद देते हैं कि अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के उपदेशों का संग्रह करके उन्होंने प्रकाशनार्थ भेजा है। उनके प्रति धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज का (महात्मा मुंशीराम जी जिज्ञासु) का कितना प्रेम था वह गत सार्वदेशिक में पृष्ठ ४० पर प्रकाशित उनके १-७ १५ को लिखे पत्र से अत्यन्त स्पष्ट है जिसमें उन्होंने श्री लब्भूराम जी को लिखा था कि "आप मेरे साथ सबसे पुराने काम करने वाले हैं। और भी हैं लेकिन आपको यकरंग समझता हूँ क्योंकि आप हमेशा एक रंग में ही रंगे रहे हैं"। —सम्पादक]

ओं परिमाग्ने दुश्चरिताद्बाधस्वा मा सुचरिते भज।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृतां अनु ॥ यजुर्वेद अ० ४ मन्त्र २८।

अर्थ—"हे जगदीश्वर। आप कृपा करके जिस कर्म से मैं उत्तमता पूर्वक प्राण धारण करने वाले जीवन से जीवन्मुक्त और मोक्ष को प्राप्त हुए विद्वान् व मोक्षरूपी आनन्दों को अच्छे प्रकार प्राप्त होऊ उससे मुझको संयुक्त करके दुष्ट आचरण से पृथक् करके उत्तम उत्तम धर्माचरण युक्त व्यवहार में अच्छे प्रकार स्थापन कीजिये।"

परमात्मा से सदैव प्रार्थना करनी चाहिये कि वह दुष्ट आचरणों से हमें पृथक् रखे। सदा हमें धर्माचरण की प्रेरणा करे। यह प्रार्थना किस प्रकार हो सकती है? शुद्ध भाव से सारा पुरुषार्थ धर्माचरण में प्रवृत्त होने के लिये लगा देने पर। शुद्धाचरण की आवश्यकता क्यों है? इस पर विचार करने के लिये यह जानने की आवश्यकता है कि शुद्धाचरण कौन से हैं। परमात्मा के नियम पालन करना ही धर्माचरण कहलाता है। इसके विपरीत चलना दुष्ट कर्म के नाम से कहा जाता है। पस, जो मनुष्य धर्माचार्य बनना चाहते हैं उनके लिये आवश्यक है कि वे अपना शारीरिक, सामाजिक, आत्मिक व्यवहार ठीक ईश्वर आज्ञा के अनुकूल करलेवें। यही एक हेतु जीवन्मुक्ति का है। सारी शक्तियों को सम अवस्था में लाना ही परमानन्द की सीढ़ी पर चढ़ना है। और वहां से ब्रह्मधाम तक पहुँच होती है। प्रिय पाठकगण! यदि ब्रह्मानन्द मे मग्न होने की अभिलाषा कुछ भी रखते हो तो अपना तन, मन, धन ईश्वर आज्ञा के पालन करने में लगा दो क्योंकि इसके बिना मुक्ति में पग रखना कठिन है।

ओं प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम्।
येनविश्वाः परिद्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥
यजुर्वेद ४ मन्त्र २९।

अर्थ:—"हे जगदीश्वर। जिस रास्ते से विद्वान् पुरुष शत्रु सेना को सब प्रकार से दूर करता और सुख देनेवाले धन को प्राप्त होता है

(शेष पृष्ठ ६१ पर)

आर्य समाज की स्थापना और उसके नियमोपनियम

[लेखक.—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए प्रधान संयुक्त प्रान्त आर्य प्रतिनिधि सभा]

ऋषि दयानन्द ने वैदिक धर्म के पुनरुद्धार के लिये ७ अप्रेल सन् १८७५ ई० (प्रतिपदा, चैत्र, शुक्ल, बुधवार १९३२ विक्रमी) को आर्य समाज की स्थापना बम्बई नगर मे की। उन्होंने आरम्भ में नियमों की जो पाण्डुलिपि तैय्यार की थी वह यह है—

१ सब मनुष्यों के हितार्थ आर्य समाज का होना अत्यावश्यक है।

२. इस समाज में मुख्य स्वत प्रमाण वेदों का ही माना जावेगा, साक्षी के लिये तथा वेदों के अर्थज्ञान के लिये एव आर्य इतिहास के लिये शतपथादि ब्राह्मण वेदाग ६, उपवेद ४, दर्शन ६ और ११२७ शाखा वेदों के व्याख्यानरूपी आर्य सनातन ग्रन्थों का भी वेदानुकूल होने से गौण प्रमाण माना जायेगा।

३. इस समाज में प्रतिदेश के मध्य एक प्रधान समाज होगा और अन्य उसकी शाखा समझे जावेंगे।

४. प्रधान समाज अनुकूल और सब समाजों की व्यवस्था रहेगी।

५. प्रधान समाज में वेदोक्त धर्मानुकूल संस्कृत और आर्य भाषा में सदुपदेश के लिये नानाप्रकार के पुस्तक रहेंगे और एक आर्य प्रकाश साप्ताहिक पत्र निकलेगा। ये सब समाज मे प्रवृत्त किये जावेंगे।

६ प्रत्येक समाज में एक प्रधान पुरुष और दूसरा मन्त्री तथा अन्य पुरुष और स्त्री ये सब सभासद् होंगे।

(पृष्ठ ६० का शेष)

उस हिंसा रहित सुखपूर्वक जानने के योग्य मार्ग को प्रत्यक्ष प्राप्त होवे।"

काम, क्रोध आदि शत्रु दल किस वेग से मनुष्य जीवन को चारों ओर से घेर लेता है। इस क्षेत्र से बाहिर निकलना बड़े पुरुषार्थी बुद्धिमान् का कार्य है। सासारिक युद्ध जिनमें शत्रु दल के खून की नदियां बहाना बहादुरी और जय का चिन्ह समझे जाते हैं, कुछ कठिन नहीं है क्योंकि उनका रास्ता जहा एक तरफ को काटों से भरा है, वहा दूसरी तरफ उनके दूर करने में कोई बन्धन नहीं। परन्तु वह मार्ग जिसमें हिंसा की आज्ञा नहीं। जहा हिंसा करना ही पराजय का चिन्ह है बड़ा कठिन है। ऋषि ने उसे खड्ग की धार से उपमा देने में ठीक सचाई से काम लिया है। इसी जीवन मे यह मार्ग पूरा करना पड़ता है। ससार यात्रा में चलते चलते किसी न किसी समय प्रत्येक मनुष्य एक ऐसे स्थान पर पहुँचता है जहा ये दो मार्ग स्पष्ट दिखाई देते हैं। एक में हिंसा ही हिंसा और इसलिये दुःख, दूसरे में वेदोक्त कर्म इसलिये सुख ही सुख। प्यारे आर्य भाइयो। तुम कर्म करने में स्वतन्त्र हो। बोलो किस मार्ग में जाना चाहते हो।

७. प्रधान पुरुष इस समाज की व्यवस्था का यथावत् पालन करेगा और मन्त्री सब के पत्र का उत्तर तथा सब के नाम व्यवस्था लेख करेगा।

८. इस समाज मे सत्पुरुष सदाचारी और परोपकारी सभासद् किये जावे गे।

९ प्रत्येक गृहस्थ सभासद् को उचित है कि वह अपने गृहकृत्य से अवकाश पाकर जैसा घर के कार्यों में पुरुषार्थ करता है उससे अधिक पुरुषार्थ इस समाज की उन्नति के लिये करे और विरक्त तो नित्य ही समाजोन्नति में तत्पर रहे।

१० प्रति सप्ताह मे एक दिन प्रधान, मन्त्री और सब सभासद् समाज स्थान में एकत्रित हों और सब कामों से इस काम को मुख्य जानें।

११ एकत्र होकर सर्वथा स्थिरचित हों परस्पर प्रीति से प्रश्नोत्तर पक्षपात छोड़ कर करें। फिर सामवेद का गान, परमेश्वर, सत्यधर्म, सत्यनीति सत्य उपदेश के विषय में ही बाजे आदि के साथ गान हो और इन्हीं विषयों पर मन्त्रों का अर्थ और व्याख्यान हो फिर गान फिर मन्त्रों का अर्थ फिर व्याख्यान फिर गान आदि।

१२. प्रत्येक सभासद् न्याय पूर्वक पुरुषार्थ से जितना धन प्राप्त करे उसमें से आर्य समाज, आर्य विद्यालय और आर्य प्रकाश पत्र के प्रचार और उन्नति के लिये आर्य समाज कोष में १ रु० सैकड़ा देवें। अधिकस्याधिक फलम् यह धन उक्त कार्यों में ही व्यय होगा अन्यत्र नहीं।

१३. जो मनुष्य इन कार्यों की उन्नति और प्रचार के लिये जितना प्रयत्न करे उसका उतना ही अधिक सत्कार उत्साह वृद्धि के लिये होना चाहिये।

१४. इस समाज में वेदोक्त प्रकार से अद्वैत परमेश्वर की ही स्तुति प्रार्थना और उपासना की जायगी। स्तुति निराकार सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त निर्विकार अनादि अनुपम दयालु सर्वाधार, और सच्चिदानन्द इत्यादि विशेषणों स परमात्मा के गुणकीर्तन करना। प्रार्थना उससे सब श्रेष्ठ कार्यों मे सहाय चाहना। उपासना उसके आनन्द स्वरूप में मग्न हो जाना सो पूर्वोक्त निराकारादि लक्षणयुक्त परमात्मा की ही भक्ति करनी उसको छोड़ कर और किसी का आश्रय नहीं लेना चाहिये।

१५. इस समाज में निषेकादि और अन्त्येष्टिपर्यन्त संस्कार वेदोक्त किये जावे गे।

१६. आर्य विद्यालय में वेदादि सनातन आर्ष ग्रन्थों का पठनपाठन हुआ करेगा और वेदोक्त रीति से ही सत्यशिक्षा सब पुरुष और स्त्रियों को दी जावेगी।

१७. इस समाज में स्वदेश के हितार्थ दो प्रकार की शुद्धि के लिये प्रयत्न किया जावेगा,* एक परमार्थ दूसरे व्यवहार, इन दोनों का शोधन तथा सब संसार के हित की उन्नति की जावेगी।

१८. इस समाज में न्याय जो पक्षपात से रहित और प्रत्यक्षादि प्रमाणों से यथावत् परीक्षित सत्य धर्म वेदोक्त ही माना जावेगा इससे विपरीत कदापि नहीं।

१९ इस समाज की ओर से श्रेष्ठ विद्वान् लोग सर्वत्र सदुपदेश करने लिये समयानुकूल भेजे जावेंगे।

२०. स्त्री और पुरुष इन दोनों के विद्याभ्यास के लिये पृथक् २ आर्य विद्यालय प्रत्येक स्थान में

यथा सम्भव बनाये जावेंगे। स्त्रियों की पाठशाला में अध्यापिका आदि का सब प्रबन्ध स्त्रियों द्वारा ही किया जावेगा और पुरुषों की पाठशाला में पुरुषों द्वारा इससे विरुद्ध नहीं।

२१. इन पाठशालाओं की व्यवस्था प्रधान आर्य समाज के अनुकूल पालन की जावेगी।

२२. इस समाज में प्रधान आदि सब सभासदों को परस्पर प्रीति पूर्वक अभिमान, हठ, दुराग्रह और क्रोध आदि दुर्गुणों को छोड़ कर उपकार और सुहृद्भाव से निर्वैर होकर स्वात्मवत् सबके साथ वर्तना होगा।

२३ विचार समय सब व्यवहारों में न्याययुक्त सर्वहितसाधक जो सत्य बात भली प्रकार विचार से ठहरे उसी का सब सभासदों को प्रकट करके वही सत्य बात मानी जावे।

२४ जो मनुष्य इन नियमों के अनुकूल आचरण करनेवाला, धर्मात्मा सदाचारी हो उसको उत्तम सभासदों में प्रविष्ट करना इसके विपरीत को साधारण समाज में रखना और अत्यन्त प्रत्यक्ष दुष्ट को समाज से निकाल ही देना परन्तु पक्षपात से यह काम नहीं करना किन्तु यह दोनों बातें श्रेष्ठ सभासदों के विचार से ही की जावें अन्यथा नहीं।

२५. आर्य समाज, आर्य विद्यालय, आर्य प्रकाश पत्र और आर्य समाज का कोष इन चारों की रक्षा और उन्नति प्रधान आदि सब सभासद् तन, मन, धन से सदा किया करें।

२६. जब तक नौकरी करने और करानेवाला आर्य समाजस्थ मिले तब तक और की नौकरी न करे और न किसी और को नौकर रखे वे दोनों परस्पर स्वामि सेवक भाव से यथावत् वर्तें।

२६. जब विवाह जन्म मरण या और कोई अवसर दान करने का उपस्थित हो तब तब आर्य समाज के निमित्त धन आदि दान किया करे ऐसा धर्म का काम और कोई नहीं है ऐसा समझ कर इसको कभी न भूलें।

२८. इन नियमों में से यदि कोई नियम घटाया बढ़ाया जायेगा तो सर्व श्रेष्ठ सभासदों के विचार से ही सब को विदित करके ऐसा करना होगा।

नियम बन जाने के पश्चात् अधिकारी चुने गये तत्पश्चात् प्रति शनिवार सायंकाल को आर्य-समाज के अधिवेशन होने लगे परन्तु कुछ दिन उपरान्त शनिवार सामाजिक पुरुषों के अनुकूल न होने से आदित्यवार रखा गया जो अब तक है।

इन नियमों के देखने से ऋषि दयानन्द की मनोवृत्ति का पूरा पूरा पता लग जाता है। वे चाहते थे कि शीघ्र अति शीघ्र संसार के मनुष्य दृढ़ आर्य्य और पक्के वैदिक धर्मी बन जावें। वेद, सत्य, न्याय और प्रेम को इतनी बार दुहराया गया है कि ऋषि की श्रद्धा इन श्रेष्ठ बातों में विशेष प्रतीत होती है। परन्तु इन नियमों में एक दोष भी है। अंगरेजी की एक लोकोक्ति है कि Most Government is the least Government अर्थात् अत्यन्त शासन न्यूनतम शासन सिद्ध होता है। इन नियमों में छोटी से छोटी बातों में समाज को इतना अधिकार दिया गया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिये स्थान

नहीं छोड़ा गया है। आजकल की परिस्थिति में यह कैसे सम्भव है कि आर्य्य स्वामियों के सेवक भी आर्य्य ही हों और आर्य्य लोग आर्य्य लोगों की ही चाकरी करें अन्य की नहीं। इसलिये आवश्यक था कि इन नियमों को बदला जावे। इसलिये जब श्री स्वामी जी महाराज सन् १८७७ ई० में लाहौर पधारे और लाहौर आर्य्य समाज की स्थापना हुई तो आर्य्य समाज के २८ नियमों के स्थान में १० नियम निर्माण किये गये जो इस प्रकार हैं और जिनमें अब किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है —

१—सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदिमूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि अनुपम सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है उस ही की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं के पुस्तक हैं वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।

४—सत्य ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहिये।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सब हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये। और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

इन नियमों में दो बातों का विचार रक्खा गया है प्रथम तो नियम इतने विस्तृत न हों कि व्यक्तित्व के लिये कोई स्थान ही न छोड़ा जाय क्योंकि ऐसा करने से किसी समाज का कार्य्य चलाना कठिन हो जाता है। जैसा कि आरम्भिक २८ नियमों से अनुभूत हुआ होगा। दूसरे नियम ऐसे सामान्य भी न हों कि प्रत्येक मनुष्य बिना अपने सैद्धांतिक या व्यवहारिक परिवर्तन के सभासद् हो सके क्योंकि ऐसा करने से समाज के लिए कोई काम ही करने को शेष नहीं रह जाता। वर्तमान हिन्दू धर्म (जिसको आज कल सनातन धर्म कहते हैं) में यही दोष है। ईश्वर को मानने वाला भी हिन्दू, न मानने वाला भी हिन्दू वेदों को ईश्वरकृत मानने वाला भी हिन्दू और न मानने वाला भी हिन्दू, द्वैतवादी भी हिन्दू, अद्वैतवादी भी हिन्दू। सारांश यह है कि यदि आप हिन्दू के लक्षण करना चाहें तो अतिव्याप्ति अव्याप्ति और असम्भव इनमें से किसी न किसी दोष में अवश्य ही फंस जाइयेगा। आज कल हिन्दू नेताओं के समक्ष यह एक भारी और

जटिल समस्या है कि हिन्दू किसको समझा जाय। हम यहा तीन लक्षण देते हैं —

(१) सर राधाकृष्ण हिन्दू धर्म को—"a process not a result, a growing tradition, not a fixed revelation बताते हैं। अर्थात् हिन्दूधर्म कोई निश्चित और अपरिवर्तन शील परिणाम नहीं है किन्तु एक निरन्तर विकसित होने वाली चीज है जो दिन प्रतिदिन उन्नति को प्राप्त हो रही है। (Vide Hindu view of Life)

(२) श्रीयुत डी० एस० शर्मा (D S Sharma) लिखते है कि Hinduism is more a League of Religions than a single religion with a difinite creed (Vide what is Hinduism ?)

(३) श्री विनायकराव सावरकर जी ने हिन्दू के निम्न लक्षण किये हैं —

आसिन्धु सिन्धु पर्यन्ता यस्य भारत भूमिका।
पितृभू पुण्य भूश्चैव स वै हिन्दु रिति स्मृत ॥

इन तीनों विद्वानों के लक्षणों को पढ कर आपको ज्ञात होगा कि न केवल इनका समन्वय ही कठिन है किन्तु किसी हिन्दू के लिये अपने जीवन का ऐसा पुरोगम निश्चित करना ही असम्भव है, जिसके आधार पर हिन्दू समाज को सगठित किया जा सके। लीडर प्रेस इलाहाबाद से एक पुस्तक निकली है जिसका नाम है Essentials of Hindusim, इसमे उस समय के २५ बडे बडे हिन्दू नेताओं और विद्वानों की सम्मतियां दी हुई है जिनका अवलोक मात्र ही पाठक को भूल भुलायों में डाल देता है।

सर जौन सीले (Sir John Sealey) ने अपनी पुस्तक Expansion of England में "facile comprehensiveness of Hinduism,' (अर्थात् हिन्दू धर्म की व्यापकता) पर टिप्पणी देते हुये कहा है कि "It has enfeebled it as a uniting principle and rendered it incapable of generating true national feeling अर्थात् ऐसी व्यापकता ने हिन्दू धर्म को इतना निर्बल कर दिया है कि इससे न तो सगठन हो सकता है और न सच्चे देश प्रेम के भाव उत्पन्न हो सकते हैं Sir Herbert Risley (सर हर्बर्ट रिजले) ने ठीक ही कहा था कि

'The flame of patriotic enthusiasm will not readily arise from the cold grey ashes of philosophic compromise, and that before Hinduism can inspire an active sentiment of nationality, it will have to undergo a good deal of stiffening and consolidation '

(Vide ' The people of India by Herbert Risley 1904 Pag 280)

'अर्थात् दार्शनिक समझौते की ठडी राख से देशभक्ति का जोश उत्पन्न नहीं हो सकता और जब तक हिन्दूधर्म मे पर्याप्त निश्चितता नही आती उस समय तक जातीयता का रचनात्मक भाव उत्पन्न होना असभव है।"

ऋषि दयानन्द का विश्वास था कि वर्तमान हिन्दूधर्म वैदिक धर्म का एक निकृष्टतम विकृत

रूप है जिस को एक प्रकार की गड़बड़ झाला कहना चाहिये। इसी गड़बड़ झाला को मिटाकर वैदिक धर्म का निश्चित रूप संसार के समक्ष लाना ऋषि का मुख्य उद्देश्य था। आर्य्य समाज के दस नियम इसी उद्देश्य की पूर्ति रूप निर्माण हुये हैं।

पहले दो नियम ईश्वर सम्बन्धी हैं और वेदान्त दर्शन के दो सूत्रों—अर्थात् जन्माद्यस्ययत और शास्त्रयोनित्वात् की व्याख्या रूप हैं। अर्थात् ईश्वर न केवल संसार की रचना, पालन और संहार ही करता है किन्तु वह ज्ञान का आदि स्रोत भी है। इन नियमों से तीन बातें सिद्ध होती हैं (१) आर्य समाज एक धार्मिक संस्था है, (२) आर्य समाज एक आस्तिक संस्था है (३) आर्य्य समाज एक—ईश्वर—वाद का प्रतिपादन करता है। इन तीनों विशेषताओं का दावा अन्य धर्मावलम्बी भी कर सकते हैं, इस्लाम और ईसाई धर्म यही कहते हैं। परन्तु आर्य समाज की आस्तिकता और इन धर्मों की आस्तिकता मे बहुत बड़ा भेद है। आर्य्य समाज के दूसरे नियम मे ईश्वर के जो गुण कर्म और स्वभाव बताये गये हैं वह वास्तव मे आर्य्य समाज के सिद्धान्तों की ही विशेषता है। ईश्वर निराकार अनादि, अपरिवर्तनशील, कभी अवतार न लेने वाला, न्यायकारी और दयालु है। यदि इनका विश्लेषण किया जाय (देखिये सत्यार्थप्रकाश समुल्लास ७ और ११) तो स्पष्ट हो जायगा कि आर्य समाज का ईश्वर एक निरकुश राजा के समान नहीं है जो जो चाहता है वही करता है या कर सकता है। अथर्ववेद में ईश्वर के भाव को इस प्रकार स्पष्ट किया है:—

यो विद्यात् सूत्र वितत, यस्मिन्नोता प्रजा इमा।
सूत्र सूत्रस्य यो विद्यात्, स विद्याद् ब्राह्मणं महत्॥

अर्थात् बडे ब्रह्म को वही ठीक ठीक समझता है जो उस सूत्र को जानता है जिसमें यह प्रजा ओत प्रोत है और जो उस सूत्र के भी सूत्र को जानता है। अर्थात् ब्रह्म क्या है? ब्रह्म वह बड़ा सूत्र (that great principle) है जिसमें समस्त सृष्टि ओत प्रोत हैं। ब्रह्म के इस लक्षण से तो किसी वैज्ञानिक (scientist) को भी इनकार नहीं होना चाहिये क्योंकि साइंस का काम ही उस महान् सूत्र (great principle) की खोज करना है जिसके आश्रित समस्त जगत् ठहरा हुआ है, छोटे छोटे वैज्ञानिक नियमों से लेकर अधिक व्यापक नियमों की खोज लगाना साइंस का उद्देश है और यदि नियमों के नियम, महानियम, सूत्रों के सूत्र महा सूत्र का पता लग गया तो यही साइंस की पराकाष्ठा है। यही आस्तिकता है जो आर्य समाज के सिद्धान्तों का आदि मूल है।

परन्तु इसके साथ ही आर्य समाज की एक विशेषता और है। ब्रह्म शास्त्र की योनि है और समस्त ज्ञान का आरम्भ ईश्वर की ओर से होता है। विज्ञान का मूल क्या है इसके विषय में विद्वानों ने बहुत ही ऊहापोह की है। बहुत सी ज्ञान-प्रतिपत्तियां (theories of knowledge) निर्धारित की गई हैं परन्तु आर्य समाज का सिद्धान्त है कि आदि मनुष्यों को आदि सृष्टि में ईश्वर की ओर से जो ज्ञान आया उसी का नाम वेद है। जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम वेद,

महिला-जगत्

आर्य्य-समाज और नारी उद्धार

[लेखिका—श्रीमती चन्द्रावती जी एम ए बी टी बम्बई]

नारी की स्थिति सुधारने और उसका उद्धार करने में ऋषि दयानन्द तथा आर्य समाज का कितना महत्वपूर्ण भाग है इसका ठीक अनुमान करने के लिये आर्य समाज के जन्म से पूर्व स्त्रियों की स्थिति पर विचार कर लेना आवश्यक है।

(१)

ऋषि के जन्म के पूर्व का स्त्री जाति का इतिहास समाज द्वारा उस पर किये गये अत्याचारों की एक दु:ख भरी कहानी है। उस समय स्त्री का कोई व्यक्तित्व न था। उसका अस्तित्व ही पुरुष के लिये था। स्त्री मनुष्य नहीं पशु पक्षी के समान थी। कवि की भाषा में वह लता के सदृश थी जो स्वतन्त्र नहीं रह सकती थी, किसी न किसी आश्रय पर ही उसका निर्वाह था। स्मृतियों का भी यही दृष्टिकोण था—

पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने
रक्षन्तिस्थविरे पुत्रा न स्त्रीस्वातन्त्र्यमर्हति ॥

माता पिता के लिये वह महती चिन्ता का विषय थी और पति के लिये मनोरञ्जन का। घर में वह दासी थी और समाज मे वह थी पुरुष तथा स्त्री दोनों ही के कर्त्तव्यों का बोझा ढोने की मशीन। स्वर्ग दिखाने वाले पुत्र की जननी होकर भी स्वय नरकस्य द्वारम्' थी, स्त्री की जो ऊंची से ऊंची स्थिति थी वह शूद्र से बढ़कर न थी और स्त्री व शूद्र दोनों से मनुष्यत्व का अधिकार छीन लिया गया था। समाज की दृष्टि में वे दोनों पशुवत् थे। पशुओं के सदृश दोनों ही शिक्षा के अयोग्य समझ लिये गये थे। दफ्तर में जाकर काम करने वाले तथा रुपया कमा कर लानेवाले पुरुष के लिये शिक्षा आवश्यक है। किन्तु घर में बैठकर खाना पकाने वाली तथा बच्चे पालनेवाली स्त्री के लिये शिक्षा की क्या आवश्यकता ? स्त्री को शिक्षा देना केवल उसको उच्छृङ्खल बनाना है। यह था उस समय के उदार से उदार विचार रखने वाले व्यक्तियों का दृष्टिकोण। इस सकुचित दृष्टिकोण के कारण गार्गी, सीता, सावित्री की सन्तान कुछ ही समय में निरक्षरा बन बैठी थी। "विद्या

(पृष्ठ ६६ का शेष)

अथर्ववेद के नाम से विख्यात है। तीसरे नियम में इसका प्रतिपादन करके ऋषि दयानन्द ने सिद्धान्तों की अनिश्चितता को सर्वथा दूर कर दिया। वेद स्वत प्रमाण हैं। अन्य ग्रन्थ परत प्रमाण है।

(शेष अगले अङ्क में)

विहीन पशुभि समान—विद्या से विहीन रक्खी गई नारी अन्त मे सारे मनुष्योचित गुणों से वचित हो गई।

पुरुष की स्वार्थमयी योजना का अन्त यहीं न हुआ। यह और आगे बढी। स्त्री घर की चार-दीवारी के अन्दर बन्द करदी गई। घर और बाहर के व्यक्तियों से उसका सम्पर्क निषिद्ध करके उसके मस्तिष्क पर ताला लगा दिया गया। उसकी बुद्धि का विकास बिल्कुल रुक गया। परदे की कुप्रथा ने स्त्री के पतन की योजना का दूसरा अध्याय समाप्त किया।

स्त्री का मानसिक विकास 'अविद्या' तथा 'पर्दे' ने रोक दिया था, उसका शारीरिक विकास रोकने के लिये 'बालविवाह' की प्रथा प्रारम्भ हुई। यदि दसवें वर्ष कन्या का विवाह न किया किया जाये तो माता, पिता व भाई तीनों ही नरक के भागी बनेंगे—इस प्रकार के मन गढन्त विचारों का खूब प्रचार किया गया। माता-पिता नरक स बचे हों या न बचे हों किन्तु बेचारी कन्या को जीते जी नरक में डाल दिया गया। दुधमुही बालिका ससुराल मे जाते ही 'पत्नी' का और कुछ दिनों बाद 'माता' का पार्ट खेलती नजर आने लगी। बाल विवाह स्त्री की मानसिक तथा शारीरिक उन्नति पर भयङ्कर वज्रपात था। 'मन' तथा 'शरीर' दोनों की अनमोल पूजी को खोकर स्त्री कुछ ही दिनों में दिवालिया बन बैठी।

विवाह जब ७-८ साल की आयु में होने लगे तो वर चुनने का अधिकार स्वय ही माता-पिता के हाथ में पहुँच गया। उपयुक्त वर ढूढने के कष्ट से बचने के लिये और कहीं २ स्वार्थ से प्रेरित हो माता-पिता कन्याओं को बूढे और कैसे भी अयोग्य वरों के गले बाधने लगे। इस प्रकार अन-मेल विवाह की प्रथा चल पड़ी। इन्हीं कारणों से कहीं कन्या को बेचा जाने लगा तो कहीं वर को खरीदा जाने लगा जिससे 'दहेज' जैसी भयकर प्रथाओं का प्रारम्भ होगया।

बाल विवाह ने अपने ही सदृश भयङ्कर एक और प्रथा को जन्म दिया। यह थी 'विधवाओं की समस्या'। बाल विवाह अनमेल विवाह ने मिल कर बाल विधवाओं की समस्या को करोड़ों तक ला पहुँचाया।

विधवा का समाज में कोई स्थान न रहा। उसका दर्शन मात्र अशुभ माना जाने लगा। घर वालों की आखों मे वह काटे के समान खटकती थी। एक ओर पति वियोग की असह्य पीडा दूसरी ओर घरवालों का निर्दयतापूर्ण व्यवहार। विधवा का जीवन असह्य हो उठा। फिर भी उसकी आहें क्रूर समाज के पाषाण हृदय का द्रवित न कर सकीं। विधवा को जीवित रहने का अधिकार नहीं, उसको जीवित रहने देना ही जैसे उस पर अपार अनुकम्पा करना है यह विचार धारा उस समय समाज के अन्दर काम कर रही थी। विधवा नारी ने अपमानित जीवन का अन्त करने के लिये 'पुनर्विवाह' का अधिकार चाहा। किन्तु उसकी माग ठुकराई गई। समाज ने नारी को अपनी रक्षार्थ नारीत्व बेचते देखा किन्तु वज्र हृदय फिर भी न पसीजा। वेश्या, नारी का कलुषित रूप है। समाज ने स्त्री का वेश्या बनाना सहन किया किन्तु उसका शासन-विधान स्त्री के लिये बदल न सका। हा पुरुष ने अपने लिये उसे

कितनी ही वार बदला। पुरुष को पत्नी के मर जाने पर एक नहीं अनेक विवाह करने की आज्ञा थी और केवल मर जाने पर ही नहीं स्त्री के जीते रहने पर भी पति को दूसरी शादी करने का अधिकार था।

पुरुष ने अपने लिये एक नये शासन विधान की रचना की थी। इसके अनुसार उसने 'अधिकार' अपने पास रखे, और 'कर्त्तव्य' स्त्री पर लाद दिये थे। पुरुष के जीवन का ध्येय था आनन्द करना, मौज उड़ाना। स्त्री के जीवन का उद्देश्य था—कर्त्तव्य पालन, सेवा, तपस्या और त्याग। पुरुष तो अधिकार पाकर भूल ही गया था कि स्त्री भी मनुष्य है। वह तो उसे समझ बैठा था एक ऐसा 'यन्त्र' जिसके अन्दर आत्मा न हो, किन्तु पुरुष की इच्छाओं को क्रियात्मक रूप देने की खूबी हो। स्त्री ने भी पुरुष की कल्पना को वास्तविकता का रूप दे दिया। पुरुष ने उसको दासी बनाना चाहा था, वह अपनी सम्पूर्ण इच्छाओं का त्याग करके पूरी तरह से उसकी दासी बन गई। पुरुष ने उसे कुल की मान-मर्यादा की रक्षिका बनाना चाहा था, स्त्री ने अपनी समस्त मानवी इच्छाओं का बलिदान करके भी पति के कुल की मर्यादा की रक्षा की। स्त्री ने, इस आशा से कि उसका आत्म समर्पण उसे पुरुष की आखों में ऊचा उठा देगा उसकी इच्छा मात्र पर अपने अधिकार, अपनी अभिलाषायें और अपनी आत्मा तक का बलिदान कर दिया। किन्तु सर्वस्व बलिदान करके भी उसे अपने उद्देश्य मे सफलता न मिली। उसकी स्थिति समाज मे पहले की अपेक्षा भी नीची हो गई। उसकी सहिष्णुता, त्याग आदि गुण उसकी कमजोरिया समझ लिये गये। स्त्री से अधिकार तो पहिले ही छिन गये थे। अब त्याग के प्रवाह में बह कर स्वावलम्बन, आत्माभिमान, आत्म विश्वास आदि गुणों से स्त्री स्वय हाथ धो बैठी।

(२)

जिस समय ऋषि दयानन्द आये उस समय तक स्त्री जाति इसी अध पतन की अवस्था मे थी। वह अपमानित तथा पददलित हुई निष्प्राण और निश्चेष्ट होकर पड़ी हुई थी। न जाने कब तक और वह इसी प्रसुप्त अवस्था में रहती यदि ऋषि दयानन्द इसका भाग्य सूर्य बनकर आ न जाते और अपनी प्रकाश रश्मि द्वारा इसे जगाने का प्रयत्न न करते।

ऋषि का हृदय नारी की अधोगति देखकर तड़प उठा। गृह लक्ष्मी दासी बनी हुई थी, माता सविका, और पति की सहचरी केवल उसके मनोविनोद का खिलौना। स्त्री पर होते इन अत्याचारों को देखकर ऋषि की आत्मा तड़प उठी नारी का पुनरुद्धार, उनके विशाल सुधार-कार्य का एक अग बन गया। हिन्दू-जाति की अवस्था भी उस समय स्त्री की दशा से कुछ अधिक अच्छी न थी। अत्यन्त भयकर कुरीतियों का ग्रास बनी यह जाति मृत्यु की अन्तिम घड़िया गिन रही थी। जिस जाति का आधा हिस्सा निष्प्राण पड़ा हो वह जाति मरणासन्न न हो तो क्या हो? जाति के उद्धार की प्रथम सीढ़ी नारी-उद्धार है—यह सब कुछ ऋषि की सूक्ष्म दृष्टि ने देखा।

ऋषि ने देखा कि निरक्षरा भारतीय नारी

अपने 'पत्नी' और 'माता' के कर्त्तव्यों को किसी भी प्रकार पूरा नहीं कर सकती, जबतक कि वह सुशिक्षित न हो। अत सबसे प्रथम उन्होंने विद्या पढ़ने का अधिकार जो उससे छीन लिया गया था, पुन स्थापित किया।

"यथेमा वाच कल्याणी मावदानि जनेभ्य ब्रह्मराज न्याभ्या ँ शूद्राय चार्याय चारणाय च स्वाय।"

यजु० २६। २

इत्यादि वेदों से प्रमाण देकर उन्होंने सिद्ध किया कि स्त्री को सब विद्यायें समान रूप से पढ़ने का अधिकार है। उस समय कन्या को यज्ञोपवीत का अधिकार न था। ऋषि ने स्त्री को पुन यज्ञोपवीत का अधिकार देकर धार्मिक तथा अन्य क्षेत्रों मे उसे पुरुष के समान स्थान दिया।

बालविवाह की प्रथा, जो जाति की दुर्बलता उसकी बढ़ती हुई मृत्यु सख्या तथा अनेक व्याधियों का कारण था, उसका भी ऋषि ने घोर विरोध किया। गृहस्थ को भली प्रकार चलाने और स्वस्थ तथा बलवान् सन्तान उत्पन्न करने के लिये यह आवश्यक है कि कन्या का बचपन मे विवाह न होकर युवावस्था में विवाह हो—इस वेदोक्त मत का ऋषि ने प्रतिपादन किया—'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम्।' उस समय कन्या को अपना वर स्वय चुनाने का अधिकार न था। माता पिता अपनी इच्छा से ही कन्या का विवाह कर देते थे। विवाह सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार पूर्णतया माता पिता के हाथ में चले जाने के कारण ही अनमेल विवाह तथा दहेज जैसी भयकर प्रथाओं का जन्म हुआ था। ऋषि दयानन्द ने कन्या को विवाह सम्बन्ध में अपनी सहमति देने का अधिकार देकर उपरोक्त कुरीतियों के निराकरण का प्रयत्न किया।

उस समय की 'विधवा' की स्थिति ने भी ऋषि को व्यथित किया, विधवा पर होने वाले अगणित अत्याचारों को देखकर उनका हृदय द्रवित हो उठा। उन्होंने बाल विधवा' का पुनर्विवाह धर्म तथा परिस्थिति के अनुकूल बताया। उन्होंने यह भी कहा कि साधारणतया पुनर्विवाह जिस प्रकार स्त्री के लिये त्याज्य है उसी प्रकार पुरुष के लिये भी वह वर्जित है। पुरुष ने जो उस समय अपने लिये एक भिन्न आचारनीति बनाई हुई थी उसका ऋषि ने खण्डन किया और स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिये एक ही माप दण्ड तथा शासन-विधान निर्मित किये जाने का आदेश दिया।

उस समय स्त्री की स्थिति बहुत नीचे गिर चुकी थी। अपने सम्पूर्ण अधिकार तथा दिव्य गुणों का पुरुष की खातिर बलिदान कर नारी अत्यन्त अन्धकारमय जीवन बिता रही थी। स्त्री की स्थिति पुरुष के समान है— इस सिद्धान्त का ऋषि ने प्रति पादन किया। यद्यपि स्त्री का कार्य पुरुष से भिन्न है, फिर भी जीवन में उसका स्थान पुरुष से किसी अ श मे नीचा नहीं। शरीर के अन्दर जो स्थिति मस्तिष्क तथा हृदय की है वही स्थिति जीवन में पुरुष तथा स्त्री की है। हृदय व मस्तिष्क दोनों का कार्य भिन्न २ होते हुये भी शरीर का स्वास्थ्य रखने के लिये वे समान रूप से आवश्यक हैं। इसी प्रकार स्त्री व पुरुष के कार्य क्षेत्र भिन्न होते हुये भी उनका कार्य गृहस्थ जीवन की गाड़ी का ठीक से चलाने के

लिये समान रूप से महत्व पूर्ण है। स्त्री व पुरुष की स्वाभाविक भिन्नतायें उनकी विशेषतायें है, उनकी खूबियां है, और वे एक दूसरे की विरोधिनी होने के स्थान में एक दूसरे की पूरक है। यह दृष्टि कोण ऋषि दयानन्द ने पहिली बार समाज के सामने रखा और नारी के प्रति प्रचलित तुच्छ तथा सकुचित दृष्टिकोण मे एक क्रान्तिकारी परिवर्तन उत्पन्न किया।

ऋषि दयानन्द ने स्त्री की समस्याओं पर निष्पक्ष भाव से विचार किया। यही कारण था कि अपने जीवन काल मे ही वे नारी जगत् में एक नवीन युग की स्थापना कर सके। यदि उन्हे भारत मे नारी-जागरण का प्रवर्त्तक कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। ऋषि दयानन्द वैदिक आदर्शों के अनुसार नारी जाति का उद्धार करना चाहते थे। उनके विचार से स्त्री अपने ईश्वर प्रदत्त गुणों का विकास करके ही अपना महत्वपूर्ण सहयोग दे सकती है। इस समय जो पश्चिम मे नारी-जागरण की लहर चली हुई है उसके अनुसार नारी का उद्देश्य नारीत्व को समूल नष्ट करके पुरुष बन जाना है। नारी सब बातों मे पुरुष का अन्धानुकरण कर रही है। वह अपना कार्य क्षेत्र बदलने के साथ, अपनी वेशभूषा, अपने आमोद प्रमोद के तरीके, अपना व्यवहार और अपना स्वभाव तक पुरुष-का सा बनाने का यत्न कर रही है। वह पुरुष की दूसरी 'प्रति'—'कोपी'— बनती जा रही है। ऋषि दयानन्द ने जो वैदिक आदर्श स्त्री के सामने रखा वह यह था कि नारी अपने नारीत्व का विकास करके ही मानव जाति का अधिक से अधिक उपकार कर सकती है नारीत्व त्याग कर नहीं। नारी पुरुष की पूरक है। इस लिये दोनों मिल कर ही मानव जाति को उन्नत के उच्चतम शिखर पर पहुँचा सकते है। यह उच्चकोटि का दृष्टिकोण ऋषि ने भारतीय स्त्री के सामने रखा था। यह वैदिक आदर्श भारतीय स्त्री के लिये प्रकाश स्तम्भ है जो सदैव उसका मार्ग प्रदर्शन करता रहेगा। भारतीय शिक्षिता नारी जो इस समय पश्चिमी आदर्शों की चमक-दमक के प्रभाव में कुछ पथ विचलित सी हो रही है, उसे अन्त में जाकर इसी प्रकाश-स्तम्भ का आश्रय लेना पड़ेगा।

(शेष अगले अङ्क में)

धार्मिक चर्चा

विद्या-अविद्या का विवेचन

[लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०,]

[खेद है कि इस विषयक चर्चा बढती चली जा रही है किन्तु श्री प० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय जैसे आर्य जगत् के मान्य सुप्रसिद्ध विचारक के इस विचार पूर्ण लेख को न प्रकाशित करना अनुचित समझ कर हमने यहा स्थान दिया है आशा है विद्वान् महानुभाव निष्पक्षपात होकर इस विषय का विवेचन करेंगे। हम अपने विचार अगले अङ्क में प्रकट करेंगे। —सम्पादक]

इस शीर्षक का एक लेख सार्वदेशिक के मार्च ४३ के अक मे छपा है जिसके लिखने वाले हैं श्री प० वीरेन्द्रजी विद्यावाचस्पति, साहित्याचार्य, तीर्थ चतुष्टय, एम० ए० आचार्य कुरुकुल वैद्यनाथ-धाम। इसमें मेरे लेख पर आपत्ति उठाई गई हैं। मैने उस लेख को आदर, श्रद्धा और सावधानी के साथ पढा। लेख अनेक उत्तम बातों से परिपूर्ण हैं जिनमें अधिकाश से मेरा या किसी अन्य विचारशील पुरुष का कोई मतभेद हो ही नहीं सकता परन्तु जिस विषय पर विवाद है उसस तो इसकी सगति नहीं मिलती। साराश यह है कि लेख उत्तम है परन्तु मेरे लेख का उत्तर नहीं है। मै एक वाक्य को उद्धत करता हूँ —

(१) "क्या मुक्ति का मार्ग बताते यह सम्भावना को जा सकती है कि उपनिषद् अपनी सारी पूर्व शृंखला भूलकर कर्म को मुक्ति का साधन नहीं बतायेगी।

(२) "यदि नहीं, तो स्पष्ट हो जाता है कि अविद्या से कर्मोपासना का ही तात्पर्य है।" मै विद्वान् लेखक से प्रार्थना करूगा कि इन दोनों वाक्यों की सगति पर विचार करें। मुझे पहले वाक्य से विरोध नहीं। परन्तु दूसरा वाक्य पहले वाक्य के आश्रित कैसे हो गया? प्रश्न अविद्या के अर्थों पर था। मुझे इस बात से इनकार नहीं कि कर्म मुक्ति का आवश्यक साधन है। इसी बात पर आपने सारे लेख में बडा बल दिया है। परन्तु इतने से 'अविद्या' का अर्थ 'कर्मोपासना' कैसे हो गया। क्या कर्म पर बल देने के लिये उपनिषद् के अन्य वचन पर्याप्त नहीं हैं? इसमें सन्देह नहीं कि शङ्कराचार्य जी ने अविद्या का अर्थ कर्म किया है। मैंने इस बात को पहले भी स्वीकार किया है। परन्तु शङ्कराचार्य का दार्शनिक मत कर्म को अविद्या मानता है। वे केवल 'अविद्या' शब्द का अर्थ ही कर्म नहीं लेते अपितु समस्त कर्म काण्ड को अविद्या अर्थात् मिथ्या ज्ञान मानते हैं (देखो चतु सूत्री का भाष्य)। यही कारण है कि उन्होंने या उनके अनुयायियों ने गीता या उपनिषदों का भाष्य करते हुये 'अविद्या' से 'कर्म' का तात्पर्य लिया। परन्तु मेरा प्रश्न तो यह है कि आप किसी वेद, किसी उपनिषद् अथवा गीता में अविद्या शब्द का प्रयोग 'कर्म' के अर्थ में दिखावें। आपने एक हवाला दिया है कठोपनिषद्

का वह बड़े मजे का है। मैं तद्वत् उद्धृत करता हूँ—

(१) "इसी प्रेय और श्रेय की उपनिषद् ने 'अविद्या' और विद्या' संज्ञा की है"

(२) "अर्थात् कर्मकाण्ड 'अविद्या' है और ज्ञान काण्ड 'विद्या' है।" मैंने बहुत विचार किया कि कहीं 'अविद्या' का अर्थ कर्म काण्ड मिल जाय' परन्तु नहीं मिला। यदि पाठक गण को दिखाई देता है तो मैं उनसे झगड़ूंगा नहीं, अपनी दृष्टि को दोष दे लूंगा। परन्तु मैं स्पष्ट कहता हूँ कि मुझे नहीं दीखता, कठोपनिषद् मे तो 'प्रिय' और 'प्रेय' का आचरण अविद्या अर्थात् मूर्खता मूलक है। और श्रेय का विद्या अर्थात् ज्ञान मूलक। क्या इसी 'प्रेय' को आप कर्मकाण्ड कहेंगे और क्या इसी प्रेय रूपी कर्म को आप मुक्ति का साधन मानेंगे। मुझ से यदि धृष्टता हो जाय कि मैं कहूँ कि आपके इन दोनों वाक्यों मे कुछ भी समन्वय नही है तो आप क्षमा करें। मैं तो परस्पर विरोध देख रहा हूं। इसी प्रकार अपरा विद्या को आपने अविद्या मान लिया। आप मानलें जो चाहे मानलें परन्तु अविद्या का अर्थ कर्म कैसे हो गया?

आप का प्रश्न यह है कि 'अविद्या' के साथ ज्ञान की अनुवृत्ति मन्त्र मे कहा से आगई। परन्तु मन्त्र तो स्पष्टतया देता है —

"विद्या अविद्या च यस्तद्वेद"। जो 'विद्या और अविद्या' को जानता है। 'वेद' तो स्पष्ट पड़ा है। इसका अर्थ आप क्या करेंगे? विद्या को जानना और अविद्या को जानना यह तो साफ है। ऊपर के दोनों मन्त्रों में 'वेद' शब्द नहीं आया तो क्या हुआ? हैं तो तीनों मन्त्र सयुक्त और इनका अर्थ सयुक्त ही करना पड़ेगा। अन्यथा 'वेद' शब्द निरर्थक हो जायेगा। इस प्रकार के प्रयोग सभी साहित्यों मे मिलते हैं और वेद में भी मिलेंगे।

आपने लिखा है कि 'दार्शनिक रूप मे विवेचन करने पर तो यह अर्थ सर्वथा अनावश्यक है'। 'अविद्या का अविद्या (मिथ्याज्ञान) के रूप मे ज्ञान तो विद्या ही है'। परन्तु आपने शायद मेरे आशय को नहीं समझा। मेरा सकेत एक और दार्शनिक प्रश्न की ओर था। मुझे वेद मन्त्र का तात्पर्य यह प्रतीत होता है कि वहां विद्या क्या है'? और अविद्या क्या है?' इन दोनों प्रश्नों के ज्ञान से सम्बन्ध है। कहेंगे तो इसको ज्ञान ही परन्तु एक है ज्ञान विद्या की प्रकृति के विषय का और दूसरा है ज्ञान अविद्या की प्रकृति के विषय का। हैं तो दोनों ज्ञान ही, परन्तु उनके विषय भिन्न भिन्न हैं। Philosophy of knowledge अर्थात् विद्या की मीमासा और Philosophy of Error अर्थात् अविद्या की मीमासा दो अलग २ चीजें हैं। 'Philosophy of Error' का ज्ञाता मूर्ख नहीं किन्तु ज्ञानी है। वह समझता है कि मूर्खता कैसे आती है कैसे ठहरती है और कैसे जाती है। इसी ज्ञान से वह उन बातों से बच सकता है जो मृत्यु के दुःख का कारण है। इसी को "मृत्यु तीर्त्वा" कहा गया है। Knowledge of Error is knowledge and not ignorance" (अविद्या की मीमासा विद्या है अविद्या नहीं)।

मुझे एक भी प्रमाण साहित्य का नहीं मिला जहाँ 'अविद्या' का अर्थ कर्म लिया गया हो।

श्री शङ्कराचार्य का उदाहरण असगत है, क्योंकि वे तो सभी 'कर्म' को अविद्या या अविद्या जन्य मानते हैं और उसको मुक्ति के लिये आवश्यक नहीं समझते। यदि किसी ने इसी धोखे मे यह अर्थ ले लिया तो भूल की।

अच्छी अच्छी बातें, मन को लुभाने वाली बातें, मीठी मीठी बातें, हितकर बातें, कल्याणप्रद बातें सब अच्छी हैं परन्तु जो विवादास्पद विषय के अनुकूल नहीं उनका सम्मिश्रण कहा तक समीचीन है यह बताने की आवश्यकता नहीं।

पुनश्च —

बृहदारण्यक उपनिषद् मे 'अन्धन्तम' इत्यादि मन्त्र के साथ ही साथ 'अनन्दा नाम ते लोका' इति मन्त्र है, देखिये ४।४।१०-११। वे दोनों मन्त्र इस प्रकार दिये हुये हैं —

अन्धन्तम प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ विद्याया रता ॥ १० ॥

अनन्दा नाम ते लोका अन्धेन तमसावृता। ता ्ँ स्ते प्रेत्याभिगच्छन्त्यविद्वा ्ँ सोऽ बुधो जना ॥ ११ ॥

यहाँ 'अविद्वास' और 'अबुध' शब्द कर्मकाण्डयों के लिये प्रयुक्त नहीं समझा जा सकता। किन्तु अविद्वान्, अबुध, मूर्ख या अज्ञानियों के लिये ही। इन शब्दों का ठीक 'अविद्या' वाले मन्त्र के पश्चात् ही उद्धरण सिद्ध करता है कि 'अविद्या' शब्द का अर्थ यहाँ 'कर्म' नहीं किन्तु 'अज्ञान' ही है। इन दोनों मन्त्रों को मिला कर पढने से आशय ठीक निकल आता है। और व्याकरण सम्बन्धी तोड मरोड या खींचातानी की आवश्यकता नहीं रहती।" यह तो स्पष्ट ही है कि बृहदारण्यक के समय 'अविद्या' का अर्थ कर्मकाण्ड नहीं था। अल विस्तरेण

OPINION ON THE ATHARVAVEDIYA CHIKITSASHASTRA !

(By Dr B Bhattacharya M A P H D Rajyaratna Jnanajyoti)
Director Baroda State Oriental Institute

The diseases of the world, like the Brahma, are without a beginning or an end, and the Vedas will be no Vedas if they do not take this subject into consideration and start a line of treatment which would ultimately lead to a well established medical system Pandit Priyaratna Arsha has shown in his remarkable book in Hindi Atharva Vediya Chikitsashastra how medical treatments of all varieties were developed in the Atharva Veda when the modern medicine was in the womb of obscurity

The medical system advocated in the Atharva Veda is complete by itself and embraces practically all the latest developments in the Naturopathy Hydropathy Chromopathy, and the like The author has ably proved that the Atharva Veda had developed not only the treatment of diseases and accidents by ordinary means known to us in modern times but also formulated such methods as we may have again to adopt in the future

The Atharva Veda prescribes oblations of clarified butter in fire with various leaves flowers etc for the removal of chronic diseases surgical operations for injuries received in accidents and wars and incantations of Mantras and suggestions in intractable nervous disorders The Atharva Veda was also conversant with various Rasayanas or rejuvenators in order to keep the body entirely free from ailments so that every one could live a vigorous healthy life Such prescriptions as are given on the subject will never become old and out of fashion, as it happens in Western medicine According to the author sanitoriums and hospitals both for men and animals were not unknown even in this early period and what is strange even the Tridosha theory was not a new discovery in the Atharva Veda

Pt Priyaratna has displayed considerable skill and scholarship in identifying a large number of obscure botanical terms used in the Atharva Veda and thus made the sense of many an unmeaning verses intelligible by his forceful and scholarly interpretation With the help of his extensive knowledge of

the Nighantu, Charaka and Sushruta he has made it clear that the system of Ayur Veda was only a continuation of the Atharvanic tradition

Much can be said in praise of the book which can hardly be adversely criticised It is always a pleasure to read his books, especially on technical subjects But this work is a great work, and the author's clear conception, clearer vision and the clearest expression leave nothing to be desired I only wish in conclusion that Pandit Priyaratna Arsha may live long to continue his labour of love, and produce such original works of immense value to humanity

---

VEDIC DHARMA, RISHI DAYANANDA & ARYA SAMAJ

(Address of Shri Pandit Ganga Prasadji M A Retired Chief Justice, President Sarvadeshik Sabha at the 3rd South India Aryan Conference held at Bangalore on 28/12/1942)

Continued from the last issue

Educational work of Aryasamaj

The activities of the Aryasamaja in the educational field are well known This should not be surprising, for the Vedas are the basis of our religion, and the word *Veda* itself means *knowledge* being derived from the root *Vid* to know, like the word *Vidya* Accordingly one of the ten principles of the Aryasamaj is that we should dispel ignorance (*Avidya*) and promote knowledge (*Vidya*)

The following figures showing approximately the number of institutions maintained by Arya samajes will give some idea of our educational work —

1	Degree colleges	6
2	Other colleges	8
3	High schools	over 100
4	Middle and Primary schools	150
5	Gurukulas and their branches	50
6	Sanskrit and Hindi Pathashalas	100
7	Kanya Gurukulas	5
8	Girls' colleges	3
9	Girls' schools	250
10.	Rescue homes for widows	50

11	Orphanages	30
12	Night schools	80
13	Schools for depressed classes	350

Influence of Aryasamaj on Hindu Society

The work achieved by the Aryasamaj shoud not however be judged merely by the above figures or the numbers of Aryasamajists Its invigorating ond healthy influence has permeated and elevated the entire Hindu Society In North India especially where the number of Aryasamajes is larger, the Sanatanists have accepted nearly the whole of our social reform work For example there is now absolutely no hostility to female education (which was bitterly opposed during the early life of the Aryasamaj) On the other hand many girl schools are now maintained or supported by Sanatan Dharma Sabhas Early marriage no longer finds any support and the Sanatan Dharma Maha Mandal has established at Hardwar a *Rishikula* on the lines of our *Gurukulas* Even in the work of reconversions or *Shuddhi*, and the elevation of the depressed classes, our Sanatanist brethren generally work shoulder to shoulder with the Aryas This is all to the credit of the Aryasamaj

Political Awakening

In these days great importance is attached to political reforms, though all thoughtful people will admit that religious and social reforms must precede political progress, and are therefore of greater importance It should, however, be not forgotten that the credit for the beginning of political awakening which we find throughout the country is due chiefly to Rishi Dayananda Even before the Indian National Congress was established in 1885 the Rishi had in the second edition of his celebrated book *Satyarthaprakash* laid down the principle that no foreign rule, however just or well conducted it may be, could be a substitute for Home Rule I should however make it clear that it has been the established policy of the Aryasamaj from the beginning that as a body it will take no part in active politics, but it gives full freedom to its members to join or take part as individuals in any political organisation according to their liking.

Revival of Vedas

The greatest and most important service rendered by Swami Dayananda to mankind is that he revived the Vedas and rescued them from the oblivion to which

they had been consigned for ages. The Vedas are theoretically believed to be of supreme authority in matters of religion by all Hindus. But before the advent of Swami Dayananda most of them did not know even their names and it was not possible for even Sanskrit scholars to see them for they were not allowed to be printed and it was considered a heinous sin or sacrilege that any Shudra should touch them which could hardly be prevented if they were printed. A few Brahmins had manuscripts of them kept in their houses. When Swami Dayananda Saraswati began to write his commentary on the Vedas he had to send for a copy of the Vedas edited by Max Muller and printed in England. We owe it to him that they are now easily accessible to everybody. The Vedic press established by Swami Dayananda published some years ago the text of all the four Vedas priced at Rs 5/ only. Some other publishers similarly brought out cheap editions. Pandit S D Satvalekar the well known Vedic scholar and head of the Swadhyaya Mandal in Aundh District Satara has with much labour and care brought out a very correct edition of the Vedas for which he deserves great credit.

Study of Vedas

When it was so difficult to get copies of the Vedas a study of them was practically out of the question. South India was reputed to have many *Vedapathis* but *Veda Patha* meant only recitation of the Vedas and did not imply studying them with their meaning. In fact there was a saying that the meaning of the Vedas could not be understood in this degenerate age of *Kaliyuga*. It is no small credit to Swami Dayananda that you can now see even small children reciting and reading Veda Mantras with their meanings. Swami Dayananda could finish his commentary only on the whole of the *Yajurveda* and about two thirds of the *Rigveda*. The Arya Sahitya Mandal has published a translation of all the four Vedas in 14 volumes at a fairly cheap price. Pandit S D Satvalekar and his Swadhyaya Mandal have rendered good service in promoting a critical study of the Vedas.

Right of Shudras to study Vedas

It has been laid down in some *Smritis* of Puranic ideas that if a Shudra listens to a Veda Mantra molten lac or lead should be poured into his ears and if he recites it

his tongue should be cut out. Quite contrary to this, Swami Dayananda has proclaimed on the authority of the following verse of the Yajur Veda that the Vedas are meant for all human beings including the Shudras.

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ।
ब्रह्मराजन्याभ्याँ शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय॥
Yajur 26/2

"As I promulgate this word full of bliss for the good of all people, viz. Brahmins, Kshatriya, Vaisyas, Shudras and also menials—so you should inculcate them to all. And why should it be otherwise? God is the Father of all men. If the Veda is His Word and Work, why should not all his children be benefited by it? He has created water, air and light which are equally enjoyed by all human beings without any distinction. These things are necessary for their physical health and life, the knowledge of Veda is necessary for their spiritual advancement. It only stands to reason that no human being should be debarred from it.

Interpretation of Vedas

It is often alleged that Swami Dayananda has put his own arbitrary meaning into Veda Mantras by unduly straining the language. It is, therefore, necessary to discuss this question. I am glad that while dealing with this subject I shall be able to place before you the valuable opinion of Sri Aurobindo of Pondicherry who is not only a foremost Yogi but a profound Vedic scholar. He wrote several articles under the heading "The Secret of the Vedas"—in his well known Journal the *Arya* in 1914-16. They have been translated into Hindi by Swami Adhaydeva (late Principal of Gurukula Kangri) and are appearing in the *Vedic Dharma* edited by Pandit Satvalekar. Sri Aurobindo also wrote an article on 'Dayananda' and another on 'Dayananda and the Veda' which appeared in the Vedic Magazine published by Gurukula, Kangri in 1916.

I may at once state that Swami Dayananda's interpretation, though at variance with that of Sayana and with those of the European scholars who have generally followed Sayana is supported by the most ancient commentaries contained in the Shatapatha and other Brahmans, and also by Yaska whose *Nighantu* the oldest Vedic lexicon and whose *Nirukta* is the oldest Vedic commentary, next only to the Brahmanas.

An important canon of interpretation

The one important canon of interpretation which Sayana and other later commentators have generally ignored and which has been particularly stressed by Swami Dayananda is that the words contained in the Vedas are to be interpreted in their derivative or *Yaugika* sense *i e*, according to their root meaning, as Patanjali the author of ***Mahabhashya*** has stated —

नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम्, and नैगम रूढि भव हि सुसाधु।

For example the word India is derived from **इदि परमैश्वर्ये** root *idi* "to be strong or glorious It is, therefore, used in the Vedas sometimes in the sense of God, who is the repository of all strength and glory, sometimes in the sense of the sun, a king or mind or electricity according to the context On the other hand according to the orthodox interpretation it is the name of a particular deity Similarly the words *Agni, Vayu*, etc, which according to their derivative meanings are used in the Vedas sometimes to mean God and at other times to signify *air* or *fire* etc, are taken to mean other deities which are subordinate to Indra and live with him in a particular place called *Swarga* or *Devaloka* or heaven This shows how the disregard of the above mentioned rule makes the Vedas which teach monotheism and a scientific knowledge of physical forces, appear like a book teaching polytheism and mythology !

Canon supported by Max Muller and Sri Aurobindo

I may quote the views of Sri Aurobindo on this point —'Objection has also been made to the philological and the etymological method by which he (Dayananda) arrived at his results, especially in his dealings with the names of Godhead But this objection, I feel certain, is an error due to our introduction of modern ideas about language into our study of this ancient tongue We moderns use words as counters without any memory or appreciation of their original sense In early language the word was on the contrary a living thing with essential powers of signification, its root meanings were remembered because they were still used its wealth of force was vividly present to the mind of the speaker Our words are carefully limited to one or two senses, theirs were capable of a great

आर्य समाज का भावी कार्यक्रम

[लेखक—श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि

आर्य समाज का अन्तिम लक्ष्य निश्चित है इसका अन्तिम लक्ष्य मनुष्य मात्र को आर्य बनाना है। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" यह प्रत्येक आर्य हृदय की भावना है।

आर्य समाज का स्थायी का
है। यह उसके नियमों और ॰
रूप से सनिहित है। प्रचार द्वारा
को फैलाना और मनुष्यों के जी॰
आर्य समाज का ध्येय है। उसकी
आय समाज प्रचार के सब साध
जाता है।

लक्ष्य और स्थायी कार्य क्रम
होते हुये भी यह आवश्यक है कि
पर प्रचलित कार्यक्रम के सम्बन्ध मे
होता रहे, क्योंकि प्रचलित कार्य क्रम
स्थितियों के साथ गहरा सम्बन्ध है अ
फिस सन्देह हो सकता है कि परिस्थितिय
के साथ बदलती रहती है। जैसे मनुष्य प
काल का असर हाता है उसी प्रकार मनुष्य २
पर भी चारों ओर की दिशाओं से प्रभावित ॰
प्रत्येक परिवर्तन शील वस्तु का गुण है। सम
भी उससे नहीं बच सकता। इस कारण
आवश्यक है कि हम समय समय पर बदली हु
परिस्थितियों पर विचार करके अपने कार्यक्रम
को उनके अनुसार ही परिवर्तित करते रहे ऐसे
परिवतन मे काई दोष नहीं है। कायक्रम साधन
है, साध्य नहीं। साध्य तो हमारा लक्ष्य ही है।

इससे पूर्व भी आय समाज समय समय पर कार्यक्रम न परिवर्तन करता रहा है, यह हो सकता है कि यह परिवतन सोचविचार के अनन्तर

---

number and it was quite easy for them, if they so chose to use a a word like *Agni*, *Varuna*, or *Vayu* as a sound index of a great number of ideas, a key word (Article on *Dayananda* in V M of 1916)

Di Max Muller has also admitted this peculiar nature of the Vedic language and he says "But there is a charm in these primitive strains discoverable in no other class of poetry Every word retains some thing of its radical meaning every epithet tells every thought in spite of the most intricate and abrupt expression is if we once disentangle it, true correct and complet ' And he further adds Names are to be found in the Veda as it were in a still fluid state They never appear as *appellations*, nor yet as proper namos (Max Muller s *History of Ancient Sanskrit Literature* p 553 and 755)

(*To be Continued*)

गया हो प्रत्युत परिस्थि-
त ही हो गया हो। परन्तु
इसमें सन्देह नहीं। एक समय
ार के सर्वोत्कृष्ट साधन माने

माज के कार्य क्रम में शास्त्रार्थ
ा स्थान रह गया है, दूसरे युगमें
नर्माण और सचालन ही आर्य
ा का सबसे बड़ा उपाय समझा
त आज हमे यह मानना पडेगा कि
यें खालने का उत्साह मन्द पड़
आर्य समाज की प्रवृत्ति सस्थाओं
फिर बिस्तार की ओर जाने की हो

हम कार्यक्रम पर विवेचनात्मक दृष्टि
तो हमारे सामने कुछ सत्य उपस्थित होते
न से सबसे अधिक स्पष्ट और महत्वपूर्ण
ह है कि आर्य समाज का जो महत्वपूर्ण
सम्पूर्ण समाज में होना चाहिये था वह
बन पाया। यह मानी हुई बात है कि आर्य
ाज का सगठन बहुत मजबूत है, शायद उससे
ाक परिष्कृत प्रजातन्त्र विधान भारत वर्ष में
ारा नहीं है। आर्य समाज के प्रचारकों ने गत
ताब्दी मे अपने धर्म की खातिर जितने बलि-
दान दिये हैं उतने अन्य किसी सोसाइटी के
प्रचारकों ने नहीं दिये। आर्य समाज के अधि
काश सदस्य मध्यम श्रेणी के हैं। बहुत बडे धनी
अथवा रईस आर्य समाज मे बहुत कम हैं तो
भी आर्य समाज के रार्यों को कभी धन की
कमी नहीं रहती, इसका यह कारण है कि आर्य-
समाज में त्याग की भावना बहुत अधिक है। इन
सब विशेषताओं का यह परिणाम होना चाहिये
था कि आर्य जनता का कम से कम भारत वर्ष
की ही सार्वजनिक सस्थाओं मे सर्वोत्कृष्ट प्रभाव
होता। परन्तु हमें यह मानना पडेगा कि अपनी
परिधि के बाहर आर्य समाज का यथेष्ट प्रभाव
नहीं है। जाति की समस्यायें हल करने के लिये
जब देश के अगुआ इकट्ठे होते हैं तब वे आर्य
समाज को याद करना आवश्यक नहीं समझते।
आर्य समाज के असन्तोष से अभी लोगों ने
डरना नहीं सीखा विचार करना चाहिये कि
इसका क्या कारण है?

शक्ति और मान का अटूट सम्बन्ध है जिसके
पास शक्ति है ससार मे उसी का मान है वह
मनुष्य हो या समाज। यदि वह चाहे कि उसकी
बात का आदर हो और वह अपनी इच्छा पूर्ण
कर सके तो उसे शक्ति पैदा करनी चाहिये। यदि
आर्य समाज के प्रबल सगठन और असाधारण
त्याग के होते हुये भी उसकी आवाज में काफी
प्रभाव नहीं तो यह स्वीकार करना चाहिये कि
इसका कारण शक्ति की न्यूनता है।

प्रचार करनेवाली सस्थाओं मे शक्ति के दो
आधार होते हैं। एक गहराई और दूसरा फैलाव।
इसे हम नदी के दृष्टान्त से समझ सकते हैं।
नदी के बढे हुये प्रभाव मे कितनी शक्ति है इसका
अनुमान उसकी गहराई और उसके फैलाव से ही
लगाया जा सकता है। नदियों की तरह सोसाइ-
टियों की शक्ति भी गहराई और फैलाव इन दो
पर ही आश्रित रहती है।

समाज के कार्य की गहराई उसके सगठन की दृढ़ता पर आश्रित रहती है और सगठन की दृढ़ता समाज के सदस्यों की दृढ़ता और उनके परस्पर सम्बन्धों की दृढ़ता से मिल कर बनती है। किसी सोसाइटी के बाह्यरूप के पूरा होजाने से ही उसका सगठन पूर्ण नहीं हो जाता। बाह्य रूप तो केवल शरीर का ढाचा है। ढाचे को खड़ा रखने के लिये और ससार की चोटें सहने के योग्य बनाने के लिये आन्तरिक जीवन शक्ति की आवश्यकता होती है। दृष्टान्त के लिये किसी देश के राज्य सगठन को ले लीजिये। राजा या राष्ट्रपति उसका मन्त्रिमण्डल और व्यवस्थापिका सभा ये सब राज्य के बाह्य अग हैं। इन से ढाचा तैयार होता है। वह ढाचा ससार के आघात प्रति घातों को सहने और देर तक जीवित रहने के योग्य तभी होता है जब उसकी रक्षा के लिये, उसकी इच्छाओं को पूर्ण करने के लिये और उसे समय के क्षय कार्य से बचाने के लिये कोष और सेना की शक्ति प्राप्त हो। इस शक्ति के बिना कोई राजा चिरकाल तक स्थिर नहीं रह सकता।

सार्वजनिक सस्थायें भी तभी कार्य करने मे समर्थ हो सकती हैं और अवश्य भावी आघातों को सह सकती हैं यदि उनके हाथ मे इच्छाओं को पूर्ण करने की और चोटों का मुकाबला करने की आन्तरिक शक्ति है। वह शक्ति दो आधारों पर खड़ी रह सकती है। प्रथम सगठन बल दूसरा सख्या बल।

चाहे आप ससार की परिस्थिति पर दृष्टि डालिये और चाहे तो अपने देश की दशा पर विचार कीजिये तो आपको मालूम होगा कि जीवन सघर्ष प्रतिदिन अधिकाधिक कठिन होता जाता है। इस कारण यह भी आवश्यक है कि हम आर्य समाज की जीवन शक्ति को अधिकाधिक मजबूत करते जायें आर्य समाज का निम्नलिखित कार्य क्रम इसी विचार परम्परा को सामने रखकर बनाया गया है। २७—२८ मार्च को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का जो वार्षिक अधिवेशन हुआ था उसमे आर्य समाज के कार्यक्रम के सम्बन्ध मे जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया है वह निम्न प्रकार है—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का भावी त्रैवार्षिक कार्यक्रम

सभा भावी तीन वर्षों के लिये आर्य समाजों के लिए निम्न लिखित कार्यक्रम स्वीकार करती है। सभा का यत्न होगा कि सम्पूर्ण आर्य ससार मे इस कार्यक्रम के अनुसार कार्य हो।

१—स्वाध्याय और सत्सगों द्वारा आर्य नर-नारियों के व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवनों को उच्च और दृढ बनाया जाय।

२—आर्य वीर दल का मजबूत और व्यापी सगठन बनाया जाय। तीन वर्षों में आर्य वीरों की सख्या कम से कम ३ लाख हो जाय। आर्य वीर और आर्य वीरागनाओं के सगठन पर समान रूप से बल दिया जाय।

३—ग्रामों मे वैदिक धर्म प्रचार पर अधिक बल दिया जाय। आर्य समाज की प्रान्तीय और स्थानीय सभायें निम्न लिखित तथा ऐसे ही अन्य उपायों से ग्राम प्रचार के कार्य को आगे बढ़ायें —

(क) ग्राम प्रचार मंडलियों द्वारा।

(ख) औषध वितरण तथा अन्य सेवा कार्यों द्वारा।

(ग) ग्रामों में प्रारम्भिक शिक्षणालय स्थापना द्वारा।

४—दलित और आदिवासी कही जाने वाली जातियों मे उच्च जीवन और समानता के वैदिक सिद्धान्तों का क्रियात्मक प्रचार करके उन्हे आर्य जाति का दृढ अंग बनाने का यत्न किया जाय। सब सामाजिक संगठनों को विशेष यत्न करके आस पास के हल्कों मे बसी हुई इन पिछड़ी हुई जातियों को आर्य समाज के दायरे में लाने का भरसक यत्न करना चाहिये।

५—आर्य समाज मन्दिरों के अग्रभाग का एक समान नकशा तैयार करके सब आर्य समाज मन्दिरों के स्थानीय समाजों द्वारा अग्रभाग को उसके अनुकूल बनाया जाय।

६—ऐसे प्रान्तों में जहा आर्य प्रतिनिधि सभाएें नहीं हैं अथवा शिथिल अवस्था में हैं, प्रचार कार्य को बढाया जाय और जिन भील, थिया आदि जातियों में आर्य धर्म का सुगमता से प्रचार किया जा सकता है उनमें विशेष रूप से कार्य किया जाय।

आगामी तीन वर्षों का यह स्थायी कार्यक्रम होगा। समय समय पर नई परिस्थितियों के अनुसार जिन कार्यों की आवश्यकता होगी उनके सम्बन्ध में सभा उसी समय उचित आदेश देती रहेगी।

वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्य दयानन्द

(३)

वैदिक यज्ञ और पशुहिंसा

महर्षि दयानन्द की अन्य आचार्यों से विशेषता

[प० धर्मदेवजी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति, स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली]

'सार्वदेशिक' के गत मार्च मास के अङ्क में मैंने वेदाधिकार के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द का अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों से मतभेद दिखाते हुए उनके इस विषयक विचार की उदारता और वेदानुकूलता सिद्ध की थी और वर्तमान काल के जगद्विख्यात विचारक श्री रोमा रोला की श्रद्धाञ्जलि को भी पाठकों के सन्मुख रखा था। इस लेख में मैं "वैदिक यज्ञ और पशुहिंसा" के विषय में महर्षि दयानन्द का अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों से मतभेद दर्शाते हुए उनके इस विषयक विचार की वेदानुकूलता को संक्षेप से प्रमाणित करना चाहता हूँ आशा है पाठक महानुभाव निष्पक्षपात दृष्टि से इस पर विचार करेंगे।

यज्ञ वैदिक धर्म का अत्यन्त आवश्यक अङ्ग हैं जिनके द्वारा भगवान् की आराधना और प्राप्ति की जा सकती है। इस बात को 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्' (ऋ० १०।९।१६ यजु० ३१।१६) इत्यादि वेदमन्त्रों के आधार पर सब आस्तिक स्वीकार करते हैं यद्यपि श्री शङ्कराचार्य जी आदि के मत में यज्ञ यागादि आत्मशुद्धि के लिये आवश्यक हैं पर मुक्ति केवल ज्ञान से ही हो सकती है। यज्ञों में पशुहिंसा के विषय में श्री शङ्कराचार्य जी का विचार 'अशुद्धमिति चेन्न शब्दात्' वेदान्त ३।१।२५ के भाष्य से ज्ञात हो सकता है जिसमें उन्होंने लिखा है—

"यत् पुनरुक्तम्—पशुहिंसादियोगात् अशुद्धम् आध्वरिकं कर्म तस्यानिष्टमपि फलमवकल्पत इत्यादि। तत् परिह्रियते न, शास्त्रहेतुत्वाद् धर्माधर्म विज्ञानस्य ' तेन न शास्त्रादृते धर्माधर्म विषयं विज्ञानं कस्यचिदस्ति। शास्त्राच्च हिंसानुग्रहार्थात्मको ज्योतिष्टोमो धर्म इत्यवधारितः स कथमशुद्ध इति शक्यते वक्तुम्। ननु 'न हिंस्यात् सर्वा भूतानि' इति शास्त्रमेव भूतविषया हिंसाम् अधर्म इत्यवगमयति। वाढम्—उत्सर्गस्तु स', अपवादोऽयं च 'अग्निषोमीय पशुमालभेत' इति। उत्सर्गापवादयोश्च व्यवस्थित विषयत्वम् तस्माद् विशुद्ध कर्म वैदिक शिष्टैरनुष्ठीयमानत्वात् अनिन्द्यमानत्वाच्च" (श्रीशाङ्कर ग्रन्थावलि वाणीविलास संस्करणम् पृ० ५५६॥

अर्थात् पशुहिंसा के कारण यज्ञादि कर्म भी अशुद्ध है और उसका बुरा परिणाम भोगना पड़ेगा यदि ऐसा कहो तो ठीक नहीं, क्योंकि धर्म अधर्म का ज्ञान शास्त्र द्वारा ही हो सकता है उसके बिना नहीं और शास्त्र बतलाता है कि हिंसात्मक ज्योतिष्टोमादि यज्ञ भी धर्म है इस लिये उसको कैसे अशुद्ध वा अपवित्र कहा जा

सकता है। यदि कहो कि शास्त्र तो आदेश करता है कि 'न हिंस्यात् सर्वा भूतानि' अर्थात् प्राणियों की हिंसा न करनी चाहिये इस लिये प्राणियों की हिंसा शास्त्रानुसार अधम है तो इसका उत्तर यह है कि वह नियम है यज्ञ में पशुहिंसा अपवाद है। इसलिये वैदिक कर्म (हिंसात्मक होते हुए भी) पवित्र है क्योंकि सज्जन उसका अनुष्ठान करते तथा उसकी निन्दा नहीं करते इत्यादि। श्री शङ्कराचार्यजी के इस प्रकार के लेखों से स्पष्ट है कि वे वैदिक यज्ञों में पशुहिंसा को धर्मानुकूल समझते थे।

श्री रामानुजाचार्य का मत—

श्री रामानुजाचार्य वैष्णव सम्प्रदाय के थे जो अहिंसा तत्व के विशेष प्रतिपादक माने जाते हैं किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि उन्होंने भी यज्ञों में पशुहिंसा को पुण्यजनक माना है। उदाहरणार्थ इस उपर्युक्त वेदान्त सूत्र ३।१।२५ के भाष्य में श्री रामानुजाचार्य ने लिखा है—

"अग्निषोमीयादे संज्ञपनस्य स्वर्गलोक प्राप्ति हेतुतया हिंसात्वाभाव शब्दात्। पशोर्हि संज्ञपन निमित्ता स्वर्गलोकप्राप्तिं वदन्त शब्दमामनन्त 'हिरण्यशरीर ऊर्ध्व स्वर्गं लोकमेति' इत्यादिकम्। अतिशयिताभ्युदय साधनभूतो व्यापारोऽल्पदुःखदोऽपि न हिंसा प्रत्युत रक्षणमेव तथा च मन्त्रवर्णं 'न वा उपतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ इदेषि पथिभि सुगेभि यत्र यन्ति सुकृतानापि दुष्कृतस्तत्र त्वा देव सविता दधातु" इति। चिकित्सक च तादात्विकाल्पदुःखकारणमपि रक्षकमेव वदन्ति पूजयन्ति च तद्वत्॥ (श्रीरामानुजाचार्य कृत शारीरिक मीमांसा भाष्यम् पृ० २१६)

अर्थात् यज्ञों में पशु हिंसा को स्वर्गलोक की प्राप्ति का कारण माना गया है इस लिये उसे हिंसा नहीं मानना चाहिये। जिससे बहुत सा कल्याण हो ऐसा कार्य यदि थोड़ा सा दुःख देने वाला भी हो तो वह हिंसा नहीं बल्कि रक्षा के रूप में ही समझा जाना चाहिये जैसे कि 'न वा एतन्म्रियसे न रिष्यसि' इत्यादि मन्त्र में कहा है। जिस प्रकार चिकित्सक (डाक्टर) चीर फाड़ के द्वारा रोगी को कुछ कष्ट भी पहुँचाता है तो भी उसे सब रक्षक ही कहते तथा उसकी पूजा करते हैं वैसे ही यज्ञ में पशु हिंसा करने वाले की पूजा करनी चाहिये इत्यादि। (न वा उपतन्म्रियसे इत्यादि जिस मन्त्र को यहां पशु हिंसा में प्रमाण रूप से पेश किया गया है उसके अर्थ पर हम आगे विचार करेंगे जिससे पाठक महानुभावों को पता चल जायगा कि इस मन्त्र के अर्थ का पौराणिक आचार्यों ने कितना अनर्थ किया है। यहां अभी श्री रामानुजाचार्य के मत दिखाने से ही तात्पर्य है।

स्वामी आनन्दतीर्थ (श्री मध्वाचार्य) का मत—

प्रसिद्ध द्वैतवादी आचार्य स्वामी आनन्दतीर्थ वा मध्वाचार्य भी वैष्णव थे किन्तु साथ ही पुराणों में विश्वास के कारण उन्होंने भी वैदिक यज्ञों को हिंसात्मक मान कर भी वेद विहित होने से अहिंसा रूप माना यह उपर्युक्त ३।१।२५ वेदान्त सूत्र के भाष्य से स्पष्ट है जो निम्न प्रकार है—

"हिंसारूपत्वात् पापस्यापि सम्भवाद् दुःख च भवतीति चेन्न शब्द विहितत्वात्।

हिंसात्ववैदिकी या तु, तयानर्थो ध्रुव भवेत्। वेदोक्तया हिंसया तु, नैवानर्थं कथं चन इति

वाराहे (वेदान्तभाष्ये पृ० १२६) अर्थात् यदि कहो कि वैदिक यज्ञों मे हिंसा होने से पाप भी लगेगा और उसका दुःख रूप फल मिलेगा तो ठीक नहीं क्योंकि वह हिंसा वेदादि शब्द प्रमाण सम्मत है जैसे कि वराह पुराण मे कहा है कि जो वेद विरुद्ध हिंसा है उससे तो अवश्य अनर्थ होता है किन्तु वेदोक्त हिंसा से कभी अनर्थ या पाप नहीं होता।

इतना अवश्य है कि यज्ञों में पशु हिंसा का वेद विहित मानते हुए भी माध्वसम्प्रदाय के लोग वास्तविक पशुओं की बलि यज्ञों मे नहीं देते किन्तु पिष्ट पशु अथवा आटे आदि की पशु आकृति बनाकर उसी से काम चला लेते हैं।

श्री निम्बार्काचार्य का मत—

श्री निम्बार्काचार्य ने इस वेदान्त सूत्र ३।१।२५ के भाष्य मे लिखा है "अशुद्धमिति चेन्न शब्दात् ब्रीह्यादि स्थावर योनिप्रापक हिंसायोगाज्ज्योतिष्टोमाद्य शुद्ध कर्मास्तीति चेत् ज्योतिष्टोमादेरशुद्धत्व नास्ति विधिशास्त्रात्॥ पृ० ५०

अर्थात् ज्योतिष्टोमादि यज्ञ मे पशु हिंसा का योग होता है इस लिये वह अपवित्र कर्म है ऐसा कहा जाय तो ठीक नही क्योंकि वह वेदादि शास्त्र विहित है।

श्री वल्लभाचार्य जी का भाष्य इस लेख को लिखते हुए मेरे सन्मुख नहीं अतः उसमे से उद्धरण देना सम्भव नहीं।

पौराणिक वेद भाष्यकार श्री सायणाचार्य, उव्वट महीधरादि सब यज्ञों मे पशु हिंसा को अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में पुण्यजनक समझते और वेदमन्त्रों के वैसे ही अर्थ करते हैं। उदाहरणार्थ श्री रामानुजाचार्य के ब्रह्मसूत्र भाष्य में उद्धृत वेदमन्त्र के इन आचार्यों के भाष्य को उद्धृत करके हम महर्षि दयानन्द का इन सब से विशेष अन्तर पाठकों के सन्मुख रखेंगे और यह बात पाठकों के विवेक पर छोड़ेंगे कि कौन सा पक्ष उनकी बुद्धि और हृदय को अधिक अपील करता है अथवा उन्हें ईश्वरीय ज्ञान वेद की दृष्टि से अधिक सङ्गत और उपादेय प्रतीत होता है।

"न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवा इदेषि पथिभिः सुगेभिः। यत्रासते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु॥" यजु० २३।१६

उव्वट इसका अश्वमेध में मारे हुए घोड़े को सम्बोधन मान कर लिखते हैं—

वै उ पाद पूरणे। न एतत् म्रियसे यत् संज्ञप्यसे। (न च रिष्यसि) विनश्यसि विशस्यमान। किमिति। यत् (देवान्) (इत्) प्रति (एषि) गच्छसि (पथिभि सुगेभि) साधुगमनैर्देवयानै-रित्यर्थ। किं च (यत्र आसते) (सुकृत) साधु कारिणः (यत्र च ते ययु) गता, तत्र त्वा देव सविता (दधातु)

महीधर इसकी टीका मे लिखते हैं —

आश्वी त्रिष्टुप्। हे अश्व। अस्माभियत् त्वं संज्ञप्यसे एतत् त्वं न म्रियसे मरणं नाप्नोषि न च विनश्यसि विशस्यमानः। देवयानमार्गैर्देवान् प्रति गच्छसि किं च साधु कारिणो नरा यत्र तिष्ठन्ति तत्र लोके सविता देव त्वा स्थापयतु॥

भावार्थ यह है कि हे घोड़े। तू यज्ञ में काटा जाने पर वस्तुतः मे मरता नहीं और न कष्ट पाता है किन्तु देवयान द्वारा देवों को प्राप्त होता है।

जहां धर्मात्मा लोग जाते हैं ऐसे स्वर्ग में सविता देव तुझे स्थापित करे।

चतुर्वेद भाष्यकार श्री सायणाचार्य ने ऋग्वेद १।१६२।२१ में आये 'न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवा इदेषि पथिभि' सुगेभि ।' इस भाग की उपयुक्त भाव की ही व्याख्या की है। यथा—'हे अश्व। नैव खलु एतन्म्रियसे वा शब्द एव कारार्थे। उ इत्यवधारणे। नैवेदानीम् इतराश्वबन्मृतो भवसि देवत्वप्राप्तेर्वक्ष्यमाणत्वात् अत एव (न रिष्यसि) न हिंस्यसे व्यर्थं हिंसाया अभावात् ननु प्रत्यक्षतो मृति अवयवनाशश्च दृश्यते कथमेवमुच्यत इति उच्यते। शोभनगमनलक्षणै देवयानलक्षणै देवानेव प्राप्नोषि अतो युक्तं प्राकि ॥

अर्थात् हे अश्व। तू अन्य अश्वों की तरह नहीं मरता क्योंकि तू देवों को प्राप्त होता है और न तेरी हिंसा होती है। यदि कहो कि प्रत्यक्ष अग्नि में घोडे की मृत्यु और अवयवों का नाश दिखाई देता है फिर ऐसा क्यों कहते हो तो उसका उत्तर यह है कि यज्ञ में मारा हुआ घोडा देवयान मार्ग से देवों को प्राप्त होता है। ऐसा ही अन्य सैकड़ों मन्त्रों की व्याख्या मे पौराणिक भाष्यकारों ने लिखा है किन्तु महर्षि दयानन्द यज्ञों मे वा अन्यत्र पशु हिंसा के सिद्धान्त को सर्वथा वेद विरुद्ध मानते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के ११ वें समुल्लास मे ऋषि ने स्पष्ट लिखा है कि 'प्रोषित भक्षयेन्मासम्। वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' ऐसे २ वचन भी ऋषियों के ग्रन्थ मे डाल के कितने ही ऋषि मुनियों के नाम से ग्रन्थ बनाकर गोमेध, अश्वमेध नाम के यज्ञ भी कराने लगे अर्थात् इन पशुओं को मार के होम करने से यजमान और पशु को स्वर्ग की प्राप्ति होती है ऐसी प्रसिद्धि का निश्चय तो यह है कि जो ब्राह्मण ग्रन्थों में अश्वमेध, गोमेध, नरमेध आदि शब्द हैं उनका ठीक २ अर्थ नहीं जाना है क्योंकि जो जानते तो ऐसा अनर्थ क्यों करते!

प्रश्न—अश्वमेध, गोमेध, नरमेध आदि शब्दों का अर्थ क्या है?

उत्तर—इनका अर्थ तो यह है कि—

राष्ट्रं वा अश्वमेध। (शतपथ १३।१।६।३)

अन्न हि गौ। शत० ४।३।१।२५)

अग्निर्वा अश्व। आज्य मेध (शतपथ ब्राह्मणे)

घोडे गाय आदि पशु तथा मनुष्य मार के होम करना कहीं नहीं लिखा केवल वाममार्गियों के ग्रन्थों मे ऐसा अनर्थ लिखा है किन्तु यह भी बात वाममार्गियों ने चलाई और जहा २ भी लेख हैं वहा २ भी वाम मार्गियों ने प्रक्षेप किया है। देखो। राजा न्याय धर्म से प्रजा का पालन करे, विद्यादि का दने हारा यजमान और अग्नि में घी आदि का होम करना, अश्वमेध, अन्न, इन्द्रिया किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रखना गोमेध, जब मनुष्य मर जाए तब उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना नरमेध कहाता है।

(सत्यार्थप्रकाश ११ समुल्लास पृ० ३८० श्री गोविन्दराम संस्करण ५)

"न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि" इससे पूर्व मन्त्र मे 'वाजी' शब्द आया है। वाज का अर्थ ज्ञान और बल होता है इसलिये ऋषि दयानन्द ने उसका अर्थ जिज्ञासु करते हुए भावार्थ इन शब्दों मे लिखा है.—

महापुरुषों की दिव्यवाणी

पण्डित गुरुदत्त वचनामृत

[२४-४ ४३ को पं० गुरुदत्त जयन्ती के उपलक्ष्यमें संगृहीत]

(१) सच्चा धर्म कृत्रिमता और कपट से रहित होता है। सत्य धर्म एक जीवित जागृत तत्व है। यह उत्कृष्ट रीति से क्रियात्मक है। इसका आधार सम्पूर्ण सत्य पर है। सब शक्तियों का धर्मानुकूल सम विकास इसका आधार भूत तत्त्व है॥

(ईशोपनिषद् व्याख्या)

(२) धर्म, सच्चा धर्म, ईश्वरानुभव सहित जीवन व्यतीत करने मे है। जगदीश्वर की सत्ता को सर्वत्र और सदा अपने साथ अनुभव करना—यह धर्म की प्रथम शिक्षा है।

(ईशोपनिषद् व्याख्या)

(३) विनश्वर अनित्य वस्तुओं के लिये आसक्ति रखना अशुद्ध है हानिकारक है। नित्य अविनाशी तत्त्व के प्रति हमे विशेष प्रेम रखना चाहिये, उसके लिये मान रखना चाहिये और

(शेष पृष्ठ ८८ का)

'यदि मनुष्या स्वस्वरूप जानीयुस्तर्हि तेऽविनाशित्व विद्यु। यदि धर्मेण मार्गेण गच्छेयुस्तर्हि सुकृतामानन्द प्राप्नुयु॥ इत्यादि

अर्थात् यदि मनुष्य अपने आत्मा के स्वरूप को जानें तो वे अमर हो जायें और धर्म मार्ग पर चल कर पुण्यात्माओं के आनन्द को प्राप्त करें।

(शेष विचार अगले अङ्क में)

उसी का ध्यान करना चाहिये तभी हम सच्चा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

(ईशोपनिषद् व्याख्या)

(४) इस भूमि मे सच्चा लौकिक सुख विवाह के पवित्र और दिव्य सम्बन्ध के कर्तव्यों का ठीक तौर पर पालन करने से प्राप्त किया जा सकता है। अन्य उपायों से समाज के पुनरुद्धार के प्रयत्न सर्वथा निष्फल सिद्ध होंगे।

(Vedic Texts)

(५) मै इससे अधिक गम्भीर उत्तरदायित्व और कोई नहीं समझता कि संसार में गृहस्थ एक उत्तम प्राणी (सन्तति) का प्रवेश करा सकें। पर कितने हैं जो इस उत्तरदायिता को अनुभव करते हैं? ऐसे बालक कितने कम हैं जिनको विशेष विचार पूर्ण भावना के साथ माता पिता ने संसार मे जन्म दिया हो? कितने हैं जो केवल अन्ध कामवासना का परिणाम हैं?

(Vedic Texts)

(६) पूर्व इसके कि दिव्य ज्योति का अनुभव किया जा सके यह आवश्यक है कि मोह का आवरण (पर्दा) हटा दिया जाए और मनुष्य के अन्दर विद्यमान पशुता का नाश किया जाए।

(७) सब से सच्ची प्रार्थना जो हम कर सकते हैं वह यह है कि ज्ञान के स्रोत से हमारी

(शेष पृष्ठ ९५ पर)



परीक्षा विषयक सूचनायें

पाठविधि के संशोधन

भारतवर्षीय आर्यकुमा परिषद् की परीक्षा साम त की तारीख ७ फरवरी की बैठक ने पाठविधि मे निम्न लिखित सशो न किए हैं —

पुस्तकें

सि० सरोज परीक्षा में मरे प्रश्न पत्र मे परीक्षार्थी 'आ० म० के उज्ज्वल रत्न" या "आर्य जगत् के उज्ज्वल रत्न" मे से किसी भी एक पुस्तक को खरीद सकते है। २ हमारे स्वामी के स्थान पर शारदा मन्दिर द्वारा प्रकाशित बाल-दयानन्द चरित्र लगा दिया सिद्धान्त रत्न पर क्षा में द्वितीय प्रश्न पत्र मे स्वामी श्रद्धानन्द" किसी भी आर्य लेखक का हो

सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा में द्वितीय प्रश्न पत्र म 'धम का आदि स्रोत' के स्थ न पर 'स्वामी नित्यानन्दजी की व्याख्य न माला' अथवा 'दर्शनानन्द ग्रन्थ सग्रह पूर्वार्द्ध" दोनों मे से किसी पुस्तक का अध्ययन कर सकते है तथा तृतीय प्रश्न में आस्तिकवाद के स्थान पर 'मै और मेरा भगवान्" (प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय कृत) लगा दिया है।

[इन परिवर्तनों से पाठ विधि पूर्व की अपेक्षा भी अधिक उपयोगी हो गई है। अत हम आशा करते है कि आर्य कुमार और कुमारिया बहुत अधिक सख्या मे इनमे सम्मिलित होंगे—सम्पादक]

शुल्क

चारों परीक्षाओं का शुल्क निम्न प्रकार कर दिया है —

सिद्धान्त सरोज	॥)
सिद्धान्त रत्न	१)
सिद्धान्त भास्कर	३)
सिद्धान्त शास्त्री	४)

बिना मूल्य मँगाइये

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से होनेवाली सिद्धान्त सरोज, सिद्धान्त रत्न, सिद्धात भास्कर और सिद्धान्त शास्त्री की धार्मिक परीक्षाओं की नवीन तथा सशोधित पाठविधि छप चुकी है जो कार्यालय म बिना मूल्य प्राप्त हो सकती है। जो सज्जन इन परीक्षाओं मे बैठने के उत्सुक हों वे एक कार्ड परीक्षा मन्त्री के पते निम्न पर डाल कर पाठविधि प्राप्त कर सकते हैं।

देवव्रत धर्मेन्दु परीक्षा मन्त्री आर्य कुमार परिषद्
दीवान हाल, देहली।

आर्यकुमार सभा नई देहलीके वार्षिकोत्सव पर वेद सम्मेलन के महत्वपूर्ण प्रस्ताव

२६-३०-३१ को आर्य कुमार सभा डी० ए० वी० हाईस्कूल नई देहली का पाचवा वार्षिकोत्सव बडे उत्साह और समारोह के साथ मनाया गया २६ मार्च को प्रात श्री वी पी जोशी M A LL B के सभापतित्व मे 'ईश्वर साकार है अथवा निराकार' विषय पर मनोरंजक वाद विवाद हुआ जिसके पश्चात् प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सभापतित्व मे वेद सम्मेलन हुआ। डी ए वी० हाईस्कूल के कुछ विद्यार्थियों ने वेद मन्त्र सुनाए जिनमे से ३ को अच्छे वेद पाठ पर इनाम दिया गया। प० धर्मदेवजी ने सभापति रूप से भाषण देते हुए वेदों की आवश्यकता स्वरूप और महत्व पर उत्तम प्रकाश डाला और उन्हे अमर सम्पत्ति बताते हुए स्वाध्याय प्रवचन तथा आचरण द्वारा उस की रक्षा की आर्य जनता से अपील की जिसके पश्चात् निम्नलिखित ३ प्रस्ताव सव सम्मति से स्वीकृत हुए।

(१) इस सम्मेलन की निश्चित सम्मति है कि मनुष्य जीवन को पवित्र बनाने और उन्नत करने के लिये वेदों का स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है इसलिये यह सम्मेलन प्रत्येक आर्य नर नारी और आर्य कुमार तथा कुमारियों से अनुरोध करता है कि वह प्रतिदिन वैदिक सन्ध्या और हवन के साथ मानसिक भोजन के रूप मे वेद का स्वाध्याय अवश्य किया करे।

प्रस्तावक-(१) श्री० प० सत्यव्रतजी वानप्रस्थी

अनुमोदक-(२) श्री० प० विष्णु मित्र जी

समर्थक-(३) श्री०प० चन्द्रभानुजी सिद्धान्त भूषण

(२) क्योंकि वेद सार्वभौम धर्मग्रन्थ हैं जो सब सत्य विद्याओं का भण्डार हैं इसलिये उनके पवित्र ज्ञान का विशेष कर विद्यार्थियों मे प्रचार करने के लिये यह सम्मेलन सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना करता है कि वह वैदिक पाठ माला के रूप मे छोटे २ मन्त्रों का सरल भाषा मे निर्माण कराए जिन्हे पाठ्य पुस्तक के रूप में विद्यालयों में पढ़ाया जा सके।

प्रस्तावक ( ) श्री प० ज्ञानेश्वर जी विद्यानिधि

अनुमोदक —(२) श्री प० श्रीपालजी शास्त्री

(३) यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आर्य कुमार सभा का आगामी वर्ष के लिए वेद प्रचार की दिशा मे सक्रिय उद्योग के रूप मे निम्नलिखित कार्य किया जावे। आर्य कुमार सभा का प्रत्येक सभासद सन्ध्या तथा हवन मन्त्रों को अर्थ सहित व विधि पूर्वक जानता हो तथा नियम पूर्वक प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ व सन्ध्या किया करे (२) प्रत्येक सभासद् को स्वयं मातृ भाषा का अच्छा बोध होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त निकटवर्ती मुहल्लों तथा ग्रामों मे सामयिक प्रचार के अतिरिक्त मातृ भाषानभिज्ञ लोगों को अधिक से अधिक संख्या मे मातृभाषा पढाकर सन्ध्या व यज्ञ के मन्त्र कण्ठस्थ करा देवे।

प्रत्येक सभासद् का अपने आपको आर्य जनता आर्य सिद्धान्त, तथा आर्य विचारों से परिचित रखने तथा सामाजिक व आत्मिक उन्नति करने के लिए अपनी निकटवर्ती समाजों के सत्सङ्गों मे नियमपूर्वक उपस्थित होना अपना कर्तव्य समझना चाहिए।

प्रस्तावक—श्री० प० दयाराम जी B A

अनुमोदक—श्री० सत्यकाम जी

साहित्य समीक्षा

महर्षि भरद्वाज कृत विमान शास्त्र-सम्पादक और अनुवादक प० प्रियरत्न जी आर्ष पृष्ठ सख्या ६० मूल्य ।=)॥ मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली।

श्री प० प्रिय रत्नजी 'अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र' 'अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या' इत्यादि के कारण अनुसन्धान कार्य मे अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। लगभग ३मास हुए बड़ौदा के राजकीय सस्कृत पुस्तकालय में उन्हें भरद्वाज मुनिकृत 'यन्त्र सर्वस्व' नामक ग्रन्थ के 'वैमानिक प्रकरण' के कुछ भाग बोधानन्द-वृत्तिसहित हस्तलिखित रूप में प्राप्त हुए। प्रस्तुत पुस्तक उसी का अनुवाद है जो प्राचीन अनुसन्धान प्रेमियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। उस वैज्ञानिक प्रकरण से उन्होंने २५ प्राचीन विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थों की सूची भी दी है जिन में व्यास प्रणीत 'ब्रह्माण्ड सार' भरद्वाजकृत 'आकाश शास्त्रम्' और 'यन्त्र-सर्वस्वम्' शाकटायनकृत 'लोह शास्त्रम्' वसिष्ठ-कृत 'प्रपञ्चलहरी' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। खेद है कि ये प्राचीन वैज्ञानिक ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं होते। इनके अनुसन्धान का भी प्रयत्न आशा है विद्याप्रेमी धनीमानी सज्जनों की सहायता से प० प्रियरत्नजी जैसे सच्चे विद्याव्यसनी ब्राह्मण करेंगे। वैमानिक प्रकरण मे भी जो ८ अध्यायों १०० अधिकरणों और ५०० सूत्रों में विभक्त था (जिसमें से अब केवल ४ बोधानन्दकृत विस्तृत व्याख्या सहित उपलब्ध हुए हैं) नारायण, शौनक, गर्ग वाचस्पति, चाक्रायणि धुण्डिनाथ आदि कृत "विमान चन्द्रिका" व्योम यान तन्त्र, यन्त्र कल्प, व्योम यानार्क प्रकाश आदि विमान विषयक अनेक ग्रन्थों का स्पष्ट उल्लेख है। इस विमान शास्त्र का आधार वेद को ही बताया गया है यथा 'निर्मथ्य तद् वेदाम्बुधिं, भरद्वाजो महामुनि। नवनीत समुद्धृत्य, मन्त्र सर्वं-

न व व र्ष !

(लेखक—श्री प० बालमुकुन्द मिश्र' साहित्यालङ्कार)

विक्रमाब्द नूतनता भरदो,
अखिल राष्ट्र के कण-कण में।
चमक उठें जागृति स्फुलिंग फिर,
निशि दिन पल-पल क्षण-क्षण मे॥

नूतन सृष्टि वितान-प्रसारित-
हो जाये जगतीतल मे।
भरजाये अनुपम नवीनता,
अनल वायु-नभ भू-जल मे॥

स्वरूपकम् ॥

प्रायच्छत् सर्वलोकानाम्, ईप्सितार्थ फलप्रदम्१० ११

अर्थात् वेद रूपी सागर का मन्थन करके नवनीत रूप इस शास्त्र को भरद्वाज ने सब लोगों के हितार्थ निर्माण किया इत्यादि इससे ऋषि दयानन्द के वेदों के विज्ञान का भी मूल होने विषयक विचार का जिसका प्राय उपहास किया जाता है स्पष्ट समर्थन होता है। विमान के जो लक्षण इस ग्रन्थ मे दिये गये हैं उनमे कहा है कि

"पृथिव्यप्स्वन्तरिक्षेषु खगवद् वेगत स्वयम्। य समर्थो भवेद् गन्त स विमान इति स्मृत ॥" (नारायण) देशाद् देशान्तर तद्वद्, द्वीप द् द्वीपान्तरतथा। लोकाल्लोकान्तर चापि, याऽम्बरे गन्तुमर्हति ॥ स विमान इति प्रोक्त, खेट शास्त्र विदा वरै ॥ (विश्वम्भर)

भावार्थ यह है कि विमान वह है जो एक देश से दूसरे देश, एक द्वीप से दूसरे द्वीप और एक लोक से दूसरे लोक तथा जल, पृथिवी और आकाश के अन्दर वेग से जा सके। विमान के ३२ रहस्यों और पाच आवर्तों (बवण्डरों) तथा विमान के ३१ अङ्गों का वर्णन करते हुए शत्रु के विमानों से युद्ध करने, उनसे बचने उनको नष्ट करने आदि का आश्चर्य कारक वर्णन है। इस वर्णन में अनेक पारिभाषिक शब्द पाये जाते हैं गृध्र जिह्वा कुम्भिणीफल, कुबेर विमुख वैश्वानर, भैरवी तैल, वाडवा मुख, कुण्ठिणी शक्ति स्थान, पुष्पिणी पिञ्जुलादर्श स्थान आदि जिन पर सुयोग्य अनुवादक महोदय ने अनुमान से प्रकाश डालने का प्रशसनीय प्रयत्न किया है किन्तु अभी इनमें अधिक अनुसन्धान तथा स्पष्टीकरण की आवश्यकता प्रतीत होती है। हम इस परिश्रम के लिये श्री प० प्रिय रत्न जी आर्ष का और पुस्तक के प्रकाशन मे सहायता देने वाले सेठ बनवारीलालजी का हार्दिक अभिनन्दन करते है तथा प्रत्येक विज्ञान प्रेमी से अनुरोध करते है कि वह इस ग्रन्थ को अवश्य पढे।

अदिति—त्रैमासिक पत्रिका सम्पादक—स्वामी अभयदेव जी विद्यालङ्कार प्रकाशक—श्री अरविन्द निकेतन कनाट सकस नई देहली पृ० ११२ मूल्य १।) वार्षिक चन्दा ४)

'सार्वदेशिक' के फर्वरी अङ्क मे हमने 'अदिति' विषयक स क्षिप्त टिप्पणी लिखते हुए उसका स्वागत किया था। इसका प्रथम अङ्क हमारे सामने है जिसमे मातृवचनामृत में श्री अरविन्दाश्रम की सचालिका 'माता जी' की नये वर्ष की प्रार्थना व्याख्या सहित, श्री अरविन्द के लक्ष्य और 'सत्ता का आनन्द' विषयक कुछ वचन, श्री सम्पादक जी के 'पाण्डीचरी के परमहस' और 'संकट काल' विषयक, डा० इन्द्रसेन जी M A PH D का "मनोविज्ञान और योग" श्री हरिदास चौधरी का 'मां', श्री अनिल बरणराय का योग और श्री नलिनी कान्त गुप्त (मन्त्री श्री अरविन्दाश्रम पाण्डीचरी) का 'धर्म क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे' शीर्षक लेख है। डा० इन्द्रसेन जी का लेख अत्यन्त उत्तम है। 'पाण्डीचरी के परमहस' शीर्षक लेख मे सम्पादक जी ने श्री अरविन्द और उनके आश्रम के विषय मे प्राय सब आवश्यक ज्ञातव्य बातों का उल्लेख किया है। आश्रम की वतमान सचालिका फ्रास देशीय 'माता जी' के विषय में श्री उन्होंने बहुत कुछ लिखा है किन्तु इस लेख से पाठकों को यह

नहीं ज्ञात होता कि वे अ वव हिता देवी हैं विवाहिता अथवा विधवा। केवल पाठकोंकी जान कारी के लिये इन बातों का उल्लेख भी आवश्यक था। ब्रह्मचर्य के प्रबल व तावरण वाले योगाश्रम में माता जी का नित्य नयी रेशमी साड़ी पहिन कर अ ना या स धकों का' अ राम तलब का सा जीवन' इत्य दि का उल्लख करते हुए इस लख के श्रद्ध लु लेखक महादय लिखते हैं कि अ श्रम मे कुछ ऐसा च जें है जा एक प्रकार के लागों का अग अ जरतो है (पृ^९६) यहां तक कि अपन विषय में उन्होंने लिखा है कि मुझे स्वय पहले दिन म ता जी को वे एक योरोपियन महिला हैं रेशमी साड़ी पहिने बैठी हैं इस रूप में देखकर—प्रण म करने की इच्छा न होती थी। पर पीछे से उनकी दिव्यता का कुछ अनुभव हो जान पर सब ब त बिल्कुल पलट गई (पृ० ३०) उपर्युक्त ब तें य दि सत्य हैं तो स्वभावत वे विचारशील म दगी प्रेमी निष्पक्षपात व्यक्तियों को अखरेंगी और इनका अर्थ समझना उनके लिये कठिन होगा क्यों कि सादगी और उच्च विचार (Plain living & high thinking) ब्रह्मचय और योग के आवश्यक अङ्ग सवत्र माने गये हैं।

अदिति जैसी आध्यात्मिक पत्रिका में 'धम क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे' और सकटकाल' शीषक व ले श्री नालनी कान्त जी और स्वामी अभयदेव नो क लेख जिनमे यह अपील की ाई है कि 'मत्र पक्ष का विजयी करने के लिये अन्य जा कुछ भौतिक सहायता पहु चाना भा हमारे हाथ मे हो वह सब भी हम करें। (पृ० ८०) हमें काय मन बचन से मित्र पक्ष का (जो हमारा वास्तविक मित्र पक्ष है) सगी साथी होकर खड़ा होना चाहिये अगर हम महान् विनाश से रक्षा पाना चाहते हैं (पृ० ५६) "हमारी दृष्टि के अनुसार आज का महा युद्ध देवता के यन्त्र भूत मनुष्य और असुर के बीच हो रहा है" (श्री नलिनीकान्त पृ० ५३) अ क्रान्ताधुरी राष्ट्रों से दुनिया को बचाने का प्रश्न इतना भ री है कि उसके चलते रहते भारत की स्वाधीनता चाहने का मतलब ही नहीं रह जाता (सम्पादक ची पृ० ७४)

इत्या द कुछ व चन्न और अनेक अशों में प्रतिक्रिय पूर्ण (Reactionary) प्रतीत होंगे जिनके विषय मे हमे विचार प्रकट करने की आवश्यकता नहीं। श्री नलिनीकान्त के लेख मे 'मा महामाया स्वय क्या है' दुष्टों का दमन करना अवतार का एक प्रधान कार्य है—सच्चिदा नन्दमयी साथ ही असुर दलनी भी हैं" (पृ ४३) तथा श्री हरिदास चौधरी के मा' विषयक लेख में कहीं कहीं कुछ पौराणिक भावों का समावेश है जिनसे हम सहमत नहीं। श्री अरविन्द के सूत्र वचन विशेष गम्भीर और मननीय हैं पर 'यह ऐहलौकिक विश्व एक अयुक्ताभास और एक असम्भवता था इसलिये शाश्वत देव ने अपनी सत्ता में से इसे उत्पन्न किया' (पृ० १०) इत्यादि वाक्य भ्रम जनक हैं। हम आशा करते हैं कि सुयोग्य सम्प दक जी इस बात का विशेष ध्यान रखेंगे कि प त्रिका मे लेख वै दक सिद्धान्तानुकूल हों जिससे जनता मे किसी प्रकार का भ्रम न फैले।

हरिजन हितैषी—सचालक-श्री कर्मचन्द्र जी सम्पादक—श्री निरञ्जनलाल गौतम 'विशारद

पृ० ४ वार्षिक चन्दा १।)

यह एक छोटा मासिक पत्र है जिसका उद्देश्य नाम से ही स्पष्ट है। मार्च मास का अङ्क हमारे सामने हैं जिसमें हरिजन बन्धुओं को स्वावलम्बी बनाने और अपने भेद भाव मिटाने के विषय में उत्तम लेख हैं। पवित्र होली विषयक लेख भी अच्छा है। प्रश्नोत्तरी और समाचार भी दिये गये हैं। हम पत्र के शुभ उद्देश्य की पूर्ण सफलता चाहते हैं।

ब्रह्मचर्य नाटक—लेखक-स्वामी शिवानन्द जी आनन्दकुटीर हृषीकेश प्रकाशक-जेनरल प्रिन्टिङ्ग वर्क्स ८३ पुराना चीना बाजार स्ट्रीट कलकत्ता पृ० संख्या लग० १०० मू० ॥)

ब्रह्मचर्य विषयक अनेक आवश्यक ज्ञातव्य बातों को ४ अङ्कों के मनोरञ्जक नाटक रूप में इस ग्रन्थ में रख दिया गया गया है। परिशिष्ट में ब्रह्मचर्य की आवश्यकता तथा महत्त्व, चरित्र निर्माण, ब्रह्मचर्य काल में आहार, ब्रह्मचर्य का साधन, संकल्प तथा नियमों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। ब्रह्मचर्य विषयक इस साधारणतया उत्तम पुस्तक में पौराणिक कल्पित कथाओं के आधार पर लिखे गये 'मनुष्य तो क्या एक बार भगवान शिव तथा कितने प्राचीन ऋषि काम बाण से घायल हो चुके हैं। इन बाणों की चोट से विकल होकर सुरराज इन्द्र ने एक बार अहल्या को तंग किया था (पृ० ८) 'काम के प्रभाव से जैमिनि ने अपने गुरु व्यास का आलिंगन नारी रूप में रहने के कारण भ्रम से नारी समझ कर लिया (पृ० ६) इत्यादि वाक्य हमें अत्यन्त आक्षेप योग्य प्रतीत होते हैं।

ध० दे०

(पृष्ठ ८६ का शेष)

युद्ध में जो स्फूर्ति आती है उसकी प्राप्ति के लिये हम धर्मानुकूल पुरुषार्थ करते रहें।

(Realities of Inner Life)

(८) अर्थ लोलुपता एक पागलपन के तुल्य अछूत वाली सक्रामक बीमारी है जो अत्यन्त भयङ्कर और असाध्य नहीं तो कष्ट साध्य अवश्य है।

(Pecunio mania)

देशभक्ता पन्ना की याद में

[लेखक—साहित्य भूषण कविरत्न प० खुशीराम शर्मा वासिष्ठ जैतोमण्डी]

[इस कविता के लेखक प० खुशीराम जी वासिष्ठ पजाब के नवयुवक कवियों में अपना विशेष स्थान रखते हैं। उनकी कविता में ओज माधुर्य एव प्रसादगुण अच्छी मात्रा मे रहते हैं। उनके 'प्रेमोपहार' 'बुद्ध चरित्र' 'गुरु गोविन्दसिह' तथा 'मीरा' आदि कई काव्य ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है। मातृभाषा को आप से बहुत आशाए हैं। —सम्पादक]

ओ त्यागमयी। बलिदानमयी ॥ ओ देशभक्ति की दीवानी,
ओ। तेरे साहस के आगे, भरता है "ल्यूनिडास" पानी।
आचन्द्रतारकम् अमर रहेगी, जग में तेरी कुर्बानी,
माँ। कौन कहेगा धाय तुम्हें ? तुम हो वसुधा भर की रानी ॥१॥

जब लोलुपता वश अपनों ने अपनों पर अत्याचार किया,
चाचा ने सगे भतीजे पर, जब विषम खड्ग से वार किया।
जब मानव ने अपने कर से, मानवता का सहार किया,
तब तुमने निज सर्वस्व लुटा कर, औरों का उद्धार किया ।२॥

राणा का वश मिटाने को, बनबीर दूसरा काल हुआ,
हा चूर राजमद मे भीषण, हिसक, निर्दय, विकराल हुआ।
उस नर पिशाच ने भाई क, शोणित से आँचल लाल किया,
निज उर की साध मिटाने को, फिर महलों को प्रस्थान किया ॥३॥

गरजा—'पन्ना। बतलाओ है, राणा विक्रम का लाल कहाँ ?
चुप क्यों हो ? जल्दी बतलाओ, है वह छोटा सा व्याल कहाँ ?"
पन्ना क्या कहती ? तुम्हीं कहो, था राजवश का लाल कहाँ ?
फिर सँभली इगित किया उधर, सोता था उसका बाल जहाँ ॥४॥

हा, महानीच ने उस अबोध, बालक पर तीव्र प्रहार किया,
माँ की आँखों ने देखा पर, रोना भी पापाचार हुआ।
यों कह कर पन्ना मुस्काई, 'क्या हुआ एक सुत वार दिया,
मम गृह-प्रदीप निर्वाण हुआ, पर प्रभु का काज सँवार दिया ॥५॥

रे ! महात्याग, अपने कर से, अपना ही महाविनाश किया,
रोता था रोम रोम तो भी, हँसने का सफल प्रयास किया।
कब नहीं मनुज तेरे समीप, क्या दुर्बलता ने वास किया ?
दो नन्हे अश्रुकणों ने चू, उस कृत्रिम स्मित का ह्रास किया ॥६॥

है आदि-सृष्टि से रुदन और आँसू का ही व्यापार यहाँ,
छलका करती है पद पद पर, बस आँखों से जलधार यहाँ।
पर पन्ना की उन दो बूँदों—का, समझे कोई सार यहाँ,
उफ़ ! निर्बल से मानव पर आ पड़ते हैं कितने भार यहाँ ॥७॥

पर पन्ना को इस कुसमय में, है रोने का अधिकार कहाँ ?
इतना भीषण बलिदान कहाँ ? यह ममता का व्यापार कहाँ ?
खोले न कहीं सारा रहस्य, यह करुणा का संचार यहाँ,
ओ जननी के उर धीरज धर, कर्तव्य कहाँ और प्यार कहाँ ?८॥

× × × × ×

जग के किस सेवक ने अबतक, ऐसा अनुपम बलिदान किया ?
स्वामी का वंश बचाने को, किसने ऐसा घमसान किया ?
किस रमणी ने निज आँखों का, तारा इसविधि कुर्बान किया ?
अपना ही क्यों भारत भर का, पन्ना ने जग में मान किया ॥९॥

माँ ! यों निज लाल लुटा यदि तुम, बनती न 'उदय' की कल्याणी,
तो कहाँ जन्म लेते हिन्दू-गौरव, प्रताप' से अभिमानी ?
होता न कहीं इतिहास आज, 'हल्दीघाटी' का लासानी,
माँ ! तुम्हें कहेगा धाय कौन ? तुम नप-जननी, तुम क्षत्राणी॥१०॥

आर्यों के अन्तर्जातीय विवाह

आर्य युवक वर की आवश्यकता

सामाजिक जगत्

विविध सम्मेलन, उत्सवादि

सर्व धर्म्म सम्मेलन, जैतो (नाभा)

श्री व्यापक धर्म सभा (The League of universal Faith), मुक्तसर (पंजाब) के तत्वावधान में ता० १४, १५, १६ मार्च को जैतो में जो विशाल धर्म सम्मेलन हुआ। उसकी संक्षिप्त रिपोर्ट हम यहां प्रकाशित रहे हैं —

(१) संगीत सम्मेलन—

१४ मार्च की रात्रि को श्री चन्दूलाल जी जैन बी० ए०, (फीरोजपुर) के सभापतित्व में संगीत सम्मेलन हुआ जिसमें पंजाब के कई प्रसिद्ध रेडियो-गायकों तथा रागियों ने अपने संगीत से श्रोताओं को मुग्ध किया। प्रो० देशबन्धु (रेडियो सिंगर), मास्टर छाजूराम रागी, श्री यशपाल तथा श्री वेदप्रकाश के गायन जनता पर विशेष प्रभाव छोड़ गये।

(२) सर्वधर्म सम्मेलन—

१५ मार्च की सन्ध्या को पंजाब के प्रसिद्ध नेता सरदार निधानसिंह जी 'आलम" के सभापतित्व में सर्वधर्म सम्मेलन हुआ जिसमें आर्य जगत् के विख्यात नेता प० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति भाई गुरु बचनसिंह 'लहरी' प० श्री निधान वासिष्ठ, प० खुशीराम शर्मा वासिष्ठ आदि के प्रभावोत्पादक भाषण हुए। प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति ने वैदिक धर्म की सार्वभौमिकता पर बड़ा ही सार गर्भित भाषण दिया। सभापति श्री निधानसिंह जी ने सेवा धर्म की विस्तृत व्याख्या की। जनता पर बड़ा ही प्रभाव पड़ा। खाकसार नेता ख्वाजा मुहम्मद यासीन सम्पादक 'वक्त' फीरोजपुर ने अपने भाषण में एकता पर विशेष जोर दिया।

(३) कवि सम्मेलन—

१५ मार्च की रात्रि को प० धर्मदेव जी के सभापतित्व में कवि सम्मेलन हुआ। हिन्दी और पञ्जाबी के कई कवियों ने भाग लिया। पञ्जाब के प्रसिद्ध हिन्दी कवि श्री खुशीराम शर्मा वासिष्ठ की "पन्ना की याद में" तथा "कर्णधार" शीर्षक रचनाएं खूब जमीं। श्री प्रधान जी की "चित्तौड सन्देश" शीर्षक कविता भी बड़े चाव से सुनी गई। सरदार निधानसिंह जी एम० ए० की गुरुमुखी की कविताओं ने लोगों में नवजीवन का सचार किया। इसके अतिरिक्त सरदार गुरुदत्तसिंह, भाई गुरुबचनसिंह "लहरी", प० गंगाप्रसाद जी 'प्रभाकर", तथा श्री घनश्याम जी 'प्रभाकर" आदि की कविताएँ हुईं। बाहर से आई हुई रचनाएँ भी पढ़ी गईं।

(४) पुरस्कार वितरण—

१६ मार्च को प्रात प० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति ने उपसहार रूप भाषण के पश्चात् अपने करकमलों से पुरस्कार वितरण किया प्रो० देशबन्धु, तथा मा० छज्जूराम जी रागी को सगीत के लिये 'कप' प्रदान किये गये। प० खुशीराम शर्मा वासिष्ठ, काव्य मनीषी साहित्य भूषण को सम्मेलन की ओर से "कवि-रत्न' की उपाधि प्रदान की गई, तथा एक रजत पदक दिया गया। सम्मेलनकी सफलताका तमाम श्रेय भाई गुरुबचनसिह लहरी, सरदार गुरुदत्त सिह, मा० अनन्तराम तथा महाशय महिपालसिह आदि को है।

प श्री निवास वासिष्ठ मत्री व्यापकधर्म सभा

(५) शुद्धि सम्मेलन नई देहली—

२३ मार्च की रात को ८॥ बजे से आर्य जगत् के प्रसिद्ध तार्किक शिरोमणि श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी के सभापतित्व मे आर्य समाज हनुमान रोड नई देहली के वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की ओर से एक बृहत् शुद्धि सम्मेलन हुआ। जिस में निम्न प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए।

(१) यह सम्मेलन आर्य (हिन्दू) जनता से आग्रह पूर्वक अनुरोध करता है कि वह शुद्धि कार्य को अग्रसर करने के लिये हर प्रकार से उसकी सहायता करे। शुद्धि आन्दोलन तर्क सम्मत तथा शास्त्र प्रतिपादित है और इतिहास में इसके अनेक प्रमाण हैं।

(२) इस सम्मेलन की निश्चित सम्मति है कि शुद्धि कार्य को अग्रसर करने के लिये सभी हिन्दू अपने शुद्ध हुए भाइयों के साथ निस्संकोच रूप से रोटी बेटी का व्यवहार करें और उनको वे सब अधिकार दें जो अन्य हिन्दुओं को प्राप्त हैं। इन प्रस्तावों पर श्री सत्यव्रत जी वानप्रस्थी, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्व-देशिक सभा, श्री गोपाल जी बी० ए० आदि के प्रभावशाली भाषण हुए।

गौरीशङ्कर बी० ए०
मन्त्री भारतीय शुद्धि सभा।

आर्य सांस्कृतिक युवक संघ विहार, पटना।

पटना कालेज के छात्रों ने १ वर्ष से अधिक हुआ आर्य सास्कृतिक युवक सघ की स्थापना की है। इस सघ का उद्देश्य आर्य सस्कृति और सभ्यता का सरक्षण और परिवर्धन है। प्रत्येक रविवार का सघ की साप्ताहिक बैठक मुनीश्वरा-नन्द भवन, बाकीपुर, पटना, आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय पर हुआ करती है। सघ के सदस्यों ने सर्व सम्मति से साप्ताहिक कार्यक्रम में सत्यार्थ प्रकाश के पठन पाठन को विशेष स्थान दिया है। इस समय सदस्यों की सख्या १०० के लगभग है। सदस्यों में श्री विश्वनाथ जी पचम वर्ष पटना कालेज और श्री भोलानाथसिंह जी द्वितीय वर्ष साइन्स कालेज का उद्योग प्रशसनीय है। इस वर्ष सघ के अधिकारी निम्न प्रकार हैं—

१ श्री स्वामी अभेदानन्द जी प्रधान

२. श्री पं० धर्मेन्द्र नाथ जी शास्त्री एम०ए० त्रितय प्रो० पटना कालेज उप प्रधान

३. श्री प० विद्यानन्द जी काव्य तीर्थ एम० ए० प्रो० बी० एम० कालेज, उपप्रधान

४. श्री भोलानाथ सिंह जी विद्यार्थी साइन्स कालेज, प्रधान मन्त्री।

इस से कालेज के विद्यार्थियों में अपने धर्म सभ्यता और संस्कृति के लिये एक अभूत पूर्व उत्साह दृष्टि गोचर हो रहा है। विहार प्रान्त के अन्यान्य कालेजों के छात्रों ने भी अपने यहा ऐसे ही सघ की स्थापना करके शीघ्रातिशीघ्र प्रान्तीय सघ से उसे सम्बन्धित करके बड़े पैमाने पर कार्य करने की उत्सुकता दिखलाई है। इस वर्ष ग्रीष्मावकाश के अवसर पर प्रान्त मे दौरा करके सघ के कार्य को सुविस्तृत करने के भावों से छात्र वर्ग ओत प्रोत है।

वासुदेव शर्मा
प्रधान मन्त्री
विहार आर्य प्रतिनिधि सभा।

सार्वदेशिक आ० प्र० सभा की सूचनाएं

ता० २७।३।४३ को साधारण सभा द्वारा सार्वदेशिक सभा के नवीन पदाधिकारियों और अन्तरग सदस्यों का सर्व सम्मति से जो नवीन निर्वाचन हुआ है उसकी सूची निम्न प्रकार है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के अधिकारी तथा अन्तरंग सदस्य

(सन् १९४३—४४ के लिये)

१. प्रधान श्री प० गगाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज
२. उपप्रधान श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय
३. राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री
४ श्री प० विनायक राव जी विद्यालङ्कार
५. श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार
६. मन्त्री— श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति
७ कोषाध्यक्ष—श्री ला०नारायणदत्तजी ठेकेदार
८ पुस्तकालयाध्यक्ष–श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी ठेकेदार
९. अन्तरगसदस्य श्री कुवर चादकरण जी शारदा राजस्थान।
१० „ , श्री प० वासुदेव जी बिहार
११ „ , श्री प० मिहिरचन्द्र जी धीमान्, बगाल।
१२ „ , श्री प्रो० ताराचन्द्र जी एम. ए. सिन्ध
१३ „ „ श्री प० विजयशकर जी बम्बई
१४ „ , श्री बा० श्रीराम जी, प्रवासी
१५ , „ श्री बा० ज्योति स्वरूपजी दानी
१६ „ , श्री महात्मा नारायण स्वामी जी प्रतिष्ठित
१७ „ „ श्री चौ० देशराज जी, समाजों से
१८ „ „ श्री प्रो० महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री सयुक्त प्रान्त
१९ , „ श्री प० रामदत्त जी शुक्ल, सयुक्त प्रान्त
२० „ „ श्री प० ज्ञानचन्द्र जी पजाब।
२१ „ „ श्री ला० नारायणदास जी कपूर पजाब।

प्रकाशनार्थ

आर्य जनता की सूचना के लिये उद्घोषित किया जाता है कि इस सभा की ओर से अल्मोड़ा और नैनीताल के ज़िलों में प्रचार करने वाले उपदेशक प० शान्ति स्वरूप जी शास्त्री को उनके आक्षेप योग्य व्यवहार के कारण सभा की सेवा से पृथक् कर दिया गया है अत अब कोई आर्य भाई वा आर्य समाज उन्हें इस सभा का उपदेशक न समझें।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।
३०।३।४३

शोक प्रस्ताव

२७-३-४३ की सार्वदेशिक सभा के वार्षिक अधिवेशन में स्वीकृत

(१) यह सभा श्री भक्त फूलसिंह जी, श्री प० देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री, श्री ठाकुरदास जी (वानप्रस्थ) श्री कैप्टेन रामचन्द्र जी, श्री के. डी दुर्गैया जी, श्री ठा० नत्थासिंह जी और श्री ठा० तेजसिंह जी के निधन पर दुःख प्रकट करती हुई उनके परिवार के प्रति हार्दिक सम वेदना का प्रकाश करती है।

(२) यह सभा मद्रास प्रान्त के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता और दक्षिण भारतीय आर्य सम्मेलन मद्रास के द्वितीय अधिवेशन के अध्यक्ष श्रीयुत सत्यमूर्ति जी की असामयिक मृत्यु पर खेद और उनके दुःखित परिवार से हार्दिक समवेदना प्रकट करती तथा भगवान् से उनको सद् गति के लिए प्रार्थना करती है।

सार्वदेशिक पत्र के मूल्य में वृद्धि

कागज की अत्यन्त असाधारण मंहगाई के कारण सभा की अन्तरग सभा तिथि २७।३।४३ के निश्चयानुसार "सार्वदेशिक" पत्र के वार्षिक चन्दे में १ रु० की वृद्धि करदी गई है। अब स्वदेश से २ रु० के स्थान में वार्षिक चन्दा ३ रु० और और विदेश से ५ शिलिंग के स्थान में ७ शिलिंग होगा। हमारी इच्छा और यत्न था कि इस पत्र के मूल्य के सस्तेपन की आर्य जगत् में जो विशेषता बनी हुई है वह अक्षुण्ण रहती पर हम विवश हो गये हैं। परन्तु यह वृद्धि नाम मात्र की है और साधारण समय में जब कागज सस्ता और सुलभ था तब ही हो जानी चाहिये थी। इस दृष्टि से वर्तमान वृद्धि वृद्धि नहीं है वरन् एक कमी की पूर्ति मात्र है जिससे कागज आदि के मूल्य में प्रतिदिन होनेवाली वृद्धि का आंशिक मुकाबला किया जा सके।

नोट:—जिन सज्जनों का इस वर्ष का चन्दा प्राप्त हो चुका है वे कृपया १।१ रु० और शीघ्र भेजने का कष्ट करें। मनी आर्डर भेजते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें

इन्द्र विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्वदेशिक सभा

सम्पादकीय

आर्य समाज का भविष्य—

इस अङ्क में जो आर्य समाज स्थापना दिवस (५-४-४३) के अगले दिन प्रकाशित हो रहा है पाठक आर्य समाज विषयक अनेक उत्तम विचार पूर्ण लेख पाएंगे। आर्य समाज जिन सार्वभौम बुद्धि विज्ञान सगत सिद्धान्तों को मानता है तथा उसकी स्थापना स्वनाम धन्य आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द ने जिस पवित्र उद्देश्य से सारे ससार के उपकार के लिये की थी उनको दृष्टि में रखते हुए हमे तो आर्य समाज का भविष्य बड़ा उज्ज्वल और आशाजनक प्रतीत होता है यदि आर्य अपनी उत्तरदायिता का अनुभव करें तथा 'सार्वदेशिक सभा' के गत बृहदधिवेशन (२७मार्च) में सर्वसम्मति से स्वीकृत कार्यक्रम को पूर्णतया अपनाएँ। प्रतिष्ठित सभा के मान्य मन्त्री श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के 'आर्य समाज का भावी कार्यक्रम' विषयक लेख और उसमें उद्धृत त्रैवार्षिक कार्यक्रम की ओर हम सभी आर्य नर-नारियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना चाहते हैं। आर्य समाजका भविष्य किसी विशेष कार्यक्रम पर ही नहीं बल्कि उसको क्रियात्मक रूप देने वाले नरनारियों के वैयक्तिक और पारिवारिक जीवनों पर भी बहुत अश तक अवलम्बित है इसीलिये इस कार्यक्रम में वैदिक स्वाध्याय और सत्सङ्ग आदि द्वारा जीवनों को उच्च बनाने पर बल दिया गया है। यदि आर्य समाज सकटकाल में सेवा और सहायता के कार्य को करना चाहता है, वह देशवासियों के अन्दर आत्मरक्षा की शक्ति को उत्पन्न करके उसके द्वारा अन्यों का उपकार करना चाहता है तो आर्य वीर दलों और आर्य वीराङ्गना दलों का नियमित देश व्यापी दृढ सगठन अनिवार्य है। अबतक आर्य समाज का प्रचार,कार्य अधिकतर नगरों तक सीमित रहा है यद्यपि यह एक सचाई है कि भारतीयों की ८५ प्रतिशतक से अधिक जनता ग्रामों में निवास करती है इसलिये न केवल मौखिक प्रचार बल्कि ओषधि वितरणादि सेवा-कार्य और प्रारम्भिक विद्यालयों की स्थापनादि द्वारा ग्रामों मे वैदिक धर्म प्रचार का अधिक यत्न करने की आवश्यकता है। दलितोद्धार कार्य का प्रारम्भ ही आर्य समाज ने किया था किन्तु अब गत कई वर्षों से इस तरफ़ पर्याप्त ध्यान आर्य समाज की ओर से नहीं दिया जा रहा अत उस तरफ़ पुन ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता सभा को अनुभव हुई है। जब तक आर्य भी जन्म सिद्ध जाति भेद (जातपात) और अछूत-

पन की दल दल में धँसे हुए हैं तबतक यह दलितोद्धार और शुद्धि का कार्य सफलतापूर्वक होना असम्भव है अत उस दलदल से अपने को निकालना प्रत्येक आर्य नर नारी का कर्त्तव्य है। इस कार्यक्रम को उत्साह पूर्वक अपनाने और पौराणिक मठ भावना तथा सकुचित साम्प्रदायिकता से पृथक् रह कर महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित विशुद्ध वैदिक मार्ग का निर्भयता पूर्वक अनुसरण करने से ही आर्य समाज अपने पवित्र उद्देश्य की पूर्ति में सफल हो सकता है तथा अपने भविष्य को अधिक उज्ज्वल बना सकता है।

आर्य समाज स्थापना दिवस और वेद प्रचार निधि—

'सार्वदेशिक' के गत अङ्क मे हमने आर्य समाज स्थापना दिवस विषयक 'टिप्पणी दो थी। उसके पश्चात् सार्वदेशिक सभा कार्यालय से सब आर्य समाजों के नाम स्थापना दिवस विषयक विज्ञप्ति भेजी जा चुकी है और हमें विश्वास है कि आर्य समाजें इस दिन को उत्साह के साथ मनाकर सभा के आदेशानुसार अपने भावी कार्यक्रम को निश्चित करेंगी और सभा की वेद प्रचार निधि के लिये अधिक से अधिक दान एकत्र करके भेजेंगी जिससे देश देशान्तरों मे प्रचार कार्य का अधिक विस्तार किया जा सके। सभा इस वर्ष उदयपुर के भीलों, मालावार के थिया तथा दलित जातियों और उड़ीसा तथा दक्षिण भारत में विशेष रूप से कार्य का विस्तार करना चाहती है जिसके लिये वेद प्रचार निधि मे सहायता देना प्रत्येक आर्य समाज को अपना धार्मिक कर्तव्य समझना चाहिये। ऐसा न हो (जैसे कि गत २ वर्षों में हुआ) कि इस निधि के लिये धन को एकत्रित करने में सभा को अपने समय और शक्ति का व्यय करना पड़े। हमे विश्वास है कि सब आर्य समाजें शिरोमणि सभा के आदेश का पालन कर के अपनी कर्तव्य परायणता और अनुशासन का प्रमाण देंगी तथा देश देशान्तरों मे प्रचार के पवित्र कार्य मे सहयोग देकर पुण्य की भागी बनेंगी।

नवजगन्निर्माण और आर्य समाज—

जगत् की वर्तमान अशान्ति और अव्यवस्था को देख कर सभी विचारशील व्यक्ति और साधारण नवजगत् के निर्माण की आयोजना बनाने में तत्पर हैं। आर्य समाज का विश्वास है कि वह सार्वभौम वेद के द्वारा अशान्त तथा सन्तप्त जगत् को शान्तिदायक शुभ सन्देश दे सकता है। इस सन्देश को विचारशील व्यक्तियों तक पहुचाने के लिये अभी से तय्यारी की आवश्यकता है। सार्वदेशिक सभा के २७ मार्च के अधिवेशन में श्री मिहिरचन्द्र जी धीमान् प्रधान मन्त्री बङ्गाल आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रस्ताव पर सभा ने निश्चित किया है कि नव जगन्निर्माण (New world order) विषयक उत्तम साहित्य आर्य भाषा और अँग्रेजी मे सुयोग्य आर्य विद्वानों द्वारा तय्यार कराया जाए जिसे उत्तम विचारकों तथा वर्तमान काल के प्रभावशाली व्यक्तियों तक पहुँचाया जा सके। वेदों तथा उपनिषदों के प्रामाणिक अंग्रेजी अनुवाद भी शीघ्र तय्यार करवाने चाहिये ताकि हम अपने पवित्र सन्देश को शुद्ध रूप में पाश्चात्य जगत् के सम्मुख रखने मे समर्थ हो सकें। आशा

है सुयोग्य आर्य विद्वान् अपनी योग्यता और आर्य धर्म प्रेमी दानी मानी सज्जन उदार आर्थिक सहायता द्वारा इस शुभ कार्य की पूर्ति कराकर पुण्य भागी बनेंगे।

मि० ऐमरी का अनर्गल भाषण और वायसराय का इन्कार—

गत ३० मार्च को भारतमन्त्री मि० ऐमरी ने पार्लियामेन्ट में जो अनर्गल भाषण दिया उसकी विस्तृत समालोचना करना अनावश्यक है क्योंकि मि० ऐमरी को ऐसे निस्सार भाषण देने और पिष्टपेषण करने की बीमारी हो गई प्रतीत होती है। इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध पत्र डेली हैरल्ड ने उनके भाषण पर टिप्पणी करते हुए ठीक ही लिखा है कि "पार्लियामेन्ट के समय की बहुमूल्यता को दृष्टि में रखते हुए क्या मि० ऐमरी के भाषण वस्तुत आवश्यक हैं? उनका कल (३० मार्च) का भाषण उन्हीं भाषणों को थकने वाली पुनरावृत्ति थी जो वे गत ३ वर्षों से दे रहे हैं।" मचेस्टर गार्डियन' ने अपनी टिप्पणी में भारतीय समस्या को हल करने और गति अवरोध को दूर करने के लिये कुछ क्रियात्मक निर्देश दिये हैं कि भारतीय लोक मत के प्रतिनिधियों को एकत्रित होकर एक आयोजना बनने का अवसर दिया जाए क्या मि० ऐमरी इस दिशा में उन्हें प्रोत्साहित नहीं कर सकते? भारतीय नेताओं को मि० गाधी तथा अन्य कांग्रेस नेताओं से जेलों में मिलने का और गाधी जी को अपने सहकारियों से परामर्श करने का अवसर दिया जाए या ब्रिटिश सरकार भारतीय नेताओं को लण्डन में निमन्त्रित करे इत्यादि" किन्तु मि० ऐमरी इन निर्देशों पर कुछ ध्यान देंगे इसकी हमें कुछ भी आशा नहीं है। वे तो क्रिप्स प्रस्तावों को बार बार दुहराने और महात्मा गाधी जी पर सारे उपद्रवों की उत्तरदायिता डालने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते प्रतीत होते हैं। मि० ऐमरी के इस भाषण को दृष्टि में रखते हुए वायसराय से श्री राजगोपालाचार्यादि के डेपुटेशन के सम्बन्ध में जिस व्यवहार की आशा की जा सकती थी वही हुआ है। महात्मा गाधी ने अपने पत्र व्यवहार में हिंसात्मक कार्यों का स्पष्ट निराकरण किया था किन्तु वायसराय को उतने से सन्तोष नहीं वे सम्भवत तब तक सन्तुष्ट न होंगे जब तक म० गाधी तथा अन्य नेता उनके आगे स्पष्टतया घुटने न टेक दें। श्री राजा जी आदि ने डेपुटेशन ले जाने विषयक शर्तों को आत्म सम्मान विरुद्ध तथा निष्फल समझकर केवल लिखित वक्तव्य ही भेजा था जिसमें महात्मा गाधी से मिलकर उनके सहयोग से भारतीय समस्याओं को हल करने का विचार प्रकट किया था किन्तु वायसराय ने उनकी इस माग को साफ़ ठुकरा दिया। इस पर भी आश्चर्य यह है कि मि० ऐमरी तथा वायसराय यह कहते नहीं थकते कि हम भारतीय गति अवरोध को दूर करने में हर तरह की सहायता देने को तैयार हैं यदि हमें निश्चित आश्वासन दिये जाए। नजरबन्द या कैदी कांग्रेस नेता जब तक उन्हें मिलकर देश की स्थिति को समझने और उस पर विचार करने का अवसर न दिया जाए ऐसे आश्वासन दे ही

कैसे सकते हैं यह साधारण सी बात भी इन बुद्धिमान शासकों के मस्तिष्क में क्यों नहीं आती यही हैरानी की बात है जिस प्रान्तीय स्वराज्य की इतनी डींग हाकी जाती है सिन्ध के प्रधान मन्त्री अल्लाबख्श को हटा देने और अब बंगाल के अस्थिर मति प्रधानमन्त्री फजलुलहक के गवर्नर द्वारा जबर्दस्ती तत्काल त्याग पत्र दिलाने से उसकी पोल खुल गई है।

शोक समाचार—एक सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता का देहावसान—

दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध वाग्मी और राष्ट्रीय नेता श्री सत्यमूर्ति के गत २८ मार्च को मद्रास के हस्पताल में देहावसान होने का समाचार जानकर हमें अत्यन्त दुःख हुआ। श्री सत्यमूर्ति अपने अत्यन्त ओजस्वी भाषणों के कारण सारे भारत में विख्यात थे। वे निर्भय और प्रभावशाली वक्ता थे। आर्य समाज के साथ भी उनको काफी प्रेम पैदा हो गया था। कुछ वर्ष पूर्व उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में स्फूर्तिदायक दीक्षान्त भाषण दिया था और मेरी प्रार्थना पर गत २७ दिसम्बर १९४१ को दक्षिण भारतीय आर्य सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन के जो मद्रास में हुआ वे सभापति बने थे। उनका वह अध्यक्ष भाषण अनेक दृष्टियों से चिरस्मरणीय रहेगा जिसमें उन्होंने हिन्दू मात्र से शक्ति पुञ्ज आर्य समाज से सहयोग के लिये अपील की थी। हम दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिये भगवान् से प्रार्थना करते हुए उनके सम्बन्धियों से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं।

ऐसे ही मध्य प्रान्त आर्य प्रतिनिधि सभा के उत्साही कार्यकर्ता तथा 'आर्य सेवक' पत्र के सम्पादक ठाकुर शेरसिंह जी और सिन्ध आर्य प्रतिनिधि सभा के उत्साहीमन्त्री प्रो० ताराचन्द्रजी एम० ए० के सुयोग्य भ्राता और गुरुकुल विश्व विद्यालय कांगड़ी के भूतपूर्व आङ्गल भाषोपाध्याय प्रो० टीकमदास जी एम० ए० के (जिनसे अंग्रेजी पढ़ने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ था तथा जो अपनी सज्जनता के कारण प्रख्यात थे) असामयिक देहावसान का खेद जनक समाचार प्राप्त हुआ है। हम इन दोनों महानुभावों के सम्बन्धियों से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए भगवान् से उनकी सद्गति की प्रार्थना करते हैं।

धर्मदेव वि० वा०

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक मे योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियो को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासो को कर सकता है। मूल्य ॥=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण ।~)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।~), ≡), =)॥, =)॥, ~)॥, ≡)॥, ।), ।=)॥

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय में रहनी चाहिएं।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार देहली मे मुद्रित।



१९४३ ई०
२००० सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश ७ शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष १८ } मई, १९४३ ई०] वैशाख २००० [दयानन्दाब्द १२० { अङ्क ३

* वैदिक प्रार्थना *

ओं यत्सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्य पार्थिव वसु। तन्नः पुनान आभर ॥

(सामवेद उ० अ० ३।२)

शब्दार्थ—(सोम) हे शान्तस्वरूप शान्तिप्रद सर्वोत्पादक भगवन् (यत्) जो (चित्रम्) अद्भुत, आश्चर्य कारक (उक्थ्यम्) प्रशंसनीय (दिव्यम्) दिव्य—आत्मिक और (पार्थिवम्) भौतिक (वसु) ऐश्वर्य है (न) हमें (पुनान) पवित्र करता हुआ तू (तत्) उसे (आभर) धारण करा—प्राप्त करा।

विनय—हे शान्ति के मूल कारण प्रभो। आप ही शान्ति सुख और आनन्द के देने वाले हैं। आप सर्वथा पवित्र हैं। आप हमें भी पवित्र बनाइये तथा ऐसी शक्ति दीजिये कि हम निर्भयता चित्त शुद्धि, ज्ञान संयम, अहिंसा, सत्य, अक्रोध त्याग, क्षमा, दया, तेज, धैर्य आदि दिव्य ऐश्वर्य (दैवी सम्पत्) और भौतिक धन को प्राप्त कर उनका सदा सदुपयोग करते रहें। हमें ऐसे ऐश्वर्य की प्राप्ति हो जिसकी सब विद्वान् प्रशंसा करें और जो अत्यन्त उत्तम हो।

वेदामृत—

जीवन में माधुर्य

(१) मधुमन्मेनिक्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसन्दृशः ॥
(अथर्व १।३४।३)

(२) मधोरस्मि मधुतरो मदुघान्मधुमत्तरः ।
मामित् किल त्वं वना शाखां मधुमतीमिव ॥
(अ० १।३४।४)

(३) परित्वा परितत्नुनेक्षुणागामविद्विषे ।
यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः ॥
(अ० १।३४।५)

(४) अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः ।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ॥
(अ० ३।३०।२)

शब्दार्थ—

(१) (मे) मेरा (निक्रमणम्) कार्यों में प्रवृत्त होना अथवा जाना (मधुमत्) मधुरता वा प्रेम से युक्त हो (मे) मेरा (परायणम्) कार्यों की समाप्ति तक जाना या लौटकर आना (मधुमत्) मधुरता युक्त हो। मैं (वाचा) वाणी से (मधुमत् वदामि) सदा मीठा ही बोलूं और (मधुसन्दृशः भूयासम्) मिठास से भरी दृष्टि वाला हो जाऊं अथवा सब देखने वाले प्राणियों के लिये शहद के समान प्रिय बन जाऊँ।

(२) मैं पति (मधोः मधुतरः अस्मि) शहद से भी अधिक मीठा हूँ (मदुघात् मधुमत्तरः) अन्य मधुर चीजों से भी अधिक मधुरता युक्त हूं अथवा ज्ञान रूपी मधु का संचय करने वाले विद्वान् से भी अधिक ज्ञान का संचय करने वाला हूं। हे पत्नि! (त्वं) तू (मधुमतीं शाखाम् इव) मिठास से भरी शाखा या लता की तरह (माम् इत् वना) मेरा ही सेवन कर।

(३) हे धर्मपत्नि! मैं पति (परितत्नुना इक्षुणा) सब ओर विस्तृत गन्ने के समान मधुर प्रेममय भाव से (अविद्विषे) परस्पर द्वेषभाव से सर्वथा रहित होकर प्रेम पूर्वक निवास के लिये (त्वा आगाम्) तेरे समीप आया हूं (यथा मां कामिनी असः) जिससे तू मेरी ही कामना करने वाली हो (यथा) जिससे तू (मत् अपगा न असः) मुझसे दूर रहने वाली या मुझसे विमुख न बन।

(४) (पुत्रः) पुत्र (पितुः अनुव्रतः) पिता के शुभ सङ्कल्प और कर्म के अनुसार ही कर्म करने वाला और (मात्रा समनाः भवतु) माता के मन के अनुकूल प्रेमपूर्वक कार्य करने वाला हो (जाया) पत्नी (पत्ये) पति के लिये (मधुमतीम्) मधुर (शन्तिवाम्) शान्ति देने वाली (वाचं वदतु) वाणी का प्रयोग करे॥

इन मन्त्रों में मनुष्यों को अपने जीवन में मधुरता कैसे लानी चाहिये इस बात का बड़ा उत्तम उपदेश है। जीवन को मधुर बनाने के लिये उत्तम भावना और प्रार्थना भी यहां बताई गई है। मनुष्य को सदा ऐसा प्रयत्न करना चाहिये

(शेष पृष्ठ ११२ पर)

आर्य समाज के नियमों की व्याख्या

[लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए प्रधान सयुक्त प्रान्त आर्य प्रतिनिधि सभा]

[गताङ्क से आगे]

चौथे नियम में बताया गया है कि आर्यों को सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने मे सर्वथा उद्यत रहना चाहिये। इस विषय में बहुधा शका हो जाती है। एक ओर तो सिद्धान्तों को निश्चित कर दिया गया। दूसरी ओर सिद्धान्तों को बदलने के लिये स्वतन्त्रता दे दी गई। परन्तु ऐसी शका करने वाले तात्पर्य को नहीं समझे। किसी समाज या सगठन का निश्चित सिद्धान्त रखना एक बात है और उसके व्यक्तियों का जिज्ञासु होना दूसरी बात। सत्य की खोज तो मनुष्य के जीवन का एक मात्र उद्देश होना चाहिये क्योंकि "न हि सत्यात् परो धर्म" वेदों का पढ़ना पढ़ाना भी तो इसी लिये धर्म कहा कि वह "सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" सत्य की खोज के बिना तो मनुष्य वेद को भी नहीं समझ सकता। यह मनुष्य का वैयक्तिक अधिकार है फिर वह सत्य की खोज करे और सत्य को मानने और असत्य को छोड़ने के लिये सर्वथा और सर्वदा उद्यत रहे। यदि ऐसा न करेगा तो मनुष्य का मस्तिष्क-सकुचित और पक्षपाती हो जायगा और उस से जगत् का बड़ा अकल्याण होगा। ऋषि दयानन्द अनुभव से जानते थे कि वर्तमान मतमतान्तरों के संस्थापकों ने अपनी बात को चलाने के लिये अपने अनुयायियों को सत्य की खोज के लिये स्वतन्त्र नहीं छोड़ा और उनमें अनेक प्रकार की सकुचितता आ गई। स्वामी दयानन्द आर्य्य समाजियों को ऐसा ही बनाना नहीं चाहते थे। चाहे कुछ भी क्यों न हो सत्य तो हम सब का एक मात्र धर्म होना चाहिये। यदि खोज के पश्चात् वेद असत्य सिद्ध होते हैं तो मनुष्य का कर्तव्य है कि सत्य के लिये वेद को भी छोड़ दे। चाहे आर्य समाज रहे या न रहे। स्वामी दयानन्द आर्य समाज को एक सकुचित सम्प्रदाय बनाना नहीं चाहते वह तो इसको सत्य का प्रचारक बनाना चाहते हैं। सत्य के प्रचार के लिये सत्य की खोज की आवश्यकता है। आर्य समाज का चौथा नियम इसी बात पर बल देने के लिये है। "बाबा वाक्य प्रमाणम" का यह विरोध करता है।

पाँचवें नियम में सत्याचरण पर बल दिया गया है क्यों कि हमारे ज्ञान का उद्देश भी यही है कि वह हमारे जीवन को पवित्र बना सके। जैसा जानो वैसा मानो, जैसा मानो वैसा करो।

'पण्डिता अपि व्यवहार काले लोक सामान्य नाति वर्तन्ते' (शङ्कर) का सिद्धान्त ठीक नहीं।

छठे नियम म आर्य समाज का 'मुख्य उद्देश्य' बताया गया है अर्थात् ससार का (न कि किसी व्यक्ति, देश, या सम्प्रदाय का) उपकार करना अर्थात् शारीरिक सामाजिक और आत्मिक उन्नति करना। यह उद्देश्य इतना व्यापक है कि इस से

बाहर कुछ रह नहीं जाता। इस में समस्त उन्नति ओत प्रोत है। इससे छोटे और सकुचित उद्देश्य भी आर्य समाज के हो सकते हैं उदाहरण के लिये किसी व्यक्ति विशेष या परिवार विशेष की सहायता करना या किसी समुदाय विशेष की विशेष कुरीतियों का निवारण करना, परन्तु यह "उद्देश्य" हैं "मुख्य उद्देश्य" नहीं। और यह उद्देश्य वहीं तक विहित हैं जहाँ तक कि वे 'मुख्य उद्देश्य' की पूर्ति के बाधक न हों। देश-भक्ति, राज-भक्ति, जाति भक्ति, परिवार-भक्ति, पितृ-भक्ति, मातृ-भक्ति यह सब छोटे छोटे उद्देश हो सकते हैं और होने चाहिये परन्तु उसी सीमा तक जब तक वे ससार की उन्नति के साधक हों, संसार एक बड़ी मशीन है और अन्य क्षेत्र उसी बड़ी के अङ्ग हैं। किसी अवयव को इतना नहीं बढ़ना चाहिये कि वह समस्त मशीन को नष्ट कर दे। सातवे नियम मे परस्पर वर्तन के नियम हैं; प्रेम पूर्वक, धर्मानुसार और यथायोग्य। यह नियम एक प्रकार से छठे नियम का स्पष्टीकरण है। ससार की उन्नति में वही समाज उद्यत रहेगा जिस के सदस्यों को दूसरों के लिये प्रेम होगा। हम उन्हीं का उपकार करने के इच्छुक होते हैं जिनसे प्रेम करते हैं, परन्तु यह प्रेम अन्धा प्रेम नहीं होना चाहिये अन्धा प्रेम पक्ष-पात पूर्ण और दोनों पक्षों के लिये अहितकर होता है। इसी लिये धर्मानुसार और यथायोग्य शब्द का प्रयोग किया। सब के साथ धर्मानुसार बर्ताव तो हो सकता है परन्तु एकसा नहीं। क्यों कि यद्यपि बर्ताव करने वाले हम अकेले हैं परन्तु जिनके साथ हम बर्ताव करते हैं वह तो अनेक हैं और भिन्न २ प्रकार के हैं। उनकी प्रवृत्तिया, योग्यताये और आवश्यकताये भिन्न २ हैं। अत उनका बर्ताव भी तदनुकूल ही होना चाहिये।

आठवाँ नियम आर्य समाज के ऊपर एक बहुत बडे कर्तव्य का भार डाल देता है। अर्थात् जब तक विद्या के प्रचार और अविद्या के नाश का विशेष प्रयत्न न किया जायगा। मनुष्य जाति धर्मात्मा हो ही नहीं सकती। चौथा नियम वैयक्तिक कर्तव्य बताता है अर्थात् हमको अपने साथ क्या व्यवहार करना चाहिये। आठवा नियम हमारा दूसरों के प्रति कर्तव्य बताता है, पहला उद्देश्य 'पढ़ कर' पूरा होता है और दूसरा 'पढ़ा कर'। यह एक दूसरे के साध्य साधक हैं।

नवें नियम मे स्वार्थ और परार्थ का परस्पर सम्बन्ध बताया गया है अर्थात् परार्थ मे ही मनुष्य का स्वार्थ है। यदि मनुष्य अपना भला चाहता है तो दूसरों का भला करे। मनुष्य ससार में अकेला नहीं है और न अकेला उन्नति कर सकता है। ससार की कोई वस्तु अकेली और अलग अलग नही है। सब एक दूसरे से माला के दानों के समान सम्बद्ध हैं। एक की उन्नति में दूसरे की उन्नति है। जिसने इस रहस्य को समझ लिया वह किसी के लिये अहित-चिंतन करेगा ही नहीं क्यों कि दूसरे का अहित चिंतन अपना अहित चिंतन है और कोई अपना अहित नहीं चीतता।

दसवें नियम में सगठन के रहस्य को बताया गया है। यह तो समस्त उन्नतियों की तालिका है। जिस प्रकार बिना जिल्द के कोई पुस्तक ठीक

नहीं रहती इसी प्रकार बिना सगठन के किसी समाज का निर्माण नहीं हो सकता । असगठित समाज तो समाज नहीं और समाज तभी बनेगा जब समाज के भिन्न २ सदस्य अपनी अपनी स्वतन्त्रता का विचार छोड कर परस्पर तन्त्रता (Inter dependence) को दृष्टि में रक्खेंगे। बहुधा यह प्रश्न हुआ करता है कि क्या व्यक्ति समष्टि के लिये है या समष्टि व्यक्ति के लिये। आर्य समाज कहता है कि ये दोनों प्रश्न एकाङ्गी हैं। सचाई इन दोनों के बीच में है । ऐसी समष्टि जिसमें व्यक्तित्व को सवथा नष्ट कर दिया गया है निरर्थक है वह माला क्या जिसका हर एक पुष्प खिला न हो । और समष्टि को नष्ट करके व्यक्ति की उन्नति असभव है । एक है निरर्थक दूसरा है असभव' । उचित यही है कि व्यक्तियों का व्यक्तित्व न नष्ट हो और उनके द्वारा समष्टि की उन्नति होती रहे। इन दो बातों को उचित सीमा के भीतर रखना और उनमें एक प्रकार का समन्वय उत्पन्न करना ही धर्म का मूल है। यह तभी होगा जब कुछ मै दबू, कुछ आप दबें। समाज का हर एक सदस्य अपनी स्वतन्त्रता को किसी सीमा तक दूसरों के अधिकार मे दे देता है क्यों कि इसी में उसकी स्वतन्त्रता सुरक्षित है। हाँ उसकी सीमा होनी चाहिये । इसी लिये आर्य समाज यह नहीं कहता कि वैयक्तिक स्वतन्त्रता को सर्वथा नष्ट कर दो क्यों कि ऐसा करने से व्यक्तित्व का विकास बन्द हो जायगा। और न वह यह कहता है कि तुम अपने काम में इतने रत हो जाओ कि परार्थ को सर्वथा भुला दो आरम्भिक २८ नियमों के नियम ६ को पढिये।

यह है आर्य समाज के नियमों की साकेतिक व्याख्या । पहले २८ नियमों में नियम और उपनियम दोनों सम्मिलित थे। और उनके बदलने का अधिकार भी समाज को दिया गया था (देखो नियम २८)। परन्तु यदि कही ऐसा होता तो अब तक भिन्न भिन्न अभिप्रायों से प्रेरित हो कर आर्य समाज न अपने नियम बदल दिये होते और उनमें किसी प्रकार का नैरन्तर्य न रहता। इस में भय था कि समाज धीरे धीरे कहीं से कहीं चला जाता । परन्तु पिछले दस नियमों को इतना निश्चित कर दिया गया है कि इन के बदलते ही समाज का वास्तविक रूप बदल जाने का भय है । यों कहना चाहिये कि ये आर्य समाज के निश्चित नियम हैं जिन में किसी प्रकार का परिवर्तन असह्य होना चाहिये।

(शेष अगले अङ्क मे)

महिला-जगत्

आर्य-समाज और नारी उद्धार

(लेखिका—श्रीमती चन्द्रावती जी एम० ए० बी० टी० धमपत्नी प्रो० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार बम्बई)

[गताङ्क से आगे]

(३)

ऋषि दयानन्द के आदर्शों को जनता तक पहुँचाने और उन्हें देशव्यापी बनाने के लिये आर्यसमाज का जन्म हुआ था। आर्यसमाज को ऋषि के मिशन को फैलाने का गौरव तथा श्रेय प्राप्त है। स्त्री-उद्धार आर्यसमाज के प्रोग्राम का एक आवश्यक अङ्ग सदा से रहा है। नारी उद्धार के कार्य को सम्पन्न करने तथा उसे ठीक दिशा मे ले जाने में आर्य समाज कहा तक सफल हुआ है इस पर यहा कुछ विचार कर लेना अप्रासागिक न होगा।

आर्यसमाज जिस समय कार्यक्षेत्र मे उतरा उस समय स्त्री-शिक्षा के नाम पर लोग हँसते थे। बडे २ विद्वान् तथा पण्डित स्त्री-शिक्षा का विरोध करने को तयार थे। ऐसे प्रतिकूल वायुमण्डल मे शिक्षा का प्रचार करना कोई खेल न था। आर्यसमाज ने न केवल प्लेट-फार्मों से ही स्त्री-शिक्षा का प्रचार किया किन्तु आर्य कन्या पाठशालायें और कन्या-गुरुकुल खोल कर जनता के सम्मुख इस सिद्धान्त का क्रियात्मक रूप भी उपस्थित किया। अब तो हवा का रुख ही बदल गया है। कोई विचार-शील व्यक्ति स्त्री-शिक्षा की उपयोगिता को अस्वीकार करने को तयार नहीं। उच्च शिक्षा का प्रचार भी स्त्रियों में दिनोंदिन बढता जा रहा है। स्त्रियों में शिक्षा फैलाने मे आर्यसमाज का बडा भारी भाग है। हा, ऋषि दयानन्द जिस प्रकार की शिक्षा वैदिक-शिक्षा-पद्धति के अनुसार स्त्रियों को देना चाहते थे वह अभी तक लोकप्रिय नहीं बन सकी है। कन्या-गुरुकुल जो अभी तक खुले है उगलियों पर गिने जा सकते हैं। जो हैं वे भी परीक्षण की अवस्था में हैं। वर्तमान परिस्थितियों तथा वैदिक सस्कृति के आदर्शों के अनुकूल कन्याओं के लिये उपयुक्त शिक्षा प्रणाली का विकास होना अभी शेष है।

बाल विवाहों के विरुद्ध भी आर्यसमाज ने एक प्रभावशाली वातावरण पैदा कर दिया है। बाल-विवाहों की सख्या देश में काफ़ी घट गई है। शारदा-बिल को पास कराने के लिये अनुकूल वायुमण्डल उत्पन्न करना आर्यसमाज का ही काम था। विवाह-सम्बन्ध स्थापित करने के समय अधिकाश माता-पिता कन्या की सहमति लेना आवश्यक समझने लगे हैं। शिक्षित कन्याओं में

तो स्वय वर चुनने की प्रथा का प्रारम्भ भी हो चला है। किन्तु दहेज इत्यादि विवाह सम्बन्धी खर्चीली प्रथायें जिनके कारण भारत मे अनेक कन्याओं को अपने प्राण तक न्योछावर करने पडे हैं अभी तक किसी न किसी रूप में बनी ही हुई हैं। इनका बहिष्कार कराने में आर्यसमाज को अभीष्ट सफलता नहीं मिल सकी है। इस दिशा में क्रियात्मक प्रचार की आवश्यकता है।

बालविधवाओं पर जो अत्याचार होते थे उनमें पर्याप्त कमी है। विधवाओं के प्रति समाज मे एक सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण उत्पन्न हो गया है, यद्यपि अभी तक विधवा विवाह' उतना लोकप्रिय नहीं हो सका जितना होना चाहिये था। 'विधुर' का कुमारी कन्या के साथ विवाह जो वैदिक आदश के विरुद्ध है, अभी तक काफी प्रचलित है। किन्तु जब तक विधवा विवाह का प्रचार पर्याप्त मात्रा मे न होगा तब तक इस प्रथा को रोकना अत्यन्त कठिन है। इस दिशा मे भी अभी प्रचार की काफी गुञ्जाइश है।

स्त्री की स्थिति मे अब क्रान्तिकारी परिवतन आ गया है। वह पहिले की अपेक्षा बहुत अधिक ऊँची उठ गई है। सोई हुई भारतीय नारी अब जाग उठी है। उसके अन्दर अब आत्म सम्मान स्वावलम्बन, निर्भयता आदि गुणों का प्रादुर्भाव हो रहा है। उन्नति करने की तीव्र अभिलाषा उसमें उत्पन्न हो रही है। उसका कार्यक्षेत्र भी अब विस्तृत हो चला है। वह जीवन के हर क्षेत्र में अपना सहयोग देने की इच्छुक है। सन १९२० तथा १९३० मे जो राजनीतिक आन्दोलन देश में हुये उनमें जेल जाने वाली बहिनों में अधिक सख्या आयसमाजी बहिनों की ही थी। यह चौमुखी जागृति, और उसकी अमिट चाह, जिसके अकुर स्त्री जाति में उत्पन्न हो चुके हैं— आर्यसमाज के अथाह परिश्रम का ही परिणाम है। आज इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि स्त्री-उद्धार के कार्य में ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज का बहुत बड़ा हाथ है। किन्तु, नारी-जागरण का आन्दोलन अभी अपने शैशव काल में ही है। इसका प्रारम्भ करके इसको ठीक दिशा में ले जाना भी आर्यसमाज का ही कार्य होगा॥

(पृष्ठ १०८ का शेष)

कि उसका आना जाना, चलना फिरना तथा प्रत्येक व्यवहार मधुरता से भरपूर हो। वाणी से सदा मधुर शब्दों का प्रयोग किया जाए इतना ही पर्याप्त नहीं है प्रत्युत हमारी दृष्टि में भी मधुरता रहनी चाहिये जिससे हम सबके प्रेमपात्र बन सकें। गृहस्थ जीवन मे तो यह माधुर्य और भी अधिक आवश्यक है। पति पत्नी पिता पुत्र, माता पुत्र, भाइ बहिन सबका परस्पर सभाषण तथा अन्य व्यवहार प्रेमपूर्ण होना चाहिये जिससे उनमे कभी विरोध न उत्पन्न हो किन्तु शान्ति और सुख की वर्षा सदा होती रहे। जहा पत्नी का यह कर्तव्य है कि वह अपने पति के साथ ऐसी वाणी का प्रयोग करे जो अशान्ति को दूर करके शान्ति लाने वाली और मिठास से भरी हुई हो वहा पति का भी यह कर्तव्य है कि वह अपनी पत्नी के साथ सदा मधुर वचन बोले और अपने निष्कपट प्रेम पूर्ण मधुर व्यवहार से उसे प्रसन्न रखने का यत्न करे। पुत्र का कर्तव्य है कि वह पिता के शुभ सकल्प को पूर्ण करने का सदा प्रयत्न करता रहे और माताका आज्ञाकारी बनकर उसके प्रति आदर रक्खे। इस प्रकार जिस परिवार और समाज मे सब लोग अपने जीवन के अन्दर माधुर्य लाने का प्रयत्न निरन्तर करते रहते हैं वहीं सुख शान्ति और आनन्द का निवास होता है॥ —ध० दे०

विनय—

—:तमसो मा ज्योतिर्गमय:—

(श्री ठाकुरप्रसाद जी विद्यार्थी शेखपुरा मुंगेर)

दीन दयालु कृपालु प्रभो ! भक्तन हितकारी।
लोक और परलोक तुम्हीं सर्वत्र विहारी॥
तुम्हीं सच्चिदानन्द तुम्हीं सर्वस्व हमारे।
तुम्हीं पिता के पिता तुम्हीं प्यारे के प्यारे॥

हम मानव अज्ञान हैं ज्ञान हमें दीजै प्रभो।
विद्या, धन बल बुद्धि से पूर्ण हमें कीजै प्रभो॥

भूल गये हैं राह नाथ ! घर दूर हमारा।
रात्रि प्रबल घन घोर और छाया अँधियारा॥
थर्राते हैं पाव खोगया साहस सारा।
देख न अन्य उपाय नाथ ! है तुम्हें पुकारा॥

हो प्रकाश मय तुम प्रभो! निज प्रकाश का दान दो।
सत्पथ दिखलाओ प्रभो ! साहस धैर्य महान दो॥

स्वावलम्ब औ स्वाभिमान हममें हो पूरा।
रहे नहीं सत्कार्य हमारा ईश ! अधूरा॥
मधुर हमारे वचन बने हों सबके प्यारे।
गुण-ग्राही हों ईश दूर हों दुर्गुण सारे॥

शीघ्र नाथ ! उद्धार हो धर्म और इस देश का।
अन्त शीघ्र होवे प्रभो, दुखी जगत् के क्लेश का॥

सब श्रेष्ठ है नाथ ! सुवैदिक धर्म हमारा।
हो इसका उद्धार बने सबका वह प्यारा॥
इस सुधर्म को ग्रहण करें सारे नर नारी।
जिससे हो कल्याण मिटें विपदाए सारी॥

अखिल विश्व फिरसे प्रभो! ग्रहण करे इस रत्नको।
दयानन्द ऋषि आदि का सारा सफल प्रयत्न हो॥

सुमन-संचय

सत्पात्र— (१)

प्रातः स्मरणीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर न केवल विद्यासागर थे वरन् वे दयासागर भी थे। उनका जीवन दयालुता और परोपकार की अनेक सुन्दर घटनाओं से परिपूर्ण पाया जाता है।

एक बार वे वर्दवान से अपने ग्राम वीरसिंह को जा रहे थे। एक जगह पालकी रखे जाने पर एक बालक विद्यासागर के पास आकर खड़ा हो गया। बालकों को प्यार करनेवाले विद्यासागर की दृष्टि पड़ते ही उस बालक ने कहा—

'बाबू' एक पैसा दीजिएगा ?"विद्यासागर ने कहा 'एक पैसा क्या करेगा ? उत्तर मिला—'खाने को खरीद कर खाऊगा।" विद्यासागर ने कहा 'और अगर दो पैसे दू ?" उत्तर मिला—'तो एक पैसा आज और एक पैसा कल खाऊंगा' विद्यासागर ने कहा 'और अगर चार पैसे दू ?' उत्तर मिला 'तो बाजार से आम खरीदकर बेचू गा। जो लाभ होगा वह खाऊंगा और पूजी से रोजगार करू गा।

बालक की बुद्धिमत्ता पर प्रसन्न होकर विद्यासागर ने उसे १) देदिया।

* * *

इस घटना को हुए ७ वर्ष हो गये और संसार में अनेक परिवर्तन भी हो गए थे।

एक दिन विद्यासागर बाजार में जा रहे थे। सहसा ही एक नवयुवक अभिवादन करके उनके सम्मुख खड़ा हो गया। और एक दूकान की ओर सकेत करके कहा पण्डित जी, कृपा करके दुकान पर पधारिए। मै बड़ा अनुगृहीत हूँगा। एक आवश्यक कार्य है। एक अपरिचित व्यक्ति के इस प्रस्ताव पर विद्यासागर ने विशेष ध्यान न दिया और वे बिना उत्तर दिये अपने रास्ते जाने लगे। तब युवक ने निराश होकर कहा— आप दया के सागर होकर मेरी प्रार्थना को ठुकराते हो।' नवयुवक के इन शब्दों को सुनकर विद्यासागर तत्काल उसके साथ दूकान पर चले गये।

दूकान अच्छी बड़ी और व्यवस्थित थी। विद्यासागर का जल पानादि से यथोचित सत्कार करने के उपरान्त, नवयुवक ने पूछा "पण्डितजी, क्या आप मुझे पहचानते हैं ? विशेष ध्यान से देखने और स्मरण करने के पश्चात् भी, विद्यासागर नवयुवक को न पहचान सके और उत्तर दिया 'नहीं।"

तब नवयुवक ने कहा 'मैं वही लड़का हूँ जिसको उस दिन आपने मागने पर)। के स्थान में १) दिया था। यह सब आपकी ही कृपा का फल है।

बालक की उन्नति से विद्यासागर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा 'कहो, कुछ और सहायता की आवश्यकता है ? यदि हो तो प्रबन्ध किया जाय ?"

विश्व-शान्ति और नवीन व्यवस्था

(लेखक—देशभक्त कु० चादकिरण जी शारदा, मन्त्री आर्य्य-प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा, अजमेर)

ससार की वर्तमान दुर्गति भूख, बीमारी खून खराबी, युद्ध आदि से तग है। ससार के सभी राजनीतिज्ञ इस बात के लिये चिन्तित हैं कि कोई ऐसा उपाय काम में लाया जाय और ऐसी व्यवस्था बने जिससे बार बार हमे युद्ध-जन्य दुःख न उठाने पड़ें। मि० हेनरी ए० वेलेस युनाइटेड स्टेट्स आफ अमेरिका के उपप्रधान कहते हैं कि हमे इस प्रकार की व्यवस्था करनी चाहिये कि जिससे हर हिटलर या युद्ध-प्रिय किसी दूसरी शक्ति का यह साहस न हो जिससे कि वे सारे ससार को युद्ध और रक्त पात मे गर्क कर दें। इग्लिस्तान के बडे-बडे राजनीतिज्ञ कहते हैं कि युद्ध के बाद ससार का पुनर्निर्माण किया जायगा और युद्ध कभी न होगा सभी धार्मिक व्यक्ति यह चाहते हैं कि परमात्मा वह दिन शीघ्र लावे जिस दिन ससार से भिन्न २ जातियों, धर्मों, राष्ट्रों का भेद भाव दूर होकर सारा ससार और उसके समस्त निवासी एक ही ईश्वर, एक ही धर्म को मानते हुए अपने को एक ही राष्ट्र का निवासी या नागरिक मानेंगे और सारे ससार मे मानव-धर्म सूचक एक ही पताका ओ३म् की फहरायेंगे। आर्य्य-समाज कहता है कि विश्व की शान्ति इसी में है कि जब 'समानी प्रपा सहवो अन्न भाग' वाले मत्र में कहा हुआ वैदिक साम्यवाद ससार में फैलेगा। वर्तमान युरोपीय सभ्यता साम्यवाद के सिद्धान्तों के विपरीत होने से ससार के लिये नाशकारक सिद्ध हुई है। अत अब वेदों का समत्व धर्म ही ससार में सुख शान्ति ला सकता है। हमें मन का, धन का, उद्देश्यों का, दैनिक जीवन का, समाज का प्रत्येक दिशा में ससार के सुख-शान्ति के लिये समत्व लाना

(पृष्ठ ११५ का शेष)

नवयुवक ने आनन्द विभोर होकर कहा मै आपके ऋण से आजन्म उऋण न हूँगा। मुझे तो अब आपका आशीर्वाद चाहिए। यदि इस शरीर से और मेरी कमाई से उपकार हो सका तो मैं उसको आपके महान् ऋण की आशिक अदायगी समझूं गा।"

इस उत्तर से विद्यासागर बहुत प्रभावित हुए और कुछ क्षण के पश्चात् उन्होंने नवयुवक स बडे प्रेम से विदा ली। उस समय उनका मुख मण्डल उसी प्रसन्नता और आत्म सन्तोष से देदीप्यमान था जिससे अपने सुयोग्य प्रिय शिष्य की सफलता और उन्नति पर गुरु का मुख मण्डल दीप्तिमान् हुआ करता है—उनकी आत्मा उन्हें कह रही थी कि 'दान सत्पात्र पर पहुँचा है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

पड़ेगा। और तब ही संसार की असमानता जिसमें एक के पास अरबों रुपया है और दूसरे के पास खाने के लिये दाना तक नहीं। एक विद्वान् है तो दूसरा निरक्षर भट्टाचार्य है। एक अहिंसा वादी है तो दूसरा नरपिशाच है। अतः समत्व के लाने से ही हम संसार में शाश्वत शान्ति और सुख प्राप्त सकते हैं।

इस शाश्वत सुख और शान्ति के लिये गत महायुद्ध में अमेरिका के प्रेसीडेन्ट विलसन के १४ पाइन्ट संसार को लुभाने के लिये प्रस्तुत किये गये और राष्ट्र संघ जेनेवा में कायम किया गया। किन्तु राष्ट्र और जातियों के स्वार्थ के कारण ये १४ पाइन्ट काफूर हो गये और राष्ट्र संघ की व्यवस्था अधार्मिक लोगों के हाथों में होने के कारण वह समुद्र की तह में डूब गया। मि० वेलेस कहते हैं कि हमारा मुख्य ध्येय स्वतन्त्रता है। और केन्द्रीय व्यवस्था रखकर हमने अमेरका में गत डेढ़ सौ वर्षों से इसे कायम रक्खा है। अतः वे कहते हैं कि यूरोप में भी इसी प्रकार एक केन्द्रीय राष्ट्र कायम किया जाय और सब दूसरे राष्ट्र उसके अङ्ग होंगे। अन्तर्राष्ट्रीय कानून के द्वारा उनके झगड़े निबटाये जायेंगे। इसी प्रकार सारे संसार की शान्ति के लिये एक विश्व राष्ट्र कायम किया जावेगा और न्याय करने के लिये विश्व राष्ट्र का न्यायालय रहेगा। विश्व राष्ट्र की पुलिस और फौज रहेगी और यूरोपीय तथा अमेरिका के समान बिना एक दूसरे के कार्य में हस्तक्षेप किये सब अपने अपने राष्ट्रों में और अपने २ दायरों में खास सीमा तक स्वतन्त्र रहेंगे। परन्तु ये सब कोरी बातें ही बातें हैं। यदि यह लड़ाई स्वतन्त्रता की लड़ाई है तो भारतवासियों को स्वतन्त्रता प्राप्त करने में अमेरिका, रूस और चीन क्यों नहीं सहायता देते? अब तक इन देशों ने भारत वासियों के लिये कोई भी सहायता या सहयोग स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये नहीं दिया और भारतवर्ष गुलामी के भीषण और भयानक अभिशाप से त्रस्त है। ये लोग कहने को कहते हैं कि अमेरिका संसार में भाषण एवं धर्म की समता के साथ साथ साथ किसी को भी भूख तथा भय का कष्ट न होने देगा। और जो शक्तियाँ इनके मार्ग में आवेंगी उनको दुनियाँ से मिटा देगा परन्तु स्वयं अमेरिका के राजदूत श्री फिलिप्स भारत में स्थान २ पर और पद २ पर गुलामी देख रहे हैं जो अमेरिका के स्वतन्त्रता प्रेम को ठेस लगाने वाली है फिर भी उनकी हिम्मत एक शब्द बोलने की नहीं होती।

मिस्टर वेन्डल विल्की ने हाल में ही एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम 'One world' है। इस पुस्तक में उन्होंने अपने ३१००० मील सफर जो उन्होंने अपने वायुयान में सारे उत्तरी अफ्रिका रूस और चीन में गत अगस्त में किया था उसका विस्तृत वृत्तान्त लिखा है। मि० विल्की ने कहा है साम्राज्यवाद से संसार में अनन्त लड़ाइयां होती हैं। एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र या जाति पर राज्य होना दूसरों के लोभ को भड़काना है। यद्यपि पराजित जातियां अपने विजेता का मुकाबिला भी न करें तो भी दूसरे शक्तिशाली राष्ट्र लोभवश लड़ाई करेंगे। गत महायुद्ध में सैकड़ों वर्षों के पुराने इतिहास वाले साम्राज्य नष्ट हो गये क्योंकि वे अत्याचार पर स्थापित थे।

वर्तमान गति-विधि में साम्राज्यवाद का विचार ही लोगों मे उनके प्रति घृणा उत्पन्न करता है। गत महायुद्ध मे रूस, आस्ट्रिया और तुर्की का साम्राज्य तो नष्ट हो गया पर जो जातिया जीत गई थीं उनका साम्राज्य नष्ट करने का कोई उपाय नहीं किया गया। सन् १९१४ से सन् १९१९ तक जो महायुद्ध हुआ उसमे आदेशों Mandate के बहाने उन जीते हुए राष्ट्रों पर विजेताओं ने कब्जा कर लिया और जो उपनिवेश थे उनकी प्रजा को स्वराज्य दिलाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। इसीलिये वर्तमान युद्ध प्रारम्भ हुआ। क्योंकि जर्मनी इटली और जापान वाले यह कहते हैं कि हमारा साम्राज्य विस्तार भी उतना ही बड़ा होना चाहिए जितना कि अंगरेजों और फ्रांसीसियों का है। इसे कोई अपनी भाषा में Living space और Coprosperity कहते हैं। साम्राज्यवाद का भविष्य निश्चय करने मे भारतवर्ष का बड़ा भाग है क्योंकि चीन के बाद दुनिया मे सबसे अधिक उपजाऊ और आबादी वाला देश यही है। इसी को अंगरेज लोग अपने राज्य के ताज में सबसे अधिक चमकनेवाला हीरा कहते हैं यदि इस युद्ध मे भी भारतवर्ष को स्वतन्त्रता न मिली तो साम्राज्यवाद सदा के लिये कायम रहेगा। ऐसी दशा मे कोई भी यह नहीं कह सकता कि यह लडाई गुलाम जातियों को स्वतन्त्रता दिलाने के लिये लड़ी जा रही है। हाल ही में जो अंगरेज राजनीतिज्ञों ने भाषण दिये हैं उनसे हिन्दुस्तान की गुलामी का खतरा बढ़ता ही जा रहा है। विश्वकी नवीन व्यवस्था जो युद्ध के बाद होगी उसमे हारी हुई जातियों के हथियार तो छीन लिये जायँगे किन्तु जीती हुई जातियों का निःशस्त्रीकरण नहीं होगा। अतः विल्की साहब के विचार कोरे हवाई उड़ान हैं। जब एक के पास हथियार रहेंगे और दूसरे के पास नहीं रहेंगे तो सारा संसार आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से कैसे स्वतन्त्र हो सकता है? इसलिये संसार का भविष्य इस लड़ाई के बाद भी अन्धकारमय है।

युद्ध के बाद मित्र राष्ट्रों का ध्येय स्थायी शान्ति स्थापित करना है। इसके लिये धुरी राष्ट्रों का निःशस्त्रीकरण करना आवश्यक है। अमेरिका तथा सब मित्र राष्ट्र स्थायी शान्ति चाहते हैं? युद्ध मोर्चों पर लड़ने वाले सैनिक तथा नागरिक युद्ध में विजय प्राप्त करने के अतिरिक्त अपने जीवन निर्वाह के लिये शान्ति चाहते हैं। नागरिकों को युद्ध के पश्चात् भाषण, धर्म तथा जीवन निर्वाह के उपायों की स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायगी। इस आत्म-रक्षा के युद्ध मे हमें उन बुराइयों को रोक देने के अतिरिक्त जिनको मिटा देने के लिये हम युद्ध लड़ रहे हैं उन अच्छे कार्यों को भी स्मरण रखना चाहिये जिनको प्राप्त करने के लिये हम युद्ध कर रहे हैं। यदि संसार की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं होगा तो हमें स्मरण रखना चाहिये कि हमारी स्थिति खतरे मे पड़ जायगी। पर उपरोक्त यह सब रूजवेल्ट साहब के थोथे गाल बजाना है वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति स्थापित करने का एक मात्र उपाय मानव धर्म का प्रचार है। प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य को रंग, जाति, देश का भेद भुलाकर अपने जैसा समझे। यह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तब स्थापित हो सकती है

—:दयानन्द हितकारी :—

(लेखक—श्री प० गोपालकृष्ण राव जी 'चन्द्र')

वेदों के प्रकाश द्वारा अधकार दूर किया।
सत्य का प्रकाश किया आ प्रकाशकारी ने॥

पत्थरों की मार सही गाली की बौछार सही।
ह्रदय को न छोडा उस वीर व्रतधारी ने॥

ओम् की पताका हाथ और कोऊ नाहीं साथ।
काशीगढ़ जीता जाय उस न्यायकारी ने

गुरु की आज्ञा पाय वेदों का प्रचार किया।
सोतों को जगाया दयानन्द हितकारी ने॥

(पृष्ठ ११८ का शेष)

जब राष्ट्र के परिवारों में शान्ति हो और परिवारो में शान्ति तब स्थापित हो सकती है जब प्रत्येक मानव मानव-धर्म-अर्थात् समानाधिकार का पालन करना सीखे।

वर्तमान सोशलिज्म Socialism बॉल्शेविज्म Bolshevism सफल नहीं हो सके, क्योंकि वहा के लोगों की नींव धार्मिक न होने के कारण उनमें पारस्परिक स्पर्धा और सघर्ष सदा बना रहता है। परन्तु यदि ये सब लोग वैदिक धर्मावलम्बी बन जावें और इस मूलमन्त्र को समझ लें कि व्यक्ति को अपनी सब शक्तिया राष्ट्र तथा देश के लिये समर्पित करनी ही चाहिये तो फिर पारस्परिक स्पर्धा तथा संघर्ष के स्थान में वे एक दूसरे के सहयोगी मित्र बन जायेंगे। साम्राज्यवादी यह कहते हैं कि युद्ध में विजय के बाद प्रत्येक राष्ट्र अपनी सैनिक शक्ति को इस प्रकार सगठित करे कि कोई दूसरा राष्ट्र उस पर आक्रमण करने का साहस न कर सके। परन्तु यह उपाय भी असफल रहेगा क्योंकि वर्तमान युद्ध में हमने देखा है कि हजारों लाखों युवकों ने अपने देश के लिये अपना बलिदान किया किन्तु अल्प सख्यक होने के कारण या धन अथवा सामान की कमी होने के कारण तथा उच्च प्रकार के सामयिक अस्त्र शस्त्र न होने से उन्हें हारना पड़ा। इसलिये वर्तमानशिक्षा प्रणाली के अनुकूल पढ़ाया हुआ साम्राज्यवाद या बोल्शेविज्म कदापि ससार में सुख शान्ति स्थापित नहीं कर सकता॥

(शेष अगले अङ्क में)

क्या वीरता का कारण मॉस भोजन है ?

स्वामी दयानन्द पर श्री अमरसिंह ऐडवोकेट का आक्रमण

[लेखक— श्री पण्डित जयदेव जी शर्मा विद्यालङ्कार मीमांसातीर्थ चतुर्वेद भाष्यकार, अजमेर]

(लेखाक १)

लाहौर के म० श्री अमरसिंह जी ऐडवोकेट ने मास भोजन पर एक पुस्तक ८० पृष्ठ की अंग्रेजी मे छपवा कर मुफ्त वितरण की है । उस में आठ अध्याय हैं । इन में से प्रथम पाच अध्यायों में अहिंसावादियों की आलोचना करके हर्बर्ट स्पैंसर तथा मास भक्षी वाम मार्गी लोगों के लेख तथा सिख गुरुओं के वचनों से मास भोजन को पुष्ट किया है । ६ से ८ तक तीन अध्यायों मे यत्न किया है कि स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों मे भी मास भोजन का विधान था और बाद मे जालसाजी करके मास के प्रकरण निकाल दिये गये हैं।

समस्त आर्य जगत् और ऋषि दयानन्द के ट्रस्ट परोपकारिणी सभा पर जाल बनाने का दोषारोपण करना एक असह्य अपराध है । जिसको समस्त आर्य पुरुष अभी मौन मुद्रा से सह रहे हैं। परन्तु हमें अभी इस प्रसङ्ग पर कुछ नहीं कहना।

इस लेख माला में मास भाजन को मानवीय आवश्यक भोजन सिद्ध करने में ऐडवोकेट अमर सिंह जी ने जो सिर से पैर तक ज़ोर लगाया है उसकी आलोचना करनी है।

१ म अध्याय में आपने बतलाया है कि— 'इतिहास मन्दिरों और मस्जिदों में नहीं बनता, परन्तु चूल्हों मे भी इतिहास बनता है । अर्थात् मनुष्य की चित्तवृत्ति पर भोजन का असर पड़ता है भोजन और मानसिक प्रवृत्ति से ही इतने अनेकानेक सम्प्रदाय बने हैं । इसी कारण मुहम्मद ने मुसलमानों को 'आक्रामक' (Invadei) बनाया और महावीर ने लोगों को भीरु' (Coward) बना दिया । इसी प्रकार हिन्दू धार्मिक नेताओं के दार्शनिक विचारों ने धर्म के रूप में त्याग को ईश्वर के प्रसन्न करने का साधन बतला कर ऐसा कमजोर कर दिया है कि हिन्दू लोग जीवन का आनन्द लेना भूल कर कमजोर हो गये हैं उनमे से दुनियाँ को त्याग कर भागने वाले साधु सन्त पैदा हो गये हैं।

"उन्होंने मास त्याग कर दिया है, यह उन्होंने अपने धर्म पुस्तकों के विपरीत किया मास खाने वाले भी मास खाने को पाप समझते हैं। हिन्दुओं की मानसिक दुर्बलता ने हिन्दुओं से शक्तिदायक मास भोजन छुड़वा दिया है । इस से वे खूँटे में बन्धे बछड़े बन गये हैं, और दूसरे मास भक्षी लोग शेर और बैल की क़लम (पे बन्द) बन गये हैं।

"तेज मिजाज का शेर बन पर राज्य करता है, और कौरा बैल गाड़ी ढोता है। साड और शेर ही घास भक्षी और मास भाजियों का भेद स्पष्ट बतला रहे हैं। यही कारण है कि हिन्दू लोग विदेशियों के आक्रमण का शिकार हो गये हैं। अभी भी वे साम्प्रदायिक दगों मे पिटते हैं। जब कि आक्रामकों के खञ्जर उनके गले पर हैं तो भी वे माला जप रहे हैं, योग साध रहे हैं, सम्प्रदाय चला रहे हैं, नये २ देवता गढ रहे है, नये २ धार्मिक चिह्नों और भाजनों का बखेड़ा खड़ा कर रहे है।"

(समीक्षा)—इन विचारों क साथ आपने प्रथम अध्याय समाप्त किया है, आपका अभिप्राय है कि केवल मास भोजन ही जाति को वीर बनाता है, मास खाने से शेर बन जाता है, परन्तु खेद है कि केवल मासाहार की डुग्गी पीटते हुए मा० अमरसिह जी ने मास भाजन की पैरबी भर पेट की है, आपने युक्ति एक भी नहीं दी कि मास ने शेर को पैदा किया तो किस प्रकार?

हमारा विचार है कि मास ने शेर को उत्पन्न नहीं किया, और न घास ने साड को बनाया है। यह तो ऐडवोकेट साहेब स्वय अपने घर मे अपने बच्चों पर ही परीक्षण कर सकते है। वे १० पीढ़ियों मे भी केवल मास की बोटिया खिला कर एक भी शेर का बच्चा नही गढ़ सकते। सियार जन्म भर मास खा कर भी शेर नहीं बनता। गिद्ध और मास के कीडे जन्म भर मास खा कर भी उकाब और बिच्छू नहीं बनते। क्यों नहीं बनते? इसके लिये काफी कारण है। आक्रमण करने की प्रवृत्ति का कारण शेर में मास लोलुपता नहीं है। प्रत्युत उसके वे हथियार है जिन से वह आक्रमण करता है। यदि उसके दात और नख काट दिये जाय तो वह फिर मास के लिये हिरन पर नहीं दौडेगा। यदि भूख से व्याकुल हो कर शेर को मास खाना सूझता है तो भी आक्रमण का कारण भूख है, न कि मास भोजन। क्यों कि उसके माँ बाप ने उसे भोजन के लिये सिवाय मॉस के दूसरी वस्तु का खाना नहीं सिखाया, इस लिये शिक्षा के अभाव मे वह एक हब्शी के समान कच्चे मॉस की बोटियाँ और हड्डिया चबाकर गुजारा करता है। यदि उसके मा बाप उसको कुछ और खाकर गुजारा करने की शिक्षा दे सकते तो वह कभी इतनी नालायकी से जीवन व्यतीत नहीं करता। रात का जङ्गलों जङ्गल हिरनों के पीछे २ न डोलता और दिन को मॉद मे चारों की तरह से न छिपा रहता। क्या मि० अमरसिह ऐडवोकेट मास-भोजन द्वारा मास के लोभ से इसी प्रकार के चोर बटमारों का राष्ट्र (Nation) बना देने का नुसखा बतलाना चाहते हैं या कुछ और?

रहा प्रश्न कि मास-भोजन मनुष्यों को आक्रामक (Inarader) बनाता है और घास-शाक अन्न मनुष्य को व्यापारी (Trader) बनिया बनाता है। गुस्ताखी माफ हो, मैं पूछ सकता हू कि आप मास के पक्षपाती हैं तो आपके भोजन मे कितना मास और कितना अन्न है? और आप कितने आक्रामक और कितने व्यापारी हैं? योरोप के सभी देश घोर मास-भक्षी हैं तो उनमें क्या सभी आक्रामक हैं? ट्रेडर या व्यापारी कोई नहीं है? यदि उन मे भी व्यापारी हैं तो

क्या वे मांस न खाने या खाने से हैं? यदि मास खाने से ही आक्रमण की शक्ति बढ़ती है अंग्रेज सरकार को व पार्लियामेंट को इस महायुद्धकाल में मास भोजन का नुसखा क्यों भूल गया? सरकार ने भारत के (Wheat) गेहूँ पर कण्ट्रोल क्यों कर लिया है। चाहिये था कि सरकार बे-भाव की मछलियों और मास पर कण्ट्रोल करती, गोरी सेनाओं को तो डबल रोटी देना बन्द करके कोरी मास की बोटिया खिलाती, क्या शेर गेहूँ दालें खाया करता है? सत्य बात यह है कि वीरता को उत्पन्न करने के लिये मास भोजन कोई कारण नहीं है, आक्रमण करने लिये तो जो कारण आक्रमण करने वालों के चित्तों में पहले रहे हैं वह अब भी हैं। वे कारण हैं— असन्तोष, और धन का, भोजन का, या भोग योग्य पदार्थ स्त्री आदि का लोभ। द्रव्य के लोभ में महमूद गजनवी ने भारत पर आक्रमण किये इसी स्वर्ण के लोभ में मध्यकाल मे अमरीका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और भारत पर भी योरोप की जातियों ने अपने दांत जमाये हैं, और अब भी जो जातियों में घोर महायुद्ध हो रहा है, वह भी केवल साम्राज्य लोभ और व्यापार के मार्केट (धन) हथियाने के लोभ के कारण हैं। उसी के लिये जातियों और देशों ने अपनी युद्ध सामग्री की तैयारी की है। किसी भी देश के नेताओं ने युद्ध की तैयारी में अपने मास भोजन को कारण नहीं माना, किसी भी वैज्ञानिक ने यह नहीं कहा कि हम लोग मास भोजन के कारण आदत से लाचार होकर आक्रमण करते हैं यह केवल ऐडवोकेट अमरसिंह जी लाहौर वालों को ही इलहाम हुआ प्रतीत होता है, यह उनके अपने दिमाग की उपज है कि वे वीर और आक्रमणकारी बनाने के लिये मास भोजन को ही कारण बतलाना चाहते हैं।

मास भोजन की पुष्टि में ऐडवोकेट अमरसिंह ने अपनी पुस्तक का जो १म अध्याय लिखा है, उसकी संक्षेप से आलोचना यह की गई है। आगामी लेखों में हम उनकी पुस्तक के दूसरे अध्यायों की आलोचना प्रस्तुत करेंगे और वीरता और शौर्य के वास्तविक कारणों पर भी प्रकाश डालेंगे। मास के सम्बन्ध में मासभोजी देशों के विद्वानों के खुले विचारों को भी जनता के सामने रखेंगे।

The Vedic Dharma, Rishi Dayananda and Aryasamaj

(Address of Shri Pandit Ganga Prasadji, M A, Retired Chief Justice, President Sarvadeshik Sabha at the 3rd South India Aryan Conference held at Bangalore on 28/12/1942)

Continued from the last issue.

Wrong translation of word "Deva"

In this connection it is worth noting that the wrong translation of the word 'Deva", so frequently used in the Vedas has been a potent cause of misconstruction of the Vedic teachings Before Swami Dayananda promulgated his views it was a fashion to translate the word "Deva" into "a God" As the word is used in the Vedas for *Agni, Vayu, Indra, Mitra, Varuna* etc, it was taken for granted that the Vedic religion was polytheistic, and that the Vedic Aryas worshipped the forces of nature such as Fire, Air, Sun etc, Swami Dayananda emphasised that the word "Deva" being derived from the root *div* to shine, meant literally a *shining thing*, or metaphorically any thing possessing bright or brilliant qualities Hence it is a proper epithet for fire, Air, Sun, Moon etc For example we read in the *Yajurveda* —

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चंद्रमा देवता। वसवो देवता रुद्रः देवतादित्या देवता मरुतो देवता। विश्वे देवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता॥

Max Muller's Admission

In one of his latest works 'India' What can teach us", written after Swami Dayananda had published his commentary on the Veda, Max Muller has virtually accepted Swami Dayananda's position I may quote the relevant passage at length. "The Dictionaries tell you that *Deva* means God or Gods, and so no doubt it does. But if we always translated *Deva* in the Vedic hymns by God, we should not be translating but completely transforming the thoughts of the Vedic poets . *Deva* originally means *bright* and nothing else. Meaning *bright* it was constantly used of the sky the stars, the sun, the dawn, the day, the spring, the rivers, the earth and when a poet wished to speak of all these by one and the same word—by what we should call a general term—he called them all *devas*"

(India : what it can teach us, p. 218)

Sayana's Ritualistic Interpretation and Sri Aurobindo's Opinion

There is one other feature of Sayana's interpretation which deserves attention, *viz* he interprets Vedic verses mostly in a *Ritualistic* sense, though *Yaska* mentions three modes of interpretation, *viz* *1 Adhyatmika* or spiritual, *2. Adhibhautika* or physical, and *3 Adhidevika* or ritualistic, and of these the first is considered the most important Sri Aurobindo's views on this point are worth quoting 'But it is the ritualistic conception that pervades, that is the persistent note in which all others lose themselves Sayana labours always in the light of this idea. Into this mould he moulds the language of the Veda, turning the maze of its characteristic words into the ritualistic significances, food, priest giver, wealth, praise, prayer, rite, sacrifice It is the final and authoritative binding of the Veda to this lowest of its possible sense that has been the most unfortunate result of Sayana's commentary' (*The Secret of the Veda, P 150.*)

European Commentators on the Veda

Max Muller, Griffith and other European scholars have merely followed Sayana in their interpretation of the Veda and have there fore classed it as the poetry of primitive bards and priests Sri Aurobindo aptly remarks "While Western scholarship extending the limits of Sayana seem to have classed it as a ritual liturgy to Nature-Gods, the genius of the race looking through the eyes of Dayananda pierced behind the error of many centuries, and received again the intuition of a timeless revelation and a divine truth given to humanity' (Article on *Dayananda* in V M of 1916) For a fuller and better consideration of the value of European scholars' commentaries I may refer you to Pandit Guru Datt's "Terminology of the Veda and European Scholars in which the subject has been ably dealt within greater detail,.

Mahidhara's Commentary

Mahidhara's commentary on the Vedas next to that of Sayana is also relied on by our orthodox brethren In his '*Rig Vedadi Bhashya Bhumika* (introduction to the commentary of Vedas) Swami Dayananda has cited 8 or 10 mantras of 23rd chapter of Yajurveda dealing with *Ashvamedha* and has given Mahidhara's commentary thereon along with his own interpretation According to Mahidhara's interpretation the wife of *Yajaman* or the King who performs

the sacrifice is actually to have sexual intercourse with the horse which is meant for sacrifice The details which are contained in Mahidharas' commentary, are so filthy and obscene that I refrain to speak further about them Those of you who may like to see them will find them in the *Veda Bhashya Bhumika* in the chapter on Reasons for writing commentary' This will give you a sample of Mahidhara's commentary on the Vedas Tradition says that when Buddhism was declining and efforts were being made to revive Hinduism or Vedic Religion a Hindu King actually performed *Ashvamedha Yajna* in which the above mentioned ceremony was also gone through with the result that his wife died and the king naturally was disgusted with the so called Vedic religion and became a convert to Jainism

Dayananda's claim of Veda containing truth of Physical Science

Swami Dayananda has claimed that the Vedas contain the germs of all knowledge which is necessary for the development of human nature, not only spiritual knowledge but also the elements of truths of Physical Science This has been denounced by some people as a very extravagant and unwarranted claim For those who accept the Vedas as a revealed book there can be nothing extavagant in Swami Dayananda's position mentioned above For truths of Physical Science are as important or necessary for man as spiritual truths I shall quote Sri Aurobindo's opinion on this point "There is then nothing fantastic in Dayananda's idea that Veda contains truth of science as well as truth of religion I will even add my own conviction that Veda contains other truths of a science the modern world does not at all possess, and in that case Dayananda has rather understated than overstated the depth and range of the Vedic wisdom" (Article on "Dayananda V M of 1916)

Sri Aurobindo's opinion about Dayananda's interpretation of Veda

While concluding the subject, *viz* Swami Dayananda's interpretation of the Vedas, I shall quote the concluding paragraph of Sri Aurobindo's article on "Dayananda and the Veda" which appeared in the *Vedic Magazine* in 1916.

In the matter of Vedic interpretation I am convinced that whatever may be the final complete interpretation, Dayananda

will be honoured as the first discoverer of the right clues Amidst the chaos and obscurity of old ignorance and age long misunderstanding his was the eye of direct vision that pierced to the truth and fastened on that which was essential He has found the keys of the doors that time had closed and rent asunder the seals of the imprisoned fountains '

Conclusion

Ladies and Gentlemen This is the position of Rishi Dayananda and the Aryasamaj about the Vedas It teaches a sublime religion and a sound and healthy polity for the life of society and the individuals according to the system of *Varnas* and *Ashramas* It raised ancient India to a high position India fell as it lost its Veda i e its knowledge and its religion or Dharma

It is the chief object of the Aryasamaj to restore the Vedic religion to its pristine purity, and to remove the dross which has through ignorance of ages covered it like an ugly crust It is up to you to help the Aryasamaj in this noble work If we succeed, it will lead to the prosperity and happiness of our country, nay it will promote the happiness of the whole world For the Vedic religion is meant for all mankind. The Vedas say

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"

'Make the whole world Arya

The world is at present passing through a grave crisis being enveloped in a most horrible war It is difficult to say when this world war will be over But whenever it may be over, and whatever the final result may be, there is no doubt that many important changes are to come after the war is ended a new world order is bound to come The Western civilisation which was based chiefly on a spirit of competition is on its trial, and is bound to disappear or undergo very material changes at the close of the War The Vedic or Aryan culture which is based on ideals of service and helpfulness will have an important hand in the formation of the new order The Aryasamaj which stands for Aryan Culture has thus a very important mission to fulfil May it not be found lacking in discharging its duty !

Om Shantih, Shantih Shantih

वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्य दयानन्द

(४)

वैदिक यज्ञ और पशुहिंसा

वैदिक यज्ञ का विस्तृत रूप

[पं० धर्मदेवजी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति उ० मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली]

मार्च मास के 'सार्वदेशिक' में इस विषयक लेख लिखते हुए मैंने महर्षि दयानन्द की अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों से विशेषता का निर्देश किया था। महर्षि दयानन्द का वेदों के आधार पर यह निश्चित विश्वास था कि यज्ञों मे पशुहिंसा का विधान नहीं है और जहा कहीं वह प्राचीन ग्रन्थों में अब पाया जाता है वह वाममार्गियों की लीला है।

यजुर्वेद अ० २३ म० १० अग्निः पशुरासीत् तेनायजन्त ' ' वायुः पशुरासीत् तेनायजन्त ' ' ' ' 'सूर्यः पशुरासीत् तेनायजन्त '

इस मन्त्र के भावार्थ मे महर्षि दयानन्द ने लिखा है—

"हे मनुष्याः सर्वेषु यज्ञेषु अग्न्यादीनेव भवन्तः पशून् जानन्तु नैव प्राणिनो ऽत्रहिंसनीया होतव्या वा सन्ति। य एव विदित्वा सुगन्ध्यादि-द्रव्याणि सुसंस्कृत्याग्नौ जुह्वति तानि वायुं सूर्यं च प्राप्य वृष्टि द्वारा निवर्त्य ओषधीः प्राणान् शरीरं बुद्धिं च क्रमेण प्राप्य सर्वान् प्राणिन आल्हादयन्ति। एतत्कर्तारः पुण्यस्य महत्त्वेन परमात्मान प्राप्य महीयन्ते ॥"

अर्थात् हे मनुष्यो। सब यज्ञों मे अग्नि आदि को ही पशु जानो किन्तु प्राणी इन यज्ञों में मारने योग्य नहीं न होम करने योग्य हैं। जो ऐसे जान कर सुगन्धित आदि अच्छे पदार्थों को भली भाति बनाकर होम करते हैं वे (पदार्थ) वायु और सूर्य को प्राप्त हो कर वर्षा के द्वारा वहा से छूट कर ओषधि, प्राण, शरीर और बुद्धि को क्रम से प्राप्त हो कर सब प्राणियों को आनन्द देते हैं। इस यज्ञ के करने वाले पुण्य की महिमा से परमात्मा को प्राप्त होकर सत्कार युक्त होते हैं।

यज्ञ के लिये वेदोंमें तथा प्राचीन नवीन सारे संस्कृत साहित्य मे अध्वर शब्द का प्रयोग किया गया है। इसकी व्युत्पत्ति बताते हुए श्री यास्काचार्य ने निरुक्त म लिखा है 'अध्वर इति यज्ञ नाम ध्वरतिर्हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेध' अर्थात् यज्ञ को अध्वर कहते हैं जिसका शब्दार्थ है सर्वथा हिंसारहित कर्म। ऐसे हिंसारहित यज्ञ अर्थात् परोपकारार्थ शुभ कर्म से ही भगवान् की सन्तुष्टि और प्राप्ति हो सकती है। इस बातको बहुत जगह अध्वर यज्ञ का इकट्ठा प्रयोग करके भी वेदों में

बार २ स्पष्ट किया गया है उदाहरणार्थ निम्न मन्त्र इस विषय में द्रष्टव्य हैं:—

(१) अग्ने य यज्ञमध्वरं विश्वत. परिभूरसि। स इद् देवेषु गच्छति ॥ ऋग्वेद १।१।४

(२) त्व होता मनुर्हितोऽग्ने यज्ञेषु सीदसि। सेम नो अध्वरं यज ॥ ऋ० १।१४ ११

(३) ससुक्रतुः पुरोहितो दमे दमे ऽग्नि-र्यज्ञस्याध्वरस्य चेतति क्रत्वा यज्ञस्य चेतति ऋ० १।१२८।४

(४) अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्य. ॥ यजुर्वेद ३।१५

(५) राजन्तमध्वराणा गोपामृतस्य दीदिविम्। वर्धमानं स्वेदमे ॥ यजु० ३।२३

(६) ऊर्जो न पातमाहुवेऽग्नि पावक शोचिषम्। अस्मिन् यज्ञे स्वध्वरे ॥ सामवेद १६।२

(७) तनूनपात् पथ ऋतस्य यानान् मध्वा-समञ्जन् स्वधया सुजिह्व। मन्मानिधीभिरुत यज्ञ-मृन्धन् देवत्रा च कृणुह्यध्वर नः॥ अथर्व ५।१२।२

(८) आसुष्वयन्ती यजते उपाके उषासानक्तेम यज्ञमवतामध्वरं नः ॥ अथर्व ५।२७।८

इन मन्त्रों से जो चारों वेदों से यहां उद्धृत किये गये हैं यह स्पष्ट है कि वैदिक यज्ञ अध्वर अर्थात् हिंसारहित ही होते हैं जिनके द्वारा भगवान् की आराधना की जाती है।

इसी भाव को लेकर महाभारत में स्पष्ट घोषणा की गई है कि—

सुरा मत्स्याः पशोर्मांसम्, आसव कृशरौदनम्।
धूर्तैः प्रवर्तितं यज्ञे, नैतद् वेदेषु विद्यते ॥
म० भ० शान्ति पर्व २६६।९

अव्यवस्थित मर्यादैर्विमूढैर्नास्तिकैनरैः।
संशयात्मभिरव्यक्तै, हिंसासमनु वर्णिता ॥
म० भा० शान्तिपर्व मोक्षधर्म पर्व २६५।५

लुब्धैर्वित्तपरैर्ब्रह्मन्, नास्तिकै सम्प्रवर्तितम्।
वेद वादानविज्ञाय, सत्याभासमिवानृतम् ॥
स हा वर्त्मानु वर्तन्ते यजन्ते स्वविहिंसया ॥
महाभारत शान्त पव २६३।५—६

ध्रु वं प्राणिवधो यज्ञे, नास्त यज्ञस्त्वहिंसक.।
ततोऽहिंसात्मक. कार्यं सदा यज्ञो युधिष्ठिर ॥
यूप छित्वा पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर कर्दमम्।
यद्येव गम्यते स्वर्गं, नरक केन गम्यते ॥
महाभारत शान्ति पर्व।

इन श्लोकों का तात्पर्य यह है कि वेदों में मास, मद्य आदि का विधान यज्ञादि के अन्दर कहीं नहीं है। जिनको वेद की मर्यादा का ज्ञान नहीं ऐसे मूर्ख, नास्तिक, सन्देह वादी व्यक्तियों ने यज्ञादि में हिंसा का वर्णन किया है। लोभी, धन की इच्छा वाले नास्तिकों ने वेद के तात्पर्य को न समझ कर, सत्य प्रतीत होने वाले किन्तु वस्तुत असत्य इस हिंसात्मक कार्य को शुरु किया है। धर्मात्मा पुरुष तो सज्जनों के मार्ग पर चल कर अहिंसा पूर्वक ही यज्ञ करते हैं। निश्चय से यज्ञ मे हिंसा का विधान नहीं, वह तो अहिंसा-त्मक कार्य है और इसी प्रकार अहिंसा से किया जाना चाहिये। गरीब पशुओं की गर्दन पर छुरी चला कर और रुधिर की धारा बहा कर यदि स्वर्ग जा सकते हैं तो नरक जाने का मार्ग ही कौन सा है? इत्यादि।

इतनी स्पष्ट घोषणा के होते हुए और यज्ञ के पर्याय वाची तथा स्वरूप सूचक अध्वर शब्द का

हजारों मन्त्रों में प्रयोग होते हुए क्या यह सच मुच आश्चर्य की बात नहीं कि सुप्रसिद्ध मध्य कालीन प्राय सभी आचार्यों ने (यदि उनके ग्रंथों में प्रक्षेप न माना जाए) यज्ञों में पशु हिंसा को पुण्य जनक और वेद विहित धर्म माना और अब तक भी सनातन धर्म के नाम से बड़े २ अनेक विद्वान् वैसे ही मानते चले आते हैं। विशेषत यज्ञ विषय के प्रतिपादक यजुर्वेद में पशून् पाहि। यजु० १। १॥

कृत्यामपसुव यजु० ३५। ११ अर्थात् हिंसा का परित्याग करो। मा हिंसी पुरुष जगत्। यजु० १६ ३ पशूञ्जायेथाम्। यजु० ६। ११ अर्थात् हे स्त्री पुरुषो। पशुओं की रक्षा करो द्विपादव चतुष्पात् पाहि ॥ य० १४। ८ मनुष्यों और पशुओं की रक्षा करो इत्यादि अत्यन्त स्पष्ट विधान हैं जिन से पशु हिंसा अवैदिक सिद्ध होती है। ऋषि दयानन्द ने वैदिक यज्ञों को न केवल पशु हिंसा के घृणित कलङ्क से रहित सिद्ध किया बल्कि वैदिक यज्ञों का जो विस्तृत रूप जनता के सन्मुख रखा उसका निम्न लिखित यज्ञ शब्द के अर्थों से जो उनके वेद भाष्य में स्थान २ पर पाये जाते हैं विचार शील विद्वानों को ज्ञान होगा। ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य में यज्ञ शब्द के मुख्य २ अर्थ—

(१) सर्वैः पूजनीयो जगदीश्वर य० २३। ६२

(२) सगत ससार ऋ० १। १८। ७

(३) सम्पूजनीय प्रजा रक्षण निमित्तो विद्या प्रचारार्थो गृहस्थाश्रम य० ८। ६२ गृहस्थाश्रम जो प्रजा की रक्षा तथा विद्या प्रचार आदि के कारण आदर करने योग्य है।

(४) सगन्तव्योन्याय १६। ४५ सगन्तव्यो धर्म, न्याय वा धर्म।

(५) अग्निष्टोमादिर्विज्ञानमयो व्यवहारो वा यजु० ३४। ४

(६) सगत्या सिद्ध शिल्पाख्य ऋ० १।१०७।१ अनेक पदार्थों के सयोग से सिद्ध होने वाला शिल्प।

(७) सगन्तुमहो ब्रह्मचर्याख्य। ऋ० १। १५६। १।

सगन्तुमर्हो राजधर्माख्य। ऋ० १।१७३।१। =ब्रह्मचर्य तथा राजधर्म।

(८) अध्यापनोपदेशाख्य। ऋ० ४। ३४। ३

(९) सत्कृत्यादि स्वरूप। ऋ० ६। ३८। ४

(१०) सद् विद्या व्यवहार वर्धको व्यवहार। ऋ० ६। ४०। ४।

=उत्तम विद्या के प्रचारादि को बढ़ाने वाला व्यवहार।

(११) धर्मार्थ काम मोक्ष व्यवहार ऋ० १। १६४। ५०।

=धर्म अर्थ, काम, मोक्ष विषयक व्यवहार।

(१२) कर्मोपासना ज्ञानाख्य ऋ० २। ५। ८

(१३) राग द्वेष रहितो न्याय दयामय। ऋ० ३। १। २२।

=राग द्वेष से रहित न्याय और दयायुक्त व्यवहार।

(१४) अन्नाद्युत्तम पदार्थ दानम्। ऋ० ५। ४। ५=अन्नादि अच्छे पदार्थों का दान।

(१५) योग यजु० ७। ११ शम दमादि युक्तो योगाभ्यास =शान्ति मन के सयम आदि युक्त योग का अभ्यास।

भारत के प्राचीन गुरुकुल

[लेखक—श्री प्रो० लालचन्द्र जी एम० ए० उपाचार्य गुरुकुल कांगड़ी]

(गतांक से आगे)

एक बार गर्मी की छुट्टियों मे सत्संग के लिये मैं अपने गुरु जी के पास गया। रास्ते में प्राकृतिक दृश्य इतने प्यारे थे कि कई जगह मेरा कदम रुक जाता था और मैं चुप चाप नयनों से अमृत पीता जाता था और चुपचाप धन्यवाद करता था उस भगवान् का जिसने जगत् बनाया है। बद्रीनाथ पहुंच कर जब मैंने अपने गुरु जी को अपना रास्ते का अनुभव सुनाया तो उन्होंने मुझे एक निहायत खूब सूरत शेर सुनाया।

यही आशिकों की निवाज है,
यही दिल जलों की निमाज है।
जहा देखा यार का नक्शे पा
पै सिज्द सिर को झुका दिया॥

जैसे नक्शे की सहायता से भूगोल ठीक समझ मे आ जाता है, ऐसे ही प्रकृति की सहायता से वेद मन्त्रों के सूक्ष्म सुन्दर भाव ब्रह्मचारियों के चित्त पर अमिट तौर से अंकित हो जाते थे। वेद में पढ़ लिया और समझ लिया और याद कर लिया कि--

---

(पृष्ठ १२९ का शेष)

(१६) विद्वत्सत्काराख्यः = विद्वानों का सन्मान करना।

(१७) प्रामुव्य आनन्द। यजु० २६। ८।

(१८) मानसो ज्ञानमय। यजु० ३१। १४ ज्ञानरूपी मानस यज्ञ।

(१९) सुनियमानुष्ठानम्। य० १८। ७ अच्छे नियमों का पालन करना।

(२०) राज धर्म शिल्पकार्य सगत्युन्नत। ऋ० १। १७७। ४ राज धर्म और शिल्प कार्य के मिलाने से उन्नति को प्राप्त व्यवहार।

ऋषि ने अपनी कल्पना से नहीं किन्तु यज धातु के देव पूजा, सगति करण, दान इन तीन अर्थों और भगवद् गीतादि में प्रतिपादित—

द्रव्य यज्ञास्तपोयज्ञा योग यज्ञास्तथा परे।
स्वाध्याय ज्ञानयज्ञाश्च यतय. सशित व्रता॥
गीता अ० ४।

इत्यादि वचनों के आधार पर वैदिक यज्ञों का सर्वजनोपयोगी विस्तृत रूप जनता के सम्मुख रखा। इसके साथ जब अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों की यज्ञ विषयक कल्पना को (जिसमें पशु हिंसा को यजमान और पशु की स्वर्ग प्राप्ति का साधन मान कर पुण्य जनक बताया गया है) तुलना करते हैं तो हम महर्षि दयानन्द को वेदोद्धारक शिरोमणि आचार्य कहने में जरा भी सकोच नहीं कर सकते क्यों कि पण्डितों के यज्ञों मे पशु हिंसा को मानने के कारण ही श्री गौतम बुद्ध, महावीर इत्यादि को उनका घोर विरोध करना पड़ा और इस प्रकार वेद विरोधियों की सख्या हमारे देश में बढ़ती गई।

(शेष फिर)

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्॥ या' तदेजति तन्नैजति, तद् दूरे तद्वन्तिके। तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः॥

मगर जब जगल के दृश्य देखते थे, जब ऊपर नीचे इर्द गिर्द दृष्टि डालते थे तो वे सचमुच अनुभव करते थे क्या ?

हरि हर समाया है हरियालियों में।
वही झूमता है झुकी डालियों मे॥

और पुस्तकें तो उस जमाने में मुश्किल से मिलती थीं, मगर प्रभु की लीला तो चारों ओर सदा प्राप्त थी प्रकृति की हरी पुस्तक सब दु खों को हरती थी, दिल को फ़हत देती थी, दृष्टिको उत्तम रखती थी।

ब्रह्मचारी वन से लौट कर शाम की सन्ध्या करते थे। दिन को शुरू भी किया भक्ति से खतम भी किया भक्ति से, उसी ईश्वर से शक्ति ले कर काम किया दिन भर, उसी की गोद में आ गये शाम को थक कर, इसके बाद भोजन किया, कुछ घर का काम किया, गुरु जी की सेवा की और फिर सो गये आराम से सवेरे ब्राह्म मुहूर्त्त में फिर जागने के लिये। यह तो रहा रोज का प्रोग्राम पढ़ाई का और छुट्टी का।

अब मैं उन छुट्टियों का जिक्र करता हूँ जो पुराने जमाने मे गुरुकुलों में होती थीं। सबसे पहले तो महीने में ४ छुट्टियां होती थीं पूर्णमासी, अमावास्या और दो अष्टमियां। मैं तो चाहता हूँ सारे ससार मे उन ही दिनों में इतवार की जगह छुट्टी हुआ करे। पूर्णमासी की खिली चादनी और अमावस की तारों भरी रात किसको नहीं भाती? पूर्णमासी और अमावस्या का हिन्दुओं से कोई खास सम्बन्ध नहीं प्रभु की लीला तो सबके लिये एकसां है। श्री अरविन्द जी ने एक जगह बड़ा राजब का वाक्य लिखा है The world existence is the ecstatic dance of Shiva ससार क्या है मानो शिव आनन्द में मस्त होकर नृत्य कर रहा है। (आनन्द से समार पैदा होता है आनन्द से ही चलता है। आनन्द में ही लीन हो जाता है) इस नृत्य की दो विलक्षण मुद्रायें हैं पूर्णमासी और अमावस्या। पूर्णमासी की रात्री मे जब चान्दनी की छटा चारों ओर अमृत बरसा रही होती है, कितना प्रसाद कितना प्रेम, कितनी सौम्यता, कितनी स्तब्धता अनुभव होती है और इसी तरह अमावस की तारों भरी रात मे जबकि अनन्त तारे अपना थोड़ा थोड़ा प्रकाश इकट्ठा करके राही को राह दिखाते हैं उस रात्री मे कितनी निश्चल नीरवता और अथाह शान्ति भरी है। रसिक तो इस ससार मे चलता हुआ कदम कदम पर आरचर्य चकित होता है पर हम इतने नीरस हो गये हैं कि हमारे ऊपर अमावस और पूर्णमासी की रात्री भी कोई प्रभाव नहीं करती कार्लाइल(Carlyle)एक जगह लिखता है Worship is transcendent wonder पूजा क्या है, आरचर्य का हद से बढ़ जाना। जहा आरचर्य नहीं वहा पूजा कहा ? हमारे पूर्वज अमावस और पूर्णमासी को बहुत महत्वपूर्ण समझते थे। दोनों दिन बडे बडे यज्ञ होते थे, इन ही दिनों बड़े बडे त्योहार होते थे। उन त्योहारों के लिये कोई अलग छुट्टी करने की जरूरत नहीं होती थी।

(शेष अगले अङ्क में)

साहित्य समीक्षा

समालोचनार्थ पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी चाहिये।

"मातृत्व की ओर" लेखक—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक भूमिका लेखक—श्री पं० रामनारायणजी मिश्र काशी। प्रकाशक—शारदा मन्दिर लिमिटेड नई सड़क देहली पृष्ठ संख्या १५० मूल्य अजिल्द १) सजिल्द १।।)

इस पुस्तक में श्री रघुनाथप्रसाद जी ने 'पवित्र रहस्य" स्वास्थ्य सुधा, जीवन माधुर्य विवाह, सन्तति-निर्माण, संतान शिक्षण, नाम महिमा, गृहस्थ निर्माण कला, मातृत्व और देश प्रेम इत्यादि विषयों पर १२ पाठों में जो अत्यन्त सरल और रोचक बहिनों के पारस्परिक संवाद के रूपमे दिये गये हैं, बड़ा उत्तम प्रकाश डाला है। पुस्तक गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करने वाली कन्याओं तथा विवाहित देवियों के लिये विशेष रूप से उपयोगी है। उनके लिये ज्ञातव्य प्रायः सब मुख्य बातों का पुस्तक मे समावेश किया गया है और ऐसा करने मे हमारे सहयोगी श्री पाठक जी को जो सफलता प्राप्त हुई है उसके लिये वे और पुस्तक के सुयोग्य भूमिका लेखक श्री प० रामनारायण जी मिश्र बधाई के पात्र हैं। पुस्तक इस योग्य है कि उसे कन्या पाठशालाओं की उच्च कक्षाओं में पाठ्य पुस्तक के तौर पर लगाया जा सके तथा विवाहादि अवसरों पर पारितोषक औ उपहार रूपमे दिया जा सके।

आर्य समाज जिन्दाबाद लेखक—पं० ऋषिदेवजी विद्यालङ्कार पृ० ८२ मूल्य ।।=) मिलने का पता—विद्या भण्डार नज़ीराबाद रोड लखनऊ।

ऋषिदयानन्द और आर्य समाज के स्वरूप, उद्देश्य और महत्व को समझाने के लिये यह एक अत्युत्तम पुस्तक है जो बड़ी जोरदार और प्रभावोत्पादक भाषा मे लिखी गई है। भगवान दयानन्द, सच्चे सेवक बनो, आर्य समाज जिन्दाबाद दयानन्द का चेलेञ्ज, आर्य समाज क्या चाहता है? इन विषयों पर बड़ा उत्तम प्रकाश इस पुस्तक में लेखक महोदय ने जो गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय के सुयोग्य स्नातक हैं और 'आर्य मित्र' के सम्पादक रह चुके हैं डाला है। यह पुस्तक किसी भी विचारशील व्यक्ति के मन में ऋषि दयानन्द और आर्य समाज के प्रति आदर का भाव उत्पन्न किये बिना तथा आर्यों में अधिक उत्साह उत्पन्न किये बिना न रहेगी। ऐसी उत्तम पुस्तक के लिखने पर हम प० ऋषिदेवजी को (जो मेरे आचार्यत्व में मुलतान गुरुकुल में अध्ययन करते रहे हैं) हार्दिक बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि वे इसी प्रकार उत्तम साहित्य-निर्माण द्वारा आर्य समाज की सेवा करते रहेंगे।

प्रेमोपहार—लेखक—श्री खुशीरामजी शर्मा वासिष्ठ कविरत्न अध्यापक हाईस्कूल जैतोमण्डी नाभा रियासत पृष्ठ स० ६० मूल्य ।=)

यह कविरत्न खुशीराम जी की वह मनभावनी रचना है जो उन्होंने अपने विवाह मङ्गलोत्सव पर अपनी नव पत्नी को अर्पित की थी। नव-गृहस्थ इससे विशेष लाभ उठा सकेंगे। प्रेम का उत्तम विशुद्ध स्वरूप कवि की इन कृतियों में सर्वत्र रक्खा गया है। विशुद्ध दाम्पत्य प्रेम के अतिरिक्त कवि ने दीनों पर दया, और विश्व-बन्धुत्व का भी ऊँचा आदर्श पाठकों के सन्मुख इन कविताओं द्वारा रखा है। अपनी पत्नी को सम्बोधन कर के कवि कहते हैं "कोई यदि दीन अनाथ मिले, निज नयनों का तारा समझें। जो ठुकराया है लाखों ने, उसको अपना प्यारा समझें।" 'हो कराहता, आकुल कोई, उसकी हम मरहम बन जाएं। अंधे की लकड़ी बन भूले-भटके को राह बताएं॥ आवो जग के कल्याण हेतु, निज जीवन गंध लुटा जाएं। जग में अपने बलिदानों को, इक जगमग ज्योति जगा जावें॥" 'जागो' शीर्षक कविता उच्च राष्ट्रीय भावना पूर्ण और स्फूर्तिदायिनी है जहां स्त्री-जाति को सम्बोधित करते हुए कवि ने लिखा है "तुमने गाना है हम सब ने, हँस हँस कर मिट जाना है। मचल मचल कर आज कायरों, को मरना सिखलाना है।" उर उर में तुमने ही विप्लव, की ज्वाला धधकाना है। प्राण प्राण में तुमने आजादी का दीप जलाना है।" इत्या द। श्री खुशीरामजी हिन्दी के उदीयमान उत्तम देश भक्त कवि हैं॥ हम उनका अपनी सुन्दर रचनाओं के लिये हार्दिक अभिनन्दन करते हैं और आशा करते हैं कि सहृदय समाज में उनका यथोचित आदर होगा।

मन और उसका निग्रह (प्रथम भाग—लेखक—स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती हृषीकेश अनुवादक—श्री द्वारका नाथ झिंगन M A. LL B. 'देहली प्रकाशक—जेनरल प्रिंटिंग वर्क्स लि मटेड ८३ पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट कलकत्ता। पृष्ठ सख्या १४० मूल्य ||)

श्री स्वामी शिवानन्द जी आध्यात्मिक विषयों पर अपने ग्रन्थों के कारण अच्छी प्रसिद्धि पा चुके हैं। इस पुस्तक में उन्होंने मन क्या है? मन के विकार, मन के रहस्य, मन का संयम इन विषयों पर चार परिच्छेदों में अपने अनुभव सहित विचार किया है। पुस्तक योगाभ्यासियों के लिये विशेष उपयोगी है। पुस्तक मे कहीं २ जो अद्वैत समर्थक विचार पाये जाते हैं उनसे हम सहमत नहीं किन्तु सर्व साधारण के लिये भी अत्यन्त उपयोगी निर्देश इस पुस्तक में पाये जाते हैं। ध० दे०

आर्य समाज बम्बई का ६७वाँ वार्षिक महोत्सव

ता० २-४-४३ शुक्रवार को सायङ्काल के ६ बजे आर्य समाज मन्दिर से नगर कीर्तन प्रारम्भ होकर बम्बई शहर के मुख्य मुख्य मार्गों से गुजरता हुआ ६॥ बजे के लग भग समाज मन्दिर मे पहुंचा । नगर कीर्तन में सम्मिलित होने वाले नरनारी को दुग्ध पान करा कर शान्ति पाठ के साथ नगर कीर्तन विसर्जित हुआ।

ता० ३-४-४३ शनिवार को प्रात काल ८॥ बजे बृहद् हवन हुआ। पश्चात् श्री०प० विजय शङ्कर जी का १ घण्टे तक वेदोपदेश हुआ। सायङ्काल ५ बजे १ घण्टे तक भजनोपदेश हुआ। पश्चात् कविरत्न प० सिद्धगोपाल जी का कविता मय व्यख्यान हुआ। आर्य वैभव व्यायाम शाला की ओर से लड़कों का व्यायाम प्रदशन हुआ। अन्त मे प० अयोध्याप्रसाद् जी वैदिक रिसर्च-स्कालर का "धर्म और विज्ञान" इस विषय पर बड़ा ही गम्भीर व्याख्यान हुआ।

ता० ४-४-४३ रविवार को बृहद् यज्ञ तथा भजनोपदेश के बाद श्री० पं० अयोध्याप्रसाद् जी का गायत्री मन्त्र पर प्रवचन हुआ। आर्य समाज की ओर से चलती हुई व्यायामशाला की लड़कियों ने व्यायाम का प्रदर्शन किया। अन्त में पं० अयोध्या प्रसाद जी का वेदों के मौलिक सिद्धान्तों पर भाषण हुआ।

ता० ५-४-४३ सोमवार को समाज मन्दिर में बृहद् यज्ञ हुआ। भजनोपदेश के पश्चात् श्री० प० अयोध्याप्रसाद् जी की वेद कथा हुई। विक्रमादित्य द्विसहस्राब्दि के बारे मे श्री रणछोड़ लाल जी ज्ञानी का सार गर्भित भाषण हुआ। तत्पश्चात् महाराजा विक्रमादित्य द्वि सहस्राब्दि महोत्सव के बारे मे एक प्रस्ताव रखा गया। उस पर श्री शिवदास चापसी, प० रामचन्द्र जी सिद्धान्तालङ्कार आदि महानुभावों के व्याख्यान हुए। बाद में प० अयोध्याप्रसाद् जी का आर्यसमाज स्थापना दिवस पर बड़ा ही रोचक तथा प्रभावशाली भाषण हुआ। पश्चात् उपर्युक्त प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ। अन्त में समाज के मन्त्री जी ने विद्वानों का फूलहारों से स्वागत किया और जनता का धन्यवाद किया। इस प्रकार उत्सव का कार्य समाप्त हुआ।

(संवाददाता)

आर्य समाज के सच्चे सेवक

दानवीर स्व० चौधरी छाजूराम जी !!!

[लेखक—प० ब्रह्मदत्त जी स्नातक, आयुर्वेद शिरोमणि]

आर्य जगत् को यह जानकर अपार शोक होगा कि समाज के एक बडे सच्चे शुभचिन्तक सहायक, दानवीर श्री चौधरी सर छाजूरामजी के० सी० आई० ई०, सी० आई० ई०, भूत पू० एम० एल० सी० का इस ६।४।४३ की रात्रि को कलकत्तामें देहावसान होगया। निकट भविष्य में इसकी क्षति पूर्ति होना असभव है। आर्य जगत् में वे ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो कि कलकत्ते के करोड़पति एव 'जूट के बादशाह' कहलाते थे। अपने जीवन मे कलकत्ता, १९ कार्नवालिस स्ट्रीट आर्य समाज के लगभग सभी उच्च पदों पर रह कर उन्होंने समाज की महत्त्व पूर्ण सेवा की थी। कलकत्ता आर्य समाज व आर्या कन्या विद्यालय के राजकीय प्रासाद चौधरी साहब के दान व परिश्रम के सदा साक्षी रहेंगे।

चौधरी छाजूराम जी हिसार (पजाब) जिले में भिवानी के निकटस्थ एक गाव के रहने वाले, थे, जहा कि आर्थिक कठिनाइयों के बीच उनका पालन-पोषण व साधारण शिक्षा हुई। परन्तु उनके भाग्य में तो कुछ और ही नियत था। वयस्क होते ही चौधरी साहब एक फर्म के मुनीम होकर कलकत्ते आगए और तबसे उनका सितारा बराबर ऊपर की ओर ही अग्रसर होता रहा और एक समय में सर्वोच्च शिखर पर पहुँचकर कलकत्ते में जूट बाजार के सर्वेसर्वा और अनेक मिलों के मालिक और मैनेजिङ्ग डायरेक्टर हो गए।

दान देने मे चौधरी साहब ने अपनी सानी कभी न रखी। भिवानी का कई लाख रुपए की लागत से बना अस्पताल उनके नाम को सदा अमर रखेगा। कलकत्ते की आर्य कन्या विद्यालय की नई इमारत बनाने का जब प्रश्न उठा तो सर्व प्रथम २० हजार रुपए अपने पास से देकर और अपने मित्र सेठों के पास जाकर कुछ समय में ही ५-६ लाख रुपया आपने एकत्रित कर दिया। गुरुकुल-वृन्दावन को अनेक बार हजारों रुपए आपने दान दिए और पिछले दिनों रग्घूमल ट्रस्ट से जिसके कि आप सदस्य थे २०००रु० की वार्षिक सहायता आपने दिलवाई। धर्म परायणता तो आपमें कूट २ कर भरी हुई थी। गत १९२२ ई० मे मेरे पूज्य पिता प० गङ्गादत्त जी शर्मा आर्य कन्या विद्यालय, कलकत्ता के आचार्य होकर गए। उस समय चौधरी साहब समाज व विद्यालय की प्रबन्धक समिति के प्रधान थे। स्टेशन पर उतरते ही चौधरी साहब मिले और उन्होंने अपने प्रासाद के एक खण्ड में ही हम लोगों के लिए रहने व भोजन का अपने भोजनालय में प्रबन्ध कर दिया। इस प्रकार वहा रहते हुए और कन्या विद्यालय में काम करते हुए पिता जी को पूरा

एक वर्ष होगया। इस बीच में प्रति मास की १ ली तारीख को उनका मुनीम आता और वेतन के निश्चित १५० रु० उनको दे जाता। कुछ दिनों बाद पता चला कि यह राशि विद्यालय की ओर से न दी जाकर चौधरी साहब अपने पास से दे रहे हैं। उनसे अब इस विषय में बहुत अनुरोध किया गया तो उन्होंने जो उत्तर दिया वह उनकी प्रवृत्ति का पूरा २ परिचायक है। उन्होंने कहा— 'पण्डित जी! पहली बात यह है कि मैंने दरिद्रता की चरम सीमा अपने जीवन में देखी है और आज लोग करोड़पति भी कह देते हैं। ऐसे कुल (जाट) में जन्म लिया जहां व्यापार कभी किसी ने नहीं किया और मैं यही काम करता हूं। तीसरे इतना धन होने की दशामें मनुष्य में जो व्यसन-कुसंस्कार लग जाते हैं सो आर्यसमाज के संसर्ग में रहने से उनसे सदा बचा रहा। अब आप ही बताइए जिस प्रभु ने मुझ पर इतनी कृपा की उसके नाम पर जो दान मैं करूं वही थोड़ा है। इस वर्ष १ लाख ५२ हजार का धर्मादा निकला है, आप इस ओर से निश्चिन्त रहें।' यह उनके आन्तरिक जीवन का चित्रण है।

चौधरी साहब अपने पीछे एक बहुत बड़ा परिवार शोक मनाने के लिए छोड़ गए हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि वह इस अवसर पर उनके ज्येष्ठ पुत्र चौधरी महेन्द्रनाथ व उनके सन्तप्त परिवार को सान्त्वना व स्वर्गीय आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

प्रेषक—
ब्र० द० स्नातक
१३-४-४२

सभाओं की सूचनाएं

अर्द्धशताब्दी उत्सव

काशी नागरी प्रचारिणी सभा

सभा ने उत्सव के लिये, जो आगामी वसंत पंचमी पर होगा, तैयारी आरम्भ कर दी है। पुस्तकालय और कलाभवन की सूची तैयार है, हिन्दी भाषा और साहित्य की प्रगति का विवरण तैयार किया जा रहा है, अर्द्धशताब्दी उत्सव के लिये तीन प्रदर्शनियाँ होंगी। (१) हस्तलिखित पुस्तकों की प्रदर्शनी, (२) समाचार पत्रों की प्रदर्शनी और (३) भारत कलाभवन द्वारा संघटित प्रदर्शनी। राजघाट की खुदाई से जो महत्व-पूर्ण सामग्री केंद्रीय सरकार से मिली है उसका इस समय विशेष रूप से प्रदर्शन किया जायगा। अर्द्धशताब्दी के समय तक,

१. स्थायी सभासदों की संख्या बढ़ाने का भी उद्योग किया जा रहा है जिससे स्थायी कोष में वृद्धि हो, अतएव जो सज्जन केवल १००) देते हैं वह रुपया स्थायी कोष में चला जाता है।

२. ऋण चुकाने का भी प्रयास किया जा रहा है, इसके लिये भी दाता की इच्छानुसार रुपया जमा किया जा रहा है, ऋण १८०००) का है।

३ शब्दसागर का संशोधित संस्करण निकालने का भी उद्योग हो रहा है, संशोधन आरम्भ भी हो गया है।

रामनारायण मिश्र
उपसभापति,
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

सामाजिक जगत्

विविध सम्मेलन, उत्सवादि

श्री दयानन्द भिक्षु मण्डल ज्वालापुर के वार्षिकोत्सव पर २३-४-४३ को आयाजित प्रचार सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव।

सभापति—श्री प० गगा प्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज प्रधान, सार्वदेशिक सभा।

(१) यह सम्मेलन इस बात को अनुभव करता है कि आर्य समाज के वर्तमान प्रचार कार्य में योग, प्राणायाम और आध्यात्मिक शिक्षा के साधनों की बहुत कमी है और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं का ध्यान ऋषि दयानन्द निर्वाण अर्ध शताब्दी के अवसर पर अजमेर के १९३३ के आर्य सम्मेलन के निश्चय स० १(च) की ओर आकर्षित करता हुआ आशा करता है कि पूर्वोक्त सभायें ऐसे उपदेशक भी उपयुक्त सख्या मे रखेंगी जो उक्त योगादि की शिक्षा दे सकें और गुरुकुल तथा अन्य महाविद्यालयों का ध्यान भी उक्त प्रकार की शिक्षा के साधन रखने की आवश्यकता पर आकर्षित करता है।

निश्चय की प्रतिलिपि निम्न प्रकार है —

(क) आर्य प्रतिनिधि सभाओं को साधारण उपदेशक और प्रचारकों के अतिरिक्त ऐसे उपदेशक भी रखने चाहिये जो आर्यों को प्राणायाम तथा योगाभ्यासादि की शिक्षा दे सकें और गुरुकुलों में भी ऐसी शिक्षा देने का अधिक और विशेष प्रबन्ध होना चाहिये।

प्रस्तावक—श्री स्वामी वत्सलानन्द जी।

अनुमोदक—श्री प० गणपति जी।

(२) इस सम्मेलन की यह दृढ धारणा है कि अब नगरों की अपेक्षा ग्रामों मे वैदिक धर्म प्रचार की अधिक आवश्यकता है और इस कार्य की पूर्ति के लिये निम्नलिखित उपायों की ओर यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं का ध्यान आकर्षित करता है। प्रान्त भर मे या किसी विस्तृत क्षेत्र में भ्रमण करने वाले उपदेशकों के अतिरिक्त कुछ प्रचारक स्थायी रूप से एक नियत स्थान पर रह कर उस स्थान मे या उसके समीप एक छोटे सीमित क्षेत्र में प्रचार करें।

(ख) जहा तक सम्भव हो ऐसे प्रचारक रखे जावें जो धार्मिक प्रचार के साथ ग्राम वासियों को साधारण रोगों की औषधि भी देवें। औषधि अधिकाश आयुर्वैदिक हों। कुछ होम्यो पैथिक भी हा सकती है। ऐसे प्रचारकों के लिये उपयुक्त और सच्ची आयुर्वैदिक औषधियों की सूची तैयार कराई जाय और एक लघु पुस्तक उक्त प्रचारकों के लिये गुरकुल कागडी व गुरकुल वृन्दावन तथा अन्य २ योग्य वैद्यों की सहायता

से तैयार कराई जाय। इस सम्मेलन की सम्मति में इस कार्य को सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा उचित रीति से कर सकती है। उक्त प्रचारक ग्राम वासियों को सफाई आदि की भी शिक्षा देवें।

(ग) ग्रामों में धार्मिक प्रचार की दृष्टि से ग्राम पाठशालायें भी जहां न हों स्थापित करनी चाहियें और स्थानिक प्रचारक ऐसी पाठशालाओं का संचालन व प्रबन्ध कर सकते हैं।

प्रस्तावक—पं० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति

अनुमोदक—श्री डा० शिवनाथ राय जी।

समर्थक—पं० ज्ञानेन्द्र जी इत्यादि।

(३) इस सम्मेलन की सम्मति में प्रत्येक आर्य को निम्न लिखित तीन व्रतों में से कोई एक व्रत लेना चाहिये कि वह प्रति वर्ष

(क) कम से कम एक मनुष्य को जो पढ़ा लिखा न हो, पढ़ाकर साक्षर बनावेगा।

(ख) कम से कम दो मनुष्यों से जो मद्य मांस का सेवन करते हों उनका सेवन छुड़वावेगा।

(ग) कम से कम ५ मनुष्यों से तम्बाकू सिगरेट, बीड़ी आदि का व्यसन छुड़वायेगा। दयानन्द भिक्षु मण्डल से प्रार्थना की जाय कि सूचना मिलने पर लिखे हुये व्रत लेने वालों की ३ सूचियां अपने कार्यालय में रखने की आज्ञा दें।

प्रस्तावक—स्वा० ब्रह्मानन्द जी

अनुमोदक—स्वा० वेदानन्द जी

समर्थक—श्री कृष्णनारायण जी

आर्य समाजों के उत्सव

आर्य समाज, हनुमान रोड, नई देहली का २०वां वार्षिकोत्सव २६ से २९ मार्च तक बड़े समारोह से मनाया गया। उत्सव से पूर्व १४ मार्च से २१ मार्च तक तार्किकशिरोमणि श्री पं० राम चन्द्र जी देहलवी की सैद्धान्तिक विवेचना सहित सत्यार्थ प्रकाश की कथा हुई। २२ से २५ मार्च तक क्रमशः संगीत सम्मेलन, शुद्धि सम्मेलन, वीर स्मृति-सम्मेलन तथा अखण्ड भारत सम्मेलन सफलता पूर्वक सम्पन्न हुए। उत्सव में सर्व श्री महात्मा नारायण स्वामी जी स्वा० अभेदानन्द जी महाराज पं० सत्यव्रत जी वानप्रस्थ पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार, पं० रामदत्त जी शुक्ल ऐडवोकेट अधिष्ठाता उपदेशक विभाग संयुक्त प्रान्त, पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति इत्यादि प्रसिद्ध विद्वानों के भाषण हुए। २९ मार्च को आर्यकुमार सभा व आर्य स्त्री समाज के वार्षिकोत्सवों तथा कवि सम्मेलन के पश्चात् उत्सव समाप्त हुआ।

त्रिलोकीनाथ

मन्त्री।

१९० ईसाइयों की शुद्धि

(एक सम्वाददाता)

उदगीर (निजाम) के उत्सव पर श्री पं० लक्ष्मणराव जी ओघने ने प्रचार किया। नगर में एक दिन प्रचार हुआ और ता० २३ को एक यहूदी कई और ३ लड़कों तथा २६ को सजाया जाकर तलासरी गांव के १९० ईसाई स्त्री पुरुषों (४० कुटुम्ब) की शुद्धि की गई उसमें सहायतार्थ श्री० पं० ज्ञानेन्द्रजी सिद्धान्त भूषण (मरोला) तथा श्री० नारायण शर्मा प्रचारक उपस्थित थे। हिन्दू सभा ने द्रव्य साहाय्य किया।

श्री दयानन्द भिक्षु मण्डल की ओर से २२-५-४३ को आयोजित वर्णाश्रम व्यवस्था सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव

सभापति श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज।

१. भारतवर्ष में यद्यपि साधु और सन्यासी वेष धारियों की संख्या बहुत अधिक है परन्तु उनमें ऐसे बहुत कम हैं जो वेद-शास्त्रों के अनुकूल सन्यासी धर्म का पालन करते हों। इस लिये यह सम्मेलन, निश्चय करता है कि निम्न लिखित संन्यासियों की एक समिति इस अभिप्राय से बनाई जावे कि वे साधु तथा सन्यासियों से मिल कर उनका ध्यान वैदिक धर्म प्रचार की आवश्यकता की ओर आकर्षित करें और ऐसे उपाय सोचें जिस से अधिकाधिक संख्या में साधु व संन्यासी अपने आश्रम धर्म का यथावत् पालन करते हुये प्रचार कार्य में प्रवृत्त हों और अपने उपदेशादि से जनता को लाभ पहुंचावें।

१. श्री महात्मा नारायण स्वामी जी।
२ „ स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी।
३. „ स्वामी वेदानन्द जी।
४. „ स्वामी ब्रह्मानन्द जी।
५. „ डा० सत्प्रकाशानन्द जी।
६. „ पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए०।
७. „ सुन्दरदास जी वानप्रस्थी।

पूर्वोक्त महोदयों को अधिकार होगा कि वे इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये जिन अन्य संन्यासियों और विद्वानों को उचित समझें इस समिति में सम्मिलित कर लेवें।

२. (क) वानप्रस्थ आश्रम लुप्त प्राय हो गया है परन्तु सच्चे संन्यासी तैयार करने के लिये और अन्य प्रकार से आश्रम धर्म पालन करने के लिये उक्त आश्रम की अत्यन्त उपयोगिता है। इस लिये यह सम्मेलन निश्चय करता है कि जो आर्य तृतीय आयु भाग में पहुँच चुके हों और वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करने के सर्व प्रकार योग्य हों उनको उक्त आश्रम में प्रवेश करना चाहिये। विशेषतः आर्य समाजों के पदाधिकारियों तथा अन्य मुख्य कार्यकर्ताओं को इस विषयक क्रियात्मक आदर्श जनता के सम्मुख अवश्य रखना चाहिये।

(ख) यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आर्य समाजों का ध्यान इस ओर आकर्षित करता है कि आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर के समान देश के अन्य भागों में ऐसे आश्रम स्थापित होने चाहिये।

(ग) जो अन्य आश्रम इस समय पूर्वोक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिये देश के भिन्न २ भागों में स्थापित हो चुके हैं, उनको दयानन्द भिक्षु-मण्डल में सम्मिलित होने के लिये यह सम्मेलन निमन्त्रित करता है जिस से वे सुसङ्गठित हो कर आश्रम धर्म के पालन व प्रचार में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकें।

प्रस्तावक—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति।
„ रामभरोसे जी वानप्रस्थी।
„ ब्र० सहदेव जी।

३. इस सम्मेलन की सम्मति में वैदिक वर्ण-व्यवस्था को पुनः स्थापित करने के लिये

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएं

शहीदी प्लेट

हैदराबाद धर्मयुद्ध के हुतात्माओं शहीदों की स्मृति में समाजों और आर्य संस्थाओं में पीतल की पट्टिकायें रखे जाने का सभा ने लगभग २ वर्ष हुये आदेश प्रचारित किया था और अलीगढ़ के एक कारीगर से २४ रु० प्रति प्लेट का भाव निश्चित किया गया था। इस योजना के फलस्वरूप लगभग ६० पट्टिकायें बनवाई गई परन्तु अब पीतल का भाव बहुत बढ़ जाने के कारण प्लेट का २४ रु० मूल्य स्थिर रखना असम्भव हो गया है। अब प्लेट ४० रु० में दी जा सकेगी। अतएव इस विज्ञप्ति के द्वारा आर्य-जनता को इस परिवर्तन से सूचित किया जाता है कि एक कलेंडर के रूप में शहीदी प्लेट को छपवाने का विचार किया जा रहा है परन्तु पर्याप्त मात्रा में आर्डर्स के प्राप्त होने पर ही छपाई का कार्य प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया है। जो समाजें इससे लाभ उठाना चाहें वे कलेंडरों की संख्या से पूर्व से ही सभा को सूचित कर देवें जिससे कलेंडरों की छपाई की संख्या का निर्णय किया जा सके। कलेंडर का मूल्य ६ आने प्रति होगा।

२. कोई २ सज्जन अपनी डाक का पता बलिदान भवन वा सार्वदेशिक सभा दे देते हैं और इसकी न सभा को सूचना देते हैं और न पूर्व स्वीकृति प्राप्त करते हैं। अतः सर्वसाधारण को सूचना के लिये उद्घोषित किया जाता है कि इस सभा की पूर्व स्वीकृति प्राप्त किये अथवा सूचना दिये बिना यदि कोई सज्जन बलिदान भवन वा सार्वदेशिक सभा के पते पर अपनी डाक मँगवायेंगे तो अपनी डाक न मिलने के वे ही उत्तरदाता होंगे। किसी सज्जन का बिना सभा की पूर्व स्वीकृति के अपने किसी मिलने वाले वा परिचित को बलिदान भवन वा सार्वदेशिक सभा में मिलने का पता भी नहीं देना चाहिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

(पृष्ठ १३६ का शेष)

जन्म जाति भेद को जो देश के लिये महान् हानिकारक है उच्छेद करना बहुत आवश्यक है। यह सम्मेलन अनुभव करता है कि इस कार्य में आर्य समाज को अभी तक बहुत कम सफलता प्राप्त हुई है। इस लिये यह सम्मेलन सब आर्यों से अनुरोध करता है कि जन्म मूलक जाति भेद को निर्मूल करने के लिये अधिकाधिक संख्या में अन्तर्जातीय विवाह करने और कराने का उद्योग करे।

(सभापति जी की ओर से)

सुन्दरदास वानप्रस्थी
मन्त्री दयानन्द भिक्षुक दल



आर्य कुमार परिषद की परीक्षाओं के विषय में

श्री मन्त्री जी आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त का वक्तव्य

"भारतवर्षीय आर्य्य कुमार परिषद् द्वारा संचालित धार्मिक परीक्षाओं से मैं कई वर्ष से परिचित हूँ। परीक्षा प्रणाली में मेरा विश्वास है उस से ज्ञान की क्रमश वृद्धि और वास्तविक योग्यता प्राप्त हो सकती है। इसी बात को दृष्टि में रख कर मैं सोचा करता था कि वैदिक धर्म के योग्य उपदेशक बनाने के लिए भी यदि कोई परीक्षा रखी जाए तो अच्छा है। उसी समय मुझे इन परीक्षाओं का परिचय मिला। मैंने इन की पाठविधि और परीक्षा सचालन को देखा। दोनों को देख कर मुझे सन्तोष और प्रसन्नता प्राप्त हुई। देहरादून में मैंने इनके प्रचार में सहयोग दिया और अब यहां अपने कालेज में धर्म शिक्षा की पाठविधि को इस प्रकार आयोजित कर दिया है कि एफ० ए० तक का विद्यार्थी इन सब परीक्षाओं में उत्तीर्णता प्राप्त कर सकता है। इससे मेरे हृदय में इन परीक्षाओं के लिए जो गौरव है उसका संकेत मिल जाता है।

आर्य प्रतिनिधि सभा सयुक्त प्रान्त के मन्त्री के नाते अभी मेरा ध्यान इन परीक्षाओं की ओर गया है। मैं चाहता हूं कि सभा का प्रत्येक उपदेशक कम से कम इन परीक्षाओं में उत्तीर्णता प्राप्त किया हुआ अवश्य हो। इनसे उसको वैदिकधर्म के सिद्धान्तों का अच्छा परिचय हो जायगा और धर्म के मूल-ग्रन्थों की तह तक पहुँचने का मार्ग मिल जायगा। परीक्षा मन्त्री जी का पत्र मिलने पर मैं इन्हें सभा द्वारा स्वीकृत कराने का यत्न करूँगा।

मुझे यह देख कर प्रसन्नता है कि इन परीक्षाओं की बराबर उन्नति हो रही है।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री एम. ए.
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा, संयुक्त प्रान्त

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की सूचनाएं

अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की कार्य कारिणी समिति की बैठक ता० १८-४-४३ को १२ बजे से म० कृष्ण जी की प्रधानता में हुई —

१—पिछली कार्यकारिणी की रिपोर्ट पढ़ी जाकर स्वीकृत हुई।

२—श्री डा० युद्ध वीर सिंह जी उपप्रधान के स्थान पर, प्रो० सुधाकर जी एम० ए० उनकी अनुपस्थिति में उप प्रधान पद पर कार्य करेंगे, ऐसा निश्चय किया गया।

३—आवश्यकता को अनुभव करते हुये श्री प० देवव्रत जी धर्मेन्दु श्री देवीदयाल जी, प्रो० सुधाकर जी, श्री बद्रीदत्त जी तथा म० इन्द्र नारायण जी को कार्यकारिणी का सदस्य बनाया गया।

४—श्री देवीदयालजी ने अपने कार्य की रिपोर्ट पेश की।

५—आर्य कुमार सभाओं के निरीक्षण तथा दहेज तम्बाकू तथा गाली विरोधी दिवस मनाने का विषय। इनके विषय में निश्चय हुआ कि आगामी कार्य कारिणी सभा में पेश हों।

देवीदयाल उपमंत्री

सार्वदेशिक पत्र के मूल्य में वृद्धि

कागज की अत्यन्त असाधारण मंहगाई के कारण सभा की अन्तरंग सभा तिथि २७। ३। ४३ के निश्चयानुसार "सार्वदेशिक" पत्र के वार्षिक चन्दे में १ रु० की वृद्धि करदी गई है। अब स्वदेश से २ रु० के स्थान में वार्षिक चन्दा ३ रु० और और विदेश से ५ शिलिंग के स्थान में ७ शिलिंग होगा। हमारी इच्छा और यत्न था कि इस पत्र के मूल्य के सस्तेपन की आर्य जगत् में जो विशेषता बनी हुई है वह अक्षुण्ण रहती पर हम विवश हो गये हैं। परन्तु यह वृद्धि नाम मात्र की है और साधारण समय में जब कागज सस्ता और सुलभ था तब ही हो जानी चाहिये थी। इस दृष्टि से वर्तमान वृद्धि वृद्धि नहीं है वरन् एक कमी की पूर्ति मात्र है जिससे कागज आदि के मूल्य में प्रतिदिन होनेवाली वृद्धि का आंशिक मुकाबला किया जा सके।

नोटः—जिन सज्जनों का इस वर्ष का चन्दा प्राप्त हो चुका है वे कृपया १। १ रु० और शीघ्र भेजने का कष्ट करें। मनी आर्डर भेजते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें

इन्द्र विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्वदेशिक सभा

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगडी का ४१वां वार्षिकोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी का ४१वाँ वार्षिकोत्सव २३ से २६ एप्रिल तक बड़ी धूम धाम से श्री श्रद्धानन्द नगरी में मनाया गया जिसमें श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी, श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी, श्री प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति, श्री प० यशपाल जी सिद्धान्तालङ्कार, श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार आदि सुप्रसिद्ध आर्य विद्वानों के उत्तम व्याख्यानों के अतिरिक्त निम्न सम्मेलन हुए—

(१) वादविवाद सम्मेलन—सभापति स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक विषय—'एक तन्त्र व प्रजातन्त्र" इसमें ब्र० सहदेव जी, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, प० कृष्णचन्द्र जी विद्यालङ्कार आदि ने भाग लिया। श्री सभापति जी का बड़ा मार्मिक भाषण हुआ।

(२) सरस्वती सम्मेलन—सभापति- महा-महोपाध्याय श्री प० चिन्न स्वामी शास्त्री अध्यक्ष प्राच्य विद्या विभाग हिन्दू युनिवर्सिटी बनारस संस्कृत निबन्ध लेखक—श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार आचार्य गुरुकुल कांगड़ी विषय—"यज्ञेषु पश्वालम्भ" निबन्ध अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण था। श्री प० धर्मदेव जी वि० वा० और प्रो० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार के भी इस विषय पर संस्कृत में भाषण हुए। अन्त में श्री सभापति जी ने अपने विचार सुन्दर संस्कृत में प्रकट करते हुए ऋषि दयानन्द के वेद रक्षा विषयक कार्य की बड़ी प्रशंसा की।

(३) व्यायाम सम्मेलन प्रतिदिन होता रहा जिसमें ब्रह्मचारियों ने अद्भुत शारीरिक करतब दिखाये।

(४) संगीत सम्मेलन २६ अप्रेल की रात को हुआ जिसमें उत्तम गायकों ने संगीत द्वारा जनता को आनन्दित किया।

श्रद्धासम्मेलन—श्री श्रद्धानन्द नगरी (पुरानी गुरुकुल भूमि) में २७-४-४१ को बड़े उत्साह और श्रद्धा के साथ स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के अनन्य भक्त श्री कश्मूराम जी नैय्यड़ लुधियाना निवासी के सभापतित्व में जो स्वयं तथा अपनी मित्र मण्डली द्वारा अब तक गुरुकुल के लिये ११५५००) संग्रह करके दे चुके हैं और शीघ्र ही २ लाख तक की राशि पूरा करने का व्रत ले चुके हैं मनाया गया जिसमे गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार (आचार्य गुरुकुल) श्री प्रो० लालचन्द्रजी एम० ए० (आचार्य गुरुकुल) प० हरिवंश जी वेदालङ्कार तथा कुछ संरक्षक महानुभावों ने अमर शहीद धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पण करने के अतिरिक्त गुरुकुल की अधिक उन्नति तथा पुरानी भूमि के समुचित उपयोग विषयक विचार प्रकट किये। सभापति जी का इस अवसर

पर भाषण अत्यन्त हृदयगम था जिसे यथावसर 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित करवाने का विचार है। इस वर्ष दीक्षान्त अभिभाषण कलकत्ता युनिवर्सिटी के भू० पू० वाइस चान्सलर तथा सुप्रसिद्ध नेता डा० श्यामाप्रसाद जी मुखोपाध्याय M A LL B D Litt ने लिख कर भेजा था जिसे अनिवार्य कारण वश उनकी अनुपस्थिति में उनके मन्त्री प्रो० हरिचरण घोष एम० ए० ने पढ़ कर सुनाया। दीक्षान्त संस्कार की सारी कार्यवाही बड़ी प्रभावोत्पादिनी थी।

उत्सव प्रत्येक दृष्टि से बड़ा सफल रहा। वर्ष में लगभग १ लाख ६ हजार का दान सुनाया गया। उत्सव में आर्य वीरदल ने श्री ओंप्रकाश जी त्यागी स० प्रधान सेनापति के नेतृत्व में जो सेवा और रक्षा का कार्य बड़ी तत्परता से किया उसकी सब ओर से विशेष प्रशंसा सुनने में आई।

आर्यवीर शिक्षा शिविर—गुरुकुल कांगड़ी

गुरुकुल कांगड़ी में १ से २७ अप्रेल तक पंजाब, संयुक्त प्रान्त, राजस्थान, सिन्ध आदि विविध प्रान्तों से ७५ आर्यवीर, शिक्षणशिविर में शिक्षा ग्रहण करते रहे। श्री प० देशबन्धु जी विद्यालङ्कार प्रधान सेनापति के निरीक्षण में श्री ओंप्रकाश जी त्यागी स० प्रधान सेनापति और प्र० सुखदेव जी स० शिक्षक तथा प्रचारक आर्यवीरों को वैयक्तिक तथा सामूहिक व्यायाम, लाठी तैरी आदि की शिक्षा उन्हें कठोर नियम और अनुशासन मे रख कर देते रहे। आर्यवीरों ने ही क्रियात्मक शिक्षा के रूप में उत्सव पर सेवा और रक्षा का कार्य बड़ी उत्तमता और तत्परता से किया जिस पर २७-४-५३ को आर्यवीर शिक्षक का प्रमाण पत्र देते हुए श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी तथा मन्त्री अखिलभारतीय आर्यवीर दल समिति ने उन्हें हार्दिक बधाई दी तथा भविष्य कार्य विषयक अत्युत्तम निर्देश दिये। उन्होंने सेवा और रक्षा कार्य के परस्पर सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हुए आर्यवीरों को सेवा भाव से प्रेरित होकर रक्षा कार्य करने के लिये शक्ति सम्पादन का उपदेश दिया और वर्ष में कम से कम १०० आर्यवीरों को शिक्षण देने का व्रत ग्रहण करने को कहा। इस अवसर पर श्री पं० देशबन्धु जी प्रधान सेनापति तथा पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा ने भी आर्य वीरों को समयोचित निर्देश दिये।

धार्मिक चर्चा—

विद्या और अविद्या

(लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज ज्वालापुर)

सार्वदेशिक के विद्वान् संपादक की प्रेरणा से, विद्या और अविद्या के सम्बन्ध में, ये पंक्तियां लिखी जाती हैं। इस विषय पर सबसे अधिक प्रकाश डालने वाले यजुर्वेद के ये तीन मन्त्र हैं—

अन्धतम प्रविशन्ति ये ऽविद्यामुपासते।
ततोभूय इव ते तमो य उ विद्याया ँ रता ॥
अन्य देवाहु र्विद्याया अन्यदाहुरविद्याया।
इति शुश्रुम धीराणा ये नस्तद्वि च चक्षिरे ॥
विद्या चा विद्या च यस्तद्वेदोभय ँ सह।
अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥

यजु० ४०।१२ १४

किसी भी टीकाकार का आश्रय न लेकर, नीचे इन मन्त्रों के वे अर्थ दिये जाते हैं जो मन्त्र के शब्दों से निकलते है —

"पहला मंत्र"

"जो (अविद्याम्) कर्म का (ज्ञान की उपेक्षा करके) सेवन करते हैं (वे) गहरे अन्धकार में प्रवेश करते हैं। और जो (कर्म की उपेक्षा करके) (विद्यायाम्) ज्ञान में रमते हैं वे उससे भी अधिक अन्धकार को प्राप्त होते हैं।

"दूसरा मंत्र"

ज्ञान का और ही फल कहते हैं और कर्म का और ही फल कहते हैं। ऐसा हम धीर पुरुषों के वचन सुनते हैं जो हमारे लिये उन (वचनों) का उपदेश करते हैं।

"तीसरा मंत्र"

जो ज्ञान और कर्म, इन दोनों को, साथ साथ (बिना एक दूसरे की उपेक्षा किये हुये) जानता (प्रयोग में लाता) है वह "अविद्या"=कर्म से मृत्यु को तैर कर, ज्ञान से अमरता को प्राप्त होता है।

"विद्या और अविद्या पर विचार"

विद्या ज्ञान को कहते हैं। अविद्या के दो अर्थ हैं, एक अर्थ पारिभाषिक मिथ्या ज्ञान है। दर्शनों में प्रायः यही पारिभाषिक अर्थ काम में लाया गया है। इसको पारिभाषिक अर्थ इसलिये कहते हैं कि यह अर्थ इस शब्द अविद्या से नहीं निकलता है दूसरे अर्थ इस शब्द के वह हैं जो इस शब्द से निकलते हैं। अविद्या दो शब्दों का सघात है "अ+विद्या" इनमें से "अ" निषेध परक है और विद्या ज्ञान को कहते ही हैं। इस लिये अविद्या शब्द के अर्थ हैं (न विद्या= अविद्या) जो ज्ञान नहीं अर्थात् विद्येतर=ज्ञानेतर ज्ञान से भिन्न दूसरी चीज है क्या, इसका उत्तर इन मन्त्रों के देवता से मिलता है। इस समस्त अध्याय का देवता आत्मा है। आत्मा के स्वाभाविक गुण ज्ञान और प्रयत्न हैं। न्याय दर्शन में जो इच्छा द्वेषादि का विवरण दिया गया है वे

आत्मा के गुण नहीं अपितु आत्मा के होने के लिंग=चिह्न हैं। मनुष्य शरीर की बनावट भी आत्मा के इन्हीं दो गुणों के होने की साक्षी है। *शरीर में ज्ञानेन्द्रिय आत्मा के ज्ञान गुण और* कर्मेन्द्रिय कर्म गुण को सार्थक करने के लिये हैं।

अस्तु; इन मन्त्रों में आये हुये विद्या और अविद्या शब्द आत्मा से सम्बन्धित हैं। विद्या ज्ञान को कहते हैं इसलिये अविद्या=विद्येतर कर्म ही हुआ। इसीलिये अविद्या शब्द कर्म के अर्थ में प्रयुक्त हुआ करता है। अविद्या का पारिभाषिक अर्थ यहां नहीं लिया जा सकता यदि लें तो मानना पड़ेगा कि "अविद्ययामृत्यु तीर्त्वा वाक्य में कहा गया है कि मिथ्याज्ञान से मनुष्य मृत्यु के पार हुआ करता है। यह बात सर्वथा अनर्गल होगी। अविद्या का अर्थ, 'अविद्या का दार्शनिक ज्ञान करना खींच तान के सिवा और कुछ न होगा।

(२) ऋषि दयानन्द ने अपने यजुर्वेद भाष्यमें *तीसरे मन्त्र में आये "अविद्या" मृत्युं तीर्त्वा का* अर्थ "शरीरादि जड़ पदार्थ समूह से किये पुरुषार्थ से मरण दुःख के भय को उल्लंघन कर" किया है। स्पष्ट है कि उन्होंने यहां अविद्या का अर्थ पुरुषार्थ ही किया है। फिर इसी मन्त्र के भावार्थ में लिखा है कि 'न केवल कर्म से तथा न केवल ज्ञान" से कोई धर्मादि पदार्थों की सिद्धि करने में समर्थ होता है। इन दोनों उदाहरणों में ऋषि दयानन्द ने एक जगह अविद्या का अर्थ पुरुषार्थ और दूसरी जगह कर्म लिया है। इससे विद्या और अविद्या का भाव स्पष्ट हो जाता है।

सार्वदेशिक आ० प्र० सभा

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

वेद प्रचार निधि

प्राप्त ३०—४—१६४३ तक

आर्य समाजें संयुक्त प्रांत

५) बिजनौर द्वारा बा० बनारसी दास जी वकील
५) गगाह
१०) गाजियाबाद
२) धोलड़ी (मेरठ)
१५।।) मुरादाबाद
२) मसेली (मुरादाबाद)
५१।) विरक्ताश्रम ज्वालापुर
४।।।=) खेड़ा अफगान (सहारनपुर)

आर्य समाजें पंजाब व देहली

२५) हजूरी बाग श्रीनगर द्वारा आर्य प्रति० सभा पजाब
११।।।~) द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब
५) करौल बाग देहली
५) सरसावन (करनाल)
१०) गुजरांवाला (पजाब)
५) मोरसराय देहली
३।।) प्रागपुर (कांगड़ा)
१३।।) ठकीनाल बन्दी पेशावर

आर्य समाजें राजस्थान

५) जयपुर
१) सिरोही (राज)
५) छोटी सादड़ी (मेवाड़)
५) बालोतरा (मारवाड़)
५) हमीरवास पो० सादुसपुर (बीकानेर)
१६) अलवर (राज)

आर्य समाजें बिहार प्रान्त

५) मसौढ़ी (पटना)

आर्य समाजें बम्बई प्रान्त

३०) श्री धनपतराय जी बम्बई

आर्य समाज मद्रास प्रान्त

५) मदुरा (दक्षिण भारत)

आर्य समाजें विदेश

२६।।) बगदाद (इराक)

२७१≡)

जिन आर्य समाजों से यह दान प्राप्त हुआ है उनको सभा की ओर से धन्यवाद। शेष सब आर्य समाजों को भी आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में सार्वदेशिक सभा की वेद प्रचार निधि के लिये सगृहीत धन तुरन्त सभा कार्यालय में भेज देना चाहिये। जहां किसी विशेष कारणवश उस दिन धन सग्रह न किया जा सका हो उन्हें अब भी धन सग्रह करके अथवा अपने कोष से अच्छी राशि इस कार्यार्थ भेज कर शिरोमणि सभा के आदेश और अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिये।

दान सूची सार्वदेशिक सभा देहली

१३—२—४३ से एप्रिल के अन्त तक

दान

१) पं० बाबूराम जी शर्मा माहुपुरा (बिजनौर)
६॥।=) आर्य समाज बहराइच (यू० पी०) (बंगाल तूफान पीड़ित सहायतार्थ)
१०) आर्य समाज सागर सी० पी० "
१५) " " सदर मेरठ (विदेश प्रचारार्थ)
१०) श्रीमती सुमित्रा गोबिन्दन् धम पत्नी श्री० डा० केसरी गोबिन्दन् मालाबार
५) श्री० पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु आर्य कुमार परिषद् देहली
१) श्री मन्त्री आ० स० हिरियडक ६ K

५१।।।=)

२) श्री ज्ञानेन्द्र प्रभु जी तीर्थहली
१०) " गणपति जी शैनाई कार्कल
१००) आर्य समाज कार्कल (बंगाल तूफान पीड़ित सहायतार्थ)
५) " " सुजानपुर
१) " " जयपुर
६६) श्री बूटामल जी मलहोत्रा बम्बई
२५) श्री बनवारीलाल जी साहिब गज सार्वदेशिक सम्मेलन सहायतार्थ
२४) आ० स० बाराबंकी
५०) श्री प० मदन मोहन जी विद्याधर प्रचारक सभा द्वारा
१०) श्री साधु शिव प्रसाद जी द्वारा संगृहीत
११) श्री सत्यवीर जी (छज्जूराम जी)
२) पुत्ता नरसैया कोल पेट बंगलौर

३५६=)

१५) गुप्तदान श्री सुन्दरराज जी बंगलौर द्वारा
५) डा० रामनारायण जी भूपाल निवासी श्रीमती शान्तादेवी के विवाहोत्सव पर
५) श्री० चौ० उजाडाराम जी मास्टर जाट हाई स्कूल

३८१=)

१) आर्य समाज खेडा अफगान(सहारनपुर)

दाताओं को सभा की ओर से धन्यवाद।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री, सार्वदेशिक सभा

सम्पादकीय

देहली शिक्षा बोर्ड का अनुचित निश्चय— शिक्षा माध्यम अंग्रेज़ी

हमें यह जान कर अत्यन्त खेद और आश्चर्य हुआ कि देहली के हायर सेकण्डरी बोर्ड ने हायर सेकण्डरी स्कूलों में अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने का निश्चय किया है। आज स कुछ वर्ष पूर्व इस विषय में कुछ सुशिक्षित भारतीयों को भी सन्देह था कि हिन्दी अथवा अन्य प्रान्तीय भाषाओं के द्वारा गणित, इतिहास, भूगाल, विज्ञान आदि विषयों की शिक्षा दी जा सकती है या नहीं किन्तु जगद् विख्यात गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडी (हरिद्वार) ने इस विषयक परीक्षण को सर्वथा सफल बना कर माननीय श्री निवास शास्त्री जी जैसे महानुभावों के विचारों में भी परिवर्तन कर दिया था। भौतिकी, रसायनशास्त्र, वनस्पति विज्ञान, विद्युच्छास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों पर गुरकुल कागडी तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं की ओर से अच्छे २ ग्रन्थ अब उपलब्ध होते हैं ऐसी अवस्था मे उच्च माध्यमिक शिक्षा के लिये अंग्रेजी जैसी एक कठिन विदेशी भाषा को शिक्षा को माध्यम बनाने का निश्चय करना सर्वथा अनुचित है विशेषत जब कि यह ज्ञात हुआ है कि देहली प्रान्तीय शिक्षा पुनर्निर्माण समिति ने अपनी यह स्पष्ट सम्मति दी थी कि उच्च माध्यमिक कक्षाओं में भारतीय भाषाओं को ही शिक्षा का माध्यम बनाया जाए। एक विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने से विद्यार्थियों के मस्तिष्क पर अनावश्यक भार पडने के अतिरिक्त उनकी मौलिकता का ह्रास हो जाता है और उनमें केवल रटने और अनुकरण करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होजाती है इस बात को सभी विचारशील व्यक्ति (स्वयम् अंग्रेज भी) स्वीकार करते हैं। उदाहरणार्थ लार्ड लिटन् ने जो भारत के वायसराय रह चुके थे जनवरी १६२६ में युनिवर्सिटी कालेज लण्डन में शिक्षा सम्मेलन (Conference of educational associations) के अध्यक्ष के रूप में भाषण करते हुए विदेशी भाषा को शिक्षा माध्यम बनाने की हानियों को इतने स्पष्ट और उत्तम रूप में प्रकट किया था कि हम उसके निम्न उद्धरणों को देने के प्रलोभन का सवरण नहीं कर सकते। इन्होंने अंग्रेज शिक्षा वैज्ञानिकों को सम्बोधन करते हुए कहा था —

"Was it realised that in India every thing as taught in English? That had imposed a great strain on the minds of the students and det-

racted from the benefits which they were capable of deriving from the instruction That could only be realised if it could be imagined that in England we had to learn every thing – History, Geography, Mathematics, Science—Say in Japanese

The result was that their outlook and activities tended to be imitative than original"

अर्थात् क्या इस बात को अनुभव किया जाता है कि भारत में प्रत्येक विषय अंग्रेजी द्वारा पढ़ाया जाता है। इससे विद्यार्थियों के दिमागों पर बड़ा भारी दबाव पड़ जाता है और शिक्षा से उन्हें जो लाभ पहुँच सकता था उसमें भी कमी हो जाती है। इस बात को हम तब अनुभव कर सकते यदि यह कल्पना की जा सके कि इङ्गलैण्ड मे हमें इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान आदि सब विषय जापानी मे पढ़ने पड़ें।

इसका परिणाम यह है कि विद्यार्थियों के दृष्टिकोण और क्रियाओं में मौलिकता के स्थान पर अनुकरण शीलता की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

हम देहली युनिवर्सिटी के वाइसचान्सलर सर मारिस ग्वायर का जो इसे आदर्श विश्वविद्यालय बनाने को उत्सुक हैं तथा शिक्षा बोर्ड के अधिकारियों का ध्यान लार्ड लिटन् के इन अत्यन्त विचार पूर्ण शब्दों की ओर आकर्षित करते हुए आशा रखते हैं कि वे उपर्युक्त अनुचित निश्चय को अवश्य बदल देंगे।

भारतीय कन्याओं की विदेश में शिक्षा—

समाचार पत्रों द्वारा यह समाचार जान कर कि हमारे देश के सर्व मान्य राष्ट्रीय नेता श्री प० जवाहरलाल नेहरू जी की मान्या भगिनी संयुक्त प्रान्त में कांग्रेस मन्त्रि मण्डल में लब्ध प्रतिष्ठ मन्त्रिणी श्रीमती विजय लक्ष्मी पण्डिता ने अभी अपनी दो सुपुत्रियों कुमारी चन्द्र लेखा और कुमारी तारा को उच्च शिक्षा के लिये अमेरिका में भेजने का निश्चय किया है और अपनी चीनी गवर्नेस श्रीमती चू के साथ वे १६ अप्रेल को बम्बई के लिये रवाना हो गई हैं हमें आश्चर्य और खेद हुआ। जहां तक हमें ज्ञात है इन दोनों कन्याओं की आयु १८, २० के अन्दर है इस अपरिपक्क अवस्था में इनका विदेशीय सभ्यता और रीतिनीति के अनुसार शिक्षा प्राप्त करना भारतीयता की दृष्टि से कितना हानिकारक होगा यह लिखने की आवश्यकता नहीं। अपनी सभ्यता, धर्म और समाज के साथ जब तक छोटी आयु में बालक बालिकाओं के हृदय में प्रेम न उत्पन्न किया जाए और इन विषयों में उन्हें पूर्ण परिचय न दिया जाय तब तक सच्ची राष्ट्रीयता उनके अन्दर जागृत होनी असम्भव है। क्या भारत में कोई ऐसी उत्तम संस्था या शिक्षिकाएँ नहीं रहीं जो हमारे देश के उच्च कोटि के नेता और श्रीमती विजय लक्ष्मी पण्डिता जैसी नायिकाएँ अपनी सन्तान को अपरिपक्क आयु में विदेशी रंग में रंग देना उचित समझती हैं? इस प्रकार जो बुरा उदाहरण इन सुप्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा जनता के सामने रखा जाता है हम उसकी कभी प्रशंसा नहीं कर सकते। अपरिपक्क आयु में अपने धर्म, समाज और सभ्यता विषयक पूर्ण ज्ञान प्राप्त किये बिना विदेश में

सम्मान का शिक्षण, हमारे विचार में तो भारतीय नेताओं और नेत्रियों के लिये सर्वथा अनुचित है। विदेशी भाषा और शिक्षा का यह व्यामोह हमारे देश वासियों से कब दूर होगा ?

हिन्दी भाषा और डी० एल० ओ०—

कविरत्न श्री प० सुशीराम जी वासिष्ठ जैतो मण्डी से लिखते हैं —

"सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का १५ अप्रैल का पत्र २० अप्रैल को और हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का १७ अप्रैल का पत्र २१ अप्रैल को प्राप्त हुआ है। दोनों पर पता शुद्ध एवं स्पष्ट नागरी लिपि में लिखा हुआ था और एक पर तो (सा० सभा के पत्र पर) टाइप किया हुआ था। उक्त दोनों पत्रों को मृत पत्र कार्यालय (Dead Letter Office) की सैर करनी पड़ी है। ऐसा प्रतीत होता है कि आज कल डाक विभाग के कई कार्यकर्ता हिन्दी के नाम मात्र से ही चिढ़ने लगे हैं और पत्रों पर नागरी लिपि के देखते ही नाक भौं सिकोड़ कर बिना देखे ही उन्हें डी० एल० ओ० में भेज देते हैं। हिन्दी के प्रति उनके इस उपेक्षा भाव के कारण दूसरे दिन प्राप्त होने वाले पत्र भी हमें सप्ताह भर में मिलते हैं। परिणामतः बहुत से व्यक्ति इच्छा रहने पर भी हिन्दी में पता लिखने से झिझकते हैं। क्या हिन्दी भाषी इस स्थिति को चुपचाप सहन करते रहेंगे ? क्या डाक विभाग का ध्यान इस धांधली की ओर आकर्षित नहीं किया जा सकता ? हिन्दी प्रेमियों का कर्तव्य है कि वे ऐसी प्रत्येक घटना की रिपोर्ट पोस्ट मास्टर जनरल के पास अवश्य भेजें ताकि मातृ भाषा के प्रति इस अन्याय का प्रतिरोध किया जा सके।"

हम डाक विभाग के सब अधिकारियों का ध्यान श्री सुशीराम जी वासिष्ठ की उपर्युक्त पंक्तियों की ओर आकर्षित करते हुए आशा करते हैं कि वे प्रत्येक डाकखाने में ऐसी व्यवस्था अवश्य करेंगे जिससे नागरी लिपि के पतों वाले पत्र अन्य पत्रों की तरह समय पर सर्वत्र पहुँच सकें। हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा अन्य सब हिन्दी प्रेमियों को भी इस विषयक यथोचित आन्दोलन अवश्य करना चाहिये।

आर्यसमाज और दलितोद्धार—

अतरौली जिला अलीगढ़ के एक उत्साही आर्य सज्जन ने अभी हमारे नाम एक पत्र भेजा है जिसमें वे लिखते हैं। "एक भयङ्कर भूल जो सार्वदेशिक सभा तथा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाएँ कर रही हैं वह यह है कि वे प्रस्ताव पास करके अपने अन्तर्गत सब समाजों को उसकी प्रतिलिपि भेज कर अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेती हैं। क्या वे नहीं जानतीं कि जिन आर्य समाजों पर वे भरोसा कर रही हैं उन समाजों के आर्य सदस्य व अधिकारि गण प्रच-लित जाति व उपजातियों में उसी प्रकार जकड़े हुए हैं जिस प्रकार कि हमारे पौराणिक भाई। इन आर्य सदस्य व अधिकारियों को यह भय है कि इन 'अछूतों' से बातें करते या इन के मुहल्लों से आते हुए भी यदि किसी हिन्दू ने देख लिया तो हमारा जाति बहिष्कार हुए बिना नहीं रहेगा। इसी जाति बहिष्कार का इतना अब इन आर्यों

पर सवार है कि कोई भी सुधार कार्य होते नहीं बनता। तो फिर इन आर्यों की समाजों से यह उम्मेद कि यह कुछ कार्य इस (दलितोद्धार की) ओर करेंगी हवा में क़िले के बनाने के बराबर है।" इत्यादि।

लेखक के शब्द हृदय के अन्तस्तल से निकले हुए हैं इसमें सन्देह नहीं किन्तु उनमें भावावेश में कुछ अत्युक्ति से काम लिया गया प्रतीत होता है। सार्वदेशिक वा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाएँ केवल प्रस्ताव भेज कर अपने कर्तव्य की इति श्री नहीं समझतीं वे तो इस कार्य क्रम को (दलितोद्धार भी जिसका एक आवश्यक अङ्ग है) क्रियात्मक रूप में परिणत देखना चाहती है और उसी के लिये प्रयत्न शील हैं। यदि किसी जगह आर्य सदस्य भी इतने निर्भय नहीं बने कि जात-पात की दलदल से अपने को निकाल कर वे खुले तौर पर दलितोद्धार कार्य में अपनी शक्ति को लगावें तो यह अवस्था वस्तुत शोचनीय है। प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है कि स्वाध्याय सन्ध्यादि नित्य नियमों और सत्सङ्ग द्वारा अपने वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन को उत्तम बनाते हुए जाति भेद और अस्पृश्यता के बन्धनों से ऊपर उठे तभी आर्य समाज दलितोद्धार के कार्य में सफल हो सकेगा अन्यथा नहीं। हमारा विश्वास है कि आर्यों की शोचनीय अवस्था पर आंसू बहाने के स्थान पर प्रत्येक सच्चा आर्य इस विषयक क्रियात्मक निर्भयता पूर्ण उदाहरण जनता के सम्मुख प्रस्तुत करके समाज के नाम और गौरव को उज्ज्वल करेगा।

क्या आर्य समाज की अवस्था निराशाजनक है?

एक योग्य आर्य सन्यासी अपने २८-४-४१ के मेरे नाम लिखे पत्र में लिखते हैं—

'आप आर्य समाज की वर्तमान त्रुटियों (सामाजिक कमजोरियों) को खूब समझते हैं ऐसा आपके लेखों से मैं जान पाया हूँ परन्तु इन लेखों, प्रस्तावों और कार्यक्रमों के पास कर देने से समाज को कुछ बल मिले या सफलता हो मुझे इसमें विश्वास नहीं रहा। दलितोद्धार छूतछात और जात पात के सम्बन्ध में पहले भी प्रस्ताव और कार्यक्रम बनते रहे हैं परन्तु आर्य जनता की Feeling power इतनी मर गई है कि कोई ध्यान नहीं देता। समाज की वास्तविक दशा सर्वथा निराशाजनक है?' इत्यादि

आर्य समाज की वर्तमान अवस्था में पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है इसमें सन्देह नहीं। वैयक्तिक और पारिवारिक जीवनों की उच्चता और पवित्रता तथा जातिभेद अस्पृश्यता निवारण विषय के क्रियात्मक सुधारों की ओर अनेक आर्य पर्याप्त ध्यान नहीं देते रहे इससे इन्कार नहीं किया जा सकता किन्तु हमारा विश्वास है कि गत ६०, ७० वर्षों में आर्यसमाज ने जो कार्य कर करके दिखाया है वह सर्वथा आशा जनक है। कई आर्यों के अन्दर जो निर्बलताएं घुस गई हैं उनको दूर करना और अपने उच्च उद्देश्य तथा आदर्शों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करना असम्भव नहीं है। कुछ भी हो, वैदिक धर्मी आर्य को कभी अपने अन्दर निराशा की लहर

न उठने देनी चाहिये और भगवान पर पूर्ण विश्वास रखते हुए आर्य समाज की अवस्था का प्रेम तथा सेवा द्वारा अधिकाधिक उन्नत करने का प्रयत्न करना चाहिये।

एक जगद्विख्यात विचारक के उद्गार—

श्री बर्नार्डशॉ एक जगद्विख्यात विचारक और लेखक हैं। हाल ही मे जब उनसे भारतीय गति अवरोध के दूर करने के विषय मे प्रश्न किया गया तो उन्होंने कहा कि मै अधिक तो कह नहीं सकता। मेरे विचार मे गति अवरोध का दूर करने का उपाय यह है कि सम्राट गान्धी जी को रिहाई दे दें और गान्धी जी को गिरफ्तार करके उनके मन्त्रिमण्डल ने जो मानसिक दोष दिखाया था उसके लिये उनसे (म० गान्धी जी से) क्षमा मागें। ये शब्द सुनने मे विचित्र और अप्रिय अवश्य प्रतीत होते है और कोई आशा नही कि ब्रिटिश सरकार इन पर कुछ ध्यान देगी। श्री बर्नार्डशॉ के इन उद्गारों को पढ़ते हुए हमें महाभारत की उस उक्ति का स्मरण हो आया कि 'अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभ ॥ अर्थात् जो बात वस्तुत हितकारक है किन्तु सुनने मे अप्रिय लगती है उसके कहने वाले और सुनने वाले दोनों ही दुर्लभ हैं।

अमेरिकन राज प्रतिनिधि को वायसराय का इन्कार—

हमारे वायसराय महोदय ने इन्कार करने का बड़ा पक्का अभ्यास कर लिया प्रतीत होता है। अमेरिका युद्ध मे जितनी अधिक सहायता पहुँचा रहा है इसको दृष्टि में रखते हुए साधारणतया लोगों को यह आशा न थी कि अमेरिकन राष्ट्रपति रूजवेल्ट के भारत स्थित वैयक्तिक प्रतिनिधि श्री विलियम फ़िलिप्स की महात्मा गाधी जी से मिलने और बातचीत करने विषयक प्रार्थना को भी वायसराय महोदय ठुकरा देंगे किन्तु वस्तुत ऐसा ही हुआ है। भारतीय सरकार ने चारों तरफ असन्तोष होते हुए भी टस से मस न होने का निश्चय कर लिया प्रतीत होता है जिसकी कोई विचारशील निष्पक्षपात व्यक्ति प्रशंसा नहीं कर सकता। फेडरल कोर्ट द्वारा भारत रक्षा कानून की धारा २६ को अवैध घोषित किये जाने पर अब नये आर्डिनेन्स द्वारा सरकार ने उसको उचित ठहराने का प्रयत्न किया है ताकि नजरबन्दों को छोड़ा न जा सके। प्रश्न यह है कि आखिर ऐसी कार्यवाहियों का कहीं अन्त भी होगा या यह ऑर्डिनेन्स राज्य ही बना रहेगा। ईश्वर शासकों को सुबुद्धि प्रदान करें जिससे वे अपनी इस वर्तमान नीति को सर्वथा हानिकारक समझकर सच्ची स्वतन्त्रता की घोषणा करके यश के भागी बनें।

कुछ "सनातन धर्म के ठेकेदारों" के काले कारनामे—

सनातन धर्म एक बड़ा पवित्र नाम है जिसका वास्तविक अर्थ नित्य सार्वभौम धर्म है किन्तु खेद है कि इसके नाम से कट्टर पन्थी बड़े बड़े अनर्थ करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार के तथा कथित सनातन धर्म के ठेकेदारों के कुछ काले कारनामे गत मास समाचार पत्रों द्वारा जनता के सम्मुख आये हैं यथा —

(१) बनारस के प्रसिद्ध 'सनातनी" नेता प०

राजेश्वर शास्त्री द्राविड़ ने जिन्होंने शारदा ऐक्ट को अधर्म फैलाने वाला बताकर उसके विरोध में प्रमुख भाग लिया था अभी हाल में चौथा विवाह किया है। विवाह के समय आपकी चौथी पत्नी की आयु १४ वर्ष से भी कम थी।

(२) अभी छोटी सादड़ी (मेवाड़) के कुछ रैगरों (हरिजनों) पर कुछ तथा कथित ब्राह्मणत्वाभिमानियों द्वारा आक्रमण और जबदस्ती उनके कानों से भूषण खींच लेने और जेब से ५०) छीन लेने का समाचार मिला है जिसमें कारण हरिजनों के विवाह के अवसर पर भूषणों के प्रयोग को बताया जाता है जिसे उच्च कुलाभिमानी सहन न कर सकते थे।

(३) अहमदाबाद के एक ठाकुर ने १९ एप्रिल को अम्बा जी के मन्दिर में एक ११ वर्ष की ब्राह्मण बालिका को हवन कुण्ड में जबर्दस्ती होम कर दिया।

इस प्रकार के काले कारनामों से वस्तुत विशुद्ध सत्य सनातन धर्म का न केवल कोई सम्बन्ध नहीं बल्कि वे उसके न्याय सगत पवित्र आदेश के सर्वथा विरुद्ध हैं किन्तु खेद और आश्चर्य है कि वे 'सनातन धर्म' के ठेकेदार जो ४,५ साल तक की विधवाओं को भी जीवन भर ब्रह्मचारिणी रहने का उपदेश देते नहीं थकते ऐसे कुत्सित कर्म करते क्यों नहीं सकोच करते? भगवान् इन्हें न्याय बुद्धि प्रदान करें। जनता को भी ऐसे लोगों के इन अनुचित कार्यों का खुले तौर पर विरोध करना चाहिये ताकि उनकी आंख खुल जाए। दुःख तो इस बात का है कि ऐसे कार्यों से सनातन धर्म के पवित्र नाम पर बट्टा लगता है।

'सार्वदेशिक' के प्रेमी परिवार से—

आपको यह ज्ञात हो ही चुका है कि सार्वदेशिक सभा की अन्तरङ्ग सभा के गत अधिवेशन में काग़ज और छपाई की असाधारण मँहगाई का दृष्टि में रखते हुए 'सार्वदेशिक' का वार्षिक चन्दा ५) से ६) कर देने का सर्वसम्मति से निश्चय किया गया था किन्तु इतने से ही सार्वदेशिक पत्र को स्वावलम्बी नहीं बनाया जा सकता यह बात स्पष्ट है। उसके लिये हमारे प्रेमी परिवार के प्रत्येक सदस्य के सहयोग की हमें आवश्यकता है। प्रत्येक सदस्य यदि ५ नये ग्राहक बनाने का दृढ़ संकल्प करके प्रयत्न शुरू कर दें तो इस में कोई भी विशेष कठिनाई न होगी। कई भाइयों ने इस दिशा में प्रशसनीय कार्य किया है अन्य भी उनका अनुसरण करके पत्र को सब प्रकार से उन्नत करने के हमारे प्रयत्न में जिस विषयक अभिनन्दनात्मक पत्र चारों ओर से आ रहे हैं हार्दिक सहयोग दें यह हमारा निवेदन है जिस पर आशा है सब प्रेमी ग्राहक अवश्य ध्यान देंगे।

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो— योग के अभ्यासों को कर सकता है। मूल्य ॥=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण ।=)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।=), ≡), =)॥, =)॥, -)॥, ≡)॥, ।), ।=)॥

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय में रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

(१) प्राणायाम विधि)॥
(२) वैदिक सिद्धान्त अजिल्द ॥।)
सजिल्द १)
(३) विरजानन्द विजय =)
(४) यमपितृ परिचय २)
(५) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र २)
(६) वेद में असित शब्द -)।
(७) वैदिक सूर्य्य विज्ञान =)
(८) ऋग वेद में देवृकामा या देवकामा -)
(९) विदेशों में आर्य्य समाज ॥)
(१०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १।)
(११) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श १॥)
(१२) भजन भास्कर ॥)
(१३) समस्त आर्य्य समाजों की सूची ॥)
(१४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास अ० २)
सजिल्द २॥)
(१५) बलिदान ॥)
(१६) आर्य डायरेक्टरी अ० १।) स० १॥)
(१७) वैदिक सन्ध्या रहस्य -)।
(१८) सत्यार्थ निर्णय १॥)
(१९) संस्कृत सत्यार्थप्रकाश अ० ।)
(२०) हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद (उर्दू में) =)
(२१) इजहारे हकीकत (उर्दू में) ॥।=)
(२२) सत्य निर्णय १।)
(२३) आर्य्य पर्व्व पद्धति अजिल्द ।=)
सजिल्द १)
(२४) मातृत्व की ओर अजिल्द १।)
सजिल्द १॥)
(२५) कथा माला ।=)
(२६) आर्य्य जीवन और गृहस्थ धर्म ।=)

(२७) आर्य्यवर्त्त का वासी =)॥
(२८) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर =)
(२९) आर्य सत्याग्रह २॥)
(३०) कायाकल्प सजिल्द १।)
(३१) पञ्चयज्ञ प्रकाश ॥।)
(३२) आर्य समाज का इतिहास ॥।)
(३३) बहिनों की बातें ॥)
(३४) भक्ति कुसुमाञ्जलि ॥।)
(३५) विमान शास्त्र ।=)॥
(३६) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां १)
(३७) Agni tra
Well Bound १॥)
(३८) Crucifixion by an eye
witness ।-)
(३९) Truth and Vedas ।=)
(४०) Truth-bed rock of Aryan
Culture ॥)
(४१) Vedic Teachings १।)
(४२) Voice of Arya Varta =)
(४३) Christianity in India ॥)
(४४) The Scope and Mission of
(४५) Arya Samaj Bound १)
Unbound ॥)
(४६) Eclesia Diwina Bound ५)
(४७) The Glory of Vedas -)॥
(४८) Arya Samaj and Vedic
Dharma ॥)
(४९) Commentary on
Ishopnishad ।)
(५०) Commentary on Arya Marriage
Act ।)
(५१) Light of the Truth Bound २॥)



१९४३ ई०
२००० सं०

सम्पादक—
[illegible]

वार्षिक मूल्य
स्वदेश
विदेश ७ शि०

विषय-सूची

सार्वदेशिक पत्र का नमूना मंगाने के लिए ।=) के टिकट भेजना जरूरी है ।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष १६ | जून, १९४३ ई०] | ज्येष्ठ २००० | [दयानन्दाब्द १२० | अङ्क ४

* वैदिक प्रार्थना *

तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् । अथानो वस्यसस्कृधि ॥ सामवेद मं० स० १०५२

शब्दार्थ—हे परमेश्वर ! (तव क्रत्वा) तेरी दी हुई उत्तम बुद्धि और तेरी आज्ञानुकूल किये उत्तम कर्मों से तथा (तव ऊतिभिः) तेरी रक्षा शक्तियों के साथ (सूर्यम्) बाह्य सूर्य और आध्यात्मिक तुझ अज्ञानान्धकार निवारक ज्योतिर्मय दिव्य सूर्य को (ज्योक् पश्येम) दीर्घ काल तक (पश्येम) हम देखते रहें । (अथा) और तू (नः) हमें (वस्यस. कृधि) अत्यन्त उत्तम ज्ञानादि ऐश्वर्य सम्पन्न तथा लोगों के आश्रय दाता बना।

विनय—हे ज्योतिमय प्रभो ! हमारी यह प्रबल इच्छा है कि हम दीर्घ काल तक तुम्हारे दर्शन करते रहें। इसके लिये तुम हमें शुद्ध बुद्धि प्रदान करो जिस से हमारे सब कर्म तुम्हारी आज्ञा के अनुसार सर्वथा पवित्र हों । तुम्हारी अद्भुत रक्षा शक्तियां सदा हमारे साथ रहें। ज्ञानादि उत्तम ऐश्वर्य से तुम हमें युक्त करो जिससे हम अनाश्रितों को आश्रय दे सकें, असहायों के सहायक बन सकें। हमारा वह ऐश्वर्य परोपकारार्थ अर्पित हो।

वेदोपदेश

६ राक्षसों का दमन

(१) ओ३म् उलूकयातुं शुशुलूकय तुं जहि श्वपातुमुत कोकयातुम् । सुवर्णयातुमुत गृध्र यातुं दृ़षदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र ॥

ऋग्वेद अ० ५। ७। ६ अथर्व ८। २। ४

(२) ओ३म् अहमस्मि सपत्नहा इन्द्र इवारिष्टो अक्षत । अध सपत्ना मे पदारिमे सर्वे अभिष्ठिना ॥ ऋग्वेद अ० ८। ८। २४

(३) आ३म् अहमिन्द्रा न पराजिग्य इद् धन न मृत्यवे अवतस्थे कदाचन । सोममिन्मा सुन्वन्तो याचताषावसु न मे पूरव सख्ये रिषाथन ॥

ऋग्वेद अ० ८। १। ५

शब्दार्थ—(१) (इन्द्र) हे शक्ति सम्पन्न आत्मन् (उलूक यातुम) उल्लू की तरह की चाल—अज्ञान (शुशुलूकयातुम्) भेडिये की चाल—हिंसा क्रूरता क्रोधादि (श्वयातुम्) कुत्ते की चाल—सजातियों से वैर मात्सय—(उत) और (कोकयातुम्) चिडे की चाल—कामातुरता (सुपर्णयातुम्) गरुड की चाल—अहकार (उत) और (गृध्रयातुम्) गिद्ध की चाल—लाभ इनको (जहि) नाश करदे (दृषदा इव) पत्थर से जैसे मिट्टी के पात्र को कोई तोड फाड डालता है ऐसे ज्ञान रूप पत्थर से (रक्ष) इस राक्षस समूह को (प्रमृण) कुचल डाल।

(२) (अहम्) मै (सपत्नहा अस्मि) शत्रुओं का नाश करने वाला हूँ (इन्द्र इव अरिष्ट अक्षत) ज्ञानैश्वय सम्पन्न व्यक्ति के समान मैं भी रोग और विकार रहित हू । (इमे सर्वे) ये सब (सपत्ना) काम क्रोधादि शत्रु (मे पदो अध अभिष्ठिता) मेरे पैरों के नीचे हैं। मैंने इनको पूर्णतया अपने वश मे कर लिया है।

(३) (अहम् इन्द्र) मैं ज्ञानैश्वर्य सम्पन्न आत्मा हू। (धनम् न इत् पराजिग्ये) मैं अपनी शक्तिरूप धन को कभी न हारूगा (मृत्यवे कदाचन न अवतस्थे) मैं कभी मरणशील नहीं हू तथा पाप के वश मे होने वाला नहीं हू (पाप्मा वै मृत्यु सोम सुन्वन्तइत) ज्ञानमय भक्तिरूप अमृत रस का सेवन करते हुए ही (मा याचत) मुझसे प्रार्थना करो—अभीष्ट फल की इच्छा करो (हे पूरव) हे मनुष्यो (मे सख्ये न रिषाथन) मेरी मित्रता मे तुम दुखी अथवा हिंसित कभी न होवो।

इन मन्त्रों में ६ बडे शत्रुओं अथवा राक्षसों का नाश करने का उत्तम स्फूर्ति दायक उपदेश है। इन्हीं को ६ आन्तरिक पशुओं के नाम से भी पुकार सकते हैं जिनकी हिंसा का वेद उपदेश देते है। सब से पहले यहा उल्लू की चाल छोडने का उपदेश है। उल्लू प्रकाश से घबराता है। इस प्रकार ज्ञान प्रकाश से अलग रह कर अज्ञानान्धकार या मोह की अवस्था में रहने को यहा उलूक यातु राक्षस के नाम से कहा गया है। यह अज्ञान

या अविद्या ही अन्य सब क्लेशों का मूल है इसलिये सबसे पहले इसी का नाम लिया गया है। शुशुलूकयातु या भेड़िये की चाल से तात्पर्य कपट क्रूरता क्रोध आदि से है क्योंकि भेड़िये के अन्दर ये बातें मुख्यतया पाई जाती हैं। इन दुर्गुणों के भी नाश करने की आवश्यकता है। कुत्ता सजातियों से द्वेष रखता है उसके अन्दर मात्सर्य या ईर्ष्या का दुर्गुण अधिक रहता है जो त्यागने योग्य है। चिड़ों के अन्दर काम वासना अधिक पाई जाती है जो हानिकारक है। गरुड़ या नील कण्ठ पक्षी के अन्दर अहङ्कार या अभिमान अधिक रहता है जो परित्याज्य है। गिद्धों का लोभ तो प्रसिद्ध ही है। इस प्रकार ये ६ राक्षस हैं जो मनुष्य का नाश करने वाले हैं। ये उसे देव बनने से रोकते और उसकी अधोगति का कारण बनते हैं, इसलिये आत्मिक शक्ति के विकास द्वारा इनका दमन अत्यन्त आवश्यक है। उस आत्मिक शक्ति के विकास का उपदेश स्फूर्तिदायिनी भावना के रूप में वेद भगवान् देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आत्मिक शक्ति के महत्व का समझना चाहिये। विशुद्ध आत्मा के अन्दर काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्य आदि राक्षसों और शत्रुओं को नाश करने की शक्ति विद्यमान है। केवल उसे ईश्वरोपासनादि द्वारा विकसित करने की आवश्यकता है। जिसने अपनी आत्मा को अमर जान लिया, जो पाप से मुक्त होकर भगवान् के भजन में लीन हो गया, जिसने ज्ञानमय भक्ति रूप सच्चे सोम का पान कर लिया उसके अन्दर सब आन्तरिक राक्षसों और शत्रुओं को दमन करने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। तब उसको कोई आसुरी शक्ति दबा नहीं सकती। ऐसा व्यक्ति ही सच्ची शान्ति सुख और आनन्द को प्राप्त कर सकता है। इसलिये प्रत्येक आर्य नर नारी का कर्तव्य है कि वेद के इस पवित्र उपदेश के अनुसार अपनी आत्मिक शक्ति का ईश्वरोपासना, स्वाध्यायादि द्वारा विकास करके सब राक्षसीय भावों पर पूर्ण विजय प्राप्त करे।

धर्मदेव वि० वा०

वैदिक धर्म और अन्य मतमतान्तर

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० प्रधान संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा)

वैदिक धर्म संसार का सब से प्राचीन धर्म है। हमारे मतानुसार यह वह धर्म है जिस का आविर्भाव सृष्टि की आदि में ईश्वर ने ऋषियों द्वारा किया। इसी को सनातन धर्म (Eternal Religion) कहते हैं। अथर्व वेद में सनातन के ये लक्षण किये गये हैं —

सनातनमेनमाहुरुताद्य स्यात् पुनर्णवः।
अहो रात्रे प्रजायेते अन्यो अन्यस्यरूपयोः॥

(अथर्व वेद काण्ड १० सूक्त, ८ मंत्र २३)

अर्थात् सनातन उसको कहते हैं जो नित्य नया है। जैसे दिन रात नित्य एक दूसरे के रूप में आया करते हैं। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार दिन रात बदलते हुये भी वैसे ही रहते है इसी प्रकार सनातन धर्म भी नित्य बदलते हुये संसार में उसी प्रकार रहता है। वस्तुतः नियम और नियमित वस्तु में यही भेद है। नियम नहीं बदलता परन्तु जिन घटनाओं या व्यक्तियों में वह नियम काम करता है वह सदा बदलते रहते हैं। नियम नित्य हैं। नियमित पदार्थ अनित्य हैं। इसको एक दृष्टान्त से समझ सकते हैं। दो और दो चार होते हैं। यह सनातन नियम है। इस में कभी परिवर्तन नहीं होता। परन्तु दो सेब और दो सेब मिलकर चार सेब होते हैं, ये सेब नियमित होने से अनित्य हुये। जिन सेबों को मैं गिन रहा हूँ वे तो अनित्य ही हैं। "दो और दो चार" का नियम 'दो सेब और दो सेब चार सेब" की अपेक्षा अधिक व्यापक है। इसी प्रकार "अनुव्रत: पितु पुत्र" (पुत्र को पिता का अनुव्रत होना चाहिये) का आचार सम्बन्धी नियम अटल है। परन्तु "राम का अपने पिता दशरथ का अनुव्रत होना" राम और दशरथ के अनित्य होने के कारण अनित्य है। 'अनुव्रत' पितु पुत्रः' सनातन धर्म है। यह जिन व्यक्तियों पर लागू होगा वह अनित्य हैं। इसी दृष्टि से हम वैदिक धर्म को सनातन धर्म कहते हैं। यह अनादि है, अनन्त है, अमर है। इसी के लिये अथर्ववेद में अन्यत्र कहा है

पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति॥

"ईश्वर के काव्य को देखो वह न मरता है न बुड्ढा होता है।'

जो लोग वेद का सृष्टि या सूर्य्य के समान प्राचीन नहीं मानते वे भी ऐतिहासिक रूप से वेद को अन्य धर्मों की अपेक्षा प्राचीन तम अवश्य मानते हैं और यह नहीं बता सकते कि वैदिक धर्म से पूर्व क्या था।

हां कुछ लोग वेदों को प्राचीन तम मान कर भी वैदिक धर्म को उत्कृष्टतम नहीं मानते। सभी पुरानी चीजें तो अच्छी नहीं होतीं। दस दिन की बासी रोटी को कौन खाना पसन्द

करेगा, भोजन तो ताजा ही अच्छा होता है। पुराने सड़े हुये धर्म से भी क्या लाभ ? यह तो अपटूडेट (upto date) या ताजा होना चाहिये। परन्तु वैदिकधर्मियों का कथन है कि वैदिक धर्म सूर्य्य के समान प्राचीनतम भी है और उत्कृष्टतम भी। मनुष्य के विचारों में विकास हुआ करता है और वे कभी उन्नति करते हैं, कभी अवनति। परन्तु मनुष्यों अथवा मनुष्यों से उत्तर जगत् के ऊपर जिन नियमों का शासन है वे तो परिवर्तनशील नहीं होने चाहिये। सूर्य्य प्रतिदिन नहीं बनता। सूर्य्य पुराना भी है और अपटूडेट भी। वेद कहता है 'उत अद्य स्यात् पुनर्णव।" दीपक कल पुराना होते ही बिगड़ जायगा। नये दीपक की आवश्यकता पड़े तोभी सूर्य्य पुराना होकर भी बिगड़ेगा नहीं। इसलिये जो लोग पुराना होने के कारण वैदिक धर्म को त्याज्य समझते हैं वे उस के मर्म को नहीं समझते।

सभी धर्मों में ईश्वर के भाव को केन्द्र माना गया है। इसी भाव के चारों ओर परिधि के समान अन्य भाव चक्कर लगाते हैं। वेद में कहा है "यज्ञो भुवनस्य नाभि" अर्थात् ईश्वर का भाव समस्त भुवन का केन्द्र है वेद में यह भाव उत्कृष्टतम अवस्था में पाया जाता है। 'ईशा वास्यमिदं सर्वम्।' यह सब सृष्टि ईश्वर से ओत प्रोत है। ईश्वर व्यापक है जगत् व्याप्य है। फिर कहा है :—

"इन्द्रमित् स्तोत"=ईश्वर की ही स्तुति करो "मा चिदन्यत् विशंसत।" और किसी की स्तुति न करो।

प्रश्न यह है कि यह भाव प्राचीन होने से सर्वोत्कृष्ट क्यों नहीं। क्या इससे भी ताजा और अच्छा भाव ईश्वर के विषय में अब तक आविष्कृत हुआ है ? वेद में ईश्वर को एक और उस के नामों को अनेक माना है —

एक सद् विप्रा बहुधा वदन्ति।

(ऋ० १। ६४। ४६

ईश्वर एक है। विद्वान् लोग उसको अनेक नामों से पुकारते हैं। एक त्व पर बल देने के लिये कई उपमाओं से काम लिया गया है —

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनुप्रभूतः। एकैवोषा सर्वमिदं विभात्येकं वा इदं विबभूव सर्वम्' (ऋ० ८। ५८। २)

एक अग्नि, एक सूर्य, एक उषा और एक भगवान् यह है वेद का ईश्वर भाव।

अब देखना चाहिये कि यदि वैदिक धर्म प्राचीनतम है तो इस प्राचीनतम धर्म के होते हुये अन्य मतमतान्तर कैसे उत्पन्न हुये। क्या वेदों को छोड़ दिया गया और कहीं से उसके स्थान पर अन्य मत आ गये। अथवा वेदों का ही बदल कर दूसरा रूप हो गया। पहली बात तो ठीक मालूम नहीं होती। क्योंकि जितने नये मतो का पता चलता है उनसे ज्ञात होता है कि उनके प्रचार के पहले उन स्थानों या जातियों में कोई धर्म प्रचलित था जिसके सुधार रूप में वह धर्म आया। जैसे ईसाई मत पुराने यहूदी मत का सुधरा रूप समझा जाता है। इसी प्रकार इस्लाम से पहले अरब में यहूदी तथा ईसाई और कुछ मूर्ति-पूजक थे। कहा जाता है कि इस्लाम इन्हीं को हटा कर आया। कुरानशरीफ स्वयं

ईसाई मत को इस्लाम का पूर्वरूप मानती है। उसकी दृष्टि में हजरत ईसा पैगम्बर थे और उनकी शिक्षा माननीय थी। वह केवल इतना कहते हैं कि ईसा की शिक्षा को ईसाइयों ने बदल डाला और इस्लाम पुराने धर्म का एक उन्नत रूप है। मुहम्मद साहेब सबसे नये और सबसे पूर्ण पैगम्बर है। इसीलिये उनको आखिरी पैगम्बर कहा गया है। वर्तमान हिन्दू धम के विषय मे भी सर राधाकृष्णन् जी लिखते हैंकि–

"a process not a result a growing Tradition, not a fixed revelation

यह तो नित्य उन्नति करती हुई चीज है। कोई पकी पकाई चीज नहीं। इसका विकास हो रहा है। अर्थात् हिन्दू धर्म मे उत्तरोत्तर वृद्धि या उन्नति हो रही है। यह पूर्ण चीज नहीं किन्तु पूर्णता के मार्ग में चलती हुई चीज है।

हमारे विचार से सर राधाकृष्ण का यह विचार सगति नहीं खाता। हम नहीं मान सकते कि हिन्दू धर्म पूर्व की अपेक्षा अधिक उन्नत हो गया है और कपिल, कणादि, व्यास या पौतञ्जलि के समय की अपेक्षा हमने कोई उन्नति करली है। हम को तो यह प्रत्यक्ष दीखता है कि वर्तमान जितने मतमतान्तर हैं वे पवित्र वैदिक धर्म का विकृत रूप हैं।

हम मतमतान्तरों का विभाजन ईसाई धर्म इस्लाम, बौद्ध धर्म या हिन्दू धर्म में करना नहीं चाहते। ये भेद या तो भौगोलिक हैं या ऐतिहासिक, हम तो जड़ को पकड़ना चाहते हैं।

वैदिक काल में केवल एक ईश्वर की पूजा होती थी, और वह भी किसी मनुष्य या वस्तु के द्वारा नहीं। किन्तु सीधी। उपासक और उपास्य का सीधा सपर्क था। किसी बिचौलिये को स्थान न था। उपासक से उपास्य दूर नहीं, वह तो उसके हृदय के भीतर है, "तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्यास्य बाह्यतः" (वह सबके भीतर भी है और सबके बाहर भी)। अब देखना चाहिये कि उस समय ऋषियों और गुरुओं को क्या स्थान प्राप्त था ऋषि भी थे उपदेष्टा भी थे और आचार्य भी थे। परन्तु वे थे केवल पथ-प्रदर्शक। जिस मार्ग को उन्होंने अनुसरण करके लाभप्रद पाया था उसी माग का वे दूसरों को उपदेश भी करते थे। एक वेद मन्त्र मे इसको बड़ी सुन्दरता से वर्णन किया है—

अक्षेत्र वित् क्षेत्र विद ह्यप्राट्। स प्रैति क्षेत्र-विदानुशिष्टः। एतद् वै भद्रमनुशासनस्योत स्रुति विन्दत्यञ्जसीनाम्॥ (ऋ० १०।३२।७)

मार्ग न जानने वाला मार्गजानने वाले से पूछता है और उसके बताये हुये मार्ग पर चल पड़ता है। यही शिक्षा का उपयोग है। वह उस मार्ग को पा लेता है जो उसे आगे ले जाता है। तात्पर्य यह है कि ऋषि जिस मार्ग पर स्वय चले उसी मार्ग की ओर अपने शिष्यों को संकेत करते हैं जिससे लोग भूले भटकें नहीं। परन्तु कुछ दिनों पश्चात् इस पवित्र प्रणाली में विकार उत्पन्न हो गया, प्रणाली भी एक प्रकार की नाली है (प्र+नाली = प्रणाली)। जब तक नाली साफ है जल बहता रहता है। परन्तु जब नाली रुंध जाती है और जल का प्रवाह रुकने लगता है तो उसमें सड़न उत्पन्न हो जाती है। धर्म शिक्षा की प्रणाली भी उसी प्रकार की हो गई। इसमें सबसे

पूर्व पुरोहितों की आपाधापी हुई। पुरोहित केवल पूजा की विधि बताने वाले थे। पूजकों के प्रतिनिधि न थे। पहले उनका आदर पथ प्रदर्शक के रूप में होता था, प्रतिनिधि के रूप में नहीं। परन्तु पुरोहितों के स्वार्थ और पूजकों की अविद्या के कारण पुरोहितों ने प्रतिनिधि का रूप धारण कर लिया। इसमें पूजकों को भी सुगमता हुई। लाला जी दुकान पर बैठे दो सौ रुपये प्रति दिन कमाते रहे और पंडित जी दो रुपये मासिक पर उनकी ओर से गायत्री जपते रहे। लाला जी ने समझा कि मेरा यह लोक भी बना और परलोक भी। धन भी मिला और मुक्ति का साधन भी सम्पादित हो गया पंडित जी ने समझा कि मेरी जीविका तो चल गई। परलोक की कौन जाने। यह सब इस लिये हुआ कि मनुष्यों ने ईश्वर से अपना सीधा सम्बन्ध नहीं जोड़ा। यह भाव पहले तो बीजरूप था फिर वृक्षरूप बन कर अनेक मतमतान्तर का कारण बन गया।

ईश्वर निराकार और अदृष्ट है। सृष्टि के कानून भी निराकार और अदृष्ट हैं। इन्हीं को वेदों ने 'देवता' या 'देव' के नाम से पुकारा है। इनको सुगमता से समझने के लिये उपमाओं का आश्रय लिया गया। उदाहरण के लिये "मौत आती है।" सब जानते हैं कि मौत कोई पशु पक्षी या आदमी नहीं जो आये। परन्तु मौत को आने वाले मनुष्य से उपमा दे दी गई। उसी का नाम यम देवता रख दिया गया। कठोपनिषद् में मृत्यु, यमाचार्य अन्तक सभी शब्द हिलमिल कर एकसे हो गये हैं जो बात मृत्यु पर लागू होती है वह अन्य देवताओं पर भी। ऐतरेय ब्राह्मण में आता है कि गायत्री पक्षी बनकर स्वर्ग को चली गई या शतपथ ब्राह्मण में वाणी तथा मन का आना जाना लिखा है। ये सब उपमायें ही तो हैं। जो किसी व्यापार विशेष को समझाने के लिये दी गई हैं।

परन्तु कालान्तर में यही उपमायें अपना उपमा पन छोड़ती दिखाई देती हैं। गंगा एक नदी है। उसकी उपमा एक स्त्री से दी गई और उसको गंगा माता पुकारा गया इससे गंगा की मातृवत् उपयोगिता अभिप्रेत थी। परन्तु पीछे को यह समझा गया कि गंगा एक देवी है जो गंगा नदी की अधिष्ठात्री है और दिखाई नहीं पड़ती। इस प्रकार की देवमाला हम हिन्दू, यूनानी तथा रोम आदि जातियों के साहित्य में बहुत पाते हैं।

जब एक बार देवताओं की स्वतन्त्र सत्ता स्थापित होगई तो फिर छोटे ईश्वरों (Iesser g ds) का उसी प्रकार राज हो गया जैसे एक चक्रवर्ती राजा के आधीन माण्डलिक शासक होते हैं। इसके उपरान्त किसी ने यह कष्ट उठाने का प्रयत्न नहीं किया कि यह देवते ईश्वर हैं या जीव हैं या बीच की कोई तीसरी सत्ता है। इन का जन्म तो होते देखते हैं जैसे गणेश का। परन्तु यह है अमर इनकी मृत्यु कभी नहीं होती। इनमें से कुछ का विवाह भी हुआ परन्तु रहे सब निस्सन्तान। विवाहों पर झगड़े भी हुए और किसी एक दो के एक दो पुत्र भी सुनाई दिये। परन्तु आज तक किसी ने इनकी सत्ता की मीमांसा करना अच्छा नहीं समझा। रहा यह सब कुछ रहस्य। यह पहला विकृत रूप था प्राचीन

ऋषि दयानन्द जी के अप्रकाशित पत्र

(३)

स्वामी जी और वेद भाष्य

(प्रकाशक—प० हरिदत्त जी वेदालङ्कार गुरुकुल कांगड़ी)

हम यह देख चुके हैं कि स्वामी दयानन्द जी संस्कृत तथा आर्यभाषा के प्रचार के लिये कितने यत्न शील थे। उन्होंने हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के इस सुझाव का तीव्र विरोध किया था कि उनके वेद-भाष्य का अंगरेजी तथा उर्दू आदि प्रान्तीय भाषाओं मे भी अनुवाद हो। उनको भय था कि यदि अँगरेजी आदि में उनके वेदभाष्य का अनुवाद होगया तो लोग हिन्दी या संस्कृत सीखने का प्रयत्न नहीं करेंगे। स्वामी जी का यह उद्देश्य बहुत महान् एव उदात्त था। किन्तु उनके वेद-भाष्य का मूल प्रेरक हेतु इससे भी महान् था। वह हेतु स्वामी जी के श्री गोपालराव हरि देशमुख को लिखे गये पत्रों मे से स्पष्ट होता है।

श्री गोपालराव हरि देशमुख १६ वीं सदी के उत्तरार्ध के गुजरात के एक प्रमुख समाज सुधारक थे। सरस्वती और लक्ष्मी-दोनों की उन पर पर्याप्त कृपा थी। स्वामी जी जब गुजरात गये तो उनका स्वामी जी से परिचय हो गया। वे स्वामी जी के भक्त बन गये। देवेन्द्र बाबू की खोजों से यह सिद्ध हो चुका है कि पहला समाज बम्बई में नहीं, अपितु राजकोट में बना था। उसके नियमनिर्माण में श्री गोपालराव का प्रमुख भाग था। गुजरात में स्वामी जी के कार्यों में उन्होंने सदा उत्साह पूर्वक सहयोग दिया और स्वामी जी समय २ पर उनसे उचित परामर्श लेते रहे।

स्वामी दयानन्द जी ने, नाना रूढ़ियों,पाखण्डों सात्वाओं तथा आडम्बरों मे ग्रस्त हिन्दुजाति के उद्धार के लिये एक ही मार्ग उचित समझा था और वह था वेद का। उन्होंने वर्त्तमान भारत मे सर्व प्रथम 'वेदों की ओर लौटो, का नारा बुलन्द किया था। यह बात उल्लेखनीय है कि स्वामी जी ने अपने गुरु श्री स्वामी विरजानन्द जी से ३ वर्ष तक अध्ययन मे, वेद नहीं पढ़े थे।

(शेष पृष्ठ १६१ का)

वैदिक धर्म का जिसका कुछ तो स्वरूप हम वर्तमान हिन्दूधर्म या पौराणिक मत में पाते हैं और कुछ यूरोप, अरब, अफ्रीका आदि देशों के उन मतों मे था जो ईसाई, मुसल्मान आदि मतों के पूर्व वर्तमान थे इन देवताओं का यज्ञ के साथ विशेष सम्बन्ध रहा। वैदिक यज्ञ एक सर्वथा भिन्न सस्था था। सब प्रकार के कर्तव्यों का नाम यज्ञ था। उसमें किसी पशु आदि के बध का प्रश्न न था। न ब्रह्म यज्ञ का अर्थ ब्रह्म का बध था न अतिथि यज्ञ का अर्थ अतिथि का बध। परन्तु देवताओं के लिये यज्ञ मे पशु वध की भी आवश्यकता समझी गई। जब मनुष्य खाते-पीते हैं तो देवते क्यों न खाये ? जो यज्ञों में पशुबध होता था उसका अदृष्ट रस तो अदृष्ट देवते भोग लेते थे। परन्तु स्थूल मास स्थूल पुजारियों और पुरोहितों के हाथ लगता था। यही इस प्रकार की प्रथाओं के दीर्घ जीवन का हेतु है।

(क्रमशः)

उसके बाद उन्होंने वेदों का प्रयत्नपूर्वक अन्वेषण किया। उनको उपलब्ध किया और उनका स्वय स्वाध्याय किया। उस समय के पडित पुराणों के अतिरिक्त प्रायः कुछ नहीं जानते थे। काशी में जब स्वामी जी ने मूर्तिपूजा का खण्डन शुरू किया तो काशी के महाराज ने पण्डितों को बुला कर कहा कि स्वामी जी इस तरह मूर्त्तिपूजा का खण्डन कर रहे हैं। आप उनसे शास्त्रार्थ कर के उनका विरोध क्यों नहीं करते। पडितों ने उस समय यह उत्तर दिया कि स्वामी जी वेदों के प्रमाण मागते हैं। हमे वेदों के प्रमाण ढूढने के लिये १५ दिन का अवकाश दिया जाय। १५ दिन बाद जो काशी शास्त्रार्थ हुआ, उसका परिणाम सब जानते हैं। काशी के सारे पडित वेद में से कोई प्रमाण नहीं उपस्थित कर सके। काशी संस्कृत के अध्ययन अध्यापन का सब से बडा केन्द्र था और वहा के विद्वान् वेदों से बिल्कुल अपरिचित थे।

स्वामी जी वेदों का ज्ञान सर्वसाधारण जनता को देकर, उनके अन्धविश्वास, भ्रमपूर्ण विचार, नास्तिकता, मूर्त्तिपूजा तथा पाखण्डपूर्ण विचारों को दूर करना चाहते थे। उन्होंने लाहौर से ६ जून १८७७ को, नासिक में श्री गोपालराव हरि देशमुख के नाम पत्र लिखते हुए वेदों के ज्ञान के सम्बन्ध में यह विश्वास प्रकट किया है-"मुझे पूर्ण विश्वास है कि अज्ञानी भारत का अन्धकार—जिसने जनता को इतनी हीनावस्था में डाल रखा है, जिसमे वे अब तक लापरवाह हैं—एक दिन मे ही दूर हो सकता है यदि सभ्यता का सूर्य चमके तथा वेदों का सच्चा ज्ञान हो"। इससे स्पष्ट है कि स्वामी जी भारतीयों की दुरावस्था दूर करने का सर्वोत्तम उपाय वैदिक-ज्ञान का प्रसार ही समझते थे।

ऐसा जान पड़ता है कि स्वामी जी पहले ऋग्वेद से प्रारम्भ करके सभी वेदों का क्रम से भाष्य करना चाहते थे। किन्तु श्री गोपालराव हरिदेशमुख की प्रेरणा, से उन्होंने यजुर्वेद का भाष्य, उस क्रम को भग करके, शुरू किया। स्वामी जी जिस कुल मे पैदा हुए—वह यजुर्वेदी ब्राह्मणों का कुल था। बचपन मे उन्होंने सम्पूर्ण यजुर्वेद को कठाग्र किया था। अत यजुर्वेद से उनका स्वाभाविक स्नेह था। जब श्रीगोपालराव ने यह आग्रह किया कि स्वामी जी पहले अनुवाद करे तो स्वामी जी ने अपने उपर्युक्त पत्र मे, उनकी प्रार्थना का इस प्रकार उत्तर दिया "मै आप की सलाह मानने को उद्यत हूँ तथा सम्पूर्ण यजुर्वेद का अनुवाद करने का तय्यार हू, किन्तु दो पडितों की अधिक आवश्यकता होगी और छपाई का खर्च भी बढ जायगा। अत इस पर उचित विचार करके, अपनी अन्तिम सम्मति से सूचित कीजिये ताकि मैं दो अधिक लेखक रखके ग्रन्थ का अनुवाद निश्चय से करू'। यजुर्वेद का मुख्य विषय कर्मकाण्ड है। सायण उव्वट और महीधर ने अपने भाष्यों मे हिंसा से ओत प्रोत यज्ञों मे यजुर्वेद के मन्त्रों का विनियोग किया है। स्वामी जी के भाष्य का, उन भाष्यों से मिलान किया जाय तभी हमे स्वामी जी के भाष्य की महत्ता अनुभव होती है।

रावलपिण्डी से २८ नव० १८७७ को, श्री गोपालराव के नाम एक दूसरा पत्र लिखते हुए स्वामी जी ने अपने वेदभाष्य का आदर्श इन शब्दों में बताया है—"मैं प्रयत्न करूंगा कि सब कठिनतम बातें सरल संस्कृत तथा देवनागरी में खोल दूं। जिससे अपर्याप्त ज्ञान वाले बालक भी उन्हें बिना किसी सहायता के समझ सकें।" इस पत्र के साथ ही स्वामी जी ने उन्हें अपने वेद भाष्य का एक नमूना भेजा है जिसमें पाठकों की सुविधा के लिये मूल पाठ विशेष ढंग से दिखाया गया है। स्वामी जी ने यह नमूना भेजते हुए उन्हें ताकीद की है कि—'कृपया पहले आप इसे देखिये, फिर इसे अहमदाबाद, बम्बई, कलकत्ता, में लोगों की स्वीकृति के लिये, वितरित कीजिये। मैं आशा करता हूं कि आप ऐसा करने मे समय नष्ट नहीं करेंगे। आप अपनी सम्मति शीघ्र ही देंगे कि यही ढंग रहना चाहिये या इसकी जगह इससे बहतर ढंग बरतना चाहिये।'

स्वामी जी अपने ग्रन्थों की शुद्धता के विषय में कितने सतर्क थे, यह बात ६ दिस० १८७७ को रावलपिण्डी से ही श्री गोपालराव के नाम लिखे पत्र से सूचित होती है। स्वामी जी लिखते हैं—"प्रूफ ठीक करना मेरा काम समझा जाना चाहिये और मैं प्रतिमास अपने हाथ से, इस कार्य को दो या तीन बार करूंगा।"

स्वामी जी न केवल बड़ी २ बातों की ओर ध्यान देते थे किन्तु वेद भाष्य के सम्बन्ध में वे उसकी छोटी २ बातों की ओर भी पूरा ध्यान देते थे। उन्हें न केवल यह चिन्ता थी कि वेद-भाष्य द्वारा भारतीयों का अज्ञानान्धकार दूर हो किन्तु वे इस विषय में भी उत्सुक थे कि वेदभाष्य की छपाई मे अनावश्यक अधिक व्यय न हो। इसीलिये उन्होंने अपने उपर्युक्त पत्र में बनारस के एक मिशनरी के प्रेस में वेदभाष्य के छपवाने के खर्च का पूरा ब्यौरा दिया है और यह पूछा है कि बम्बई मे इनके छपवाने में क्या खर्च बैठेगा। यदि वहा छपाई सस्ती हो तो उन्हें बम्बई में ही छपवाने की अनुमति दी है। १३ दिसम्बर के १८७७ के पत्र में उन्होंने श्री गोपालराव से उस कागज का नमूना मांगा है, जिस पर वे वेदभाष्य छपवाना चाहते हैं। साथ ही यह भी ताकीद की गई है कि हस्त लिपि के समान भाष्य तीन विभिन्न बड़े, छोटे और गोल टाइपों में ढाला जायगा। ये बातें स्वयमेव बतला रही हैं कि स्वामी जी छोटी २ बातों (Details) पर भी कितना अधिक ध्यान देते थे।

अध्यात्म सुधा

क्या हम श्रेय मार्ग को ग्रहण न करेंगे ?

(लेखक—स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, संग्रहीता—श्री कन्धूराम जी नैय्यड़, आनन्दाश्रम, लुधियाना)

संसार रूपी विशाल जँगल में दो मार्ग देखने में आते हैं। एक तो दृष्टि गोचर बड़ा ही प्रिय होता है, जो एक ही दृष्टि में मन को मोह लेता है। ज्यों २ मनुष्य उसमें प्रवृत्त होता है क्लेशों और दुःखों का सागर दीखता है। परन्तु अचम्भा यह है कि दुःख और क्लेश सहते हुए भी इस मार्ग का यात्री इससे लौटने का साहस नहीं रखता। इस प्रेय माग में सांसारिक विषयों में एक ऐसी आकर्षण शक्ति है कि इसके प्रभाव से बचकर निकलना किसी विरले ही बहादुर मनुष्य का काम है।

दूसरा मार्ग देखने मे बड़ा कठिन और शुष्क प्रतीत होता है। अनुभव शून्य के लिये प्राय यह माग बड़ा ही भयकर दिखाई देता है परन्तु जो व्रतधारी इस माग मे एकबार पग उठाते हैं उनकी श्रद्धा दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है, जिसके आनन्द को वही पुरुष अनुभव कर सकता है, जिसने इस आनन्दमय मार्ग पर चलना आरम्भ कर दिया है। क्या हम श्रेय माग को ग्रहण न करेंगे।

शरीर की दासता बड़ी भयानक है।

जीवात्मा ही शरीररूपी नगर का राजा है यह अधिकार आत्मा का है कि इन्द्रियों, मन और प्राणों को अपने कार्य मे लगावे परन्तु जब आत्मा ही मन के वश मे हो जावे और उसकी चञ्चलता के साथ डावाडोल फिरने लगे तब प्रबन्ध कहा स्थिर रह सकता है। हमारी दशा शोचनीय है। इन्द्रिया हमे इधर उधर लिये फिरती हैं। मन वश मे नहीं। यही कारण है कि नाम मात्र के राजा बने हुए भी हम दास बन रहे हैं। शरीर की दासता बड़ी भयानक है। इस दासता के ही कारण सँसार मे अशान्ति फैल रही है। विचारणीय बात यह है कि यदि मेरा आत्मा, मन और इन्द्रियों का दास बन जावे तो कैसा भयंकर दृश्य है। इन्द्रियों की दासता से स्वतन्त्र होने का उपाय जब तक न करेंगे तब तक सच्ची उन्नति का द्वार हमारे लिये बन्द ही रहेगा।

वह अधिष्ठाता क्या प्रबन्ध कर सकता है जो अपने प्रबन्ध की पड़ताल नियत समय पर नहीं करता। उस प्रबन्ध मे उन्नति कहा हो सकती है जहा अधिष्ठाता अपने प्रबन्ध के सम्बन्ध मे सच्ची नुकताचीनी सुनने की भी शक्ति नहीं रखता। इसलिये सज्जन पाठकगण।

अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुण्य स्मृति में

श्रद्धा के फूल

श्रद्धा सम्मेलन (श्रद्धानन्द नगरी) के सभापति श्री लब्भूराम जी नैय्यड़ आनन्दाश्रम लुधियाना का भाषण

ओं या मेधा देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविन कुरु स्वाहा ॥

अर्थ-हे परमात्मन् । देवगण और पितर जिस बुद्धि की उपासना करते हैं उस बुद्धि के द्वारा मुझे मेधावी बनाओ।

बहुत दिनों की बात है जब मेरी आयु लगभग आठ नौ वर्ष की थी मेरे पूज्य पिताजी ने मेरा यज्ञोपवीत संस्कार लुधियाने से अपनी जन्म भूमि नूरमहल में जाकर करने का निश्चय किया। मैं उस समय की प्रसन्नता को अनुभव करके अब भी प्रफुल्लित होता हू। जब कि अपने पिताजी के साथ नूरमहल के लिए लुधियाने से चल पड़ा। यज्ञोपवीत संस्कार के एक दिन पूर्व संस्कार की तैयारियां बहुत उत्साह से होरही थीं। मेरी बड़ी बहिन ने मुझे अलग लेजा कर कहा कि कल जब तेरे गले में यज्ञोपवीत पड़ेगा तब तू यह कहना कि मै काशी जी पढ़ने जाऊगा तब मैं तुझे यह कहकर रोकूगी कि नहीं भैया, तुझे यहीं पर पढाएगे और ऐसा कहने पर तूने रुक जाना। मैंने उस समय बहिन के कहने को एक साधारण बात जानकर उत्तर दिया कि मैं अवश्य काशीजी जाऊगा। मेरे उत्तर से घर भर में कुछ उदासीनता सी छागई। मुझे इस उदासीनता का उस समय पता लगा जबकि मेरी पूज्य माता ने रात्रि को मुझे अपनी गोद मे बिठलाकर प्यार से सिर पर हाथ फेरते हुए कहा कि "आज तूने बहिन से यह कहा था कि मैं काशी जी जाऊँगा ? ऐसा नहीं करना जब बहिन तुम्हें रोके तो तुम रुक जाना"। मैंने अपनी पूज्य माता की आज्ञा का कभी उल्लङ्घन नहीं किया था, 'झट स्वभावतः मैंने कहा कि अच्छा जी ऐसा ही करूगा"। उसके पश्चात् घरभर में खूब चहल पहल होने लगी। अगले ही दिन यज्ञोपवीत संस्कार था। प्रातः ही पुरोहित जी आगये और वेदी पर विधि पूर्वक संस्कार आरम्भ किया। संस्कार के अन्त में कौपीन बांधे बगल मे मृगचर्म हाथ में दण्ड लिए मैं द्वार पर गया तो बहिन जी ने पूछा कहा जाओगे ? मैंने उत्तर दिया-मैं काशी जी जाऊगा और विद्याध्ययन

(शेष पृष्ठ १६५ का)

प्रतिदिन अपने राज्य के प्रबन्ध की पड़ताल करो अर्थात् दिन भर के किये कामों पर विचार करो। और यदि तुम्हारा विवेक तुम्हारे कार्यों पर यथार्थ नुक्ताचीनी करे तो उससे मत घबराओ बल्कि उसे मुबारिक समझो, क्योंकि विवेक की आवाज पर ध्यान देना आत्मिक जीवन का चिन्ह है।

कहूंगा। इस पर बहिन जी ने कहा नहीं, ऐसा मत करो, हम तुम्हें यहीं पर पढ़ाएंगे। मैंने पूज्य माता की आज्ञा का पालन करते हुए बहिन के साथ लौट पड़ा। परन्तु मन में कई प्रकार के विचार उठते रहे कि क्या कारण है कि यदि काशी जी आना ही नहीं तो ऐसा करें क्यों? संस्कार कार्य समाप्त हुआ। ब्रह्मभोज की समाप्ति पर पुरोहित जी घर गए। मैं भी धीरे २ उनके पीछे हो लिया। जब घर पहुँचे तो मुझे देखकर पुरोहित जी ने कहा—'आओ बेटा। बेटा क्या बात है? मैंने बहुत सकोच करते हुए कहा कि मेरी समझ मे नहीं आया कि मुझे काशी जी क्यों नहीं भेजा और बहिन जी ने क्यों रोका? पुरोहित जी ने मुस्करा कर कहा कि बेटा असल बात यह है कि प्राचीन समय मे गुरुकुल स्थान २ पर होते थे, सब विद्यार्थी वहीं पर विद्याध्ययन करते थे। इस समय यह प्रथा नहीं रही। केवल काशी जी में कुछ विद्वान हैं जिनके पास कुछ विद्यार्थी जाकर पढ़ते हैं। प्राचीन गुरुकुलों का अभाव ही हो गया है, यही कारण है और कोई बात नहीं। मैं चुप हो गया और घर वापिस आ गया। पिता जी द्वार पर खडे मुझे आते देखकर हस कर बोले 'बेटा। कहा गये थे, आओ भोजन करें। मुझे बगल में लेकर पिता जी घर में गए और अपने साथ बैठा कर भोजन कराया। इसके परचात् मेरे मन में कभी २ गुरुकुल सम्बन्धी विचार उत्पन्न होते तो उदासीनता छा जाती थी।

सौभाग्य से वह शुभ दिन आया कि मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी की प्रेरणा से महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लुधियाना पधारे और उन्होंने लाला जटमल खजानची के विशाल भवन में उपदेश देने आरम्भ किए। मैं प्रायः उनके उपदेशों में रोज जाया करता था। एक दिन जब मैं वहीं खेल रहा था तो स्वामी जी उपदेश के लिए पधारे। मैंने तुरन्त ही लाला जटमल की बगीची में से कुछ फूल और पोदीने की पत्तिया लाकर महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी के आगे रखदीं, और सिर झुकाकर प्रार्थना की कि मुझे भी आर्य कुमार बनाइये'। उस समय मैं आर्य समाजी और आर्य कुमार में कुछ भेद नहीं समझता था और 'स्वयम्' उस शब्द का भी अर्थ नहीं समझता था। महर्षि ने मेरी पीठ पर थापी देते हुए फरमाया कि 'तुम स्वय आर्य-कुमार हो' मेरे मागने पर एक पुस्तक भी उन्होंने दी, जिसको लेकर बाजार में खुशी खुशी छलांगे मारता हुआ कहने लगा कि मैं आर्यकुमार बन गया हू। उसके पश्चात् सन् १८८८ ईस्वी में मेरे छोटे भाई की अकस्मात मृत्यु होने पर उदासीनता को दूर करने के लिए आर्यसमाज लुधियाना मे सत्सग प्राप्त करने के लिये जाने लगा। सन् १८९९ में एक जनवरी को श्री लाला रामजीदास जी (खजानची) ने मेरा नाम आर्यसमाज के मेम्बरों की लिस्ट में लिख लिया।

लाला मुन्शीराम जी के दर्शन

लुधियाना में ईसाइयों की ओर से बल पूर्वक मिशन स्कूल के विद्यार्थियों को ईसाई बनाने के उपाय किए जाते थे। लुधियाना के दो तीन लड़के ईसाइयों के फन्दे में फसकर ईसाई होने के लिये तैयार हुए। जब उनके माता पिता को

यह पता चला तो वे आर्य समाज की शरण आए। समाज की ओर से लाला मुन्शीराम जी (वकील) को जलन्धर से लाने मुझे उनकी सेवा में उपस्थित होने का सौभाग्य मिला। जब मैं उनके मकान पर पहुँचा तो आप कचेहरी जाने के लिए तैयार थे। सब वृत्तान्त मुझ से सुनकर लुधियाना चलने के लिये तैयार हो गए और लुधियाना पहुँच कर कटरा नौरिया में 'ईसाई मत- खण्डन' पर धूआधार भाषण दिये। तमाम शहर में कोलाहल सा मच रहा था, जो लड़के ईसाई होने वाले थे, उनसे बातचीत करके उन को दृढ़ आर्य समाजी बनाया। जिनमें से पंडित लक्ष्मणदास रिटायर्ड मुख्याध्यापक जी, एल आर्य गर्ल्स स्कूल लुधियाना इस समय तक जीवित हैं तथा आर्य समाज लुधियाना के सदस्य हैं।

इस समय के बाद जब भी मुझे मौका मिलता, मैं पूज्य श्री लाला मुन्शीराम जी की सेवा में एक दो दिन के लिए अवश्य जालन्धर जाता था। उस समय से ही लाला मुन्शीराम जी मुझे पुत्रवत् प्रेम करने लगे। ज्यों ज्यों समय व्यतीत होता गया, त्यों त्यों उनका स्नेह मुझ पर बढ़ता ही गया। जब उन्होंने गुरुकुल खोलने का दृढ़ विचार प्रकट किया, और प्यारे 'सद्धर्म प्रचारक' में बल-पूर्वक चर्चा चलाई तो मेरे यज्ञोपवीत संस्कार के समय की गुरुकुल सम्बन्धी विचार धाराएँ जागृत हो उठीं और उस शुभ घड़ी की प्रतीक्षा में रहने लगा कि कब गुरुकुल खुले। ईश्वर-कृपा से महात्मा मुन्शीराम जी की अनथक कोशिशों से गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना हुई। मुझे उस बात का दुःख ही रहा कि मैं प्लेग होने के कारण गुरुकुल स्थापना दिवस पर न पहुँच सका। परन्तु मन ही मन दूर बैठा हुआ उस स्थापना दिवस पर मैं खुश और प्रसन्न हो रहा था।

कुछ दिनों के पश्चात् सद्धर्म प्रचारक प्रेस हरिद्वार जा चुका था मेरा स्वास्थ्य कुछ ठीक न होने के कारण महात्मा मुन्शीराम जी ने थोड़े दिनों के लिए हरिद्वार आने के लिए आग्रह किया और मैं आपकी संगत से लाभ उठाने के लिए हरिद्वार पहुँच गया। उन दिनों वर्षा के कारण गुरुकुल कांगड़ी जाने के लिए गंगा में तमेढ़ पड़ती थी। भाई केशव देव जी शास्त्री कई बार मुझे गुरुकुल कांगड़ी भेजने के लिए कनखल तमेढ़ पर गए परन्तु चारों ओर पानी ही पानी देखकर मेरा साहस जाने को न हुआ। और एक दिन महात्मा मुन्शीराम जी स्वयं हरिद्वार पधारे, और मुझे अपने साथ तमेढ़ पर ले गए। महात्मा जी की उपस्थिति में सब भय दूर हो चुका था, और खुशी खुशी गंगा की विशाल उछलती लहरों का आनन्द लेता हुआ गुरुकुल पहुंचा। वहां ही महात्मा जी की कृपा से गुरुकुल सेवा का व्रत लिया। जो ४१ वर्ष से इस समय तक निभा रहा हूँ। मुझे इस बात का अभिमान है कि पूज्य अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के आशीर्वाद का परिणाम है कि इस समय तक १९५५००) अपने प्यारे मित्र मण्डल से एकत्रित करके गुरुकुल कोश में भिजवा चुका हूं। यदि मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा तो मुझे पूर्ण आशा और विश्वास है कि बाकी ४५००) एकत्रित करके पूरे दो लाख रुपये कर दूँगा। वर्ना मुझे पूरा

(शेष पृष्ठ १७० पर)

क्या वीरता का कारण माँस भोजन है ?

एडवोकेट अमरसिंह जी का महात्मा गान्धी पर आक्रमण

[लेखक—श्री पण्डित जयदेव जी शर्मा, विद्यालङ्कार मीमांसातीर्थ चतुर्वेद भाष्यकार, अजमेर]

(लेखाङ्क २)

मास भोजन की पुष्टि करते हुए म० अमरसिंह जी ने अपनी पुस्तक 'Views' on Meat Diet के दूसरे अध्याय में म० गान्धी पर आक्रमण किया है। आपकी सम्मति में—अहिंसा के प्रचार से भारत को सदियों से कटुफल भोगना पड रहा है। जैन, बौद्ध और वैष्णवों की अहिंसा ने हिन्दुओं की युद्धप्रिय भावना को मार डाला है। उन्होने अपने सीमा-प्रान्तों की रक्षा नहीं की। एक भी युद्ध सीमा पर नहीं हुआ, सब युद्ध भारत के भीतर हुए हैं। राजपूताने के सिवा आक्रमण को रोकने की शक्ति लुप्त प्राय हो चुकी है। ७१२ ई० में मुहम्मदबिन कासिम ने आक्रमण किया, सिन्ध देश के राजा दाहिर ने उसको रोका, उस समय बौद्धों ने अहिंसा का बहाना करके राजा को युद्ध करने से रोक दिया। इसी प्रकार शैवी (सी वी, क्वेरा) के राजा वत्सराज को भी रोक दिया।

ऐसी ही सम्मति म० गान्धी भारत को दे रहे हैं। उन्होंने अंग्रेजों को भी यही सलाह दी थी कि वे इङ्गलैण्ड को हिटलर के हाथों सौंप कर उससे सहयोग न करें, क्या यही गिरावट का कारण नहीं है? अब मा० तारासिंह जी और सी० राजा जी ने म० गान्धी की अहिंसा का विरोध किया है, कांग्रेस के नेता भी अब निष्क्रिय प्रतिरोध का विरोध कर रहे हैं। अब पंजाब के कांग्रेसी भी अहिंसा में विश्वास नहीं करते। बिना सेना और पुलिस के स्वराज्य प्राप्त करने पर किसी को विश्वास नहीं। म० गाधी की कल्पित स्थापना कुछ को रुच सकती है। मुझे (अमरसिंह) श्री गोविन्दसिंह का शिष्य होने का गर्व है कि वे कहते हैं—जब सब उपाय निकम्मे हो जायं तो तलवार खेंचने की आज्ञा है।"

(समीक्षा)—इस दूसरे अध्याय मे भी म० अमरसिंह जी ने मास भक्षण के पक्ष में एक भी युक्ति नहीं दी, उन्होंने म० गान्धी की अहिंसा पर आक्रमण तो कर दिया, परन्तु न तो उसको समझा है, और न वे उसको निभा सकते हैं। म० गान्धी की अहिंसा का सिद्धान्त वह जबर्दस्त पैंतरा है, जो क्रुद्ध आक्रामक साम्राज्य के भी बडे से बडे वार को खाली कर सकता है। इसी पैंतरे का उपदेश म० गान्धी ने भारतवासियों को, और ब्रिटिश सिंह को भी दिया था। परन्तु क्योंकि ब्रिटिश सिंह को अपनी तपस्विता की आत्मिक शक्ति पर विश्वास नहीं था।

इस विषय पर हम अभी विवाद नहीं करते। परन्तु एक अहिंसावादी सन्त यह कह सकता है कि यदि बे-हथियारों की लड़ाई लड़ना चाहते हों तो शत्रु को अपना सहयोग सर्वथा मत दो (They should not cooperate with them) क्या यह कम वीरता का चिन्ह है। यदि कोई देश या जाति पराधीन होती है तो उसका सबसे बड़ा कारण वे देश द्रोही और जाति द्रोही आदमी होते हैं जो शत्रु से आ मिलते जो शत्रु से Co-operate करते हैं, जो अपने पेट, जान और सम्पत्ति के प्रलोभन में फँसकर शत्रु के हाथों बिक जाते है। यह अहिंसावाद का दोष नहीं है कि सिन्ध का राजा दाहिर हार गया था। बल्कि यह उन देश द्रोही बौद्धों का दोष है जिन्होंने शत्रु से भीतर भीतर मेल कर लिया, और अपने राजा को अहिंसा की पट्टी में फासा और आक्रमणकारी को दुर्ग के भेद बतलाये। परन्तु सच्ची वीरता दाहिर की कन्याओं की थी जिन्होंने आक्रमणकारी कासिम के साथ अपने जीवन भर सहयोग नहीं किया, और बुद्धि पूर्वक नि शस्त्र युद्ध में उसे पराजित कर गधे की खाल में सिलवा कर कामी खलीफा का शिकार बनवा दिया। यह वह हथियार था जिसे म० गांधी 'अहिंसा का हथियार' कहते हैं। प्राचीन शास्त्रकारों ने इसको 'बुद्धि का हथियार या 'मन्त्र बल' कहा है। यही है शत्रु से सहयोग न करना। एक प्रकार से दाहिर भले ही कासिम से हार गया परन्तु दाहर की सन्तान ने दाहिर और कासिम दोनों पर विजय पाई। एक तो अपने काम क्रोध से पराजित हुआ, और दूसरा अपने उस छल से पराजित हुआ, जिसका प्रयोग उसने बौद्धों की आड़ मे किया था। बौद्धों की शत्रु से जा मिलने की देशद्रोही नीति ने देश को बहुत हानि पहुचाई। इसमें बौद्धों की अहिंसा देश के नाश का कारण नहीं, क्योंकि प्राय बौद्ध स्वय भी सदा मास खाते रहे हैं और खूब खाते रहे हैं,

---

(शेष १६८ पृष्ठ का)

विश्वास है कि मेरा मित्र मण्डल अपनी उदारता से मेरे इस दो लाख के व्रत को अवश्य पूरा कर देगा।

आज मेरा हृदय गद्‌गद् और प्रसन्न है कि मैं श्रद्धानन्द नगरी में आपके साथ हूँ और अपने अन्तिम जीवन मे मुझे अपने प्रात स्मरणीय पूज्य अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के चरणों में फूल चढ़ाने का अवसर दिया इसके लिए आप सबका मैं बहुत ही कृतज्ञ हूँ।

मुझे तो श्रद्धानन्द नगरी गुरुकुल कांगड़ी के प्रत्येक वृक्ष के पत्ते पत्ते पर पूज्य अमर शहीद का नाम अकित हुआ दिखलाई देता है। जिस लगन और कर्तव्य पालन के लिए गुरुकुल अधिकारी वर्ग ने श्रद्धानन्द नगरी मे पूज्य अमर शहीद श्री स्वामी जी महाराज की याद को ताजा करने का बीड़ा उठाया है वह अत्यन्त ही सराहनीय है। मैं प्रत्येक गुरुकुल प्रेमी और स्नातक मण्डल से आशा रखता हू कि वे अपने कर्तव्य से कुल पिता के नाम को उज्ज्वल करेंगे। इसी तरह हम उनकी याद मना सकते हैं। अन्त में मैं उस परम प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे इस अन्तिम जीवन में भी गुरुकुल-सेवा का अधिक से अधिक बल प्रदान करें।

यदि भी अमरसिंह जी चाहेंगे तो बौद्ध साहित्य से सैकड़ों उदाहरण उनके मास भोजन के उद्धृत किये जावेंगे। बौद्धों ने मास खा कर भी आक्रामक होने का मार्ग नहीं पकड़ा, प्रत्युत देश द्रोह का मार्ग पकड़ा। उनके ऐसा करने में मासाहार व शाकाहार अहिंसा व हिंसा कोई कारण नहीं।

मुसलमान लोग तो मांस खाते थे, फिर वे मराठों से क्यों हारे, और फिर सिख मुसलमान सभी अंग्रेजों के पराधीन क्यों हो गये? कारण भारतवासियों का परस्पर द्रोह और देश द्रोह ही है कि उन्होंने स्वार्थवश शत्रु से कोआपरेशन (सहयोग) किया। वे शत्रु से मिल गये और धन के प्रश्न के आगे उन्होंने शत्रु को स्वामी मान लिया। यदि यह दोष भारत वासियों में न होता तो वे बिना शस्त्र युद्ध के ही शत्रु को परास्त कर स्वतन्त्र हो सकते हैं। महात्मा गान्धी का केवल अहिंसा का यही सिद्धान्त है।

यदि शाकाहारी जंगली सूअर जिस घाट पानी पीता है मासाहारी शेर उस घाट पानी नहीं पी सकता क्यों? क्योंकि सूकर की दाढ़ शेर का पेट फाड़ देती है। माद मे छिप कर सोने वाला शेर मैदान मे निर्भय सोने वाले शाकाहारी सूकर का मुकाबला नहीं कर सकता।

आक्रामक नीति प्रबल होती है या रक्षाकारी नीति यह भी विचारणीय बात है। गाय भोला जानवर है, परन्तु सिंह के भय से वे भी अपने बछड़ों की रक्षा में सींगों के बल पर शेर का पेट फाड़ देती हैं। शेर अपने मास लोभ के पाप का फल भोगता है, और लालच-लोभ के निमित्त अपने प्राण बलि चढ़ा देता है। शेर को शर्म आनी चाहिये कि वह बटमार की तरह भोले प्राणियों पर अपना पेट पालता है और चोर के समान छिपता है और कमबख्त के समान मारा जाता है। म० अमरसिंहजी ऐसे चोर, बुज-दिल, मुर्गे की आवाज से भी डरनेवाले शेर पर फूले फिरते हैं। 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे'। मास लोलुपता को छुपाने के लिये आप कभी बौद्धों को कोसते हैं, कभी गाधी के अहिंसावाद का, और कभी परोपकारिणी सभा को जाल साज कहते हैं। मास भोजन के कारण यदि अमरसिंहजी में बहुत आक्रामक शक्ति वा प्राण शक्ति है तो उनको चाहिये कि जिस प्रकार म० गाधीजी बैरिस्टरी ताक पर धरकर देश के काम में लगे हैं उसी प्रकार अपनी ऐडवोकेटी का चोला फाड़ कर मैदान मे आ उतरे। वस्तुत स्वराज्य की मार्ग मास भक्षण या शाकाहार नहीं है, परन्तु शत्रु से असहयोग मात्र है। परन्तु हमें निश्चय है कि अमरसिंह जी में मास भक्षण के कारण ही इतनी बुजदिली है कि वे वन राज के समान सिंह (=हिंसा कारी) कहलाना पसन्द करेंगे और उसकी बटमारी और छिप कर माद में सोने की आदत को नहीं छोड़ सकेंगे। जब वे अपने जिह्वा-रस पर वश नही कर सकते, तो 'इन्द्रिय जये सर्वं जयः' इस राजनीति शास्त्र के उपदेश का पालन क्योंकर कर सकेंगे।

अगले अंक में हम आपकी पुस्तक के तीसरे अध्याय की आलोचना करेंगे।

महर्षि दयानन्द का वैज्ञानिक धर्म ।

(लेखक—पं० सुधाकर जी सिद्धान्त विशारद, आर्यसमाज—श्रीरामपुर, बेंगलोर)

यह स्वतन्त्रता का युग है। खाते-पीते, उठते बैठते सोते-जागते, आजकल का मनुष्य स्वतन्त्रता का स्वप्न ही देखता रहता है। शारीरिक, मानसिक और आत्मिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक, सब प्रकार की स्वतन्त्रता ही आधुनिक मनुष्य का एक मात्र उद्देश्य सा प्रतीत होता है। इस स्वतन्त्रता का मूल सिद्धान्त यह है कि यदि विज्ञान-मय जीवन प्राप्त करना है तो उसका एक मात्र साधन स्वतन्त्रता ही है, किसी भी प्रकार की स्वतन्त्रता मनुष्य को अप्राप्त नहीं होनी चाहिये। दासता तो अवैज्ञानिक नरपशुओं को ही प्रिय हो सकती है, क्योंकि मनुष्य का मनुष्यत्त्व वैज्ञानिकता में ही विद्यमान है और दासता चाहे वह जिस प्रकार की भी हो वैज्ञानिक नहीं हो सकती।

मैंने ऊपर जिन महानुभाव का वक्तव्य सक्षेप मे दिया है, वे मेरे एक हितैषी मित्र हैं। इसी सिद्धान्त की व्याख्या सी करते हुए उन्होंने पिछले मास मुझ से कहा कि मनुष्य के मनको भी निर्बाध होकर अपने ही ढग से विचार करने का स्वातन्त्र्य होना चाहिये। यह मान लेना कि अमुक पुस्तक ईश्वरीय है, अपने मन को दासत्व के जजीर मे जकड़ देना ही है, क्योंकि जब ईश्वर ही अपनी पुस्तक द्वारा बोल रहा है, तब फिर सोचने विचारने की आवश्यकता भला किस को होगी ? या ईश्वर-वाणी के बारे में शंका समाधान करने का दुःसाहस कौन करेगा ? दूसरे यह कि जब आप किसी धर्मशास्त्र के आधार पर धर्म के लक्षण बताने का यत्न करेंगे तो आप अन जाने ही धर्म का व्यापकत्त्व घटा कर उसे सीमित बना देंगे। इसलिये, धर्म मनका विषय होना चाहिये, शास्त्रों का नहीं।

हम ने उनसे पूछा कि तो क्या आप धर्म शब्द का प्रयोग कौन से भाव को अपने मानस-चक्षु के सामने उपस्थित करके कर रहे हैं, यह बताने की कृपा करेंगे ? उन्होंने कहा कि हा, जिससे जीव-मात्र का कल्याण होगा, उस व्यापक नियम को ही मै धर्म समझता हूँ। हमने फिर पूछा कि तो वह नियम कि जिस पर अमल करने से जीव मात्र का अकल्याण होगा, उसे अधर्म भी मानते ही होंगे ? वे सकुचाये से बोले किन्तु अधर्म कोई स्वतन्त्र चीज नहीं। धर्म के अभाव को अधर्म कह सकते हैं, जैसे प्रकाश के अभाव को अन्धकार। ठीक। हमने कहा, आखिर यह तो सिद्ध हो ही गया न कि कुछ नियमों का पालन न करने से जीव-हित नहीं होगा और करने से होगा। फिर यह भी अर्थ निकल ही आया कि जिन नियमों से जीवमात्र का कल्याण नहीं होगा, वे धर्म तो नहीं हैं। वहा धर्मव्यापक नहीं है। यह भी धर्म का लक्षण ही हुआ। फिर आप कैसे कहते हैं सलक्षण धर्म व्यापक नहीं

रह सकता, सकुचित या सीमित हो जायगा। अगर यही बात है तो आपका धर्म भी सीमित ही होगया।

इस पर उन्होंने कहा कि इसीलिये तो मैंने कहा था कि धर्म का लक्षण बताया नहीं जा सकता। धर्म अन्त करण की अनुभूति है, मनो व्यायाम है। केवल उसका अनुभव हो सकता है, वर्णन असम्भव है। यह कहना कि अमुक कार्य धर्म है और अमुक कार्य अधर्म, धर्म की व्यापकता का गला घोंट देना है हमे नवीन वेदान्तियों का निर्गुण और अनिर्वचनीय ब्रह्म याद आ गया। ब्रह्म जीव है भी और नहीं भी। ब्रह्म जीव-भाव मे आकर अज्ञान की मूर्ति भी हो जाता है और 'सत्य ज्ञान मनन्त ब्रह्म' भी बना रहता है। ठीक यही मामला इधर भी। सत्य बोलो या झूठ, किसी की रक्षा करो या हत्या, किसी का सम्मान करो या अपमान, स्त्रियों से मातृत्व का व्यवहार करो या व्यभिचार, पर मुँह से यह न कहो कि मैने उचित किया या अनुचित, इस डर से कि तुम्हारे विशाल धर्म की व्यापकता कहीं मिट न जाय, बेचारे धर्म का दम कहीं घुट न जाय। हम हैरान।

महर्षि दयानन्द इन कठिनाइयों को जानते थे। वे वेदों के आज्ञाकारी भी थे और स्वतन्त्र विचारक भी। उनकी दृष्टि मे वेद मानव हृदय में दास्य भाव को पूर्ण करने वाली चीज नहीं थे। मन को सकुचित और पराधीन बना देने वाले मनुष्यत्व-घातक वेदों को वे नहीं मानते थे। वे कहते थे कि देखो, परमात्मा ने सूर्य रचा है, इस लिये नहीं कि तुम अपनी आँखें फोड़ लो, परन्तु इस लिये कि तुम अपनी आँखों का पूरा २ फायदा उठा सको। इसी प्रकार परमात्मा ने वेद प्रदान किये हैं, इस लिये नहीं कि तुम अपनी बुद्धि पर ताला जड़ दो, पर इस लिये कि अपनी बुद्धि को प्रकाशित करो। है भी ठीक। यदि वेद कणाद, जैमिनी, व्यास गौतम, कपिल पतञ्जलि आदि ऋषि मुनियों की बुद्धियों पर ताला ही लगा देते तो वैशेषिक, मीमासा, वेदान्त न्याय, साख्य, योग आदि दर्शन ग्रन्थ कैसे बनते ? वेद मन मे दासता ही पैदा करते तो उपनिषदों जैसे अत्युच्च ब्रह्म विद्या प्रतिपादक ग्रन्थ कौन बनाता ? जिन्होंने भी वैदिक साहित्य का अनुशीलन किया है, वे जानते हैं कि वेद किस श्रेणी के ज्ञान भाण्डार हैं।

महर्षि दयानन्द के ये वचन न केवल उल्लेखनीय, बल्कि मननीय हैं— 'मैंने वेदों मे एक एक मन्त्र को भली भांति विचार दृष्टि से जाच लिया है। उनमें ऐसा एक भी मन्त्र नहीं है, जो अयुक्त सिद्ध हो सके। जैसे सराफ़ रुपयों को परख २ कर थैली में रख लेता है और फिर उनकी निर्दोषता मे निर्भ्रान्त हो जाता है, ऐसे ही एक एक वेद मन्त्र को युक्ति और प्रमाण की कसौटी पर कस कर, उनकी सत्यता में मै निस्सन्देह हो गया हूँ।" [श्रीमद्दयानन्द प्रकाश पृष्ठ ७६६]

इस उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है कि महर्षि दयानन्द ऐसे आदमी न थे जो 'वेद' का नाम सुन कर ही आँख मीच कर नतमस्तक हो गये, पर एक स्वतन्त्र विचारक थे जिन्होंने स्वतन्त्र विचार से, युक्ति और प्रमाण से यह देख लिया था कि वेद सचमुच वैज्ञानिक काव्य हैं। उनके स्वतन्त्र

महिला जगत्

अबला ?*

(लेखक—साहित्य भूषण, कविरत्न प० खुशीराम शर्म्मा वाशिष्ठ, प्रभाकर, जैतों मण्डी, नाभा रियासत)

अबला ! अबला !! छिः !!! हम अबला, अबला कह सकता हमे कौन ?
टुक सुनो हमारे गौरव की, गाथायें होकर चकित मौन !!
हम वीर प्रसविनी, रणचण्डी, दुर्गा कहलाने वाली हैं।
हम एक बार मुर्दों मे भी, जीवन सरसाने वाली हैं॥ १ ॥

हम सभी 'पद्मिनी' के समान, जौहर व्रत करने वाली हैं।
हम सार नहीं देने वाली सारी सिर देने वाली हैं॥
'राणा सागा' औ 'पृथीराज'—की हम ही तो महतारी हैं।
'गोरा-बादल' 'जयमल-पत्ता'—की हम ही पालन-हारी हैं॥ २ ॥

हम निज हुंकारों से अरि के, उर-अन्तर को दहलाती हैं।
नन्हीं दुनिया के हम ही तो, नित 'शिवा' 'प्रताप' बनाती हैं॥
उफ़ ! चुने गये दीवारों मे, जो आज़ादी के परवाने।
खेले थे इन्हीं गोदियों मे, वे मस्ताने वे दीवाने॥ ३ ॥

हस हस कर जीवन दिया अहा, वह बाल 'हकीकत लासानी।
था इन्हीं झोलियों का ही धन, वह धर्म-धनी वह अभिमानी॥
'दुश्शासन'-'द्रोण' सरीखों को, जिसने नीचा दिखलाया था।
उस 'अभिमन्यू' को हमने ही, वह रण—कौशल सिखलाया था॥ ४ ॥

हम एक एक वह चिंगारी, जो आग लगादे अग-जग में।
हम एक एक वह बिजली जो, कौंधा करती है रग रग में॥
हम ज्वाला गिरि की महाज्वाल, जानें कब भभक उठें पल में ?
हम प्रलयङ्कर घनघोर घटा, कब 'त्राहि' मचादें भूतल में ?? ५ ॥

हम मातृ भूमि के चरणों में, अपना सर्वस्व चढ़ाती हैं।
दे देती हैं "झोली के धन", औ "सिर के ताज" लुटाती हैं॥
कायर कह सकता हमें कौन, जब नाहर जननी आई हैं।
हम 'विदुला' हैं, हम हैं 'पन्ना', हम सारी 'लक्ष्मी बाई' हैं॥ ६ ॥

* नोट—बहनें अपने भाई की यह तुच्छ श्रद्धाञ्जलि स्वीकार करें (लेखक)

वीर रमणी दुर्गा !!

(रचयिता— फणीन्द्र")

रण-युक्त मेदिनी काप रही थी सुन प्रचण्ड हिंसक हुंकार।
अस्त व्यस्त थी रिपु की सेना लख वीरांगना की तलवार॥
आन-मान निज मर्यादा अरु देश धर्म की दीवानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि मे जूझ गई दुर्गा-रानी॥

युगल करों मे तलवारें दो अश्व छोरिका रद मंडल।
यवन सैन्य से खेल रही थीं रेख दामिनी दो चंचल॥
वीर वेश मुख कांचन आनन गौरव की थी अभिमानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि मे जूझ गई दुर्गा-रानी॥

माथे पर था तिलक रक्त का केशरिया शृंगार नवल।
चूड़ी की झनकार ध्वनी से काप रहे थे शत्रु प्रबल॥
रणारण्य निर्भीक सिंहनी निज सेना की सेनानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि मे जूझ गई दुर्गा रानी॥

तलवारों की मार काट से त्रस्त हुआ रिपु सेना दल।
सुन्दरता विकराल काल लख काप गया वह युद्ध-स्थल॥
रक्त-रंग से खेल खिलाकर झूम रही थी मस्तानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि मे जूझ गई दुर्गा-रानी॥

यवनी सेना चीर चीर कर समर भूमि की शोणित-मय।
आर्तनाद चीत्कार स्वरों का वहां दृश्य था महा प्रलय॥
रक्त बहा रिपुओं का मानों गगन मेघ का था पानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि में जूझ गई दुर्गा-रानी॥

लगा अचानक तीर आंख में सोचा अब तो लाज गई।
नेत्र हीन हो ठहरी क्षण भर सूझ गई फिर युक्ति नई॥
मातृ भूमि को वंदन करके बोली रानी यह बाणी।
गढ़ मंडले की समर भूमि में जूझ गई दुर्गा रानी॥

"जाती हूं माँ विदा सदा को" किन्तु दुःख है हृदय यही।
कर न सकी स्वाधीन तुझे हा! क्षमा देवि अब मातृ मही॥
आत्मघात कर स्वर्ग सिधारी क्षत्रिय कुल की दीवानी।
गढ़ मंडले की समर भूमि में जूझ गई दुर्गा-रानी॥



आर्य कुमार सभाओ के मंत्रियों से निवेदन !

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद का उद्देश्य, भारतवर्ष की आर्य कुमार सभाओं द्वारा, आर्य कुमारों तथा अन्य कुमारों को ईश्वर, वैदिक धर्म और देश के सच्चे और क्रियाशील उपासक बनाना है। यह काम तभी हो सकेगा जब आर्य कुमार सभाए व कुमार परिषदें सगठित हों। अत आर्य कुमार सभाओं के मन्त्रियों से प्रार्थना है कि वे अपनी अपनी कुमार सभाओं का सम्बन्ध, भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् से करा लेवें।

नियम १-परिषद् में वे ही सभाए सम्मिलित हो सकती हैं जो परिषद् की नियमावली का पालन कर सकें।

२—प्रत्येक सम्बद्ध आर्य कुमार सभा को अपने प्रथम २० सभासदों पर २) तथा फिर १० सभासदों पर १) वार्षिक परिषद् को देना पडेगा।

३—प्रत्येक सभा का वार्षिक चन्दा वार्षिक अधिवेशन के पूर्व आजाना चाहिये। जिनका प्राप्त न होगा वे अपने प्रतिनिधि सम्मेलन मे नहीं भेज सकेंगे।

४—जो मत्री आ० कु० सभा-कुमार सभाओं की तथा परिषद् की नियमावली मगाना चाहें वे मत्री, भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्, देहली से मंगा सकते हैं।

५—जिन जिन कुमार सभाओं ने अपनी कुमार सभा का वार्षिक चन्दा नहीं भेजा है वे शीघ्र ही भेजने की कृपा करें।

६—जिन जिन प्रतिष्ठित सदस्यों ने अपना २ वार्षिक चन्दा नहीं भेजा है उनसे प्राथना है कि वे शीघ्र ही अपना वार्षिक चन्दा भेजकर अनुगृहीत करें।

७—आर्य कुमार सभाओं के मन्त्रियों से प्रार्थना है कि वे अपनी कुमार सभाओं की वार्षिक रिपोट तैयार करके शीघ्र ही परिषद् कार्यालय को भेज देवें।

(शेष पृष्ठ ७३ का)

विचार ने ही उनको यह बात समझायी थी कि सृष्टि के आदि में, जबकि कोई विज्ञानवेत्ता गुरु या आचार्य नहीं होता, एक सर्वज्ञ परमेश्वर ही है जा ऐसे विचार विश्लेषित, सप्रमाण और सयुक्तिक वैज्ञानिक काव्य बना सकता है। इतनी बडी बात को यों ही मान लेना आजकल के सन्देहवादी नव युवकों को अवश्य कुछ अखरता है, पर हमे तो यह भी याद रखना चाहिये कि एक साधारण और अशिक्षित ग्रामीण मनुष्य के लिये मार्कोनी का वायरलैस (वार्तावाहक यन्त्र) यदि विश्वास योग्य प्रतीत न हो तो इससे मार्कोनी का आविष्कार झूठ साबित नहीं होता। खूब सोच-विचार करके ही कुछ उचित परिणाम पर पहुँचा जा सकता है। (शेष अगले अङ्क में)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ
और
आर्य वीर दल

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति ने निम्नलिखित वक्तव्य प्रकाशित किया है.—

जब से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य वीर दल का व्यापी सगठन करने का निश्चय किया है तभी से उत्तर भारत में एक कठिनाई उपस्थित होगई है जिसे दूर करने के लिए इस वक्तव्य के निकालने की आवश्यकता हुई है। कठिनाई यह है कि बहुत से स्थानों पर कई वर्षों से राष्ट्रीय स्वयसेवक-संघ कार्य कर रहा है। प्राय सभी जगह स्थानीय आर्य समाजी उसमें शामिल हो चुके हैं और अनेक स्थानों पर तो सघ के कार्यालय ही आर्य समाज मन्दिरों में बने हुए हैं। ऐसे स्थानों पर जब आर्य वीर दल की स्थापना का प्रयत्न आरम्भ होता है, तब वे आर्य समाजी, जो सघ मे शामिल हो चुके हैं, दल की स्थापना का विरोध करते हैं। मेरठ, सहारनपुर और पजाब के कुछ शहरों के दृष्टात इस प्रसग में विशेषत उल्लेख योग्य हैं।

कार्यालय भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्, देहली।

ता० १५ अप्रैल १९४३

आर्य कुमार सभाओं के मन्त्री महोदयों से निवेदन किया जाता है कि वे निम्न प्रश्नों का उत्तर शीघ्र ही भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् दीवान हाल देहली के कार्यालय मे पूर्ति करके भेज देवें।

१. आर्य कुमार सभा का पूरा नाम व पता।
२ सभा स्थापित होने की तारीख।
३ सभासदों की सख्या।
४. मासिक चन्दों की आय जो सभासदों से होती है।
५ सभा के अन्य आय के साधन।
६ वार्षिक आय व्यय का अनुमान।
७. कुमार सभा के स्थान पर आर्य समाज है या नहीं।
८ कुमारसभाके प्रधान आर्यसभासद हैं या नहीं।
९. आर्य समाज का सहयोग किस रूप में है?
१० यदि नगर या ग्राम मे अन्य कुमार सभायें हैं तो उनके नाम और पते।
११ कुमार सभा परिषद से कब से सम्मिलित है।
१२ कुमार सभा का साधारण कार्यक्रम।
१३ कुमार सभा ने विशेष क्या २ काम किये हैं।
१४ सभा का वार्षिकोत्सव किस मास में होता है।
१५ नगर व ग्राम की जन सख्या का अनुमान।
१६ अन्य ज्ञातव्य बातें।

नोट —परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं की नवीन तथा सशोधित पाठविधि छप चुकी है जो कार्यालय से बिना मूल्य प्राप्त हो सकती है। कुमार सभाओं के मन्त्री इस ओर विशेष ध्यान देकर आर्य कुमारों को अधिक से अधिक सख्या में सम्मिलित होने का आदेश दें।

निवेदकः— देवीदयाल, उप मन्त्री

इस प्रसग में यह बता देना अत्यावश्यक है कि सघ के होते हुए भी आर्य वीरदल की स्थापना क्यों आवश्यक हुई ? राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ जिस विशेष आदर्श और कार्य प्रणाली को सामने रखकर सगठित हुआ है उससे आर्य समाज को कोई झगड़ा नहीं परन्तु दो बातें स्पष्ट है। राष्ट्रीय स्वय-सेवक-सघ की स्पष्ट नीति है कि वह किसी सार्वजनिक कार्य में भाग नहीं लेता और आर्यसमाज एक प्रगतिशील व्यावहारिक सस्था है, उसे रक्षा और सेवा के कार्य के लिये शिक्षित स्वय सेवकों की आवश्यकता है। सघ से उसे क्रियात्मक सहायता नहीं मिल सकती। इस कारण उसके लिये आर्य वीर दल का सगठन अनिवार्य है। दूसरी बात यह है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के मूलभूत आदर्शों और प्रति दिन के कार्यक्रम मे भी मूर्तिपूजा का विशेष स्थान है। सघ के सस्थापक डा० हेडगेवार की 'विचार धारा' मे जन साधारण को उस अव्यक्त स्वरूप का सम्यग् ज्ञान करा देने का मूर्तिपूजा ही एक मात्र सुलभ साधन है" ("परम पूज्य डा० हेडगेवार" विचार धारा पृष्ठ ७५) इत्यादि शब्दों द्वारा मूर्तिपूजा की भावना को आवश्यक बतलाया गया है और सघ अपने व्यवहार में भी उस भावना से पूरा काम लेता है। आर्य समाजियों के लिये जहा राष्ट्रीय सङ्घ की इस मूलभूत भावना को मानना असम्भव है वहा आर्य समाज मन्दिरों मे उसे स्थान देना भी सम्भव नहीं। ऐसी दशा मे सिद्धातरूप मे आर्य समाजियों के लिए राष्ट्रीय स्वय सेवक सङ्घ के रीति-रिवाजों में शामिल होना दुष्कर है। इन कारणों से राष्ट्रीय स्वय सेवक सङ्घ के रहते भी आर्य वीरदल की स्थापना आवश्यक होगई है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सङ्घ हिन्दू नवयुवकों को शारीरिक व्यायाम और सघ व्यायाम का शिक्षण देता है यह उसकी उपयोगिता है। उसका विरोध करना न मेरा उद्देश्य है और न किसी दूसरे देशभक्त का होना चाहिये। परतु यदि आर्यसमाज अपने रक्षा और सेवा के प्रतिदिन के कार्यक्रम को भली प्रकार से चलाने के लिए आर्य वीरदल की स्थापना करे तो उससे भी किसी को न झगड़ना चाहिये। आर्य समाज के सदस्यों का तो कर्तव्य है और परम धर्म है कि वे आर्य वीरदल मे सम्मिलित हों, यह भी स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिये कि आर्य समाज मन्दिर में यदि स्वयसेवक दल को स्थान मिल सकता है तो वह आर्य वीर दल ही है। सार्वदेशिक सभा का यह निश्चय समस्त आर्य समाजों और आर्य समाजियों के लिए एक आदेश के समान है कि वे आर्य वीर दल के दृढ़ सगठन बनाने मे अपनी सारी शक्ति लगा दें। प्रान्तिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं को भी इस विषय मे सचेत होने की आवश्यकता है। यह ध्यान में रहे कि वर्ष के अन्त में सब प्रान्तिक सभाओं और स्थानीय आर्य समाजों से इस दिशा म किए गए कार्य का लेखा मागा जाएगा उस समय ऐसा न हो कि उनके हिसाब मे घाटा दिखाई दे।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

आर्य वीर दलों के लिये बौद्धिक शिक्षण

आर्य वीर दल का प्रधान लक्ष्य

(ले०—श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति तथा सार्वदेशिक आ० प्र० सभा देहली)

[पाठ १]

आर्य वीर दल का प्रधान और अन्तिम लक्ष्य आर्य धर्म के प्रभुत्व को स्थापित करना है। "आर्य धर्म के प्रभुत्व' का अर्थ यह नहीं समझना चाहिये कि हम ससार में किसी मत या सम्प्रदाय का प्रभुत्व चाहते हैं। धर्म शब्द बहुत ऊंचा और व्यापी है। आर्य धर्म और आर्यत्व का एक ही अभिप्राय है।

आर्यत्व में हम निम्नलिखित वस्तुओं को सम्मिलित समझते हैं —

१ आर्यसस्कृति—जिस सस्कृति का मूल धार वेदों में है और जिसका पूर्ण विकाश आर्यावर्त मे हुआ।

२ आर्य जाति—जिस जाति ने आर्यसस्कृति को अपनाया और फैलाया और अब तक भी जो उसी सस्कृति को अपना मूलागार मानती है।

३ आर्य देश या आर्यावर्त—भारतवर्ष जो आर्य सस्कृति के उद्भव और विकास की भूमि है और जिसमें अब तक भी आर्य धर्म अपने मौलिक रूप में यद्यपि विकृत अवस्था मे, विद्यमान है।

इन तीनों वस्तुओं के समुच्चय को हम आर्य धर्म या आर्यत्व के नाम से पुकारते हैं। यह समझ लेना चाहिये कि आर्यत्व केवल भारतवर्ष की सीमाओं में ही सीमित रहे यह आवश्यक नहीं। जहा कहीं भी आर्य सस्कृति और आर्य धर्म का फैलाव होगा वहा आर्यत्व की सीमा समझी जायेगी। आर्यत्व जहा हो उसके गौरव और प्रभुत्व की स्थापना आर्य दल का लक्ष्य होगा।

आर्य समाज का लक्ष्य वैदिक धर्म, जिसका दूसरा नाम आर्य धर्म है, को ससार भर मे फैलाना है। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' यह आर्य समाज का प्रेरक मन्त्र है।

आर्य समाज एक प्रचारक सस्था है जो वाणी और लेख द्वारा आर्य धर्म को ससार भर में फैलाना चाहता है।

यह ससार का अटल नियम है कि प्रत्येक मूल्यवान् पदार्थ की रक्षा शक्ति से ही की जा सकती है। अनमोल से अनमोल रत्न को सुरक्षित रखने के लिये क्षात्र बल की आवश्यकता है। जिस कार्य को आर्य समाज प्रचार द्वारा कर रहा है आर्य वीर दल शक्ति द्वारा उसकी रक्षा करेगा। आर्य वीर दल आर्य जाति के क्षात्र धर्म का प्रतिनिधि होगा।

यह विचार भ्रममूलक है कि सत्य अपनी रक्षा स्वय कर सकता है। सत्य ससार मे से नष्ट

नहीं होगा, यह तो ठीक है परन्तु विशेष समय और विशेष स्थान पर रक्षकों की निर्बलता से श्रेष्ठ और प्यारी से प्यारी सत्य वस्तु नष्ट हो सकती है। इस कारण यह अटल ईश्वरीय नियम है कि जो वस्तु उत्तम और उपादेय होने से हमें प्यारी है उसकी रक्षा के योग्य शक्ति हमे अवश्य पैदा करनी चाहिये अन्यथा इस संघर्षमय संसार मे, जहाँ अत्याचार और विनाश के दूत प्रत्येक उत्तम पदार्थ पर झपटने को तैयार बैठे हैं, अपनी प्रिय वस्तु की रक्षा करना असम्भव है। "जीवो जीवस्य भोजनम्" कमजोर प्राणी बलवान् प्राणी का भोजन बन जाता है, इस कारण जो जाति दूसरे का भोजन न बनना चाहे, उसे शक्ति सम्पन्न बनना ही पड़ेगा।

आर्य वीर दल आर्य जाति की शक्ति का प्रतिनिधि होगा। उसका कार्य होगा कि वह अपनी शक्ति से आर्यत्व के प्रचारकों की ढाल बने, जहां आर्य धर्म खतरे में हो वहां अपनी जान की बाजी लगावे और आर्यत्व के आगे बढ़ते हुये झण्डे को मजबूत हाथों से थामने के लिये तैयार रहे।

आर्य वीर दल की लक्ष्य प्राप्ति का साधन क्षात्र शक्ति का सामूहिक प्रादुर्भाव

[पाठ ७]

मनुष्य जाति [illegible] रथ [illegible] पहियों के बल बूते पर आगे बढ़ता है। वह [illegible] पहिये हैं, बुद्धि और शक्ति। इन्हीं दोनों को ब्रह्मबल और क्षात्रबल के नाम से पुकारा जाता है। इनमें से कोई अकेला पहिया जातियों के रथ को आगे नहीं ले जा सकता। दोनों इकट्ठे चलते हैं तभी जाति की गाड़ी संसार की तूफानी दौड़ मे पिछड़ने या कुचल जाने से बच सकती है।

जिस जाति ने इन दोनों बलों में से किसी एक को भी खो दिया, वह या तो सर्वथा नष्ट हो गई अथवा अन्य जातियों के चरणों से दलित की गई। प्राचीन काल में आर्य जाति की अनेक शाखाओं ने अपने बुद्धि और क्षात्रबल से पृथ्वी पर विजय प्राप्त की थी, और मध्यकाल में मध्य एशिया से उठती हुई नई जातियों ने अपने बढ़े हुये क्षात्रबल से उनकी शक्ति को कई स्थानों पर छिन्न भिन्न कर दिया। उस समय भी आर्य जाति म बुद्धि बल विद्यमान था परन्तु प्रमाद के कारण क्षात्रबल शिथिल पड़ गया था, जिसका फल यह हुवा कि उनकी पराजय पर पराजय हुई, यहां तक कि सिर उठाने की शक्ति भी न रही।

इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि बुद्धि बल से नियन्त्रित क्षात्रबल के बिना कोई जाति जीवित नहीं रह सकती, उसे "जीवो जीवस्य भोजनम्" के नियम के अनुसार सब जातिया पददलित कर देती हैं। यदि कोई पददलित जाति फिर से सिर उठा कर पृथ्वी की अन्य जातियों की बराबरी में खड़ी होना चाहती है तो उसे बुद्धि बल के साथ साथ क्षात्रबल को भी सिद्ध करना होगा।

क्षात्रबल व्यक्तिगत और सामूहिक

क्षात्रबल की इकाई जाति की व्यक्तियों की शारीरिक शक्ति है। जाति का बल उसी मात्रा में

आर्य समाज के नियमोपनियम

(लेखक—श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०, प्रधान आर्य प्रति० सभा संयुक्त प्रांत)

(गताङ्क से आगे)

कभी कभी एक प्रश्न उठता है कि क्या आर्य समाज का सभासद होने के लिये केवल इस नियमोंको मानना पर्याप्त है या उनके साथही अन्य सिद्धान्तोंका भी। यह प्रश्न रैतिक (formal) है वास्तविक (actual) नहीं, क्योंकि वस्तुतः जब तक कोई स्वामी दयानन्द के बताये हुये सिद्धान्तों को न माने वह दस नियमों को मान ही नहीं सकता। हां यदि कोई शब्द जाल मे फसकर बाल की खाल निकालने लगे और अपने लिये बहाना ढूँढने लगे तो यह सम्भव है कि इन दस नियमों की आड़ मे वेद विरुद्ध सिद्धांतों को भी मानने लगे और उसके द्वारा समाज मे वही गड़बड़ हो जो हिन्दू धर्म मे मचगई है। इस पर विचार करने के लिये २७ मार्च १९३४ ई० को १२ बजे दिन के आर्य समाज चावड़ी बाजार दिल्ली मे सार्वदेशिक सभा की धर्मार्थ सभा की एक बैठक हुई थी जिसमे भारतवर्ष के ४१ प्रसिद्ध आर्य विद्वान सम्मिलित थे। उनका निश्चय इस प्रकार है :—

"निश्चय हुआ कि आर्य समाज मे प्रविष्ट होने और रहने के लिये दस नियमों के साथ उन सिद्धान्तों का भी जो वेदों के आधार पर ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों मे लिखे है मानना और उन पर आचरण करना आवश्यक है"।

इस प्रकार आर्य समाज का सम्बन्ध स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों से घनिष्ठ हो जाता है और सैद्धान्तिक गड़बड़ की सम्भावना बहुत कम हो जाती है।

यह हुये आर्य समाज के नियम। परन्तु व्यवहारिक संगठन को चलाने के लिये उप-नियम भी चाहिए। आरम्भ मे आर्य समाज के ये उपनियम बनाये गये थे जो लगभग साठ वर्ष तक चलते रहे—

इन उपनियमों के देखने से पता लगता है कि यद्यपि इनमे किसी समाज के आन्तरिक प्रबन्ध के लिये पर्याप्त सामग्री है तथापि एक बड़ी कमी है। इसमे प्रत्येक समाज को एक अलग और असम्बद्ध इकाई माना गया है, एक समाज के अनेक सभासदों के लिये एक दूसरे के साथ व्यवहार का उल्लेख है। परन्तु एक आर्य समाज का अन्य आर्य समाजों के साथ क्या और किस प्रकार का सम्बन्ध हो, उस पर दृष्टि नहीं डाली गई। आदिम २८ नियमों मे इस पर भी ध्यान रक्खा गया था। नियम ३, ४, ५ इस प्रकार हैं —

३. इस समाज मे प्रति देश के मध्य एक प्रधान समाज होगा और अन्य उसकी शाखा समझें जावेंगे।

४ प्रधान समाज के अनुकूल और सब समाजों की व्यवस्था रहेगी।

५. प्रधान समाज मे वेदोक्त धर्मानुकूल संस्कृत और आर्य भाषा मे सदुपदेश के लिये

नाना प्रकार के पुस्तक और एक 'आर्य प्रकाश" साप्ताहिक पत्र निकलेगा। ये सब समाज में प्रवृत्त किये जावेंगे। इसका तात्पर्य यह है कि देश में एक प्रधान समाज होगा और अन्य समाज उसकी शाखाये होंगे। इस विधान मे और वर्तमान विधान मे मौलिक भेद है। वर्तमान विधान में सार्वजनिकता (demcracy) का मौलिक बीज हैं। आदिम विधान म उतना नहीं। आदिम विधान प्रधान समाज बनाकर उसकी शाखाये बनाता है अर्थात् ऊपर से नीचे की ओर चलता है। वतमान विधान नीचे से ऊपर की ओर चलता है। अर्थात् समाज अपने व्यक्तित्व को पहले स्थापित करके फिर अपनी प्रतिनिधि सभा स्वय निर्माण करते हैं। सार्वजनिकता (democracy) का यह एक मौलिक सिद्धान्त है। ऐमा प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी ने इसी दृष्टि कोण से नवीन उपनियमों मे इस बात को सवथा छोड दिया और प्रत्येक समाज को एक स्वतन्त्र सत्ता प्रदान कर दी।

(शेष अगले अङ्क मे)

(शेष १८० पृष्ठ का)

अधिक या कम होगा जिस मात्रा मे उसके अग, व्यक्तियों का व्यक्तिगत शारीरिक और आत्मिक बल औसत से अधिक या कम होगा। जिस जाति के अधिक सदस्य निभय और बलवान् होंगे वह जाति स्वभाव से अधिक शक्तिवाली और इसी लिये अपनी रक्षा में अधिक समर्थ होगी। जिस जाति के सदस्य निर्बल होंगे वह जाति भी निबल होगी। क्षात्रबल का पहला प्रधान अग व्यक्तियों का आत्मिक और शारीरिक बल है।

परन्तु इतना ही काफी नहीं। जाति को समूह रूप से भी सघठित होना चाहिये। बहुत विरले समयों मे जब मनुष्यों का दृष्टि क्षेत्र अत्यन्त परिमित हो, आस पास की दुनिया से सम्बन्ध रखना कठिन हो और मुख्यत व्यक्तिगत स्वार्थों के लिये युद्ध होते हों तब शायद केवल व्यक्ति के व्यक्तियों के बलाबल पर जीत हार का निश्चय हो जाता हो परन्तु प्राय अनेक जातियों से भरी हुई इस सघष भूमि मे विजयी होने के लिये शारीरिक बल के साथ सघटन बल की भी अनिवाय रूप से आवश्यकता होती है।

सेना के सिपाहियों का शारीरिक बल, उनका निर्भय भाव और देश प्रेम जितने आवश्यक हैं उनका उत्तम शिक्षण और उत्तम शस्त्रास्त्र भी उतने ही आवश्यक हैं। नियन्त्रण और सगठन सेना की जान हैं। नियन्त्रण और सगठन सामूहिक बल क प्रधान अग हैं।

आदर्श क्षत्रिय वह है (१) जिसका शरीर बलिष्ठ हो। (२) जो अपने देश, धर्म पर बलि चढाने को तैयार हो। (३) जो निर्भय हो। (४) जो शस्त्रों का अच्छा प्रयोग जानता हो। (५) सामूहिक रूप से काय करने की शिक्षा में दीक्षित हो (६) और यदि स्वय ही प्रधान सेनापति न हो तो अपने सेनापतियों के नियन्त्रण में पूरी तरह रह सके। ये आदर्श क्षत्रिय के लक्षण हैं। आर्य जाति में ऐसे आदर्श क्षत्रियों को तैयार करके आर्य जाति और आर्य धर्म के गौरव को ससार मे फिर से स्थापित करना ही आर्य वीर दल का लक्ष्य है।

स्वदेश प्रेम

सुमन-संचय

बड़ी भारी फौज के बीचों बीच एक सुन्दर खेमे में स्पेन का राजा फर्डीनेन्ड और उसकी रानी ईसा बेला बैठे थे। उनके पास स्पेन के कई सरदार खड़े थे मुसलमानों पर जो उसी समय फतह पाई थी उसके चिन्ह सबके चेहरों पर स्पष्ट देख पड़ते थे। राजा ने मुसलमानों के नेताओं को यह सन्देश भेजा । कि यदि तुम इसलाम छोड़ ईसाई बन जाओगे और स्पेन की सत्ता स्वीकार करलोगे तो तुम्हें इनाम दूगा और अपने राज्य मे ऊचे २ पद दूंगा। एक के बाद एक इस तरह बहुत से मुसलमान मुखियाओं ने राजा के पास आकर कहा हमारा किला आज से आपका है और हम ईसाई मत को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार शर्त कबूल कर और राजा का इनाम बगल में बांधकर प्रसन्न होते हुए वे अपने २ घर चल दिये

इन मुखियाओं तथा अन्य मुसलमानों को राजा के पास जाता देखकर दु खी होन वाला एक मुसलमान सरदार एक तरफ खड़ा था। उस का तेज और सिपाहियों का सा ढग देखकर साफ जान पड़ता था कि हार मानने स पहले उसने बहुतों को अपनी तलवार का स्वाद चखाया होगा पर अब समय ने पल्टा खाया था। जब शर्तें स्वीकार करने की उसकी बारी आई, तब वह दृढ़ता से राजा के सामने जाकर खड़ा हो गया और बोला राजा साहब, मेरी इच्छा आप के सामने सिर झुकाने की नहीं थी, पर मेरे साथियों ने मेरे साथ दगा की इसलिये अब कोई चारा नहीं। मैं लाचार होकर अपना किला आपके हवाले करता हूँ, राजा ने खजान्ची को इशारा किया खजान्ची उस मुसलमान को सोने की मोहरों की थैली देने लगा। सरदार ने उसके हाथ को एक तरफ हटाकर कहा 'राजा साहब', मैं अपना किला बेचने नहीं आया हूँ। मेरी किस्मत में तावे होना बदा था इसी लिये मैं तावे (आधीन) होता हू नहीं तो अगर मेरे साथी मेरे साथ डटे रहते तो जीतेजी इस किले का आपका न होने देता ' उसके ये शब्द सुनकर राजा प्रसन्न हुआ और बोला सरदार हम तुम्हे अपनी फौज मे ऊची जगह देते है उसने कहा राजा साहब। मै मुआफी चाहता हू मुझसे कुछ न होगा "

रानी ईसा बेला इस देश भक्त सरदार की ओर बडी श्रद्धा और आश्चर्य के साथ देख रही थी और उसके उत्तरों से मन ही मन मुग्ध हो रही थी। वे बोलीं 'कुछ तो हम देने दो। सरदार ने कहा —

यदि आपकी यही इच्छा है तो मैं इतना ही मागता हूँ कि मेरे नगर वासी पहले की तरह मुसलमानी धर्म का पालन करें आप जबरदस्ती उनको धर्म से हटाने की कोशिश न करें "

रानी ने कहा अच्छा ऐसा ही होगा' पर तुम्हे हम क्या दें।

सरदार ने कहा— मुझे अपना घोडा तथा कुछ और चीजें लेकर जाने दीजिये जहा का मै अमल मे रहने वाला हू '

राजा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए कहा परन्तु कुछ चांदी के साज वाले घोडे और सोने की मुहरें ही लेते जाओ।

यह सुनकर सरदार की आखों में आसू आगए और उसने गहरी श्वास लेकर कहा

राजा साहब' मेरा प्यारा शहर ग्रेनेडा तो खडहर बना पड़ा है फिर मै इन चीजों को लेकर क्या करूगा ?"

—रघुनाथप्रसाद पाठक

दान सूची
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
मई १९५३ ई०
आर्यसमाज स्थापना दिवस
वेद प्रचार निधि

संयुक्त प्रांत

५) आर्य समाज मेरठ सिटी।
१६) „ „ चौक प्रयाग।
४) विविध आर्यों द्वारा।
३) आर्य समाज, अजीतमल (इटावा)।
१०) „ „ लालापार, सहारनपुर।
१०) „ „ खुर्जा (बुलन्द शहर)।
११) „ „ गोरखपुर।
२) „ „ मण्डी धनौरा (मुरादाबाद)।

पंजाब

४०।।) आर्य समाज दीवान हाल, देहली।
१०) „ „ चीचावतनी (मिन्ट गुमरी)।
६।।=) „ „ जलन्धर सिटी।
१४) „ जफरवाल।
४) „ „ मिठाटिवाना।
१०) „ „ मौडिल टाउन लाहौर।
५) „ „ शोरकोट (झंग)।
५) „ „ फीरोजपुर केंट।

राजस्थान

२) आर्य समाज बहरोड़ (अलवर)।
२) „ स्त्री समाज अजमेर।
४।।=) आर्य मित्र सभा भूपाल।
८) „ „ उज्जैन।

बिहार-उड़ीसा

२) आर्य समाज मनेर शरीफ (पटना)।
४) „ „ बारसलीगंज (गया)।
५) „ „ बालानगिर (उड़ीसा)।

बम्बई प्रान्त

४।।) आर्य समाज लोअर परेल, बम्बई।
०।।) विविध आर्यों द्वारा।

मद्रास प्रान्त

५) आर्य समाज हिरयडक।

मध्य प्रदेश

८।।) आर्य समाज इटारसी।
६।।) „ „ अमरावती।

सिन्ध

१३) आर्य समाज, टाउन कराची।

बंगाल

५) आर्य समाज, खड़गपुर।
५) „ „ काकिनारा (२४ परगना)।

योग २३५।)
गत योग १७९≡)
५१४≡)

जिन आर्य समाजों से यह दान प्राप्त हुआ है उनको धन्यवाद। जिन आर्य समाजों को अपना दान देना है, उन्हें दान भेजने में शीघ्रता करनी चाहिए। जहां किसी विशेष कारण वश उस दिन धन संग्रह न किया जा सका हो उन्हें अब भी धन संग्रह करके अथवा अपने कोष से अच्छी राशि इस कार्यार्थ, भेजकर शिरोमणि सभा के आदेश और अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए।

स्वाध्याय के लिए कुछ चुनी हुई पुस्तकें

भक्ति दर्पण १)

स्वाध्याय सुमन १॥)

(स्वामी वेदानन्द जी कृत)

मैं और मेरा भगवान् १)

(गंगाप्रसाद उपाध्याय एम ए.)

प्रार्थना सुमन ॥)

योगोपनिषद् (योगदर्शनसहित) १)

(स्वामी वेदानन्द कृत)

ईश्वर भक्ति ॥=)

(स्वामी सर्वदानन्द जी कृत)

धर्म का आदि स्रोत १)

(गंगाप्रसाद, चीफ़जज, कृत)

आर्यों के नित्य कर्म ≡)

(अमरशहीद स्वामी श्रद्धानन्दकृत)

वाराह पुराण की आलोचना ।।)

लिंग पुराण की आलोचना ।≡)

शुद्धि पद्धति व स्मृति ।-)

व्याख्यान माला (संस्कृतमें) ।॥)

सरल योगाभ्यास ।=)

महात्मा नारायण स्वामी जी कृत पुस्तकें

१ छान्दोग्य उपनिषद् २।)

(हिन्दी भाष्य)

२ आत्मदर्शन १॥)

३ मृत्यु और परलोक ॥=)

कपडे की जिल्द सहित १।)

४ आर्य समाज क्या है ।≡)

५ प्राणायाम विधि ≡)

स्व० पं० चमूपति एम. ए. कृत पुस्तकें

१. सन्ध्या रहस्य ।≡)

२ देवयज्ञ ।=)

३ ऋषि दर्शन -)

४ ऋषि का चमत्कार -)

५ धूर्त्तों का आत्मा -)

श्री स्वामी सत्यानन्द जी कृत

१. श्रीमद्भगवद्गीता (मोटे अक्षरों मे) बढिया कागज पर १।)

घटिया कागज पर १)

२ सत्यापदेशमाला १।)

३. सन्ध्यायोग ।-)

४. ओंकार उपासना ।)

घर बैठे, बिना गुरु की सहायता के संस्कृत सिखाने वाली प्रसिद्ध

—पुस्तक—

(लि० वेदों के भाष्यकार श्रीमान् दामोदर सातवलेकर जी)

संस्कृत स्वयं शिक्षक तीनों भाग

प्रत्येक भाग का मूल्य १॥)

तीनों भागों का ४॥)

उपनिषद् प्रकाश ३)

(श्रीस्वामी दर्शनानन्द जी कृत)

ऋषि जीवन कथा १।)

मांस भोजन मीमांसा ॥)

महाभारत (आर्य भाष्य) ६)

(प० आर्यमुनि कृत)

(विराट् पर्व तक)

चित्र स्वामी दयानन्द जी का ।)

(सात रंगा)

सन्ध्या प्रदीपिका ॥=)

हवनयज्ञ प्रदीपिका ॥=)

❀ आर्यसमाज के सभासदों के प्रवेशपत्र (नियमोंसहित)॥।)सै०

❀आर्यसमाजोंकेलिए रसीदबुक॥।)

❀ सन्ध्या)॥। ४) सैंकड़ा

❀ हवन मन्त्र -) ५) सैंकड़ा

राजपाल एण्ड सन्ज, आर्य पुस्तकालय, अनार कली लाहौर ।

मनुष्योन्नति का परम आदर्श "ईश्वर"

(ले० श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज)

आज कुछेक लोगों की प्रवृत्ति है कि अच्छे काम करते रहने चाहिये ईश्वर को चाहे मानें या न मानें। परन्तु यह भूल और भारी भूल है। मनुष्य जब किसी प्रकार की भी उन्नति करना चाहता है तो उसे उस के लिये आदर्श की जरूरत होती है। जब हम अपने लक्ष्य में मनुष्यों के आदर्श को रखते हैं तो उनमें जहां अच्छे गुण होते हैं वहां उनकी, स्वाभाविक अल्पज्ञता के कारण, कुछेक अवगुण भी हुआ करते हैं। उनको आदर्श रूप में रखने और उनका अनुकरण करने से, जहां उनके अच्छे गुण अनुकरण कर्ता में आया करते हैं वहां अवगुण भी। परन्तु यदि हम परम गुरु ईश्वर को आदर्श में रक्खें तो फिर किसी अवगुण के आने की सँभावना हो नहीं हो सकती, क्यों कि आस्तिक संसार ईश्वर को शुद्ध बुद्ध और मुक्त स्वभाव वाला मानता है। इसलिये यह आदर्श अवगुणों से बचने के लिये, अनिवार्य है। इसीलिये वेद ने कहा है — "तमेव विदित्वातिमृत्युमेति'। अर्थात् उस (ईश्वर) ही के जानने से (मनुष्य) मृत्यु के पार हुआ करता है। एक उपासक जब इस पथ का पथिक बनता है तब उसका कर्तव्य हो जाता है कि ईश्वर की दिव्य और अलौकिक ज्योति का ज्ञान प्राप्त करे और उसके प्रत्यक्ष करने के लिये, उस ईश्वर के दिव्य और अलौकिक गुणों को अपने आत्मा में, "तज्जपस्तदर्थ भावना"। की मर्यादा नुसार, धारण करे। यह उसका पहला कर्तव्य होता है।

(२) वेद हमें शिक्षा देते हैं कि "अविद्यया-मृत्युं तीर्त्वा, विद्ययाऽमृतमश्नुते"। अर्थात् कर्म और ज्ञान के समुच्चय से मनुष्य केवल मृत्यु के पार हुआ करता है। मोक्ष के दूसरे पहलू आनन्द को, आस्तिक बुद्धि और श्रद्धा की भावना, हमें शिक्षा देती है कि ईश्वर की दया से प्राप्त किया करता है, वह न हमारे कर्म का फल है न ज्ञान का परिणाम है। इसलिये उसकी दया के पात्र बनने के लिये उत्कृष्ट ज्ञान और उत्कृष्ट कर्म की जरूरत हुआ करती है। इनको आचरण में लाना उपासक का दूसरा कर्तव्य है।

(३) मनुष्य को, उपासक बनकर, सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार की उपासना करनी चाहिये। सगुणोपासना, ईश्वर को सच्चिदानन्द, वरुण मित्र और अर्यमा आदि गुणों के साथ देखकर उन गुणों को अपने भीतर लाने का अभ्यास करना चाहिये। इससे उसे सुख प्राप्त हुआ करता है जैसा कि एक उपनिषद् में एक जगह लिखा है —

> एकोवशी सर्व भूतान्तरात्मा एकं रूपं बहुधा
> य करोति। तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा
> स्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्॥
>
> (कठ० ५।१२)।

और जब ईश्वर को निर्गुण रूप में देखते हैं तो उसके निर्गुणता प्रदर्शक गुण, अजरत्व, अमरत्व, अपाप विद्धत्व आदि उपासक के भीतर से इन निर्गुणताओं को दूर करके उसे मृत्यु के

आदर्श अन्तर्जातीय विवाह

(सम्वाद दाता द्वारा)

गुरुकुल वृन्दावन के उपाध्याय और सत्यार्थ प्रकाश के संस्कृत अनुवादक श्री प० शंकरदेव जी पाठक के ज्येष्ठ सुपुत्र चि० सतीशचन्द्र पाठक का विवाह बहराइच निवासी श्री साहु लक्ष्मीनारायण जी आर्य की सुपुत्री सौ० सावित्रीदेवी के साथ १८-५-४३ को श्री प० कन्हैयालाल जी वैदिक मिशनरी विदेश प्रचारक की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। बहराइच में सर्व प्रथम अन्तर्जातीय विवाह होने से सर्वत्र इसकी चर्चा थी। कट्टरपन्थी हिन्दू भी इस विवाह से बहुत प्रभावित थे। संयुक्त प्रान्त का यह भाग सामाजिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है और यहा के असंख्य हिन्दू परिवार और उनकी कन्याएँ वैवाहिक कुरीतियों के अभिशापों और मूक अत्याचारों से पीड़ित हैं। हमें विश्वास है कि इस प्रकार के विवाह उनके उन्मूलन में अपना विशिष्ट स्थान रखेंगे। प० शंकरदेव पाठक बिजनौर जिले के गौड़ ब्राह्मण परिवार से सम्बन्धित हैं और उन्होंने स्वयं बम्बई प्रान्त की एक वैश्य कुलोत्पन्ना श्रीमती जानकीदेवी पत्रे गुजराती विदुषीदेवी के साथ विवाह करके वैदिक विवाह का आदर्श उपस्थित किया था। साहु लक्ष्मी नारायण जी जायसवाल वैश्य है। इस विवाह में वैवाहिक कुरीतियों को जरा भी स्थान नहीं दिया गया था और प्रत्येक कार्य बड़ी सादगी से किया गया था।

१९-५-४३ को शिष्टाचार समर्पण रूप साहू लक्ष्मी नारायण जी के निवास स्थान पर एक सभा हुई जिसमे श्री प० सूर्यदेव जी आयुर्वेदालङ्कार स्नातक गुरुकुल काङ्गडी ने वर और कन्या पक्ष के लोगों का परिचय कराया। स्नातक महोदय साहु लक्ष्मी नारायण जी के ज्येष्ठ जामाता हैं और इस विवाह का श्रेय मुख्यतया आप ही को है। उनकी धर्मपत्नी सौ० शान्तादेवी ने एक उत्तम वक्तृता द्वारा वर और वधू को आशीर्वाद दिया और अन्तर्जातीय विवाह के महत्व और उनकी आवश्यकता पर उत्तम प्रकाश डाला। स्नातक सूर्यदेव जी तथा अन्य कई वक्ताओं के भी सारगर्भित भाषण हुए। यह सभा बहराइच समाज की उत्सव सभा का रूप लिये हुए देख पड़ती थी। श्री प० कन्हैयालाल जी मिश्र ने प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास के प्रमाणों और उदाहरणों के द्वारा अन्तर्जातीय विवाहों की

(शेष १९२ पृष्ठ का)

भय से पार कर दिया करते हैं जैसा कि और जगह कहा है —

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्य मगन्धवच्चयत्। अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्यतं मृत्यु मुखात्प्रमुच्यते ॥
(कठ० ३।१५)।

जब मनुष्य इन दोनों प्रकार की उपासनाओं को सफलता के साथ व्यावहारिक जीवन में घटाया करता है तभी उस परम आदर्श परम पुरुष की शरण प्राप्त करने का अधिकारी बना करता है।

उपादेयता पर जो प्रकाश डाला था वह सुनते ही बनता था। इस अवसर पर वर और वधू के लिये आशीर्वाद और बधाई सूचक आर्य नेताओं और विद्वानों के अनेक सन्देश प्राप्त हुये थे जिनमे से महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज, श्री प० गङ्गा प्रसाद जी रि० चीफ जज प्रधान सार्वदेशिक सभा देहली, श्री पण्डित गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त, श्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए० भूतपूर्व मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा डाइरेक्टर वीर अर्जुन देहली, श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा तथा सम्पादक सार्वदेशिक देहली, श्री डा० मंगलदेव जी पी० एच० डी० के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

वर महोदय के माता और पिता के कुल बडे प्रतिष्ठित आर्य कुल हैं। वर के मामा श्री सत्यव्रत जी दयानन्द लहरी और दयानन्द दिग्विजय के रचयिता तथा कन्या महाविद्यालय बडौदा के भूतपूर्व आचार्य कविरत्न प० मेधाव्रत जी वर के चचा श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक, श्री बी आर पाठक जी एम ए (सिविल सेक्रेटरियट लखनऊ) श्री पण्डित चन्द्रमणि पाठक शास्त्री आयुर्वेदाचार्य प० शंकरदेव जी के अनन्य मित्र श्री शमशेर बहादुर जी तथा अन्य निकट सम्बन्धी इस अवसर पर उपस्थित थे।

इस अवसर पर विभिन्न आर्य संस्थाओं के लिये ३५) रु० दान की घोषणा हुई।

आवश्यक सूचना

श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी को सभा के लिये धन संग्रहार्थ इस सभा की रसीद वही सं० १, १ से ५ तक की दी गई थी। उनके पत्र से ज्ञात हुआ है कि वह कहीं गुम हो गई है। अत आर्य जनता की सूचनार्थ यह विज्ञप्त प्रकाशित की जाती है। यदि किसी सज्जन को यह रसीद वही मिल जाये तो उसे सभा कार्यालय मे पहुचा दें। कोई अब इसे सभा की प्रामाणिक रसीद बही न समझें। स्वामी जी महाराज मुख्यतया बरेली और बदायू जिलों मे काम करते थे।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

Vedic Varna Vyavastha and Modern Socialism

PART I—VEDIC VARNA VYAVASTHA

(By—Shri Pt Ganga Prasad ji M A Retd Chief Justice President Sarvadeshik Sabha)

VARNA ASHRAM DHARMA

The Vedic Religion is sometimes called *Varna Ashram Dharma,* and correctly so for the Varna and Ashrams are a peculiar or distinguishing feature of it They form a systematic and complete plan for human life a plan of individul life and the social life combined The *Varna Vyavastha* divides the human society into 4 vocational classes viz Brahmans, Kshattryas Vaishyas and Shudras according to their qualifications and aptitudes The *Ashrama Vyavastha* divides the life of each individual into 4 parts viz Brahmacharya Grihastha Vanaprastha and Sanyasa When the Vedic Religion degenerated on account of the selfishness of the priestly class and the ignorance of the masses both of these systems also deteriorated, and they are at present very different from what they were in Vedic times

2 I shall first speak briefly of the system of *Ashramas* According to it the first portion of the life of an individual, at least 25 years in the case of a male and 16 in the case of a female should be spent in celibacy or *Brahmacharya* and devoted to the person s proper physical and mental development and the study of the Veda or knowledge After this he can enter marital life or Grihastha Ashram with the object of begetting children under the wholesome restraints prescribed by Shastras and earning wealth for maintaining himself and his family and promoting charitable objects When he has got children and also grand children he should become a Banaprastha i e retire into some secluded place away from the bustle and turmoil of town life and devote his time to his spiritual progress by meditation of God and self-study (स्वाध्याय) and to service of society according to his capacity The object of this Ashrama is chiefly to prepare for the fourth or last Ashram viz *Sanyasa* in which a man is expected to roam from place to place teaching and preaching to all people the gospel of truth and virtue, and thus benefitting them by his ripe experience and wisdom.

3. **Its Merit** It is hardly possi-

ble to devise a better scheme for regulating an individual's life than this Ashram Vyavastha which is meant to give him the best opportunities for his physical mental and spiritual development and to enable him properly to discharge his duties to himself to God and to society

4 **Its present degenerate condition** As has been already stated above the present conditions of our society are totally different and ar most diplorable In place of a life of *Brahmacharya* child marriage is prevalent leading to physical and mental deterioration of the race The marital life or *Grihastha* which begins during childhood generally lasts till death Banaprastha Ashram has become an unknown thing and the Arya Samaj has only recently made an attempt to revive it by starting one or two Ashrams with this object As for Sanyasa there are millions of persons calling themselves Sadhus (which word means virtuous) wandering throughout the country and begging for alms Not even one per thousand of them deserve the title of Sadhu Among their ranks will be found all kinds of vicious persons even criminals and proclaimed offenders as there is no easier way of hiding one's identity than to become a Sadhu ! A very large majority of them are idlers if not worse and are a burden on society In no other civilised country you will find such a state of things In every civilised country there is a law prohibiting able bodied persons from begging In India there is a ***European Vagrancy Act*** with the object of preventing Europeans from begging though the numbers of Europeans in this country is so small and the chances of their soliciting alms are so very few If there is no law to punish or restrain professional beggars in India the reason is that they find protection under the cloak of religion and a foreign Government naturally has not the courage to interfere in matters ostensibly pertaining to religion

5 **Degradation of Varna Vyavastha hereditary cast system and its evils**

I have briefly referred to the Ashram Dharma as it is closely allied to the Varna Dharma which is the principal subject of this thesis and to which I shall now turn

As already stated the Vedic system of Varnas was very different from the present ***caste system*** The former divided the society into 4 mains vocational classes according to their qualifications or merits, and choice The

latter has split up the society into numerous hereditary castes and sub-castes which refuse to interdine or intermarry* with one another The evils arising from the present system are patent to every thoughtful member of the society One obvious evil is that every caste is sub-divided into so many petty sub-castes that it becomes very difficult to find suitable matches for our boys and girls This is however only a minor evil and I shall describe some of the more serious evils arising from this pernicious institution

6 Degradation of Shudras

One of the great evils is the social and economic degradation of the major part of the nation called Shudras In medieval times their lot was very miserable There were different laws for each main caste, the Brahman being treated with great leniency, and the Shudra with great severity Thanks to the preachings and teachings of Rishi Dayanand and Mahatma Gandhi Hindus have now begun to realise the injustice done by society to these socalled low classes. But this has so far touched only the fringe of the problem Such liberal ideas are to be found among only educated people, who live mainly in cities In villages which contain more than 90% of the population of India the treatment accorded to the Shudras is still far from satisfactory

7 Untouchability - About 7 crores out of these Shudras are considered untouchables They are not allowed even to draw water from wells meant for 'high" caste people Their children in villages are still unwelcome in public schools though the authorities have given explicit orders to the contrary Most silly bans, which would be incredible if they were not true, are imposed on them in some places. For example in some parts of Kumaon hills they cannot use Ghi or butter in cooking their food, they cannot put on gold or silver jewellery In some places in Rajputana they are not allowed to put door frames to doors in their houses.

In some parts of South India not only *touch*, but even *sight* of some castes is a pollution There are nice and subtle rules prescribing distances for people of various low castes which they must observe when approaching near a high caste man

8 Conversions of Shudras to Islam nad Christianity

It is no wonder if driven by such

*For a detailed discussion on this subject the reader is referred to Chapter III of the Author's Caste System

inhuman treatment millions of these oppressed people sought refuge by accepting Mohmmadanism, and thousands of them were converted to Christianity In fact out of the 8 or 9 crores of Musalmans in India more than 90 per cent are converts or descendants of converts from Hinduism, and an overwhelming majority of them were recruits from the Shudras or low castes This is natural when it is remembered that as soon as a member of these low castes accepts Islam or Christianity he is no longer subjected to the social inequites which are the lot of poor low caste Hindus

9 Injury to Arts and Industries

Another great evil arising from the herelitary caste system is that it has caused serious injury to Arts and Industries Nearly all the mechanical arts and industries in India are and have been practised by people who are regarded as low castes, e g carpenter blacksmith smith or architect weaver, dyer, washerman, oilman, leather, curer, and so on It is unfortunate that all these professions are called impure in the Suritis which were composed in Puranic times and strange as it would seem some verses of this nature have also found their way into the present Manusmariti. How conld arts and industries thrive in a country where they are looked npon as impure, and unworthy to be practised by any persons of high birth ? Mr R C Datta has truly remarked in his "*Civilisation in Ancient India* (P 560) the results were disastious so far as arts were concerned Genuis was imposible except among priests and kings. Men held in a perpetual moral bondage and servitude never leaint to aspire after greatness and glory

It is needless to dilate on the evil from an economical point of view Arts industry and trade besides agriculture are the only means by which a nation can become rich The vedas speak of all these industries in highly apprised true terms, and all persons who pursue these should be included among the large vaishya class according to the vedic system of *Varnas* I shall revert to this subject later (vide para 18).

(To be continued)

मातृत्व की ओर !

(ले०—श्री रघुनाथप्रसाद पाठक)

पुस्तक प्रकाशक—शारदा मन्दिर बुक-डिपो-नई सड़क देहली—मूल्य अजिल्द १) और सजिल्द १।।)

कुछ आर्य नेताओं और पत्रों की सम्मतियां

"प० रघुनाथ प्रसाद पाठककृत 'मातृत्व की ओर" नामक पुस्तक को मैने देखा। पुस्तक के गम्भीर विषय रोचक कहानी के रूप मे लिखे गये है, जिससे पढ़ने वाले पर जरा भी बोझ न पड़े परन्तु मौलिक बातों की जानकारी हो जाय। पुस्तक युवा और युवति प्रत्येक के पढ़ने के योग्य है। गृहस्थाश्रम को सुखी और शान्त बनाने क लिये अधिक से अधिक उपयोगी बातें इन्हें इस पुस्तक में मिलेंगी। कागज तथा छपाई सभी अच्छे हैं। पुस्तक अधिक से अधिक प्रचार होने योग्य है।"

—नारायण स्वामी

'स्त्री जाति को उठाने और गृहस्थ का सच्चा और सीधा स्वरूप दिखाने वाली यह पुस्तक उन कन्याओं के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी जो बालिग होकर अपने यौवन की समस्याओं का जानना और उनका हल करना चाहते हैं। बिचारी कन्याओं को जब वह बालिग हो जाती है, एक अंधेरी गली से गुजरना पड़ता है। न उनके मा बाप उनका पथ प्रदर्शन करते हैं और न उनके गुरु जन उनको सहायता देते हैं। यह बिचारी इधर उधर भटक भटक कर समय गुजारती हैं और नौकरों चाकरों तथा परिवार के अपठित महिलाओं आदि से कुछ अधूरा ज्ञान प्राप्त करती हैं जो सहायता के स्थान पर अक्सर उन कन्याओं के अनिष्ट का कारण बनता है। इन सब कठिनाईयों को इस "मातृत्व की ओर' नामी पुस्तक ने हल कर दिया है। प्रत्येक माता पिता का अब फ़र्ज है कि वह इस पुस्तक की प्रतियां अपनी कन्याओं के हाथ मे दें और उनके जीवन के सुख सम्पादन का साधन बनें। पाठशालाओं मे इनाम के तौर पर देने के लिये अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है।"

—सुधाकर एम० ए०

"पुस्तक की लेखन शैली दो बहिनों की बातचीत से आरम्भ होती है और यह क्रम अन्त तक चला गया है। बीच २ मे विषय से सम्बन्धित उपदेशात्मक कहानियों का भी समावेश है, जिससे पाठिकाओं का मन पढ़ते २ उकताता नहीं है। इसमे सन्देह नहीं लेखक महोदय ने गम्भीर अध्ययन के पश्चात् ही यह पुस्तक लिखी है। बालक की उत्पत्ति से लेकर उसके बड़े होने तक की उन तमाम आवश्यक बातों का जानकारी करा दी गई है जिनके लिए हमे इधर-उधर भटकना पड़ता है। अर्थात् स्वास्थ्य सुधार देश प्रेम, गृहस्थ निर्माण करना, सन्तान-शिक्षण, सन्तान निर्माण, विवाह, जीवन माधुर्य इत्यादि २ विषय बड़े ही रोचक हैं। पुस्तक पुरुष और स्त्रियों दोनों ही के पढ़ने योग्य है।"

"शारदा मन्दिर दिल्ली का यह प्रकाशन बहुत सफल रहा। पुस्तक की छपाई सफाई उत्तम है।"

(आर्य मार्त्तण्ड)

"यह पुस्तिका मुख्यतया विवाह योग्य आयु की बड़ी कन्याओं के लिये लिखी गयी है और पारिवारिक बातचीत में मनोरंजक ढंग से यह बतलाया गया है कि माता बनने के लिये कन्याओं को क्या-क्या सीखना चाहिये और मातृत्व का उत्तरदायित्व कितना पवित्र तथा गम्भीर है। पुस्तिका में शारीरिक स्वास्थ्य की बातों से लेकर सदाचार घर गृहस्थ और पास-पड़ौसियों के कर्तव्य तथा स्वास्थ्य-रक्षा आदि तक अनेक उपयोगी विषयों का समावेश हो गया है। विद्यार्थिनियों को पारितोषिक आदि के रूपमे देने के लिये यह पुस्तिका उपयोगी है।" (वीर अर्जुन)

सम्पादकीय

अत्यन्त अभिनन्दनीय संकल्प

अमर धर्मवीर स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज के अनन्य भक्त श्री लब्भूराम जी आनन्दाश्रम' लुधियाना निवासी का नाम आर्य जगत् में गुरुकुल प्रेम के कारण सुप्रसिद्ध है। उनका पुरानी गुरुकुल भूमि में आयोजित श्रद्धा सम्मेलन के अवसर पर सभापति रूप से दिया हुआ भाषण हम इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं जिस का एक एक अक्षर उनके स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज और गुरुकुल के प्रति प्रेम को प्रकट करता है। वे अपनी मित्र मण्डली द्वारा १६५५००) गुरुकुल कांगड़ी के लिये दान रूप से अब तक एकत्रित कर चुके हैं। शेष ४५००) अतिशीघ्र एकत्रित करके २ लाख की राशि को पूरी करने का उनका शुभ संकल्प है। आशा है आर्य जनता का पूर्ण सहयोग इस शुभ कार्य मे उन्हें अवश्य ही प्राप्त होगा। 'सार्वदेशिक' पत्र के साथ भी श्री ला० लब्भूराम जी का विशेष प्रेम है और इसकी ग्राहक संख्या बढाने में वे विशेष प्रयत्न शील हैं इस विषयक उनका परिश्रम और उत्साह अनुकरणीय है।

सार्वदेशिक सभा की वेद प्रचार निधि

'सार्वदेशिक' के मार्च अङ्क में आर्य समाज स्थापना दिवस पर एक टिप्पणी लिखते हुए हमने आर्य जनता से सार्वदेशिक सभा की वेद प्रचार निधि में उदार सहायतार्थ अपील की थी जिससे देश देशान्तर मे सभा द्वारा प्रचारादिकार्य का विस्तार किया जा सके। कई आर्य समाजों ने आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष में वेद प्रचार निध्यर्थ धन संग्रह करके सभा कार्यालय में भिजवा दिया है और इस प्रकार शिरोमणि सभा के प्रति अपने कर्तव्य और अनुशासन का पालन किया है। किंतु खेद है कि अनेक बड़ी बड़ी समाजों ने इस विषयक अपने कर्तव्य का अभी तक पालन नहीं किया है। बड़ी आर्य समाजों को तो इस विषय मे अन्य समाजों के सम्मुख एक आदर्श स्थापित करना चाहिये किन्तु दुःख है कि उन में से कई अपनी उत्तरदायिता को पूर्णतया अनुभव नहीं करतीं। यदि किसी अनिवार्य कारण वश आर्य समाज स्थापना दिवस न मनाया जा सका हो अथवा उस दिन धन संग्रह न किया जा सका हो तो अब भी समाजों को चाहिये कि अपने सदस्यों और सहायकों से एकत्रित करके अथवा यदि यह सम्भव न हो तो अपने कोष से अच्छी राशि सार्वदेशिक सभा की वेद प्रचार निध्यर्थ भेजकर अपने कर्तव्य और अनुशासन का पालन करते हुए पुण्य के भागी बनें। शिरोमणि सभा के आदेश की अवहेलना करना सामाजिक

संगठन को निर्बल बना देगा और उसके पवित्र सार्वभौम उद्देश्य की पूर्ति में बाधक होगा यह लिखने की आवश्यकता नहीं।

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की छात्र परीक्षाएं—

हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के अधिकारियों ने उन छात्र छात्राओं के लाभ के लिये जो नियम पूर्वक गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से लाभ नहीं उठा सकते छात्र परीक्षा विभाग की आयोजना की है। छात्र परीक्षा समिति ने अभी तक निम्न विषयों की परीक्षा का प्रबन्ध किया है। आवश्यकतानुसार अन्य विषयों का भी समावेश कर लिया जाएगा। (१) धर्म शास्त्र (२) इतिहास (३) वेद (४) संस्कृत साहित्य (५) सम्पादनकला (६) संगीत (७) गृह शास्त्र (८) हिन्दी साहित्य। इनमें से धर्म शिक्षा सब परीक्षाओं के लिये अनिवार्य होगी। प्रत्येक विषय की परीक्षा के ३ खण्ड होंगे। प्रथमा मध्यमा, उत्तमा, जिनका शुल्क क्रमश ३) ६) और १०) नियत किया गया है। इन परीक्षाओं की नियमावली तथा पाठ विधि प्रकाशित हो गई है जिसे गुरुकुल कांगड़ी से २ आ० भेजकर मंगवाकर आर्य कुमार कुमारियों को बड़ी संख्या में इस आयोजना से पूर्ण लाभ उठाना चाहिये। ये परीक्षाएं इस वर्ष विजय दशमी से प्रारम्भ हो जाएगी।

सर मिर्जा इस्माइल का वचन भंग :—

'सार्वदेशिक के फरवरी अङ्क में श्री रामचन्द्र जी 'वीर' के अनशन विषयक टिप्पणी लिखते हुए हमने इस बात पर प्रसन्नता प्रकट की थी कि जयपुर के प्रधान मन्त्री सर मिर्जा इस्माइल के आश्वासन दिलाने पर कि वीर जी की सब न्यायोचित मांगें शीघ्र पूर्ण कर दी जाएगी उस अनशन को समाप्त कर दिया गया था। किन्तु हाल ही में हिन्दू महासभा केन्द्रीय कार्यालय नई देहली से इस विषयक जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है उसमें बताया गया है कि सर मिर्जा इस्माइल ने अपने सब वायदे तोड़ दिये। गोचर भूमियों के विषय में कोई योजना अभी तक नहीं की गई। हिन्दी की अवस्था में कोई सुधार अभी तक नहीं हुआ। मन्दिर न तोड़ने का आश्वासन देने पर भी मन्दिर तोड़े जा रहे हैं उदाहरणार्थ राम बाग के पास स्थित श्री नृसिंह मन्दिर के ऊपर का हिस्सा तोड़ा जा चुका है इत्यादि।

यदि यह सूचना सत्य है तो सर मिर्जा का इस प्रकार वचन भङ्ग अत्यन्त निन्दनीय और उन्हें जनता की दृष्टि में गिराने वाला है। हम सर मिर्जा से अनुरोध करते हैं कि वे एक विश्वसनीय सज्जन की तरह अपने वचन का पूर्णतया पालन करते हुए जयपुर की आर्य हिन्दू जनता के असन्तोष को अतिशीघ्र दूर करें अन्यथा इसका परिणाम उनके अथवा रियासत के लिये अच्छा न होगा।

यूनियन सरकार का काला कानून—

दक्षिण अफ्रीका की यूनियन सरकार ने भारतीय विरोधी जो काला कानून गत एप्रिल मास में पास किया है उसकी भारत और विदेशों के सभी विचारशील निष्पक्षपात व्यक्तियों ने

घोर निन्दा की है। नैशनल इण्डियन कांग्रेस और इण्डियन ऐसोसियेशन आदि संस्थाओं ने इस क़ानून की कड़ी समालोचना करते हुए इसे सर्वथा अन्याय और केपटाउन ऐग्रीमेण्ट का विरोधी बताया है तथा भारत सरकार से दक्षिण अफ्रीका के साथ राजनैतिक सम्बन्ध विच्छेद की प्रार्थना की है यदि एक गोलमेज सम्मेलन बुला कर वह इस क़ानून को रद्द कर दे। ऐसे काले कानूनों से यूरोपियनों के प्रति कटुता बढ़ती है और उसका अनिष्ट जनक परिणाम होता है इसमें सन्देह नहीं। यह दु:ख की बात है कि इङ्गलैण्ड की सरकार ने इस विषय में—अङ्गुलि हिलाना भी उचित नहीं समझा और भारत सरकार ने केवल साधारण प्रतिवाद करके ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली है। हम इस काले क़ानून का जो भारतीयों के अधिकारों पर अनुचित प्रतिबन्ध लगाता है घोर प्रतिवाद करते हैं और भारत सरकार से अनुरोध करते हैं कि राजनैतिक और व्यावसायिक दबाव द्वारा यूनियन सरकार को ठीक रास्ते पर लाने का पूर्ण प्रयत्न करें। वहा की भारतीय जनता को भी अपने अधिकारों की रक्षा के सब उचित उपायों का अवलम्बन करना चाहिये। श्री भवानी दयाल जी सन्यासी इत्यादि इस विषय में जो आन्दोलन कर रहे हैं वह प्रशसनीय है। मि० खरे इस विषयक अन्याय को दूर करवाने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे या वे सरकार की कठपुतली बनकर ही रहेंगे यह देखने की बात है।

ध० दे०

वियोग

श्री. प० धर्म्म देव विद्या वाचस्पतिजी की पुत्री सरस्वती के निधन का समाचार देते हुए हमें हार्दिक वेदना होती है। पुत्री सरस्वती चकवाल (पजाब) मे टाइफाइड मे ग्रस्त थी, और उस की परिचर्य्या तथा चिकित्सा भले प्रकार हो रही थी। हमें विश्वास था कि वह शीघ्र स्वस्थ हो जायगी।

हमे क्या पता था कि उसका जीवन दीपक इतने शीघ्र बुझ जायगा। मृत्यु के समय उसने जरा भी व्याकुलता वा बेचैनी प्रकट न की और ओ३म् का जाप करते २ अनन्त की गोद में विलीन हो गई।

इस बालिका की आयु लगभग १०॥ वर्ष की थी और वह इस वर्ष 'हिन्दी रत्न' की परीक्षा मे सम्मिलित हुई थी। लगभग ३ वर्ष की आयु मे ही उसने भजनादि बनाने प्रारम्भ किए थे।

ऐसी अच्छी और होनहार बालिका के आकस्मिक वियोग पर, प० जी और उनके परिवार के मनोभावों को हम अनुभव ही कर सकते हैं उनका वर्णन करना कठिन है।

परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और श्री प० जी और उनके शोक—सतप्त परिवार को इस महान् वियोग को सहन करने की क्षमता प्रदान करें—

—रघुनाथप्रसाद पाठक

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ।।=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियो को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो— योग के अभ्यासों को कर सकता है। मूल्य ।।=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण।≈)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।≈), ≡), =)।।, =)।।, ‑)।, ≡)।, ।), ।=)।।

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय मे रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) प्राणायाम विधि	)॥
(२) वैदिक सिद्धान्त [illegible] सजिल्द	॥)
साजिल्द	१
(३) [illegible]	)
(४) [illegible]	)
(५) [illegible]	[illegible]
(६) [illegible]	)
(७) [illegible]	)
(८) [illegible]	)
(९) [illegible]	।)
(१०) [illegible]	१
(११) [illegible]	१)
(१२) [illegible]	॥)
(१३) [illegible]	॥)
(१४) सार्वदेशिक [illegible]	
[illegible]	[illegible]
(१५) [illegible]	)
(१६) आर्य डायरेक्टरी [illegible]	१॥)
(१७) [illegible]	)
(१८) [illegible]	१)
(१९) [illegible]	)
(२०) [illegible]	
(२१) [illegible]	।-
(२२) [illegible]	१)
(२३) [illegible]	॥-
सजिल्द	)
(२४) [illegible]	१)
सजिल्द	१॥
(२५) कथा माला	।-)
(२६) आर्य [illegible] और गृहस्थ धर्म	।-)
(२७) आर्य [illegible] की बाढ़)	=)॥
(२८) आर्य [illegible] शिक्षण शिविर	=)
(२९) [illegible]	२॥)
(३०) [illegible] सजिल्द	१।)
(३१) [illegible] प्रकाश	॥।)
(३२) [illegible]	॥।)
[illegible]	॥)
(३३) [illegible]	॥।)
[illegible]	।-)॥
(३६) [illegible]	१)
(३७) [illegible]	१॥)
(३८) [illegible]	।-)
(३९) [illegible]	।-)
(४०) [illegible] Culture	॥)
(४१) [illegible]	१।)
(४२) [illegible] Arya [illegible]	=)
(४३) [illegible] in India	॥)
(४४) [illegible]	
(४५) [illegible]	१)
[illegible]	॥)
(४६) Lo[illegible] Bound	५)
(४७) The Glory of Vedas	-)॥
(४८) Arya Samaj and Vedic Dharma	॥)
(४९) Commentary on Ishopnishad	।)
(५०) Commentary on Arya Marriage Act	।)
(५१) Light of the Truth Bound	२॥)



[illegible] १९४३ ई० [illegible] २००० सं०	**वार्षिक विवरणाङ्क** सम्पादक— श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति साहित्य भूषण	वार्षिक मूल्य स्वदेश ३) विदेश ७ शि० [illegible]

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वष १८ } जौलाई, १९४३ ई०] ज्येष्ठ २००० [दयानन्दाब्द १२० } अङ्क ५

* वैदिक प्रार्थना *

ओं सना ज्योतिः सना स्वर्विश्वा च सोम सौभगा। अथा नो वस्यमस्कृधि ॥

सामवेद उत्तरार्चिक ७।२।२

शब्दार्थ—(सोम) हे शान्त स्वरूप जगदुत्पादक प्रभो! हमे आप (सना ज्योतिः) शाश्वत-नित्य ज्ञान रूप ज्योति (सना स्वः) नित्य सुख और (विश्वा च सौभगा) सब प्रकार का सौभाग्य प्रदान कीजिये। (अथा) और इस प्रकार (न) हमें (वस्यस) श्रेष्ठ ऐश्वर्य-सम्पन्न आश्रय दाता बनाइये।

विनय—हे परम पिता परमेश्वर! आप अपनी अनन्त शक्ति से सारे जगत् को उत्पन्न करने वाले और शान्ति के देने वाले हैं। हम श्रेष्ठ बनना चाहते हैं इसलिये आप हमे नित्य ज्ञान ज्योति देकर हमारे अज्ञानान्धकार को दूर कीजिये। आप हमें उस सच्चे सुख को प्राप्त कराइये जो सदा रहने वाला हो और हमें आप सब प्रकार से सौभाग्य-शाली—धर्मात्मा तथा उन्नत बनाइये जिससे हम सच्ची लोक सेवा करने में समर्थ हो सकें।

वेदोपदेश—

पुरुषार्थमय भावना

(१) ओं स्रक्त्योऽसि प्रतिसरोऽसि प्रत्यभिचरणोऽसि। आप्नुहि श्रेयासमति समंक्राम ॥
अथर्व २। ११। २

(२) ओं सूरिरसि वर्चोधा असि तनूपानोऽसि। आप्नुहि श्रेयासमति सम क्राम ॥
अथर्व २। ११। ४

(३) ओं शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि। आप्नुहि श्रेयासमति सम क्राम ॥
अथर्व २। ११। ५

शब्दार्थः—(१) हे मनुष्य तू (स्रक्त्य असि) उन्नति शील है (प्रतिसरः असि) तू आगे २ बढ़ने वाला है (प्रति अभिचरण असि) दुष्टता अथवा दुर्गुणों पर आक्रमण करने वाला है। तू (श्रेयासम् आप्नुहि) श्रेष्ठ सज्जनों को प्राप्त कर-उनकी सगति कर और (समम् अति क्राम) अपने वराबर वालों से आगे बढ़ जा।

(२) हे मनुष्य तू (सूरि असि) ज्ञानी है (वर्चोधा असि) तेज को धारण करने वाला है। (तनू पान असि) शरीर की रक्षा करनेवाला है। तू (श्रेयासम्) श्रेष्ठ पुरुषों की संगति कर और (समम् अतिक्राम) बराबर वालों से आगे बढ़जा।

(३) हे मनुष्य तू (शुक्र असि) वीर्यवान् है (भ्राज असि) तू तेजस्वी—चमकने वाला है। (स्वः असि) तू आत्म शक्ति युक्त और सुख युक्त है (ज्योति असि) तू ज्ञान की ज्योति से युक्त है (श्रेयासम् आप्नुहि समम् अति क्राम। श्रेष्ठ सज्जनों को प्राप्त करके उनकी सहायता से अन्य बराबर वालों से आगे बढ़े जा ॥

वेदों के उपदेश अत्यन्त ओजस्वी और स्फूर्तिदायक हैं। वे हमारे अन्दर नवीन दिव्य जीवन का सचार करने वाले हैं। ऊपर जो ३ मन्त्र उद्धृत किये गये हैं उनमे मनुष्य को पुरुषार्थ का बड़ा उत्तम ओजस्वी उपदेश दिया गया है। मनुष्य को सदा उन्नतिशील होना चाहिये। उसे अपने अन्दर उत्तम गुणों को धारण करके और श्रेष्ठ सज्जनों की सङ्गति करके आगे आगे बढ़ते जाना चाहिये। मनुष्य पर सङ्गति का बड़ा प्रभाव होता है इसलिये सदा धार्मिक विद्वान् सज्जनों की ही सङ्गति मे मनुष्य को रहना चाहिये। श्रेष्ठ विद्वानों की सङ्गति से लाभ उठाकर उसे ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि वह अपने सब साथियों से विद्या, कीर्ति, परोपकारादि मे आगे बढ़ जाय। वह अपने मित्रों और साथियों के लिये आदर्श रूप हो सके। उसे अपने को उन्नतिशील, ज्ञानी, तेजस्वी, वीर्यवान् और पराक्रमी बनाना चाहिये। अपने को हीन दीन दुर्बल न समझते हुए परमेश्वर प्रदत्त शक्तियों को अधिक से अधिक विकसित करने का सदा प्रयत्न करना चाहिये। मनुष्य के अन्दर सब दुर्गुणों और दुर्वृत्तियों को दूर करने की शक्ति विद्यमान है उसे ईश्वर

अध्यात्म सुधा

[लेखक—स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, सगृहीता श्री लम्भूराम जी नैष्यक आनन्द आश्रम, लुधियाना ।]

धर्म और बुद्धि का मेल ही मनुष्य जीवन को सफल करने का साधन है। बिना बुद्धि के ज्ञान सिद्ध नहीं होता और ज्ञान बिना धर्म का यथावत् रूप दिखाई देना असम्भव है, किन्तु महान् से महान् ज्ञान धरा ही रह जाता है और प्राय बड़ा ही दुःखदायी ठहरता है यदि धर्म भाव का अकुर हृदय के अन्दर उत्पन्न न हुआ हो (ससार) मे बुद्धि और धर्म का मेल कम देखने में आता है। और इसीलिये यह ससार जो आनन्द धाम होना चाहिये था शोक सागर बन रहा है सासारिक बुद्धि की मदिरा के मतवाले धर्म को तुच्छ और अनावश्यक समझते हैं और दूसरी ओर बुद्धि-विश्वासी भक्त बुद्धि को मुक्ति का बाधक मानते हैं किन्तु दोनों भूल जाते हैं कि दिमाग और दिल ज्ञान और भक्ति अकेले २ किसी काम के नहीं हैं। इन दोनों की सन्धि का ही फल मुक्ति है।

———

(पृष्ठ २०० का शेष)

भक्ति, आत्म ज्ञान आत्म विश्वास तथा सत्सङ्गादि द्वारा विकसित करने की आवश्यकता है। इस प्रकार वेद भगवन् सब मनुष्यों को पुरुषार्थ मय भावना को धारण करके सब प्रकार से उन्नत होने का उपदेश देते हैं जिसके अनुसार आचरण करना सब आर्य नर नारियों का कर्तव्य है।

धर्मदेव वि. वा



भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद की धार्मिक परीक्षाएं

परीक्षाफल घोषित हो गया है और तमाम केन्द्रों को भेज दिया गया है परीक्षार्थियों को अपने २ केन्द्र व्यवस्थापकों से मालूम करना चाहिये।

प्रमाण पत्र

प्रमाण पत्र तैयार हो रहे हैं-शीघ्र तैयार होने पर केन्द्र-व्यवस्थापकों को भेज दिये जावेंगे।

जनवरी सन् १९४३ ई० मे जो परीक्षाएं हुई उनमें निम्न प्रकार परीक्षार्थी सिद्धान्त शास्त्री, सिद्धात भास्कर, सिद्धातरत्न तथा सिद्धान्त सरोज में क्रम से प्रथम-द्वितीय तथा तृतीय उत्तीर्ण हुए।

नाम परीक्षा	प्रथम	द्वितीय	तृतीय
सिद्धान्त शास्त्री	श्री विशुद्धानन्द बदायू	श्री रामगोपाल निढ़ाना	श्री महेन्द्रसिह नागौर
सिद्धान्त भास्कर	श्रीमती चन्द्रवती खानपुर	श्री विशनस्वरूप लश्कर	श्री शिवप्रसाद झा देहरादून मदनलाल अकलेरा
सिद्धान्त रत्न	श्रीमती उमादेवी देहरादून	श्रीमती सुशीलादेवी देहरादून	कुमारी शान्तिदेवी खानपुर (रोहतक)
सिद्धान्त सरोज	श्री सुदर्शन आर्य घटकेश्वर	श्री सत्यनाम सिह 'सत्य' पिपराइच	श्री सत्यव्रत घटकेश्वर

जनवरी सन् १९४३ ई० में जो परीक्षाए हुई उनमें निम्न रूप से परीक्षार्थी सम्मिलित तथा उत्तीर्ण हुए.-

नाम परीक्षा	सम्मिलित हुए	उत्तीर्ण
सिद्धान्त शास्त्री	६०	३४
सिद्धान्त भास्कर	१४०	१२५
सिद्धान्त रत्न	६०९	४५९
सिद्धान्त सरोज	७९४	६१०
	१६०३	१२२७

आर्य वीरों का गीत*

(ले०—पण्डित सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालङ्कार एम ए. एल टी अजमेर)

हम आर्य वीर हैं आर्य वीर, जग में कुछ कर दिखलादेंगे ।
भारत के भाग्य-सरोवर में, आशा के कमल खिलादेंगे ॥१॥

पृथ्वी फटती हो फट जावे, आकाश अगारे बरसावे ।
यदि पर्वत भी पथ मे आवे, ठोकर से उसे उड़ा देंगे ॥२॥

हम वीरों की सन्तान सभी, डरते न किसी से कहीं कभी ।
भारत के सोते सिंहों को, देकर हुंकार जगा देंगे ॥३॥

हम आर्य जाति का कष्ट हरें, निज देश धर्म के हेतु मरें ।
भारत माँ को स्वाधीन करें, अपना बलिदान चढ़ा देंगे ॥४॥

यह ओम् ध्वजा भू मण्डल पर, लहरायेगी जल पर, थल पर ।
वेदों का डंका जा घर घर, फिर से हम वीर बजादेंगे ॥५॥

वह "सूर्य" कभी पश्चिम निकले वह अचल हिमाचल चलेहले ।
पर आर्य वीर व्रत से न टलें, भारत को स्वर्ग बना देंगे ॥६॥

(पृष्ठ २०२ का शेष)

छात्र वृत्तियां

परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं मे सम्मिलित होकर जो परीक्षार्थी सिद्धान्त भास्कर सिद्धान्त रत्न तथा सिद्धान्त सरोज मे सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए—उनको छात्र वृत्तिया देने का विचार है अत वैदिक धर्म प्रेमी दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि निम्न प्रकार छात्र वृत्तिया सिद्धान्त भास्कर १०) मासिक सिद्धान्त रत्न ८) मासिक और सिद्धान्त सरोज ५) मासिक, एक वर्ष के लिये देकर परीक्षा समिति का उत्साह बढ़ावेंगे -छात्र-वृत्तिया दानी महानुभावों के नाम से घोषित की जा सकेंगी—यदि कोई दानी महाशय इकट्ठी ही सब छात्र वृत्तिया देकर अनुगृहीत करें तो बहुत ही अच्छा हो। आशा है कि वैदिक धर्म प्रेमी दानी महोदय इस ओर ध्यान देंगे।

निवेदक—

परीक्षा मन्त्री—आर्य कुमार परिषद्—देहली।

[हम परिषद् की परीक्षाओं में उत्तमाक लेकर उत्तीर्ण छात्र छात्राओं को सार्वदेशिक सभा की ओर से हार्दिक बधाई देते हैं—सम्पादक सा०दे०]

* डी ए वी. कालेज अजमेर मे आर्य सार्वदेशिक सभा की ओर से खुलने वाले "आर्य वीर दल शिक्षण कैम्प" के उद्घाटनोत्सव पर निर्मित तथा पठित।

आर्य कुमार क्या है ?

(ले०—श्री पण्डित सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालङ्कार एम ए एल टी
प्रधान राजस्थान आर्यकुमार परिषद् अजमेर)

(१)

अहो अरुण के आगम के सम नव प्रकाश करने हारे ।
अविरत अनुपम अतुल उषा में, भव्य प्रभा भरने हारे ॥
मंजु मरीची स समाज सर में सुखमा धरने हारे ।
मानवहृत् सरसिज विकसित कर शोक निशा हरने हारे ॥

(२)

अहो दिव्य स्वर्गीय विटप के, कलित कुसुम क्या टूट पडे ?
अथवा सुधा सिन्धु सीपी से, मुक्तामणिगण फूट पडे ?
अथवा प्रखर प्रचण्ड प्रभाकर के प्रस्फोटित खण्ड बडे ?
चारु चान्द्रमस चमत्कार के काम्य कलेवर कान्ति जडे ?

(३)

भारत-भू भ्रमणार्थ अवतरित, क्या सुरगण के बालक हो ?
या नचिकेता ऋषि कुमार हो, औपनिषद् उद्दालक हो ?
नवस्फूर्ति हो, मजुमूर्ति हो, प्रेम पुञ्ज-प्रतिपालक हो ?
चक्र व्यूह ससार समर के, सौभद्रक सञ्चालक हो ॥

(४)

अथवा ज्योतिर्मय ज्वाला हो, पातक-पुञ्ज प्रजारक हो ?
उग्रक्रान्ति की चिनगारी क्या, अनय—ओघ सहारक हो ॥
वैदिक वायु विश्व में बनकर, सुख सुरभी सचारक हो ?
अथवा प्रभु-प्रेमाप्लावन हो, पावन पुण्य—प्रसारक हो ?

(५)

अहो ! अतुल अवतार ओज के, निष्ठा के नट नागर हो ।
आशा के आगार आप वा सत्साहस के सागर हो ॥
निर्भयता की निश्चल निधि हो, वा उमग के आकर हो ?
जीवित ज्वाला मुखी जोश के, वा प्रस्फूर्ति प्रभाकर हो ?

(शेष पृष्ठ २०६ पर)

महिला-जगत्

कुमारी सरस्वती का अकाल वियोग

[लेखक—श्री प० हारानन्द जी शास्त्री पुरोहित आर्य समाज चकवाल]

वैसे तो ससार मे जन्मे मरे अनेक ।
सुयश मन्दिर में गये दश सहस्र मे एक ॥

श्री प० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति की सुपुत्री विदुषी सरस्वती देवी का असामयिक दु ख प्रद मृत्यु समाचार सूचित करते हुए हार्दिक वेदना होती है। सरस्वती देवी आयु लगभग दश वर्ष" यहा हिन्दी रत्न का परीक्षा देन के लिये अपनी माननीया मासी श्रीमती कौशल्या देवी के साथ २० जनवरी १९४३ को हरिद्वार से यहा चकवाल आई। इन्हीं मासी जी का मातृवत् स्नेह ही था जिसने दश वर्षीया बालिका का स्वगृह तक स्मरण न होने दिया। यह पुत्री अपने सद् गुणों, सदाचरणों के कारण यथार्थ मे ही सरस्वती देवी थी। मैंने बहुत लडकिया पढ़ाइ हैं परन्तु जो गुण इन दश वर्ष की छोटी सी कन्या में मैंने देखे उनसे मैं यही अनुमान लगाया करता था कि यदि प्रभु ने इसे दीर्घायु प्रदान की तो समय आने पर यह एक परमोत्कृष्ट विदुषी वीरा बना प्रमाणित होगी। इसकी भाषा शैली, वाक् चातुर्य भावसौष्ठव और प्रभावोत्पादक पत्र प्रस्ताव वाग्धारादि पढ़कर मै बड़ा आश्चर्य चकित होता था। इसकी कई एक अनोखी सूझ की बातें सुनकर इसके पूर्व जन्मकृत उत्तम सस्कार तथा माता पिता का आदर्शमय जीवन सामन आ जाता था। यही इस देवी के उत्तम गुण थे जिनके कारण मैं ऐसी सुपुत्री का पढ़ाते हुए गौरव अनुभव करता था। जहा यह पढ़ाई मे इतनी दक्ष थी वहा धार्मिक नित्य कर्म आदि करने मे भी बड़ा दृढ़ थी दोनों काल सन्ध्यापासनादि करन मे शायद ही कभी इसने नागा किया हो। प्रत्युत शाम को गृह मे छोटे बडे सबको प्रेम से बुलाकर बड़ी श्रद्धा से सन्ध्या करती और गायत्री भगवती का जाप करती इसी प्रकार दैनिक कर्तव्य का पालन करते हुए ४ मई १९४३ को हिन्दी रत्न परीक्षा मे बैठी चार पेपर सफलता पूर्वक किये भी परन्तु पाचवें पेपर वाले दिन इसे ज्वर हो गया। ज्वर की दशा म भी दोनों पेपर सोत्साह लिख तो आई परन्तु वही ज्वर बाद मे इतना बढ़ा १०५, १०६, १०७ डिगरी तक चला जाता था। बड़ी चिन्ता हुई, यहा के त्याग मूर्ति मास्टर ज्ञानचन्द्र जी प्रधान डी० ए० वी० हाई स्कूल के उत्तम प्रभाव से उत्तम से उत्तम डाक्टरों को बुलाया गया परन्तु राग बढ़ता गया ज्यों २ दवा की। शोचनीय अवस्था देखकर उसकी माता जी को तार दी गई। परन्तु शाक ! मूर्छित होने के कारण दो शब्द भी पुत्री माता का न कह सकी

इतने भयङ्कर रोग से आक्रान्त होने पर भी देवी ने हाय तक न की प्रस्तुत उच्च स्वर से ओ३म् ओ३म् जपते हुए प्रभु की पवित्र गोद में सर्वदा के लिये सो गई। इस दर्द भरे दृश्य को देख कर जो व्यक्ति यहा उपस्थित थे सब की आँखों मे अश्रु धारा थी। इस पुत्री की विदुषी, ईश्वर पर अटल विश्वास रखने वाली सच्ची माता श्रीमती विद्यावती देवी जी ने इस कठिन समय मे बडे भारी धैर्य का परिचय दिया। परमेश्वर की प्यारी अमानत को प्रभु के अर्पण करते हुए जरा भी मन मैला न होने दिया बल्कि सब का स्वयम् मौन करा कर उच्च स्वर से ओ३म् का जाप किया। प्रातः काल होते ही सरस्वती देवी का मृत्यु समाचार जगल की आग की तरह समाजिक सर्कल में पहुँच गया। सब सदस्यों ने इस पुत्री की अनवसर मृत्यु को देखकर जहा चार आसू बहाए वहा इस छोटी आयु में इसका अपूर्व बौद्धिक विकास देखकर आश्चर्य चकित भी हुए। अस्तु, प्रभु की इच्छा बलवती जानकर उसके आगे यही प्रार्थना है कि वह इस स्वर्गीया देवी की आत्मा को जहा सद्गति और मुक्ति प्रदान करे वहा उस आदर्श परिवार मे जहा इसने जन्म लेकर यह उच्च विचार प्राप्त किये थे इस दुघटना जन्य दुःख को सहन करने की शक्ति दे।

नोट—सरस्वती के सम्पूर्ण गुणों का वर्णन करना मेरी शक्ति से बाहिर की बात है।

(पृष्ठ २०४ का शेष)

(६)

क्या उत्साह अनल भट्टी के तुम जलते अगारे हो?
अथवा मृदुता—मन्दाकिनि के, तुम कमनीय कगारे हो?
अथवा सक्षोभित सागर की, लहरों के बम्भारे हो?
वा प्रचण्डतम वायु बवडर, के अखड भडारे हो?

(७)

वृद्धजनों की आशा पूरित, आखों के तुम तारे हो?
दीन दुखी असहाय अनाथों के सर्वस्व सहारे हो।।
तमसावृत हृदयों के अथवा, अति उज्ज्वल उजियारे हो?
वैदिक बोधवारिधारा के अथवा कूल किनारे हो?

(८)

अथवा आर्य जाति की जर्जर, नौका के पतवारे हो?
अथवा देश वाटिका के तुम, सजग सुभट रखवारे हो?
आरत भारत माता के वा, दुख हर दिव्य दुलारे हो?
तुम्हीं बताओ, आर्यकुमारो। क्या हो? किसके प्यारे हो?

—"सूर्य"

स्व० सरस्वती देवी की अन्तिम प्रार्थना तथा भजन

"जिस महा प्रभु ने अपने महा बल से ससार को रचा है उसके आगे हम सब बहनें सप्रेम प्रणाम करती हैं। उसका ध्यान करती हैं और पूजा करने मे अपना कल्याण जानती हैं। प्रभु हमे ऐसा वर दो जिससे देह तथा मन का बल धारण करके हम सुख पूवक जीवें। हे प्रभु मेरी इस तुच्छ प्राथना को स्वीकार करके देश का उद्धार कीजिये।"

(देहावसान से कुछ दिन पूर्व लिखित)

हे परम पिता हे परमेश्वर तेरी महिमा कैसी अपार है।
देखो तो कैसी सुन्दर नदिया झीलें और पहाड़ हैं॥

कहीं तो खेती हरियाती है और अपनी शोभा दरसाती है।
और कहीं वृक्ष हैं खड़े हुए, सब गुण तेरे ही गाते हैं॥

तेरे ही बल पै प्यारे, टिके हैं सूर्य चन्द्र तारे।
ये सब रचे हैं तुम्हारे, तेरी ही याद दिलाते हैं॥

ओ३म् नाम सबसे बड़ा, उससे बड़ा न कुच्छ।
दुनिया के ऐश्वर्य सब, उसके सामने तुच्छ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

का

पैंतीसवां वार्षिक वृत्तान्त

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा में गत वर्ष की नाई १४ आर्य प्रतिनिधि सभायें और ७ आर्य समाजें सम्मिलित रहीं जिनके प्रतिनिधियों की संख्या ५२ है। इसके अतिरिक्त सभा के ६ प्रतिष्ठित और ६ आजीवन कुल १२ सदस्य और हैं। इस प्रकार यह सभा वर्ष के अन्त पर ६४ सदस्यों का समुदाय थी। देखें परिशिष्ट ६।

अधिकारियों में परिवर्तन।

सभा के गत वर्ष और इस वर्ष के अधिकारियों की तालिका निम्न प्रकार है।

सभा के अधिकारी

गत वर्ष

प्रधान—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज

उपप्रधान—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

कार्यकर्ता प्रधान—श्री प० गंगाप्रसाद जी, रिटायर्ड चीफ जज

मन्त्री—श्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए०

कोषाध्यक्ष—श्री ला० नारायण दत्त जी

पुस्तकाध्यक्ष—श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी

इस वर्ष

प्रधान—श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त

उपप्रधान—(१) श्री प० गंगाप्रसाद जी चीफ जज रिटा० (२) श्री प० विनायक राव जी विद्यालंकार (३) श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार

मन्त्री—श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

कोषाध्यक्ष—श्री ला० नारायण दत्त जी

पुस्तकाध्यक्ष—श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी

श्री माननीय घनश्याम सिंह जी के इस वर्ष प्रधान पद को अस्वीकार कर देने पर श्री प० गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज को ५।७।१९५२ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार प्रधान का कार्य करने का अधिकार दिया गया और ता० १५।१०५२ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार वे नियमितरूप से सभा के प्रधान निर्वाचित हुए।

अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में आर्य जनता को निर्देश

गत वर्ष सभा की साधारण सभा ने सभा और उसके द्वारा आर्य जनता के सम्मुख निम्न कार्यक्रम निर्धारित करके उपस्थित किया था।

( ) जहां आक्रमण की आशंका हो वहां के स्त्रियों बच्चों और परिवारों को सुरक्षित रखने के लिये अस्थिर कैम्प लगाये जायें।

(२) ऐसे लोगों की धन सम्पत्ति को सुरक्षित करने के लिये उचित उपाय किये जाय।

(३) आर्य वीर दल स्थापित करने के लिये शिक्षक नियत किये जायें और वीर दल स्थापित किये जायें।

(४) जनता में यह उत्साह उत्पन्न किया जाये कि पुरुष अपने २ स्थान में रह कर स्थिति का सामना करें।

रक्षा कार्य

सभा ने सं० १ की पूर्ति के लिये गाजियाबाद की अपनी भूमि में ५००० रु० की लागत के रक्षा गृह बनाने का निश्चय किया था। जल का प्रबन्ध न होने से इमारत का कार्य अब तक प्रारम्भ न हो सका, इस बार बजट में एक कुआ बनाने की स्वीकृति मांगी गई है। कुआ बन जाने पर शीघ्र ही वहां रक्षागृह बनाये जायेंगे।

गत वर्ष ब्रह्मा, मलाया सिंगापुर इत्यादि के शरणार्थियों की रक्षा के लिये इस सभा ने भारत सरकार को निमन्त्रण दिया था और वह स्वीकृत हो गया था। इस योजना के अनुसार पंजाब सरकार ने बंगाल की सरकार को १२५ हिंदू अनाथ (८० लड़के ४५ लड़कियां) कलकत्ता अनाथालय से फीरोजपुर आर्य अनाथालय में और कलकत्ते के निराश्रित बच्चों के गृह Calcutta Homeless Boys Home से ३१ लड़के केन्द्रीय अनाथालय रावी रोड लाहौर को भेजने की प्रेरणा की परन्तु बाद में कलकत्ता के निराश्रित बच्चों के गृह को खाली किये जाने का निश्चय बंगाल सरकार द्वारा रद्द कर दिया गया। मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी ने देश में रक्षा कार्य बड़ी उत्तमता से किया है। शरणार्थियों की भावी रक्षा और शिक्षा आदि की समुचित व्यवस्था के विषय में उससे पर्याप्त पत्र व्यवहार हुआ और हो रहा है। एक सुझाव यह भी है कि यह सभा किसी केन्द्रीय स्थान में उन शरणार्थियों को रख कर सीधे अपनी देख रेख में उनकी रक्षा और शिक्षादि का प्रबन्ध करे। सभा इस प्रस्ताव पर गम्भीरता से विचार कर रही है।

इसी प्रकार ब्रह्मा और मलाया के लाशा, मेमियो, मांडले, सिंगापुर, रंगून, इत्यादि आर्य समाजों के भवन और सम्पत्ति के विषय में आवश्यक सूचनायें प्राप्त करने का यत्न किया जा रहा है।

आर्य वीर दल संगठन।

आर्य वीर दलों के संगठन का कार्य सभा की प्रगतियों का गत कई वर्षों से मुख्य अंग रहा है। परन्तु यह कार्य जिस गति से होना चाहिये था नहीं हो पाया था। आर्य जनता अब इस दिशा में पग बढ़ाने के लिये उद्यत है। इस कार्य के शिक्षण के लिये हमारे यहां शिक्षकों का अभाव खटकने वाला था। सभा ने २ या ३ वर्ष पूर्व शिक्षण शिविर खोल कर इस अभाव की पूर्ति का यत्न किया था। इस वर्ष तुगलकाबाद में गत जुलाई अगस्त मास में एक शिविर खोल कर बंगाल, बिहार, संयुक्त प्रांत, मद्रास, आदि प्रांतों के शिक्षक तैयार किये गये। इनमें से प्रायः प्रत्येक

शिक्षक अपने अपने प्रांतों में सगठन कार्य कर रहा है। सभा ने २ स्थिर शिक्षक आर्य वीर दल के सगठन और शिक्षण कार्य के लिये नियत किये हुए हैं। इसके अतिरिक्त देहली, नरेला और पानीपत मे सफल शिक्षण शिविर सचालित हुए जिनमे लगभग ८० शिक्षक तैयार किये गये।

समाजे और आर्य वीर दल

आय वीर दलों के सगठन काय मे इन दलों और आय समाजों के पारस्परिक सम्बन्धों का प्रश्न बडे महत्व का है। सभा ने पहले जो विधान बीर दलों के सगठन के लिये निर्धारित किया था उसमें आर्य वीर दल को स्थानीय आर्य समाज की एक शाखा रूप में रखा था परन्तु बाद मे अनुभव के आधार पर इस कार्य को समाजों से पृथक् रखा जाना आवश्यक समझकर नये विधान का निर्माण किया गया। इस नये परिवर्तन के अनुसार आय वीर दलों का सगठन कार्य अच्छी गति से चल रहा है। यदि कहीं पारस्परिक सघर्ष उपस्थित हो जाता है तो उसे शान्ति से दूर करने का उपाय कर दिया जाता है। इस समय सभा कार्यालय म प्राप्त सूचनानुसार १०३ आर्य वीर दल देश के विभिन्न भागों मे काय कर रहे हैं। १९४२ के मध्य तक आय समाजों द्वारा प्राप्त सूची क अनुसार ४४५५ आर्य वीर थे। इस समय यह सख्या बहुत बढ गई है। ठीक ४ सख्याओं का सकलन हो रहा है

आर्य वीर दल और अन्य सेवा दल।

आय वीर दल के सगठन कार्य की गति के बेगवती होने के साथ साथ यह प्रश्न भी मुख्य-रूप से हमारे सामने उपस्थित होने लग गया है कि जो आय पुरुष आर्य वीर दल के अतिरिक्त अन्य सेवा वा राष्ट्रीय दलों में काम करते हैं उनका आर्य वीर दल के प्रति क्या कर्त्तव्य है। इस विषय मे सभा का स्पष्ट मत यह है कि आर्य पुरुषों और आर्य समाजों का सबसे पहले आर्य वीर दलों को स्थान देना चाहिये। सभा आर्य वीर दल का देश व्यापी सगठन करने का निश्चय कर चुकी है सभा की इच्छा है कि कोई ग्राम या नगर ऐसा न होना चाहिये जहा आर्य समाज न हो और कोई आय समाज ऐसा न होना चाहिये जहा सुदृढ आय वीर दल न हो। इस योजना की सफलता तभी सम्भव है जब आर्य पुरुष और समाजे सब से पहले वीर दल के लिये सोचें और करें। सभा हिन्दू जाति को सगठित करने वाले किसी भी दल से विरोध नहीं करती परन्तु जहा आर्य वीर दल तथा अन्य सेवा दल में से एक का चुनाव करना होगा वहा आर्य वीर दल को प्रमुखता देनी होगी। इस सम्बन्ध में सभा के मन्त्री की ओर से जो वक्तव्य प्रकाशित किया गया है वह परिशिष्ट १ मे दिया गया है।

आर्य समाज और राष्ट्रीय आन्दोलन।

गत अगस्त मास में राष्ट्रीय महासभा द्वारा सत्याग्रह का प्रस्ताव पास करने और सरकारी दमन चक्र के तेजी के साथ चलने से देश मे जो दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति उत्पन्न हुई थी और जिसका अभी तक अन्त नहीं हुआ है उसके विषय में इस सभा को आर्यों और आर्य समाजों के मार्ग प्रदर्शन के लिये विशेष रूप से अपनी स्थिति स्पष्ट करनी पड़ी। इस सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा

की तत्काल स्थापना का भी आय समाज के कुछ क्षेत्रों से प्रबल आग्रह हुआ। राजाय सभा के उद्देश्यों और मन्तव्यों के विषय मे अभी तक कोई अन्तिम निश्चय नहीं हो सका है। यह कार्य रिपोर्ट के लिये एक उप सभा के सुपुर्द है। इस सभा के निर्माण के सम्बन्ध मे मुख्य प्रश्न यह है कि आय समाज देश की वतमान राज नीति, समस्त समार की राजनिति और अपने राजनैतिक आदर्शों क सामजस्य पूवक किस प्रकार इस कार्य को सम्पन्न कर सकता है क्योंकि उसका ध्येय एक देशी नहीं वरन् सार्वभौमिक है। देश की वतमान स्थिति के विषय मे सभा क मत को सभा के निश्चय द्वारा ही प्रस्तुत किया जाना अच्छा है, अतः हम सभा के निश्चय का अविकल रूप मे यहा उद्धृत करते हैं —

'इस समय भारतवासियों के हृदय" मे स्व तन्त्रता की लहर बडे वेग के साथ चल रही है इस उचित और स्वाभाविक माग का ब्रिटिश सरकार ने तिरस्कार किया। इसलिये महात्मा गाँधी और काग्रेस ने सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह का निश्चय किया। भारत सरकार ने पूज्य महात्मा गाँधी और काग्रेस के अन्य नेताओं को वन्दी करके जेल मे भेजा। इस कार्य से देश भर मे घोर अशान्ति फैल गई। जगह २ पर उपद्रव हुए जिनमे रेल, तार, टेलीफोन, डाक, पुलिस व अन्य सरकारी दफ्तरों को हानि भी पहुँचाई गई। इसके विरुद्ध सरकार की दमन नीति जारी है। अनेक स्थानों पर गोली चली, बहुत से लोग मारे गये परन्तु शान्ति स्थापित नहीं हुई। अभी भी जगह २ उपद्रव होते रहते है। ऐसी अवस्था में बहुत से लोग प्रश्न करते हैं कि वर्तमान परिस्थिति मे आर्यों का क्या कर्तव्य है। इसलिये सभा अपना मत प्रकट करना आवश्यक समझती है।

१ आर्य समाज एक धार्मिक संस्था है परन्तु वेद और शास्त्रों के अनुसार धर्म का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। वैशेषिक दर्शन मे कहा, है कि "यतो ऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्म" अर्थात् जिस से अभ्युदय वा सासारिक उन्नति और मोक्ष दोनों की सिद्धि हो वह धर्म है। स्वराज्य और स्वतन्त्रता की प्राप्ति अभ्युदय के अन्तगत होने से धर्म का एक अग है। इसलिये प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है कि वह स्वराज्य प्राप्ति के लिये यत्नवान् हो। यह सिद्धान्त स्पष्ट और निर्विवाद है।

२ स्वराज्य और स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये क्या उपाय और साधन होने चाहिएँ इसमे विचार भेद सम्भव है। आर्यसमाज की आरम्भ काल से यह निश्चित नीति रही है कि वह सामूहिक रूप से क्रियात्मक राजनीति मे भाग न लेवे और राजनैतिक दलों से पृथक् रहे। परन्तु उसके सभासदों को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता है कि वे व्यक्तिगत रूप से चाहे जिस राजनैतिक संस्था वा दल मे भाग लेवें।

३ इस समय सरकार की ओर से जो दमन नीति जारी है और जिसके फल स्वरूप वर्तमान खेद जनक और अवाञ्छनीय उपद्रव हुए और हो रहे हैं वह इस सभा की सम्मति मे अवश्य निन्दनीय है। भारत के सभी नेताओं की माग एक स्वर से यही है कि ब्रिटिश सरकार को शासन के पूर्ण अधिकार भारतीयों को दे देने चाहिये। इस सभा की सम्मति में यही मार्ग

न्यायोचित है और इसी से वर्तमान अशान्ति दूर होकर भारतीय जनता पूर्ण उमाह के साथ स्वदेश रक्षा के लिये युद्ध में भाग ले सकती है।

५ यद्यपि एक धार्मिक सस्था होने के कारण राजनैतिक विषयों पर मत प्रकाशित करना हमारी साधारण नीति के अनुकूल नहीं है तथापि देश की विशेष परिस्थिति को दृष्टि में रख कर यह वक्तव्य सरकार तथा जनता दोनों के कल्याण के अभिप्राय से प्रकाशित किया जाता है।

बंगाल तूफान पीडितों की सहायता तथा सेवा कार्य।

बगाल के पूर्वीय भाग मिदनापुर जिले में जो दवी आपत्ति गत अक्टूबर मास में तूफान और बाढ़ के रूप में आइ थी वह बड़ी दु खद और विनाशकारिणी थी। सभा की प्रेरणा पर आर्य प्रतिनिधि सभा बगाल ने सेवा कार्य के लिये कलकत्ता मे एक आर्य सेवा समिति का निर्माण करके सेवा कार्य प्रारम्भ किया और बाद में अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति के स० प्रधान सेनापति श्री ओंप्रकाश जी त्यागी आर्य वीरों के एक जत्थे के साथ पीडित क्षेत्र मे पहुच गये और उनकी दख रेख मे सवा कार्य हुआ। सभा को यह प्रकट करते हुये प्रसन्नता है कि सगठित रूप मे कम से कम व्यय मे अधिक से अधिक सेवा कार्य हुआ। कार्य का मुख्य क्षेत्र मेदिनीपुर के तमलुक डिवीजन के ४२ ग्राम रहे। ३६ कार्यकर्ताओं ने सहायता कार्य में विशेष भाग लिया। २० जनवरी तक ८ १३॥)। का चावल और ४००० रु० का हेशियन बाटा गया। ४५००रु० के वस्त्र जिन में धोतियां, साड़ियां, कमीजें, जम्पर कम्बल चादरें आदि सम्मिलित थे बाटे गये। वहा सहायता और सेवा कार्य की अभी बड़ी आवश्यकता है अत आर्य प्रतिनिधि सभा बँगाल न उक्त सेवा समिति का अभी भग नहीं किया है। निराश्रित स्त्रियों और बच्चों के शिक्षण और रक्षण का स्थायी कार्य प्राय आर्य समाज ही को करना हात है अन्य सबा समितियां प्राय तात्कालिक रक्षा और सेवा करके अपने कर्तव्य की इति श्री समझ बैठती हैं। इसलिये अभी वहा रक्षा कार्य की आवश्यकता बनी हुई है। इस असाधारण महगाई के युग मे भी इस पुण्य कार्य में उदार दानी अपनी सहायता भेज कर हमारे कार्य को सरल बना रहे हैं, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है।

सभा पुस्तकालय

एक अच्छे वैदिक पुस्तकालय की स्थापना सभा का एक उद्देश्य है। गत वर्षों म इस उद्देश्य क पूर्त्यर्थ यत्न ता हुआ परन्तु वह प्रारम्भिक यत्न ही कहा जा सकता है। गत दो वर्षों से सभा ने अपने मुख्य कार्यालय श्री श्रद्धानन्द बलिदान भवन मे एक अच्छे पुस्तकालय की कमी का विशेष रूप से अनुभव करके इसकी पूर्ति के लिये अपने परिमित साधनों के अनुसार पूरा पूरा यत्न प्रारम्भ किया हुआ है। सभा के वर्तमान सहायक मन्त्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति भी इस कार्य के प्रति विशेष रूप से यत्नवान् हैं। अब यह पुस्तकालय इस स्थिति में पहुँचा हुआ

समझा जा सकता है कि कोई भी वैदिक विद्वान् स्वाध्याय और अनुसधान के लिये यहा बैठने का विचार कर सकता है। हमारा यत्न है कि यह पुस्तकालय शीघ्र से शीघ्र सभा के गौरव के अनुरूप रूप धारण करके सभा की उल्लेखनीय वस्तु बन जायें। इस समय वैदिक साहित्य तथा अन्यान्य विषयों की लगभग ८०० पुस्तकें सभा पुस्तकालय मे विद्यमान हैं। इस कार्य में आर्य समाजों, आर्य महानुभावों, प्रान्तीय सभाओं और आर्य पुस्तक प्रकाशकों का भी हमें सहयोग मिल रहा है सभा के पुस्तकाध्यक्ष और प्रसिद्ध स्वाध्यायशील आर्य श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी ने इस वर्ष ५० रु० के मूल्य की २ अल्मारिया अपने व्यय पर पुस्तकालय का प्रदान की है। उनसे तथा अन्य विद्याप्रेमी और सम्पन्न आर्य नर नारियों से हमें पर्याप्त सहायता की आशा है

आर्य समाज क्या है और उसने क्या किया ?

हम बहुत दिनों से ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता अनुभव कर रहे थे जिसमें आर्य समाज और उसके कार्यों का सुयोग्य महानुभावों द्वारा लिखे गये प्रामाणिक निबन्धों के रूप में सॉगोपाग वर्णन हो। हमे यह प्रकट करते हुए प्रसन्नता है कि सभा ने इस ग्रन्थ का सकलन और प्रकाशन स्वीकार कर लिया है। ग्रन्थ के लिये लेख लिखाये जा रहे हैं। अनेक लेख सभा कार्यालय में प्राप्त भी हो चुके हैं। जिन विद्वानों के लेख प्राप्त हो गये हैं तथा जिनकी प्रतिज्ञायें प्राप्त हो गई हैं उनकी सूची निम्नलिखित है। आशा है अन्य विषयों पर लेखों का सग्रह भी शीघ्र ही हो जायेगा।

अनुमति प्राप्त	लेख प्राप्त	लेख का विषय	लेखक
	,,	१ वैदिक धर्म का व्यापक रूप	श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
		२. ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव	
	,,	३ आर्य समाज की स्थापना तथा उसके नियमोपनियम।	श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए
	,,	४ ऋषि दयानन्द	श्री अरविन्द, साधुवास्वानी इत्यादि
अनुमति	,,	५ आर्य समाज के इतिहास पर एक दृष्टि	श्री महात्मा नारायण स्वामी जी
	,,	६ आर्य समाज के धार्मिक और दार्शनिक सिद्धान्त	श्री गगाप्रसाद जी उपाध्याय
अनुमति	,,	७ आर्य समाज और समाज सुधार	श्री पं० कृष्णचन्द्र जी विद्यालकार
	,,	८. शिक्षा प्रचार	श्री प्रो० महेन्द्रप्रतापजी शास्त्री
	,,	९ गुरुकुल शिक्षा प्रणाली।	श्री प० देवराज जी विद्यावाचस्पति

लेख प्राप्त	लेख का विषय	लेखक
,,	१० देश देशान्तर मे वैदिक धर्म प्रचार	श्री भवानीदयालजी सन्यासी तथा श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी।
,,	११ पुस्तक प्रकाशन तथा वैदिक पुस्तकालय।	
,,	१२ वेद भाष्य तथा वेद विषयक अन्य साहित्य	श्री प० चन्द्रकान्त जी वेदवाचस्पति
,	१३ राष्ट्र भाषा हिन्दी प्रचार	श्री प० रामनारायण जी मिश्र।
,,	१४ राष्ट्रीय जागृति मे आर्य समाज को देन	श्री प० सत्यदेव जी विद्यालंकार
,	१५ संस्कृत प्रचार	श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र शास्त्री जी
,,	१६ युद्ध के पश्चात् दुनिया	श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
,,	१७ महर्षि दयानन्द के आलोचक	श्री प० विश्वप्रकाशजी बी ए एल एल बी
,,	१८ आर्य समाज के आलोचक	श्री डा० सत्यप्रकाश जी डी० एस० सी०
,	१९ आर्य समाज मे बलिदान की भावना	श्री प० प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति
,,	२० हैदराबाद सत्याग्रह	श्री प० ज्ञानचन्द्र जी बी० ए०
,,	२१ त्रैतवाद	श्री प० वीरेन्द्रजी विद्यावाचस्पति एम०ए०
,,	२२ वर्ण व्यवस्था और साम्यवाद	श्री प० गंगाप्रसाद जी एम० ए०
,,	२३. स्त्री शिक्षा और नारी उद्धार	श्रीमती चन्द्रावती जी एम० ए० बी० टी०
,,	२४. दलितोद्धार	श्री डा० ज्ञानचन्द्र जी ठेकेदार
,,	२५ क्षात्रधर्म की जागृति	श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति
,,	२६ अनाथ संरक्षण, अकाल, बाढ आदि के समय सेवा तथा अन्य लोकोपकारी कार्य	श्री प० भीमसेन जी विद्यालंकार
,,	२७. आर्य समाज और शुद्धि	श्री प० ज्ञानचन्द्र जी ठेकेदार
,,	२८ आर्य समाज और आर्थिक व्यवस्था	श्री प० हरिश्चन्द्र जी विद्यालंकार
,,	२९ वैदिक धर्म और मतमतान्तर	श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
,	३० आर्यावर्त की अखण्डता	श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त
,	३१ आर्य समाज और जन गणना	

हैदराबाद राज्य और दक्षिण प्रचार

सभा ने हैदराबाद राज्य मे रचनात्मक कार्य का जो त्रैवार्षिक कार्य क्रम बनाया था वह इस वर्ष के मध्य में समाप्त हो चुका था और आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद ने नियमबद्ध प्रचार की उत्तरदायिता से गत वर्ष ही इस सभा को मुक्त कर दिया था परन्तु उस सभा पर सहसा ही समस्त आर्थिक भार डालना उचित न समझ कर

इस सभा ने ३०० रु० मासिक की सहायता प्रचारार्थ और ८० रु० मासिक की सहायता केशवार्य हाई स्कूल की सहायतार्थ कुल ३८० रु० मासिक की सहायता देना स्वीकार कर लिया था। यह सहायता नियमपूर्वक उक्त सभा को दी जाती रही है। हैदराबाद के शहीदों और बन्दियों के परिवार को दी जाने वाली सहायता पृथक् है और वह नियम से सभा कार्यालय से दी जा रही है और भविष्य में भी दी जाती रहेगी। प्रचारार्थ भी इस सभा के आर्थिक साधनों के अनुसार सहायता देने का यत्न किया जायेगा।

इस कार्य क्रम के अनुसार २ कार्य अभी तक सभा द्वारा किये जाने शेष थे। एक तो शोलापुर में आर्य समाज मन्दिर के रूप में शहीदों के केन्द्रीय स्मारक का निर्माण और दूसरा हैदराबाद सत्याग्रह के इतिहास का प्रकाशन। प्रसन्नता है कि इस वर्ष इस सभा के उप प्रधान श्री प० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय के उद्योग से शोलापुर में स्मारक के लिये सभा के व्यय पर ६००० रु० में भूमि क्रय कर ली गई है अब वहां शीघ्र स्मारक निर्मित हो जायगा। सभा ने इस कार्यार्थ १५ ०० रु० स्वीकार किया हुआ है। हैदराबाद सत्याग्रह का इतिहास भी श्री प० सत्यदेव जी विद्यालंकार द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

शहीदों की स्मृति में आर्य समाजों और आर्य संस्थाओं में पीतल की पट्टिकायें रखे जाने का क्रम अभी तक जारी है। इस वर्ष समाजों में ६ पट्टिकायें गई। अब तक ५६ पट्टिकायें रखी जा चुकी हैं।

इस समय ६६ रु० मासिक की हैदराबाद राज्य तथा बाहर के शहीदों और बन्दियों के परिवारों को सभा द्वारा सहायता दी जा रही है जिनमें से बाहर के शहीदों को २१ रु० मासिक सहायता दी जाती है। इस वर्ष ६८५ रु० सहायता दी गई है। सहायता पाने वाले परिवारों की सूची मय सहायता राशि के पृथक् है। (का० २)

हैदराबाद राज्य के प्रचार का प्रबन्ध सीधा आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के अधीन है और वही इस प्रचार कार्य का विवरण प्रकाशित करती है। इस वर्ष हैदराबाद राज्य की १६४१ की जनगणना के अंक उल्लेखनीय हैं। सरकार जनगणना के अनुसार जिसके ठीक होने के विरुद्ध बहुत सी शिकायतें मिली हैं वहां के आर्यों की जनगणना ४०६०० है। सन् १६३१ की जनगणना के अनुसार ये आंकड़े ३७०० थे। इसका अर्थ यह है कि १६४१ में आर्यों की संख्या १६३१ की अपेक्षा ३६२०० बढ़ी है। यद्यपि आर्यों की वहां भी संख्या ६०००० से ऊपर है।

हैदराबाद राज्य में आर्य प्रतिनिधि सभा के अधीन ४४ उपदेशक प्रचार कार्य करते रहे हैं। इस समय राज्य में २१५ आर्य समाजें हैं और वे सब प्रतिनिधि सभा के साथ संयोजित हैं।

केशवार्य हाई स्कूल में इस समय १० कक्षायें हैं जिनमें २२७ विद्यार्थी हैं प्राइमरी कक्षाओं में ७७ तथा सैकंडरी में १३० विद्यार्थी हैं। प्राइमरी कक्षाओं में शिक्षा का माध्यम हिन्दी और सैकंडरी में उर्दू और अंग्रेजी है। स्कूल का अपना भवन बन गया है और स्कूल उसी में चला गया है।

स्कूल में अपना पुस्तकालय है जिस में ५७६ पुस्तकें हैं। स्कूल में १४ अध्यापक हैं। स्कूल के हैड मास्टर श्री बाणवीर जी पुरी एम० ए० बी० टी है इस वर्ष स्कूल का ६३७४८ रु० ५ आने ९ पा० को व्यय हुआ।

दक्षिण प्रचार।

सभा के दक्षिण या मद्रास प्रचार का अन्तिम ध्येय यह है कि इस प्रचार को वहां की प्रान्तीय सभाओं के अधीन करके उसे नियमित रूप से समर्पन कर दिया जाय। मद्रास प्रांत में दक्षिण भारत प्रतिनिधि सभा और कर्णाटक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से २ प्रतिनिधि सभायें अस्तित्व में आ चुकी हैं। परन्तु अभी ये सभायें इस अवस्था में नहीं हैं कि उनके ऊपर प्रचार की सम्पूर्ण उत्तरदायिता डाली जा सके। यद्यपि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अब लगभग २० वर्ष के निरन्तर प्रचार के पश्चात् इस प्रश्न पर पूरी गम्भीरता से विचार करने लग गई है।

मद्रास प्रान्त में इस समय सभा के ६ प्रचारक कार्य करते हैं जिनमें से २ उत्तर भारत के और शेष ४ दक्षिण भारत के निवासी हैं।

इस वर्ष देश में राजनैतिक उथल पुथल के के कारण हमारे प्रचार की प्रगति पर भी प्रभाव पड़ता था और वह पड़ा भी है। तब भी प्रचार की गति सन्तोष प्रद रही है। प्रचार का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है। विस्तृत विवरण पृथक अंकित है।

९ नये समाजों की स्थापना की गई।

३७ शुद्धियां की गईं जिनमें से १४ ईसाई और शेष मुसलमान आदि थे।

६ नई पुस्तकें लिखी गईं।

यथा—वैदिक विवाह पद्धति गर्भाधान संस्कार उपनयन वेदारम्भ संस्कार अन्त्ये प्रथम विधि तथा शुद्धि संस्कार, तेलुगू भाषा में वैदिक सन्ध्या मलयालम में।

५ नई पुस्तकें प्रकाशित हुईं।

यथा—नास्तिक वाद खंडन, वर्ण व्यवस्था के विषय में गान्धी जी तथा अन्य नेताओं के विचार जातपात निर्मूलक संघ तेलुगू भाषा में। स्वामी दयानन्द जी का जीवन चरित्र पद्य मय, कर्णाटक भाषा में।

कर्णाटक भाषा में श्री पं० सुधाकर जी सिद्धान्त विशारद भू० पू० प्रचारक सार्वदेशिक सभा ने महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित्र काव्य रूप में लिखकर लगभग ५०० पृष्ठों में प्रकाशित किया है जिसकी सब कर्णाटक भाषा के विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की है।

२८, २९, ३० दिसम्बर १६४२ को बंगलौर में दक्षिण भारतीय आर्य सम्मेलन का तृतीय अधिवेशन बड़े समारोह से मनाया गया जिसमें सभा के मान्य प्रधान श्री पं० गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ़ जज तथा उपप्रधान श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० ने विशेष रूप से क्रियात्मक भाग लिया तथा प्रचारकों को उचित निर्देश दिये।

प्रचार विस्तार

इस सभा का प्रचार कार्य मद्रास प्रांत आदि उन क्षेत्रों में होता है जहां प्रतिनिधि सभायें नहीं हैं परन्तु लगभग २ वर्ष हुये सभा ने बिहार के के सन्थालों, संयुक्त प्रांत के कुमायूं डिवीजन,

उडीसा, आसाम और भीलों इत्यादि मे अपना प्रचार कार्य विस्तृत किया था और मुख्यतया आर्य समाज के स्थापना दिवस की आय से इस बढे हुये प्रचार का व्यय पूरा किया जाता है। इस वर्ष युद्ध जनित परिस्थितियों के कारण आसाम प्रांत में अपना प्रचार स्थगित करना पडा। कुमायू के गढवाल प्रचार को आर्य प्रति, निधि सभा युक्त प्रांत के अधीन कर दिया गया है और सभा अपनी योजना के अनुसार प्रचार व्यय का $\frac{३}{४}$ प्रतिनिधि सभा को देती है सथालों मे बिहार सभा के द्वारा प्रचार का काय और निरीक्षण होता है। इस वर्ष इस प्रकार के व्यय का भी $\frac{२}{३}$ बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा को दिया जाता रहा है। उडीसा मे सीधे सभा द्वारा श्री बा० मदन मोहन जी सेठ के निरीक्षण मे काय होता है। इस योजना पर इस वर्ष १९८४ रु० १० आने ३ पाई व्यय हुआ। प्रचार विवरण पृथक् है।

आर्य समाज स्थापना दिवस।

आय समाज स्थापना दिवस की इस वर्ष १५३५ रु० ६ आने की आय हुई। अब आर्य समाजें इस अवसर पर सभा के लिये धन एकत्र करने में अभ्यस्त देख पड रही है। गत ० वर्षों से ही इस निधि की उल्लेखनीय आय हानी प्रारम्भ हुई है। यदि भारत की समस्त आय-समाजें इस सम्बन्ध मे अपने कर्तव्य का पालन करने लगें तो सभा स्थिर आय की चिन्ता से बहुत कुछ मुक्त हो जायेगी और इस कारण से सभा की जो योजनायें क्रिया मे नहीं आ पाती या जो अभिलाषित सफलता को प्राप्त नहीं होतीं वे क्रिया मे आने लगेंगी और यथेष्ट सफलता मिलने लगेगी। अंग्रेजी कलेंडर के अनुसार प्रति-वर्ष ७ एप्रिल की सरकारी छुट्टी के लिये सरकार से पत्र व्यवहार किया जा रहा है।

केन्द्रीय आर्य धर्म रक्षा।

सयुक्त प्रांत में जनेऊ और चोटी वैदिक चिन्हों की रक्षा का कार्य इस वर्ष भी जारी रहा। इस वर्ष के कार्य का विवरण इस प्रकार है —

नाम जिला जिसमे प्रचार किया गया	कितने स्थानों पर प्रचार किया	कितने चोटी जनेऊ की रक्षा हुई	कितने चोटी जनेऊ पुनः रखाये गये।
१. मेरठ, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर। देहरादून।	१७६	८८३	१७०
२. अलीगढ़, आगरा, मथुरा,	११४	१५००	२५०
एटा, इटावा, मैनपुरी फर्रुखाबाद आदि	६०४	२०१६	३२०

धर्मार्य सभा

गत वर्ष इस सभा ने यह निश्चय किया था कि संस्कार विधि में प्रयुक्त 'देवृकामा' शब्द के स्थान में 'देवकामा" न किया जाय और इस विषय मे और अनुसधान किया जाय। इस अनुसधान के फल स्वरूप सभा ने निम्न विस्तृत वक्तव्य समाचार पत्रों मे छपाया। इससे सभा की स्थिति बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है।

"वर्तमान समय में ऋग्वेद के जो मुद्रित संस्करण उपलब्ध होते हैं उनमें वैदिक यन्त्रालय अजमेर में छपे संस्करणों को छोड़कर" अघोरचक्षुरपतिघ्नी इस १०।८५।४४ के मन्त्र में "वीर मूर्देवकामा स्योना" यह पाठ ही पाया जाता है किन्तु ऋषि दयानन्द ने संस्कार विधि के विवाह प्रकरण में इस मन्त्र को जो जगह उद्धृत किया है और वहा इसका पाठ देवृकामा दिया और उसी के अनुसार अर्थ किया है जिसे श्री प० सातवलेकर जी आदि ठीक नहीं मानते। वे इसे वैदिक यन्त्रालय के पण्डितों की भूल सिद्ध करने का यत्न करते हैं किन्तु संस्कार विधि प्रथम संस्करण को देखने से जो ऋषि दयानन्द के जीवन काल में सन् १८७७ में एशियाटिक प्रेस बम्बई में छपा और जहा विवाह प्रकरण में पृ० ८४ और ६१ पर यह मन्त्र ऋग्वेद तथा पारस्कर गृह्य सूत्र से और पृ० ६३ पर अथर्ववेद १४।२ १७,१८ से इसके साथ मिलता जुलता पर पृथक् मन्त्र उद्धृत है यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि ऋषि दयानन्द के विचार में ऋग्वेद का १०।८५।४४ में शुद्ध पाठ देवृकामा ही है न कि देवकामा। यहां तक कि पृ० ६१ पर जब छापे की भूल से ऋग्वेद का पाठ वीर सूर्देवकामा छपगया तो संस्कार विधि प्रथम संस्करण के शुद्धि पत्र मे उन्होंने पृ० ५ पर उस ६१ पृष्ठ का उल्लेख करते हुये लिखा।

पृ०	प०	अशुद्धम	शुद्धम
६१	६	देवका	देवृका

यह ठीक है कि वैदिक यन्त्रालय अजमेर के ऋग्वेद सहिता के संस्करण को छोड़ कर अन्य किसी संस्करण मे जो अब उपलब्ध होते हैं ऋग्वेद के इस मन्त्र म देवृकामा पाठ नहीं पाया जाता परन्तु कई पुरानी हस्तलिखित पुस्तकों तथा संस्करणों में पहले यह पाठ पाया जाता था इसके कई प्रबल प्रमाण दृष्टिगोचर होते हैं। उदाहरणार्थ सन् १८६१ मे सेन्ट पीटर्स मे जो एक विस्तृत संस्कृत शब्द कोष Sanskrit Worterbueh के नाम से Otto Bohelingk और Rudolph Roth नामक विद्वानों ने सम्पादित किया उसके पृ० ७६६ पर देवृकामा शब्द का पता ऋग्वेद १०।८५।४४ और अथर्व १४।२।१८ दिया है। यह यूरोप में सबसे प्राचीन संस्कृत शब्द कोष है। इससे यह स्पष्टतया प्रमाणित होता है कि उपर्युक्त संस्कृत कोष बनाने के समय में ऋग्वेद का देवृकामा पाठ लिखित वा मुद्रित संस्करणों में १०।८५।४४ पर अवश्य रहा होगा। यह संस्कृत कोष पुराना होने के कारण अमाननीय है यह श्री प० सातवलेकर जी आदि का कथन ठीक नहीं है, सब से प्राचीन होने के कारण उसका महत्व बढता है घटता नहीं।

२ सन १६१० में प्रो० मैक्डोनेल एम० ए० पी० एच० डी Boden Prof of Sanskrit

in the university of Oxford और Prof A B Keith M. A D C. L Acting Deputy Professors of Sanskrit in the university of Oxford ने लंदन में Vedic Index of Names & Subjects—नामक पुस्तक छपवाई थी जिसके पृष्ठ ७७८, ७७९ पर देवृ शब्द पर टिप्पणी है और देवृकामा शब्द का पता ऋग्वेद १०।८५।४६ और अथव १४।२।१८ दिया है। इससे स्पष्ट है कि १९१२ मे भी प्रो० मक्डोनेल और कीथ के सामने ऋग्वेद के कुछ संस्करणों मे देवृकामा यह पाठ अवश्य था।

व्हिटनी कृत अथववेद के अँग्रेजी अनुवाद की भूमिका में भी ऋग्वेद में पाठ देवृकामा होने का संकेत किया गया है।

(ख) अथर्ववेद के १४।२।१७ और १८ मन्त्रों में पाठ देवृकामा है इसके प्रमाण तो अत्यधिक हैं। अथववेद सायण भाष्य भाग ३ के जो निर्णय सागर बम्बई में सन् १८९८ में छपा पृ० ३०७ पर मूल मन्त्र और पद पाठ दोनों मे देवृकामा ही पाठ है।

बर्लिन में सन् १८५५ और फिर १८५६ मे प्रकाशित प्रो० राथ और व्हिटनी द्वारा सम्पादित अथर्ववेद संहिता में पृ० ३०८ पर अथर्ववेद १४।२।१७,१८ दोनों मन्त्रों में देवृकामा पाठ है। सन् १८८४ में श्री सेवकलाल कर्शनदास द्वारा सत्यनारायण प्रेस बम्बई में प्रकाशित अथववेद संहिता में भी दोनों मन्त्रों में १४।२।१७ १८ देवृकामा ही पाठ है। श्री स्वामी नित्यानन्द जी विश्वेश्वरानन्द जी कृत अथर्ववेद पदानाम् अकारादि वर्णक्रमानुक्रमणिका जो सन् १९०७ में निर्णयसागर प्रेस बम्बई में छपी पृ० २१ पर देवृकामा पर १४।२।१७, १८ अथव ऐसा ही उल्लेख है। सन् १९३५ में श्री प० सातवलेकर जी ने भी अथर्ववेद के सुबोध भाष्य में १४ काण्ड के प्रथम सूक्त के १७, १८ दोनों मन्त्रों में देवृकामा ही पाठ लिखा था और उसका "देवर की इच्छा या कामना पूर्ण करने वाली" पृ० ३४।३५ यह अर्थ किया था। इस प्रकार अथर्ववेद में शुद्ध पाठ देवृकामा होने की अनेक प्रबल साक्षियां हैं। श्री पं० जयदेव जी शर्मा विद्यालंकार चतुर्वेद भाष्यकार तथा अन्य विद्वानों के पत्र पढे जाने और उपस्थित विद्वानों मे विचार विनिमय के पश्चात् सर्व सम्मत से निर्णय हुआ कि ऋषि दयानन्द सम्मत पाठ ऋग्वेद और अथर्व वेद दोनों मे देवृकामा ही है जिसकी पुष्टि में अनेक प्रबल प्रमाण उपलब्ध होते हैं। किन्तु इस विषयक अन्तिम निर्णय देने से पूर्व अभी ऋग्वेद के हस्तलिखित और मुद्रित प्राचीन संस्करणों की अधिक खोज करनी चाहिये।

इनके अतिरिक्त सभा के आवश्यक निश्चय इस प्रकार है —

१. श्री प० देवराज जी विद्यावाचस्पति के प्रस्तावानुसार एक विस्तृत वैदिक कर्म पद्धति का प्रकाशन।

२. संस्कार विधि के आधार पर एक विवाह पद्धति का निर्माण जिससे वैदिक विवाह एक ही पद्धति के अनुसार कराये जाया करें और इस समय जो कहीं थोडी बहुत विभिन्नता होजाती है वह दूर हो जाय।

३. संस्कार विधि के संशोधनीय स्थलों तथा संशोधनों की सूची बन कर तैयार हो गई है।

उन पर विचार जारी है।

आर्य समाज और न्याय सभा विभाग।

श्री जस्टिस जयलाल जी के बनाये हुये न्याय विभाग के नियमों पर अभी तक प्रान्तीय सभाओं की सम्मतिया पूर्ण नहीं हुई हैं। इस समय तक १ सयुक्त प्रान्त २ बम्बई ३ बगाल ४ बिहार ५. मध्य प्रदेश सभाओं की सम्मति प्राप्त हुई हैं। सार्वदेशिक सभा के नियम सशोधन के पश्चात् जिसके लिये कोरम की पूर्ति के लिये गत २ वर्षों से पूरा २ यत्न किया जा रहा है इस आवश्यक विषय पर आगे कार्यवाही की जायेगी।

विक्रम महोत्सव

यह महोत्सव कब मनाया जाय और इसका कार्यक्रम क्या रहना चाहिये इस विषय मे उप-सभा की रिपोर्ट पर विचार हो कर १५।१०।४२ की अन्तरग सभा मे निम्न निश्चय स्वीकार हुआ था। सभा के निश्चयानुसार प्रान्तीय सभाओं, परोपकारिणी सभा और आर्य प्रादेशिक सभा से इस योजना के विषय मे मम्मति माँगी गई थी। प्राय सभी सभाओं और परोपकारिणी सभा ने इस योजना की सफलता मे अपनी पूर्ण सहयोग देने के लिये प्रकट किया है। आर्य प्रादेशिक सभा की सम्पति अभी अप्राप्त है। विस्तृत कार्यक्रम वनाये जाने का उपाय किया जा रहा है।

अन्तरङ्ग सभा ता० १५।१०।४२ का निश्चय

१. विक्रमादित्य का एक प्रामाणिक जीवन चरित्र तैयार कराया जाय। इसके लिये निम्न सज्जनों से सहायता लेनी चाहिये।

१. श्री डा० परमात्मा शरण जी हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस

२ श्री विनय कुमार जी सरकार

३ श्री यदुनाथ जी सरकार

४ श्री जयचन्द्र जी विद्यालकार

५ श्री प्रो० वेदव्रत जी गुरुकुल कागडी।

६ अन्य कुछेक ऐसे ही विशेष इतिहासज्ञ।

इस विषय मे नागरी प्रचारिणी सभा काशी का भी सहयोग प्राप्त करना चाहिये। वे भी एक इसी प्रकार का उत्सव मना रहे हैं। तिथि आदि क दृष्टि से दोनो पृथक् २ रहने चाहिये।

२ वीरता प्रदर्शक व्यायाम प्रदर्शन होने चाहिये। कुश्ती, नवयुवकों के व्यायाम, स्त्रियों के व्यायाम, लाठी, लेजम तलवार आदि के व्यायाम। इस मामले मे बड़ौदा व्यायाम शाला के प्रो० माणिक राव जी का सहयोग प्राप्त करना चाहिये।

वेद की आज्ञानुसार कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के लक्ष्य की पूर्ति के लिये तथा महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित प्रजा नियन्त्रित सार्वभौम चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य की भावना को आर्य जनता मे जीवित जागृत करने के लिये और इस क्रियान्वित रूप से सफल बनाने के लिये स्फूर्ति दायक कार्यक्रम निर्धारित किया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रथम पग के तौर पर देश व्यापी आर्य वीर दल के सगठन के द्वारा आर्यों मे क्षात्रधर्म को उन्नत किया जाय। इस आर्य वीर दल का एक समारोह Rally इस महोत्सव के अवसर पर किया जाय जिसमें आर्यवीरों के करतब भी दिखाये जायें।

३. पहले से तैयार किये हुए लेखबद्ध व्याख्यान मिने चुने विद्वानों के होने चाहिये।

४ कवि सम्मेलनों के करने का आयोजन होना चाहिये।

५ ग्वालियर महाराज तथा उनके उच्च कर्मचारियों आदि का पूरा सहयोग प्राप्त करना चाहिये तथा सहायता लेनी चाहिये। इस उत्सव का एक उद्देश्य यह भी होना चाहिये कि महाराजा ग्वालियर के सहानुभूति आर्य समाज के साथ हो जानी चाहिये। इन्दौर, बड़ौदा आदि के महाराजाओं का भी सहयोग प्राप्त करना चाहिये।

६ एक यज्ञ हो।

निश्चय हुआ कि एक विक्रम महोत्सव प्रबन्ध समिति बनाई जाय जो इस रिपोर्ट के सम्बन्ध में प्रान्तीय सभाओं परोपकारिणी सभा और आर्य प्रादेशिक सभा से सम्मति और सहयोग प्राप्त करके विस्तृत योजना बनाये और उसे कार्य में परिणत करने के उपाय करे।

(क) १ पं० गंगा प्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज
 २ श्री पं० धुरन्धर जी शास्त्री
 ३ श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
 ४ श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी आर्य सेवक
 ५ श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज
 ६ श्री प्रो० घीसू लाल जी ऐडवोकेट
 ७ श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
 ८ श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
 ९ श्री पं० मिहिर चन्द्र जी धीमान्
 १० एक सज्जन ग्वालियर राज्य से।

(ख) इस समिति का कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक सभा का कोषाध्यक्ष होगा। आर्थिक अधिकार और उत्तरदायित्व इस सभा पर होगा।

(ग) इस समिति को अपने में सदस्य बढ़ाने का अधिकार होगा।

(घ) अधिकारियों के चुनने का अधिकार इस समिति को होगा

(च) चुनाव तक इस समिति के मन्त्री का कार्य सभा मन्त्री करेंगे

विविध उपसमितियां

इस वर्ष सभा ने निम्न उपसमितियां नियत की थीं।

१ दक्षिण प्रचार उपसमिति

१ श्री प्रो० इन्द्र जी २ श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ३ श्री प० विनायकराव जी विद्यालङ्कार बार एट० ला०। इस समिति की ९ बैठकें हुई।

२ आर्य रक्षा समिति

१ श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त २ श्री प० गंगाप्रसादजी रिटायर्ड चीफ जज ३ श्री प० ज्ञानचन्द्र जी आर्य सेवक ४ श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ५ श्री ला० देशबन्धु जी ६ श्री प० मिहिरचन्द्र जी धीमान् ७ श्री राजा नारायणलाल जी ८ श्री ला० नारायणदत्तजी ९ श्री प० विनायकराव जी १० श्री प० गंगादेवजी ११ श्री प्रो० ताराचन्द्र जी गाजरा

आर्यवीर दल समिति

१ प्रधान सार्वदेशिक सभा २ मन्त्री सार्वदेशिक सभा ३ कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक सभा ४ श्री प० देशबन्धु जी विद्यालंकार मुख्य सेनापति ५ श्री प्रो० महेन्द्रप्रताप जी ६ श्री प० ज्ञानचन्द्र जी आर्यसेवक ७ श्री कुँवर चांदकरण जी शारदा ८ श्री प० मिहिरचन्द्र जी ९ श्री प्रो०

ताराचन्द जी गाजरा १०. श्री मिहेश्वरप्रतापसिंह जी ११ श्री चौ० देशराज जी।

इस समिति की २ बैठकें हुईं। समिति ने श्री प० देशबन्धु जी विद्यालंकार को दल का प्रधान सेनापति नियत किया। नियमों के अनुसार प्रांतीय समितियां बनाये जाने का यत्न किया जा रहा है।

३. गाजियाबाद भूमि

सभा की गाजियाबाद की भूमि में चहार दीवारी बनाने और कुछ इमारतों के बनाने के कार्यार्थ जो इस समय आवश्यकतानुसार रक्षागृहों का काम दे सकें और बाद में स्थिर आर्य नगर का भाग बन सकें ता० १५।१०।४२ को अन्तरंग सभा ने निम्न उपसमिति बनाई थी:—

१ श्री प० इन्द्र जी २ श्री ला० नारायणदत्त जी ३ श्री ला० हरशरणदास जी रईस, गाजियाबाद ४ श्री अमृतराव जी श्री ला० ज्ञानचन्द जी देहली। भूमि का साइट प्लान तैयार कराया जा रहा है।

विक्रम महोत्सव उपसमिति

१ श्री प० गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफजज।
२ श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री।
३ श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार।
४ श्री महात्मा नारायण स्वामी जी।
५ श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी आर्य सेवक।
६ श्री प्रो० घीसूलाल जी एडवोकेट।
७ श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति।
८ श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय।
९. श्री प० मिहिरचन्द्र जी धीमान्।
१०. एक सज्जन ग्वालियर राज्य के मनोनीत होंगे

राजार्य सभा

१. श्री प० गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज।
२. श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय संयोजक।
३ श्री प० ज्ञानचन्द्र जी आर्य सेवक।

धन विनियोग उपसमिति

१ श्री ला० नारायणदत्त जी संयोजक
२ श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
३ श्री ला० देशबन्धु जी
४. श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी

सार्वदेशिक तथा बलिदान भवन

सभा के पास देहली में २ भवन सार्वदेशिक भवन और बलिदान भवन हैं। सार्वदेशिक भवन इस वर्ष भी ११० रु० मासिक किराये पर रहा। बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार में सभा का कार्यालय स्थित है। भवन के नीचे की २ दूकानें ३५ ३५ रु० मासिक किराये पर चढ़ी हुई हैं। ५० रु० मासिक किराया सभा कार्यालय से लिया जाता है। सार्वदेशिक भवन के किराये से १४४० रु० की आय हुई। सार्वदेशिक भवन की मरम्मत पर तथा म्यूनिसिपल टैक्स पर १३३ रु० १२ आने और बलिदान भवन के म्यूनिसिपल टैक्स पर ५२७ रु० १० आने ७ पाई व्यय हुए।

गाजियाबाद भूमि

गाजियाबाद में देहली से मेरठ और गाजियाबाद से मेरठ जानेवाली सड़कों के बीच में सभा की यह भूमि स्थित है। यह भूमि ४३ बी० १८ वि० है। इसके क्रय करने में १०१० रु० व्यय हुआ था। सभा के अधिकार में आये हुए इस भूमि को लगभग १० वर्ष हो चुके हैं परन्तु अभी

तक इसका कोई उपयोग नहीं हो सका। इस वर्ष सभा ने इसके उपयोग के विषय में कई महत्व पूर्ण निश्चय किये जिन्हें शीघ्र से शीघ्र क्रिया मे लाये जाने के उपाय किये जा रहे हैं। इन उपायों के विषय में अन्यत्र रक्षा कार्य के हेडिंग में प्रकाश डाला जा चुका है। सभा की इच्छा है कि इस भूमि को शीघ्र से शीघ्र एक आर्य नगर के रूप मे विकसित करके उसे अपने सार्वजनिक और रचनात्मक कार्यों का केन्द्र बना दिया जाय।

श्रद्धानन्द नगरी भवन

श्रद्धानन्द नगरी देहली मे इस सभान्तर्गत श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित २ भवन थे। १ आर्य समाज मन्दिर और २ पाठशाला भवन इन्हें बने हुए लगभग १० वर्ष हो चुके हैं परन्तु अभी तक सभा के कोष के कागजात मे इनका इन्दराज नहीं हुआ था। इस वर्ष इन्दराज हो गया है। इन दोनों के निर्माण मे सभा का ६६६२ रु० १२ आने ६ पाई व्यय हुआ था यह धन सभा के बैलैन्स शीट मे विशेष निधियों मे दलितोद्धार के खाते मे जमा है और भूमि और इमारतों की मद मे खर्च की ओर अंकित है।

समयपुर पाठशाला

देहली के निकट ग्राम समैपुर में उपर्युक्त दलितोद्धार सभा के अधीन गत कई वर्षों से एक दलितोद्धार पाठशाला चल रही है। पाठशाला का व्यय डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की २० रु० मासिक सहायता तथा पाठशाला की अपनी जमीन की आय से चलता है। पाठशाला के नाम ३० बीघे कच्ची जमीन तथा १०७० रु० ६ आने ६ पाई की लागत के अपने भवन हैं। एक कुआं पाठशाला के भीतर तथा एक कुंआ जमीन की सिंचाई के लिये है। विद्यार्थियों की संख्या ४१ है। पढ़ाई कक्षा ४ तक हिन्दी में होती है। धार्मिक शिक्षा का भी उचित प्रबन्ध है। वर्ष की आय ५६५ रु० ३ आने व्यय ५५६ रु० १२ आने रहा।

गृह विहीन रक्षा कार्य

सार्वदेशिक सभान्तर्गत गृहविहीन जाति रक्षा मंडल मैनपुरी की संरक्षता में ज्योति ग्राम में एक कन्या पाठशाला कक्षा ४ तक चल रही है। श्री बिरला जी इस सभा के द्वारा १० रु० मासिक सहायता देते हैं। सम्प्रति कुल ६१ कन्यायें शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

पाठशाला का परीक्षाफल ८० प्रतिशतक रहा। इस वर्ष प्रयाग महिला विद्या पीठ की परीक्षा में ४ छात्राओं ने परीक्षा दी।

पाठशाला में केवल हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। धार्मिक शिक्षा मे पं० सूर्य देव जी कृत धर्म शिक्षा तथा उपदेशामृत नामक पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं।

छात्राओं को पंखा बनाने तथा काढ़ने की भी शिक्षा दी जाती है। सम्प्रति पाठशाला में २ अध्यापिकाये शिक्षा दे रही हैं।

इस वर्ष पाठशाला को ३०५ रु० की आय तथा ३०२ रु० ? आने का व्यय हुआ।

पाठशाला का निजी भवन बनवाने का यत्न किया जा रहा है।

विकाऊ पुस्तकों का विवरण।

	पुस्तक सख्या	मूल्य
गतवर्ष का स्टाक	१०२९९	६९०८।-)
नया प्रकाशन	१००८७	९१५१।।)।।
योग	२०३८६	१६०५९।।।-)।।
बिक्री	३९७७	३२९६।-)।।
शेष	१६४०९	१२७६३।।)

सार्वदेशिक पत्र

आय		व्यय
९४३।।।≡)।।	कागज	८६९।।।-)।
	छपाई	९९५।≡)।
	वेतन लेखक	४५०)
	डाक व्ययादि	१७७।।।=)

आय	व्यय
९४३।।।≡)।। योग	२४९३=)।। योग

घाटा १५४९≡)

गत वर्ष घाटा ७१९ रु० ३ आने ६ पाई का था। इस वर्ष के अन्त पर कागज छपाई आदि के दाम बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण घाटा १५४९ रु० ३ आने रहा। चन्दा देने वाले ग्राहक ५६२ हैं। गत वर्ष ५२४ थे। इस वर्ष ऋष्यङ्क श्रीश्रद्धानन्दाङ्क (२) ये विशेषाक प्रकाशित किये गये। उत्तम लेखकों और कवियों के सहयोग से पत्र को उन्नत करने का विशेष यत्न किया गया। ग्राहक सख्या वृद्धि के लिये भी विशेष यत्न हो रहा है। इसमें ग्राहकों के सहयोग की विशेष आवश्यकता है।

शोक प्रस्ताव

इस वर्ष सभा की अन्तरग सभा ने अपने सदस्य और उप प्रधान श्री पं० विनायक राव जी विद्यालकार की पूज्य माता जी की मृत्यु पर शोक प्रस्ताव पास किया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

आय व्यय सूचक चित्र बावन वर्ष १.१।४२ स १२।२।४३ तक

आय

विविध दान	२८२।४।६	
दान स्थापना दिवस	१५३५।६।०	
	१८१७।१०।६	१८१ ।१०।६
पचमाश	२९०३।१०।६	
दशाश	१९२।६।०	
	३०९६।०।६	३०९६।०।६
मकानों का किराया		४९२३।१०।४
सूद		५६२।०।०
सूद रक्षा निधि		१०००।०।०
दान आर्य वीर दल के सगठनार्थ		५६७।०।६
योग		११९७६।८।७

व्यय

सार्वदेशिक पत्र		
कागज, छपाई पारटेज इत्यादि	२४९३।२।६	
आय चन्दा तथा विज्ञापन	९४३।१५।६	
	१५४९।३।०	१०४९।३।०
वेतन उपमन्त्री सभा		१४६८।१५।०
कार्यालय		
कार्यालय व्यय	२२४०।०।०	
घिसाई टाइपराइटर	६०।०।०	
	२३००।०।०	२३००।०।०
प्रोवीडेंट फन्ड		३६५।१४।६
बैंक डिस्काउण्ट		४६।८।०
जायदाद के म्युनिसिपिल टैक्स तथा मरम्मतादि		
बलिदान भवन	५२७।१०।७	
सार्वदेशिक भवन	१३३।११।०	
	६६१।५।७	६६१।५।७
मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य		२५६।२।०
प्रचार व्यय		
पुस्तक वितरण	१०६।७।९	
प्रचार विस्तार	१९८४।१०।३	
	२०९१।२।०	२०९१।२।०
सगठन व्यय		
आर्य वीर दल		२१८४।१४।९
वर्ष की बचत		१०५२।१३।९
योग		११९७६।८।७

(ह०) रघुनाथ प्रसाद पाठक (ह०) इन्द्र विद्यावाचस्पति (ह०) गंगाप्रसाद एम०ए० रिटा० चीफ जज

एकाउन्टेन्ट | मन्त्री | प्रधान

चांदनी चौक, देहली।
१८।३।४३

वास्ते जगदीश प्रसाद एन्ड कम्पनी
ह० जगदीश प्रसाद, बी० ए० बी० कौम० (बम्बई)
जी० डी० ए० आर० ए०, आडीटर्स

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

शेष पत्र [बैलेन्स शीट] १२-२-४३ तक

आय

स्थिर निधियां		
देश देशान्तर प्रचार	५००००)	
वेद प्रचार	५००००)	
स्टेट फण्ड	५० ००)	
रक्षा	२५०००)	
सार्वदेशिक भवन	२४५००)	
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक निधि	५०००)	
गगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार ट्रस्ट	७०००)	
	२०६५००)	
विविध वेद प्रचार		
शिवलाल वेद प्रचार	६५०)	
होडाराम चूणामणि ,,	५०१)	
डोमा महतो सुन्दरदेवी ,,	१००)	
	१२५१)	
	२०७७५१)	२०७७५१)
विशेष निधियां		
दलितोद्धार	३०००)	
श्रद्धानन्द नगरी भवन फण्ड	६६६८।।।)।।।	
	९६६८।।।)।।।	
दयानन्द आश्रम	२२५०)	
रिलीफ फण्ड	७५००)	
बगाल तूफान पीड़ित निधि	६३८।। ≡)।।।	
	२००५१।।)।।	२००५१।।)।।

व्यय

भूमि और इमारतें		
सार्वदेशिक भवन	२४५००)	
बलिदान भवन	२६२००)	
गाजियाबाद भवन	१०१०)	
इमारत आ। म मन्दिर श्र. नगरी	३९१५।–)।।	
,, पाठशाला ,, ,,	२७४७।≡)	
	५८३७२।।।।।)	५८३७२।।।)।।
कागज का स्टाक		
(वास्ते सार्वदेशिक पत्र)		४६५।।≡)।।
टाइपराइटर		
गत बैलेन्स शीट के अनुसार	५०५)	
घिसाई	६०)	
	४४५)	४४५)
स्थिर पुस्तकालय		३७१–)।।
स्टेशनरी (हाथ मे)		५६)
विविध पेशगियां		
देहली बिजली कम्पनी	४८)	
सेठ दीपचन्द कृष्णलाल पोद्दार	३२४७।।।)।।	
विविध	२७२०≡)२	
	६०१५।।≡)८	६०१५।।≡)८
किराया प्राप्तव्य		८४५)

आय

दक्षिण प्रचार निधियां

केशव आर्य हाई स्कूल	२५०००)	
हैदराबाद मन्दिर निर्माण फण्ड	४६८२॥=)॥	
हैदराबाद शहीद फण्ड	३०१)	
शोलापुर मन्दिर फण्ड	१५०००)	
हैदराबाद अभियुक्त सहायता फण्ड	३८००)	
विविध प्रचार फण्ड	१०२२।=)१०	
	५०१०६−)४	५०१०६−)४

विदेश प्रचार निधि

सूद देशदेशान्तर स्थिर प्रचार निधि	४४२६।≡)।	
अमेरिका प्रचार	४००६।=)१	
विविध	११७२)	
बिड़ला विदेश प्रचार निधि	१३०००)	
	२२७१०॥|−)४	२२७१०॥|−)४

धार्मिक पुस्तक प्रचार निधियां

सूद चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक स्थिर निधि	६६०॥=)।	
पुस्तक प्रचार फण्ड	१६६२३॥=)४	
श्री नारायण स्वामी पुस्तक प्रकाशन निधि	१५१५॥)	
	१६१२६॥|)७	१६१२६॥)७

विविध सूद निधियां

दलितोद्धार फण्ड	४२६॥−)॥|	
दयानन्द आश्रम	११६॥−)१	
गढ़वाल प्रचार ट्रस्ट	५६।)	
रिलीफ फण्ड	४३४।=)	
	१०३६॥| १०	१०३६॥|)१०
		२०५।=)

व्यय

पेशगियां

कार्यकर्ता	१६८८≡)॥	
प्रान्तीय सभाओं इत्यादि	३०८४=)॥|	
श्री सेठ लक्ष्मीनारायणजी राठी शोलापुर	६०००)	
	१३६७२॥=)।	१३६७२॥=)।

इन्वेस्टमेन्ट

पीपल बैंक	४६७७॥−)२	
आर्य साहित्य मण्डल अजमेर	१०)	
	४६८७॥|−)२	४६८७॥−)२

ऋण सुरक्षित

पाटौदी हाउस ट्रस्ट	६६०००)	
विविध	४५४००)	

चलत

पाटौदी हाउस ट्रस्ट	५३००॥=)॥|	
आर्य अनाथालय देहली	०६५६।−)।	
केशवार्य हाई स्कूल	२५०००)	
	१०७३६०)	१०७३६०

बिक्री की पुस्तकें

पुरानी पुस्तकें	१४५४६)।	
नया प्रकाशन	०७४७।≡।	
श्री नारायण स्वामी पुस्तक प्रकाशन निधि	१५१२॥−)।	
	१८३०६।−)।	१८३०६।−)

ओरियन्टल बीमा लाइफ कम्पनी		१४२५−)

उचन्त	आय	नकद तथा बैंकों मे	व्यय
अमानतें		पंजाब नेशनल बैंक देहली	६१६६३—)
अमानतें कर्मचारी सभा	२०१७॥=)७	सेन्ट्रल बैंक देहली	११८२२॥=)
विविध अमानतें	११२३॥)।	सेन्ट्रल बैंक शोलापुर	६६२॥)१
अमानत स्व० सेठ बैजनाथजी	६७०=)।	पोस्ट आफिस सेविंग बैंक	३४६)५
अमानत परोपकारिणी सभा			११२८२७॥≡)६
मौरिशस	२६४)	**इम्प्रैस्ट**	
अमानत आ० प्र० ईस्ट		सभा कार्यालय	५००—)
अफ्रीका	१००)	श्री प० रामनारायण जी मिश्र	२५०)
विविध निधियां			७५०—)
दयानन्द समैपुर पाठशाला	४८=)		११३५७७॥)॥ ११३५७७॥)॥
कुमायू प्रचार	३६।—)।	**हानि लाभ निधि**	
शहीदी प्लेट	७०।—)॥	गत वर्षों का रक्षा व्यय	३२३६॥=)११
बिड़ला वेद प्रचार	११२)४	लोहारू काड का व्यय	३०३६= ॥
टकारानिधि	३५३—)		६२७६—)८
आर्य विद्वत् सम्मेलन	१०६॥)	बिड़ला वेद प्रचार निधि से	२५००)
गृहविहीन जाति रक्षा	१०६।)।		३७७६—)८
मण्डल			
केन्द्रीय आर्य धर्म रक्षानिधि	५)।	गत वर्ष की बचत	२१५॥)।
	७६६॥=)१०	इस वर्ष की बचत	१०५२॥—)॥
			१२६८=)।
	५००२॥≡)११ ५००२≡)११	इस समय तक का	
स्टाफ प्रोवीडेण्ट फण्ड	२७१४॥)॥	वास्तविक घाटा	२५०७॥≡)५ २५०७॥≡)५
	सर्वयोग ३२८७११॥≡)		सर्वयोग ३२८७११॥≡)

(ह०) रघुनाथप्रसाद पाठक (ह०) इन्द्र विद्यावाचस्पति (ह०) नारायणदत्त (ह०) गंगाप्रसाद
एकाउन्टेन्ट मन्त्री कोषाध्यक्ष एम ए चीफजज रि०
प्रधान

हमने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के हिसाब की जाच की और हम प्रमाणित करते हैं कि उपर्युक्त बैलेन्सशीट और सयोजित आय व्यय का ब्यौरा हिसाब के रजिस्टरों और अन्य कागजों के अनुसार जो हमको दिखलाए गए हैं ठीक है हमारी आज की लिखी रिपोर्ट पृथक् है।

वास्ते जगदीशप्रसाद ऐण्ड कम्पनी—

(ह०) जगदीशप्रसाद, बी० ए० बी० कौम (बम्बई)
जी० डी० ए० आर० ए०
रजि० एकाउन्टेन्टस आडीटर्स

चादनी चौक देहली
१८-३-१९४३

सार्वदेशिक आ० प्र० सभा के वक्तव्य तथा सूचनाएं

माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त जी के विषय में वक्तव्य

आर्य जनता को समाचार पत्रों द्वारा ज्ञात हुआ होगा कि माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त पर जो मध्यप्रदेश की लेजिस्लेटिव असेम्बली के प्रधान और आर्य समाज के मान्य नेता हैं, और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कई वर्ष तक प्रधान रहे, शारदा ऐक्ट के अनुसार उनकी पुत्री के विवाह के सम्बन्ध में अभियोग चलाया गया था जिसमें मैजिस्ट्रेट की अदालत से उन पर १०-४-४३ को ५००) जुर्माना हुआ था, परन्तु अपील में सेशन जज की अदालत से ३१।५।४३ को ये निर्दोष ठहराये गये। श्री गुप्त जी ने जब उन पर अभियोग चल रहा था सार्वदेशिक सभा को उसकी सूचना दी थी और अपना वक्तव्य भेजा था। अब एक और वक्तव्य उनका प्राप्त हुआ है आर्य जनता इस मामले का वृत्तान्त जानने को उत्सुक होगी इसलिये वह संक्षेप से नीचे दिया जाता है।

शारदा ऐक्ट के अनुसार १४ वर्ष से कम आयु की कन्या और १८ वर्ष से कम आयु के वर का विवाह वर्जित है, श्री गुप्त जी की कन्या की आयु १४ वर्ष से कम नहीं थी, १६ वर्ष थी, परन्तु वर की आयु १८ वर्ष से कम थी, इसी अपराध में शारदा ऐक्ट की धारा ५ के अनुसार उन पर मजिस्ट्रेट की अदालत से ५००) जुर्माना किया गया था।

यह सम्बन्ध श्री गुप्त जी के घर वालों ने उस समय ठहराया था जब वे सिविल नाफर मानी Civil Disobedience के कारण नागपुर जेल में थे। उनका कहना है कि वे वर के परिवार को जानते थे, उन्होंने वर को नहीं देखा था और इस बात का विचार भी उनके मन में नहीं आया कि वर की आयु कम होगी क्योंकि उनके घर के लोग और सम्बन्धी उनके दृढ़ और निश्चित धार्मिक व सामाजिक विचारों को अच्छी तरह जानते थे। १७-११-४१ को उनके विरुद्ध अभियोग अदालत में पेश हुआ उसकी सूचना उनको पहिली बार २०-११-४१ के सायंकाल अदालत के नोटिस द्वारा हुई उससे पहिले उनको इस बात मे सन्देह करने का कोई कारण नहीं हुआ था कि वर की आयु १८ वर्ष से कम होगी।

विवाह संस्कार २१-११-४१ के प्रातःकाल होने को था। उससे पूर्व बारात आ चुकी थी और विवाह सम्बन्धी कई कार्य हो चुके थे। उस समय श्री गुप्त जी ने विवाह को रोकना और बारात को लौटाना सम्भव नहीं समझा, उनके बयान में कहा गया है कि ऐसा करने से कन्या का जीवन नष्ट होने की सम्भावना थी जैसा कि दूसरे पक्ष के गवाहों ने भी स्वीकार किया। अदालत में श्री गुप्त जी ने केवल अपना लिखित वक्तव्य दाखिल किया और कोई सफाई नहीं

पेश की

अदालत अपील ने शारदा ऐक्ट की धारा ५ का अपराध इसलिये नहीं माना कि वह धारा विवाह कराने वाले पुरोहित पर लागू है। वर और कन्या के माता पिता वा संरक्षक को धारा ६ के अनुसार दण्ड दिया जा सकता है। धारा ६ का अपराध इसलिये नहीं माना गया कि श्री गुप्त जी की कन्या की आयु ऐक्ट में वर्णित १४ वर्ष से कम नहीं थी, वर की आयु १८ वर्ष से कम थी परन्तु श्री गुप्त जी उसके संरक्षक नहीं थे और कानून के अनुसार वर के संरक्षक का ही उत्तरदायित्व था। इसलिये जज ने श्री गुप्त जी को निर्दोष ठहरा कर बरी किया।

श्री गुप्त जी ने अपने बयान में जो अदालत में दाखिल किया गया अपने को अपराधी न मानते हुए इस बात पर अत्यन्त शोक प्रकट किया है कि उनका सम्बन्ध इस प्रकार के मामले से रहा कि जो उनके जीवन के आदर्श और व्यवहार से सर्वथा प्रतिकूल था।

श्री घनश्यामसिंह गुप्त जी दीर्घ काल से धर्म परायण आर्य रहे हैं। (उन्होंने अपना विवाह प्रचलित जाति बन्धन तोड़कर बिरादरी के विरोध की बिल्कुल परवाह न करके किया था) और उनके आचार व व्यवहार सदा दृढ़ आर्यों के से रहे हैं, यह खेद की बात है कि इस मामले में यदि उनकी कुछ भूल भी मानी जावे उनको उसके लिये इतनी परेशानी सहनी पड़ी।

उन पर जो अभियोग चलाया गया वह केवल वैयक्तिक द्वेष के कारण उनका मान घटाने के अभिप्राय से चलाया जाना प्रतीत होता है जैसा उन्होंने अदालत में बयान किया। उस में उनके साथ उनकी धर्मपत्नी भी मुद्दाले बनायी गई थीं परन्तु मजिस्ट्रेट ने आरम्भ ही में उनको तलब नहीं किया हम लोगों की दृष्टि में श्री घनश्याम सिंह गुप्त उसी आदर और सम्मान के पात्र हैं जैसा कि पूर्व थे। उनकी धर्म परायणता, योग्यता और उनकी सेवाएं आर्य जनता से छिपी नहीं हैं।

रामगढ़ गङ्गाप्रसाद
२२।६।४३ (प्रधान सा० आ० प्र० सभा)

दान सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

जून १६४३

आर्य समाज स्थापना दिवस वेद प्रचार निधि

संयुक्त प्रान्त

७०) आर्य समाज बहराइच
१०॥) ,, ,, अमरोहा
५) , ,, रामगढ़ (नैनीताल)
५) ,, , फिराजाबाद (आगरा)
५) ,, , मेरठ सिटी
१०) ,, , देहरादून
५) ,, ,, मवाना कला (मेरठ)
८=) , , जौनपुर
६) उरई टाउन

पंजाब

५०) आर्य समाज बच्छा वाली, लाहौर
१०) ,, ,, लाहौर कैंट

राजस्थान

५) आर्य समाज कहल (अजमेर)
७॥) ,, ,, बास कृपालनगर (अलवर)
१०) , आबूरोड (सिरोही)
२१॥) मह छावनी

बम्बई

५॥) आर्य समाज सूरत

मध्य प्रदेश

१०) आर्य समाज, सागर

१६८॥=)
गत योग (५१६॥)
सर्व योग ७१७ ॥।=)

धन्यवाद प्रकाश

गत २१ मई को हमारी प्रिय पुत्री सरस्वती देवी के खेद जनक देहावसान का समाचार जान कर जिन देवियों और सज्जनों ने समवेदना तथा सहानुभूति सूचक तार वा पत्र भेजे हैं उन सबको मैं अपनी तथा परिवार की ओर से हार्दिक धन्यवाद देता हूं। कार्याधिक्य के कारण प्रथक् २ पत्र नहीं लिखे जा सके इसका खेद है।

धर्मदेव सि० वा०

---

३ अनमोल रत्न

लेखक—पं० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार

आर्य समाज का इतिहास—(सम्पूर्ण) मूल्य बारह आने

वैदिक शिष्टाचार—मूल्य तीन आने।

माता का सन्देश—(१८ वर्ष तक के बालकों को ब्रह्मचर्य का अभ्यास डलवाने के वर्णन) मूल्य सजिल्द १॥)

वयस्क बालक बालिकाओं को उपहार में देने योग्य

तीनों ही पुस्तकें अन्य विद्वानों एवं प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्रियों द्वारा मुक्त कंठ से प्रशंसित हैं।

अपने पुस्तक विक्रेता से मंगिये अथवा लिखिये— व्यवस्थापक—

हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, लोकमान्य' प्रेस पाटौदी हाउस दर्यागंज देहली।

सत्यार्थ प्रकाश की रक्षा

सार्वदेशिक सभा का वक्तव्य

२६ जून के 'वीर अर्जुन' तथा अन्य पत्रों में निम्न समाचार पढ़कर सारे आर्य जगत् में सनसनी और रोष उत्पन्न हागया कि "सिंध सरकार की एक विज्ञप्ति में कहा गया है कि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक पुस्तक के विरुद्ध प्रान्तीय मन्त्रियों के पास कुछ विरोध पत्र आए हैं। सरकार इस सम्बन्ध में विचार कर रही है और शीघ्र अपना निर्णय देगी।"

आर्य जनता यह जानने को उत्सुक है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अब तक इस विषय मे क्या कार्यवाही की है तथा उसका आर्य जनता को क्या आदेश है इस विषयक सूचना देने के लिए ही यह वक्तव्य प्रकाशित किया जा रहा है। यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि सभा इस विषय को बड़ी गम्भीरता और चिन्ता के साथ ले रही है और सत्यार्थ प्रकाश' जैसे पवित्र धर्म ग्रन्थ की रक्षा तथा प्रचार के लिए जो प्रत्येक धर्म प्रेमी आर्य और विचार शील हिन्दू के लिए प्राणों से भी बढ़कर प्रिय है, जिसने कि करोड़ों व्यक्तियों की आंखें खोल दी हैं, कुछ भी उठा न रक्खेगी और इस विषय मे आर्य जनता का पथ प्रदर्शन करेगी। २६ जून के पत्रों मे यह आश्चर्य और खेद जनक समाचार पढते ही सभा की ओर से सिंध आर्य प्रतिनिधि सभा के उत्साही योग्य मन्त्री प्रो० ताराचन्द्र जी एम० ए० को पत्र लिखा गया जिसमे पूछा गया "क्या यह समाचार सत्य है? यदि हां तो सिंध प्रतिनिधि सभा इस विषय मे क्या कार्यवाही कर रही है?" उन्हें यह भी लिखा गया कि सिंध मे सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार के लिए सार्वदेशिक सभा सिंधी और हिन्दी के सत्यार्थ प्रकाश का जितनी प्रतियां सिंध प्रतिनिधि सभा के पास हों उन्हे लागत मात्र मूल्य पर अपनी ओर से खरीद कर सिंध के घर घर मे मुफ्त वितरण कराने को उद्यत है। सिंध प्रतिनिधि सभा तथा हैदराबाद (सिंध) आर्य समाज की ओर से सभा कार्यालय मे तार आए हैं और प्रो० ताराचन्द्र जी का एक पत्र मिला है जिनमे उपर्युक्त समाचार का सत्य बताते हुए कि सिंध सरकार इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रही है और शीघ्र निर्णय देने वाली है सूचित किया गया है कि सिंध मे 'सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति' स्थापित की गई है और सरकार से इस विषय मे मिलकर आर्यों का दृष्टि कोण उनके सामने रक्खा जा रहा है। सिंध प्रतिनिधि सभा की अन्तरङ्ग सभा इस सारे विषय पर विचार करके भावी कार्य क्रम के निर्णय के लिए ४ जुलाई को सक्खर मे बुलाई जा रही है।

इस बीच मे सभा समस्त आर्य समाजों को आदेश देता है कि वे रविवार को अपने साप्ता-

दिक सत्सङ्गों तथा सार्वजनिक सभाओं मे इस आशय का प्रस्ताव स्वीकार करके उसकी प्रति सिंध आर्यप्रतिनिधि सभा कराची प्रीमियर सिंध गवर्नमेन्ट, कराची तथा सार्वदेशिक आर्य प्रति० सभा देहली के पास भेजें। यत्न किया जाय कि इन सार्वजनिक सभाओं मे आर्य (हिन्दू) नर नारी अधिक से अधिक, सख्या मे सम्मिलित हों।

प्रस्ताव

के निवासी आर्य नर नारियों की

ता को मे एकत्रित यह सभा सिंध सरकार द्वारा प्रकाशित इस विज्ञप्ति पर अत्यन्त रोष और असन्तोष प्रकट करती है कि वह कुछ मतान्ध लोगों को प्रसन्न करने के लिए ऋषि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश को जो वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादक अनुपम ग्रन्थ है और जिसके अध्ययन से करोड़ों व्यक्तियों की आखें खुल गई हैं, जब्त कराने विषयक आवेदन पत्रों पर विचार कर रही है और शीघ्र ही इस विषयक घोषणा करने वाली है। सत्यार्थ प्रकाश समस्त आर्यों का पवित्र धर्म ग्रन्थ है जो उन्हे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है। इसलिए यह सभा सिंध सरकार से सानुरोध निवेदन करती है कि अपने इस अनुचित, आर्यों के धार्मिक अधिकार पर कुठाराघात करने वाले विचार को बिल्कुल छोड़ दे नहीं तो जो असन्तोष की आग सारे आर्य जगत् में फैलेगी उसके लिए सिंध सरकार ही जिम्मेवार होगी।

(२) इस सभा में सम्मिलित सब नरनारी, सत्यार्थ प्रकाश को सिंध में जब्त कराने का जो अत्यन्त निन्दनीय यत्न किया जा रहा है, उसे दृष्टि में रखते हुए घोषणा करते है कि हम सत्यार्थ-प्रकाश को सदैव अपने पास रक्खेंगे और दूसरों मे भी उसका प्रचार करेंगे तथा यदि कोई शक्ति हमसे उसे छीनना चाहेगी वा उसे जब्त कर देगी तो हर प्रकार के कष्ट सहन करके भी हम उसकी रक्षा करेंगे तथा जब रक्षा कार्य के लिए हम तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का सन्देश पहुंचेगा, बिना सकाच के हम उसके अनुसार कार्य करने को बद्ध रहेंगे।

समस्त आर्य जगत् की शिरोमणि सभा के रूप मे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा सिंध सरकार को चेतावनी देती है कि वह सत्यार्थ-प्रकाश जैसे महान् अमर ग्रन्थ को जब्त कराने का विचार दिल से निकाल दे, नहीं तो समस्त आर्य तन मन धन अर्पण करके भी उसकी रक्षा अवश्य करेंगे जैसे कि हैदराबाद राज्य मे उन्होंने अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षा की थी। सभा आशा करती है कि सिंध सरकार ऐसा अनुचित निर्णय करके अपने को स्वतन्त्रता प्रेमी जनता की दृष्टि मे उपहास और निन्दा का पात्र न बनाएगी, क्योंकि इस प्रकार के निन्दनीय प्रयत्न पहले भी २ ३ बार किये जा चुके हैं, पर वे कभी सफल नहीं हुए।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
देहली।

सिन्ध के प्रधान मन्त्री को सार्वदेशिक सभा की ओर से निम्न तार २६-६-४३ को दिया गया।

PREMIER
SIND GOVERNMENT
KARACHI

SHOCKED LEARNING YOUR MINISTRY'S CONTEMPLATED MOVE PROSCRIBING SATYARTHA PRAKASH ARYAS INDISPENSABLE RELIGIOUS BOOK IF MATERIALISED ALL ARYAS WILL ACCEPT CHALLENGE READY SACRIFICING ALL FOR RELIGIOUS LIBERTY AS IN HYDERABAD STATE PLEASE GIVE UP UNWISE PROPOSED STILL AVOIDING BITTER STRUGGLE

INTERNATIONAL ARYAN LEAGUE
DELHI

अर्थात् आर्यों की अत्यन्त प्रिय अनिवार्य धर्म पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में आपके मन्त्री मण्डल द्वारा सम्भावित ज़ब्ती के विचार का समाचार सुनकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। यदि ऐसा कोई कदम उठाया गया तो आर्य इस चुनौती को स्वीकार करेंगे और उस अवस्था में वे हैदराबाद राज्य की तरह धार्मिक स्वतन्त्रता के लिये सब कुछ बलि देने के लिये उद्यत होंगे। कृपया इस अत्यधिक अविवेकता पूर्ण कार्यवाही का विचार त्याग दीजिये ताकि भीषण संघर्ष टल जाय।

इसी आशय के तार पंजाब तथा अन्य प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं की ओर से भी सिन्ध के प्रधान मन्त्री को दिये गये।

साहित्य समीक्षा

भगवत्कथा—(उपनिषदों के आधार पर) लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम०ए० मुद्रक तथा प्रकाशक—कला प्रेस, प्रयाग (इलाहाबाद) पृ० स० १५६ मू० १)

इस पुस्तक के सुयोग्य लेखक श्री प० गङ्गाप्रसाद जी मङ्गलाप्रसाद पारितोषिक के विजेता, सुप्रसिद्ध विद्वान हैं, जिन्होंने उपनिषदों के आधार पर इस पुस्तक को लिखकर हारकथा अथवा सत्य नारायण कथा आदि के उत्तम रूप मे अभाव की पूर्ति कर के आर्य जगत् की बड़ी सेवा की है। पुस्तक का विभाग ७ आन्हिकों में किया गया गया है जिनमे कथा का पात्र कौन है ? जीव का स्वरूप, भगवान् का स्वरूप, धम के ३ स्कन्ध तीन प्रकार के नरन रा, लाक और परलोक-परम-पद इन विषयों पर उपनिषदों के वचनों और कथाओं को व्याख्या सहित उद्धृत करते हुये बड़ा उत्तम प्रकाश डाला गया है। पुस्तक सब धम प्रेमियों के लिए अत्यन्त उपयोगी और उपादेय है।

प्रतीत होता है शीघ्रता मे प्रकाशन के कारण कहीं कहीं छापे की कुछ अशुद्धिया रह गई हैं। आशा है अगले सस्करण में इनको भी दूर कर दिया जायगा। इस पुस्तक रत्न के द्वारा आर्य साहित्य मे बड़ी अभिनन्दनीय वृद्धि हुई है जिसके लिये सुयोग्य लेखक महोदय धन्यवाद और बधाई के पात्र हैं।

प्रवासी प्रपञ्च—लेखक श्री ब्रह्मदत्त भवानीदयाल जी, प्रकाशक—पुस्तक भण्डार लहेरियासराय पटना। पृष्ठ सख्या लगभग १५०, मूल्य १)

यह दक्षिण अफ्रीका प्रवासी भारतवासियों के सामाजिक जीवन का निदर्शक मौलिक उपन्यास है जो सुप्रसिद्ध प्रवासी नेता श्री भवानी दयाल सन्यासी जी के सुपुत्र श्री ब्रह्मदत्त जी ने आज से लगभग ५ वर्ष पूर्व लिखा था जिसकी भाषा का परिष्करण श्री भवानीदयालजी ने किया है। हिन्दी क सुप्रसिद्ध लेखक श्री शिवपूजन सहाय जी ने सक्षिप्त भूमिका में ठीक ही लिखा है कि लेखक को अपने इस प्रथम प्रयास में प्रशसनीय सफलता मिली है। १८ परिच्छेदों में लेखक महोदय ने प्रवासी भारतीयों की धार्मिक और सामाजिक दशा का चित्रण इतनी रोचक भाषा और सरल शैली मे किया है कि एक बार पुस्तक को प्रारम्भ करने पर बीच मे छोड़ने को जी नहीं करता। पुस्तक प्रवासी भारतीयों की वास्तविक दशा को जानने की इच्छा रखने वाले सब व्यक्तियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। हम श्री ब्रह्मदत्त जी का उनकी प्रथम कृति की अद्भुत सफलता के लिए हार्दिक अभिनन्दन करते हैं और आशा रखते हैं कि उनके द्वारा आर्य भाषा साहित्य में प्रशसनीय वृद्धि चिरकाल तक होती रहेगी।

वैदिक शिष्टाचार—लेखक प० हरिश्चन्द्र जी विद्यालङ्कार सम्पादक 'लोकमान्य' पटौदी हाऊस देहली पृ० स० ६५ मू० =)

सम्पादकीय

वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन की आर्यता

'सार्वदेशिक' के सम्पादकीय तथा अन्य स्तम्भों में हम इस बात पर विशेष बल देते रहे हैं कि आर्य समाज की वास्तविक सन्तोष जनक उन्नति के लिये इसके सदस्यों और सहायकों का वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन का अधिक से अधिक पवित्र और वैदिक शिक्षानुकूल बनाना अत्यन्त आवश्यक है। इसी बात को विशेष रूप से अनुभव करते हुए सार्वदेशिक सभा ने जो त्रैवार्षिक कार्यक्रम अपने बृहदधिवेशन में गत एप्रिल मास में सर्व सम्मति से स्वीकार किया उसमे वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन की आर्यता को प्रथम स्थान दिया गया। पाठक महानुभाव इसी अङ्क में माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त के सम्बन्ध मे सभा के वर्तमान पूज्य प्रधान श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम.ए रिटायर्ड चीफ जस्टिस का वक्तव्य पढ चुके हैं। उसके सम्बन्ध मे और कुछ भी लिखना सर्वथा अनावश्यक है हमे इस बात का अत्यन्त हर्ष है कि माननीय गुप्त जी निर्दोष प्रमाणित हुए हैं किन्तु माननीय श्री गुप्त जी को जो परेशानी अपने कुछ सम्बन्धियों के उनकी जेलयात्रा के कारण अनुपस्थिति मे उनके अभिमत वैदिक सिद्धान्त और कानून के विरुद्ध विवाह सम्बन्ध निश्चय कर देने के कारण उठानी पडी (यद्यपि उनका इस मे कोई भी हाथ न था) उससे इस उपयुक्त विषय की महत्ता और भी अधिक स्पष्ट रूप से ज्ञात होती है। यदि सब आर्य अपने सम्बन्धियों और परिवार के सब सदस्यों के विचारों तथा जीवनों को आर्य आदर्शानुकूल बनाने का प्रेमपूर्वक सदा प्रयत्न करते रहें तो हमें निश्चय है कि वे न केवल इस

(पृष्ठ ५३५ का शेष)

यह आर्य बालक बालिकाओं के लिए विशेष उपयोगी लघु पुस्तक है जिसे श्री प० हरिश्चन्द्र जी ने मनुस्मृति, प० रामनारायण मिश्र जी कृत 'हिन्दुस्तानी शिष्टाचार' आदि के आधार पर संगृहीत किया है। आध्यात्मिक कर्तव्य, स्वास्थ्य, परस्पर व्यवहार, नारी शिष्टतादि पर उत्तम नियमों का इस लघु पुस्तक में संग्रह है। यह हर्ष की बात है कि भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषत् ने अपनी धार्मिक परीक्षाओं में इसे स्थान देने का निश्चय किया है। मकान में देवताओं और महापुरुषों के चित्र होने चाहियें' (पृ० २५) यहां देवता शब्द का स्पष्टीकरण होना चाहिये ताकि पौराणिक देवता का भ्रम न हो। ध० दे०

प्रकार की परेशानियों से बच जाएँ बल्कि आर्य-समाज दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करने लग जाए, क्योंकि तब प्रत्येक आर्य का वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन लोगों के लिये आदर्श रूप, आकर्षक और शिक्षा प्रद बन जाए।

आर्य समाज और स्वदेशीः—

आर्य समाज सरदारपुरा (जोधपुर) के उत्साही योग्य पुरोहित श्री प० ब्रह्मप्रकाश जी विद्यावाचस्पति ने 'हम आर्य कैसे बनें बनाएँ' इस शीर्षक से एक लेख 'आर्य मित्र' आदि पत्रों मे प्रकाशित कराया है उसके निम्न अंश की ओर हम पाठकों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना चाहते है। आर्यसमाजियों का सम्बोधन करते हुए प० ब्रह्मप्रकाश जी लिखते हैं 'यदि चाहते हो कि संसार मे वैदिक वैजयन्ती फहराये तो अपनी ओर देखो। महर्षि दयानन्द ने ठाकुर ऊधोसिंह का अलीगढ़ मे विदेशी वस्तुओं तथा फैशन के लिये फटकार लगाई थी। आज भ भारत माता के एक मात्र लाल विश्वबन्द्य महात्मा गांधी जी महाराज भारतीय सभ्यता की साक्षात् मूर्ति है जिन्होंने हमे बहुतेरा चेताया। पर इतने पर भी हमारे अधिकांश समाजों के पदाधिकारी पाश्चात्य सभ्यता के घर कोट और पतलूनों से बाहिर नहीं निकलते हैं और अपनी प्यारी सतति को उसी रंग मे रँगने का प्रयत्न करते हैं इसके अतिरिक्त जनता के पथ प्रदर्शक उपदेशक महानुभावों ने भी अभी तक शुद्ध खद्दर तथा अन्य स्वदेशी वस्तुओं के प्रयत्न करने पर भी पूरा ध्यान नहीं दिया है। अत हमारी माननीय शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को इस ओर पूरा ध्यान देकर शीघ्र ही इस आशय का प्रस्ताव पास करना चाहिए कि आर्य समाजों तथा अन्य आर्य संस्थाओं के पदाधिकारियों व उपदेशक महानुभावों को पूर्ण रूपेण शुद्ध खद्दर व स्वदेशी बाने मे रहना नितान्त आवश्यक है तथा इस नियम की अवहेलना करनेवाले अपने अपने पदों से पृथक् कर दिये जाएँगे। आर्य समाज मे इस नियम की पूर्ति होने पर हम आर्यत्व के पहले चिन्ह को अपना कर आत्म-पवित्रता तथा स्वदेश भक्ति का पाठ पढ कर आत्म गौरव को ग्रहण कर सकेंगे और आर्य बनने बनाने का मार्ग अतीव सरल हो जाएगा।" इत्यादि

महर्षि दयानन्द ने स्वराज्य के महत्व को जनता के सामने रखने के साथ साथ स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग का सत्यार्थ प्रकाश के ११वें समुल्लास मे तथा अन्यत्र विशेष रूप से प्रतिपादन किया तथा उस समय के ब्रह्म समाजियों का स्वदेश भक्ति की न्यूनता और विदेशी वस्त्र वेष-भूषादि रखने की कड़ी आलोचना की। इसलिये प्रत्येक सच्चे आर्य्य नर-नारी का स्वदेश भक्ति की पवित्र भावना को मनमे रखते हुए स्वदेशी (सबसे अच्छा हो शुद्ध स्वदेशी अथवा खद्दर) वस्त्रों के धारण और यथा सम्भव अन्य स्वदेशी वस्तुओं के ही उपयोग का व्रत लेना सर्वथा उचित ही है। कम से कम विदेशी वस्त्रों का प्रयोग सर्वथा अनुचित समझा जाना चाहिये। आर्य प्रचारकों और समाज के कार्यकर्ताओं तथा पदाधिकारियों की स्वदेशी विषयक उत्तम आदर्श जनता के सम्मुख रखकर अपनी स्वदेशभक्ति का क्रियात्मक परिचय देना

चाहिये। इन विषयों में प्रेमपूर्वक कर्तव्य भावना से प्रेरित होकर जितना कार्य किया जाएगा उतना ही समाज की सर्वतोमुखी उन्नति के लिये उत्तम होगा। शेष सार्वदेशिक आ० प्र० सभा इस विषयक प्रतिबन्ध को अनुशासन या कठोर नियन्त्रण के रूप मे कहा तक काम में ला सकती है इसका निर्णय सभा की अन्तरग सभादि द्वारा ही करवाया जा सकता है, किसी एक व्यक्ति को इस विषय मे निर्णय देने का अधिकार नहीं।

सत्यार्थप्रकाश का महत्त्व :—

सिन्ध सरकार 'सत्यार्थप्रकाश' को जब्त कराने विषयक आवेदन पत्रों पर गम्भीरता से विचार कर रही है और शीघ्र ही इस विषय का निर्णय देने वाली है। इस समाचार ने आर्य जगत् में जो विक्षोभ उत्पन्न कर दिया, उसका अनुमान सार्वदेशिक सभा कार्यालय मे प्राप्त अनेक तारों, पत्रों तथा स्थान २ पर इस सम्बन्ध में की गई विराट् सभाओं से किया जा सकता है। जिस 'सत्यार्थप्रकाश' की जब्ती का विचार सुनते ही प्राय जनता मे इतना रोष उत्पन्न हो गया है उसके महत्त्व पर कुछ प्रकाश डालना यहाँ अनुचित न होगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश का स्थान बहुत ऊंचा है। सत्यार्थप्रकाश मे वेदादि-सत्य शास्त्रों की शिक्षा का सार बहुत ही उत्तम युक्तियुक्त सरल और रोचक रीति से रख दिया गया है, जिससे कोई भी निष्पक्षपात विचारक उससे प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। मनुष्य के वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय सब कर्तव्यों पर बड़ा उत्तम प्रकाश इस ग्रन्थरत्न में डाला गया है। यही कारण है कि यह अमर ग्रन्थ इतना प्रख्यात और लोकप्रिय हुआ है कि भारत की प्राय सभी भाषाओं मे और यूरोप की अंग्रेजी फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं मे उसका अनुवाद हो चुका है जिससे लाखों बल्कि करोड़ों व्यक्तियों को लाभ पहुचा है, उनकी अन्दर की आँखें खुल गई हैं तथा उनके विचारों मे अद्भुत क्रान्ति उत्पन्न हो गई है। कई आश्चर्य की बात नही कि इस अमर ग्रन्थ के कर्ता महर्षि दयानन्द का अमेरिका के सुप्रसिद्ध योगी ऐण्ड्रू जैक्सन डेविड ने— Beyond the Valley नामक ग्रन्थ मे 'The inspired son of God in India' अर्थात भारत मे ईश्वरीयज्ञान प्राप्त परमेश्वर पुत्र के नाम से स्मरण किया। लण्डन युनिवर्सिटी के प्रो० आर० एल० टर्नर D Litt ने सत्यार्थ-प्रकाशादि ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों तथा कार्यों को दृष्टि मे रखते हुए ठीक ही लिखा था One cannot withhold one's admiration for Swami Dayananda whose work perhaps more than that of any other individual has halped to make India Conscious of itself as a unit with some distinctive contribution to make to the culture of the world as a whole जिसका भावार्थ यह है कि कोई भी व्यक्ति स्वामी दयानन्द की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता जिनके कार्य ने भारत मे सबसे अधिक जागृति उत्पन्न कर दी और उसे जगत की संस्कृति मे विशेष महत्वपूर्ण वृद्धि करने योग्य बना दिया।

इस उत्तम भारतीय संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान सत्यार्थप्रकाश के पढ़ने से ही हो सकता है। कई संकुचित दृष्टि वाले व्यक्ति सत्यार्थप्रकाश में मतमतान्तरों की कई बातों की समालोचना को देखकर चिढ़ जाते हैं। उन्हें ऋषि दयानन्द के इन शब्दों पर ध्यान देना चाहिये कि मेरा "न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें, क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।" (स० प्र० भूमिका)

इस समालोचना से ऋषि का उद्देश्य मनुष्यों के परस्पर विरोध को दूर करके उनमें परस्पर प्रेम की वृद्धि करना था, यह भूमिका के निम्न शब्दों से स्पष्ट है। "श्रोता और पाठकगण भी प्रथम प्रेम से देख के इस ग्रन्थ का सत्य २ तात्पर्य जानकर यथेष्ट करें। इसमें यह अभिप्राय रक्खा गया है कि जो २ सब मतों में सत्य २ बातें हैं वे २ सबमें अविरुद्ध होने से उनका स्वीकार कर के जो २ मतमतान्तरों में मिथ्या बातें हैं उन २ का खण्डन किया है। इसमें यह भी अभिप्राय रक्खा गया है कि सब मतमतान्तरों की गुप्त वा प्रकट बुरी प्रकट बातों का प्रकाश कर विद्वान् अविद्वान् सब साधारण मनुष्यों के सामने रक्खा है जिससे सबसे सबका विचार होकर परस्पर प्रेमी हो के एक सत्य मतस्थ होवें" (सत्यार्थ प्रकाश भूमिका)

पिछले ४ समुल्लासों की अनुभूमिकाओं में भी इस बात को अत्यन्त स्पष्ट कर दिया गया है। जिस १४वें समुल्लास को जब्त कराने के लिये इस समय सिन्ध के कई मतान्ध मुसलमान इतने व्याकुल हो रहे प्रतीत होते हैं उसकी अनुभूमिका के निम्न शब्द तो स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं। 'यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य के निर्णय के लिये सब मतों के विषयों का थोड़ा २ ज्ञान होवे इससे मनुष्यों का परस्पर विचार करने का समय मिले और एक दूसरे के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठ मूठ बुराई वा भलाई लगाने का प्रयोजन है किन्तु जो २ भलाई है वही भलाई और जो बुराई है वही बुराई सबको विदित होवे न कोई किसी पर झूठ चला सके और न सत्य को रोक सके और सत्यासत्य विषय प्रकाशित किये जाने पर भी जिसकी इच्छा हो वह न माने वा माने किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता।

इसमें जो कुछ विरुद्ध लिखा गया हो उसको सज्जन लोग विदित कर देंगे तत्पश्चात् जो उचित होगा तो माना जाएगा। क्योंकि यह लेख हठ, दुराग्रह, ईर्ष्या द्वेष, वाद विवाद और विरोध घटाने के लिये किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ क्योंकि एक दूसरे की हानि करने से पृथक् रह पर सब को लाभ पहुँचाना हमारा मुख्य कर्म है। अब यह चौदहवें समुल्लास में मुसलमानों का मत विषय सब सज्जनों के सामने

निवेदन करता हूं। विचार कर इष्ट का ग्रहण अनिष्ट का परित्याग कीजिये।"

ये महत्व पूर्ण शब्द महर्षि दयानन्द के हृदय की पवित्रता, सरलता, उदारता और विशुद्ध सत्य निष्ठता के सूचक हैं। इनके होते हुए भी सत्यार्थ प्रकाश को विद्वेष वर्धक सिद्ध करने का यत्न करना अथवा उसको जब्त कराने का निन्दनीय यत्न करना कितना उपहास जनक है इस विषय मे कुछ लिखने की अभी आवश्यकता नहीं। सत्यार्थ-प्रकाश की आलोचनाओं से विचारशील लोगों ने (जिनमें पौराणिक, ईसाई, मुसलमान आदि सम्मिलित हैं) कितना लाभ उठाया है इत्यादि विषयों पर हम फिर कभी प्रकाश डालेंगे। ऐसे पवित्र धर्म ग्रन्थ का स्वाध्याय करना तथा उसकी रक्षा करना हम सब का परम कर्तव्य है।

———

पूर्व प्रकाशित प्रस्तावों का अंग्रेजी रूप इस आशय का हो।

RESOLUTIONS

"(1) This meeting of the members and sympathisers of the Arya samaj held at

on.

expresses its surprise and resentment at the startling news published in papers that on the representation of some fanatical muslims, the Muslim League Ministry in Sind is seriously considering the proposal of proscribing the Satyarth Prakash immortal work of Rishi Dayananda Saraswati which is the best exponent of the Vedic principles and which has proved to be an eye opener to to millions of people The Satyarth Prakash is a holy book in the eyes of all Aryas which is dearer to them than the life itself, therefore, this meeting urges upon the Sind Ministry to give up the unwise idea, otherwise they will be responsible for the wide spread discontentment throughout the Aryan World

(2) Keeping in view the sinister efforts that are being made by some muslims in Sind all persons assembled in this meeting declare that they will always keep a copy of the Satyarth Prakash with them and will persuade others also to do the same, that they are determined to preserve it intact even in the teeth of the mighty power of any Government and that this shall abide by the directions of the Sarvadeshik Sabha issued from time to time in this connection '

———

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि लोकों का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ॥=)

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यों को उद्घाटित करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है। मूल्य ॥=)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण ।)

(४) उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

=), ।-), ≡), =)॥, =)॥, -)॥, ≡)॥, ।), ।=)॥

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय में रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

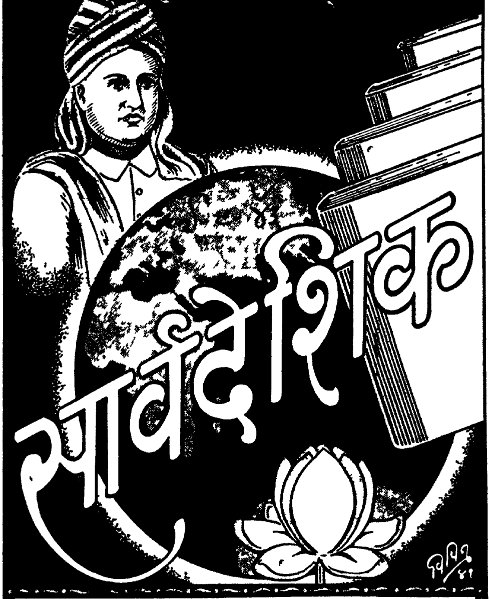
श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित

Regd No L 2121

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) प्राणायाम विधि	)॥
(२) वैदिक सिद्धान्त अजिल्द	।।।)
सजिल्द	१)
(३) विरजानन्द विजय	≈)
(४) धर्मपितृ परिचय	७)
(५) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	२)
(६) वेद में असित शब्द	-)।
(७) वैदिक सूर्य्य विज्ञान	≈)
(८) ऋग वेद में देवृकामा या देवकामा	-)
(९) विदेशों में आर्य्य समाज	॥)
(१०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	१।)
(११) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श	१॥)
(१२) भजन भास्कर	॥)
(१३) समस्त आर्य्य समाजों की सूची	॥)
(१४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास अ०	२)
सजिल्द	२॥)
(१५) बलिदान	॥)
(१६) आर्य डायरेक्टरी	अ० १।) स० १॥)
(१७) वैदिक सन्ध्या रहस्य	-)।
(१८) सत्यार्थ निर्णय	१॥)
(१९) संस्कृत सत्यार्थप्रकाश	अ० ।)
(२०) हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद (उर्दू में)	≈)
(२१) इजहारे हकीकत (उर्दू में)	।॥≈)
(२२) सत्य निर्णय	१।)
(२३) आर्य्य पर्व पद्धति अजिल्द	।≈)
सजिल्द	१)
(२४) मातृत्व की ओर अजिल्द	१।)
सजिल्द	१॥)
(२५) कथा माला	।≈)
(२६) आर्य्य जीवन और गृहस्थ धर्म	।≈)
(२७) आर्य्यवर्त्त की वाणी	≈)॥
(२८) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर	≈)
(२९) आर्य सत्याग्रह	२॥)
(३०) कायाकल्प सजिल्द	१।)
(३१) पञ्चयज्ञ प्रकाश	।।।)
(३२) आर्य समाज का इतिहास	।।।)
(३३) बहिनों की बातें	॥)
(३४) भक्ति कुसुमाञ्जलि	।।।)
(३५) विमान शास्त्र	।≈)॥
(३६) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	१)
(३७) Agnihotra Well Bound	२५)
(३८) Crucifixion by an eye witness	।-)
(३९) Truth and Vedas	।≈)
(४०) Truth-bed-rock of Aryan Culture	॥)
(४१) Vedic Teachings	१।)
(४२) Voice of Arya Varta	≈)
(४३) Christianity in India	॥)
(४४) The Scope and Mission of	
(४५) Arya Samaj Bound	१)
" Unbound	॥)
(४६) Eclesia Diwina Bound	५)
(४७) The Glory of Vedas	-)॥
(४८) Arya Samaj and Vedic Dharma	॥)
(४९) Commentary on Ishopnishad	।)
(५०) Commentary on Arya Marriage Act	।)
(५१) Light of the Truth Bound	२॥)

कृण्वन्तोविश्वमार्यम्



१९४३ ई०
२००० सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश ७ शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष १९ } अगस्त, १९४३ ई०] श्रावण २००० [दयानन्दाब्द १२० { अङ्क ६

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे ।
स वृषा वृषभो भुवत् ॥ सामवेद उत्तरार्चिक मन्त्र स० १२२२

शब्दार्थ—हम भक्त (महे वृत्रायहन्तवे) ज्ञान का आवरण करने वाले बड़े अज्ञान और पाप का नाश करने के लिये (तम् इन्द्रम्) उस सर्वैश्वर्य सम्पन्न प्रभु की (वाजयामसि) ज्ञान पूर्वक स्तुति करते हैं। (स वृभ) वह सर्व शक्तिमान् परमेश्वर (वृषा भुवत्) हम पर सुख शान्ति और आनन्द की वर्षा करने वाला हो।

विनय हे जगदीश्वर। आप सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हैं। हम भक्त यह चाहते हैं कि हमारा सारा अज्ञान और पाप दूर हो जाए इसलिये हम सदा आपका ही ध्यान तथा भजन कीर्तन ज्ञानपूर्वक करते हैं। आप हम पर सुख शान्ति और आनन्द की वर्षा करें जिससे स्वय शान्ति लाभ करके हम अन्यों को भी सुखी, शान्त और आनन्दित बना सकें।

—

श्री श्रद्धानन्द उपदेशामृत—

अध्यात्म सुधा

॥ तुम्हारा जीवन ही उपदेश हो ॥

(लेखक—स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, संगृहीता श्री लब्भूराम जी नैय्यड़ आनन्द आश्रम लुधियाना)

आजकल आर्यावर्त देश में जिस प्रकार के उपदेशक दृष्टिगोचर हो रहे हैं उन्हें देख कर एक अजनबी मनुष्य समझ सकता है कि इस देश का सुधार कब का हो गया होगा लेकिन ज्यों ही वह अपने कानों और आँखों का प्रयोग आरम्भ करता है त्यों ही उसे अचम्भे से एक ही स्वर का का दर्द नाक नारा सारे देश में से उठता हुआ सुनाई देता है और उसकी आँखों के आगे एक ही भयकर चित्र सारे देश का खिंच जाता है, वह हैरान होकर कारण मालूम करता है। लेकिन कारण फिर भी मालूम नहीं पड़ता। हरएक बड़े ज़ोर शोर से शराब की बुराइयों का प्रचार कर रहा है लेकिन फिर भी हैरानी है कि दिन पर दिन शराब के ठेके बढ़ रहे हैं। व्यभिचार के विरुद्ध घृणा दिखाने वाले लैक्चर होते हैं लेकिन व्यभिचार दिन पर दिन बढ़ रहा है। जिन जिन बुराइयों के विरुद्ध दिन प्रति दिन लैक्चर हो रहे हैं वही बुराइयाँ बढ़ रही हैं। बुद्धि चकित हो जाती है कि क्या बात है। जो लोग मक्कारी के विरुद्ध घण्टों तक लैक्चर देते हैं उनमें कइयों को प्रथम श्रेणी का मक्कार पाओगे। जब यह हाल है तो फिर बुराइयाँ कैसे दूर हो सकती हैं? जब हरएक शुद्ध बुद्ध की योग्यता वाला प्रचारक बना हुआ है और जब हरएक मनुष्य अपना पहला कर्त्तव्य परोपकार को समझता है तो अपना उपकार कैसे हो सके?

परोपकार की धुन में मस्त, देश को उन्नति के शिखर पर चढ़ाने के लिये दिन-रात प्रचार करते हैं इसी लिये उनको अपने उपकार और अपनी उन्नति का समय नहीं मिलता। किन्तु यहाँ ही तो मुश्किल है। तुम मेरे उपकार के लिये यत्न करते हुए मुझे उपदेश देने के लिये अपने आत्मा को भूल जाते हो लेकिन मुझे भी तो तुम्हारा उपदेश सुनकर उस पर अमल करने का अवसर नहीं है क्यों कि मैंने भी दूसरों का उपकार करना है। जब सभी उपदेशक हों तो सुने कौन और उन उपदेशों पर अमल कौन करे? इसलिये दूसरों का फिकर मत करो पहले अपने आत्मा को पवित्र करो।

ध्यान का आनन्द

कैसा आता है आनन्द।
भगवन् तेरे ध्यान भजन में ॥

१ तू है शाश्वत सुख का दाता,
सब का तात दया मयि माता।
जो तव चरणन में चित लाता,
वह रहता नित शान्ति सदन में ॥

२ सूर्य चन्द्र पर्वत तरु तारे,
तेरे गुण गण गाते सारे।
जो रहते तव देव सहारे,
नित्यानन्द रहे तिन मन में ॥

३ शोक मोह भय कैसे आवें,
उनके पास तुझे जो ध्यावें।
तन मन धन तव भेंट चढ़ावें,
उनके क्लेश हरे तू क्षण में ॥

४ तू है प्रेम शान्ति का सागर,
सर्व शक्ति मय तू करुणाकर।
तुझ में अचल भक्ति को धर कर,
रहे न कोई संशय मन में ॥

"ध्रुव"

वेदोपदेश—

स्वाध्याय की महिमा

१. ओं यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥
ऋग्वेद ९।६७।३१
सामवेद उत्तरार्चिक सं० १२९९

२. ओं पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम्।
कामान्त्स समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः ॥
सामवेद उत्तरार्चिक म० सं० १३०१

३. ओं येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा।
तेन सहस्र धारेण पावमानीः पुनन्तु नः ॥
सामवेद उत्तरार्चिक म० सं० १३०२

४. ओं पावमानीःस्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नांद-
नम्। पुण्यांश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च
गच्छति ॥ सामवेद म० सं० १३०३

शब्दार्थ—(१) (यः) जो (ऋषिभि सम्भृत) धर्म का साक्षात्कार करने वाले तत्त्व दर्शियों द्वारा अच्छी प्रकार धारित आनन्ददायक रस स्वरूप (पावमानी अध्येति) सबको पवित्र करने वाले परमेश्वर का प्रतिपादन करने वाली ऋचाओं का का अध्ययन करता है—(स) वह (मातरिश्वना स्वदितम्) सर्व व्यापक परमात्मा द्वारा उपदिष्ट वा शुद्ध जीवात्मा द्वारा आस्वादन करने योग्य (सर्व पूतम्) सारे पवित्र ज्ञान का (अश्नाति) भोग करता है—उसे प्राप्त कर आनन्दित होता है।

(२) (पावमानीः) सबको पवित्र करने वाले परमेश्वर का प्रतिपादन करने वाली वैदिक ऋचाएं (न) हमें (इम लोकम्) इस लोक को (अथो अमुम्) और उस पर लोक को (दधतु) धारण कराए (देवी.) दिव्य सुख शान्ति और आनन्द को देने वाली वैदिक ऋचाएं (देवैः समाहृत.) सत्यनिष्ठ विद्वानों द्वारा जनता के सन्मुख उपदेशादि रूप से लाई जाकर (नः कामान् समर्धयन्तु) हमारी शुभ कामनाओं को पूर्ण करने वाली हों।

(३) देवा) सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग (येन पवित्रेण) जिस पवित्र स्वरूप परमेश्वर क सहायता से अथवा अन्य पवित्र ज्ञानादि साधन द्वारा (आत्मान सदा पुनते) अपने आत्मा को सदा पवित्र करते हैं (तेन सहस्र धारेण) उस असख्य प्राणियों को धारण करने वाले परमेश्वर के उपदेश वा योग साधनादि द्वारा (पावमानीः) पतित पावन परमेश्वर सम्बन्धिनी वैदिक ऋचाएं (नः पुनन्तु) हमे प वत्र बनाए।

(४) (पावमान) सबको पवित्र करने वाले भगवान् का प्रतिप दन करने वाली वैदिक ऋचाएँ (स्वस्त्ययनी) कल्याण और आरोग्य को प्राप्त कराने वाली हैं। (ताभि) उनके मनन तथा उनकी शिक्षाओं पर आचरण से जीवात्मा (नान्दन गच्छति) परमानन्द रूप मोक्ष को प्राप्त करता है (पुण्यान् च भक्षान् भक्षयति) उन

वैदिक ऋचाओं की सहायता से जीव पुण्य सुख भोगों का उपयोग करता है—सांसारिक पदार्थों का उचित उपयोग कर के जीवन को सुखमय बनाता है (अमृतत्वं च गच्छति) और अमरता को प्राप्त हो जाता है।

वेद के इन मन्त्रों में स्वाध्याय की महिमा का बड़ी उत्तमता से प्रतिपादन किया गया है। वेद मुख्यतया पतित पावन भगवान् का शुद्ध स्वरूप हमारे सामने रखते हैं जिस पवित्र स्वरूप के चिन्तन मनन और निदिध्यासन से हमारी सब अप वत्रता दूर हो सकती है। धर्म का साक्षात्कार करने वाले ऋषि इसी वेद के अमृत का पान करके आनन्द लाभ करते हैं जिसे इसी सूक्त में 'ब्राह्मणेष्वमृत हितम्' ब्रह्मज्ञानियों के अन्दर रक्खे हुए अमृत के नाम से पुकारा गया है। मुख्यतया परमेश्वर के स्वरूप का प्रतिपादन के साथ साथ वेदों में हमारे सासारिक कर्तव्यों तथा भौतिक विद्याओं का भी उपदेश स्थान २ पर दिया गया है क्योंकि धर्म का सम्बन्ध हमारे जीवन के प्रत्येक अङ्ग के साथ है। इसीलिये इन मन्त्रों में कहा गया है कि वैदिक स्वाध्याय से हम इस जीवन को उन्नत बनाएं और उसके साथ २ परलोक को सुधारें। वेदों का स्वाध्याय मनुष्य की प्रत्येक प्रकार की उन्नति में सहायक हो सकता है इसमें सन्देह नहीं। वेद पदार्थ विज्ञान के उपदेश द्वारा मनुष्य के ऐहलौकिक वा व्यावहारिक जीवन को सुखमय बनाते हैं पर साथ ही परम तत्त्व का उपदेश करके उसे परमानन्द रूप मोक्ष की प्राप्ति के योग्य बनाते हैं। ऋषि मुनियों ने वेदों के इन पवित्र उपदेशों का मनन और उन पर आचरण करके ही अपने को पवित्र बनाया था और शाश्वत सुख और शान्ति को प्राप्त करके अपने जीवन को सफल बनाया था। जिस वैदिक स्वाध्याय की इतनी महिमा है उस से अपने को वञ्चित रखना कितना हानिकारक है? जिस प्रकार भौतिक भोजन की मनुष्य के आरोग्य के लिये आवश्यकता है उसी प्रकार स्वाध्याय की मानसिक और आत्मिक बल की वृद्धि और शाति की प्राप्ति के लिये आवश्यकता है यह समझकर प्रत्येक आर्य नर नारी को वेदों के स्वाध्याय का दृढ़ नियम बनाकर उसका पालन तत्परता से करना चाहिये। ऋषि दयानन्द ने "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" इस आर्य-समाज के तृतीय नियम द्वारा इसी परम धर्म की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया था। श्रावणी उपाकर्म का पर्व भी विशेषतया इस कर्तव्य की ओर ही प्रतिवर्ष हमारा ध्यान आकर्षित करने के लिये आता है। क्या अब भी हम वेदामृत से वंचित रह कर अपने जीवन को निष्फल होने देंगे?

—धर्मदेव

ऋषि दयानन्द जी के अप्रकाशित पत्र

(४)

[प्रकाशक—प० हरिदत्त जी वेदालकार गुरुकुल काङ्गडी]

प्रस्तुत पत्र सग्रह के १८ पत्र श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा को लिखे गये हैं। पहले इस पत्र सग्रह की उपलब्धि की कहानी दी जा चुकी है। * उससे स्पष्ट है कि श्री श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम इतने अधिक पत्रों का होना सर्वथा स्वाभाविक है। यदि श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम इतने अधिक पत्र न होते तो हमें आश्चय होता। यह हमारा सौभाग्य है कि श्री श्यामजी कृष्णवर्मा ने अपने पत्रों के साथ दूसरे व्यक्तियों के पत्र भी सभाल कर रखे जो अन्यथा बिल्कुल नष्ट हो जाते।

श्री श्यामजी कृष्णवर्मा काठियावाड के एक सम्भ्रान्तकुलोत्पन्न व्यक्ति थे। बम्बई में युवावस्था में वे श्री स्वामी दयानन्द जी के सम्पर्क मे आये और उनसे प्रभावित हुए। वे बम्बई मे स्वामी जी के सहायकों में से अन्यतम थे स्वामी जी ने जब अपना वेदभाष्य बम्बई मे छपवाना शुरू किया तो बा० हरिश्चन्द्र उसके प्रबन्धक हुए किन्तु उनके काय से असन्तुष्ट होकर उन्होंने श्री श्यामजी को प्रबन्धक नियत किया किन्तु श्यामजी शीघ्र हो सस्कृत के (१८७६) अध्ययन के लिए इगलैंड चले गये। श्री श्यामजी ने वहाँ शिक्षा ग्रहण की, बैरिस्टर हुए और वर्षों तक वहाँ की परिस्थिति देखते रहे। जनवरी १६०५ में, उन्होंने लन्दन में 'इन्डिया हाउस' खोलकर उसमें भारतीय स्वतन्त्रता का आन्दोलन करने के लिए होमरूल सोसायटी की स्थापना की तथा सभा के मुखपत्र के रूप में इन्डियन सोशियालोजिस्ट (Indian Sociologist पत्र निकाला। इस सभा व पत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय स्वतन्त्रता का प्रचार करना था। दिसम्बर १६०५ में, उन्होंने दो दो सहस्र रुपयों की तीन छात्र वृत्तियाँ विदेशों में शिक्षा ग्रहण करने के इच्छुक भारतीय विद्यार्थियों को देने की घोषणा की। श्री विनायक दामोदर सावरकर लोकमान्य तिलक के सिफारिशी पत्र से उक्त छात्र वृत्ति पाकर १६०६ में इगलैंड गये और श्यामजी के दाहिने हाथ बने। इण्डिया हाउस और श्यामजी कृष्णवर्मा अब ब्रिटिश सरकार की दृष्टि में खटकने लगे। जुलाई १६०७ में ब्रिटिश लोक सभा में यह प्रश्न किया गया कि सरकार श्यामजी के विरुद्ध क्या कायवाही करना चाहती है। श्यामजी अब पेरिस आगये और मृत्यु पयन्त पेरिस ही रहे।

यह पहले बताया जा चुका है कि स्वामी जी ने वेदभाष्य छपवाने के लिये पहले श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को प्रबन्धक नियत किया था। वैदिक यन्त्रालय जो आज अजमेर में इतना विशाल रूप

* दे० सार्वदेशिक दिस० १६४२ ई०

धारण कर चुका है—के प्रथम प्रबन्धक होने का गौरव उक्त महानुभाव को ही है किंतु हरिश्चन्द्र इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद को अधिक देर तक नहीं सभाल सके। इसका कारण उनकी अयोग्यता थी। स्वामी जी श्री हरिश्चन्द्र को बार २ लिखते थे कि वैदिक यन्त्रालय का कार्य सुचारु रूप से चलना चाहिए, ग्राहकों के पास अंक ठीक समय पर पहुँचने चाहिये, साथ ही स्वामी जी का यह आग्रह था कि वेदभाष्य के लिफाफे के ऊपर देव नागरी में पता लिखा जाय। बाबू हरिश्चन्द्र देवनागरी नहीं जानते थे। स्वामी जी ने बाबू हरिश्चन्द्र से परेशान होकर जब श्री श्यामजी कृष्णवर्मा का वेदभाष्य की छपवाई का प्रबन्ध लेने के लिये कहा तो बा० हरिश्चन्द्र ने उन्हें यन्त्रालय का कार्य सौंपने में भी बड़ा आगा-पीछा और आना-कानी की। श्री श्यामजी के अधिकाश पत्रों का यही विषय है और इन पत्रों की जबानी वैदिक यन्त्रालय के विकास की कहानी पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

वेदभाष्य के पहले तीन अंक बा० हरिश्चन्द्र के प्रबन्ध में निकले, किन्तु उनकी व्यवस्था इतनी रही थी कि दिल्ली से २ नव० १८७८ के श्री गोपालराव हरि देश मुख को पत्र मे स्वामी जी ने यह लिखा कि—"विदित हो जिस दिन से बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के प्रबन्ध में वेदभाष्य का काम गया है, तब से किसी ग्राहक के पास भी अंक यथार्थ नहीं पहुँचते'। स्वामी जी इस देरी का जो कारण समझते थे वह ध्यान देने योग्य है। उनकी यह आशा थी कि बा० हरिश्चन्द्र वेदभाष्य के लिफाफों पर पता अंग्रेजी में लिखते हैं इसी लिये ग्राहकों के पास वेदभाष्य नहीं पहुँचता। ऊपर उद्धृत पत्र में ही उक्त वाक्यों के बाद वे यह लिखते हैं—'वे (बा० हरिश्चन्द्र) क्या करें। उनके पास कोई आदमी इस योग्य नहीं'। यहाँ स्वामी जी का योग्य आदमी का अभिप्राय देवनागरी जानने वाला व्यक्ति है। यह बात स्वामीजी के अन्य पत्रों से स्पष्ट हो जाती है। १४ अक्टू० १८७८ के दिल्ली से श्री श्यामजी के नाम लिखे पत्र में स्वामी जी लिखते हैं—'किसी देवनागरी वाले को वहाँ रख दो क्योंकि बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि अंग्रेजी में लिखते हैं।' २७ अक्टू० १८७८ के पत्र मे स्वामी जी श्री श्यामजी से पूछते हैं कि वेदभाष्य के लिफाफों पर देवनागरी में पता क्यों नहीं लिखा गया तथा यह अनुरोध करते हैं कि देवनागरी जानने वाले मुंशी को एकदम नियुक्त करलें। पत्र के शब्द इस प्रकार हैं—"अब की बार वेदभाष्य के लिफाफे के ऊपर देवनागरी नहीं लिखी गई, जो कहीं ग्रामों में अंग्रेजी पढ़ा न होगा तो अंक वहाँ कैसे पहुँचते होंगे और ग्रामों में देवनागरी पढ़े बहुत होते हैं, इसलिये तुम बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी से कहो कि अभी इस पत्र के देखते ही देवनागरी जानने वाला मुंशी रख लेवें कि जो काम ठीक २ हो, नहीं तो वेदभाष्य के लिफाफों पर रजिस्टर के अनुसार ग्राहकों का पता किसी देवनागरी वाले से नागरी में लिखा कर टपास लिया करें"।

कहाँ स्वामी जी का यह देवनागरी का प्रेम और कहाँ ऋषि के अनुयायी कहे आनेवालों में से अधिकाश उर्दू व अँग्रेजी का मोह। आज से ६५ वर्ष पूर्व ऋषि ने देवनागरी में पते लिखने पर जो बल दिया था यदि हम उसका शताश

भी क्रिया रूप में परिणत करते अँग्रेजी उर्दू के स्थान पर पते हिन्दी में ही लिखते तो यह शोचनीय स्थिति न उत्पन्न होती। पञ्जाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मुख पत्र 'आर्य' के नागरी में पते लिखे हुए, अक मृतपत्र कार्यालय की सैर न करते। स्वामी जी देवनागरी में पते लिखने पर इसलिये बल देते थे कि ग्राहकों को वेद भाष्य के अंक नियत स्थान पर पहुँच जायें और आज कल अँग्रेजी मे पते इसलिये लिखे जाते हैं कि पत्र के पहुँचने मे विलम्ब न हो। देवनागरी का स्थान उर्दू व अंग्रेजी ने ले लिया है और यह देवनागरी के प्रति हमारी घोर उपेक्षा और अंग्रेजी और उर्दू के प्रेम का परिणाम है। स्वामी जी के भक्त होने का मतलब उनके आदर्शों और उपदेशों का भक्त होना है। उनकी भक्ति की इतिश्री उनकी प्रशंसा में व्याख्यान देने व सुनने से नहीं होती उसके लिये आवश्यक है कि हम उनके उपदेशों को क्रिया रूप मे परिणत करें और अपने आचारों में ढालें। क्या यह गहरे दुःख और संताप की बात नहीं कि ऋषि के भक्त देवनागरी और संस्कृत को क्लिष्ट समझकर अरबी जैसी नितान्त अवैज्ञानिक, और अनार्ष लिपि को अपनायें, उसमें सन्ध्या और हवन के मन्त्र पढ़ कर, उनका भ्रष्ट उच्चारण करें? महाभाष्यकार ने लिखा है कि इन्द्र के प्रतद्वन्द्वी वृत्र की हिंसा, एक ही वर्ण के अशुद्ध उच्चारण से हो गयी*। यह पौराणिक गाथा सच्ची हो या न हो किन्तु हम लोगों ने तो पवित्र वैदिक मन्त्रों मित्रस्य हि चक्षुषा समीक्षामहे—के मेहतर स्याही खामरे आदि विकृत एवं दूषित उच्चारण कर अपनी भाषा एवं संस्कृति की स्वयं अपने हाथों हिंसा की है और अपने प्रयत्नों से हम देवनागरी की कब्र खोद रहे हैं। पहले हम देख चुके हैं कि स्वामी जी ने वेद भाष्य आर्य भाषा और संस्कृत में किया और उर्दू आदि भाषाओं मे उसके अनुवाद का विरोध किया ताकि लोग देवनागरी सीखें। इन पत्रों से स्पष्ट है कि वे पता भी देवनागरी में लिखवाना चाहते थे। यदि हम स्वामी जी के आदेशों और उपदेशों के अनुसार चले होते तो हमे देवनागरी की आज यह दुर्दशा न देखनी पड़ती। अब भी देव नागरी के उद्धार का यही उपाय है कि हम उसे प्रयत्न पूर्वक सीखें और अपने सारे व्यवहार में, केवल मात्र उसी भाषा का प्रयोग करें तभी हमारी यह इच्छा पूरी होगीकि 'राष्ट्र भाषा भवेद्देव सर्व श्रेष्ठाहि नागरी' अन्यथा इस सर्व श्रेष्ठा नागरी को नितान्त अवैज्ञानिक अरबी और रोमन लिपियों के आगे अवश्यमेव झुकना पड़ेगा। सिन्धी लोग तो अपनी भाषा को नागरी लिपि छोड़कर, अरबी लिपि में लिखते ही लगे हैं यदि हिन्दी के प्रति हमारी यही घोर उपेक्षा और उदासीनता जारी रही तो हमारे यहाँ भी अरबी लिपि का ही साम्राज्य स्थापित हो जायगा। अस्तु

*महा प्रथम आह्निक—

दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्॥

स्वामी जी ने श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा को वेद भाष्य के प्रकाशन का कार्य सौंप दिया। श्री श्याम जी का विचार इङ्गलैण्ड जाकर, शिक्षा ग्रहण करने का था। इङ्गलैण्ड के लिये प्रस्थान करने तक श्री श्याम जी ही वेद भाष्य के प्रकाशन की सारी व्यवस्था करते रहे। स्वामी जी ने कार्य सौंपते समय २२ अक्टूबर १८७८ के पत्र में आदेश दिया था—"यह पहिला पत्र व्यवहार का हमारा तुम्हारे पास पहुंचता है। इस को रख लेना और आगे से सब रखते जाना"। श्री श्याम जी ने इस आदेश का पूर्ण रूप से पालन किया और उसी का यह परिणाम है कि हमें यह पत्र समूह सुरक्षित रूप में प्राप्त हुआ।

श्री श्याम जी को लिखे पत्रों में अधिकांश तो वेद भाष्य के प्रकाशन के सम्बन्ध में हैं और बा० हरिश्चन्द्र से सारी प्रकाशन व्यवस्था सँभाल लेने के विषय में हैं। बा० हरिश्चन्द्र सारा प्रबन्ध सौंपने में आनाकानी करता रहा और स्वामी जी बार २ श्री श्याम जी को वह प्रबन्ध सभालने के लिये लिखते रहे। इन पत्रों में, स्वामी जी की छोटी २ बातों, कागज का प्रकार, टाइप आदि की ओर पूरी सतर्कता देखी जाती है। इन पत्रों के अतिरिक्त दो पत्र विशेष महत्व के हैं।

पहला पत्र श्री श्याम जी के इङ्गलैण्ड जाने के सम्बन्ध में है। स्वामी जी को इससे प्रसन्नता है कि श्री श्याम जी संस्कृत के अध्ययन के लिये इङ्गलैण्ड जा रहे हैं किन्तु वे चाहते हैं कि श्री श्याम जी पहले स्वामी जी के पास रह कर वेद और शास्त्रों के मुख्य विषय देख लें और वहां जाकर उसी विषय में बात करें, जिसका उन्होंने अध्ययन किया हो। उनका 'कोई काम ऐसा न हो जिस से अपने देश का ह्रास हो'।

दूसरा पत्र श्री श्याम जी का इङ्गलैण्ड चले जाने पर १८८० में, स्वामी जी ने संस्कृत श्लोकों के रूप में लिखा है। स्वामी जी का एक मात्र यही संस्कृत पत्र पद्यमय उपलब्ध हुआ है। शेष सब संस्कृत के पत्र गद्य में ही हैं। इस पत्र का विषय भी राजनैतिक है। अतः इस पत्र का भाषा तथा विचार दोनों दृष्टियों से विशेष महत्व है। इस पर अगले अंक में विशेष विचार किया जायगा।

(क्रमशः)

वैदिक धर्म और अन्य मत मतान्तर

(२)

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० उप प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)

[जून अङ्क से आगे]

जब पशु वध का आधिक्य हुआ तो सुधार की आवश्यकता हुई। क्योंकि दया मनुष्य का सर्वोत्कृष्ट भाव है और कुछ न कुछ इस प्रकार के लोग होते हैं जिनमें इस भाव की जागृति वर्तमान प्रथाओं के विरुद्ध भी बड़ी तीव्रता से आज्वल्य मान हो जाती है। भारतवर्ष में जैन और बौद्ध धर्म इस प्रकार के मुख्य सुधार थे। इन दोनों धर्मों के प्रवर्तकों ने यज्ञ और इस लिये यज्ञ के देव ताओं के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई।

इस विरोध ने देवताओं का अन्त कर दिया। देवताओं के कारण उनके महाप्रभु ईश्वर का वास्तविक या व्यावहारिक अस्त हो ही चुका था। वह नाम मात्र के लिये प्रभु थे। यज्ञ की आहुतियाँ सब देवताओं में बँट जाती थीं। लोग भी उन्हीं के उपासक थे। ब्रह्म के कई रूप बना रक्खे थे श्याम ब्रह्म और शबल ब्रह्म। सम्राट् तक पहुँचना कठिन है बस जो काम करना हो उनके कर्मचारियों से करा लो। शुद्ध निर्विकार और निर्लेप ब्रह्म से हमको क्या मतलब? अगर होगा तो होवे। हमने उसे न देखा है और न देख सकते हैं। हम उस तक पहुँचने का यत्न ही क्यों करें। असम्प्रज्ञात समाधि वाले भी तो इधर ही रह जाते हैं। फिर सर्व साधारण का क्या कहना। इस प्रकार देवताओं और परब्रह्म दोनों की समाप्ति बौद्ध और जैन काल में हो गई।

परन्तु बौद्ध और जैन धर्म थे। कोई लौकिक समितियाँ न थे। धर्म का सम्बन्ध पूजा-पाठ से होता है। उपासना की प्रवृत्ति मनुष्य में नैसर्गिक प्रतीत होती है। जब उसको अल्पज्ञता, अल्पसामर्थ्य तथा दुःख का अनुभव होता है तो किसी 'आलम्बन' आश्रय की खोज होती है। बौद्ध और जैन धर्म भी उपासना के भावों से नहीं बचे। वे दोनों ईश्वर के कर्तृत्व का निषेध करते हैं। परन्तु वर्तमान युग के नास्तिकों के समान 'उपासना' का तिरस्कार नहीं करते।

अब प्रश्न हुआ था कि यदि सर्वकर्ता, सर्वान्तर्यामी, सर्वव्यापक ईश्वर नहीं तो उपासना किसकी की जाय? यह आवश्यक प्रश्न था और इसका समाधान सोचा गया। अब तक ईश्वर का मानुषी करण anthropomorphisation or personification of God) किया जाता था। अब मनुष्य का ईश्वरीकरण (deification of man) किया जाने लगा। अर्थात् बजाय ईश्वर को मनुष्य की उपमा देने के मनुष्यों में जो आदर्श

प्रतीत हुए उनको ईश्वर माना जाने लगा। यह बड़ा भारी भेद था जो मानवी मस्तिष्क में हुआ और आजकल के प्रचलित धर्म इसी मानसिक पतन का ज्वलन्तरूप हैं।

बौद्धों और जैनों के मस्तिष्क में ईश्वर तो था नहीं जो सूर्य्य चाँद आदि सृष्टि को बनावे। वे इस विषय में चार्वाक आदि नास्तिकों के तुल्य थे। भिन्न२ तत्त्वों से स्वयं ही सृष्टि का बन जाना चार्वाक भी मानते थे और बौद्ध जैन भी परन्तु इनको कोरा प्रकृति वादी कहना ठीक न होगा। अपने शरीर में तो इन को भौतिक तत्वों के संघात के अतिरिक्त एक चेतन आत्मा का भी भान होता था जिसका नैसर्गिक रूप कुछ भी हो और लक्षण कुछ भी किये जायँ कम से कम इतना तो अवश्य था कि इस आत्मा का अन्त शरीरान्त के साथ नहीं होता था और मृत्यु के पीछे पुनर्जन्म और मुक्ति आदि के लिये भी कुछ न कुछ स्थान अवश्य था। इसी भाव ने उपासना को मिटाया नहीं। उपास्यों को बदल दिया। अर्हत, तीर्थङ्कर, बुद्ध आदि आदर्श मनुष्यों को ही उपास्य मान लिया गया। यही ईश्वर हो गये यह था "मनुष्य का ईश्वरी करण" (deification of man)

ईश्वर के मानुषी करण में मनुष्य गौण था और ईश्वर प्रधान। मनुष्य के ईश्वरी करण में ईश्वर गौण हो गया और मनुष्य प्रधान। एक विशेष मनुष्य जिसको ईश्वर की पदवी दी गई कुल सब की उपासना का पात्र बन गया। उसकी मूर्तियाँ या उसके अंगों की प्रतिकृतियाँ पूजी जाने लगीं। ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि मूर्ति-पूजा जैनियों से चली। यह ठीक ही प्रतीत होता है। यदि जैनियों का इसमें मुख्य भाग न भी हो तो जैन सदृश मनोवृत्ति का अवश्य होगा। बौद्ध धर्म ने भी मनुष्य पूजा को प्राधान्य दिया। महात्मा बुद्ध की सबसे बड़ी गलती यह थी कि उन्होंने शरणत्रयी में अपने को भी शामिल कर लिया। धर्म की शरण आओ। संघ की शरण आओ और बुद्ध की शरण आओ। ये तीन उपदेश थे जो बौद्ध धर्म के प्राण थे।

इनमें से पहले दो तो सुधार रूप थे। क्योंकि ईश्वर का स्वरूप वह वैदिक स्वरूप तो रहा नहीं था जिसमें ईश्वर के अटल नियम को ही सत्य सनातन धर्म कहा गया था। यहाँ 'नियम' और 'धर्म' पर्य्याय थे। नियम ही धर्म था जैसा इस मन्त्र से प्रतीत होता है —

यो विद्यात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः।
सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्याद् ब्राह्मणं महत्॥

अर्थात् जो सृष्टि में ओत प्रोत नियम और उस नियम के भी नियम अर्थात् नियन्ता को जानता है वही वस्तुतः ब्रह्मज्ञानी है।

ईश्वर के इस भाव में कोई दोष नहीं था। परन्तु जब चक्रवर्ती निरंकुश, जो चाहे सो करने वाले, राजा की उपमा ईश्वर से दी जाने लगी तो इस भावना में नियम को कोई स्थान नहीं रहा। निरंकुश राजा की इच्छा ही कानून समझी जाती है और इच्छायें बदलती रहती हैं इसलिये राजा का कानून भी नित्य बदलता रहता है। इस मनोवृत्ति ने मनुष्य के जीवन में अनेक उपद्रव उत्पन्न कर दिये थे। नित्य देवताओं की खुशामद करना

और उनको उत्पन्न करने की चेष्टा करना ही धर्म का अंग था। जिस किसी ने देवताओं के प्रसन्न करने की जो विधि बता दी वही मान ली जाती थी।

अजामन्नाद्यकामः (अन्न आदि की कामना हो तो बकरे का मांस)

तैत्तिरं ब्रह्मवर्चसकाम (ब्रह्मवर्चस की कामना हो तीतर का मांस)

आदि गृह्य आदेश इसी मनोवृत्ति का फलस्वरूप थे। ऐसे बिगाड़ का सुधार आवश्यक था और इसलिये बुद्ध ने कहा "धर्म की शरण आओ" (Obey the eternal Law) इसी प्रकार संघ की भी आवश्यकता थी। देवताओं के प्राधान्य में मनुष्य वैयक्तिक हो गया (became individualistic) । समाज-संगठन नष्ट हो हो गया । सीधी आहुति देकर देवताओं को प्रसन्न किया जा सकता था। पुजारियों के मन्त्र और पुजारी ही पर्याप्त थे। समाज की क्या आवश्यकता ? अतः सामाजिक बन्धन शिथिल हो गये। इसलिये बुद्ध ने कहा 'संघ बनाओ और संघ की शरण आओ।" परन्तु इन दो शरणों में बुद्ध भगवान ने मानवी उन्नति के पर्याप्त साधन नहीं पाये। उनमे वैयक्तिक आकर्षण विचित्र था। कहते हैं कि लाखों मनुष्य उनके चारों ओर घिर आते थे। उनको ऐसा भान हुआ होगा कि यदि उनका व्यक्तित्व अलग कर दिया गया तो धर्म और संघ मे भी आकर्षण नहीं रहेगा क्योंकि धर्म तो एक गूढ़ और अदृष्ट वस्तु है जिसको स्थूल दृष्टि से देखा नहीं जा सकता और संघ एक उत्तर दायित्व शून्य मनुष्यों का समुदाय भी हो सकता है। सम्भव है देवदत्त के अनिष्ट आचार ने भी बुद्ध की मनोवृत्ति बदलने में कुछ काम किया हो जो कुछ हो तीसरी शरण अर्थात् 'बुद्ध की शरण आओ' की भी आवश्यकता हो गई। इस प्रकार मनुष्य का ईश्वरी करण पराकाष्ठा को पहुँच गया। बुद्ध के जीवन में इसके दोष प्रतीत न होते हों क्योंकि उनका तप और निष्काम सेवा इस दोष का प्रतीकार करते रहे होंगे। परन्तु उनके मरते ही यह बीज अपना प्रभाव जताने लगा। उनके मरने पर उनकी लाश को ले जाने के लिये क्षत्रिय-शासकों के दो पक्षों में जो झगड़े हुए वे इसी बात के द्योतक हैं। पीछे से उनके दांत, उनके शरीर के अन्य अवयव तथा कहीं-कहीं उनकी पूरी मूर्तियों की जो पूजा आरम्भ हो गई उसने विशाल रूप धारण कर लिया। किसी ने न पूछा कि बुद्ध भगवान् अब कहाँ होंगे, उनके उपदेश क्या थे, या क्या हैं। सब बुद्ध के किसी न किसी अंग को पूजने में ही धर्म का मुख्य उद्देश्य समझने लगे।

यह थी भारत वर्ष की अवस्था। अन्य देशों में भी इसकी मिलती-जुलती अवस्था ही रही होगी। कुछ ऐतिहासिकों और भौगोलिकों का मत है कि बुद्ध धर्म के प्रचारक संसार भर में फैल गये थे अमेरिका में उनकी संस्कृति के चिन्ह मिलते हैं और फलस्तीन में ईसा के समय जो सुधार हुआ वह भी बौद्ध धर्म का ही एक रूप था। हमको यहाँ इस विषय की मीमांसा करने का अवकाश नहीं है। हम दोनो प्रति पक्षियों को मान लेते हैं। क्योंकि मनोवृत्ति का मौलिक रूप एक-ही था

है। अब हम मनुष्य के ईश्वरीय करण के दो मुख्य रूप देखते हैं। एक तो अवतारवाद और दूसरा पैग़म्बरवाद। अवतारवाद के भिन्न २ रूप रामावतार कृष्णावतार आदि के रूप में मिलते हैं। और पैग़म्बरवाद के जरदुष्ट पैगम्बर से चलाये पारसीमत, मूसा से चलाये यहूदी मत, ईसा से चलाये ईसाई मत और मुहम्मद से चलाये इसलाम मत के रूप में पाये जाते हैं। इन दोनों की बुनियाद एक है। अर्थात् मनुष्य का ईश्वरीकरण। मनुष्य ईश्वर से सीधा सम्बन्ध नहीं जोड़ सकता। उसके लिये किसी बिचौलिये की जरूरत है। जब तक ईश्वर केवल ईश्वर लीला करता है उस तक मनुष्य की पहुँच दुस्तर है। अत या ईश्वर ही नर लीला करने के हेतु नर का रूप धारण करे या वह किसी चुने हुए मनुष्य को अपना प्रतिनिधि रूप भेजे जो मनुष्य की आवश्यकताओं को ईश्वर के सामने पेश कर सके। एक अवस्था में ईश्वर स्वय उतरता है। अवतार का अर्थ है नीचे उतरना। दूसरी अवस्था में पैगम्बर नाजिल होते हैं। (नाजिल होने का अर्थ भी नीचे उतरना है)। पहली अवस्था के पक्षपातियों ने यह सोचा कि ईश्वर सर्वशक्तिमान् तो है ही वह स्वय आकर हमको बताता होगा कि इस प्रकार आचरण करना चाहिये। दूसरे पक्ष वालों ने सोचा होगा कि ईश्वर तो अपने ही तख्त पर शोभायमान लगता है। उसको नीचे उतरना शोभा नहीं देता। वह अपने वायसराय को क्यों न भेज देवे। ईसाइयों ने दो पक्षों का समावेश किया। ईसा खुदा का अवतार भी है, खुदा का बेटा भी और पैगम्बर भी।

यहाँ एक बात विचारणीय है जो दोनों पक्षों के ध्यान में नहीं आई। कल्पना कीजिये कि अवतार भी हुए और पैगम्बर भी। परन्तु यह थे तो एक नियत समय के लिये ही? कल्पना कीजिये कि ईश्वर ने राम के शरीर में अवतार लिया तो राम के गर्भ में आने से पूर्व ईश्वर का वह अवतार न था और राम की मृत्यु के पश्चात् न रहा। यदि राम के शरीर को ईश्वर का अवतार न मानकर साधारण जीव का अवतार मानते तो राम का अस्तित्व दशरथ का पुत्र होने से पूर्व भी ईश्वर से अलग किसी और अवस्था में था और मृत्यु के पश्चात् किसी और अवस्था में रहा परन्तु अवतार मानने पर तो जन्म के पहले और मृत्यु के पश्चात कोई और अवस्था ही नहीं रहती। या यों कहना चाहिये कि अवतार के जीवन के समय में ही ईश्वर का वह प्रकाश उस अवतार के रूप मे होता है और फिर विलीन हो जाता है। अतः अवतार के जीवन के पश्चात् अवतार के पूजन का कोई अर्थ नहीं रहता। आजकल 'राम राम हरे हरे' और 'कृष्ण कृष्ण हरे हरे' का कोई अर्थ नहीं। कल्पना कीजिय कि मैं कलकत्ते गया और १० दिन रह कर चला आया। जब तक कलकत्ते में था कलकत्ते का निवासी था। अब पूर्ववत् हूँ। फिर कलकत्ते का निवासी होने की हैसियत से जो मेरा या मेरे साथ औरों का व्यापार होता वह अब निरर्थक है। अब तो राम के अवतार का या कृष्ण के अवतार का कोई भाग अवशिष्ट नहीं है फिर उनकी उपासना का क्या अर्थ? इसी प्रकार

पैगम्बर आये और चले गये। वे जो शिक्षायें दे गये उनका उपयोग तो किया जा सकता परन्तु उनके नाम और व्यक्तित्व का क्या उपयोग है? उदाहरण के लिये मुहम्मद साहेब के बताये हुए "ला इलाह लिल्लिल्ला" का तो उपयोग है परन्तु 'वल् मुहम्मद रसूलल्ला' का क्या उपयोग है। मुहम्मद साहेब के समय में तो कहा जा सकता है कि इस वाक्य के कहने से लोगों को मुहम्मद साहेब के सामीप्य के लिये आकर्षित किया जाय। परन्तु उनके देहान्त के उपरान्त उनका कोई उपयोग नहीं रहता। परन्तु यह एक स्थल है जहाँ पुजारियों और पुरोहितों की चढ़ बनती है। वह राम के जीवन के आदर्श पर इतना बल नहीं देते और मुहम्मद साहेब की शिक्षाओं पर। यह चीजें तो अत्यन्त गौण हैं। रुपये में एक आना भी नहीं। प्राधान्य तो है राम नाम का और मुहम्मद नाम का। नाम की महिमा में पोथे के पोथे लिखे गये हैं और उपासकों के जीवन का मुख्य भाग तो नाम लेने में ही लगता है। क्योंकि यह माना गया है कि राम और मुहम्मद केवल शिक्षक न थे, किन्तु तारक भी थे। केवल पैगम्बर होना तो आपत्तिजनक नहीं। चिट्ठीरसा हमारी चिट्ठी लाता है और देकर चला जाता है। वह चिट्ठी हमारे उपयोग की चीज है चिट्ठी रसां का नाम नहीं। चिट्ठीरसां का व्यक्तित्व चिट्ठी पहुँचाने से अधिक कुछ भी नहीं। परन्तु यदि यह मान लिया जाय कि चिट्ठी रसां के नाम में कुछ बरकत है और उसकी उपासना से हम तर सकते हैं तो यह अनर्गल ही है। इसी प्रकार यदि पैगम्बर, रसूल, प्रौफेट, या ऋषि महर्षि का अर्थ शिक्षक मात्र है तो इसमें कोई हानि नहीं। परन्तु इतने मात्र से न तो सम्प्रदाय बनते हैं न पुरोहितों को किसी प्रकार का प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। लड़ाई-झगड़े मतमतान्तरों के कारण हो रहे हैं वह भी नहीं होते। कल्पना कीजिये कि गणित के सहस्रों शिक्षक सहस्रों विद्यालयों में एक ही गणित का पाठ पढ़ा रहे हैं। कभी कभी एक मुख्य आविष्कार का करने वाला भी हो जाता है जैसे न्यूटन आदि। परन्तु उनके आविष्कार का उपयोग तो है उनके नाम का नहीं और न पारस्परिक कलह की गुञ्जायश है। परन्तु यदि नाम का उस कानून से अटूट सम्बन्ध होता तो बात दूसरी हो जाती। यहाँ मुहम्मद आदि केवल शिक्षक नहीं। वे ईश्वर के प्रतिनिधि और शफी भी हैं। उनकी सिफ़ारिश से तर भी सकते हैं। उनकी सिफ़ारिश आज भी चलती है। एक मुसलमान तो यहाँ तक कह बैठता है —

अल्लाह के पल्ले में वहदत के सिवा क्या है?

लेना है सो लेलेंगे हम अपने मुहम्मद से।

एक भक्त मुसलमान का विश्वास है कि मुहम्मद साहेब अपने जीवन में इस लोक में थे आज स्वर्ग में ईश्वर के पास हैं। वह तब भी सिफ़ारिश कर सकते थे आज भी कर सकते हैं। यही बात ईसा, मूसा, राम और कृष्ण के लिये कही जाती है। यही बुनियाद है मतमतान्तरों और उनके पारस्परिक कलह की। एक कहावत बड़े मजे की है। कहते हैं कि किसी ने चाहा कि जाकर स्वर्ग की सैर करें। वह वहाँ चला गया और स्वर्ग की एक सड़क के कोने पर खड़ा हो गया। इतने

देखा कि बहुत बड़ा जुलूस आ रहा है जिसमें ४० करोड़ के लगभग लोग हैं। और उनका एक नेता है। पूछने पर ज्ञात हुआ कि यह सब बुद्ध भगवान् के भक्त हैं। इसी प्रकार का परन्तु कुछ छोटा जलूस ईसाइयों का आया जिसके नेता ईसामसीह थे। ऐसा ही इस्लामी भाइयों का जुलूस मुहम्मद साहेब के नेतृत्व में निकला। ऐसा ही श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्र का। जब वह बड़े बड़े जुलूस बड़े समारोह और धूम धाम से निकल गये तो एक छोटा सा जुलूस निकला जिसके आगे एक बुड्ढे घोड़े पर सवार एक बुड्ढा आदमी था और दस पाँच सूखे साखे कमजोर लोग आ रहे थे। लोगों से पूछा कि भाई यह किस अभागे का जुलूस है जिसके साथी दस बीस भी नहीं। बताया गया कि यह अल्लामिया हैं जिनके उपासकों की संख्या अत्यन्त न्यून है। राम के उपासक, कृष्ण के उपासक, कबीर के उपासक, नानक के उपासक, मुहम्मद के उपासक ईसा के उपासक, जरदुश्त के उपासक, बुद्ध भगवान् के उपासक और अर्हत के उपासक करोड़ों और लाखों, लेकिन दो अरब के लगभग मनुष्यों में ईश्वर के उपासक कितने? यह प्रश्न है। यह क्यों हुआ? इसलिये कि मनुष्य का ईश्वर के साथ सीधा सम्बन्ध तो है नहीं, प्रतिनिधित्व द्वारा है। हरएक प्रतिनिधि बनना चाहता है। सीधा नहीं तो पैगम्बरों का, अवतारों का, उनके सम्प्रदाय हैं। उनकी गद्दियाँ हैं, उन के खलीफों के खलीफा हैं, ईसा मसीह बहिश्त में हैं और पोप रोम में उनके खलीफा हैं। यह पोप अपने अधिकारों को दूसरे प्रतिनिधियों को डेलीगेट कर सकते हैं। यह चीज है जिसने धर्म को एक उलझन में डाल रक्खा है। स्वामी दयानन्द ने आर्य्य समाज की स्थापना करते समय यह तो कहा कि ईश्वर की शरण आओ, वेद की शरण आओ और समाज अर्थात् संघ की शरण आओ। परन्तु यह नहीं कहा कि दयानन्द की शरण आओ। यह स्वामी दयानन्द की इस युग में सब से बड़ी विशेषता थी। यदि चाहते तो 'ओ३म्, दयानन्दाय नमः' को गायत्री में जोड़ सकते थे। और आजकल के आर्य समाजी दूसरों की देखा-देखी उसका जाप कर सकते थे। परन्तु ऋषि परम्परा ऐसी न थी न वेदों की शिक्षा ऐसी थी। जो विश्वामित्र गायत्री मंत्र के द्रष्टा समझे जाते हैं उन्होंने गायत्री के साथ अपना नाम नहीं जोड़ा और शिक्षा तो राम, कृष्ण या ईसा की भी ऐसी न थी, परन्तु उनके अनुयायियों ने वह कर दिखाया जो उन महान् पुरुषों को अभीष्ट न था। सृष्टि के स्रष्टा ईश्वर के विषय में कोई सिद्धान्त क्यों न हो और दुनियाँ के कानून के विषय में कोई सिद्धान्त क्यों न हो उनके कारण मनुष्यों में दल बन्दी नहीं हो सकती। असली दलबन्दी का कारण पैगम्बर, अवतार, पुजारी और पुरोहित हैं जो ईश्वर और मनुष्य के बीच में बिचौलिया बने बैठे हैं और जिन के नाम पर सम्प्रदाय स्थापित किये जाते हैं। जब एकमत और दूसरे मत में झगड़ा होता है तो इन अवतार या पैगम्बरों की वैयक्तिक जीवनी पर या उनके ईश्वरीकरण पर। उनकी शिक्षाओं पर बहुत कम।

(शेष पृष्ठ २२६ पर)

महर्षि दयानन्द का वैज्ञानिक धर्म

(२)

(लेखक—श्री प० सुधाकर जी सिद्धान्त विशारद आर्य समाज श्रीरामपुरम् बंगलौर)

[जून अङ्क से आगे]

हाँ जिस रूप में सायण, महीधर आदि भाष्यकार वेदों को जनता के सामने रखते आ रहे हैं, यदि वेदों का वही रूप है, तब तो उन वेदों के विरुद्ध विचारशील व्यक्ति के चित्त का विद्रोह कर बैठना समझ में आसानी से आ जाने वाली बात है। वेद यज्ञ के नाम पर पशु बलि को स्वीकार करें, जन्म गत जाति भेद का प्रतिपादन करें, चेतन मनुष्यों को जड़ मूर्तियों के पूजने का उपदेश करें और हजारों देवी देवताओं पर विश्वास रखने को कहें तो उनको ईश्वरीय ज्ञान मानना न केवल हास्य जनक, प्रत्युत आत्म-द्रोह ही है। किन्तु महर्षि दयानन्द अन्ध श्रद्धालु तो थे नहीं, वे तो जन्म से ही क्रान्तिकारी थे। उन्होंने पहले तो वेदों का नाम भी नहीं लिया, किन्तु जब वेदाध्ययन द्वारा उनके सारे सन्देह मिट गये, सत्य की अभिव्यक्ति हुई, तभी उन्होंने कहा कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। उसको पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" फिर भी, वे मनुष्यों को किसी मत के अन्ध अनुयायी बनाना नहीं चाहते। वे सदैव अपने आर्यावर्त्तीय मतमतान्तर ग्रस्त बन्धुओं से कहते हैं कि अपनी बुद्धि को काम में लाओ। यह तो बिलकुल स्पष्ट है कि महर्षि अपना कोई पथ चलाना नहीं चाहते थे। वे कहते हैं कि मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ कि जो तीन काल मे सबको एक सा मानने योग्य है। मेरा कोई नव न कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेश-मात्र भी अभिप्राय नहीं है। वे वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करके ही इस परिणाम पर पहुँचे थे कि अल्पज्ञ मनुष्य के लिये सर्वज्ञ परमेश्वर की सहायता बुद्धि-वर्धन के लिए न केवल आवश्यक, प्रत्युत अनिवार्य है। यह बात उतनी ही वैज्ञानिक है, जितना यह कि मनुष्य के चर्मचक्षुओं के उपयोग में लाने के लिये भगवान् भुवन भास्कर की भव्य

(पृष्ठ २५५ का शेष)

मत मतान्तरों का मुख्य भेद यहाँ है न कि उन गौण बातों में जिन पर अधिक बल दिया दिया जाता है। यदि पैगम्बरों या अवतारों को ईश्वर का एजेंट या ईश्वर न माना जाय और उनका प्रतिनिधित्व पुजारी पुरोहितों के हाथ में न सौंपा जाय तो इन सब को शिक्षक मानते हुए भी कलह नहीं हो सकती। परन्तु है यह बड़ी कठिन बात।

रश्मियों (किरणों) की आवश्यकता है। अब रही स्वतन्त्रता की बात। स्वतन्त्रता स्वय कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं रखती। जब तक 'पर' की सिद्धि नहीं होती तब तक 'स्व' का कोई मतलब ही नहीं होता। जब अन्य कोई है ही नहीं, केवल मैं ही मैं हूं। तब यह कहना कि यह 'मेरा' है, व्यर्थ है। क्योंकि इस 'मेरापन' पर झगड़ने वाला कोई है ही नहीं, तो 'स्वत्व' के क्या माने? इस से यह सिद्ध हुआ कि स्वतन्त्रता खुद अन्य अस्तित्व पर निर्भर है, स्वतन्त्रता स्वय स्वतन्त्र नहीं है। यह कहना आसान है कि मै स्वतन्त्र होना चाहता हूँ। प्रश्न उठता है—किससे? कहना पड़ता है कि अमुक चीज या परिस्थिति से। अमुक चीज या परिस्थिति या तो अच्छी है, या बुरी। कोई भी मनुष्य, जबतक वह बुद्धि का धनी है, अच्छी चीज या परिस्थिति से स्वतन्त्र हो जाना पसन्द नहीं करेगा। अगर वह स्वतन्त्र होना चाहता है तो केवल बुरी चीज से। तो बात यह बनी कि बुरी वस्तुओं से मुक्त होना ही स्वतन्त्रता है। अगर कोई कहे कि मै अमुक पुरुष की हत्या करने की स्वतन्त्रता चाहता हूँ, अमुक सती साध्वी स्त्री से अनुचित सम्बन्ध जोड़ने की स्वतन्त्रता चाहता हूँ, अमुक नदी के पानी में अपना सिर डुबोये रखकर अपनी जान खोने की स्वतन्त्रता चाहता हूँ, तो उसको बुद्धिमान् लोग, वैज्ञानिक कहना तो दूर, मनुष्य मानने में भी हिचकेंगे। तात्पर्य यह कि स्वतन्त्रता स्वयं न केवल सीमित, बल्कि परतन्त्र है। अच्छे कार्य के लिये पराधीनता होनी ही चाहिये। पाप करने वाले अभागे पुरुष को परतन्त्र बनाने में ही मनुष्यत्व का प्रकाश है। इस प्रकार की परतन्त्रता से यदि पापी का पाप धुल जावे तो इसमें अवाञ्छनीय बात कौन सी है? हां, किसी स्वातन्त्र्य में हस्तक्षेप करते हुए आप्तत्व से ही काम लेना चाहिये। मनुष्य जब तक सामाजिक प्राणी बना रहेगा तब तक उसको समाज-हित का ख्याल रखना ही पड़ेगा क्योंकि समाज यदि हित युक्त होगा, तभी वह अपना भी हित प्राप्त कर सकेगा। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि समाज-कल्याण के लिये उसे किसी हद तक व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का त्याग करना पड़ेगा, क्योंकि वैयक्तिक उन्नति तो सामाजिक उन्नति के अन्तर्हित ही है। यदि इस प्रकार की स्वतन्त्रता का त्याग भी या स्वगृहीत परतन्त्रता भी अवाञ्छित या अवैज्ञानिक ठहरायी जावे तो वैज्ञानिकता का कोई महत्त्व ही नहीं रहेगा। विज्ञान का उद्देश्य ही मनुष्य मात्र का कल्याण है। व्यक्ति स्वातन्त्र्य की वेदी पर यदि मानवहित का बलिदान किया जाय तो इस क्रिया को वैज्ञानिक कहना सरासर अवैज्ञानिक है।

तो क्या, वेद या शास्त्र जो भी कहें, नेत्र बद कर मान लें? विवेचना का कोई स्थान नहीं? ऋषि दयानन्द बार बार कहते हैं कि बुद्धिमान् बनो। बुद्धि से काम लो। सस्कृत में लिखी हुई सारी पुस्तकें शास्त्र नहीं, शास्त्र कहे जाने वाले सारे ग्रथ शास्त्र नहीं होते। सदा याद रखो कि परमात्मा जहाँ तुमसे श्रद्धा की प्रतीक्षा करता है वहाँ वह भी चाहता है कि तुम अपनी मेधा से भी काम लो। बस, महर्षि दयानन्द की विशेषता यही है। श्रद्धालु तो लाखों मिलते हैं। मेधावियों की भी दुनिया में कमी नहीं है। परन्तु श्रद्धा और मेधा

का समुचित सम्मिश्रण ससार में सुलभ नहीं है। यही समुचित सुन्दर सम्मिश्रण हम महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व में देखते हैं। यदि हम श्रद्धा बिलकुल नहीं रखेंगे तो हम अवश्य ही ठोकर खायेंगे। मान लीजिये कि कोई आप्त विद्वान् हमें यह कहता है कि विष-पान से मनुष्य की मृत्यु होती है। यदि हम उसकी बात पर श्रद्धा न करें और हठ करें कि नहीं तुम्हारा कथन क्यों मानें? हम विष खाकर ही देख लेंगे, तो इसका परिणाम सुगमता से सोचा जा सकता है। हमें ग्रीष्म के मध्याह्न समय अपने यात्रा-पथ पर प्यास लग जाती है। हमारी दुर्दशा देख कर हमारे अभिमुख आने वाला दूसरा यात्री हम से कहता है कि भाई, जरा इस तरफ़ जाओ तो कूप मिलेगा। अपनी पिपासा शान्त कर लेना। तब हमारा यह कहना कि भाई, हमे तो यह कुँआ दीखता नहीं, कैसे मान लें कि तुम्हारे कथनानुसार वह कूप उधर विद्यमान है, हमारी अश्रद्धा का परिचायक है। इससे हमारी तृष्णा की शान्ति नहीं होती है।

हमारा इतना कहना था कि हमारे हितैषी बन्धु घबड़ा उठे। बोले—भाई, यही तो सारी खराबी है। हमारे देश का सत्यानाश इसी प्रशंसित श्रद्धा ने किया। जिसने जो कुछ भी कहा उसको जनता ने वेद वाक्य ही मान लिया। परिणाम हम सब देख रहे हैं। हमारी राजनैतिक दासता का मूल कारण इसी दास्य मनोभाव में हमें मिल जाता है।

हमने कहा—भाई साहब, हमारा कथन पूरा सुन लीजिये। हमने तो महर्षि दयानन्द के वैज्ञानिक धर्म का एक भाग सुनाया है। दूसरा भाग है—मेधा। श्रद्धा करने से पहले हमें अपनी मेधा से भी काम लेना चाहिये। हमें यह पक्का निश्चय कर लेना चाहिये कि (१) हमें कुँए का निर्देश करनेवाला पथिक आप्त है भी या नहीं। (२) विष के बारे में बोलने वाला आर्यत्व का धनी है भी या नहीं। असभव या असत्य भाषण करने वाला आर्य या आप्त नहीं होता। यदि प्रथम व्यक्ति यह कहता, कि विष खाने से तुम नहीं मरोगे और दूसरा व्यक्ति यह कहता कि कूप तो आसमान में खुदा हुआ है, तो हमें झट मालूम हो जाता कि ये दोनों आप्त नहीं हैं। फिर हम उनकी बातें मानने पर विवश भी नहीं होते। आपका कहना आधा तो ठीक है कि श्रद्धा ने अभागे भारतवर्ष का सत्यानाश कर दिया है। लेकिन पूर्ण सत्य तो यह है कि श्रद्धा मेधा नामक नेत्र खोकर बेचारी अन्धी हो गयी थी "अन्धेनैव नीय माना यथान्धा" के न्याय के अनुसार उसने भारत देश को पतन के गर्त्त में गिरा दिया। ठीक यही बात हम यूरोप में भी देखते हैं। फ़र्क इतना है कि वहाँ मेधा के बदले श्रद्धा का दिवाला निकल गया है। श्रद्धा रूपी आत्मा शून्य में विलीन हो गयी और परिणाम हम यह देखते हैं कि यूरोप के रण क्षेत्रों में मेधा का शव निस्तेज होकर पड़ा हुआ है। श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज आखिर ऋषि तो थे ही। 'द्रष्टा' होकर उन्होंने देखा और अच्छी तरह देखा कि भूमाता की इस निरन्तर वेदना का कारण क्या है। उन्होंने अच्छे परीक्षण के बाद

बीमारी पहचान ली और उसका औषध उन्होंने इस वेद-मन्त्र में से ढूँढ निकाला।

"स मे श्रद्धां च मेधां च जात वेदाः प्रयच्छतु ।"
"परमात्मा हमें श्रद्धा भी दें और मेधा भी ॥"

बस, यही महर्षि दयानन्द का वैज्ञानिक धर्म है। इसमें स्वतन्त्र विचार भी है, समष्टि के हित के लिए व्यष्टि हित के त्यागने की भावना भी है। और यही दुनियाँ की बीमारी का इलाज है।

[यह लेख अत्युत्तम होने के कारण हमने प्रकाशित किया है केवल एक बात का निर्देश करना आवश्यक प्रतीत होता है कि अन्ध विश्वास के लिये वस्तुतः श्रद्धा शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उसका अर्थ हो श्रत अर्थात् सत्य को धारण करना है उस सत्य के ज्ञान के लिये मेधा अथवा शुद्ध बुद्धि की सहायता आवश्यक है ।]

सम्पादक

सत्यार्थप्रकाश की जब्ती ?

(१)

(ले०—प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्वदेशिक आ० प्र० सभा)

सिन्ध के मुसलमान लीगी वजीरों की कृपा से सत्यार्थप्रकाश की जब्ती का सवाल फिरसे ताजा हो गया है। कहने को यह आदोलन सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम ४ समुल्लासों के विरुद्ध है परन्तु आदोलन करने वाले लोग जानते हैं कि सत्यार्थ-प्रकाश के किसी एक भाग की जब्ती सारे सत्यार्थप्रकाश की जब्ती के बराबर है। जो लोग सत्यार्थप्रकाश को नये युग का सबसे बड़ा ग्रन्थ मानते है, वह उसके किसी भाग को भी छोड़ना सहन नहीं करेंगे। उनके लिए सम्पूर्ण सत्यार्थ-प्रकाश ही सत्यार्थप्रकाश है। उसका अगभग नहीं किया जा सकता। सत्यार्थप्रकाश के विरोधियों को मालूम है, नहीं मालूम तो हो जाना चाहिये कि केवल आर्य समाजी ही नहीं, अपितु करोड़ों हिन्दू आज सम्पूर्ण सत्यार्थप्रकाश को १६ वीं शताब्दी का सबसे बड़ा ग्रन्थ मानते हैं। वह नये युग में हिन्दू जाति के पुनरुत्थान का प्रारम्भ बिन्दु है।

सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध समय समय पर आवाज उठाई जाती रही है। ऋषि दयानन्द किसी नये धर्म के संस्थापक नहीं थे, वह सुधारक थे और सदियों के कूड़ाकरकट के नीचे दबे हुए सत्य के उद्धारक थे। सुधारक को दो काम करने होते हैं। कूड़ाकरकट को दूर करना होता है और उसके नीचे से निकाल कर अनादि अमर सत्य को प्रकाशित करना होता है। संसार के सभी सुधारकों को यह दोनों कार्य करने पड़े हैं। हजरत मुहम्मद स्वयं एक बड़े सुधारक थे। कुरानशरीफ को पढ़कर देखो उसमें विरोधियों के प्रति जो भावनायें प्रकट की गई हैं सत्यार्थ प्रकाश की आलोचनायें उसके सामने बिलकुल नर्म हैं। सुधारक का कार्य ही बहुत कठिन और कठोर है। उसे असत्य को तोड़ कर सत्य को स्थापित करना पड़ता है तोड़ने का कार्य अप्रिय है, परन्तु जैसे एक सर्जन को शरीर का रोग दूर करने के लिए आपरेशन करना पड़ता है, इसी प्रकार सुधारक को भी मनुष्यों के मानसिक रोगों को दूर करने के लिये समालोचना का नश्तर लगाना पड़ता है। उससे रोगी को दुःख हो सकता है, वह छटपटा सकता है, परन्तु रोग को दूर करने के लिये उतना दुःख देना आवश्यक है। कुशल चिकित्सक का कर्तव्य है कि वह रोग की निवृत्ति के लिये आवश्यक दुःख देकर भी रोगी का भला करे।

सत्यार्थप्रकाश में भिन्न भिन्न मतों की जो आलोचना की गई है, यह मानसिक आपरेशन ही है। ऋषि दयानन्द ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है कि सब मत-मतान्तरों में सत्य का अंश

विद्यमान है, जो माननीय है। साथ ही ऋषि ने यह भी माना है कि वह सार्वदेशिक सत्य भ्रम, कुसंस्कार और रीति-रिवाजों के कूड़ा-करकट के नीचे दब गया है। सत्यार्थप्रकाश के समालोचनात्मक भाग का उद्देश्य उस कूड़ा-करकट को दूर करना है। किसी धर्माचार्य का अपमान करना या धर्मग्रन्थ की निन्दा करना ऋषि का लक्ष्य नहीं था। सुधारक को जनता के हृदयों में सुधार की भावना जागृत करने के लिये जितनी स्पष्टोक्ति की आवश्यकता होती है, ऋषि ने उसी से काम लिया है। सोए हुए को जगाने के लिए थोड़ी-सी ठोकर की आवश्यकता होती है। ऋषि ने मनुष्यों की सोई हुई धार्मिक भावना को जागृत करने के लिए समालोचना की ठोकर से काम लिया। ऋषि ने यह कोई नई बात नहीं की थी। इतिहास में जितने सुधारक हुए हैं उन्हें मानव समाज को जगाने के लिए ठोकर देने की आवश्यकता प्रतीत हुई है। सच्ची और खरी आलोचना सुधारक का कर्तव्य है, ऋषि दयानन्द ने उसी कर्तव्य का पालन किया है।

(२)

मैंने अपने पहले लेख में दिखाया था कि सत्यार्थप्रकाश का आलोचनात्मक भाग सुधार की सीमा का उल्लंघन नहीं करता। एक सुधारक को चिरकाल के जमे हुए कुसंस्कारों और युक्तियों को जितनी ठोकर पहुँचानी पड़ती है ऋषि दयानन्द ने उससे अधिक नहीं पहुँचायी और जितनी पहुँचाई, उतनी सोई हुई सद्भावनाओं को जगाने के लिये आवश्यक थी।

ऐसी दशा में यह प्रश्न स्वभावतः पैदा होता है कि फिर सत्यार्थ-प्रकाश के किसी भाग की जब्ती का वावेला बार-बार क्यों उठाया जाता है? यह क्या कारण है कि अन्य अनेक धर्म-ग्रन्थ कहलाने वाली किताबों में विद्यमान कठोर से कठोर आलोचनाओं और प्रति पक्षियों को कत्ल कर देने की प्रेरणाओं तक की चर्चा नहीं होती और सत्यार्थ प्रकाश की आलोचनाओं पर वार करने के लिये कानून का आह्वान किया जाता है?

यदि इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया जाय तो प्रतीत होगा कि जो लोग समय-समय पर सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध कानून को निमन्त्रित करते रहते हैं, उनके दिल में यह छुपा हुआ भाव बना रहता है कि भारत की वर्तमान सरकार को सत्यार्थ प्रकाश और आर्य समाज के के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये प्रेरित किया जा सकता है। यह अन्तर्हित भाव ही है, जो भिन्न-भिन्न मतों के अनुयायियों को जहां-तहां सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती और आर्यसमाज का दमन करने के प्रयत्न की प्रेरणा करता रहता है।

भारत की अँग्रेजी सरकार की घोषणा है कि वह इस देश में धार्मिक दृष्टि से सर्वथा पक्षपातहीन रहेगी। इसी नीति पर चलती हुई वह सभी प्रकार के धार्मिक विचार रखने वाले लोगों को स्वाधीनता देने का दावा करती है और प्राय देती भी है। केवल आर्यसमाज में ही ऐसी कौन सी विशेषता है कि उसके विरोधी सरकार द्वारा आर्यसमाज के दमन की आशा रख कर सत्यार्थ-प्रकाश की जब्ती का प्रस्ताव बार-बार उठाते हैं?

मैं इसका कारण यह समझता हूँ कि वर्तमान

सरकार ने इस विषय में कभी अपने निश्चित मत की घोषणा नहीं की। भारतीय केन्द्रीय सरकार हो या किसी प्रांत की सरकारें—यदि वह समझती हैं कि आर्यसमाज या सत्यार्थप्रकाश में कोई ऐसी वस्तु है, जिसका दमन वह आवश्यक या सम्भव समझे तो उन्हें चाहिये कि वह सब पहलुओं पर विचार करके जो कदम उठाना आवश्यक समझे, उठायें ताकि आर्यसमाजियों का अपने विश्वास की परीक्षा देने का अवसर मिले और इस प्रश्न का दो टूक फैसला हो जाय कि सत्य क्या है। परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार या प्रान्तिक सरकारों का ऐसा विचार न हो और यदि वह भारत के उन निवासियों के धार्मिक विचारों का भी कोई आदर करते हैं, जो अपने का आर्य समाजी कहते हैं तो उन से मैं आग्रह पूर्वक कहूँगा कि सदा के लिये इस व्यर्थ के बवंडर को रोकने के लिये स्पष्ट घोषणा करदें कि वह सत्यार्थप्रकाश पर होने वाले आक्रमणों को भी लोकहित की दृष्टि से उतना ही हानिकारक समझते हैं, जितना किसी अन्य सम्प्रदाय या मत के धर्म ग्रन्थ के विरुद्ध आक्रमण को। सरकार का ऐसी घोषणा न करना आर्यसमाज के प्रतिपक्षियों के हृदयों मे यह छुपी हुई आशा पैदा करता रहता है कि सरकार आर्यसमाज को अन्य धार्मिक समुदायों से, और सत्यार्थ प्रकाश को अन्य धार्मिक ग्रन्थों से अलग कोटि में समझती है।

मैं तो चाहता हूँ कि दो में से एक चीज़ अवश्य हो जानी चाहिये। या तो सरकार की ओर से सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में इस आशय की स्पष्ट घोषणा हो जानी चाहिये कि सत्यार्थ-प्रकाश भी एक धर्मग्रन्थ है, जिसके विरुद्ध आक्रमण शान्ति का विघ्नकारी है, और कानून की दृष्टि मे जुर्म है और यदि यह न हो तो ऐसी परिस्थिति जितना शीघ्र हो सके आ जानी चाहिये, जिसमें आर्यसमाजियों को कठोर अग्नि परीक्षा द्वारा यह सिद्ध करने का अवसर प्राप्त हो जाय कि उनकी भी कोई धार्मिक भावनायें हैं, वह भी अपने धर्म के लिये कुर्बानी कर सकते हैं और उनकी भावनाओं की रक्षा करना भी कानून का कर्तव्य है।

आर्यसमाज को अपने पूरे धार्मिक अधिकार प्राप्त करने के लिये शायद अभी बहुत सी कुर्बानी की आवश्यकता है। विरोधियों के हृदयों में यह भ्रम बना हुआ है कि वह सामयिक सरकार की मदद से कभी न कभी आर्यसमाज और सत्यार्थप्रकाश का दमन कर सकेंगे। यह उनका नितान्त भ्रम है। आर्यसमाज में विश्वास और त्याग की इतनी मात्रा विद्यमान है कि वह सब विरोधी शक्तियों के प्रयत्नोंको परास्त करके जीवित रह सकता है। यह मेरा और अनगिनत आर्यसमाजियों का विश्वास है। विरोधी भी इस विश्वास को मान जाय, इसके दो ही उपाय हैं, या तो वह आर्य समाज के अब तक के इतिहास से इस परिणाम पर पहुँच जाय, और यदि वह काफी न हो तो परीक्षा कर लें। दोनों में से जो उपाय ठीक मालूम हो, उसे काम में लाया जाय परन्तु अब यह आवश्यक प्रतीत होता है कि रोज़ रोज़ की यह चर्चा बन्द होनी चाहिये। कभी

(शेष पृष्ठ २६३ पर)

आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण

[३]

आर्य वीर दल का झंडा

(लेखक—श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, मन्त्री अखिल भारतीय आर्य वीरदल समिति तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।)

प्रत्येक सेना का एक झंडा होता है। आर्य वीर दल भी आर्यों की शान्तिमयी सेना है। आर्य वीर आर्य जाति का ऐसा क्षत्रिय है जो अपने शान्त साहस और अटूट धैर्य द्वारा धर्म, जाति और देश की सेवा करना चाहता है। आर्य वीरदल आर्य वीरों और आर्य वीरांगनाओं का सैन्य है। उसका भी झंडा होना चाहिये।

हरेक समुदाय के लिये एक झंडा होना चाहिये जिसके चारों ओर वह समुदाय इकट्ठा हो सके। फिर सेना का तो झंडा प्राण है। सेना झंडे की छाया में एकत्र होती है, झंडा उसकी रक्षा करता है और वह झंडे की रक्षा करती है। झंडा सेना के आत्म-सम्मान का चिन्ह है। झंडा खड़ा है तो सेना की गर्दन खड़ी है झंडा झुक गया तो सेना की गर्दन झुक गई। प्रत्येक सैनिक जानता है कि झंडे को खड़ा रखना उसका धर्म है।

आर्य वीर दल आर्यों की शान्तिमयी सेना है। उसका भी झंडा है। उस झंडे में दो चिन्ह हैं। चारों ओर सूर्य मंडल है, और मध्य में ओंकार है। सूर्य मंडल पूर्व दिशा में आते हुए सूर्य का उपलक्षण है। आर्य धर्म संसार को पूर्व की देन है। आर्य देश पूर्वमूर्धन्य देश है।

(पृष्ठ २६२ का शेष)

पटियाले में शोर मचता है तो कभी सिन्ध में। कभी मुसलमान अखबार हल्ला करते हैं तो कभी अकाली। इन सब आलोचकों और विरोधियों से मेरा यही निवेदन है कि इस व्यर्थ की अधूरी छेड़छाड़ से क्या लाभ ? या तो एक बार कानूनी लड़ाई लड़कर अपने दावे को सिद्ध करदो, अथवा इस नपुंसक चर्चा को छोड़ो।

जीओ, और जीने दो-यह बुद्धिमानों का उसूल है। आर्य समाज किसी के धर्मग्रन्थ या धार्मिक विचार को जब्त नहीं कराना चाहता, क्योंकि वह उनकी जब्ती के बिना भी जीवित रह सकता है और न वह स्वयं जब्त होना चाहता है, क्योंकि वह जीने का अधिकार रखता है। सांसारिक शक्तियों के सहारे पर जीने का प्रयत्न वही लोग करते हैं, जिन्हें अपनी सचाई पर पूरा भरोसा नहीं। आर्यसमाज चाहता है कि वह जिस सिद्धांत पर स्वयं चलता है, मनुष्य मात्र को भी उसी पर चलने का सन्देश दे। (बी०अ०)

और सूर्य वंश ने संसार में आर्य संस्कृति के गौरव की स्थापना की है इन कारणों से सूर्य मण्डल आर्य ध्वजा का प्रधान चिन्ह है।

सूर्य मण्डल के मध्य में ओंकार विराजमान है। आर्य जाति सदा भगवान् को पथदर्शक मानती रही है और ओंकार भगवान् का मुख्य द्योतक है। सूर्य मण्डल और ओंकार आशा और विश्वास के चिन्ह हैं। और जो ध्वज आशा और विश्वास का पुंज है उसके नीचे चलने से विजय की प्राप्ति अवश्य होगी। इस भावना से देखें तो आर्य वीर दल का झंडा विजय का चिन्ह है। यहाँ यह बतला देना आवश्यक है कि आर्य वीर दल के ध्वज का किसी दूसरे ध्वज से आवश्यक विरोध नहीं। अन्य समुदायों को भी अपने अपने अभिमत ध्वज रखने का पूरा अधिकार है। यदि कोई आर्य वीर किसी ऐसे समुदाय का सदस्य हो जिसका उद्देश्य और कार्य सम्बन्धी सिद्धान्त आर्य वीर दल का विरोधी न हो तो वह भी उस समुदाय के साथ कार्य करने के समय में उसके झंडे के नीचे चल सकता है। आर्य वीर को विरोध तब करना पड़ेगा जब उसके झंडे पर आक्रमण होगा। उसका सिद्धान्त होगा कि जिओ और जीने दो। उसके कार्य में दूसरा विघ्न न डाले और वह किसी दूसरे के कार्य में विघ्न न डाले। आर्य वीर दल का झंडा लहराता रहे तो उसे अन्य झंडों के खड़ा रहने में कोई आपत्ति नहीं। आर्य वीर दल किसी अन्य ध्वज को मिटाना नहीं चाहेगा। हाँ अपने ध्वज की रक्षा में अवश्य मर मिटेगा।

(हमारी प्रार्थना पर अखिल भारतीय आर्य वीर दल समिति और सार्वदेशिक आ० प्र० सभा के माननीय मन्त्री श्री पं० इन्द्रजी विद्या वाचस्पति ने आर्य वीर दल के शिक्षण विषयक अत्युत्तम पाठों को नियमित रूप से सार्वदेशिकार्थ लिखने का वचन देने की कृपा की है। अतः अब आर्य वीरों को इन लेखों से विशेष रूप से लाभ उठाना चाहिये—सम्पादक)

क्या मांस भोजन न होने से भारत पराधीन है?

स्वामी दयानन्द पर अमरसिंह जी

(लेखांक ३)

(लेखक—श्री प० जयदेव जी शर्मा विद्यालङ्कार चतुर्वेद भाष्यकार)

अमरसिंह जी की पुस्तक के तीसरे अध्याय का शीर्षक है—"हिन्दुओं की अहिंसा और निरामिष भोजन के सिद्धान्त का प्रभाव।" इस अध्याय में आपने ६ भाग किये हैं। आप लिखते हैं कि—महात्मा गांधी की अहिंसा ने हिन्दुओं की मानसिक शक्ति को पिलपिला कर दिया है इस कारण वे ईसाई और मुसलमानों से अधिक निर्बल हैं। मौलाना खान इस अहिंसा के कम उपासक हैं। दवे, भवे लाला पण्डित इस अहिंसा के अधिक उपासक हैं। म० गांधी और जैनों की अहिंसा का प्रतिवाद कैसे करें? इसका उपाय सिखों की और वैदिकी हिंसा ही है। यह हिंसा आवश्यक है। भोजन का प्रश्न केवल भूख बुझाने पर ही निभर नहीं है परन्तु इसमें राष्ट्रीय दृष्टि भी है जिसको स्वा० दयानन्द और सिख गुरुओं ने भुलाया नहीं। भोजन का निर्णय वैज्ञानिक और ऐतिहासिक तथ्यों पर होना चाहिये। धार्मिक और सामाजिक भावनाओं पर उससे उतर कर। मांस भोजन का मनुष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? ऐतिहासिक दृष्टि से अमरसिंह जी लिखते हैं कि—

(A) इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया के अनुसार जंगली जातियों और नीची जातें जो मुसलमान हो गई हैं, उनकी जन संख्या अधिक बढ़ी, क्योंकि उनमें विवाह करने की बहुत सुविधाएं थीं शायद इस लिये भी कि वे नाना प्रकार के भोजन खाते हैं और अधिकांश मांस खाते हैं।

(B) हिन्दू और मुसलमानों में से मौतें भी मुसलमानों में अधिक होती हैं। १८६१—१९०० में मुसलमानों में जिनमें प्रायः नीची जातें जो मुसलमान बनी हैं, उनमें कम है। देसी फौजों में भी हिन्दुओं की मृत्यु संख्या ८८ है और मुसलमानों की ३६। प्लेग आदि में भी मुसलमान रोग को अधिक झेलते हैं। इसी प्रकार युरेशियनों और क्रिश्चियनों में भी यह मृत्यु संख्या कम है सम्भव है कि इसका कारण भोजन भेद हो।

(C) पंजाब बोर्ड इन्क्वायरी कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार धर्म की दृष्टि से ईसाइयों के बच्चे सबसे अधिक उत्पन्न हुए। हिन्दुओं से अधिक मुसलमानों के बच्चे उत्पन्न हुए।

(D) मि० लोरॅण्ड की पुस्तक 'हैल्थ थ्रू रैशनल डायट्' के अनुसार—शाकाहारी लोग युद्ध के साहसी कामों में कम लगते हैं, वे प्रायः

शान्तिप्रिय अधिक होते हैं। शक्ति का सर्व प्रधान उत्पादक वीर्य (allumin) है। इसमें सर्व मुख्य दृष्टान्त यह है कि मुट्ठी भर डचों और अँग्रेज़ों ने करोड़ों हिन्दू और मलयों को काबू कर रखा है। इसी प्रकार कांगो (अफ्रीका वासी जंगली) लोगों को थोड़े से बैल्जियनों ने काबू कर रखा है। जंगली लोगों के भोजन अधिकांश उन कन्द मूलों पर हैं, जिनमें वीर्य कम बनता है। यदि शान्तिमय जीवन को 'उन्नति' मानें तो शाकाहार सर्वोत्तम है।

(E) हर्बर्ट स्पेंसर के आधार पर आप लिखते हैं कि ऊपर की (अमीर) श्रेणियों में लड़कों और लड़कियों को बड़ी सरलता से केवल निरामिष भोजन पर पाला जा सकता है। श्रमी जनता की सन्तानें भी केवल अन्न पर बहुत स्वस्थ रहती हैं। तो भी शक्ति आदि की दृष्टि से मांस भोजी लड़के अधिक दृढ़ पाये गये हैं। मांस भोजी जीव वनस्पति भोजियों से अधिक चंचल (Active) देखे गये हैं। योरोपीयन पतले होकर भी बड़े पेट वाले आस्ट्रेलिया के कन्द मूल पर पले जंगली बुशमैनों से तेज होते हैं। हिन्दुओं का भोजन निकम्मा होता है, वे अँग्रेज़ों के सामने कुछ नहीं हैं। अँग्रेज़ प्रचुर-मांसाहारी शाकाहारी श्रमियों से कहीं बढ़कर हैं। उनका भी भोजन बदल दिया जावे तो वे भी बढ़ सकते हैं। इत्यादि।

(समीक्षा)—श्री अमरसिंह जी के लिखे इस अध्याय को पढ़कर हमें बहुत हँसी आती है, क्योंकि अमरसिंह जी स्वयं इस मामले में—'मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त' हैं। क्योंकि आपने जितनी बातें उठा रखी हैं वे बहुत लचर हैं। प्रथम तो वे किसी वैज्ञानिक आधार पर नहीं लिखी गई। दूसरे उनके लिखने वाले स्वयं मांसाहारी हैं। उनके लिखे लेखों से कोई बात सिद्ध करना इकतरफ़ा डिग्री है। दूसरे, जिन्होंने मांस के पक्ष में भी लिखा है तो वह कोई निश्चय पूर्वक नहीं लिखा। जैसे—

(A) इम्पीरियल गजेटियर के उद्धरण में स्पष्ट लिखा है—'This is due to the more favourable marriage customs and possibly also to the greater varietly of food which generally contains a larger measure of the animal element among Hindus इस प्रकार पाठक स्पष्ट देख सकते हैं कि मांस भोजन का कारण लेखक की दृष्टि में संदिग्ध है। इसी प्रकार

(B) में गेजेटियर के उद्धरण में लिखा है—It is probable that the nature and variety of the food play a consider able part यहाँ भी वैसा ही संदेह प्रदर्शक प्रोबेब्ल' शब्द लगा है।

(C) में जिस ग्रन्थ का उद्धरण है उसमें लेखक ने केवल यह लिखा है कि कांगो आदि देशों के लोगों के भोजन में वीर्यांश (Allumin) कम है, इसलिये हिन्दुस्तान और मलया' और कांगों के लोग कमज़ोर हैं। इसलिये मुट्ठी भर योरोपीयन करोड़ों शाक भोजियों पर राज कर रहे हैं। हर्बर्ट स्पेंसर आदि का ऐसा लिखना केवल योरोपीयन आचार अनाचार को तरजीह देकर हिन्दुस्तान आदि देशों के धार्मिक भावों पर आघात पहुँचाने के लिये है। वस्तुतः भारतवर्षी

और मलाया या बर्मा आदि प्रान्तों के करोड़ों लोग जो मुट्ठी भर योरोपीयनों के अधीन रहते हैं उसमें राजनैतिक कारण विशेष हैं। मास भोजन का होना न होना कारण नहीं है। मलाया, जावा और हिन्दुस्तान के वासियों के पास १ म सैनिक सगठन और देश भक्ति कम थी, फूट बहुत जबरदस्त थी, हिन्दुस्तानी सेनाए जा योरोपीयन सेनाओं से लडन मे किसी भी दुनिया क तख्ते पर कच्ची साबित नहीं हुई है, वे ही विदेशियों के हथियार (tool) बनी हुई हैं भारतीयों ने गुलामी का तौक अपने हाथों देश द्रोही हो होकर स्वय पहना है। इसमें भोजन कारण नहीं है। इसी प्रकार पर राष्ट्र योरोपीयन मास भोजी जातियाँ और राष्ट्र भी पर राष्ट्र से इसी प्रकार शासित हो सकती हैं, हो रही हैं। यदि उनमें भी स्वार्थ से प्रेरित होकर जाति द्रोही होकर शासक जाति से जा मिलने वालों की सख्या अधिक हो जावे तो वे अवश्य पराधीन हो जावेंगे। यदि विभीषण न निकलता तो लका का विजय नहीं हो सकता था। यदि जयचन्द्र न होता तो पृथ्वीराज न हारता। यदि वकील, ऐडवोकेट बैरिस्टर होकर अंग्रेजी कोर्टों के दरदर न भटकते तो भारत की पचायत प्रणाली कभी नष्ट न होती। ऐडवोकेट अमरसिह अपनी कमजोरी को भारत के पराधीन होने में कारण स्वीकार न करके सारा ठीकरा निरामिष भोजन पर फोडना चाहते हैं। इसी आधार पर वे परोपकारिणी सभा को ऋषि दयानन्द के प्रति जाल साज सिद्ध करने की चाल चल रहे हैं।

अगले लेख मे हम अमरसिह जी की पुस्तक के ४ थे अध्याय की आलोचना करेंगे।



भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् देहली के परीक्षा-विभाग की सूचनाएं

परीक्षाओं की लोक प्रियता—

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से होने वाली सिद्धान्त शास्त्री आदि धार्मिक परीक्षाएं पर्याप्त लोक प्रिय हो रही हैं। परीक्षाओं मे प्रतिवर्ष देश के सभी प्रान्तों से काफी सख्या में स्त्री पुरुष सम्मिलित होकर लाभ उठाते हैं। इन परीक्षाओं की आर्य-जगत् के सभी प्रतिष्ठित आर्य विद्वानों ने भूरि२ प्रशंसा की है। और आर्य जगत् से उन्होंने परीक्षाओं में सम्मिलित होने की प्रेरणा की है जिनमें से कुछ एक महानुभावों के नाम निम्न प्रकार से हैं १-श्री महात्मा नारायण स्वामी जी २-श्री कुवर चाँदकरण जी शारदा अजमेर, ३-श्री बा० पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट आगरा ४-श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री ५-श्री महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री मत्री आर्य प्रतिनिधि सभा यू० पी० ६-श्री प्रो० इन्द्र जी, मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ७-डा० परमात्माशरण जी बनारस, ८-श्री प्रो० सुधाकर जी देहली ६-श्री परमानन्द जी शास्त्री लाहौर इत्यादि२—

२—केन्द्र व्यवस्थापक ध्यान देवें

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं के विविध परीक्षा केन्द्रों के व्यवस्थापकों से निवेदन है कि उनके केन्द्रों में जो व्यय हुआ है उसकी रक़म कार्यालय से भेज दी गई है। यदि किसी केन्द्र व्यवस्थापक के पास केन्द्र व्यय न पहुँचा हो तो कार्यालय को समस्त व्यय की रसीदें और ब्यौरे आदि के साथ पत्र भेजकर मगवा लेवें—यदि किसी केन्द्र व्यवस्थापक के पास परीक्षा शुल्क की कुछ रक़म शेष बची पड़ी हो तो उन्हें वह कार्यालय में भेज देनी चाहिये।

३—धार्मिक परीक्षाओं की पाठ विधि—

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं की पाठ विधि, परीक्षा के समस्त

परीक्षा केन्द्रों, कुमार सभाओं, प्रतिनिधि सभाओं और आर्य पुस्तक विक्रेताओं आदि को भेज दी गई है। जिन२ समाजों, नगरों या अन्य शिक्षण संस्थाओं में पाठ विधि नहीं पहुँची और वहाँ के आर्य भाई बहिन परीक्षाओं में सम्मिलित होने के इच्छुक हों तो उन्हें कार्यालय में पत्र लिखकर पाठ विधि बिना मूल्य मगवा लेनी चाहिये।

४—परीक्षाओं के केन्द्रों की स्थापना—

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से जनवरी १६४४ मे होने वाली सिद्धान्त शास्त्री आदि परीक्षाए किसी भी नगर में परीक्षार्थी के कम से कम १० परीक्षार्थी होने पर हो सकती है केन्द्र स्थापना का फार्म कार्यालय से बिना मूल्य पत्र लिखने पर भेजा जाता है। परीक्षाओं में सम्मिलित होने के इच्छुक आर्य भाई बहिनों को शीघ्र से शीघ्र अपने २ नगर में केन्द्र स्थापित करा लेना चाहिए।

५—प्रमाण पत्र

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से भारत के भिन्न२ नगरों के केन्द्रों से जनवरी १६४३ मे सि० शास्त्री आदि परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वाले भाई बहिनों के प्रमाण पत्र इस मास के अन्तिम सप्ताह तक समस्त केन्द्रों के व्यवस्थापकों के पास भेज दिये जावेंगे—परीक्षार्थियों को प्रमाण पत्र अपने २ केन्द्र व्यवस्थापकों से ही प्राप्त कर लेने चाहिये। अगस्त के द्वितीय सप्ताह तक यदि प्रमाण पत्र न प्राप्त हो तो कार्यालय को पत्र लिखें।

परीक्षा मन्त्री
भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद्,
दीवानहाल, देहली।

अफ्रीका में आर्य वीरदल की स्थापना

भारतीय आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि ६ मई १६४३ को कैटो मैनर (Cato Manor) आर्यसमाज की अधीनता में समाज मन्दिर में आर्य वीरदल की स्थापना हो गई है जिसके निम्नलिखित अधिकारी चुने गये हैं।

दलपति—श्री देवनारायण जी
उपदलपति—श्री हरिप्रसाद जी
कोषाध्यक्ष—श्री मुनिशङ्कर जी
मन्त्री—श्री देवव्रत जी
आरोग्य शिक्षक—श्री डी. एम. पदार्थ
लेखा निरीक्षक—श्री जी एम. सिंह
कार्य कारिणी समिति सदस्य—श्री काशी प्रसाद जी
श्री राजकुमारजी, श्री राम कृष्ण जी, श्री हरिप्रसाद जी, श्रीमती देवकी जी

सामाजिक जगत्—

आन्ध्रदेश में प्रचार

(१) राजोल में ब्रह्मयज्ञ

पूर्वगोदावरी जिला मे राजोल एक हरा भरा तालुका (तहसील) गोदावरी नदी के तट पर स्थित है। इसी तालुका में गोदावरी तथा समुद्र तट के मध्य में एक केशनपल्ली नामक छोटा सा ग्राम है जो कि समुद्रतट से ठीक १ मील दूर है। इस इलाके में 'तेलगा' नामक 'जात' के लोग बसते हैं जो कि बहुत धनी हैं तथा अब शिक्षित भी होते जा रहे हैं। इस सघ में अब तक आर्यसमाज का प्रचार नहीं के समान था। गतवर्ष रामनवमी के दिनों मे इस सघ के श्री ब्रह्मानन्द बालयोगी नामक तेनाली के महानुभाव ने तपोयज्ञ नामक एक यज्ञ का आयोजन किया था जिसमें इस संघ के बडे बडे लोग बडी सख्या में एकत्रित हुए थे। वहा पर चार दिन तक पं० मदनमोहन विद्यासागर जी वेदालङ्कार ने आर्यसमाज का प्रचार किया था, जिसके फल स्वरूप समस्त सघ में एक आन्दोलन मच गया।

इस प्रचार का परिणाम यह हुआ कि इस वर्ष का 'यज्ञ' सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य प्रचारक उत्तम विद्वान् सम्मान्य उक्त पण्डित जी की अध्यक्षता में ही चार दिन तक (१८ मई से २१ मई तक) केशनपल्ली नामक ग्राममें बडी धूमधाम से मनाये जाने का निश्चय हुआ। प० जी १८ को प्रातःकाल की कार्यवाही में न पहुच सके। शेष तीनों दिन प्रात. यज्ञ तथा वेद की कथा, मध्याह्न प० जी के सरस व्याख्यान तथा शङ्कासमाधान सम्मिलित सध्या समावेश (जो कि इस देश में बिलकुल नई बात है) रात्रि पुन व्याख्यान। इस प्रचार मे पं० जी के साथ श्री सिंगम पल्ली सुब्बाराव जी, श्री सरोजिनी देवी जी श्री वैरागी जी तथा श्री मुम्मलनयनी, लक्ष्मीनारायण जी आदि कई महानुभावों ने भाग लिया। इस यज्ञ की विशेषता यह थी कि 'मालामादिगा' जो कि अत्यन्त नीच कुल के समझे जाते हैं, को भी यज्ञकुण्ड पर समान रूप से आने दिया गया जो कि अभूतपूर्व घटना है, जिसके लिये प० जी को विशेष प्रयत्न करना पडा।

बहुत सारे महानुभावों ने प० जी से गायत्री मत्र का उपदेश व यज्ञोपवीत लिया, जिसमें ६०, ७० वर्ष के वृद्ध महानुभाव भी थे। २०जु० को पण्डित सन्मान सभा व कवि सम्मेलन किया गया जिसमें आन्ध्रकवियों का गौरव किया गया।

इस यज्ञ से आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द का नाम दूर २ तक इस सघ में पहुँच गया। भविष्य में इस में बडे भारी सगठन की आशा है।

२ गंगवरम् में कृष्णम्मा वेद विद्यालय की स्थापना

दो वर्ष पूर्व एक दिन श्री प०म०मो० विद्यासागर जी तथा श्री प० गोपदेव जी अकस्मात् गग वरम् ग्राम डा० व्हा० इन्दालु (जि० गुण्टूर) में जा पहुँचे। वहा पर एक धर्मशाला केवल ब्राह्मणों के लिये 'सत्रेटी कृष्णम्मा' नामक एक कन्यामहा-

नुभाव ने बनाई थी । प० मदन मोहन वि० जी ने रात्रि को व्याख्यान में कहा कि दान सार्वजनिक व सार्वदेशिक होना चाहिये । साथ ही हमारे देश में ऐसे स्थानों पर वेद विद्यालय खुलने चाहिये। उस समय उस महानुभाव से न परिचय था और मुलाकात भी न हो सकी।

छै मास पूर्व अचानक एक दिन पता चला कि वह २६ पक्के कमरों वाली धर्मशाला, मय २० एकड़ भूमि के उस वृद्ध महानुभाव ने धर्मार्थ-ट्रस्ट बना सार्वदेशिक सभा के द्वारा आर्यसमाज सम्मत विद्या विधान चालू करने के लिये दान करदी। यह सच्चा सात्विकदान है जो प्रभु की आन्तरिक प्रेरणा का ही फल कहा जा सकता है, बिन मांगे मोती मिला है।

तदनुसार २४,२५ जून को उसका प्रारम्भोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया जिसमें श्री ला० नन्दलाल जी आर्य। पूज्य पिता प० म० मो० वि० जी) श्री मती विमलादेवी (बहिन श्री प० म० मो० वि०) श्री राम ब्रह्मम्, श्री सिंगमपल्ली सुब्बाराव जी, श्री गोपालकृष्णय्या जी, श्री पी० कोटय्या जी, श्री अकय्या जी, श्री कन्नया जी, श्री पी० रंगनायकलु, श्री नागभूषणम् जी, श्री पिचय्याजी, श्री वेंकट सुब्बय्या जी, श्री प० लक्ष्मीनारायण जी, श्री सत्यपालजी, श्री वीरास्वामीरेड्डी, श्री अम्मय्या व श्री राघवय्या जी आदि महानुभावों ने बड़े उत्साह से भाग लिया। पालपर्से स्कूल के विद्यार्थियों ने बड़ी सहायता पहुँचाई। गंगवरम् के निवासियों ने इसको सफल बनाने में हर प्रकार से सहयोग दिया।

यहाँ पर आर्यसमाज की स्थापना भी की गई। आन्ध्रदेश के सुयोग्य विद्वान् श्री प० केशवार्य जी निवासी मुदनूर जि० कृष्णा को यहा पर उपाध्याय नियत किया गया। विद्यालय में अभी ७ बच्चे ही लिये गये हैं। इस सारे आयोजन, सगठन, प्रचार, व सफलता का श्रेय सभा के सुयोग्य प्रचारक प० मदनमोहनजी विद्यासागर को है। दोनों दिनों की सभा के अध्यक्ष श्री ला० नन्दलाल जी थे।

इसके बाद भीमावरम्, कम्मगुण्टा, पम्टीपाडू तथा प्रासगलपाडू नामक चार ग्रामों के वार्षिक उत्सव बड़ी सफलतापूर्वक मनाये गये। उसके बाद ३ जु० को इन्कोलू में समाजका प्रचार किया गया और यहाँ भी ४ जु० को समाज का सगठन किया गया। ८ जु० को तिम्मसमुद्रम् नामक ग्राम में भी ४ बच्चों का यज्ञोपवीत संस्कार व समाज का सगठन किया गया। यहाँ पर भी एक जायदाद है जो बहुत सम्भवत समाज के नाम पर लिख दी जाने वाली है। इस सारे प्रचार मे लगभग ४०० रुपया खर्च किया गया है। आर्यसमाज के प्रचार के लिये इतना व्यय उठाने के लिये सार्वदेशिक सभा उन दानियों का हार्दिक धन्यवाद करती है।

(३) पेदना में दयानन्द आश्रम का उद्घाटन

पेदना (कृष्णाजिला) एक सुसभ्य सुसपन्न जुलाहों की बस्ती है । इसमें श्री पीरय्यालिंगम् नामक भक्त ने ऋषि के नाम पर तीन हजार की लागत का एक पक्का दयानन्द आश्रम बनवाया है। यहाँ १६, १७ जु० को दो दिन प्रचार किया गया। श्री राजाराव जी के धनुर्विद्या के खेल हुए। समाज का सगठन किया गया। १२

मेम्बर बनाये गये। भविष्य में यह समाज के प्रचार का मुख्य केन्द्र बन सकेगा। इस प्रचार में श्री प० केसरी कुमार जी, श्री पं० राजारावजी, श्री ला० नन्दलाल जी, श्री मती विमला देवी जी ने उत्साह पूर्वक भाग लिया। श्री सिद्धान्ती जी, श्री कोटेश्वर रावजी आदि महानुभावों ने इसको सफल बनाने में पूर्ण सहायता दी। सभा के उत्साही प्रचारक पं० मदनमोहनजी विद्यासागर का गायत्री मन्त्र का उपदेश अत्यन्त सरस व हृदय ग्राही था, जिसने नवयुवकों को विशेष आकर्षित किया। ईश्वर की सत्ता व त्रैतवाद पर दिये गये व्याख्यान को सुन मसुलीपट्टम् कालेज के दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर ने कहा कि (Really it is a new approach to the old Philosophy) और मुसली पटम में प्रचार करने पर पूर्ण सहयोग का वचन दिया।

आर्यों के अन्तर्जातीय विवाह

मेरे एक मित्र की १६ वा १८ वर्षीय की कन्याओं के लिये जो क्रमशः मैट्रिक वा मिडिल में पढ़ती हैं स्वस्थ और रूपवती हैं योग्य वरों की आवश्यकता है। मेरे मित्र सी० पी० के एक हाई स्कूल में अध्यापक हैं। विवाह पूर्ण वैदिक रीति से अन्तर्जातीय करना चाहते हैं। पत्र व्यवहार निम्न पते पर किया जावे।

मास्टर कालका प्रसाद
गूजरपुरा, भोपाल।
C. B.

देहली में ब्रह्म परायण यज्ञ

श्री वैदिक धर्म प्रचारक मंडल खारी बावली की ओर से वैशाख शुक्ला पूर्णिमा (१६ जून) से चारों वेदों का बृहद् यज्ञ एक मास तक होता रहा। प्रात, सायं काल वेदों के मन्त्रों की सुन्दर व्याख्या होती रही। प० सुरेन्द्र शर्मा जी वेदतीर्थ प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, प० गंगाप्रसादजी शास्त्री, प० पूर्णचन्द्रजी शास्त्री, प० रामेश्वर जी शास्त्री, प० चन्द्रभानु जी सिद्धान्त भूषण आदि पण्डितों द्वारा यज्ञ सफलतापूर्वक समाप्त हुआ। आहुति के दिन ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा को लोग दूर से यज्ञ के दर्शनार्थ आये। यज्ञ मण्डप में यज्ञ-प्रेमियों तथा महिलाओं के समूह के समूह दृष्टि गोचर होते थे। प० व्यासदेव जी शास्त्री आदि के यज्ञ विषय पर सन्तोष प्रद भाषण हुए। यज्ञ शेष तथा पुस्तकें बाँटी गई। इस यज्ञ में एक हजार छब्बीस सज्जनों ने भोजन किया तथा अभ्यागतों को भी भोजन कराया गया। इस यज्ञ के संयोजक वर्ग में से माता सुन्दर बाई जी उप प्रधाना आर्य समाज देहली, प० रामनारायण जी शर्मा सिद्धान्त रत्न श्रीमती यशोदादेवीजी मुख्यतया उल्लेखनीय हैं। इस यज्ञ में लगभग १४ सौ रुपया व्यय हुआ।

प्रचार मंत्री—
श्री वैदिक धर्म प्रचारक महा मंडल देहली।

महिला-जगत्

वीरांगना !!

[रचयिता श्री फणीन्द्र जी दमोह]

सूर्य वंश की "किरण" राशि थी, पृथ्वि प्रिया मेवाड़ लली।
'शक्ति" शिशोदी महाशक्ति वह, खिली कली गिरि अरावली॥
मुगलवंश सम्राट कलंकित, अकबर का मीना बाजार।
छल-प्रपंच व्यभिचार जहाँ पर, घृणित पाप का था व्यापार॥

मीना के उस महाजाल में, पड़ी सिंहनी क्षत्राणी।
सत्य तेज की अग्नि लपट से खेल रहा था अभिमानी॥
छली गयी जब रंग महल में, सोचा अब क्या होगा आज।
मुगलराज की लपटता पर, रहे हमारी कैसे—लाज॥

कुछ झिझकी, कुछ सिहरी फिर तब, निकली नयनों से ज्वाला।
माथे पर दो बल सम्हाल कर खड़ी हुई क्षत्रिय—बाला॥
देखा सम्मुख मदान्ध अकबर, दुष्ट क्रूर कामी सुलतान।
तृषित नेत्र से कक्ष द्वार पर, देख रहा सौंदर्य महान॥

युगल करों को फैला कर तब, हुआ अग्रसर मतवाला।
सत पतिव्रत के अतुल तेज पर भभक उठी भीषण ज्वाला॥
चपला चपला चपल चाल से विद्युत् दामिनी दमक उठी।
रौद्र रूप से अनल सुन्दरी, अग्नि शिखा पर तड़फ उठी॥

दो पग पीछे हटी सती फिर किया हृदय पर चरण प्रहार।
चरण कमल था वज्र चरण थे, दुष्ट दलन दानव संहार॥
गिरा भूमि पर पतित कलंकी, किरण दामिनी थी उर पर।
विश्व विजयिनी सिंह वाहिनी, दुर्गा काली दानव पर॥

रक्त वर्ण थे नेत्र कमल द्वय, रोष युक्त भ्रू धनुषाकार।
बिम्बाधर रद पंक्ति मध्य में, श्रम सीकर मस्तक श्रृंगार॥
कटि प्रदेश में साड़ी अचल, लहराये कच घुंघराले।
छाती पर वे टिके हुए थे, चरण कमल नूपुर वाले॥

छुपी कटारी कंचुकि अंचल, कर मृणाल वह चमक उठी।
गंभीर नाद सुकुमार कंठ से, गरजी कर बाकी भ्रकुटी॥
ओ! यवनराज!! हो सावधान!!! उर पर है क्षत्राणी बाल।
ले सम्हल, कर ईश प्रार्थना, आज समझ निज अन्तिम काल॥

महामृत्यु की भीषण ज्वाला, आदि शक्ति की शक्ति प्रखर।
"सूर्य" ' किरण" के तप्त तेज को, लख कर काँपा वह थर थर॥
मृत्यु चिन्ह की प्रलय सेज पर, पड़ा हुआ था वह अविचल।
करुण कण्ठ अरु कम्पित स्वर से, बोल उठा सम्राट प्रबल॥

माँ। ओ माँ॥ अब प्राण दान दे, महाशक्ति भारत प्रतिमा।
भिक्षा माँग रहा है अकबर निज सुत को कर आज क्षमा॥
प्रलयकर यह रूप तप्त तज, स्नेहमयी माता जननी।
चरणों में कर जोड़ विनय है, क्षमा देवि भारत रमणी॥

प्राणदान ? अकबर महान क्या, मुगलवंश का त्राता है ?
आश्चर्य। क्या तूही विजयी भारत भाग्य विधाता है ?
जीवन-भिक्षा माँग रहा है, अबला स तू ओ कायर।
इतना मोह अरे प्राणों का, इतनी ममता इस जग पर॥

अच्छा, जा मैं तुझे छोड़ती, "माँ" का मुझको मान दिया।
क्षमा, दया के करुण रुदन पर, प्राणों का वरदान दिया॥
अब न छेड़ना किसी सती को, हम क्षत्राणी बाला हैं।
भारत मा की हम ललना हैं, सत्य तेज की ज्वाला हैं॥

निज मर्यादा घातक हित हम, क्रूर कराली हैं असिधार।
सत पति व्रत की तीक्ष्ण शक्ति से, दुष्ट दनुज करती संहार॥
किन्तु आज से बन्द करादे, मीना का यह भीषण पाप।
तेरी विमल कीर्ति का घातक, तेरे जीवन का यह शाप॥

सामाजिक जगत्

विहार आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार का वार्षिक अधिवेशन ता० २५-७-४३ दिन रविवार को प्रातः काल ६॥ बजे से मुनीश्वरानन्द भवन में आरम्भ हुआ। सबसे पहले आगत प्रतिनिधियों ने सम्मिलित बृहद् यज्ञ तथा सन्ध्योपासना श्री स्वामी भजनानन्द जी की अध्यक्षता मे की। तत्पश्चात् श्री प० अयोध्या प्रसाद जी वैदिक रिसर्च स्कौलर का वेदोपदेश हुआ। राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री ने ध्वजोत्तोलन करते हुए बड़ा ही हृदय ग्राही तथा ओजपूर्ण भाषण दिया आगत प्रतिनिधियों का जलपान होने के अनन्तर साधारण सभा की प्रथम बैठक श्रीमान् राय बहादुर ब्रजनन्दन सिंह जी प्रधान की अध्यक्षता मे प्रारम्भ हुई। इस बर्ष प्रान्त के ६० आर्यसमाजों ने कुल १२५ प्रतिनिधियों के नाम भेजे भूत पूर्व प्रधान गण और आजीवन तथा मनोनीत सदस्यों को सम्मिलित कर १५० सदस्यों की सभा के निर्माण की घोषणा प्रधान मन्त्री द्वारा की गई

(पृष्ठ २७४ का शेष)

तेरी आज्ञा शिरोधार्य मा।, अब न रहेगा यह बाजार।
मीना का बस अन्त आज है, और न होगा पापाचार॥
समझा माँ! यदि कोमलता में, मानस हस कुमारी हो।
तो गौरव की समर भूमि मे, भारत राज दुलारी हो॥

वीर सुता हो वीरागना हो, वीरों की हो शक्ति अजय।
पद पकज पर है प्रणाम माँ, जय माता जै शक्ती जय॥
जिन आँखों मे रक्त रँगा था, उनमें थी अब दया क्षमा।
सत रक्षा हित जो कठोर थी, वही शील की थी प्रतिमा॥

क्षत्रियों का यह गौरव बहिनों लज्जा हित जीवन बलिदान।
प्राण रहें न रहें क्या चिन्ता, बस रहे मर्यादा—मान॥

जिनमें १०६ प्रतिनिधि उपस्थित थे। तत्पश्चात् गत वार्षिक साधारण सभा का वार्षिक विवरण पढ़ा गया और सर्व सम्मति से सम्पुष्ट किया गया। आय व्यय का निरीक्षित हिसाब उपस्थित किया गया जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। फिर नये वर्ष के लिये अन्तरंग अधिकारी और सदस्यों का निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ।

प्रधान—श्री रायबहादुर ब्रजनन्दनसिंह जी रिटायर्ड एक्साइज कमिश्नर बिहार।

उपप्रधान—१ श्रीमान् प० अयोध्याप्रसादजी वैदिकमिश्नरी।

२. श्रीमान् बाबू महादेवनारायणजी ऐडवोकेट फ्रेजर रोड, पटना।

३ श्रीमान् बाबू दीना नाथ जी गोपाल गंज, सारन।

प्रधान मंत्री—श्रीमान् पं० वासुदेव शर्मा जी, पटना सिटी।

मंत्री—१. श्रीमान् प० सिद्धेश्वर प्रसाद शर्मा, मोकामा पटना।

२ श्रीमान् प० बद्री नारायण शर्मा, B A मुंगेर।

३ श्रीमान् बाबू गोपाल कृष्ण जी, बाँकीपुर पटना।

कोषाध्यक्ष—श्रीमान् बाबू सेनोहर प्रसाद जी जायसवाल श्यामलाल जी मिश्र पटना।

लेखा निरीक्षक—श्रीमान् बाबू गुरुप्रसाद जी M A सोहसराय।

पुस्तकाध्यक्ष—श्रीमान् बाबू राम चन्द्र जी जायसवाल छपरा।

इसके अतिरिक्त अन्तरंग सभा की सम्मति के अनुसार अपने अधिकार से प्रधान जी ने ३० में से २० अन्तरग सदस्यों को चुना। बाद में श्री पं० वासुदेवशर्मा जी ने भोजन खर्च आदि के लिये सभा की ओर से प्रतिनिधियों से अपील की फलत: (१५०) पन्द्रहसौ रुपये प्राप्त हुए। तत्पश्चात् प्रतिनिधियों को प्रीतिभोज दिया गया और अपराह्न काल मे प्रस्ताव तथा बजट स्वीकृत करके शान्ति पाठ द्वारा सभा विसर्जित की गई।

प्रधान मंत्री,
आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार

सत्याग्रह स्मारक दिवस तथा वेद प्रचार सप्ताह

जैसे कि सब आर्य समाजों को विज्ञप्तियों द्वारा सूचना भेजी गई है श्रावण शुक्ला पूर्णिमा (१५ अगस्त) को श्रावणी उपाकर्म के साथ सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस को उत्साह पूर्वक मनाया जाए और देश देशान्तर प्रचारार्थ अपील करके धन सार्वदेशिक सभा कार्यालय में भेज दिया जाए। श्रावणी से १ सप्ताह तक वेद प्रचारार्थ विशेष कार्य क्रम बनाकर तदनुसार कार्य किया जाए।

मन्त्री सार्वदेशिक आ० प्र० सभा, देहली।

जन्म मूलक जात-पात की अरथी निकाल दो

(लेखक श्री अश्विनी कुमार जी आर्य, नवा शहर दोआबा)

आर्य पुरुषो ! आज चारों ओर से यह आवाज आ रही है, कि "आर्य समाज शिथिल हो गया है और उन्नति की बजाय अवनति को प्राप्त हो रहा है। अगर इसका सुधार न किया गया तो इसकी जीवन-ज्योति समाप्त होने में कोई संशय नहीं।

आर्य समाज के चलाये हुए शुद्धि और दलितोद्धार आन्दोलन ना काम सिद्ध हो रहे हैं। प्राय ६० प्रतिशत मुसलमान और ईसाई शुद्ध होकर कुछ दिन हमारे साथ रहकर वापस अपने मजहब में लौट जाते हैं क्योंकि हिन्दू लोग उनसे घृणा करते हैं और उनको नीच समझते हैं। आर्य समाजियों की स्त्रियाँ उनको अपने चौकों में बिठला कर भोजन करवाने से कतराती हैं। आर्य समाजी उनकी लड़कियाँ तो ले लेते हैं लेकिन अपनी लड़कियाँ उन्हें नहीं देते। आर्यों ने उनकी लड़कियाँ तो ले ली हैं लेकिन उनके लड़कों को किसी उच्च कुल के आर्य ने अपनी लड़की नहीं दी। यही हाल शुद्ध की हुई दलित जातियों का है। इससे ज्ञात होता है कि आर्यसमाजी अभी तक जन्म की ऊँच नीच से छुटकारा नहीं पा सके। यह आर्य समाज की सबसे बड़ी दुर्बलता है जो कि दूसरे लोगों के लिये आर्य समाज का द्वार बन्द कर देती है। दलित जातियों के साथ हमारा व्यवहार अच्छा नहीं है इसीलिये वह आर्य समाज से विमुख होकर मुसलमान और ईसाई होती जा रही हैं इस समय आर्य समाज में उनके लिये कोई स्थान नहीं है। अगर ऐसा ही हाल रहा तो आर्य समाज का खातमा करीब है।"

इन सब बीमारियों का एक ही कारण जन्म मूलक जात-पात है। इसी डाइन ने हमारे अन्दर ऊँच-नीच के भाव पैदा किये हैं। यह ना मुराद बीमारी आर्यों को कर्म, गुणकर्म, स्वभावानुकूल विवाह आदि नहीं करने देती। प्राय आर्य समाजी अपनी जन्म मूलक जाति में ही विवाहादि करते हैं और अपने नाम के साथ लाला, पंडित, चौधरी, अग्रवाल, अरोड़ा भल्ला, चावला, नारंग, गाजरा और चोपड़ा आदि जन्म मूलक नाम लगाते हैं। यह ऋषि दयानन्द की वर्ण व्यवस्था के सर्वथा विपरीत है। आर्य लोगों को गुण, कर्म, स्वभावानुसार किसी भी आर्य के साथ विवाहादि सम्बन्ध कर लेने चाहियें। जन्म से भले ही वह, भंगी चमार हो। जब तक आर्य समाज जन्म मूलक जात-पात को जड़ से न उखाड़ेगा तबतक ऋषि दयानन्द का मिशन 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' पूरा नहीं हो सकता। जन्म मूलक जात-पात एक ऐसी बीमारी है जो किसी भी सोसायटी में संगठन नहीं होने देती। इसलिये इसे त्याग देना ही उचित है। अगर अब भी इसका पीछा न

छोड़ा तो यह डायन हमे खा जावेगी।

आज कल बहुत से लोग आर्य समाज से विमुख हो रहे हैं। अनेक आर्यों की भी इसमे श्रद्धा नहीं रही। अनेक आर्य नेता और उपदेशक अपने बच्चों का न धार्मिक शिक्षा देते हैं और न ही गुरुकुलों में पढ़ाते हैं इसलिये उनके घर से आर्य समाज उनके आँख मूंदते ही समाप्त हो जावेगा। जबतक सब आर्य उपदेशक और नेता शुद्ध पवित्र ख्याल के न होंगे तबतक लोगों पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। हरएक उपदेशक का यह कर्तव्य होना चाहिये कि वह लोगों को समझाये कि आर्य समाज जन्म से किसी को ब्राह्मण क्षत्रिय आदि नहीं मानता बल्कि हर एक मनुष्य गुण, कर्म, स्वभाव से ब्राह्मण, क्षत्रियबन सकता है जन्म से चाहे वह भंगी चमार ही हो। अगर इस तरह शुद्ध तरीके से प्रचार किया जावे तो आज सारा भारतवर्ष आर्य बन सकता है।

ऐ आर्य समाजियो, उठो, बहुत सो चुके अब तो इस गाढ़ निद्रा को त्यागो। अगर अब भी न उठे तो तुम सदा के लिये सो जाओगे।

इस समय सब मनुष्यों की आँखें आपकी ओर लगी हुई हैं। अगर अब भी आपने किसी क्रियात्मक प्रोग्राम को न अपनाया तो लोग ऋषिवर दयानन्द और आर्य समाज को छोड़ देंगे।

अगर दुनिया में जीवित रहना चाहते हो और ऋषि का मिशन 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' पूरा करना चाहते हो तो जन्म मूलक जात-पात का सत्यानाश करके ६ करोड़ दलितों को अपने में मिला लो। ये जो जो अधिकार माँगते हैं सब दे दो। अगर ये मुसलमान या ईसाई हो गये तो फिर आपको पछताना पड़ेगा। मुसलमान और ईसाई इनके स्वागत के लिये हाथ फैलाये खड़े हैं। इस समय जो भी इनको अपने में मिला लेगा वही शक्ति शाली बन जावेगा।

यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि जब तक जन्म मूलक जात पात कायम है तब तक ये हमारे साथ मिल नहीं सकते इसलिये जन्म मूलक जात पात को जड़ से उखाड़ना ही हमारा मुख्यो द्देश्य होना चाहिये।

आर्य बन्धुओ। क्या आपका हाज़मा कमजोर हो गया है? आपने तो कोल और द्राविड़ आदि सभी जातियों को हजम कर लिया था अब अगर इन्हें भी अपने में मिला लो तो दुनिया की कोई भी शक्ति आपका बाल बाँका नहीं कर सकती। इसलिये जितनी जल्दी हो सके जन्म मूलक जात-पात को जड़ से उखाड़ने के लिये कोई क्रियात्मक प्रोग्राम बनाओ।

अन्त मे मैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और दूसरी प्रतिनिधि सभाओं से प्रार्थना करता हूँ कि वे सब आर्य समाजों के नाम यह Circular भेज देवें कि जिस जगह की आर्य-समाज का वार्षिकोत्सव हो वहाँ पर जन्म मूलक जात-पात तोड़क कान्फ्रेन्स की जावे और लोगों को वैदिक वर्ण व्यवस्था का वास्तविक स्वरूप बतलाया जावे। सब आर्यों को गुण कर्म स्वभावा नुसार विवाहादि करने के लिये बाधित किया जावे और कोई भी आर्य अपने नाम के साथ कोई भी जन्म मूलक नाम लाला, चौधरी भल्ला, अग्रवाल, चोपड़ा, चावला, आदि न लगावे।

महापुरुषों की दिव्यवाणी

श्रीकृष्ण वचनामृत

(२३-८-४३ को श्री कृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य मे सगृहीत)

(१) आत्मा की अमरता—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
न चैनंक्लेदयन्त्यापो,न शोषयति मारुत ।।गीता२।२३

इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, अग्नि जला नहीं सकती, जल भिगो नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती ।।

देही नित्यमवध्योऽय, देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि, न त्वं शोचितुमर्हसि ।।
(गीता २।३०)

सब प्राणियों के शरीर में आत्मा नित्य और अमर है इसलिये किसी भी प्राणी के (शरीर नाश होने पर) शोक करना तुम्हें उचित नहीं ।।

(२) कर्म योग—

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्म फल हेतुर्भू , मातेसङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।।
(गीता २।४७)

योगस्थः कुरुकर्माणि, सङ्ग त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्धयसिद्धयोः समोभूत्वा, समत्व योग उच्यते ।।
(गीता २।४८)

तुम्हारा कर्म करने का ही अधिकार है फल में नहीं। कर्म फल की इच्छा से कर्म न करो और न कर्म का परित्याग करके निष्कर्म हो जाओ । आसक्ति को छोड़कर योगस्थ रूप से कम करो। कार्य में सफलता हो या असफलता दोनों अवस्थाओं मे समान रहो। यह समता अथवा चित्त में विक्षोभ न होना ही सच्चा योग है ।।

(पृष्ठ २७८ का शेष)

मै परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह हम आर्यों को जन्म मूलक जात पात तोड़ने के लिये सुमति और शक्ति प्रदान करे । आशा है कि आर्य जन मेरे इस लेखानुसार आचरण करने की कोशिश करेगे। ओम् शम्

[श्री अश्विनी कुमार जी के लेख में कहीं कहीं थोड़ी अत्युक्ति से काम लिया गया प्रतीत होता है पर वह केवल जाति भेद की अत्यन्त हानि कारक प्रथा के विरुद्ध प्रबल भावना के ही कारण है । उनके इस लेख मे प्रकाशित मुख्य भाव वस्तुतः अत्युत्तम है कि आर्यों को जाति भेद का समूल नाश क्रियात्मक रूप से कर देना चाहिये जैसे कि हम भी सम्पादकीय तथा अन्य स्तम्भों में बार बार प्रकट करते रहे हैं। यदि आर्य समाज सामूहिक रूप से इस विषयक क्रियात्मक कार्य करके दिखावे तो पृथक् जात-पात तोड़क मण्डल वा सम्मेलनों की आवश्यकता ही न रहे। —सम्पादक]

(३) स्थित प्रज्ञ मुनि—

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः , सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीत राग भयक्रोधः, स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥
गीता २।५६

दुःखों में जिसका मन व्याकुल नहीं होता और सुख में जिस की चाह नहीं, जो राग (आसक्ति) भय और क्रोध से रहित है उसे ही स्थिर बुद्धि वाला मुनि कहा जाता है ॥

(४) शान्ति की प्राप्तिः—

रागद्वेष वियुक्तैस्तु, विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा, प्रसादमधिगच्छति ॥
(गीता २।६४)

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमाश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥
(गीता २।७१)

राग द्वेष से रहित और अपने अधीन इन्द्रियों से जो पदार्थों का उचित उपभोग करता है वह जितेन्द्रिय पुरुष ही शान्ति को प्राप्त करता है।

जो सब कामनाओं, ममता और अहंकार आदि का परित्याग कर के कार्य करता है वह शान्ति को प्राप्त होता है ॥

(५) अनासक्तिः—

तस्मादसक्तः सततं, कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥
(गीता ३।१९)

कर्मणैव हि संसिद्धिम्, आस्थिता जनकादयः ।
लोक संग्रहमेवापि, सपश्यन् कर्तुमर्हसि ॥
(गीता ३।२०)

इसलिये तू आसक्ति रहित होकर करने योग्य कार्यों को कर । आसक्ति रहित होकर जो कार्य करता है वह परमात्मा को प्राप्त करता है। जनक इत्यादि ने कर्म के द्वारा ही सिद्धि प्राप्त की थी इसलिये तू भी लोक संग्रह अर्थात् लोक कल्याण के भाव को मन में धारण करके कर्म किया कर ॥

(६) समताबुद्धिः—

विद्या विनय सम्पन्ने, ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनिचैव श्वपाके च, पण्डिताः समदर्शिनः ॥
(गीता ५।१८)

इहैव तैर्जितः सर्गो, येषा साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म, तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥
(गीता ५।१९)

पण्डित (ज्ञानी लोग) विद्या और विनय से युक्त ब्राह्मण, गौ, हाथी, कुत्ते और चण्डाल सब में समान भाव से प्रेम रखते हैं । जिनका मन इस प्रकार के समता भाव में स्थित है उन्होंने इसी जन्म में लोक को जीत लिया है । क्योंकि ब्रह्म सर्वथा दोष रहित और सबको सम भाव से देखने वाला है इसलिये ऐसे समदर्शी ही ब्रह्म में स्थित होते हैं ॥

(७) नियमित जीवन—

युक्ताहारविहारस्य, युक्त चेष्टस्य कर्मसु ।
युक्त स्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा ॥
(गीता ६।१७)

योग जो सब दुःखों को दूर करने वाला है उसी को प्राप्त होता है जिसका भोजन, भ्रमण, कर्म चेष्टा, सोना, जागना सब नियमित होता है ॥

योगिराज श्रीकृष्ण के विषय में ऋषि दयानन्द

सत्यार्थ प्रकाश के ११ वें समुल्लास में ऋषि दयानन्द ने भागवत पुराण समालोचना प्रकरण में (वैदिक यन्त्रालय मुद्रित आवृत्ति २४ पृ० २१५) निम्न वाक्य लिखे हैं जो उनके योगिराज श्री कृष्ण के प्रति मान के स्पष्ट द्योतक हैं —

"देखो। श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उसका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मन माने दोष लगाये हैं। दूध दही मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, पर स्त्रियों से रास मण्डल, क्रीड़ा आदि मिथ्या-दोष श्रीकृष्ण जी में लगाये हैं। इनको पढ़ पढ़ा सुन सुना के अन्य मतवाले श्री कृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती?"

(पृष्ठ २८० का शेष)

(८) नरक के ३ द्वार

त्रिविध नरकस्येद, द्वार नाशनमात्मन ।
काम क्रोधस्तथा लोभ, तस्मादेतत् त्रय त्यजेत् ॥
(गीता १६।२१)

काम (बुरी साँसारिक वासना तथा व्यभिचारादि) क्रोध और लोभ यह आत्मा का नाश करने वाला नरक (दुःखमय अवस्था) का तीन प्रकार का द्वार है इसलिये इन तीनों का परित्याग करना चाहिये ॥

(९) सात्त्विक कर्म तथा कर्ता—

नियत सङ्गरहितम्, अराग द्वेषत कृतम् ।
अफलप्रेप्सुना कर्म, यत् तत् सात्त्विकमुच्यते ॥
(गीता १८।२३)

मुक्त सङ्गोऽनहवादी धृत्युत्साह समन्वित ।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः, कर्ता सात्त्विक उच्यते॥
(गीता १८।२६)

सात्त्विक कार्य वह कहलाता है जो वेदादि शास्त्र विहित हो, आसक्ति रहित हो, राग और द्वेष से रहित होकर किया जाए और फल की इच्छा से रहित व्यक्ति द्वारा कर्तव्य समझ कर किया जाए।

सात्त्विक कर्ता वह कहलाता है जो आसक्ति रहित हो, जिसमें अहङ्कार न हो, धैर्य और उत्साह से युक्त हो तथा सफलता असफलता दोनों अवस्थाओं में जो विकार रहित हो ॥

(१०) ईश्वर की कर्म द्वारा पूजा—

यत प्रवृत्तिर्भूताना येन सर्वमिद ततम् ।
स्व कर्मणा तमभ्यर्च्य, सिद्धिं विन्दति मानव. ॥
(गीता १८।४६)

जिस परमेश्वर ने इस सारे जगत् को बनाया है और जिस की शक्ति से ही सब पृथिवी आदि भूतों की प्रवृत्ति होती है उस परमेश्वर की अपने उत्तम कर्म द्वारा पूजा करके ही मनुष्य मुक्ति को प्राप्त कर सकता है ॥

[ऋषि दयानन्द के उक्त कथन की सत्यता जानने के लिये दो ईसाई प्रचारकों के ग्रन्थों में से निम्न उद्धरण देने पर्याप्त हैं विशप कोल्डवेल (Bishop Caldwell) ने लिखा है :— "The stories related of Kishna s life do more than any thing else to destroy tha morals and corrupt the imagination of Hindu youths"

("The Religious and moral Teaching of the Bhagawad Gita Fxamined" P. 12)

अर्थात् श्रीकृष्ण के जीवन के विषय में जो कथाए (पुराणों में) कथाई जाती हैं उनका हिन्दू युवकों के चरित्र का नाश करने और उनकी कल्पनाओं को भ्रष्ट करने में सबसे बड़ा भाग है।

रेवरेण्ड मर्रे मिचल एम० ए० (Rev. V murray mitchell M A L L. D ने Letters to Indian youths अथवा 'भारतीय युवकों के नाम पत्र' में एक स्थान पर लिखा है :—

"The histories of Brahma, Indra, Krishna, and other Gods ESPECIALLY AS-GIVEN IN THE PURANAS are disgusting TO A PURE AND HONOURABLE MIND. I dare not pollute my page with the recital of their flagitious deeds. Were such things, as are ascribed to the Gods, to be committed by humanbeings, every one of us would be struck with horror

(P. 166)

अर्थात ब्रह्मा, इन्द्र, कृष्ण इत्यादि देवों के जो इतिहास विशेषतः पुराणों में वर्णित हैं वे किसी भी शुद्ध पवित्र मन के व्यक्ति के लिये घृणाजनक हैं। मैं उनके निन्दनीय कार्यों के वर्णन से अपने पृष्ठों को कलङ्कित करने का साहस नहीं कर सकता। यदि ऐसे काम जो इन देवों के द्वारा किये गये माने जाते हैं मनुष्यों ने किये होते तो हम में से प्रत्येक भय और लज्जा के मारे स्तब्ध हुए बिना न रहता॥ इत्यादि

महाभारत में श्रीकृष्ण के गुणों का समह श्री भीष्म पितामह द्वारा निम्न सुन्दर श्लोकों में अर्घ्य पूजा का प्रस्ताव रखते हुए कर दिया गया है जो श्री कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर विशेष रूप से स्मरणीय है —

पूज्यतायां च गोविन्दे, हेतू द्वावपि संस्थितौ ॥१८॥
वेद वेदाङ्ग विज्ञान, बल चाप्यधिक तथा।
नृणां लोकेहि कोऽन्योऽस्ति, विशिष्ट केशवादृते ॥१९
दान दाक्ष्य श्रुतं शौर्यं, ह्री कीर्तिर्बुद्धिरुत्तमा।
संनतिः श्रीर्धृतिस्तुष्टिः, पुष्टिश्च नियताच्युते ॥२०॥
सभापर्व अ० ३८

अर्थात् श्रीकृष्ण के पूजनीय होने में दोनों कारण विद्यमान हैं एक तो इनका वेद और वेदाङ्गों का पूर्ण ज्ञाता होना और दूसरा सब से अधिक बल शाली होना। श्रीकृष्ण से अधिक गुणवान् इस मनुष्य लोक में और कौन है? दान, कार्य, चतुरता, शास्त्रज्ञता, शूर वीरता, उचित लज्जा, कीर्ति, उत्तम बुद्धि, नम्रता, शोभा तथा ऐश्वर्य, धैर्य, प्रसन्नता, शक्ति ये सब गुण श्रीकृष्ण में कूट कूट भरे हुए हैं।

दान सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

जुलाई १६४३

आर्य समाज स्थापना दिवस वेद प्रचार निधि

संयुक्त प्रान्त

२) आर्य समाज (पुरवा) उन्नाव

पंजाब

२०) आर्य समाज हनुमान रोड, नई देहली
५) " ग्वालमण्डी लाहौर
११) " डेरा गाजीखां
५) " झंग
१२॥) " रावलपिण्डी

राजस्थान

५) " नगर अजमेर
१०) " देवास जूनियर
५) " मुलताई (सी० पी०)

सिंध

१०) " सक्खर

हैदराबाद राज्य

१००) आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद स्टेट

बिहार

२) आर्य समाज (पटना)

१७७॥)
७१७॥।≈) पिछला योग
८६४॥।≈)

दान सूची सार्वदेशिक सभा

जुलाई १६४३

५) श्री गंगाप्रसाद जी द्वारा श्री केशोराम मुहम्मदपुर देवमल (बिजनौर)
१०) ज्ञानचन्द्र जी हैड क्लर्क करांची
१५)

दानी महानुभावों और आर्य समाजों को सभा की ओर से धन्यवाद। जिन आर्य समाजों ने अभी तक वेद प्रचार निध्यर्थ रु० भेज कर अपने कर्तव्य और सभा के आदेश का पालन नहीं किया उन्हें भी तुरन्त अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिये।

(पृष्ठ २८२ का शेष)

प्रत्येक आर्य को श्री कृष्ण महाराज के इन उत्तम गुणों का स्मरण करते हुए उन्हें यथा शक्ति अपने में धारण करने का यत्न करना चाहिये और पुराणोक्त रास लीलादि की कथाओं को सर्वथा धूर्त कल्पित तथा अमान्य समझना चाहिये। —सम्पादक]

सत्यार्थ प्रकाश जयन्ती मनाइये।

तिथि १६ से २५ भाद्रपद : ४ से १० सितम्बर तक

ऋषि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय और प्रचार की ओर आर्य जनता का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करने के लिये सभा सब आर्य-समाजों को यह आदेश देती है कि वे प्रति वर्ष भाद्र पद मास के शुक्ल पक्ष में (जब कि महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश का निर्माण प्रारम्भ किया था) कम से कम १ सप्ताह तक सत्यार्थ प्रकाश जयन्ती प्रत्येक नगर और ग्राम में मनाएं जिस में सत्यार्थ प्रकाश की कथा योग्य विद्वानों द्वारा कराई जाए, सत्यार्थ प्रकाश के महत्व पर उत्तम-उत्तम व्याख्यान कराए जाएँ और सब आर्य नर नारी सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय और रक्षा का व्रत लेने के अतिरिक्त इसके सिन्ध तथा अन्य प्रान्तों में अधिक से अधिक प्रचार और तदर्थ सहायता का दृढ़ निश्चय करें। इस वर्ष यह जयन्ती १६ से २५ भाद्र पद तदनुसार ४ से १० सितम्बर तक सर्वत्र उत्साह से मनाई जाए।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली।

Vedic Varna Vyavastha and Modern Socialism.

PART I—VEDIC VARNA VYAVASTHA

(By Shri Pt Ganga Prasad ji M A Retd Cheif Justice President Sarvadeshik Sabha)

Continued from the June issue

10 Paucity of great men —

What has been stated above also explains why the number of great men born in India among the lower castes is so small Mr Smiles in his "Self Help" has given long lists of celebrated men in Britain who were born among the following classes viz barbers, day labourers, brick layers, weavers, shoemakers, tailors, butchers If this is not the case in India, the chief reason is that under a system of hereditary castes, only men of the higher castes are given opportunities of intellectual culture and progress What can be more unjust than that a man should be prevented from developing those powers which God has given him ? And what institution can be more pernicious and unnatural than one which denies such opportunities to millions of people ?

11 Caste equally injurious to Brahmans

The caste system has been as injurious to the Brahman caste as to the Shudras As Mr R C Datt remarks, 'Monopoly is injurious to those who hold it as well as to those who are excluded from it And monopoly of learning is the worst sort of monopoly which mankind has ever known

12 Disruption of Hindu nation

The most serious evil caused by this unnatural system is that it has split up the Hindu nation into countless sub divisions by prohibiting marriage and social intercourse among them The Census Reports show that there are now about 4,000 castes and sub castes among Hindus An ordinary Hindu feels little concern with any except his own caste men His interests and sympathies and even his patriotism and benevolence are generally confined within the narrow circle of his own caste How can there be a feeling of true national unity where such narrowminded caste prejudices exist ? Mr R C Dutt has truly observed —

"The caste system in India has much to answer for, but its worst and most lamentable result is this permanent breach and disunion

where there should have been fusion and union, this weakness and death where there should have been national strength and life (Civili sation in Ancient India I p 684)

13 Need of inter caste marriages Arya Marriage Act

I think that enough has been stated to show that system of here ditary castes has been chiefly responsible for the present degraded state of Hinduism Mahatma Gandhi speaking of untouchability has more than once stated that if it lives Hinduism will die Untoucha bility is intimately connected with and is based on the hereditary caste system It will therefore be no exaggeration to say that if it conti nues Hinduism is doomed It is a blot on the Hindu religion and a disgrace to our nationality The Arya Samaj has been strenuously fighting against it for the last 50 or 60 years, but it still maintains its grip on the Hindu mind It is true that there is no longer much objec tion against interdining between different castes But the crux of the problem lies in intermarriage, and few men have the courage to marry outside their own castes which have become like marriage guilds One great difficulty in inter caste marriages was the legal position of the persons who under went such marriages and their progeny It has been removed by the Indian Legislature in 1936 The Act recognises not only intercaste marriages but also Shuddhi marriages as valid and not merely registered members of the Arya Samaj but all who profess to be Arya Samajists at the time of the marriage can have recourse to it It is up to all members and symap thisers of the Arya Samaj to solem nise and encourage such marriages to the best of their power

14 Vedic system of Varnas

I have so far described the evils arising from the present caste system I shall now proceed to show that it is not sanctioned by the Vedas and Shastras and that the Vedic system of Varnas was quite different

15 Veda mantra supporting it and mistranslated by Sanatanists

The only verse of the Veda which our Sanatanist brethern cite in support of the hereditary Caste system and which in fact propounds the Vedic varna vyavastha is as follows —

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य कृत ।
ऊरू तदस्य यद् वैश्य पद्भ्या शूद्रो अजायत ॥
ऋ० १० । ९० । ११

It has been translated thus by the orthodox commentators

"The Brahman was produced out of the mouth of Brahma (or God), the kshattriya from his arms the vaishya from his belly, and the Shudra from his feet

16 **Its correct meaning —**

This translation is however quite incorrect as a man with even a little knowledge of Sanskrit will perceive The correct and literal translation is as follows —

"The Brahman is or was his head, the Kshattriya has been made his arms, the Vaishya is what is his belly, and the Shudra has been made as his feet'

17 **Its context**

In order to make it further clear that this is the correct meaning of the verse and to show its true import it will be advisable to give its context The mantra occurs in the Purusha Sukta which finds place in the Rigveda, and also in the Yajur and the Atharvaveda This Sukta describes the creation or the world in the form of Purusha or Virat Mankind is also described as having been created in the form of a person or Purusha The question naturally arises as to what are its various parts if mankind is spoken of as a person and the question has been actually asked in the preceding verse

ओ यत्पुरुष व्यदधु कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुख किमस्यासीत् किंबाहू किमूरू पादा उच्येते ॥

"The Purusha has been mentioned and supposed to have several parts What was his head, what his arms, and what are said to be his belly and feet In this question it has not been asked who were produced from his several parts The mantra (Rv 10 11) under discussion is a reply to this question viz "The Brahman was his head, the Kshattriya was made his arms the Vaishya is what is his belly, and the Shudra has been made his feet"

This Mantra does not give the least countenance to the theory that the several varnas were created in different ways and cannot be said to support in any way the present system of hereditary castes.

18 **Its exposition**

The mantra quoted above signifies that the Brahman, Kshattriya, Vaishyas and Shudra perform the same functions in the body politic as the head, arms, belly, and feet perform in the body of a man In the human body the brain which is the organ of thought, and senses of perception are located in the

head The Brahmans or men of learning, (Brahma means God, and also knowledge) among whom would be included teachers, religious preachers, scientific researchers, medical men, legislators, judges, lawyers engineers, artists etc, can properly be described as the brain or head of society The Kshattriyas or men of strength who protect society (क्षत्रिय) for the word means those who protect from danger क्षतात् त्रायते इति क्षत्रिय) ,— comprising soldiers or military men, police, magistrates, and all executive officers, are aptly described as the arms of society The Vaishya is derived from the root vish to enter and is allied to Vish or Vit which is frequently used in the Vedas for the subjects, or (e g विशस्पति) "the King the protector of his subjects) It means primarily the society in general, and secondarily the society, excepting only men of learning, military and executive men and the unskilled labourers The Vaishyas or men of wealth would thus include agriculturists, farmers, money lenders, bankers, traders and merchants of all kinds, factory owners, managers of transport and communications, etc and all mechanics, artisans and skilled labourers They are therefore compared to the belly of men or properly speaking the middle or trunk of the human body, leaving only the head, the arms, and the feet This middle portion contains not only the stomach, intestines, liver, or the digestive organ but also the lungs or the respiratory organs, the heart or the circulatory system, the kidneys, and organs of exertion, and genital organs Similarly the Vaishyas comprise not only agriculturists, money lenders and traders but also men pactising all arts and industries some of which have been named above It will thus be clear that all mechanics and artisans and skilled labourers e g carpenters masons, black smiths goldsmiths, weavers, dyers, leather tanners, should be included among the Vaishyas as has been already stated in para 10 above Lastly the Shudras or men of labour including domestic or menial servants and all unskilled labourers who serve and support all members of the society are analogous to the feet in the human body which support and carry the whole body

Sri Sampuranand on p 55 and 56 of his book while criticising Dr Bhagwan Das s scheme raises the question that it would be difficult to determine the Varna of many persons from their vocations, and

gives some instanees The question need not arise or can be easily answered Bankers, capitalists, managers of firms instanced by liver clearly come under the class „Vaishya ', and not "Kshattriya' The officials of Railway Companies whether of lower or higher grade are also Vaishyas Landholders or Zamindars are clearly Vaishyas Regarding workers in Mills, all unskilled labourers are to be considered Shudras and the rest Vaishyas In fact all persons who do not clearly come under the class Brahmans, Kshattriyas and Shudras, must be included in the all comprehensive class Vaishyas The word Vishwa meaning all is derived from the same root as Vaishya

There is no harm if any persons fall under more than one main class on account of their several occupations The higher class will be the proper class for such persons When classes are vocational no question of caste distinction can arise

19 No support to hereditary caste system

There is nothing in the Mantra in question or its import, properly unerstood to warrant an inference that the classes and vocations mentioned above should be hereditary The son may follow his father s profession, as in many case he does But there can be, either in reason or according to the Vedas and Shastras, no compulsion whatever for him to do so, and he is absolutely free to pursue any occupation for which he is fit and shows an aptitude The very word Varna is derived from the root of वृ to choose and means choice or profession

20 Varna system applicable only to Grihasthas

It should be remembered that this classification of Varnas applies, properly speaking, to Grihasthas only, for it is only in that Ashram that wealth can be earned The Brahmacharis or students, and Banaprasthis and Sanyasis can make no earnings, and are to be maintained by Grihasthas only people of the former three Ashrams have no separate means of livelihood or Vritti and therefore no Varna or vocation

सम्पादकीय

सत्यार्थ प्रकाश और मत मतान्तर समीक्षा

इसका उत्तम परिणाम-मत सुधार—

'सार्वदेशिक' के गत मास के अंक में मैंने 'सत्यार्थ प्रकाश के महत्त्व' पर एक सम्पादकीय टिप्पणी लिखते हुए बताया था कि ऋषि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के पिछले ४ समुल्लासों में जो मत मतान्तरों की समालोचना की थी उसका प्रयोजन केवल सत्य का प्रकाशित करना था न कि किसी का दिल दुखाना। इस विषयक कुछ उद्धरण भी 'सत्यार्थ प्रकाश' की प्रारम्भिक भूमिका और अनुभूमिकाओं में से दिये गये थे। यह विषय अत्यावश्यक होने के कारण निम्न लिखित उद्धरण अप्रासङ्गिक तथा अनुचित न होंगे जो इस विषय पर अत्युत्तम प्रकाश डालते हैं।

११वें समुल्लास की अनुभूमिका में ऋषि दयानन्द ने लिखा—'इन सब मतवादियों, इनके चेलों और अन्य सबको परस्पर सत्यासत्य के विचार करने में अधिक परिश्रम न हो इसलिये यह ग्रन्थ बनाया है। जो जो इसमें सत्य मत का मण्डन और असत्य का खण्डन लिखा है वह सबको जनाना ही प्रयोजन समझा गया है। इसमें जैसी मेरी बुद्धि, जितनी विद्या और जितना इन चारों मतों के मूल ग्रन्थ देखने से बोध हुआ है उसको सबके आगे निवेदित कर देना मैंने उत्तम समझा है क्योंकि विज्ञान गुप्त हुए का पुनः मिलना सहज नहीं है। पक्षपात छोड़कर इसको देखने से सत्यासत्य मत सबको विदित हो जाएगा। इस मेरे कर्म से यदि उपकार न मानें तो विरोध भी न करें क्योंकि मेरा तात्पर्य किसी की हानि या विरोध करने में नहीं किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करने कराने का है। इसी प्रकार सब मनुष्यों को न्याय दृष्टि से वर्तना अति उचित है। मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य का निर्णय करने कराने के लिये है न कि वाद-विवाद विरोध करने कराने के लिये। इसी मत मतान्तर के विवाद से जगत् में जो जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे उनको पक्षपात रहित विद्वज्जन जान सकते हैं। जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मत मतान्तर का विरुद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योन्य को आनन्द न होगा। इत्यादि (अनुभूमिका १)

१२वें समुल्लास की भूमिका में ऋषि ने फिर लिखा :—

"इसमें जैनी लोगों को बुरा न मानना चाहिये क्योंकि जो २ हमने इनके मत विषय में लिखा है

वह केवल सत्यासत्य के निर्णयार्थ है न कि विरोध वा हानि करने के अर्थ। (अनुभूमिका २)

१३वें समुल्लास की भूमिका में ऋषि दयानन्द ने फिर इसी विषय को स्पष्ट करते हुए लिखा —

"इस पुस्तक (बाइबिल) के भाषान्तर बहुत से हुए हैं जो कि इनके मत में बड़े २ पादरी हैं उन्होंने किये हैं उनमें से देवनागरी वा संस्कृत भाषान्तर देखकर मुझको बाइबिल में बहुत सी शंकाएं हुई हैं उनमें से कुछ थोड़ी सी इस समुल्लास में सबके विचारार्थ लिखी है। यह लेख केवल सत्य की वृद्धि और असत्य के ह्रास होने के लिये है न कि किसी को दु:ख देने व हानि करने वा मिथ्या दोष लगाने के अर्थ।" इत्यादि (अनुभूमिका ३)

१४वें समुल्लास से इस आशय के उद्धरण गत अंक में दिये जा चुके हैं जिन्हें दुहराने की आवश्यकता नहीं। इन उद्धरणों से ऋषि दयानन्द की सत्य निष्ठता और सत्य प्रचार में उत्सुकता के अतिरिक्त उनकी निरभिमानिता भी प्रकट होती है। ऋषि दयानन्द वैदिक परिभाषा के अनुसार सच्चे देव थे जिनका लक्षण वेदों में इन शब्दों द्वारा किया गया है—"ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः।" (ऋग्वेद म० ५। ५। १०) अर्थात् देव वे कहलाते हैं जो सत्य सम्पन्न होते हैं, सत्य के कारण प्रसिद्ध होते हैं, सत्य की सदा वृद्धि करने वाले और असत्य के घोर द्वेषी वा विरोधी होते हैं। मत मतान्तरों की ऋषि दयानन्द द्वारा कृत समालोचना उनके देवत्व का एक प्रमाण है क्योंकि जैसे उन्होंने ऊपर उद्धृत वाक्यों तथा अन्यत्र सब जगह स्पष्ट किया है उन्हें किसी से लेशमात्र भी द्वेष न था, न वे किसी को दु:ख देना चाहते थे बल्कि सत्य का प्रतिपादन करके वे सबको सुखी बनाना चाहते थे। ऋषि की निरभिमानिता इस बात से स्पष्टतया सूचित होती है कि उन्होंने निर्भ्रान्त वा सर्वज्ञ होने का दावा नहीं किया। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि जैसी मेरी बुद्धि, जितनी विद्या और जितना इन मतों के मूल ग्रंथ देखने से बोध हुआ है उसको सबके आगे निवेदित कर देना मैंने उचित समझा है।"

अनुभूमिका

१४ वें समुल्लास के अन्त में ऋषि दयानन्द ने फिर इसी बात को स्पष्ट किया है यह थोड़ा सा कुरान के विषय में लिखा, इसको बुद्धिमान् धार्मिक लोग ग्रन्थकार के अभिप्राय को समझ लाभ लेवें। यदि कहीं भ्रम से अन्यथा लिखा गया हो तो उसको शुद्ध कर लेवें।" (१४ वां समुल्लास पृ० ३८०)

सत्यार्थ प्रकाश की प्रारम्भिक भूमिका में भी ऋषि दयानन्द ने अपनी इस निरभिमानिता का परिचय दिया है "इस ग्रन्थ में जो कहीं २ भूल-चूक से अथवा शोधने तथा छापने में भूल-चूक रह जाए उसको जानने जनाने पर जैसा वह सत्य होगा वैसा ही कर दिया जाएगा और जो कोई पक्षपात से अन्यथा शङ्का वा खण्डन मण्डन करेगा उस पर ध्यान न दिया जाएगा। हां जो वह मनुष्य मात्र का हितैषी होकर कुछ जनाएगा

उसको सत्य समझने पर उसका मत सगृहीत होगा।"

इसलिये यदि किसी जगह समालोचना में यह भली भांति प्रमाणित हो जाए कि बाइबिल अथवा कुरान के जिस अनुवाद के आधार पर ऋषि दयानन्द ने समीक्षा की उसमें कोई अशुद्धि थी तो उस पर कोई भी सत्य प्रिय आय आग्रह न करेगा किन्तु यदि कोई इस आलोचना के भाव पर आक्षेप करे अथवा यह कहे कि ऋषि को मत मतान्तरों की बुद्धि विरुद्ध असत्य बातों की भी आलोचना न करनी चाहिये थी तो उस पर आय लोग कोई ध्यान न देंगे क्योंकि ऊपर उद्धृत वाक्य ऋषि के भाव की पवित्रता और उच्चता की पुकार २ कर साक्षि दे रहे हैं। सच तो यह है कि ऋषि दयानन्द ने इस प्रकार लोकहित कामना से प्रेरित और निर्भय होकर जो समालोचना की उससे अन्य मतावलम्बियों ने भी अपने मत के सुधार अथवा मन्तव्यों की बुद्धि संगत व्याख्या का विशेष प्रयत्न किया जिसके लिये उन्हें ऋषि को वस्तुतः धन्यवाद देना चाहिये। उदाहरणार्थ यदि इस्लाम को ही सब से पूछ लिया जाए (क्योंकि इस विषय में इस समय सब से अधिक शोर मचाने वाले मुसलमान बन्धु ही हैं) तो स्पष्ट है कि अब जो इस्लाम की बुद्धि संगत, उदारता सूचक व्याख्या करने का यत्न मौलाना अब्दुल कलाम आजाद तथा मौलाना मुहम्मद अली M A LLB आदि ने अपने कुरान भाष्यों में किया है यह ऐसी युक्ति युक्त समालोचना का ही परिणाम है।

मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने कुरान की शिक्षाओं का सार अपने अनुवाद की विस्तृत भूमिका में इन शब्दों में प्रकट किया है —

(१) मनुष्य का कल्याण और उसकी मुक्ति उसके विश्वास और कर्मों पर निर्भर है न कि सम्प्रदाय विशेष पर।

(२) मनुष्य मात्र के लिये ईश्वरीय धर्म एक ही है और एक समान सबको उसकी शिक्षा दी गई है। इसलिये धर्मों के अनुयायियों ने धर्म की एकता और उसके विश्व व्यापि तत्त्व को नष्ट कर जो बहुत से विरोधी और परस्पर लड़ने वाले जत्थे बना लिये हैं यह साफ उनकी गुमराही है।

(३) धर्म की जड़ एकेश्वर वाद है, यानी एक विश्वम्भर प्रभु की सीधी उपासना और सब धर्म प्रवर्तकों ने इसी की शिक्षा दी है।"

(देखो मौलाना अब्दुल कलाम आजाद कृत 'कुरान और धार्मिक मत भेद' अनुवादक-- सय्यद जहूरुल हुसैन हाशिमी पृ० ४७—४८)

इन सिद्धान्तों में तथा प्रायः मुसल्मान जिस कट्टर पन का परिचय देते हैं और इस्लाम ही एक मात्र सच्चा धर्म है जो उसको नहीं मानते वे सब घोर नरक में जाते हैं चाहे वे कितने भी सदाचारी और धर्मात्मा क्यों न हों इसमें कितना अन्तर है यह विचारशील पाठक स्वयं जान सकते हैं।

(४) मौलाना मुहम्मद अली एम० ए० एल एल बी० ने अपने कुरान के अंग्रेजी अनुवाद में इस्लाम पर असहिष्णुता के आरोप का जोरदार शब्दों में खण्डन करते हुए लिखा है कि

"Islam preaches equal love for all, equal respect for all and equal faith in all religions

(Introduction P C VIII)

अर्थात् इस्लाम सब धर्मों के लिये समान प्रेम, समान आदर और सब में समान विश्वास का प्रचार करता है। आगे एक स्थान पर वे लिखते हैं।

'The Waging of War on unbelievers to compel them to accept Islam is a myth pure and simple, a thing unknown to the Holy Quran

(Introduction P CXI)

अर्थात् अविश्वासियों के विरुद्ध इस उद्देश्य से युद्ध किया जाए जिससे उन्हें मुसल्मान बनने के लिये बाधित किया जा सके—यह कोरी गप्प है जो कुरान के सर्वथा विरुद्ध है इत्यादि

स्वर्ग और नरक (Paradise & Hell) शीर्षक लेख में मौलाना मुहम्मद अली ने कुरान में दिये स्वर्ग के वर्णन को आलङ्कारिक सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। वे लिखते हैं

'The description of paradise as a garden with rivers flowing in it, is only a parable rivers corresponding to faith and the trees of the garden corresponding to the good which a man does Evidently the fruits of the deeds are meant here and not the fruit that the earth grows Similar is the case with the water the milk, the honey, the cushions, the thrones, the clothes and the adornments of the next life, they are not things of this life .

(Introduction IXIII.)

अर्थात् स्वर्ग का वर्णन एक बाग के रूप में जिसमें नदियां बह रही हैं केवल एक अलङ्कार है। नदियों से विश्वास का वृक्षों से कर्मों का तथा फलों से कर्म फलों का तात्पर्य है। जल दूध, शहद, गद्दे, वस्त्र भूषणादि इस लोक की वस्तुएं नहीं हैं इत्यादि

कुरान की इस प्रकार की व्याख्या ऋषि दयानन्दादि कृत समालोचना का परिणाम है इसमें सन्देह नहीं। ऐसे ही ईसाइयों ने अपने मन्तव्यों तथा चमत्कारादि को बुद्धि सगत वा आलङ्कारिक सिद्ध करने का जो प्रयत्न ऋषि कृत समालोचना के बाद किया है उस पर फिर कभी प्रकाश डाला जाएगा।

सिन्ध सरकार का विवेक पूर्ण निर्णय—

सार्वदेशिक' के गत जुलाई मास के अङ्क में सिन्ध सरकार की २४-६-४३ की वह विज्ञप्ति का उल्लेख करते हुए जिसमें कहा गया था कि "सरकार" 'सत्यार्थ प्रकाश' के विरुद्ध प्राप्त आवेदन पत्रों पर गम्भीरता से विचार कर रही है और शीघ्र ही निर्णय देने वाली है आर्य जनता से अपने पवित्र ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) की रक्षार्थ सब प्रकार के त्याग के लिये उद्यत रहने और सत्यार्थ प्रकाश की सम्भावित विज्ञप्ति का घोर प्रतिवाद करने के निमित्त ४-७-४३ को सार्वजनिक सभाएँ करने का सार्वदेशिक सभा की ओर से आदेश दिया गया था। सभा के आदेशानुसार ४ जुलाई को सत्यार्थ प्रकाश दिवस देश के कोने कोने में मनाया गया और अपने इस पवित्र धर्म ग्रन्थ की रक्षार्थ सब प्रकार के त्याग

के लिये सन्नद्धता आर्य नर नारियों ने प्रदर्शित करके उसकी सूचना प्रस्तावों तथा तारों द्वारा सिन्ध सरकार के प्रधान मंत्री और गवर्नर महोदय को भी दी। यह प्रसन्नता की बात है कि सिन्ध सरकार ने ८ जुलाई को एक विज्ञप्ति द्वारा सूचना दी कि वह सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध कोई कार्यवाही करने का विचार नहीं रखती और इस प्रकार एक भीषण संकट से उसने अपने को बचा लिया जिसके लिये हम समस्त आर्य जगत् की ओर से उसे धन्यवाद देते हैं। साथ ही आर्य जनता को अपने प्रयत्न में सफलता के लिये हम बधाई देते हैं

सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन अभी जारी—कुछ कट्टर मौलवियों की शरारत—

हम आशा कर रहे थे कि सत्यार्थ प्रकाश की सम्भावित जब्ती से जो असन्तोष की ज्वाला सर्वत्र प्रज्वलित हो उठी थी वह सिन्ध सरकार के विवेक पूर्ण निश्चय की घोषणा द्वारा शान्त हो जाएगी किन्तु हमें यह जानकर अत्यन्त दुःख है कि सिन्ध के कुछ कट्टर मौलवियों ने इस सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन को अभी बन्द नहीं किया बल्कि बडी ऊट पटांग तथा भडकाने वाली बातें वे इसके सम्बन्ध में अभी तक कहते चले जा रहे हैं। एक सिन्धी मौलवी ने मुसलमानों से अपील की है कि एक मुहम्मदी झण्डा बनाया जावे और मुहम्मद श्रद्धालुओं के नाम से स्वय सेवक भरती किये जाएँ। सत्यार्थ प्रकाश को जब्त कराने के लिये एक विशेष दिन नियत करके सर्वत्र प्रस्ताव पास कराये जाएं और सिन्ध सरकार से कहा जाए कि यदि उसने सत्यार्थ प्रकाश को जब्त न किया तो हिन्दुस्तान भर के मुसलमान सत्याग्रह करने पर विवश हो जाएंगे। इत्यादि। आर्यों को कट्टर मौलवियों की धमकियों से डरने की कोई आवश्यकता नहीं। यदि इन गीदड़ भभकियों से उन्होंने सिन्ध सरकार को अपने हाल ही में उद्घोषित विवेक-पूर्ण निर्णय को बदलने के लिये बाधित भी कर दिया तो भी कोई भयभीत होने की बात नहीं क्योंकि आर्य अपने धर्म ग्रन्थ की रक्षार्थ मर मिटना जानते हैं और उसके लिये पहले भी तय्यार थे और अब भी हैं। मुसल्मान अब आर्यों की नकल में सत्याग्रह' करने में कितने सफल हो सकेंगे यह भी सब जानते हैं। इसलिये आर्यों का कर्तव्य तो यही है कि इन बेहूदा धमकियों की परवाह न करते हुए सत्यार्थ प्रकाश के अधिक से अधिक स्वाध्याय और प्रचार में तत्पर रहें। यही इन शरारतों का क्रियात्मक उत्तर है। सिन्ध प्रांत के घर घर में हिन्दी उर्दू तथा सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश पहुँच जाएँ ऐसा प्रयत्न सारी आर्य जनता को करके अपने सच्चे उत्साह का परिचय देना चाहिये। मौलवियों तथा मुस्लिमलीगी "शाहबाज" आदि अखबारों के गाली गलौच के बदले में शान्ति पूर्वक सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय, तदनुसार आचरण और अधिकतम प्रचार से ही हमें सन्तुष्ट रहना चाहए। अभी इस टिप्पणी को प्रेस में देते देते समाचार मिला है कि मुस्लिम लीग की कार्य कारिणी में सत्यार्थ प्रकाश के कुछ समुल्लासों को भारत सरकार द्वारा जब्त कराने का प्रस्ताव रखा

जाएगा। इसका भी उपर्युक्त उत्तर ही पर्याप्त है। भारत सरकार से इतनी मूर्खता की हमें आशा नहीं किन्तु यदि वह ऐसी मूर्खता कर ही बैठे तो आर्य अपने धर्म ग्रन्थ की रक्षा करना जानते ही हैं।

मा० तारासिंह और उनके अनुयायियों का अनर्गल भाषण—

यदि यह सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन कुछ मतान्ध मौलवियों तक ही सीमित रहता तो हमें आश्चर्य न होता किन्तु खेद है कि मास्टर तारासिंह और उनके कुछ अकाली अनुयायी भी मुसल्मानों की हां में हां मिलाते हुए सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध विष उगल रहे हैं। वे लिखते हैं कि 'सत्यार्थ प्रकाश' के लेख आलोचना की सीमा से आगे निकल गये हैं। यदि इन्हें दिल साड़ू गालियां कहा जाए तो मिथ्या न होगा। यदि किसी को चिढ़ाकर और गालियां देकर आर्य समाज अपनी सर्वप्रियता चाहता है तो यह एक अनहोनी बात है। सत्यार्थ प्रकाश ने किस की दाढ़ी और पगड़ी पर हाथ नहीं डाले। इत्यादि

इन बातों का उत्तर 'सत्यार्थ प्रकाश' की भूमिका तथा अनुभूमिकाओं में से उद्धृत वाक्यों से मिल जाता है अत अधिक लिखना अनावश्यक है। ऋषि दयानन्द ने कभी किसी मत वा मत प्रवर्तक को गाली नहीं दी और न किसी की दाढ़ी और पगड़ी पर हाथ डाले हां उनकी बुराइयों की निर्भय होकर समालोचना सुधार के विचार से अवश्य की है जैसे कि चरदुश्त ईसा-मसीह, मुहम्मद साहेब, गुरु नानक, भक्त कबीर तथा अन्य सभी सुधारकों ने भी स्पष्ट और कठोर शब्दों में अपने समय में प्रचलित अन्ध विश्वासों तथा बुरी प्रथाओं की की थी जिसके सैकड़ों उदाहरण ज़िन्दअवस्ता बाइबल, कुरान, गुरु ग्रन्थ साहेब आदि से भी दिये जा सकते हैं। ऋषि की इस समालोचना का तात्पर्य किसी के दिल दुखाने से न था फिर भी यदि कोई समालोचना मात्र से चिढ जाता है तो उसका कोई उपाय नहीं। हां, ऋषि दयानन्द अथवा आर्य समाज असत्य का समर्थन करके सर्व प्रिय होना नहीं चाहते। सत्य के ग्रहण और प्रचार को ही वे अपना परम कर्तव्य मानते रहे हैं॥

शोक समाचार—

गत मास पंजाब के वयोवृद्ध नेता श्री प्रो० शिवदयालु जी एम० ए० गुरुकुल काङ्गडी विश्वविद्यालय के एक योग्य बहावलपुर निवासी स्नातक प० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार (कइयों को समाचार पत्रों से श्री प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार भू० पू० वेदोपाध्याय गुरुकुल काङ्गडी का भ्रम हो गया है जो अयथार्थ है वे ईश्वर की कृपा से सर्वथा कुशल पूर्वक हैं) और उनके पूज्य पिता श्री मल्ल रामकृष्णजी के देहावसान का समाचार जानकर हमें अत्यन्त दुःख हुआ है। हम इन पवित्रात्माओं की सद्गति के लिये भगवान् से प्रार्थना करते हुए इनके सब शोक सन्तप्त सम्बन्धियों और मित्रों से समवेदना प्रकट करते हैं॥

धर्मदेव वि० वा०

मातृत्व की ओर

(प्रकाशक—शारदा मन्दिर लिमिटेड नई सड़क देहली)

मूल्य अजिल्द १।) सजिल्द १।।)

कुछ आर्य्य नेताओं की सम्मति

इससे पूर्व इस पुस्तक के सम्बन्ध में हम श्री पूज्य नारायण स्वामी जी, श्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए०, आर्य्य मार्त्तण्ड अजमेर और वीर अर्जुन की सम्मतिया उद्धृत कर चुके हैं। अब हम श्री प० गंगाप्रसाद जी एम०ए० रिटायर्ड चीफ जस्टिस प्रधान सार्वदेशिक सभा तथा श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति मन्त्री सार्वदेशिक सभा की सम्मति उद्धृत करते हैं —

मैंने श्री रघुनाथप्रसाद पाठक लिखित 'मातृत्व की ओर' नामक पुस्तक को आदि से अन्त तक पढ़ा। पुस्तक स्त्रियों के लिये विशेषकर कन्याओं और नव विवाहिता वधुओं के लिए बहुत उपयोगी है। वार्तालाप के रूप में लिखी जाने से पुस्तक की रोचकता बढ़ गई है। पुस्तक सग्रह करने योग्य है।" —गंगाप्रसाद

'मातृत्व स्त्री जाति का सबसे बड़ा अधिकार और सबसे ऊँचा दायित्व है। इसी से स्त्री, जगत् में जननी नाम की अधिकारिणी होती है। आश्चर्य और दुःख की बात है कि ऐसे आवश्यक विषय में हमारी शिक्षा प्रणाली प्राय मौन रहती है। अक्षर बोध को हम अधिक महत्व देते हैं और जीवन के सिद्धान्तों के बोध को कम।

श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक ने इस पुस्तक द्वारा इस न्यूनता को पूरा करने का यत्न किया है। आपने सुबोध तथा मनोरंजक ढंग पर भावी माताओं के जानने योग्य अधिकांश बातों को कहा है। मेरे विचार में यह लगभग डेढ़सौ पन्नों की पुस्तक युवतियों के लिए अत्यन्त उपयोगिनी सिद्ध होगी। आजकल की कागज़ की महँगाई को देखते हुए इसका १।) मूल्य ठीक ही है।" —इन्द्र

मातृत्व की ओर में क्या है ?

(१) संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य्य (२) पवित्र रहस्य (३) स्वास्थ्यसुधा (४) जीवन माधुर्य्य (५) विवाह (६) सन्तान निर्माण (७) परीक्षा (८) सम्मान और नौकर (९) सन्तान शिक्षण (१०) नाम महिमा (११) गृहस्थ निर्माण कला (१२) मातृत्व और देशप्रेम।

(नोट) पुस्तक सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा के पुस्तक भण्डार से भी मिलती है।

मैनेजर—शारदा मन्दिर लिमिटेड, नई सड़क देहली।

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत

कतिपय ग्रन्थ

(१) मृत्यु और परलोक

शरीर, अन्तःकरण तथा जीव का स्वरूप और भेद, जीव और सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकार, मृत्यु का स्वरूप तथा बाद की गति, मुक्ति और स्वर्ग नरक इत्यादि का स्वरूप, मुक्ति के साधन आदि आदि विषयों पर अद्भुत पुस्तक। मूल्य ||=)

(२) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिए उनके मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक, उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर शृङ्खलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश। तृतीय संस्करण |-)

(३) उपनिषद् रहस्य

केन, कठ, प्रश्न, मुंडक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहद'रण्यक उपनिषदों की बहुत सुन्दर खोजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें।

मूल्य क्रमशः—

|-), ≡), =)||, =)||, -)|, ≡)|, |), |=)||, १)

नोट—उपर्युक्त पुस्तकें प्रत्येक आर्य समाज पुस्तकालय मे रहनी चाहियें।

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।

(१) प्राणायाम विधि)॥
(२) वदिक सिद्धान्त अजिल्द ।॥)
सजिल्द १)
(३) विरजानन्द विजय =)
(४) यमपितृ परिचय ॥)
(५) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र २)
(६) वद म असत् शब्द -)।
(७) वैदिक सूर्य्य विज्ञान =)
(८) ऋग वद मे देवृकामा वा देवकामा -)
(९) विदेशों म आर्य्य समाज ॥)
(१०) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १।)
(११) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श १॥)
(१२) भजन भास्कर ॥)
(१३) समस्त आर्य्य समाजों का सूची ॥)
(१४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास अ० २)
सजिल्द २॥)
(१५) बाबदान ॥)
(१६) आर्य डायरेक्टरी अ० १।) स० १॥)
(१७) वैदिक सन्ध्या रहस्य -)।
(१८) सत्यार्थ निर्णय १॥)
(१९) संस्कृत सत्यार्थप्रकाश (अजिल्द) ॥)
(२०) हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद (उर्दू में) =)
(२१) दजहारे हकीकत (उर्दू म) ।॥=)
(२२) सत्य निर्णय १।)
(२३) आर्य पर्व पद्धति अजिल्द ।=)
सजिल्द १)
(२४) मातृत्व का आर अजिल्द १।)
सजिल्द १॥)
(२५) कथा माला ।=)
(२६) आर्य्य जीवन और गृहस्थ धर्म ।=)
(२७) आर्य्यावर्त्त का वा =)॥
(२८ आर वार दल श =)
(२९) कायाकल्प
(३०) उच्चयज्ञ श
(३१) आ समाज का
(३२) बहिनों की ॥
(३३) भक्ति ।॥)
(३४) विम ।=)॥
(३५) वेद १)
(३६) Agnih tra
—B bound २॥)
(३७) Cinematograph by an eye
witness ।-)
(३८) Truth and V ... ।=)
(३९) Truth-bed rock of Arya
Culture ॥)
(४०) Vedic Teachings १।)
(४१) Voice of Arya Varta =)
(४२) Christianity in India ॥)
(४३) The Scope and Mission of
Arya Samaj—Bound १)
Unbound ॥)
(४४) Eclesia Divina—Bound ५)
(४५) The Glory of Vedas -)॥
(४६) Arya Samaj and Vedic
Dharma ॥)
(४७) Commentary on
Ishopanishad ।)
(४८) Commentary on Arya Marriage
Act ।)
(४९) Light of the Truth—Bound ३)
(५०) Kenopanishat ।)
(English translation)



१९४३ ई०
२००० सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
देश ३
विदेश ७ शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक-आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष १९ } सितम्बर, १९४३ ई०] भाद्र २००० [दयानन्दाब्द १२० { अङ्क ७

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् ।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ (यजुर्वेद अ० १ । ५)

शब्दार्थः—(व्रतपते अग्ने) सत्यभाषण आदि व्रतों के पालक और स्वामी हे ज्ञानस्वरूप ईश्वर। (व्रत चरिष्यामि) सत्य भाषण, सत्य क्रिया और सत्य का ही मानना। इस व्रत का मैं अनुष्ठान करूंगा (तत् शकेयम्) इस व्रत के अनुष्ठान और इसकी पूर्ति में मैं समर्थ हो सकूं ऐसी शक्ति आप मुझे दीजिये। (तत् मे राध्यताम्) मेरे इस व्रत की सिद्धि होने में आप अच्छी प्रकार सहायक हों। (अहम्) मैं (अनृतात्) असत्य भाषण, असत्य कर्म और असत्य के मानने से पृथक् होकर (इदम् सत्यम् उपैमि) इस वेद विद्या, प्रत्यक्षादि प्रमाण सृष्टिक्रम विद्वानों के सङ्ग, उत्तम विचार और आत्म शुद्धि से भ्रम-रहित सर्व हितकारक तत्त्व निष्ठ, अच्छी प्रकार परीक्षित जो सत्य है उसको जानने, उसके अनुसार आचरण करने और उसे सम्पूर्णतया

वेदोपदेश—

सत्य का पवित्रव्रत

(१) ओं सुविज्ञानं चिकित्
वचसी पस्पृधाते। तयोर्यत्
यस्तादित् मोमोऽवति हन्त्य

(

(२)ओ न वा उसोमो वृजिनं हिना।। ग ग ९..
मिथुया धारयन्तम्। हन्तिरक्षो हन्त्यासद्
वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते ॥

(ऋग्वेद ७।१०४।१३)

(३) ओ३म् अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः
स्वर्दृशः। योनावृतस्यसीदत ॥

(ऋग्वेद ६।१३।६)

प्र प्त करने की मैं इच्छा करता हूँ इसीलिये तुम्हारी शरण में मै आता हू ॥

विनय—हे सच्चिदानन्द स्वरूप जगदीश्वर। आप सब शुभ सङ्कल्पों और सत्यभाषणादि व्रतों के सरक्षक हैं। आप ज्ञानस्वरूप और सत्य का उपदेश करने वाले हैं। इसलिये हम लोग आप की शरण में आते हैं और आप से प्रार्थना करते हैं कि हम असत्य का सम्पूर्णतया परित्याग करके सत्य के व्रत को पूर्णतया निभाने की जो प्रतिज्ञा करते हैं उसके पालन करने की शक्ति आप हमे प्रदान करें। आपकी सहायता के बिना इस कठिन व्रत को निभाना हमारे लिये सम्भव नहीं।

ना ऋतावृधो
म्ने सुच्छर्दिष्टमे

ग्वेद ७।६६।१३)

१५ – (१) (सुविज्ञान चिकितुषे) उत्तम तथा विशेषज्ञान को प्राप्त करने की इच्छा वाले (जनाय)मनुष्य के लिये (सत् च असत् च वचसी) सत्य और असत्य वचन (परपधाते) एक दूसरे का मुकाबिला करते हैं—दोनों उसकी परीक्षार्थ उसके सन्मुख उपस्थित होते हैं (तयो) उन दोनों में से (यतरत) जो (सत्यम्) सचा और (यतरत् ऋजीय) जो सरल छल कपट रहित वचन है (सोम) सौम्य गुणयुक्त सज्जन (तत् इत् अवति) उसी की रक्षा करता है और (असत्) असत्य को (आ हन्ति) सब ओर से भली भांति नाश करता है।

(२) (सोम) सौम्यगुणयुक्त पुरुष वा ऐश्वर्यशाली उत्तम राजा (वृजिन न हिनोति) पाप वा पापी को कभी नहीं बढाता—उसकी कभी सहायता नहीं करता (मिथुया धारयन्त क्षत्रिय न हिनोति) हिंसा और असत्य व्यवहार से अपने शरीर वा ऐश्वर्य को धारण करने वाले क्षत्रिय को भी वह नहीं बढ़ाता—बल्कि वह (रक्ष हन्ति) नीच राक्षसीवृत्ति वाले पुरुष को वा उसके राक्षस स्वभाव को नाश कर देता है

(असद् वदन्तम् आहन्ति) असत्य बोलने वाले का वह अच्छी प्रकार नाश कर देता है (उभौ) वे दोनों प्रकार के अर्थात् राक्षस और असत्यवादी पुरुष (इन्द्रस्य) परमेश्वर के अथवा ऐश्वर्यशाली राजा के (प्रसितौ) बन्धन में—राजपत्र में कारागृह -(जेल) आदि मे (शयाते) शयन करते हैं ॥

(३) हे मनुष्यो ! तुम (अराव्णः अपघ्नन्त) अनैश्वर्य और उसके कारणरूप आलस्य प्रमादादि तथा कृपणतादि को दूर करते हुए (पवमाना) सबको पवित्र करते हुए (स्वर्दृशः) सच्चे सुख का साक्षात् दर्शन अनुभव वा सुख स्वरूप परमेश्वर का साक्षात्कार करते हुए (ऋतस्य योनौ सीदत) वेद, यज्ञ और सत्य के अन्दर सदा स्थिर रूप से निवास करो ॥

(४) (ऋतावान) सत्य और ज्ञान से युक्त (ऋतजाता) सत्यके कारण प्रसिद्ध अथवा माना सत्य में ही उत्पन्न हुए (ऋतावृध) सत्य तथा ज्ञान को सदा बढ़ाने वाले (घोरास अनृतद्विषः) असत्य के प्रबल विरोधी हे सत्यनिष्ठ विद्वानो (नरः ये च सूरयः) हम मनुष्य और जो अन्य विद्वान् नेता हैं सब (व) तुम्हारे (सुच्छर्दिष्टमे सुम्ने) अत्यन्त सुरक्षित आश्रय में (स्याम) सदा रहें।

वेद के इन मन्त्रों में सत्य के व्रत के उत्तमता से पालन का बड़ा सुन्दर उपदेश दिया गया है। ससार में श्रेष्ठ वही बनते हैं जो सदा सत्य के व्रत का अच्छी प्रकार पालन करते है और कठिन आपत्तियों के आने पर भी जो सत्य के मार्ग से विचलित नहीं होते। सत्य से बड़ा कोई धर्म नहीं है। देव पुरुष वही कहलाते हैं जो ज्ञानी बन कर सदा सत्य का प्रचार और असत्य का प्रबल विरोध व खण्डन लोक हित कामना से प्रेरित होकर करते हैं क्योंकि अज्ञान और असत्य मनुष्य जाति के सबसे बडे शत्रु हैं। स्वनाम धन्य ऋषि दयानन्द सरस्वती ऐसे ही देव पुरुष थे जिन्होंने अपने पवित्र जीवन को सत्य ज्ञान की प्राप्ति और उसके निर्भयतापूर्वक प्रचार तथा असत्य, अन्याय और मिथ्या विश्वास के खण्डन में लगाया। ऐसे महात्माओं के चरण चिन्हों पर चलते हुए हमे भी अपने जीवनों को सम्पूर्णतया सत्यमय बनाना चाहिये। सत्य के पवित्र व्रत का सम्पूर्णतया पालन किये बिना सत्य स्वरूप भगवान् की कभी प्राप्ति नहीं हो सकती ॥

ध० दे०

सत्यार्थ प्रकाश में अन्य मतों की आलोचना

(लेखक—श्रीमहात्मा नारायण स्वामी जी महाराज रामगढ़)

(१) सत्यार्थ प्रकाश के रचे जाने का उद्देश्य उसके रचयिता ऋषि दयानन्द ने, ग्रन्थ की भूमिका में इस प्रकार से अंकित किया है — "मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है"।

"आज कल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मत में हैं (यदि) वे पक्षपात छोड़ सर्व तन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वरतें वरतावें तो जगत का पूर्ण हित हो"

'यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मत मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूँ वैसे ही दूसरे देशस्थ मतोन्नति वालों के साथ वर्तता हू।"

फिर चौदहवे समुल्लास की अनुभूमिका में लिखा है —"यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्या सत्य के निर्णय के लिये सब मतों के विषयों का थोड़ा थोड़ा ज्ञान होवे इससे मनुष्यों को परस्पर विचार करने का समय मिले, और एक दूसरे के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें। न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठ मूठ बुराई व भलाई लगाने का प्रयोजन है किन्तु जो भलाई है वही भलाई और जो बुराई है वही बुराई सबको विदित होवे।'

यह लेख हठ दुराग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वाद-विवाद और विरोध घटाने के लिये किया (लिखा) गया है न कि इन को बढ़ाने के अर्थ, क्योंकि एक दूसरे की हानि करने से पृथक् रह परस्पर को लाभ पहुँचाना हमारा मुख्य कर्म है।"

उपर्युक्त उद्धरण असन्दिग्ध शब्दों में, ग्रन्थ कर्ता के शुद्ध भाव और नेकनीयती को प्रकट करते हैं। इस शुद्ध आलोचना का हम एक उदाहरण देते हैं। ऋषि दयानन्द ने क़ुरान की जो आलोचना की है उसने अहमदी (क़ादियानी) सम्प्रदाय को पैदा किया और इस सम्प्रदाय ने किस प्रकार से मुसलमानों में वर्णित असगत बातों की सगति लगाने का यत्न किया वह नीचे के उदाहरण से प्रकट होता है।

मुसलमान अब तक मानते हैं कि खुदा सातवें आसमान पर अर्श रूपी एक तख्त पर बैठता है और चार फ़रिश्ते उस तख्त को उठाये हुये हैं। वे फ़रिश्ते कितने बड़े और महान् शरीर वाले हैं इसका अन्दाज़ा हदीसों के इस कथन से हो जाता है, कि उनके कान और आँख

सत्यार्थ प्रकाश और इस्लाम

(लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० प्रधान संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा)

सत्यार्थ प्रकाश में भी इसलाम का खडन है। इस लिये मुसलमान लोग सत्यार्थ प्रकाश से बहुत ही क्रुद्ध हैं, परन्तु उन को यह पता नहीं कि सब से अधिक इस्लाम का खण्डन मुसल्मानी किताबों

के बीच का फासिला इतना है जितनी लम्बाई ५०० वर्ष चलने से हो सकती है। इस पर अनेक प्रकार के आक्षेप होते चले आते हैं। परन्तु अहमदी सम्प्रदाय वालों ने बुद्धिपूर्वक इसकी संगति लगाने का यत्न किया है। वे कहते हैं अर्श जगत् को कहते हैं। खुदा के इस तख्त पर होने का अभिप्राय यह है कि वह अर्श रूपी संसार में मौजूद है। और इस जगत् रूपी तख्त को उठाने वाले चार फरिश्ते वायु, अग्नि जल और पृथ्वी हैं जिनसे यह जगत् बना है। अस्तु: इस प्रकार के अर्थ अहमदी लोगों ने अनेक स्थानों और विषयों के किये हैं। हम इन पंक्तियों के द्वारा अहमदी सम्प्रदाय को मुसलमानों के अन्य सम्प्रदायों से अच्छा या बुरा सिद्ध नहीं करना चाहते हैं। हमारे इस लेख का केवल उद्देश्य इतना ही है कि सत्यार्थ प्रकाश मे वर्णित आलोचना को पढ़कर यदि आलोचनान्तर्गत मतवाले इसी प्रकार से अपना सुधार कर लें तो इससे उनके यश की वृद्धि हो सकती है और आलोचना भी सफल हो सकती है।

में है जिस के कारण इस्लाम का रूप ही बदल गया है। मेरी तो ऐसी धारणा है कि यदि मुहम्मद साहेब और ऋषि दयानन्द का वार्तालाप हुआ होता तो मुहम्मद साहेब अनेक अशों में स्वामी दयानन्द के अनुयायी होगये होते। क्योंकि आरम्भ मे उनका उद्देश्य एक ईश्वर की पूजा और मूर्ति पूजा तथा देवी देवतों की पूजा का खण्डन करना था। स्वामी दयानन्द और सर सय्यद अहमद का बहुधा वार्तालाप हुआ करता था। स्वामी दयानन्द ने सर सय्यद अहमद को बताया होगा कि हिन्दू धर्म की वर्तमान कुरीतियां पुराणों के कारण हैं वेद में उनका उल्लेख नहीं। इसी का अनुकरण सर सय्यद ने किया। उन्होंने कहना आरम्भ किया कि हम शुद्ध कुरान को मानते हैं हदीसों को नहीं। हदीसों में इस्लाम के सिद्धान्त के विरुद्ध भी बहुत सी सामग्री है। सर सय्यद के लेखों तथा आज कल के इस्लामी साहित्य का यदि सौ वर्ष पहले की इस्लामी पुस्तकों से मिलान किया जाय तो पता चलेगा कि सत्यार्थ प्रकाश की छाप उन पर लगी हुई है।

सर सय्यद शैतान के बारे मे लिखते हैं:—

"अब खयाल करो कि कुरान मजीद मे शैतान का लफ्ज़ या नाम आया है। मगर उसकी हक़ीक़त व माहियत (स्वरूप) कुछ बयान नहीं हुई।

... दिन रात हमको शैतान बहकाता है

और गुनाहों (पापों) में फसाता है मगर वजूद खारिजी महसूस नहीं होता। बल्कि हम बिल् यकीन पाते हैं कि खुद हम ही में एक कुव्वत (शक्ति) है जो हमको सीधे रस्ते पर फेरती है। हम को वेइन्तहा अनेकानेक (प्रलोभनों) से बहकाती है। शैतान समझकर उसकी डाढी पकड लेते हैं और जोर से तमाचा मारते हैं। मगर जब आख खुलती है तो अपनी ही सफेद दाढ़ी अपने हाथ में और अपना ही गाल लाल देखते हैं।'

(तहजीबुल इखलाख जिल्द दो सफा ११६)

"पस इन तमाम आयतों को मिलाओ और गौर करो कि यह सब तश्बीह व इशिआरा (अलङ्कार) है। इनसे मानी हकीकी मुराद नहीं हैं।" (सफा ११८)

जिन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में ऋषि दयानन्द कृत अहल्या की कहानी का व्याख्या पढ़ी है वह कह सकते हैं कि सर सय्यद पर ऋषि का कितना प्रभाव था। यदि सर सय्यद मुसल्मानों कौम की राजनीतिक परिस्थिति को सुधारने मे न लगे रहते तो वह अवश्य हम से बहुत आगे बढ गये होते। जैसे पुराणों में निष्कलंक अवतार का उल्लेख है उसी प्रकार मुसल्मानों में महदी आखिरुज़् जमा का भी है। इसके विषय में सर सय्यद लिखते हैं —

"इन गलत किस्सों में से जो मुसल्मानों के हा मशहूर हैं एक किस्सा इमाम महदी आखिरुज़् जमा के पैदा होने का है। इस किस्से की बहुत सी हदीसें कुतब अहादीसमें भी मज़कूर (लिखित) हैं मगर कुछ शुबह नहीं कि सब झूठी और मसनूई (बनावटी) हैं।" (सफा ३७६)

मौलाना अबू मुहम्मद अब्दुलहक अपनी हाल की लिखी हुई किताब अकाबदुल् इस्लाम में लिखते है —

'अल्लाह तआला जिस्म से पाक (निराकार) है। पस न वह आस्मान में रहता है न जमीन में न मशरिक (पूर्व) में है न मगरिब (पश्चिम) में। बल्कि तमाम आलम (सारा विश्व) उसके आगे एक ज़र्रे के बराबर है। वह इसमे क्योंकर समावे। लेकिन हर जगह उसका जुहूर (प्रकाश) है।" (पृ० ३०)

'वह आयात व आहादीस कि जिन में अल्लाह के लिये मुह और हाथ और पाव और उगलिया और पिंडली और आख और नफ्स वगैर साबित है इनको मुतशाबिहात (आलङ्कारिक) कहते हैं।' (पृ० ३०)

यह सब सत्यार्थ प्रकाश की करामात हैं। अभी यह करामात इस्लामी किताबों में ही आई है। साधारण मुसल्मानों तक नहीं पहुँच पाई। मुसल्मान तो अभी खुदा को सातवें आसमान पर ही मानते हैं।

तमाशा है कि मुसल्मान लोग गुड़ खाते और ईख से शत्रुता करते हैं। वह नहीं जानते कि ईख न होगी तो गुड़ कहाँ से आवेगा।

सत्यार्थ प्रकाश विषयक दो भ्रम

(लेखक—श्री प्रा० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू युनिवर्सिटी बनारस)

इसमें सन्देह नहीं कि सत्यार्थ प्रकाश के प्रेमी और समर्थक बहुत से लोग हुए और इसी बात का फल है कि मूल व अनुवादों का प्रकाशन बहुत ज्यादा हुआ। परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इसके विरोध मे भी अब (सन् १९४३ ई०) तक इतना कार्य हुआ है कि यथोचित रूप से उसके उल्लेख के लिए यहाँ पर पर्याप्त स्थान नहीं।

सत्यार्थ प्रकाश का संशोधित संस्करण जो सन् १८८४ ई० में प्रकाशित हुआ है उसके विषय में अनेक विरोधी लोगों ने इस प्रकार का भ्रम फैलाया है कि यह संस्करण श्री स्वामी जी का लिखा हुआ नहीं क्योंकि वे सन् १८८३ ई० में स्वर्ग लोक सिधार गए थे और यह संस्करण उनकी मृत्यु के पश्चात् सन् १८८४ ई० मे निकला है। असली सत्यार्थ प्रकाश वह है जो सन् १८७५ ई० में छपा है।

ऐसी बात के विषय मे यह जान लेना चाहिए कि श्री स्वामी जी ने इस संस्करण की सामग्री सितम्बर सन् १८८२ ई० (भाद्रपद शुक्ल पक्ष संवत् १९३९ वि०) मे ही तैयार कर दी थी।* उस समय वे उदयपुर में थे और अंत काल तक राजपूताना ही में रहे। ग्रन्थ का छपना प्रयाग में हुआ था। प्रेस में छपाई विषयक जो सुगमतायें इस समय (सन् १९४३ ई०) में हैं वे उस समय कदापि नहीं थी। प्रेस का प्रबन्ध भी बहुत सन्तोषजनक न था।

प्रेस मे छपाई का काम भी बहुत था। सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ कुछ छोटा सा ग्रन्थ न था। प्रेस मे छपाई का काम कुछ अन्य लोगों का भी होता था।* श्री स्वामी जी की मृत्यु से प्रेस के प्रबन्ध पर भी कुछ बुरा प्रभाव पड़ा था। निदान इस प्रकार की आपत्तियों से श्री स्वामी जी महाराज के जीवन काल मे पूरा का पूरा ग्रन्थ न छप सका था। न वह उनके काल में प्रकाशित हो सका था और वह उनकी मृत्यु ३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० (दीपावली संवत् १९४० वि०) के पश्चात् प्रकाशित हो सका था। इस प्रकाशित ग्रन्थ में मूल सामग्री ९½×६ इंच आकार के ५६२ पृष्ठों की है। कुछ पृष्ठों को छोड़कर समस्त पृष्ठों में ३१ सतरें हैं। ५६२ पृष्ठों के सिवा १४ पृष्ठ प्रथ मे विषय सूची व शुद्धि अशुद्धि आदि के हैं।

---

*देखिए सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका—लेखक।

*'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' प्रथम भाग, श्री पंडित भगवद्दत्त जी द्वारा सम्पादित और अक्तूबर सन् १९१८ ई० मे प्रकाशित, के पत्र, संख्या ३, ८, १०, ४४, ४६, ४७, ४८, ५०, ५१ को देखना चाहिए—लेखक।

इस प्रकार कुल ग्रंथ ६०६ पृष्ठों का है। अधिकांश छोटे टाइप मे ही सारी सामग्री है। मोटे या बड़े टाइप का प्रयोग बहुत कम है।

सत्यार्थ प्रकाश का जो सस्करण सन् १८७५ ई० मे प्रकाशित हुआ था उसमें केवल १२ समुल्लास थे। ईसाइयों से सम्बन्ध रखने वाला तेरहवाँ और मुसलमानों वाला चौदहवाँ अर्थात् अत के दो समुल्लास उसमे जल्दी के कारण न छप सके थे।

सन् १८८४ ई० में सत्यार्थ प्रकाश का जो सस्करण निकला है उसमें ही सबसे पहले उक्त दोनों समुल्लास सम्मिलित हुए हैं। ऐसा होने से ईसाई तो कम या बिलकुल नहीं किन्तु मुसलमान लोग ईसाइयों के आनरेरी वकील बनकर कभी कभी इस प्रकार का भ्रम फैलाया करते हैं—श्री-स्वामी जी ने उक्त दोनों समुल्लासों को नहीं लिखा था। बल्कि अन्य किसी ने उक्त दोनों समुल्लासों को लिखा है और उनका सत्यार्थ प्रकाश मे लगा दिया है और यही कारण है कि सन् १८८४ ई० मे, उनकी मृत्यु के पश्चात् सत्यार्थ प्रकाश छपा है—इत्यादि

इस प्रकार के भ्रम के निवारणार्थ जानना चाहिए कि सन् १८७५ ई० के सस्करण के दसवें समुल्लास के अतिम अश में जो कुछ लिखा हुआ मिलता है उससे स्पष्ट है कि उन्होंने अन्त के चार समुल्लासों के लिखने का निश्चय किया था।*

किन्तु लिखित रूप में केवल दो समुल्लास सन् १८७५ ई० के सस्करण में स्थान पा सके थे। बाकी दो समुल्लास तेरहवें व चौदहवें उक्त सस्करण मे न शामिल हो सके थे।† कारण यह कि उस सस्करण के प्रकाशन में बहुत जल्दी की गई थी।

ईसाई व मुसलमानों से सम्बन्ध रखने वाले समुल्लास वास्तव में सन् १८७५ ई० के सस्करण के निमित्त लिखे गये थे—इस बात की पुष्टि श्री स्वामी जी की ओर से भेजे हुए एक पत्र से इस प्रकार होती है —

सत्यार्थ प्रकाश कितने अध्याय तक छपा? जितना छपा हो तितना राजा जयकिशनदास के पास भेज दो। जल्दी छापो। यहाँ बहुत से लोग लेने को कहते हैं। इसके बिना बहुत हरकत है और शिक्षा की पुस्तक छपी कि नहीं आगे शुभ हो।

सवत १६३१ मिती माघ ५ बदी शनिवार अर्थात् २३ जनवरी सन् १८७५ ई०।

आगे मुरादाबाद में कुरान के खण्डन का अध्याय शोधने के वास्ते गया रहा सा शोध के आपके पास आया कि नहीं। जो न आया हो तो

*इस निश्चय का उल्लेख उन सस्करणों के दसवें समुल्लास के अतिम भाग में भी मिलता है जो कि सन् १८८४ ई के सस्करण के आधार पर हैं—लेखक।

†इस बात की पुष्टि सस्करण सन् १८८४ ई० अथवा उसके आधार पर छपे हुए समस्त सस्करणों की भूमिका से भी होती है—लेखक।

राजा जयकिशनदास जी को खत लिखो जल्दी छापने के वास्ते भेज देवें और बाइबिल का अध्याय सब शोध करके छाप दो। दो महीने में छापने के वास्ते जो आपने लिखा सो दो महीने में सब पुस्तक छाप दो शुद्ध करके अशुद्ध न होने पावे।*

फलत सन् १८७४ ई० के अंतिम दिनों अथवा जनवरी सन् १८७५ ई० के आरम्भ में ही श्री स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के तेरहवे व चौदहवे समुल्लासों अथवा केवल चौदहवे को लिखा होगा। परन्तु इन दोनों के छपने की नौबत सन् १८७५ ई० के सस्करण में न आई थी और दोनों समुल्लास सन् १८८४ ई० में प्रकाशित हो सके थे।

श्री स्वामी जी ने दोनों समुल्लासों में बाइबिल व कुरान के विषय में वस्तुत थोडा ही थोडा लिखा है जैसा कि तेरहवे व चौदहवे समुल्लासों के अन्तिम शब्दों से स्पष्ट है। हाँ, अब जानना चाहिए कि श्री स्वामी जी ने प्रोटेस्टैंट ईसाइयों की बाइबिल की बाबत ही लिखा है और उनकी पूरी बाइबिल हिन्दी में उस समय पर्याप्त थी। हिन्दी जाननेवालों के लिये अवसर प्राप्त था कि बाइबिल के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकें। परन्तु हिन्दी जानने वालों के लिए हिन्दी में कोई कुरान न था। इसी कारण उन्होंने कुरान को हिन्दी में छपाने का विचार किया था क्योंकि "ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन" द्वितीय भाग प्रकाशित सन् १६१६ ई० में दीनापुर (दानापुर) के बाबू माधोलाल जी के नाम का एक पत्र* जो २४ अप्रैल सन् १८७६ ई० का लिखा हुआ, श्री स्वामी जी की ओर से, अँगरेजी में है उसमें ये शब्द हैं—

The 'Koran" in nagri is entirely ready, but has not been printed yet

कुरान नागरी में पूरा तैयार है परन्तु अभी तक छापा नहीं गया।

श्री स्वामी जी ने चौदहवे समुल्लास से सम्बन्ध रखनेवाली अनुभूमिका में जो कुछ लिखा है उससे इस बात पर प्रकाश पडता है कि हिन्दी में कुरान क्योंकर उन्होंने तैयार कराया था—

'जो कुरान अरबी भाषा में है उस पर मौलवियों ने उर्दू में अर्थ लिखा है उस अर्थ का देव नागरी अक्षर और आर्य भाषान्तर कराके पश्चात् अरबी के बडे बडे विद्वानों से शुद्ध करवा के लिखा गया है।"

हिन्दी में कुरान की तैयारी का श्री गणेश कब हुआ था—इस बात को अभी तक मैं नहीं जान सका। हाँ, इस बात को अवश्य बहुत कुछ

*श्री पं० लेखराम जी द्वारा सगृहीत सामग्री के आधार पर "महर्षि दयानन्द"—उर्दू नाम का जीवन चरित्र सन् १८६७ ई० में तैयार होकर आर्य प्रतिनिधि सभा लाहौर द्वारा प्रकाशित—पृ० २३४

*इस पत्र तथा अन्य १७ पत्रों की असली प्रतियाँ दीनापुर में हैं। मैंने २० जून सन् १८४२ ई० को उक्त सब पत्रों को स्वय देखा है। श्री पंडित भगवद्दत्त जी द्वारा सपादित ऋषि दयानन्द के पत्र व विज्ञापन के दूसरे भाग का पृष्ठ १७ देखना चाहिये—लेखक।

जान सका हूँ कि यह कार्य कब पूरा हुआ था क्योंकि श्री स्वामी जी द्वारा तैयार कराई हुई एक हिन्दी कुरान की वह प्रति मेरी दृष्टि में आई है जो कि पुस्तक रूप में ठीक ठीक अच्छे ढग पर लिखी हुई है और उसके अत में उसके लिखे अर्थात् साफ-साफ नकल किये जाने का समय कार्तिक शुक्ल ६ सवत् १९३५ वि० (३ नवम्बर सन् १८७८ ई०) अकित है । यह प्रति अजमेर में परोपकारिणी सभा के "वैदिक पुस्तकालय" में मौजूद है। ११×७½ इच आकार के ७२२ पृष्ठों की है। पहले ७२२ पृष्ठों में मूल कुरान का अनुवाद है। पृष्ठों के किनारे पर कुछ शब्दों का अर्थ है और कहीं कहीं कुछ टिप्पणियाँ हैं, किन्तु पृष्ठ ७२३ व ७२४ में केवल मूल कुरान का अनुवाद है अर्थात् इन पृष्ठों के किनारों पर भी मूल कुरान का अनुवाद ही है और ३२५ के किनारों पर शब्दार्थ आदि कुछ नहीं है क्योंकि मूल कुरान के अतिम भाग के ही थोड़े से अश का अनुवाद है।

श्री बाबू माधोलालजी के नाम के पत्र के जो शब्द ऊपर दिये गये हैं उन से वस्तुत ऊपर वर्णित (हिन्दी कुरान की) प्रति से अभिप्राय है और इसमे सन्देह नहीं कि अब (सन् १९४३ ई०) तक हिन्दी में कई कुरान छप चुके हैं परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि श्री स्वामीजी महाराज ही पहिले व्यक्ति हैं जिनके उद्योग से सबसे पहिले हिन्दी में कुरान हुआ है और यदि उसके छपने की नौबत उनके जीवन काल या बाद में भी आगई होती तो सोने में सुगंध आ जाती। वास्तव में श्रीस्वामीजी की यह बात कुछ कम मारके की नहीं कि उन्होंने हिन्दी वालों के लिये यह उद्योग किया था कि वे जान सकें कि कुरान में क्या है जिस पर सारे मुसलमान एक मत हैं और पढ़े लिखे या अनपढ़ जिसके सभी भक्त हैं।

अब अत मे यह कहना उचित प्रतीत होता है कि सत्यार्थप्रकाश के सस्करण १८७५ ई० के निमित्त जो सामग्री चौदहवें समुल्लास की थी वह उक्त सस्करण मे शामिल न हो सकी और उसी सामग्री को हिन्दी कुरान की उक्त सामग्री के आधार पर रक्खा गया। निदान सन् १८८४ ई० के सस्करण में चौदहवें समुल्लास की इति श्री कुरान के उक्त हिन्दी प्रति की सामग्री के आधार पर ही अवश्य हुई है क्योंकि चौदहवें समुल्लास में आयतों की सख्या और समीक्ष्य पदों के भाव आदि उक्त प्रति से ही बहुत कुछ मिलते जुलते हैं।

तेरहवाँ समुल्लास

मिशन प्रेस इलाहाबाद द्वारा

प्रकाशित इन ग्रन्थों के आधार पर है —

पुराना नियम—प्रथम भाग (इसमें 'उत्पत्ति' से लेकर "राजाओं की दूसरी पुस्तक" तक है) प्रकाशित सन् १८६६ ई० और दूसरा भाग (इस में "काल के समाचार की पहली पुस्तक" से लेकर 'मलाकी भविष्यद् वक्ता की पुस्तक' तक है) प्रकाशित सन् १८६९ ई०।

नया नियम—प्रकाशित १८७४ ई०

ऐसी दशा में ठीक बात यह है कि सन् १८७५ ई० के सस्करण के लिए यह समुल्लास जैसा तैयार हुआ वैसा ही सन् १८८४ ई० के सस्करण के लिये भी रहा। यदि कुछ सशोधन भी हुआ होगा तो बहुत ही कम।

सत्यार्थ प्रकाश—जयन्ती

(४—१० सितम्बर १९४३)

किस प्रकार मनानी चाहिये ?

(लेखक—श्री आचार्यविश्वश्रवा जी वेद मन्दिर बरेली)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने ४ सितम्बर से १० सितम्बर १९४३ तक सारे देश में सत्यार्थ प्रकाश जयन्ती मनाने का निश्चय किया है। यह जयन्ती किस प्रकार मनानी चाहिये इस सम्बन्ध मे मै कुछ विचार आर्य-जनता के सम्मुख रखता हूँ।

१—एक सप्ताह जयन्ती मनाई जायेगी और सत्यार्थ प्रकाश में १४ समुल्लास हैं अत दो समुल्लास प्रत्येक दिन के प्रोग्राम में रखे जावें। प्रत्येक दिन सार्वजनिक सभाए की जावें और एक विद्वान् प्रत्येक दिन दो समुल्लासों का भाव जनता को प्रत्येक दिन सुनावे।

२—सत्यार्थ प्रकाश के खण्डन मण्डन के बहुत से प्रन्थ बने हुए हैं। उन प्रन्थों का भी अध्ययन करके दो दो समुल्लासों पर विशेष व्याख्यान भी तैयार किया जाय और ऋषि दयानन्द का पाण्डित्य जनता पर प्रकाशित किया जाय।

३—आदिम सत्यार्थ प्रकाश जो स्वामीजी ने प्रथम बार छपवाया था उसका भी साथ साथ अध्ययन करके दो दो समुल्लासों के व्याख्यानों में यह दिखाया जाय कि दोनों सत्यार्थ प्रकाशों में क्या अन्तर हुआ और क्यों। इस विषय में सहायतार्थ स्वामी जी का पत्र व्यवहार जो ६ भागों में मुद्रित है, तथा स्वामी जी के व्याख्यान, और स्वामी जी का नवीन सस्करण का जीवन चरित्र काम में लाया जावे। इन ग्रन्थों की सहायता से आसानी से समझ मे आसकता है कि दोनों सत्यार्थ प्रकाशों में जो अन्तर है वह क्यों। इस सम्बन्ध में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने एक ग्रन्थ लिखा है वह भी देखना चाहिये। उपर्युक्त ग्रन्थ सब जगह मिल जाते हैं। मेरे पास भी ये सब ग्रन्थ हैं यदि किसी को न पता हो तो वे मुझ से इन पुस्तकों का पता पूछलें अर्थात्—

१—स्वामीजी का पत्र व्यवहार ६ भागों में

२—आदिम सत्यार्थ प्रकाश।

३—स्वामीजी के व्याख्यान आदि।

४—सत्यार्थप्रकाश के खण्डन मण्डन के ग्रन्थ।

५—स्वामीजी का नवीन सस्करण का जीवन चरित्र।

६—स्वा० श्रद्धानन्दजी का लिखा ग्रन्थ आदिम सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध मे।

वास्तव मे बात यह है कि सत्यार्थ प्रकाश जैसे अपूर्व ग्रन्थ रत्न में क्या लिखा है इस बात को साधारण जनता नहीं जानती। यदि व्याख्यान

अध्यात्म सुधा

उपासना का फल

(सत्यार्थ प्रकाश से उद्धृत)

समाधिनिर्धूत मलस्य चेतसो
निवेशित स्यात्मनि यत्सुखंभवेत् ।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा,
स्वयं तदन्तः करणेन गृह्यते ॥

यह उपनिषद् का वचन है—जिस पुरुष के समाधियोग से अविद्यादिमल नष्ट हो गये हैं आत्मस्थ होकर परमात्मा से चित्त जिसने लगाया है, उसको जो परमात्मा के योग का सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जा सकता क्यों कि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्त करण से ग्रहण करता है। उपासना शब्द का अर्थ समीपस्थ होना है। अष्टाङ्ग योग से परमात्मा के समीपस्थ होने और उसको सर्वव्यापी सर्वान्तर् यामी रूप से प्रत्यक्ष करने के लिये जो जो काम करना होता है वह २ सब करना चाहिये अर्थात्—

तत्राहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः
(योगदर्शने १ । २ । ३०)

इत्यादि सूत्र पातञ्जल योगशास्त्र के हैं—जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे सर्वदा सबसे प्रीति करे, सत्य बोले, मिथ्या कभी न बोले, चोरी न करे, सत्य व्यवहार करे, जिते न्द्रिय हो, लम्पट न हो और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे। ये पांच प्रकार के यम मिल के उपासना योग का प्रथम अङ्ग है।

शौच सन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वर—
प्रणिधानानि नियमाः ॥

रागद्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहे, धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे, सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढ़ावे, सत्पुरुष का सङ्ग करे और 'ओ३म्' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्य प्रति जप किया करे। अपने

द्वारा सार्वजनिक सभाओं में दो दो समुल्लास प्रतिदिन व्याख्यान करके सुना दिये जावें तो जनता की उत्कण्ठा सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने की अधिक हो जाय।

इसी अवसर पर धन सग्रह या सत्यार्थ प्रकाश सग्रह करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा सिन्ध प्रान्त में वितीर्ण करने के लिये भेजा जावे तो अच्छा है॥

आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पाच प्रकार के नियमों को मिलाके उपासना योग का दूसरा अङ्ग कहलाता है। जब उपासना करना चाहें तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर, बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक मन को नाभिप्रदेश में वा हृदय कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा वा परमात्मा का विवेचन करके परमात्मामे मग्न हो जाने से सयमी होवे। जब इन साधनों को करता है तब उसका आत्मा और अन्त करण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्य प्रति ज्ञान-विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुँच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है। वहा सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और द्वेप रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान अति सूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ स्थित हा जाना निर्गुणोपासना कहलाती है। इसका फल—जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दु ख छूटकर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हा जाते हैं। इस लिये परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना अवश्य करनी चाहिये। इस से इनका फल पृथक होगा। परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा वह पर्वत के समान दु ख प्राप्त होने पर भी न घबराएगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति प्राथना और उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है क्यों कि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रक्खे हैं उस का गुण भूल जाना, ईश्वर को ही भूल जाना कृतघ्नता और मूर्खता है।

(सत्यार्थ प्रकाश ७म समुल्लास २४वीं बार वैदिक यन्त्रालय अजमेर पृ० ११४)

[सत्यार्थ प्रकाश से ये उद्धरण इस उद्देश्य से भी दिये गये हैं कि ऋषि दयानन्द जैसे आस्तिक शिरोमणि को नास्तिक कहने वाले भी भारत में विद्यमान हैं —सम्पादक]

———

सत्यार्थ प्रकाश की विशेषतायें

(पण्डित मदनमोहनजी विद्यासागर वेदालङ्कार प्रेममन्दिर तेनाली मद्रास प्रान्त)

यह अद्भुत ग्रन्थ किसी सम्प्रदाय विशेष की नींव डालने (जैसे कुरान, बाइबिल, ब्रह्मसूत्रों के भिन्न २ भाष्य) या किसी चलते आ रहे पन्थ मत वा वाद के पोषण मे (जैसे भामती) निर्मित नहीं किया गया है।

यह अद्भुत ग्रन्थ किसी देश विशेष की प्रजा के कल्याण के लिये नहीं रचित हुआ है।

यह अद्भुत ग्रन्थ हिन्दू सभ्यता का परिचायक ग्रन्थ नहीं। इसमे एक उच्च दिव्य मानव सभ्यता का दिग्दर्शन कराया गया है।

यह अद्भुत ग्रन्थ वेदमत मानने को इस लिये प्रतिपादित नहीं करता कि इसके रचयिता महर्षि दयानन्द आर्यावर्त मे हिन्दूजाति में अवतरित हुए थे। प्रत्युत इसलिये कि योग समाधि में बैठ उन्होंने 'वैदिकवाङ्मय' का साक्षात्कार किया था। उस 'बोधोदय' के पश्चात् उन्होंने जाना था कि यही 'कल्याणी वाक् है जो बिना जाति कुल मत देश भेद के 'सर्वजनों' के हितार्थ यथार्थ रूप से 'कवि मनीषी परिभू स्वयम्भू' द्वारा ऋषि हृदयों में सर्गादि में आविर्भूत की गई थी। इसका लोप परस्पर कलह वा स्वार्थ वश हो गया था। इसमें उसी "वैदिक सभ्यता" के पुनरुद्धार की रूपरेखा है जैसी कि न भूतो न भविष्यति।

"यह अद्भुत ग्रन्थ समस्त वैदिक विषयों का सरल लोकभाषा में प्रतिपादन करता है।

यह अद्भुत ग्रन्थ समस्त विषयों, ज्ञान की नाना शाखाओं, समस्तमतों का विश्वकोष है। यह मानव जाति के ज्ञान की अक्षयनिधि है, अमूल्य रत्न है।

यह अद्भुत ग्रन्थ मानव जीवन के हर पहलू पर रोशनी डालता है। जन्म से लेकर मरण तक की व्यक्तिगत सामाजिक, सांसारिक व धार्मिक प्रत्येक प्रकार की समस्याओं का विशद एव युक्ति युक्त वर्णन करता है। इसमें मानव जाति (जो कि निरे भौतिकवाद-अविद्या के कारण पतनोन्मुख थी) के सामने एक नया पुरोगम रक्खा है। इसमे मानवजाति (जो कि विशुद्ध अध्यात्मवाद-विद्या के कारण गहरे दुःख में डूबी थी,) को उभारने की उत्तम औषध है। इसमे इहलोक परलोक के समन्वय को किया गया है।

यह अद्भुत ग्रन्थ किसी मनुष्य विशेष की व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति के लिये विरचित नहीं हुआ। इसमें कहीं यह नहीं लिखा कि मैं जैसा कहता हूँ मानो। इसमें 'स पूर्वेषां गुरुः' की महिमा का वर्णन किया गया है, उसकी आज्ञा मानने व उपासना करने को कहा गया है।

यह अद्भुत ग्रन्थ हर विषय पर तर्क से विवेचना करता है। इस बात को इसलिये मानो क्योंकि अमुक धर्मशास्त्र में इसका विधान है

सुमन-संचय

सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव

(१)

उसका नाम निहालसिंह था और वह था एक सरकारी चौकीदार। एक बड़े कस्बे में उसका तबादला हुआ। रात को पहरा देते हुए वह कहा करता था, "पाच हजार वर्ष के सोने वालो जागो।" इस नए स्थान पर भी उसने यही आवाज लगानी प्रारम्भ करदी। वहा के लोग पहरेदारों की 'सोने वालो जागो' इस आवाज के अभ्यस्त थे, अतः इस नई आवाज से उन्हें बहुत आश्चर्य्य और कौतूहल हुआ। अनेकों को इस आवाज का अर्थ जानने की उत्सुकता भी बढ़ी।

एक दिन एक उच्च सरकारी अफसर ने निहालसिंह को अपने पास बुलाकर पूछा "तुम रात को पाच हजार वर्ष के सोने वालो जागो। यह आवाज क्यों लगाते हो।"

निहालसिंह ने उत्तर दिया 'हुजूर' मुझे २) दें तब इसका मतलब बतलादूंगा। अफसर ने तत्काल अपनी जेब से २) निकालकर निहालसिंह के हाथ पर रखे।' निहालसिंह रुपए लेकर बिना कुछ बतलाए अपने घर को चल दिया और जाते समय उसने कहा—"१५-२० दिन के पश्चात् मैं आऊँगा और आपको मतलब समझाऊँगा, आप विश्वास रखें।"

चौकीदार के इस व्यवहार पर आश्चर्य्य होना स्वाभाविक था। अफसर को आश्चर्य्य हुआ परन्तु वे अपनी एक जिज्ञासा को सन्तुष्ट करना चाहते थे अतः वे कुछ न बोले।

निहालसिंह ने उसी दिन वे २) वैदिक यन्त्रालय अजमेर को भेजकर लिखा कि 'सत्यार्थ प्रकाश' की १ प्रति उस अफसर के पास भेजदी जाय "

इस घटना को हुए २० दिन हो गए थे। अफसर के पास 'सत्यार्थ प्रकाश' पहुच चुका था। सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ते ही वे स्वय निहालसिंह के मकान पर गए और उनको स्नेहालिंगन करके कहा 'निहालसिंह' 'पाच हजार वर्ष के सोने वालो जागो' तुम्हारी इस आवाज का ठीक २ अर्थ मेरी समझ में आ गया है। तुम्हारे प्रचार का ढंग बड़ा निराला और बुद्धिमत्ता पूर्ण है।"

निहालसिंह चुप चाप खड़े थे। कुछ क्षण के उपरान्त गद् गद् स्वर में उन्होंने कहा 'हजूर को मेरे पहरे की आवाज का अर्थ भली प्रकार समझ में आ गया है इससे मुझे खुशी है। यदि सँयोग से कोई भाई आपसे इसका अर्थ पूछने

अमुक ऋषि ने ऐसा आदेश दिया है, पूर्वाचार्य्यों ने इसमें इस नीति को स्वीकार नहीं किया है। जो भी विषय सामने आया उसकी अपनी बुद्धि के द्वारा पूरी जांच-पड़ताल करो, परीक्षा करो क्योंकि 'यस्तर्केणानु सन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः'।"

आ जाय, तो कृपा करके आप भी मेरे उपाय का आश्रय लेवें, यही आपसे मेरी प्रार्थना है।"

अफसर ने निहालसिंह की पीठ पर हाथ फेर कर कहा 'निहालसिंह' तुम्हारे मुख से मेरे लिए 'हजूर' शब्द अच्छा नहीं लगता। मेरे लिए आगे से इसका व्यवहार मत करना।" यह कहकर अफसर अपने घर चला गया। निहालसिंह ने उस अफसर के सहयोग से उस कस्बे में शीघ्र ही एक समाज स्थापित करदी और वह समाज आज भी एक सुदृढ़ और विशाल समाज बनी हुई है।

बिजनौर (संयुक्त प्रांत) जिले के आर्य्य सामाजिक जगत् के इतिहास मे महाशय निहाल सिंह का नाम समाज के निर्माताओं में गिना जाता है। उनकी सेवाएँ, और उनका अपना व्यक्तिगत जीवन दोनों बडे आदर के साथ स्मरण किये जाते हैं।

वे न कोई विद्वान् थे, न पंडित और न उपदेशक फिर भी उनके भीतर एक प्रबल भावना थी जिस के कारण वे बिजनौर जिले में कई आर्य्य समाजों के जन्मदाता और सचालक बने। आज भी उन समाजों की इमारतों से और उनके एक एक कोने से निहालसिंह की कीर्ति छटा प्रसारित हो रही है और वे हमारे सामने 'पाच हजार वर्ष के सोने वाले जागो' उनके एक मात्र प्रचार के साधन का रहस्य खोलकर रख रही हैं।"

सत्यार्थ प्रकाश का सम्मान

(२)

यह वह समय था जब महात्मा गाधी के क़लम से आर्य समाज और ऋषि दयानन्द की कुछ अवांछनीय आलोचना निकल गई थी और उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' को निराशाजनक पुस्तक लिख डाला था। आर्य समाज का वातावरण इस घटना से विक्षुब्ध हो रहा था। आर्य समाज के बाहर का विज्ञ—समाज भी महात्माजी की आलोचना से कुछ खिन्न था और समझता था कि इससे आर्य समाज के प्रति अन्याय हो गया है। यह कहा जाता है स्वय महात्मा जी को भी इस अन्याय का कुछ कुछ ज्ञान हो चला था।

उस समय की एक घटना बड़ी उत्तम सुनी जाती है। उन दिनों महात्मा गाधी के अहमदाबाद के आश्रम मे कई आर्य-बन्धु रहते थे। महात्मा जी उन्हें बडा स्नेह करते थे और उनकी भी महात्मा जी के प्रति बडी श्रद्धा थी।

उनमें से एक भाई महात्मा जी की कुटिया में गया। उसके एक हाथ में 'सत्यार्थ प्रकाश' था और दूसरे में 'यग इण्डिया" जिसमें उपर्युक्त आलोचना निकली थी। उसने महात्मा जी से पूछा "महात्मा जी मुझे बताएँ, इन दोनों मे से मै किसको फोडकर फेंक दूँ" महात्मा जी पर अपने प्रिय भक्त के व्यवहार का अर्थ स्पष्ट होते देर न लगी। उन्होंने गम्भीर भाव मे उत्तर दिया 'यग इण्डिया' को। भक्त का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। उसने विनय पूर्वक महात्मा जी से पूछा 'आप मेरा मन रखने के लिए तो ऐसा नहीं कह रहे हैं।' महात्मा जी ने उत्तर दिया 'नहीं।"

भक्त महात्मा जी को सादर प्रणाम करके आश्रम को चला गया। उस समय की उसके हृदय की दशा अनुभव हो की जा सकती है। उसका वर्णन करना कठिन है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

आर्य समाज ज़िन्दाबाद !!

(रचयिता "फणीन्द्र")

अखिल विश्व का होवे नाद ।
आर्य समाज जिन्दाबाद ॥

घर घर धूम मचे त्रिभुवन में।
कली कली में सुमन सुमन मे ॥
प्रकृति नटी मे जड चेतन में।
विश्व-विटप के प्रति जीवन मे ॥

बिखर बिखर बरसे आल्हाद।
आर्य समाज जिन्दाबाद ॥

अगणित स्वर का राग यही हो।
जीवन का वैराग्य यही हो ॥
बलिदानों मे त्याग यही हो।
रक्ताञ्जलि की फाग यही हो ॥

विजय हर्ष का यही निनाद।
आर्य समाज जिन्दाबाद ॥

मलय-सुन्दरी लहर लहर से।
अपनी गुन गुन राग अमर से ॥
भवन भवन से डगर डगर से।
दे सदेश सदा नव स्वर से ॥

आर्य बन्धु होवें आज़ाद।
आर्य समाज जिन्दाबाद ॥

सुर बालाएँ देव दनुज नर।
रवि शशि तारक मय नीलाम्बर ॥
विनयकुञ्ज अरु गिरि शिखरों पर
जीव चराचर कहें निरन्तर ॥

आर्य समाज जिन्दाबाद ।
आर्य समाज जिन्दाबाद ॥

आर्य वीरदल-बौद्धिक शिक्षण

[४]

आर्यवीर-दल के कर्तव्य

रक्षा तथा सेवा

(लेखक—श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति मन्त्री अखिल भारतीय आर्यवीर-दल समिति तथा सार्वदेशिक आ० प्र० सभा देहली)

आर्यवीर दल का प्रधान लक्ष्य आर्यधर्म, आर्यजाति और आर्य संस्कृति के गौरव की रक्षा और वृद्धि करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये आर्यवीर-दल आर्यजाति में क्षात्र धर्म को जागृत तथा संगठित करेगा। क्षत्रिय का कार्य रक्षा करना है। आर्यवीरों का कार्य भी आर्यत्व की रक्षा करना होगा।

इस प्रसंग में आर्यवीर-दल के उद्देश्य संख्या २ व ३ का परस्पर सम्बन्ध समझाने के लिये कुछ शब्द कहना अत्यावश्यक है। दूसरा उद्देश्य है जनता में सेवाभाव का प्रचार करना और तीसरा उद्देश्य है आर्यधर्म, सभ्यता और संस्कृति की समस्त उपायों द्वारा रक्षा करना। इन उद्देश्यों के अनुसार आर्यवीरों के दो कर्तव्य बनते हैं—१ सेवा और २ रक्षा। इन दोनों के परस्पर सम्बन्ध को समझना बहुत आवश्यक है।

कई बार रक्षा और सेवा को परस्पर विरोधी भाव समझा जाता है। आर्यवीर-दल के कार्यकर्ताओं में भी कभी कभी इस सम्बन्ध में भ्रान्ति पैदा हो जाती है। कहा जाता है कि रक्षा करना क्षत्रिय का धर्म है और सेवा करना शूद्र का। यदि यह मानलें तो यह आक्षेप सत्य ही होगा कि आर्यवीर दोनों वर्णों के कर्तव्य का पालन कैसे कर सकेगा? इस रीति पर सोचने वाले लोग सेवा भाव की हसी उड़ाते हुए देखे गये हैं। वह कहा करते हैं कि बीमारों को दवा बाँटना या मेलों पर पानी पिलाना आर्यवीरों का कार्य नहीं। उनका काम तो रक्षा करना है।

ऐसे सज्जन यदि क्षात्रधर्म के असली महत्व पर विचार करें तो उन्हें मालूम हो जायेगा कि सेवाभाव क्षात्रधर्म का आवश्यक अंग है। सेवा की भावना से शून्य क्षात्र-भाव केवल पाशविक बल का दूसरा रूप ही बन जाता है। वही क्षात्र-बल संसार को सुख दे सकता है जो सेवाभाव का सहयोगी हो। यदि हम यह कहें कि शक्ति और सेवा के समन्वय का नाम क्षात्रधर्म है अनुचित न होगा। जो शक्ति दूसरों की सहायता के लिये प्रयोग में लायी जाय—उसी के लिये धर्म शब्द का प्रयोग हो सकता है, जिस शक्ति का प्रयोग सेवा की भावना से रहित स्वार्थ बुद्धि से किया जाय उसे हम धर्म नहीं कह सकते केवल पाशविक बल कह सकते हैं।

क्षात्रधर्म का रथ दो भावनाओं के पहियों पर चलता है। इन दोनों-रक्षा की भावना और सेवा की भावनाओं—के साथ साथ चले बिना क्षात्रधर्म प्रगतिशील नहीं रह सकता। आर्यवीरों को अपने हृदयों में इन दोनों भावनाओं का समान रूप से स्थान बनाना चाहिये। उनके रक्षा कार्य में सेवकों का सा विनीत भाव रहना चाहिये और सेवाकार्य में सच्चे क्षत्रियों का सी निर्भयता दृढ़ता और "कार्यं वा साधयेय शरीर वा पात येयम्।" (कार्य को सिद्ध करेंगे या मर मिटेंगे) की भावना रहनी चाहिये।

यदि आर्यवीर सच्चे आर्यत्व के लिये कोई आदर्श अपने सामने रखना चाहते हों तो दो नाम सुझाये जा सकते हैं। वह दो नाम हैं— राजा रामचन्द्र और स्वामी दयानन्द के। हमने आर्यवीर के दो कर्तव्य बतलाये हैं। उन दोनों कर्तव्यों के यह दो उज्वल नमूने हैं। राजा राम चन्द्र क्षत्रिय थे, उन में रक्षा की भावना मुख्य थी, परन्तु कौन नहीं जानता कि उस रक्षा की भावना और अतुल शक्ति के साथ साथ उनमे विनय और परोपकार की भावना भी पूर्णरूप से विद्यमान थी। इसीलिये वह आदर्श क्षत्रिय माने जाते थे। ऋषि दयानन्द ब्राह्मण थे, उनमे परोपकार की और ससार सेवा की भावना मुख्य थी परन्तु उनके सारे जीवन में निर्भयता दृढता और शक्ति का ऐसा प्रदर्शन मिलता है कि उसके आगे क्षत्रियों को भी मात हो जाना पडे। इसी कारण हम उन्हें आदर्श ब्राह्मण कह सकते हैं। यह दोनों भिन्न भिन्न वर्णों में होते हुए भी आदर्श आर्य, आदर्शवीर और अतएव आदर्श आर्यवीर कहे जा सकते हैं। आर्यवीरों को व्यक्तिगत रूप से इन्हीं आदर्शों को सामने रखना चाहिये॥

सत्यार्थ प्रकाश जब्त क्यों हो ?

(लेखक—श्री विष्णुदत्त जी कविरत्न, देहली)

यह प्रश्न केवल आर्यसमाज पर ही लागू नहीं होता वरन् यह तो सारी हिन्दूजाति के ह्रास का कारण है। 'सत्यार्थ प्रकाश' ने केवल आर्य-जाति का ही उद्धार नहीं किया सारी हिन्दू जाति के अवनत जीवन को परिष्कृत, उन्नत तथा उज्ज्वल बना दिया।

विजातिया आकर हिन्दु जाति पर अत्याचार अन्याय का आक्रमण करती रही हैं परन्तु धन्य है उस सत्यार्थ प्रकाश रचयिता को जिसने अन्धकार मय ससार की आँखों के सामने से पाप की पट्टिया हटाकर सत्य का प्रकाश प्रज्वलित किया। 'स्वामीजी' के अगाध अनुभव ने हम (ससारियों) को 'सत्यार्थ प्रकाश' रूपी प्रदीप प्रदान किया है, आर्यजाति के हृदय-कपाट तो इसके द्वारा खुले ही हैं अन्य विदेशी जातियों ने भी इससे बहुत लाभ उठाया है।

यदि ये लोग 'सत्यार्थ-प्रकाश' की कृतज्ञता को नहीं मानते हैं तो यह इनकी भाग्यहीनता है। सत्यार्थप्रकाश तो प्रत्येक धर्म का पथ-प्रदर्शक रहा है। इसने किसी के धर्म में अड़चन नहीं डाली सब धर्मों मे जो त्रुटिया थीं उनको अवश्य ही सत्यार्थ-प्रकाश ने निकाल कर बाहर किया है। यह कोई अनिष्ट की बात नहीं। धम का सच्चा स्वरूप 'सत्यार्थप्रकाश' ने निरूपण किया है। जो विधर्मी 'सत्यार्थप्रकाश' को अपने धर्म के विरुद्ध समझते हैं या उसमें अपने धर्म के विरुद्ध बातों का निरीक्षण करते हैं यह उन लोगों की अज्ञता तथा बुद्धि न्यूनता है।

किसी सत्य को समझने के लिये विवेचनात्मक साधारण बुद्धि की आवश्यकता है। निष्पक्ष होकर प्रत्येक ग्रन्थ का अवलोकन ही पाठक-परिचय है। यह पाठक ही स्वाध्याय का अश प्राप्त करके पूर्णरूप से आलोचक बन सकता है।

सत्यार्थ प्रकाश मुसलमानों के 'कुरान' की भान्ति नहीं जिसमें सैकड़ों फ़तवे इस प्रकार के भरे पड़े हैं कि जो कोई उनके धर्म के विरुद्ध कुछ कहेगा उसको कत्ल कर दिया जायगा।' 'उनका धर्म विरोधी ससार में जीवित ही नहीं रह सकता।'

यह बड़ी विचित्र बात है। अपने२ विचारों के अनुसार अपना मत प्रकट करना प्रत्येक मानव के अधिकार में है। किसी भी धर्म पर आरूढ़ होने से पूर्व प्रत्येक धर्म धारण करने वाले उस धर्म में त्रुटिया देखते हैं।

इसमें मुसलमानों को उछल कूद नहीं करनी चाहिये। हिन्दुओं को वह सगठन के भूत से डराना चाहते हैं। हिन्दू ऐसे कापुरुष, निर्बल और डरपोक नहीं। सत्यार्थ प्रकाश पर झूठे लाञ्छन लगाकर इसको अप्रसिद्ध, कुरुचिकर तथा दूषित नहीं ठहराया जा सकता।

आर्य जाति के लिये सत्यार्थ प्रकाश एक कोट है, जो शत्रुओं के आक्रमण से बचा रहा है

और भविष्य में भी बचायेगा। हम उन महान्धों से पूछते हैं कि तुम लोग सत्यार्थ प्रकाश के पीछे क्यों पड़े हो ? इन व्यर्थ की धाधली बाजियों से आर्यजाति का ह्रास नहीं हो सकता। सत्यार्थ प्रकाश' पर अबतक कई झटके आये परन्तु यह 'हड़ कोट' टस से मस न हो सका। आज मुट्ठी भर भुनगे इस फ़ौलादी दीवारों वाले किले को ठेस पहुँचा सकते हैं ? कभी नहीं पहुँचा सकते। यह हुल्लड़, यहवावेला मचाकर तुम सिंध या भारत सरकार से इस को जब्त करा दोगे ?

अरे इसके विरुद्ध तो कई बार झगड़े चल चुके परन्तु फिर भी वही सत्यार्थ प्रकाश और वही आर्यजाति। बस एक सिंधी भाषा में संस्करण होने से ही फूक सरक गई। भारतवर्ष मे सब मिलाकर लगभग ३६००० भाषाऐं बोली जाती हैं। हम चाहते हैं कि ईश्वर हमारी जाति मे शक्ति दे, बल दे, बुद्धि दे, जिससे हमारी थाती 'सत्यार्थ प्रकाश' भारत की सब भाषाओं में छापा जाये और इसका प्रचार हो।

हम भारत में सत्यार्थ का ही प्रकाश चाहते हैं। इसी की पताका के नीचे भारत की प्रत्येक जाति को सुरक्षित रखना चाहते हैं। भारत मे कम से कम कोई ऐसा मानव न हो जो 'सत्यार्थ प्रकाश' का पाठ न करता हो। हम इस सिद्धान्त को सिद्ध करने वाले हैं। भारत धर्मों का सिरमौर 'आर्य समाज' है हिन्दूजाति का बच्चा बच्चा बलिदानों के लिये तैयार हो जायगा। सत्यार्थ प्रकाश हमारा सर्वस्व है। जब सत्यार्थ प्रकाश को छिन्न भिन्न कर दिया जायगा तो यह समझना चाहिये कि आर्यजाति को ही असगठित कर दिया गया है सुना है कि विधर्मी हमारे सत्यार्थ प्रकाश में से कुछ समुल्लास उड़ाना चाहते हैं। उन को यह मालूम नहीं कि सत्यार्थ प्रकाश आर्यजाति का अंग है। यदि इसके एक पृष्ठ को भी अलग छू दिया गया तो एक आर्य के रोम का उखाड़ लिया गया। आप जानते हैं कि शरीर पर खड़े हुए रोमों म से यदि एक रोम कोई तोड़ने की चेष्टा करे तो उसका कितना कष्ट होता है। यह हम नही होने देंगे-सत्यार्थ प्रकाश में स एक समुल्लास तो बहुत दूर की बात है एक पंक्ति मे से एक अक्षर या बिन्दु तक अलग नहीं होने देंगे।

हम पर इस प्रकार के अत्याचार करने के पश्चात् क्या अन्यायी सुख और शान्त से जीवन व्यतीत कर सकते है, नही और कदापि नहीं। न हमको चैन पडेगा और न हम उनको आराम चैन लेने देंगे। सोते शेर की आख में उगली घुसाकर शेर के सामने से कोई भाग नहीं सकता।

जिनको पहले ही मृत्यु के पश्चात् जीवन नसीब होना ही मुश्किल है, उनको तो बात ही क्या ! उनकी मृत्यु हराम कर देंगे। उन्होंने क्या समझा है हिन्दुओं को (आर्यों को)। हिन्दू अलग नहीं है—सारी जाति सत्यार्थ प्रकाश के प्रश्न पर टूट पडेगी। आए साहिब सत्यार्थ प्रकाश को जब्त करने की आयोजना करने वाले, सभाल कर आगे कदम बढाना चाहिए।

इन जरा २ सी बातों से हिन्दूजाति भागने वाली नहीं फिर भी हिन्दुओं के लिये सत्यार्थ प्रकाश का जब्त हो जाना बड़ी लज्जा और शर्म

की बात होगी। यदि यवनों के उद्योग सफल हो गये तो हिन्दुओं को चुल्लू भर पानी में डूबने का भी अधिकार न होगा हमारी धार्मिक पुस्तकों को असत्य दोषारोपण के द्वारा जब्त कराने मे आर्यों (हिन्दुओं) की कमजोरी ही प्रकट होगी फिर आर्य (हिन्दु) कहलाने का अधिकार भी छिन जायगा—बस केवल 'काफिर' ही कहे जाओगे। मतान्ध अहिन्दु हमको अब क्या कोई पवित्र दृष्टि से देखते हैं अब भी उनका वश चले तो हिन्दुओं का पानी तक के लिये विवश करदे। परन्तु इनके वश की कोई बात ही नहीं।

सत्यार्थ प्रकाश के विषय में हमको पूरा २ आन्दोलन उठाना चाहिये, सिन्ध मे प्रचार के लिये सिंधी प्रचारक भेजने का आयोजन करना चाहिये। समाचार पत्रों, पत्रकारों, लेखकों तथा व्याख्यानदाताओं से प्रार्थना है कि वह भी इस कठिन समय मे अपने भरसक प्रयत्न से सत्यार्थ प्रकाश' के जब्त न होने का आन्दोलन करें। प्रतिदिन पत्रों में सत्यार्थ प्रकाश के ऊपर लेख लिखे जाए। सत्यार्थ प्रकाश की कथाएँ हों। सभाओं मे सत्यार्थ प्रकाश की चर्चा हो।

हमे चाहिये कि हम सत्यार्थ प्रकाश के लिये ही जीवित रहें। सत्यार्थ प्रकाश की रक्षा करना हमारा परम धर्म हो। प्रचारार्थ हम सत्यार्थ प्रकाश की पुस्तकें आवश्यकतानुसार मुफ्त वितरण करे। सिंध में महिलाओं को सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार के लिये सतर्क किया जाए। स्त्रिया घर२ में जाकर इसका प्रचार करें॥

सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय का महत्त्व

(कुछ निजी संस्मरण)

(लेखक—श्री पण्डित गङ्गाप्रसाद जी एम ए रिटायर्ड चीफ जस्टिस
प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ।)

सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय सस्करण ऋषि दयानन्द के जीवन काल में सशोधित और परिवर्धित होकर सन् १८८४ ई० मे प्रकाशित हुआ था और मेरी आयु उस समय १३ वर्ष की थी। मेरे पितामह लाला फकीरचन्द जी ऋषि दयानन्द के पुराने भक्त और आर्य समाज मेरठ के सभासद् थे। मेरे विचार सनातनी थे पर मुझ को पूर्व से ही धर्म की ओर रुचि थी। मुझ को याद है कि उस समय मैं नित्य स्नान करके विष्णु सहस्र नाम का पाठ किया करता था, और शिव मन्दिर में जल चढाता था। प्रति रविवार को नगर से बाहर एक सरस्वती के मन्दिर मे और मगलवार को शिव मन्दिर में घी का दीपक जलाने जाया करता था। अपने पितामह के साथ में मेरठ आर्य समाज के विशेष अधिवेशनों में जाता था। मन्त्रादि सुनाने पर कई बार मुझको पारितोषिक भी मिले। परन्तु मेरे विचार पूर्ववत् ही रहे।

सन १८८५ में जब मैंने मिडल परीक्षा पास की मेरे पितामह जी ने सत्यार्थ प्रकाश मोल लेकर सुनाने के लिये मुझ को दी। वे वृद्ध थे, लेटे रहते थे, मैं उनको पढकर सुनाया करता था। इस प्रकार मुझ को सत्यार्थ प्रकाश का कुछ भाग पढने का अवसर मिला। शेष बहुत सा भाग मैंने स्वय पढा, कुछ भाग एक से अधिक बार भी पढा होगा मेरे विचार बिलकुल पलट गए। मै मेरठ समाज के साप्ताहिक सत्सग में जाने लगा। मेरा उत्साह उस समय कुछ विचित्र ही सा था। मेरा बहुत सा समय अपने सहपाठी विद्यार्थियों तथा अन्य लोगों के साथ बहस में व्यय होता था। सन् १८८६-८७ में मैंने अपने घर पर ही एक आर्य डिबेटिंग क्लब स्थापित किया जिसका मै प्रधान बनाया गया और मेरे मित्र स्वर्गीय प० घासीराम जी मत्री बने। बहुत से विद्यार्थी और अन्य युवक सभासद् हुए। यह सस्था मेरठ में अब तक चल रही है।

सन् १८८७ मे मै हाई स्कूल की परीक्षा पास करके आगरा कालिज में चला गया और वहाँ बोर्डिंग हौस मे रहा। वहाँ बोर्डिंग हौस में भी आर्य डिबेटिंग क्लब स्थापित करने का यत्न किया परन्तु सुपरिटेंडेंट के विरोध करने से वह बोर्डिंग हौस के समीप राजामण्डी मे एक आर्य समाजी विद्यार्थी (स्व० ठाकुर हनुमन्तसिंह जी) के घर पर रक्खी गई। यह सस्था भी तब से बराबर चल रही है।

आगरे में मेले बहुत होते हैं और सब ही

मेलों में आर्य समाज की ओर से प्रचार होता था, जिस में मैं भाग लिया करता था। जिस प्रकार विना सकोच मैं उस समय भाषण कर सकता था उसका विचार करते हुए मुझको कुछ आश्चर्य सा होता है। कालिज के बड़े अवकाश में मैं मेरठ जिले के भीतर समाजों में व्याख्यान देने को जाया करता था और कई बार जिले से बाहर मुरादाबाद, बदायू, बरेली आदि स्थानों में भी गया।

आर्य समाज का वह युग भी वर्तमान समय से बहुत भिन्न था, आर्य्यों मे अपूर्व उत्साह और प्रेम था जो अब देखने मे नहीं आता। एक प्रगति शील सस्था के आरम्भ काल में ऐसा होना कुछ स्वभाविक भी था। समाजों की सख्या बहुत कम थी। वैतनिक उपदेशक बहुत कम—नाम मात्र ही का थे हरएक सभासद् उपदेशक था वा उपदेशक का काम करने को तय्यार था। बहस मुबाहसों और शास्त्रार्थों की भी भरमार थी। इन सब में सत्याथप्रकाश रामबाण का काम करता था।

आगरा कालिज के सस्कृत प्रोफेसर श्री भट्टाचार्य्य से मेरा धार्मिक विषयों पर बहुधा वार्तालाप होता था। उन पर आर्य्य समाज के सिद्धान्तों का काफी प्रभाव पड़ा और उन्होंने सन् १८९१ ई० मे सत्यार्थ प्रकाश का बगला भाषा मे अनुवाद किया जिस के लिये श्री राव उमराव सिह रईस कुचेसर ने जिन से मेरा परिचय था उनको पुरस्कार दिया। सत्यार्थ प्रकाश का दूसरी भाषा मे शायद यह पहला ही अनुवाद हुआ। पीछे २ भारत की सभी भाषाओं में उसके अनुवाद होकर प्रकाशित हुए और अगरेजी फ़रासीसी व जर्मन भाषा में भी अनुवाद हो गये।

आर्य समाज के साहित्य में सत्यार्थ प्रकाश के समान और किसी ग्रन्थ का प्रचार नहीं हुआ। सार्वदेशिक सभा, आर्यसाहित्य मडल तथा वैदिक प्रेस अजमेर द्वारा लागत से भी कम मूल्य अर्थात् ।) मूल्य पर उसके कई सस्करण दस दस सहस्र प्रतियों के छप कर बिके।

उसके इतने अधिक प्रचार का एक मुख्य कारण यह है कि उसमें जीव, ईश्वर, सृष्टि, प्रलय, बन्ध मोक्ष, वर्ण, आश्रम इत्यादि वैदिक धर्म के सभी सिद्धान्तों की उत्तम और सरल रूप से विस्तार के साथ व्याख्या की गई है जिसमें युक्ति के अतिरिक्त वेद और शास्त्रों के प्रमाण भी दिये गये हैं। शिक्षित हिन्दूजनता के लिये जो पौराणिक रूढियों और अन्ध विश्वासों के कारण वर्तमान हिन्दू धर्म से घृणा करने लग गई थी धर्म का एक ऐसा मार्ग मिल गया जो युक्ति और शास्त्र दोनों के अनुकूल था और उन्होंने उसको सहर्ष ग्रहण किया।

वैदिक धर्म के सिद्धान्तों की व्याख्याओं के अतिरिक्त सत्यार्थ प्रकाश मे अन्य सब धर्मों की समालोचना भी युक्तिपूर्वक की गई है। कुछ लोग इस पर आपत्ति उठाकर इसको सत्यार्थ प्रकाश का दोष रूप समझते हैं और कहते हैं कि श्री स्वामी जी ने बहुत कड़ी वा अनुचित समालोचना की है। ऐसा कहने वाले इस बात को भूल जाते हैं कि ऋषि दयानन्द एक सुधारक थे, यह कहना अत्युक्ति न होगा कि वे इस युग

सत्यार्थ प्रकाश-प्रमाण-संख्या-अनुक्रमणिका

(लेखक—पं० बालमुकुन्द 'मिश्र' साहित्यालङ्कार)

युग के क्रान्ति कारी श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती विरचित 'सत्यार्थ प्रकाश' आर्य भाषा के ग्रन्थों की द्वितीयावृत्ति से पचमावृत्ति से पूर्व तक तो प्रमाणों के अते पते यों ही चलते रहे। सन् १८९७ ई० में जब सत्यार्थ प्रकाश की पाचवीं आवृत्ति निकली तो उसमें प्रमाणों की जॉच-पड़ताल हुई। जैसा कि पचमावृत्ति सत्यार्थ प्रकाश के प्रारम्भ में निवेदन किया गया है—

(१) " पंडित लेखराम और लाला आत्माराम जी ने कृपा करके अन्य पुस्तकों के हवाले की एक सूची दी, उन सबको सामने रख कर "आवश्यकतानुसार" इसमे उचित शुद्धियॉ की गई हैं।"

शिवप्रसाद, मत्री प्रबन्धकर्त्री सभा,
वैदिक यत्रालय, अजमेर।

इसमे कोई सशय नहीं पचमावृत्ति में प्रमाणों को दुरुस्त करने से किसी सीमा तक 'सत्यार्थ प्रकाश' मे अनजाने से हुए, दोष निवारण हो गए, परन्तु वह सशोधन भी असफल रहा। पचम सस्करण के बाद के सभी सत्यार्थ प्रकाश के सस्करणों मे प्रतीक विषयक अनिवार्य सशोधन होता रहा है। यहा तक कि सन १९३५ की द्वितीयावृत्ति आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर, द्वारा प्रकाशित 'सत्यार्थ प्रकाश' मे 'इस सस्करण की विशेषताए, प्रकरण मे स्पष्ट किया गया है—

(२) "अनेकों उद्धरणों के पते जो सत्यार्थ प्रकाश मे नहीं मिलते थे, इस सस्करण में दे दिये गये हैं।"

मथुरा प्रसाद शिवहरे,
मैनेजिंग डाइरेक्टर, आ० सा० म० लि० अजमेर।

अब हम, 'सत्यार्थ प्रकाश प्रमाण-सख्या-अनुक्रमणिका' तेरहवें सस्करण से सकलन करके रखते हैं। सत्यार्थ प्रकाश का तेरहवॉ सस्करण १९१६ ई० मे ४००० की सख्या में प्रकाशित किया गया था। प्रकाशक—वैदिक यन्त्रालय अजमेर—है।

के अर्थात् १९वीं शताब्दी के सबसे बडे सुधारक थे। उन से पूर्व भारत वर्ष सोया हुआ पड़ा था, उन्होंने उसको जगाया। यदि कोई मनुष्य ऐसी गाढ़ी निद्रा में पड़ा हो कि पुकारने से न जगे तो उस के हाथ पॉव वा शरीर को हिलाने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार देश में जो अन्ध विश्वास, दुर्विचार, कुप्रथा, असत्य मत फैले हुए थे उनको दूर करने के लिये तीव्र आलोचना और आन्दोलन की आवश्यकता थी। हरएक सुधारक के लिये ऐसा करना अनिवार्य होता है। महात्मा गौतम बुद्ध, म० ईसा, पैगम्बर मुहम्मद, भ० कबीर, गुरु नानक आदि सब ही को अपने समय की प्रचारित बुराइयों के विरुद्ध सग्राम करना पड़ा। सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका और अन्त के ४ समुल्लासों की अनुभूमिकाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऋषि दयानन्द का अभिप्राय आलोचना से किसी के दिल को दुखाना नहीं था किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करना था।

ग्रन्थ	स			मु				ल्ला			स		कुल संख्या
	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	
	उद्धरण-संख्या												
१ वेद	१२		६	१२	१	६	१६	१८	३	२	११		९०
२ ब्राह्मण		१	१	३	४	१	I६	२	१		७		२६
३ उपनिषद्	११	१	८		८		१३	१३	९	II१	१४	१	७८
४ गृह्यसूत्र	८		४	२			१			१			१६
५ स्मृति	३	२	३०	७७III	२८	१८९	१	५	·६	·०	१९		३१०
निरुक्त			१	३			२				१		७
६ दर्शन			५९				१३	१२	१५		१८	१	११३
महाभाष्य		१	१							२	१		५
चाणक्य और(वृद्ध चा)		१			२					[१]	[२]		६
महाभारत(श्रीमद्गीता)				१३			[१]	[१]	[१]	२	१		१९

उपर्युक्त ग्रन्थों की प्रमाण सख्या का कुल योग = ६७०

सत्यार्थ प्रकाश में आए उपर्युक्त ग्रन्थों के उद्धरणों के योग के अतिरक्त निम्न अन्य अवशेष ग्रन्थों के प्रमाणों की सख्या इस प्रकार है—

द्वितीय समुल्लास में—सुश्रुत के ३ वचन।

सप्तम समुल्लास में—२ कारिक और १ अष्टाध्यायी सूत्र।

दशम समुल्लास में—१ वचन शार्ङ्ग धर का।

एकादश समुल्लास में—भाषा पद्य १७। सिद्धान्त रहस्य ८ पद्य। तत्र ग्रन्थों के १७ प्रमाण। हेमाद्रि के ८। गोपाल सहस्र नाम २ और २ पद्य चारवाक दर्शन। एक २ अवतरण निम्न सब ग्रन्थों का—वाल्मीकि, अष्टाध्यायी, भोज प्रबन्ध, पाण्डव गीता, प्रहलादव, रामानुजपटल पद्धति। श्री भागवत पुराण के ४ प्रमाण।

द्वादश समुल्लास में—प्राकृत भाषा ५३। जैन ग्रन्थों के २४। बौद्ध धम १८। चारवाक दर्शन के १४ पद्य और अमर कोष के ३ पद्य।

I चार महा वाक्यों सहित। II तैत्तिरीय-आरण्यक। III देव ऋषि-पितृतर्पण-वैश्वदेव-दिग्भाग, इनके वाक्य मनुस्मृति आदि के आर्ष ग्रन्थों के हमारी गणना से अलग हैं।

१ ऋग्-यजु-साम-अथर्व ।
२ शतपथ (यजुर्वेद ब्रा०) षड्विश ।
३. तैतरीय कठ, मुण्डक, केन, छान्दोग्य, श्वेताश्वर ।
४ आपस्तब, प्रतिज्ञा कात्यायनकृत ।
५ मनु, पाराशर ।
६. पातञ्जल, सॉख्य न्याय वैशेषिक, वेदान्त आदि ।

उपर्युक्त तालिका में समुल्लास प्रथम से द्वादश तक के प्रमाण ही सकलन किए गए हैं। सत्याथ प्रकाश की भूमिका, १३ और १४ वें समुल्लास' स्वमतव्या मतव्य में उपयुक्त प्रमाणों की गणना नहीं की गई है।

हमारी तालिका के मध्य आए हुए लापता फुटकर, बनावटी पद्य वचन, सूत्र, श्लोकों की गणना हमने कहीं २ अनावश्यक समझ कर नहीं की है।

इस तालिका के प्रकार में यह बात विस्मृत नहीं की गई है,—प्रमाणों के पूरे पाद अधूरे वाक्यों छोटे-छोटे टुकड़ों को भी गणना मे हम ने 'एक संख्या' में ही प्रमाण स्वीकार किया है।

त्रयोदशावृत्ति सत्यार्थ प्रकाश के अलावा अन्य आवृत्तियों के अनुसार हो सकता है कि यह प्रमाण-सकलन ठीक न ठहरे। इसका कारण समय समय पर सत्यार्थ प्रकाश का थोड़ा बहुत शाब्दिक प्रतीक विषयक सशोधन होते रहना है। जैसा कि हम वैदिक यन्त्रालय अजमेर द्वारा प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश की पचमावृत्ति और आर्य सस्ता साहित्य मडल, अजमेर द्वारा प्रकाशित सत्याथ के द्वितीय सस्करण के 'निवेदन' अवतरण देकर व्यक्त कर चुके हैं—'आवश्यकता अनसार अनिवार्य सत्यार्थ प्रकाश में सशोधन अवसर अवसर पर होते रहे हैं।'

सत्यार्थ प्रकाश के लगभग बीस सस्करणों का स्वाध्याय करने का मुझे पुनीत अलभ्य अवसर मिला है। सत्यार्थ प्रकाश प्रथमावृत्ति को छोड कर अवशेष सभी आवृत्तियों में प्रमाण अवतरणों की सख्या आठ सौ (८००) से लेकर नौ सौ (९००) तक के मध्य ठहरती है इनसे ऋषि दयानन्द की अगाध विद्वत्ता का परिचय मिलता है॥

—: सत्यार्थ प्रकाश हमारा है :—

(लेखक—श्री प० सूयदव जा शमा साहित्यालङ्कार सिद्धान्त शास्त्री,
एम० ए० एल० टा०, अजमेर ।)

(१)

शतश वर्षों से भारत के, आँगन मे अँधियारा था।
अड बड पाखण्ड खण्ड ने, पूरा पास पसारा था ॥
दम्भ द्वेष के दावानल ने, प्रेम प्रसून पजारा था।
वन्य वृक्षों ने भारत भुवि का भव्योद्यान उजारा था ॥

(२)

उस तमसावृत गगनागन मे दयानन्द-रवि उदय हुआ।
जगद् विजयिनी आर्य जाति की, देख दुर्दशा सदय हुआ ॥
सत्य अर्थ के सुप्रकाश से तमस तोम का निलय हुआ।
अखिल आर्य जगती का अचल, अधकार से अभय हुआ ॥

(३)

सत्य अर्थ का पुण्य प्रकाशन, चिर सत्यार्थ प्रकाश करे।
मृत मानव मे जीवन ज्योती, नित सत्यार्थ प्रकाश भरे ॥
हत भाग्यों पर हाथ कृपा का, प्रिय सत्यार्थ प्रकाश धरे।
दीन देश के दारुण दुख को, शुचि सत्यार्थ प्रकाश हरे ॥

(४)

वह सत्यार्थ प्रकाश हमारा प्राणों से भी प्यारा है।
आर्य जाति की डगमग नौका, का प्रलम्ब पतवारा है ॥
वही हमारा जीवन धन है, केवल एक सहारा है।
मृतक राष्ट्र के हेतु निरन्तर बहता अमृत धारा है।

(५)

कौन शक्ति है जग मे जो रवि, के प्रकाश को मिटा सके?
कौन शक्ति है जो पर्वत के, तुग शृङ्ग को लिटा सके?
कौन शक्ति है जो सागर के चढ वेग को घटा सके?
कौन शक्ति है जो ऋषि के उस अमर ग्रन्थ को हटा सके?

सत्यार्थ प्रकाश-गौरव

(रचयिता श्री ओंकार मिश्र शास्त्री, विद्याभूषण भू० पू० उपाध्याय गु० कु० झज्जर)

ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश महान्
मुनीश्वर का उज्ज्वल वरदान
सुधारक सस्कृत का सज्ञान
ज्ञान की परिपूरित है खान ॥१॥

तमिस्रा का करता है ह्रास
विश्व को देता विमल विकाश
वेद का मजुलसा आभास
सत्य की सत्य सत्य पहिचान । २॥

ईश का दिव्य स्वरूप अतोल
यौक्तिक वर्णित है अनमोल
सदन शिक्षा का सुंदर खोल
बजाता विद्या वेणु महान् ॥३॥

यवस्था आश्रम की मणिमाल
पिरोकर रखदीनी तत्काल।
जानलो राजनीति का हाल
रीति का दर्पण दीना दान ॥४॥

ईश्वर वेद विषय निर्भ्रान्त
सृष्टि के अद्भुत हैं सिद्धान्त।
अविद्या विद्या मुक्ति ससान्त
भक्ष्याभक्ष्य वस्तु का ज्ञान ॥५॥

देश में अगणित मत अनेक
बन्द कर दीने हैं सविवेक।
सुवैदिक धर्म मान्य है एक
सकल भूमण्डल लेवे जान ॥६॥

नास्तिक बौद्ध जैन, चारवाक,
तर्क से मूक विवश है वाक
ताव मे रक्खी बाइबिल पाक
काँपती थर थर खड़ी कुरान ॥७॥

जो मतमुनि के मान्य अमान्य
विश्व को होवें विदित वदान्य।
लिखे हैं अतिम मे प्रामाण्य
निहित है इनमे जग कल्याण ॥८॥

नहीं है पक्षपात का लेश
भूमिका दर्शनीय सविशेष
'प्रणव" का देने को सन्देश
सत्य है स्वर्णिमसा सोपान ॥६॥

हसने होकर परम प्रसन्न
क्षीर से किया नीर को भिन्न।
न होना इससे कोई खिन्न
शत द्वय पुस्तक प्रबल प्रमाण ॥१०॥

---

(६)

है "सत्यार्थ प्रकाश' हमारा, तन धन उस पर वारेंगे।
प्राणों की अन्तिम आहुति से भी हम उसे उबारेंगे॥
जब तक भी जीवन है जग में, भरसक उसे प्रचारेंगे।
इसी हेतु जीवन अर्पण कर, सुख से स्वर्ग सिधारेंगे॥

उदित दिन करने किरण पसार
स्वर्ण भा रंजित भूमि अपार।
खिलाये आर्य कमल का सार
लुक हैं हो उलूक हैरान ॥११॥

शंकर जिसका मूल उदार
आदि है बहने का जो द्वार।
बह रही मंजुल गंगाधार
कीजिये सब इसमें स्नान ॥१२॥

स्वदेशी में ही अति अनुरक्ति
भरी है भव्य देश की भक्ति।
सिखाता सत्याग्रह की शक्ति
सुनाता शब्द स्वराज्य समान ॥१३॥

खिलाकर भाव कुसुम कलिवृन्द
मिलाकर मानी मन मकरंद।
पिलाकर प्रीति रीति मकरंद।
कराता भारत माँ का गान ॥१४॥

गुणों का गौरव गाता गेय
सधाता धीरों का ध्रुव ध्येय
जनाता वीरों का जो जेय
भास का करता है अवसान ॥१५॥

आर्य भाषा का पुण्य प्रचार
आर्य जाति का पूर्ण प्रसार
आर्यावर्त देश उद्‌गार
यही करता है हमें प्रदान ॥१६॥

कराता ज्ञान पिपासा शान्त
न भटकें भूले होकर भ्रान्त।
देखलो नव्य प्राच्य वेदान्त
तुले हैं न्याय तुला पर आन ॥१७॥

सुरीली वजति सरगम है
तत्व चिन्तन का उद्‌गम है
नाद नव मंजुल नैगम है
गुँजाता 'कृण्वन्त'* की तान ॥१८॥

दया दे देता है आनन्द
मिलाता सबको है सानन्द।
सतत नभ गूंजे करुणाकन्द।
महर्षे! तेरा नव आह्वान ॥१९॥

गगन में चमकें विधु दिनराज
अचल है जब तक वह हिमराज
प्रकृति का सज्जित जब तक साज
रहेगा तब तक कीर्ति विहान ॥२०॥

सूचना—आठवें छन्द तक १४ समुल्लासों का सांकेतिक वर्णन है।

* कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।

सत्यार्थ-प्रकाश और सनातन धर्म

(लेखक—'कविरत्न' पं० सिद्धगोपाल जी 'साहित्य-वाचस्पति' देहली)

ऋषि दयानन्द ने अपने लोक प्रसिद्ध 'ग्रन्थ रत्न' सत्यार्थ प्रकाश में प्राय समस्त मतमतान्तरों की समालोचना की है। यद्यपि यह समालोचना अनेक साम्प्रदायिक लोगों को बुरी भी लगी तथापि उन्हीं साम्प्रदायिक लोगों में ऐसे भी व्यक्ति हुए, जिन्होंने ऋषि दयानन्द कृत समालोचना की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा भी की। सृष्टि की आदि से लेकर अद्यावधि प्रत्येक सम्प्रदाय में तार्किक और बुद्धिमान् व्यक्ति होते रहे हैं और वे व्यक्ति एक दूसरे सम्प्रदाय की समालोचना भी करते रहे हैं। दार्शनिक लोगों मे खूब वाद-विवाद चला, जिस के फल स्वरूप विश्व में अनेक वाद प्रचलित हुए। अद्वैतवाद, द्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैताद्वैत वाद, प्रकृतिवाद, शून्यवाद, क्षणिक वाद, जीवाजीववाद इत्यादि अनेक वाद इसी समालोचना के परिणाम हैं। ससार का यह नियम है कि बिना तर्क और बुद्धि के मस्तिष्क का विकास होता ही नहीं। वर्तमान समय में जितने भी बड़े बड़े आविष्कार हुए, वे सब के सब तर्क और बुद्धि द्वारा ही हुए हैं। जहा २ तर्क और बुद्धि का प्रवेश नहीं है वहा २ अन्ध विश्वास और भ्रान्ति का साम्राज्य है इसी लिये निरुक्तकार ने तर्क को 'ऋषि' कहा है "तर्क एव ऋषिः।" इसी प्रकार शास्त्र कारों ने बुद्धि को आत्मा का नेत्र कहा है।

जितन मतमतान्तर हैं वे बुद्धि और तर्क की अवहेलना करते हैं, वे मत और मजहब में अकल का दखल नहीं मानते। नबी, रहबर, गुरु और विश्वास ही उनके मत और मजहब का आधार है। परन्तु धर्म इनके विपरीत है, धर्म तर्क और बुद्धि को साथ लेकर चलता है। मनु महाराज कहते हैं—"यस्तर्केणानुसन्धत्ते सधर्मं वेद नेतर" जो तर्क से खोज करता है, वह धर्म को जानता है अन्य नहीं।

देखो! इस्लाम बिना मुहम्मद के, ईसाइयत बिना ईसा के, बुद्ध मत बिना बुद्ध के, जैन मत बिना जिन देव के शैव मत बिना शिव के, वैष्णव मत बिना विष्णु क, शाक्त मत बिना शक्ति अथवा देवी के अपनी क्या सत्ता रखता है? परन्तु धर्म किसी व्यक्ति विशेष तथा अन्ध विश्वास का बन्धन स्वीकार नहीं करता। धर्म सदैव परम पवित्र प्राकृतिक नियमों को स्वय ही धारण करता है तथा ससार के मनुष्यों को धारण करता है।

ऋषि दयानन्द ने उन्हीं बुद्धि सगत प्राकृतिक नियमों को 'सनातन धर्म' माना, और ससार के लोगों को बतलाया, कि मै कोई नया मत या पन्थ चलाने नहीं आया, किन्तु ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त ऋषि महर्षि जिन सार्वभौमिक और सार्वजनिक सिद्धान्तों को मानते रहे हैं,

उन्हीं सिद्धान्तों का प्रचार करना मेरा मुख्योद्देश्य है। ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' लिखा, उसमें उन्होंने प्रचलित मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, अवतार वाद, जन्म मूलक वर्ण व्यवस्था का घोर खण्डन किया। उन्होंने बतलाया जिन बातों को लोग 'सनातन धर्म' माने बैठे हैं वस्तुत वह 'सनातन धर्म' नहीं है। वह महाभारत के पश्चात् का विचार है। महाभारत के युद्ध में बड़े २ योद्धा विद्वान् और विचारक मारे गये, फलत देश में घोर अविद्यान्धकार छा गया। भारतवर्ष में अनेकों सम्प्रदाय फैले, और अनेक सृष्टि क्रम विरुद्ध तथा अन्धविश्वासपूर्ण ग्रन्थों की रचना हुई। बहुत से वेद विरोधी वाम मार्गियों ने ऋषि मुनियों के नाम से ग्रन्थ बनाये जो परस्पर विरुद्ध, अनाचार पूर्ण और पारस्परिक मनो मालिन्य के कारण बने। वेदादि शास्त्रों का पठन पाठन कम हुआ, अपने २ साम्प्रदायिक विचारों को फैलाने में ही लोग लगे रहे। कालान्तर में अनेक आचार्य भी हुए, जिन्होंने वेदों और सूत्र ग्रन्थों के भाष्य भी किये- परन्तु उन वेद भाष्यों में सृष्टि क्रम विरुद्ध विषय' और अश्लीलता का ही प्राधान्य रहा।

किसी २ आचार्य ने उपनिषदों का ही श्रुति मानकर उनका भाष्य किया उन्होंने वेदों की दुहाई तो खूब दी, परन्तु वेदों को छुआ तक नहीं। बल्कि वेदों को अपरा विद्या और उपनिषदों को परा विद्या में शुमार किया। किसी किसी ने तो यहाँ तक लिख दिया कि भागवतादि पुराण वेद से भी पहले के हैं। आजकल अधिकांश लोग पौराणिक मत को ही 'सनातन धर्म' मानते हैं।

ऋषि दयानन्द ने उसी 'पौराणिक-मत" की समालोचना 'सत्यार्थ प्रकाश में की है और वह समालोचना सुधार और सद्भावना की दृष्टि से की है। समालोचक में पांच बातें होनी चाहिये— विद्या, चरित्र, कल्याण करने की इच्छा निर्भयता और निःस्वार्थता। ऋषि दयानन्द में यह पाँचों बातें उत्कृष्ट मात्रा में विद्यमान थीं। इसका परिचय उनके जीवन चरित्र और उनके लिखे हुए ग्रन्थों में पर्याप्त रूप में मिलता है। वस्तुत उनको समालोचना का अधिकार था, उसमें उन का अपना कोई स्वार्थ न था। जो भी उन्होंने समालोचना की सुधार और लोक कल्याण की भावना से की है।

ऋषि दयानन्द वेदों को अपौरुषेय अथवा ईश्वर कृत मानते थे। वे उनको स्वत प्रमाण और अन्य वेदानुकूल ग्रन्थों को परत प्रमाण मानते थे। वे कहा करते थे, वैदिक धर्म ही सनातन धर्म' है। क्यों कि वेद ईश्वर का ज्ञान है, जब ईश्वर 'अनादि' अर्थात् सनातन है, तो उसका ज्ञान भी सनातन है। पौराणिक लोगों ने प्रचलित मूर्त्ति पूजा, मृतक श्राद्ध, अवतार वाद, और जन्म मूलक वर्ण व्यवस्था को वेदों से सिद्ध करने का यत्न किया। ऋषि दयानन्द ने बतलाया कि यदि इन सिद्धान्तों को वेदोक्त माना जायगा, तो वेदों का सिद्धान्त सारे संसार पर लागू नहीं हो सकेगा। इस दृष्टि से ईश्वर कृत वेद भी साम्प्रदायिक वस्तु बन जायगा। उदाहरण के लिये जब जन्म से वर्ण सिद्ध किया जायगा, तो पौराणिकों के अतिरिक्त संसार की अन्य जातियों में जन्म से वर्ण कैसे बन सकेगा? जापान,

जर्मनी, इगलैन्ड, अमेरिका आदि देशों में तो जन्म से ब्राह्मण उत्पन्न हो ही नहीं सकता और न जन्म से अन्य वर्ण उत्पन्न हो सकते हैं। इस लिये उन्होंने वेदों से सिद्ध किया, कि ब्राह्मणादि वर्ण जन्म से न होकर गुण कर्मानुसार हैं। इस वैदिक सिद्धान्तानुसार प्रत्येक देश और प्रत्येक जाति में ब्राह्मणादि वर्ण बन सकते हैं और आज भी बने हुए हैं। यह और बात है, कि नामों में अन्तर हो गया है। इसी प्रकार ऋषि ने मूर्त्ति पूजा को वेद विरुद्ध और युक्ति शून्य बतलाया। उन्होंने माता, पिता, गुरु विद्वान् आदि चेतन मूर्त्तियों का आदर सत्कार करना ही सच्ची मूर्त्ति पूजा माना तथा जड पदार्थों का यथा योग्य प्रयोग करना ही जड मूर्त्ति पूजा बतलाया।

अवतारवाद के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा कि अवतार जीवों का ही होता है परमेश्वर का नहीं। क्योंकि परमेश्वर सर्व व्यापक, सर्वज्ञ सर्वाधार, अखण्ड, एकरस, अनादि अनन्त विशेषण वाला है। यदि परमेश्वर का अवतार माना जावगा, तो वह सावयव, साकार, पराधार, ससीम, विकारी, जन्य, अल्पज्ञ और आदि अन्त वाला हो जायगा, श्री राम कृष्ण आदि महान् पुरुष थे उनमे मानवोचित शक्तियों का विकास हो चुका था, परन्तु वे सब थे मनुष्य ही।

इसी प्रकार महर्षि ने मृतक श्राद्ध की समालोचना की है। उन्होंने बतलाया, कि माता, पिता, दादा-दादी, नाना नानी आदि पितरों के सम्बन्ध इसी सृष्टि से सम्बन्धित हैं। मृत्यु होने पर ये सर्व सम्बन्ध छूट जाते हैं। आत्मा न किसी का पिता है, न किसी का पुत्र है शरीर छोड़ने पर आत्मा कर्मानुसार जन्मान्तर धारण करता है। इसलिये जीवित गुरुजनों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना ही श्राद्ध' है। कहने का तात्पर्य यह है—ऋषि दयानन्द द्वारा उद्‌घाटित वेदादि सत्य शास्त्रों के सिद्धान्त युक्तियुक्त, सर्वतन्त्र और 'सार्वजनिक' हैं।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश' ग्रन्थ का निर्माण करके ससार के मत मतान्तरों की आँखें खोल दीं। उनमे तर्क बुद्धि उत्पन्न करदी। आज प्रत्येक सम्प्रदाय अपने सिद्धान्त को वैज्ञानिक और युक्ति युक्त सिद्ध करने की चेष्टा करने लगा है। आज असम्भव और अश्लील धार्मिक इतिहास को लोग 'अलकार' सिद्ध करने लग गये हैं। जिस पौराणिक समुदाय ने दलितोद्धार, विधवा विवाह, स्त्रीशिक्षा, समुद्रयात्रा, और गुरुकुलों का कभी विरोध किया था, आज उसी समुदाय के बडे२ विद्वान् इसके समर्थक हैं। समर्थक ही नहीं बल्कि उन बातों को क्रियात्मक रूप दे रहे हैं। आज पौराणिक लोगों ने भी गुरुकुल, कन्यापाठशालायें जगह२ खोल दी हैं। यह आर्य समाज और 'सत्यार्थ प्रकाश' की विजय नहीं तो क्या है? ऋषि दयानन्द का सत्याथ प्रकाश मानवों को मानवता का पाठ पढ़ाता है। पौराणिक समाज पर विधर्मियों द्वारा हाने वाले आक्षेपों और आक्रमणों का मुकाबला सिवाय 'सत्यार्थ प्रकाश' और आर्यसमाज के और कौन कर सकता है? आज एक हिन्दू स्त्री मुसलमान गुण्डे द्वारा भगाई जाती है और उसको मुसलमान बना लिया जाता है। आर्यसमाज के अतिरिक्त है किसी में ताकत जो उसे पुन आर्यधर्म या सनातन धर्म में दीक्षित

सत्यार्थ प्रकाश-महिमा

(लेखक—'कविरत्न' पं० सिद्धगोपाल जी 'साहित्य-वाचस्पति' देहली)

ऋषि दयानन्द ने जग का, भारी उपकार किया है।
'सत्यार्थ प्रकाश बनाकर, 'सत्यार्थ प्रकाश' किया है।
'सत्यार्थ प्रकाश' हुआ जब, तम-प्रिय उलूक सब भागे।
सदियों से सोने वाले, गहरी निद्रा से जागे।
'सत्यार्थ प्रकाश' प्रभा से, मत, पथ मजाहिब सारे।
हो गये सजग सबने ही, अपने सिद्धान्त सुधारे।
जो अन्ध भावना के थे जन बने हुए दीवाने,
वे युक्ति हेतुओं को अब, बहु मूल्य लगे बतलाने।
जो मतवादी ग्रन्थों मे, अब बात असम्भव पाते,
वे सत्य न उसको मानें, हैं अलंकार बतलाते।
'सत्यार्थ प्रकाश' सुकृति ने, क्या तर्क द्वार को खोला,
तम तोम रूप भावों पर पड़ गया गजब का गोला।
इस 'कृति' ने पुनरपि सबको, नव जीवन दान दिया है।
शुचि श्रेय प्रेय का सुन्दर, सुखमय निर्वचन किया है।
'सत्यार्थ प्रकाश सदा ही, जग के सन्ताप हरेगा।
सारा मिथ्यार्थ हरेगा, सत्यार्थ प्रकाश करेगा।
"गोपाल" मान इस कृति का, दे प्राण सदा रक्खेंगे।
ले ज्योति ज्ञान की इससे, अमृतमय फल चक्खेंगे॥

कर सके? किसी हिन्दू संस्था में दम है—जो हीरालाल गांधी के अब्दुल्ला बन जाने पर पुन हीरालाल बनादे। यह 'सत्यार्थ प्रकाश' ही है, जो अनार्य को पुन आर्य बना सकता है।

आज धार्मिक जगत् मे सत्यार्थ प्रकाश का बोल बाला है। उसकी तमाम मतमतान्तरों पर छाप है। आज उसकी वजह से, पौराणिक मत भी, 'सनातन धर्म' बनने लग गया है। अन्ध विश्वास और कुरीतियां उत्तरोत्तर दूर हो रही हैं। जाति पॉति और छुआ छूत का दीवाला निकलता जा रहा है।

इससे कहना पड़ता है—

आरहा है वह जमाना सुख के फिर सामान होंगे।
ऐश, खुद गर्जी, जहालत तीनों के चालान होंगे॥

श्रद्धाञ्जलियां

सत्यार्थ प्रकाश के अमर कीर्ति लेखक के प्रति नाना देशीय विख्यात विधर्मी विद्वानों द्वारा समर्पित

'सार्वदेशिक' के नवम्बर १९४९ के 'ऋष्यङ्क' मे हमने 'सत्यार्थ प्रकाश' के स्वनाम धन्य अमर कीर्ति सुधारक शिरोमणि लेखक महर्षि दयानन्द के प्रति कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सुप्रसिद्ध योगी और विचारक श्री अरविन्द आदि जगद्विख्यात महानुभावों द्वारा समर्पित कुछ श्रद्धाञ्जलियों का सग्रह किया था जिनमे उन्होंने महर्षि को सत्य मार्ग का दर्शक, आध्यात्मिक क्रियात्मकता का आदर्श, प्रकाश का सैनिक (Very soldier of Light) 'ईश्वर के जगत मे एक सच्चा योद्धा' 'कठिनाइयों का साहसी विजेता' इत्यादि गौरव पूर्ण शब्दों में स्मरण किया है। महात्मा गाधीजी ने ऋषि दयानन्द के विषय में एक बार लिखा था Dayanand s characte is at once my envy and distress "अर्थात् दयानन्द का चरित्र मेरे लिये ईर्ष्या और दुख का विषय है जिससे उनका तात्पर्य यह था कि उनका चरित्र इतना ऊँचा है कि मुझे उसस ईर्ष्या सी होता है पर साथ ही दुख होता है जब मै उतना उच्च नहीं बन पाता। ऐसी ही श्रद्धाजलि श्री रामानन्द चैटर्जी, डा० भगवानदास, सर यदुनाथ सरकार श्री विनयकुमार सरकार, श्र सुधीन्द्र बास एम० ए०, पी एच० डी०, श्री तारकनाथ दास एम०ए० .पी. एच. डी दीवान बहादुर, रघुनाथराव भू० पू० दीवान मैसूर इत्यादि सैकड़ों भारतीय विद्वानों ने महर्षि दयानन्दके प्रति अर्पित की हैं किन्तु इस लेख में हम केवल उन विद्वानों की अर्पित श्रद्धांजलियों का थोड़ा सा सग्रह करना चाहते है जो अन्य मतावलम्बी होते हुए भी महर्षि के प्रति भक्तिभाव रखते थे और जिनमे से अधिकतर विदेशी थे जिन्हें सत्यार्थ प्रकाश तथा ऋषि के वेद भाष्य ने विशेष रूप से प्रभावित किया था यह सग्रह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि अनेक लोगों ने यह भ्रम फैला रक्खा है कि 'सत्यार्थ प्रकाश' मे मत मतान्तरों की कठोर आलोचना करके जिसे मास्टर तारासिंह आदि दिल खोल गालियां तक कहने मे सकोच नहीं करते यद्यपि यह सर्वथा असत्य है) महर्षि दयानन्द ने सब अन्य मतावलम्बियों को अपना शत्रु बना दिया था। इसलिये हम यहाँ केवल मुसलमान, सिक्ख, पारसी और ईसाई विख्यात विचारकों की ही महर्षि दयानन्द विषयक श्रद्धाजलियों का दिग्दर्शन कराना चाहते हैं जिससे उपर्युक्त भ्रम का निवारण हो सके।

(१) सर सय्यद अहमद खा—

अलीगढ मुस्लिम युनिवर्सिटी के सस्थापक, मुसलमानों के सुप्रसिद्ध नेता सर सय्यद अहमद खान को महर्षि दयानन्द के सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। महर्षि के बलिदान के पश्चात् सर सय्यद अहमद ने शोक प्रकट करते

हुए लिखा था —

'Swami Dayananda Saraswati's adherents look upon *him as a devata and verily he deserves to be so looked upon* He taught the worship of one Resplendent Formless God and of none else besides We were intimate with the late Swami and *always reverenced him extremely* He was such a learned and *good man that he merited veneration at the hands of followers of all religions* He was a man whose equal is not to be found at this time in the whole of India It is the duty of every man to lament over his death because *he was a peeless man* (quoted here from "Aryasamaj and its detractors page 8)

इसका अर्थ यह है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुयायी उन्हें देवता, मानते हैं और सचमुच वे इसी मान के योग्य थे। उन्होंने एक निराकार ईश्वर की ही उपासना का उपदेश दिया था अन्य किसी की नहीं। हमारा उनके साथ घनिष्ठ सम्पर्क था और हम उनके लिये सदा अत्यधिक आदर का भाव रखते थे। स्वामी दयानन्द इतने विद्वान् और अच्छे आदमी थे कि हर धर्म के अनुयायियों के लिये वे सन्मान पात्र थे। उनके समान व्यक्ति सारे भारत में इस समय कोई नहीं मिल सकता। प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि, वह उनके देहावसान पर शोक प्रकाशित करे क्योंकि वे अनुपम थे।

(२) फारस के न्याय मन्त्री Minister of Justice) रहीमजादा सफावी ने सन् १९३३ में महर्षि दयानन्द के प्रति अपने भाव प्रकट करते हुए लिखा था कि 'Swami Dayananda Saraswati's valuable services in the cause of Hindu Religion and uplift of his nation in the moral and social domains, are too great to be fully described in such a short article His commentary on the Vedas is a *unique* work by which he has illustrated once more the value of the great Scriptures of ancient India from which the well-known sages of India have been radiating their wisdom in all directions for the welfare and advancement of humanity Thus I feel it a duty of every Oriental like myself, to appreciate what Maharshi Dayananda Saraswati has achieved as the *great work in the cause of India's national unity* (Dayananda Commemoration Volume P 56)

अर्थात् स्वामी दयानन्द सरस्वती की हिन्दू धर्म और नैतिक तथा सामाजिक क्षेत्र में अपने राष्ट्र के उद्धार के लिये की गई सेवाएं इतनी बड़ी हैं कि उनका एक छोटे से लेख में वर्णन नहीं किया जा सकता। उनका वेद भाष्य अनुपम है जिसके द्वारा उन्होंने प्राचीन भारत के महान् धर्म ग्रन्थ के महत्त्व को जिस से कि भारत के सुप्रसिद्ध ऋषि अपने ज्ञान का मनुष्य मात्र के कल्याण और उन्नति के लिये सब दिशाओं में प्रसार

करते रहे हैं फिर से प्रकट किया। इस लिये मै यह अनुभव करता हूँ कि मेरे जैसे प्रत्येक पौरस्त्य का यह कर्तव्य है कि वह महर्षि दयानन्द ने भारत को राष्ट्रीय एकता के लिये जो कार्य कर के दिखाया उसका अभिनन्दन करे।

(३) सुप्रसिद्ध सिक्ख नेता सर जोगेन्द्र सिंह ने शिमला से स्वामी दयानन्द जी के विषय में अपने विचार प्रकट करते हुए सन् १९३३ में ठीक लिखा था कि—

'To Swami Dayananda we owe the broadening of life in social and religious sphere which we have witnessed since he began his mission It was he who had the courage to proclaim the ancient truth and free Hindu Society from debilitating influences, which were undermining its strength (Commemoration Vol V 48)

अर्थात् हम जो सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में उदार दृष्टि उस समय से देख रहे हैं जब से उन्होंने अपना कार्य प्रारम्भ किया था उसका श्रेय स्वामी दयानन्द जी सरस्वती को ही है। प्राचीन सत्य को घोषित करने और हिन्दू समाज को उन शक्ति नाशक प्रभावों से स्वतन्त्र कराने का जो इसकी जड़ को खोखला कर रहे थे साहस उन्हीं में था। इत्यादि

(४) श्री रोमा रोला (Roman rolland)—

वर्तमान काल के जगद्विख्यात विचारक फ्रांसदेशीय श्री रोमा रोला ने महर्षि दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि श्री रामकृष्ण परम हंस का जीवन चरित्र लिखते हुए अर्पित की हैं। स्थान संकोच के कारण उसमें से केवल थोड़े से वाक्यों को ही हम यहा उद्धृत कर सकते हैं।

'Dayananda Saraswati was a *personality of the highest order* This man with the nature of a lion is one of those, whom Europe is too apt to forget when she judges India, but whom she will probably be forced to remember to her cost for he *was that rare combination, a thinker of action with a genius for leader ship*

अर्थात् स्वामी दयानन्द सरस्वती अत्यन्त उच्च कोटि के पुरुष सिंह उन व्यक्तियों मे से था जिन्हें यूरप जब भारत के विषय मे कुछ धारणा बनाता है भूल सा जाता है पर जिन्हें उसे अपनी हानि पर याद करने को बाधित होना पड़ेगा क्यों कि उस के अन्दर वह दुर्लभ मिश्रण था जो कर्म योगी, विचारक और नेतृत्व के लिये प्रतिभा में पाया जाता है॥

'Dayananda transfused into the languid body of India his own formidable energy, his certainty his lion's blood His words rang with heroic power 'Dayananda would not tolerate the abominable injustice of the existence of untouchables and *no body has been a more ardent champion of their outraged rights'*

"Dayananda was no less generous and no less bold in his crusade to improve the condition of women,

a deplorable one in India" I have said enough about this Sanyasi with the soul of a leader, to show how great an uplifter of the peoples he was in fact *the most vigorous force of the* immediate and present action in India at the moment of the re-birth and re-awakening of the national consciousness He was one of the most ardent *prophets of re construction and of national organisation* I feel that it was he who kept the virgil"

भावार्थ यह कि स्वामी दयानन्द ने भारत के आलस्य पूर्ण शरीर मे अपनी अद्भुत शक्ति, निश्चयात्मक विश्वास और सिंह समान वीरता का सचार किया। उसके शब्द वीरता के साथ प्रतिध्वनित होने लगे। दयानन्द ने अस्पृश्यता व अछूतपन के अस्तित्व के अन्याय को नहीं सहन किया और उससे अधिक उनके अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक अन्य कोई नहीं हुआ। भारत में स्त्रियों की शोचनीय अवस्था का सुधारने में भी दयानन्द ने बड़ी उदारता और साहस से काम लिया। मैंने इस सन्यासी के विषय में जिसके अन्दर एक सच्चे नेता का आत्मा विद्यमान था जो कुछ कहा है उससे यह ज्ञात हो सकता है कि वह मनुष्यों का कितना बड़ा उद्धारक था। वास्तव मे राष्ट्रीय भावना की जागृति के अवसर पर सब से अधिक प्रबल शक्ति क्रियात्मक रूप देने में उसी की थी। पुनर्निर्माण और राष्ट्रीय जागृति के अत्यन्त अधिक उत्साही पैगम्बरों में से वह एक था। मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि वह था जो सदा जागरूक रहा। इत्यादि

(५) रेवरेन्ड सी ऐफ ऐन्ड्रूज़ (Rev C F Andrews) —

सुप्रसिद्ध अंग्रेज प्रचारक दीनबन्धु ऐन्ड्रूज़ ने ऋषि दयानन्द के विषय में अनेक श्रद्धा सूचक लेख अपने जीवन काल मे लिखे थे जिन में से स्थानाभाव से निम्नलिखित कुछ वाक्य ही यहा उद्धृत करने पर्याप्त हैं।

'For Dayananda's personality and character there may well be almost un qualified admiration He was a puritan to the back-bone, and lived up to his creed *He was a passionate lover of truth*" (Indian Pandissance)

अर्थात् स्वामी दयानन्द के उच्च व्यक्तित्व और चरित्र के विषय मे निस्सन्देह सर्वत्र प्रशंसा की जा सकती है। वे सर्वथा पवित्र तथा अपने सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करने वाले महानुभाव थे। वे सत्य के अत्यधिक प्रेमी थे।

(६) डा. विन्टरनीज़ (Dr. M Winternitz)

जर्मन युनिवर्सिटी के सुप्रसिद्ध विद्वान डा० विन्टर्नीज़ ने ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए लिखा —

"We have to acknowledge Dayananda Saraswati's great merit in having given a strong impulse to Vedic studies in India and having shown that idolatry has not the sanction of the Vedas If the founder of the Arya Samaj had done nothing else, but rouse his followers

to a vigorous fight against the folly and dangers of the Cast-system he would deserve to be honoured as one of the great leaders of men in modern India '

अर्थात् हमें वेदों के अध्ययन को प्रबल प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने में कि मूर्ति पूजा वेद सम्मत नहीं है स्वामी दयानन्द के महान उपकार को अवश्य ही स्वीकार करना चाहिये। आर्य समाज के प्रवर्तक वर्तमान जाति भेद की मूर्खता और हानियों के विरुद्ध अपने अनुयायियों को तैयार करने के अतिरिक्त यदि और कुछ भी न करते तो भी वे वर्तमान भारत के बड़े नेता के रूप में अवश्य सम्मान पाते।

(७) डा० स्टेन् कोनो (Dr Sten Konow Ph D)—

नारवे के डा० स्टेन् कोनो ने स्वामी दयानन्द सरस्वती पर एक अत्यन्त विचार पूर्ण लेख लिखते हुये बताया कि—

'Dayananda never got tired of preaching that in reality Vedic religion is apt to satisfy the cravings of modern man and to give him strength in the struggle of every day s life and that the ancient Vedic civilisation can be revived and lead to a national renaissance There is still another feature in the Swami's work which strongly appeals to European minds the stress he laid on the uplift of the depressed classes Also here he showed *himself as a nationalist with lofty ideals and high aims* " (Commemoration Vol)

अर्थात् स्वामी दयानन्द यह प्रचार करते कभी न थके कि वस्तुत वैदिक धर्म वर्तमान मनुष्य की सब उत्तम अभिलाषाओं को पूर्ण कर सकता तथा दैनिक जीवन के सङ्घर्ष के लिये उचित शक्ति प्रदान कर सकता है साथ ही यह कि प्राचीन वैदिक सभ्यता का पुनरुद्धार किया जा सकता है और उससे राष्ट्रीय जागृति लाई जा सकती है स्वामी दयानन्द का दलित वर्ग के उद्धार पर बल देना यूरोपियनों के मन को विशेषरूप से प्रभावित करता है। उसमे उन्होंने अपने को एक उच्च आदर्श और उत्कृष्ट उद्देश्य सम्पन्न देश भक्त प्रमाणित किया।

(८) डा० जेम्स कजिन्स (Dr James H Cousins) —

आयर्लैण्ड के सुप्रसिद्ध विचारक शिल्पकार और कवि डा० जेम्स कजिन्स ने ऋषि दयानन्द के प्रभाव के विषय में अपने अनुभव इन शब्दों में प्रकट किये —

'I have observed during my travels in India the effects of Swami Dayananda Saraswati s influence in earnest efforts to vitalise life in India with the Vedic ideal which for 30 years has been a fundamental influence in my own life and in that of Mrs Cousins and for this much needed service to India and the world I offer our joint homage to his memory" (Commemoration Vol P 56)

अर्थात् मैंने अपनी यात्रा मे वैदिक आदर्शो के साथ भारतीय जीवन को शक्ति सम्पन्न बनाने के उद्देश्य से किये हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती के उत्साह पूर्ण सच्चे प्रयत्न के परिणाम और प्रभाव को देखा है जिससे मै और मेरी धर्मपत्नी गत ३० वर्षों से प्रभावित रहे हैं। इस भारत और ससार के प्रति की गई अत्यन्त आवश्यक सेवा के लिये हम दोनों स्वामी दयानन्दजी की स्मृति में विनय पूर्वक अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हैं।" यहाँ पाठकों को यह बता देना अप्रासङ्गिक न होगा कि डा० जेम्सकजिन्स वैदिक आदर्शों से इतने अधिक प्रभावित हुए हैं कि उन्होंने अपने 'Path of Peace' नामक छोटे ग्रन्थ में वैदिक आदर्श द्वारा ही भूलोक को स्वर्ग बनाया जा सकता है इस बात का प्रतिपादन किया है और आर्य धर्म दीक्षा लेकर वे अब कुलपति डा० जयराम के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

(६) बैरमजी मलबारी नामक पारसी सज्जन ने ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए लिखा था—

'Gifted with uncommon talents and actuated all his life by singleness of purpose Dayananda Saraswati has achieved enough good to entitle him to the lasting gratitute of posterity '

अर्थात् असाधारण प्रतिमा और एक निश्चित उद्देश्य से प्रेरित होकर कार्य करते हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इतना उपकार करके दिखाया है कि भावी सन्तति सदा के लिये उनके प्रति कृतज्ञ रहेगी।

(१०) ऐन्डू जैक्सन डैविसः—(Andrew Jackson Davis) मि ऐन्डू जैक्सन डैविस नामक सुप्रसिद्ध अमेरिकन योगी ने Beyond the Valley नामक ग्रन्थ में ऋषि दयानन्द को भारत में ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त ईश्वर पुत्र (The inspired Son of God in India) इस पदवी से अलकृत करते हुए अपना दिव्य अनुभव इस प्रकार के शब्दों मे दिया —

'I behold a fire that is Universal, *the fire of infinite love which burneth to destroy all hate, which dissolveth all things to their purification* Beholding this infinite fire which is certain to melt the kingdoms and empires and *governmental evils of the whole earth*, I rejoice exceedingly and I take hold of life with an enkindling enthusiasm "

"*To restore Primitive Aryan religion to its first pure state was* the fire in the furnace called 'Aryasamaj which started and burnt brightly in the bosom of that *Inspired son of God in India'* —Dayananda Saraswati" (Beyond the Valley P 383)

अर्थात् मुझे एक अग्नि दिखाई पड़ती है जो कि सर्वत्र फैली हुई है—असीम प्रेम की अग्नि जो कि द्वेष को जलाने वाली है और प्रत्येक वस्तु को जला कर शुद्ध कर रही है। इस अपरिमित अग्नि को देखकर जो निस्सन्देह राज्यों, साम्राज्यों और संसार भर की सरकारों के दोषों को पिघला डालेगी मैं अत्यन्त आनन्दित

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

दान-सूची

अगस्त १६४३

२५) श्रीमती रामप्यारी देवी जी माता श्री वा हरस्वरूप जी गुप्त (अकाल पीड़ितों के लिये)

२५०) श्री लाला ज्ञानचन्द्र जी आर्य्य ठेकेदार नई देहली (आर्य्य धर्म रक्षा कार्य के लिये)

२५०) श्री लाला नारायणदत्त जी ठेकेदार (आर्य्य धर्म रक्षा काय के लिये)

५०) श्री मदन मोहन विद्याधर जी तनाली आध्र द्वारा।

७७) आ स काकल (मदरास प्रान्त) (बगाल बाढ पीड़ितों के लिये)

५।=) आ स नयाबास देहली (सत्याग्रह स्मारक दिवस)

३) आ स लोअर पटेल बम्बई

५) श्री मिट्ठलराव यादव लोअर पटेल बम्बई

२) श्री वीरसेन जी आर्य्य बिरताना लखनौ

१५) आर्य्य समाज गुजरा वाला (सत्याग्रह स्मारक दिवस)

२०) डा० ऐस के उपमन्यु ऐम बी बी ऐस मेडिकल आफीसर सुजनेर (सी आई)

५) श्री K R पाडुरग जी बेंगलौर सिटी

योग ६५७=)

आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष मे दान

१००) आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्व अफ्रीका

५०) आर्य समाज कोटा

५०) आर्य समाज साबुन बाज़ार लुधियाना

८६० ॥=) गत योग

१०६०॥=)

दानी महानुभावों और आय समाजों को सभा की ओर से धन्यवाद। शेष आर्य समाजों को भी विषयक अपने कत्तव्य और शिरोमणि सभा के आदेश को शीघ्र पालन करना चाहिये ।

धर्मदेव वि० वा० स० मन्त्री, सार्वदेशिकसभा।

होकर एक उत्साहमय जीवन व्यतीत कर रहा हू। यह आग सनातन आय धम को प्रारम्भिक पवित्र दशा में लाने के लिये एक भट्टी में थी जिसे आर्य समाज कहते हैं यह आग भारतवर्ष के एक परम योगी वा ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त ईश पुत्र दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रकाशमान हुई थी।

(महर्षि दयानन्द के जीवन का उद्देश्य और उनकी समालोचनादि का वास्तविक तात्पय अमेरिका के इस योगी ने बड़े ही मार्मिक रूप में एक दिव्य अनुभव (Vision) के रूप में प्रकट किया है जो माननीय है। विस्तार भय से विविध मतावलम्बी तथा नाना देशीय विख्यात विद्वानों द्वारा सत्यार्थ प्रकाश के अमर कीर्ति लेखक महर्षि दयानन्द के प्रति अर्पित श्रद्धाञ्जलियों के समह को हम यहीं समाप्त करते हैं।

आशा है इस छोटे से समह से महर्षि दयानन्द और उनके अमर ग्रन्थों ने किस प्रकार जगत् के दूर दूर देशों के विद्वानों को प्रभावित किया, इसका कुछ परिचय पाठकों को अवश्य मिल जायगा। —सम्पादक)

आर्य समाज के प्रचार के लिए उपयोगी ग्रन्थ !

प्रत्येक आर्य समाज को इन पुस्तकों को मंगाकर प्रचार करना चाहिए !!

१. आर्य समाज क्या है ?

(लेखक—महात्मा नारायण स्वामी जी)

इस पुस्तक मे आर्य समाज के उद्देश्य नियम और सिद्धान्तों की व्याख्या की गई है। आर्य समाज के नये सभासद् बनाने के लिये यह पुस्तक एक मात्र साधन है। एक बार पढ़ लेने से आर्य समाज सम्बन्धी पूर्ण परिचय हो जाता है और आर्य समाज मे श्रद्धा हो जाती है। प्रचार का बड़ा अच्छा साधन है। मूल्य ।)

२ धर्म का आदि स्रोत

(लेखक—श्री गगाप्रसाद चीफ जज, गढवाल)

ससार के सभी धर्मों से वैदिक धर्म की तुलना कर यह सिद्ध किया गया है कि वैदिक धर्म ही सब धर्मों मे श्रेष्ठ है। शास्त्रार्थ के लिये उपयोगी पुस्तक है । आर्योपदेशकों व विद्यार्थियों के लिये बडे काम की पुस्तक है।

मूल्य १।)

३. भक्ति दर्पण

आर्य समाज के उच्च कोटि के सन्यासी व आर्योपदेशकों ने आर्य जनता के लाभार्थ इस पुस्तक को रचा है सभी आर्य नर नारियों को इसकी एक एक प्रति हर समय अपने पास रखनी चाहिये, सर्व गुण सम्पन्न होने के कारण आज तक १००००० से अधिक बिक चुकी है। अभी नया सस्करण छपा है। मूल्य १)

४. ऋषि जीवन कथा

इस पुस्तक में महर्षि दयानन्द के जीवन की मुख्य मुख्य घटनाए जो दूसरी पुस्तकों मे आपका नहीं मिलेगी उनका उल्लेख किया गया है, आदि से अन्त तक सक्षेप से ऋषि का पूरा जीवन निराले ढग से लिखा गया है। पढने में सरल व रोचक है। आर्य स्कूलों व पुत्री पाठशालाओं में इनाम देने के लिये अत्युत्तम पुस्तक है सजिल्द का मूल्य १)

—: अंग्रेजी पुस्तकें :—

1 Light of Truth अर्थात् 'सत्यार्थ प्रकाश' का अंग्रेजी अनुवाद। अंग्रेजी पढे-लिखे सज्जनों को आर्य समाज के प्रति आकर्षित करने के लिए इसे भेंट करना चाहिए। सुन्दर सजिल्द ग्रन्थ। मूल्य ४)

2 Wisdom of The Rishis by Late Pt Gurudatta M A

आर्य समाज के उत्कृष्ट विद्वान् प०गुरुदत्त एम० ए० की सभी पुस्तकों का सग्रह। इसमे वैदिक सिद्धान्तों की व्याख्या, पाश्चात्य विद्वानों के आक्षेपों के उत्तर, उपनिषदों के भाष्य इत्यादि अनेकों विषय हैं। इसे पढ़कर वैदिक सिद्धान्तों की छाप लग जाती है। मूल्य ३)

3 Ten Commentments of Dayanand by Late Pt Chamupati M A

वैदिक धर्म के आधार आर्य समाज के दस नियमों की विद्वत्तापूर्ण, सारगर्भित व्याख्या स्व० श्री प० चमूपति जी एम० ए० की जोरदार लेखनी से। मूल्य १)

4 Arya Samaj by Late Lala Lajpat Rai M A

देशभक्त पजाब केसरी लाला लाजपतराय जी ने 'आर्य समाज' लिखी इस विचार से है कि अंग्रेजी पढे लिखे महानुभाव इसे पढ़कर आर्य समाज के सिद्धान्तों, उद्देश्य व कार्यक्रम से परिचित हों। यह आर्य समाज का विस्तृत परिचय देने वाला उत्कृष्ट ग्रन्थ है। मूल्य ३)

प्रकाशक—म० राजपाल एण्ड सन्ज सचालक—आर्य पुस्तकालय, अनारकली, लाहौर।

Satyarthaprakash and Moslem Agitation for its Proscription.

A Statement by—
Pandit Ganga Prasad ji M A Rtd Chief Justice President
Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha Delhi

The news based on a communique of the Government of Sind dated 24-6 43 that it was considering the question whether the Satyarthaprakash the most popular work of Swami Dayananda Saraswati founder of the Aryasamaj should be proscribed (after it had been before the world for 68 years) naturally caused a tremendous excitement through out the Aryan world This was evidenced by hundreds of telegrams received from numerous Arya Samajes by the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha, the constitutional head of all Arya Samajes through ut India and outside it and also published in papers A telegram was sent by the Secretary of the Sabha to the Premier of Sind Government on 29-6 43 inviting his attention to the very serious consequences which would follow any such step All Provincial Arya Pratinidhi Sabhas also sent similar messages to the Sind Government

2 The Government of Sind however soon issued a communique on 8 7 43 stating that they had no intention of taking any step against the above mentioned book It was welcomed by all the Arya Samajes and the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha sent a telegram to the Premier of Sind Government on 12-7 43 expressing its gratitude for their wise decision

3 It was believed that the trouble was over But it unfortunately seems that some fanatically disposed Moslems seek to renew the absurd and unholy agitation It appears that a certain paper of Lahore has called on all provincial Governments to proscribe the Satyarthaprakash and some Maulvi of Sind has warned the Sind Government that if they fail to proscribe the book, the Moslems throughout India would be compelled to start Satyagrah in respect of it It has further been reported that at a meeting organized by the Punjab Muslim League at Lahore on 13-8 43 a resolution urging the Government of India, and the Governments of Moslem majority

Provinces to proscribe the fourteenth Chapter of the Satyarthaprakash was moved and that at the said meeting the Hon ble Mr Gazdar, Home Minister of Sind Government said that the Sind Government after taking opinion of their legal advisers referred the matter to the Government of India as it was an all India question and he expressed the view that since Satyarthaprakash was not a scriptural book it could be proscribed

In view of these facts it has been considered advisable to issue this statement showing the high place which the Satyarthaprakash occupies in the religious literature of the world, in the hope that our reasonable minded moslem brethren will exercise their influence on their less sober co-religionists to desist from such an undesirable propaganda which can only lead to disastrous consequences and will further embitter the already estranged relations between Hindus and Moslems

5 The Satyarthaprakash was first published in 1875 by the Late Raja Jai Kishan Das C S I one of the earliest and leading disciples of Swami Dayananda Saraswati The second edition after revision by its great author appeared in 1883 Since then the book has been translated into all the languages of India, including the dialects of South India and Sanskrit and also into the three most important languages of Europe viz English, French and German Countless editions of the book have appeared printed by the Vedic Press Ajmer which was founded by Swami Dayananda Saraswati himself, the Arya Sahitya Mandal Ajmer and numerous other publishers some in tens of thousands and sold at cost or normal price It would be no exaggeration to say that crores of people in India and abroad have come under the influence of this celebrated work

6 The reason for the remarkable popularity of this book is that it treats in a lucid and fairly exhaustive manner of all the important doctrines of the great Vedic Religion, both on theoretical and practical sides, and contains a criticism of all other important religions of the world viz Buddhism Jainism Christianity and Mohammadanism It is truly the Maganum opus of the great reformer Swami Dayananda Saraswati and is considered by some people as the Bible of the Arya Samaj

7 Exception has been frequently taken to Swami Dayananda

Saraswati's criticism of other religions contained in this great work. With regard to this it should not be forgotten that Swami Dayananda Saraswati was a great religious and social reformer, we may well say the greatest reformer of his time. Every such reformer has a two-fold task. He has to destroy or remove a lot of old rubbish from the ground on which he has to construct his own reformed system. Even the great prophet or founder of Islam had to criticise and condemn his opponents, and that too in no soft words.

8. It was however never Swami Dayananda's intention to hurt the feelings of those whose beliefs he has criticised in his great work. This will be evident from the following extracts from his preface.

The aim of the author in writing the book

My chief aim in writing this book is to unfold truth which consists in expounding truth as truth and error as error. The exposition of error in place of truth and of truth in place of error does not constitute the unfolding of truth ... ...

Though the human soul possesses the capacity for ascertaining truth, yet through self interest obstinacy, wrong headedness, ignorance and the like it renounces truth and inclines towards untruth. But we have not done such a thing in writing this book nor has it been our object to hurt any one's susceptibilities or harm any one. On the other hand our aim has been to further the advancement and good of mankind and to help (all) men in the ascertainment of truth whereby they could embrace the truth and reject falsehood because there is certainly no other way of elevating the human race.

9. The present agitation is of course directed chiefly against Chapter XIV of the Satyartha-prakash which contains a criticism of the Qoran and Mohammadanism. We may quote from the author's preface to Chapter XIV:—

In the fourteenth Chapter of this book we have discussed the Mohammedan religion. Our criticism is based directly on the teachings of Qoran itself and not on those of any other book. *The object aimed at by this criticism is to contribute to the elevation of the human race and to enable all men to sift truth from falsehood* by giving them some idea of the teachings of various prevalent

religions as this will afford them opportunities for friendly discussions so useful in helping men to point out their defects and to appreciate their merits

IT IS NOT OUR PURPOSE TO FALSELY CONDEMN THIS OR ANY OTHER RELIGION

On the contrary, what we aim at, is that whatever is truth should be recognised as such and whatever is false should be condemned as such, so that no one should be in a position to palm off untruth for truth or hinder the progress of truth One is of course free to accept truth for the matter of that, even refuse to do so after it has been published, compulsion being impossible in such matters

In case the good reader comes accross, in this 'criticism, any thing contrary to facts, it is hoped he will point it out and we shall make the suggested change if called for, since this criticism is designed to diminish bigotry obstinacy jealousy, malice, hatred, and (love of) useless wrangling and not to promote them *It is our first and foremost duty to avoid injuring others and to futher the well being of each other* We lay this criticism on the Mohammedan religion before all lovers of truth, in the hope, that they after having gone carefully though it, accept what appeals to their reason and commonsense and discard what is repugnant to them (The italice are our own)

With regard to this, we must also state that Chap XIV deals with the Qoran and Mohommedanism in the same manner and to the same extent as Chap XIII deals with the Bible and Christianity, as Chap XII deals with Buddhism and Jainism and Chap XI deals with the various forms and branches of Hinduism The advocates of no other religion have ever sought to move Government to proscribe or suppress this great work

10 In Hyderabad which is the biggest Moslem State in India, there was unfortunately a conflict between the State authorities and the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha with the Aryasamajes under it (which has long since ended) on account of Arya Samaj having been subject to some religious disabilities But there too the State authorities, with all the powers they wielded never sought to proscribe the great book of the Arya Samaj

11 The first attempt to get the Satyarthaprakash proscribed was made by a Hindu Sanyasi, Ala Ram Sagar in 1902 It was however not

on religious but on political grounds Sanyasi Alaram wrote and published a tract in which he sought to eatablish on the basis of some extracts from the Satyartha prakash that the Arya Samajists were sedious or disloyal to Government. For this he was prosecuted in the court of Mr. P. Harrison, I. C. S. District Magistrate of Allahabad. The learned Magistrate held that he found no traces of incitement to rebellion in the extracts quoted by S. Ala Ram but rather a lament that the Hindus have for various reasons, religious and moral, become a subject race. "The general tenor of Dayananda's teaching seems to me to be rather an exhortation to reform, with perhaps a view to the ultimate restoration of the Government to native hands.

His exhortation and prayers are not for the immediate overthrow of the foreign rule, but for such reformation, as may perhaps enable the Hindus in the future, to govern themselves. There is no call to arms and no war cry. (Extract from the judgment delivered by Mr. Harrison District Magistrate on 25th November 1902.)

Ala Ram's allegations were held to be false and he was bound over for good behaviour. (See judgment of Mr. Harrison dated 5th Nov. 1902.)

12. The first attempt to get the book proscribed on account of its criticism of Mohammedanism was made by some Moslems of the Punjab in 1926 about half a century after its first publication. The Arya Samaj under the guidance of Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha naturally made a vigorous protest. Thousands of Aryasamajists put their signatures to a vow declaring their firm resolve to keep the Satyarthaprakash in their possession and to promulgat it among others, and further declaring that they were prepared to make all kinds of sacrifices if any power sought to seize the book from their possession and to promptly obey the call of the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha for any action for the protection of the book. The only result of the propaganda was increased publicity of the Satyarthaprakash, more than one lac of its copies having been printed and pubished free or at nominal price after the agitation mentioned above.

13. Freedom of religious belief and freedom of expression are sacred principles and it is the bounden duty of every civilised Government to protect and safeguard them. We feel confident

ता० ५-९-४३ को देश भर में सत्यार्थ प्रकाश दिवस मनाया जावे

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरङ्ग का निश्चय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरग सभा ने जो २२-८-४३ को बलिदान भवन देहली मे श्रीयुत प० गगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जस्टिस प्रधान सभा के प्रधानत्व मे मुख्यतया सत्यार्थप्रकाश विरोधी आन्दोलन के विषय के विचार करने के लिए हुई थी, सर्व सम्मति से निम्न प्रस्ताव पास किया है :—

सत्यार्थप्रकाश के कुछ अश की जब्ती के सम्बन्ध में जो आन्दोलन हो रहा है इस विषय में यह सभा यह घोषणा कर देना आवश्यक समझती है कि—

(क) जैसे अन्य धर्मावलम्बियों के लिये उनकी धार्मिक पुस्तकें श्रद्धा, प्रेम और रक्षा का विषय है, उसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश आर्यसमाजियों की धर्म पुस्तक है और उनके लिये श्रद्धा, प्रेम और रक्षा का विषय है। सभा यह भी घोषणा करती है कि सत्यार्थप्रकाश का कोई भाग उचित आलोचना की सीमा के बाहिर नहीं जाता

that the Government of Sind or for the matter of it, any other Government will never allow itself to be led astray by such unholy propaganda into taking such action against a great religion as is suggested by some irresponsible and fanatically disposed agitators, which can only lead to very disastrous results

यह सभा सब लोगों को यह सूचना देती है कि प्रत्येक आर्य समाजी पूरे सत्यार्थप्रकाश की रक्षा करना अपना धर्म समझता है और इस कार्य मे बड़े से बड़े त्याग और बलिदान के लिये तैयार है। सभा की धारणा है कि प्रान्तीय अथवा भारत सरकार इस बात को दृष्टि में रखते हुये कि सत्यार्थप्रकाश आर्य समाज का एक धार्मिक ग्रन्थ है इसकी जब्ती के सम्बन्ध मे कोई कार्यवाही न करेगी।

(ख) यह सभा सब समाजों और सब आर्यों को आदेश देती है कि वे इस सभावित परीक्षा के लिये अपने आपको तैयार रखें।

(ग) यह सभा सब समाजों को आदेश देती है कि ता० ५ ९ १९४३ का एक सार्वजनिक सभा करके इस निश्चय के (क) भाग को प्रस्ताव रूप में अधिक से अधिक सख्या में स्वीकार करें और प्रस्तावों की प्रतिलिपि (१) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली (२) प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं (३) भारत सरकार (४) प्रान्तीय सरकारों तथा (५) समाचार पत्रों में भेजें।

समस्त प्रान्तीय समाजों और आर्य समाजों को आदेश दिया जाता है कि वे ५-९-४३ को सत्यार्थप्रकाश दिवस मनाकर उपर्युक्त प्रस्ताव के (क) भाग को पास करके निर्दिष्ट स्थानों पर भेजें। आर्य समाजों को यह भी आदेश दिया जाता है कि वे इस दिवस को पूरे समारोह, संयम और शान्ति के साथ मनायें।

इन्द्र विद्यावाचस्पति मन्त्री,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

सत्यार्थ प्रकाश और ईसाई मत समीक्षा

ऋषि दयानन्द और अन्य समालोचक

(लेखक—पण्डित धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति)

ऋषि दयानन्द ने अपनी अमरकृति सत्यार्थ प्रकाश के ११वें १२वें समुल्लास मे क्रमश पौराणिकमत तथा चारवाक जैन बौद्धमत की आलोचना करके १३वें समुल्लास मे बाइबिल के आधार पर ईसाई मत की आलोचना की है। इस समुल्लास की अनुभूमिका में ऋषि ने अपनी समालोचना के उद्देश्य को इन स्पष्ट शब्दों मे प्रकट किया है'—

"इस पुस्तक (बाइबल) के भाषान्तर बहुत से हुए हैं जो कि इनके मत में बडे बडे पादरी हैं उन्होंने किये हैं उनमें से देवनागरी वा संस्कृत भाषान्तर देखकर मुझ को बाइबल में बहुत सी शंकाएं हुई हैं उनमे से कुछ थोडी सी इस १३वें समुल्लास में सबके विचारार्थ लिखी है। यह लेख केवल सत्य की वृद्धि और असत्य के ह्रास होने के लिये है न कि किसी को दुःख देने वा हानि करने अथवा मिथ्या दोष लगाने के अर्थ । इस लेख से यही प्रयोजन है कि सब मनुष्य मात्र को देखना सुनना लिखना आदि करना सहज होगा और पक्षी प्रतिपक्षी होके विचार कर ईसाई मत का आन्दोलन सब कोई कर सकेंगे। इससे एक यह प्रयोजन सिद्ध होगा कि मनुष्यों को धर्म विषयक ज्ञान बढ़कर यथा योग्य सत्यासत्य मत और कर्त्तव्याकर्त्तव्य कर्म सम्बन्धी विषय विदित होकर सत्य और कर्तव्य कर्म का स्वीकार, असत्य और अकर्तव्य कर्म का परित्याग करना सहजता से हो सकेगा।'

(१३वें समुल्लास की अनुभूमिका)

इन शब्दों से ऋषि दयानन्द के भाव की पवित्रता स्पष्टतया प्रकट होती है। ऋषि दयानन्द ने ईसाईमत की जो युक्ति युक्त समालोचना सत्यार्थ प्रकाश में की उसका क्या परिणाम हुआ इस विषय मे जग द्विख्यात विचारक श्री रोमा रौला के निम्न शब्द महत्त्व पूर्ण हैं —

'Dayananda alone hurled the defiance of India against her invaders He declared war on Christianity and *his heavy massive sword cleft it asunder'* (Life of Shri Rama Krishna Param Hans)

अर्थात् अकेले दयानन्द ने भारत के विरोधियों का मुकाबिला किया। उसने ईसाई मत के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और उसकी भारी तलवार ने ईसाई मत के टुकडे२ कर दिये। इस समालोचना के सम्बन्ध में श्री रोमाँ रौला ने एक और बात लिखी है जिसका प्रतिवाद करना आवश्यक प्रतीत होता है क्योंकि ऐसे ही भाव

कुछ और ईसाई समालोचकों ने भी प्रकट किये हैं। श्री रोमॉरोला ने इस बात को स्वीकार करते हुए कि स्वामी दयानन्द की भारी तलवार ने ईसाइयत के टुकडे २ कर डाले लिखा है कि—'His (Dayananda's) criticism though vengeful unjust and injurious is of paramount interest for European Christianity'

अर्थात् यद्यपि स्वामी दयानन्द की ईसाई मत की समालोचना बदले के भाव से प्रेरित, अन्याय युक्त और हानिकारक है तो भी वह पाश्चात्य ईसाइयत के लिये विशेष उपयुक्त है।

इस विषय मे हमने ऋषि दयानन्द के जो शब्द १३ वें समुल्लास की अनुभूमिका से उद्धृत किये हैं उनसे यह स्पष्ट है ऋषि के अन्दर बदले की भावना काम न कर रही थी बल्कि केवल सत्य के प्रचार की इच्छा से ही उन्होंने यह समालोचना की थी। ऋषि की इस विषयक उदारता तेरहवें समुल्लास की अनुभूमिका के अन्त के इन शब्दों से भी स्पष्टतया झलकती है कि "अब मैं इस १३ वें समुल्लास मे ईसाई मत विषयक थोडा सा लिखकर सब के सन्मुख स्थापित करता हूँ विचारिये कि कैसा है।" इन शब्दों से यह स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द का यह आग्रह न था कि उन्होंने सत्य प्रकाशनार्थ जो आलोचना की है उसके अक्षर २ को प्रामाणिक माना जाए किन्तु उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करके सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग किया जाए इतना ही वे चाहते थे। इसी दृष्टि से उनकी समालोचना को पढ़ना चाहिये। ऋषि दयानन्द ने शुद्ध भाव से जो समालोचना की उसे अन्याययुक्त (Unjust) और बदले के भाव से की हुई (Vengeful) कहना ऋषि दयानन्द के साथ अन्याय करना और उनके भाव को न समझना है। हाँ यह मानने में कोई दोष नहीं कि ऋषि दयानन्द हिब्रू, ग्रीक और अंग्रेजी से परिचित न थे और बाइबल के हिन्दी अनुवादों (विशेषतः सन् १८६६ १८६१, और १८७४ ईसवी मे मिशन प्रेस इलाहाबाद से "पुराना' नियम"—१म और २य भाग तथा नया नियम' इस नाम से प्रकाशित) के आधार पर जैसे कि श्री प्रो० महेशप्रसादजी ने अपने लखों और मेरे नाम लिखे पत्रों मे सप्रमाण बताया है उन्होंने बाइबल की समालोचना की उसमे किसी किसी जगह अनुवाद की अशुद्धि वा अस्पष्टता आदि के कारण समझने मे भूल हो गई हो जैसे मैथ्यू रचित सुसमाचार १८।३ की समालोचना मे प्रतीत होता है जहाँ जब तक तुम बालकों के समान न हो जाओ तो स्वर्ग के राज्य मे प्रवेश न करने पावोगे।"

Verily I say unto you except ye be little children ye shall not enter into the kingdom of heaven

इसके अनुवाद के आधार पर ऋषि दयानन्द ने लिखा है 'बालक के समान होने के लेख से यह विदित होता है कि ईसा की बातें विद्या और सृष्टि क्रम से बहुत सी विरुद्ध थीं और यह भी उसके मन मे था कि लोग मेरी बातों को बालक के समान मान लें पूछें गाछें कुछ भी नहीं, आँख मींच के मान लेवें। यह भी सिद्ध हुआ जो

ईसा आप विद्याहीन बालबुद्धि न होता तो अन्य को बालवत् बनने का उपदेश क्यों करता।" इत्यादि। इस समालोचना में 'बालवत्' के भाव को सरलता वा Innocence के अर्थ में न लेकर (जैसा कि वस्तुतः होना चाहिये) अज्ञता के अर्थ में लेने को सर्वथा ठीक नहीं कहा जा सकता। ऐसी ही अनुवाद की अस्पष्टता वा अशुद्धता के आधार पर समालोचना में त्रुटि एक दो और जगह सम्भव है किन्तु इस सारी समालोचना को बहुत ध्यानपूर्वक इन दिनों पुनः पढ़ने के पश्चात् मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि ऋषि दयानन्द कृत समालोचना सम्पूर्णतया ठीक और युक्ति युक्त है और उसे हानिकारक वा Injurious नहीं कहा जा सकता क्योंकि उससे ईसाई विचारकों ने लाभ उठाकर अपने सिद्धान्तों और बाइबल में वर्णित ईसा के चमत्कारादि की नई व्याख्या प्रारम्भ कर दी है जिसके कुछ उदाहरण मैं आगे दूंगा।

ऋषि दयानन्द ने बाइबिल में पाये जाने वाली मरियम कुमारी से ईसा की उत्पत्ति ४ रोटियों से ४००० मनुष्यों का तृप्ति ईसा के हस्तस्पर्श से चार दिनों से मरे हुए लैजरस का जी उठना, अन्धों का आंखें पाना, बहरों का कान पाना, तीन दिन कबर में रहने के बाद ईसा का पुनरुत्थान आदि सृष्टि क्रम विरुद्ध बातों की स्पष्ट शब्दों में समालोचना की थी। पुराने वसीयत नामे (Old Testament) में ईश्वर का जो क्रूर मनुष्यवत् स्वभाव भेड़ बकरे बैल आदि की बलि से प्रसन्न होना, मनुष्यों की भाषाओं में गड़बड़ी पैदा कर देना जिससे वे मिलकर काम न कर सकें, ईर्ष्यालु होना आदि रूप में वर्णित किया गया है इनकी समालोचना करते हुए ऋषि ने लिखा —

'अब देखिये ये सब जङ्गली लोगों की बातें हैं वा नहीं? और परमेश्वर बैलों का बलिदान लेना और वेदी पर लोहू छिड़कना यह कैसी जङ्गलीपन असभ्यता की बात है? इत्यादि। इस प्रकार की समालोचना को कठोर समझा जाता है किन्तु हमारा दावा है कि पाश्चात्य समालोचकों ने ईसाइयत की जो समालोचना की है वह इससे कई गुणा अधिक कठोर है उदाहरणार्थ इङ्गरसोल ने उपर्युक्त बैल आदि की बलि से बाइबल के ईश्वर की प्रसन्नता सूचक वाक्यों पर निम्न समालोचना की है जो ऋषि के वचनों का अनुवाद सी प्रतीत होती है।

'Would a civilised God daub his altars with the blood of oxen, lambs and doves? Would he make all his priests butchers? Would he delight in the smell of burning flesh? (Ingersoll s lectures & Essays P 49)

अर्थात् क्या एक सभ्य ईश्वर अपनी वेदी को बैलों, भेड़ों आदि के खून से सिञ्चित करेगा? क्या वह सब पुरोहितों को कसाई बना देगा? क्या वह जलते हुए मांस की गन्ध से प्रसन्नता अनुभव करेगा? पृ०५५ पर इङ्गरसोल ने लिखा है Would it not be far better to admit that the Bible was written by barbarians in a barbarous, coarse and

vulgar age ? क्या यह मानना अच्छा न होगा कि बाइबल जंगली आदमियों ने एक जंगली और असभ्य जमाने में लिखी थी ? एक और स्थान पर इङ्गरसोल ने लिखा है कि 'The book called the Bible is filled with passages horrible, unjust and atrocious' P 23

अर्थात् बाइबल ऐसे वाक्यों से भरी हुई है जो भय कर अन्याय्य और क्रूरता पूर्ण हैं।

इङ्गरसोल के ग्रन्थों से हम अधिक उद्धरण देना आवश्यक नहीं समझते क्योंकि उन्हें ईसाई यह कह कर उड़ाने का प्रयत्न करेंगे कि इङ्गरसोल नास्तिक था। (यद्यपि यह सच्ची घटना नहीं है) पृ० ४२ में उसने इस बात को स्पष्ट किया है कि जब मैं 'God' ईश्वर शब्द का प्रयोग करता और उसका खण्डन करता हूँ तो मेरा तात्पर्य उस ईश्वर से है जिसने बाइबल के अनुसार मनुष्य को जीवन वृक्ष का फल खाने से रोका, स्त्रियों के प्रसवादि कष्ट को अपना शाप देकर बढ़ाया, क्रोध वश संसार को डुबाया, जिसकी वेदी रुधिर से सनी हुई है, जिसने निरपराध बच्चों की हत्या कराई, कुमारियों पर अत्याचार करवाया तथा संसार को क्रूरता और अपराध से भर दिया इत्यादि।

हम थॉमस पेन नामक दूसरे सुप्रसिद्ध विचारक की पुस्तक 'Age of Reason' से कुछ थोड़े से वाक्य उद्धृत करना चाहते हैं। पाठक स्वय विचार करें कि यह समालोचना अधिक कठोर है वा ऋषि दयानन्द की।

पृ० ८ में थॉमस पेन ने बाइबल विषयक अपने विचार को इन शब्दों में प्रकट किया है—

Whenever we read the *obscene stories* the voluptuous *debaucheries*, the cruel and tortuous executions, the unrelenting vindictiveness with which more than half the Bible is filled it would be more consistent that we called it the *word of a demon than the word of God*

अर्थात् जब कभी हम उन अश्लील कथाओं, घोर व्यभिचारों और क्रूरताओं के वृत्तान्त को पढ़ते हैं जिनसे आधे से अधिक बाइबल भरी हुई है तब यह कथन अधिक सङ्गत प्रतीत होता है कि इसे ईश्वर का वाक्य न कह कर एक दानव का वाक्य कहा जाए।' ऋषि दयानन्द की समालोचना में इस प्रकार के शब्द का प्रयोग नहीं पाया जाता। उन्होंने इतना ही लिखा है कि 'ये सब बातें अविद्वानों की हैं इस लिये यह पुस्तक (बाइबल) न ईश्वर और न विद्वान् का बनाया हो सकता है। (सत्यार्थ प्रकाश समु० १३ पृ० ३०३ वैदिक यन्त्रालय २४-वीं बार) ईसाइयत की कठोर समालोचना करते हुए थॉमस पेन पृ० ८७-८८ में लिखते हैं—

Of all the systems of religion that ever were invented, there is none more deragatory to the Almighty, more unedifying to man, *more repugnant to reason* and more contradictory in itself, than this thing called Christianity. Too absurd for belief too impossible to

convince and too inconsistent in practice, it renders the heart torpid or produces only atheists and fanatics' (Age of Reason 87-88)

"Did we find in any other book pretending to give a system of religion, the falsehoods, falsifications contradictions and absurdities which are to be met with in almost every page of the Old and New Testament, all the priests of the present day would triumphantly show their skill in criticism and cry it down as a most glaring imposition But since the books in question belong to their own trade and profession, they or at least many of them seek to stifle every enquiry into them and abuse those who have the honesty or courage to do it (The Age of Reason by Thomas Paine)

अर्थात् यदि किसी और धर्म पुस्तक में इस प्रकार की असत्य और बनावटी बातें, परस्पर विरोध और वाहियातपन होते जो कि पुराने और नये वसीयतनामे (बाइबल) के प्राय प्रत्येक पृष्ठ मे पाए जाते हैं तो आज कल के सब ईसाई पुरोहित व प्रचारक उनकी कठोर समालोचना करके उसे ठग बाजी सिद्ध करने का प्रयत्न करते। परन्तु क्योंकि ये पुस्तकें उनके अपने व्यापार वा पेशे से सम्बद्ध हैं इसलिये वे अथवा कम से कम उनमें से बहुत से उनके विषय मे किसी भी प्रकार की जांच को दबाने का प्रयत्न करते हैं तथा उन लोगों को गालिया देते हैं जिनके अन्दर ऐसा करने की सत्य निष्ठता (ईमानदारी) और साहस है।"

'जितने धर्म इस समय तक आविष्कृत किये जा चुके हैं उनमें से ईसाई मत से बढ़ कर ईश्वर के लिये अपमान जनक, मनुष्य की शान से नीचे तर्क विरुद्ध और परस्पर विरुद्ध कोई चीज नहीं है। यह विश्वास के लिये बिलकुल वाहियात, किसी को विश्वास दिलाने तथा आचरण मे लाने के अयोग्य होकर हृदय को जड़तापूर्ण बना देता है अथवा केवल नास्तिक और मतान्ध बना देता है।"

क्या ऋषि दयानन्द की समालोचना में इससे अधिक कठोर शब्दों का प्रयोग किया गया है? सर्वथा नहीं।

जोसेफ मैकेब और लेडी डिक्सी Joseph Macab and Lady Dixie ने The Religion of Women नामक ग्रन्थ में बाइबल को अत्यधिक कठोर शब्दों में आलोचना करते हुए लिखा है :—

' Upon the stern rock of research science has stretched the Bible and mercilessly dissected it With what result? With this It has proved that its tissue are sham. Its foundations are ignorance and superstition? This being so, shall women continue to bolster up a lie?" (Page 8)

"Superstition has asserted, proclaimed and enforced the subjection of woman and enjoined its conti-

nuance in obedience to the precepts of the Bible falsely called the word of God

Abominable falsehood The Bible is the word of man and the God therein is this creature deified Into the lips of that Deity man has breathed his ignorant thoughts and selfish desires chief of which was the possession of woman as a slave (The Religion of Woman Page 8)

अर्थात् विज्ञान ने अनुसन्धान की कठोर शिला पर बाइबिल का निर्दयता से विश्लेषण किया है और उसने यह पाया है कि इस की नसें बनावटी हैं। इसका आधार अज्ञान और अन्ध विश्वास पर है। ऐसी अवस्था मे भी क्या स्त्रिया इस असत्य का समर्थन करती रहेंगी? अन्ध विश्वास ने बाइबल की आज्ञानुसार जिस झूठ-मूठ ईश्वरीय वाक्य कहा जाता है स्त्रियों की गुलामी का समथन किया हैं। घृणित असत्य। बाइबिल मनुष्य की रचना है और उसका ईश्वर मनुष्य है जिस का देवता का रूप दे दिया गया है। मनुष्य ने उस देव के मुख मे अपने अज्ञान पूर्ण विचार और स्वार्थ पूर्ण इच्छाए रख दी है जिनमें से मुख्य स्त्रियों की गुलामी है।" इत्यादि

ऐसी ही भयङ्कर कठोर आलोचना Creed of Christendom by W R Greg 'Christianity and Evolution by Arthur Moss The Truth about Jesus of Nazereth by Philip Sidney इत्यादि सैकड़ों ग्रन्थों में की गई है जिन में से लेख विस्तार के भय से उद्धरण देना उचित नहीं प्रतीत होता परन्तु इतना लिखे बिने मैं नहीं रह सकता कि उस समालोचना के आगे ऋषि दयानन्द ने तो ईसा के बारे में इतना ही लिखा है कि ईसा केवल साधारण सूधा सच्चा अविद्वान् था न विद्वान् न योगी न सिद्ध था।' (सत्यार्थ प्रकाश १-३२४)

"इससे यह भी सिद्ध हुआ कि यीशु एक उस समय के जङ्गली मनुष्यों में कुछ अच्छा था।" (सत्याथ प्रकाश १३ समु० स० ३२६)

ईसा की शूली चढाये जाने और बाइबल के अनुसार उसके अति दुःखी होने और अन्तसमय हे मेरे ईश्वर तू ने क्यों मुझे त्यागा है (He began to be very heavy He cried with a loud voice saying my God, my God why hast Thou forsaken me (Matt 26) पर टिप्पणी करते हुए ऋषि दयानन्द ने तो सहानुभूतिपूर्वक यह लिखा कि 'सर्वथा यीशु के साथ उन दुष्टों ने बहुत बुरा काम किया जो आश्चर्यकर्म उसने प्रथम किये वे यदि सच होते तो अब भी क्रूस पर से उतर कर सब को अपना शिष्य बना लेता' (स० प्र० ५ ३२६) इत्यादि।

परन्तु The Truth about Jesus of Nazareth के लेखक फिलिप सिडनी ईसा को सच्चा सदाचारी आदमी भी मानने को तय्यार नहीं। वे इस मृत्यु के समय ईसा के दुःखी होकर चिल्लाने की घटना पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि —The fact that Jesus did not show the courage in the face

of death is simply explained by the circumstance that he was confronted with the thoughts of the life of deception he had been leading' (The Truth about Jesus of Nazereth P 108)

अर्थात् इस सभी घटना की व्याख्या कि ईसा ने मृत्यु के अवसर पर कुछ साहस नहीं दिखाया इसी से हो सकती है कि उस समय उस के सामने उस कपट मय जीवन के विचार उपस्थित हुए जिसे वह व्यतीत करता रहा था इत्यादि।

अब निष्पक्षपात पाठक स्वय बताए कि ऋषि दयानन्द की समालोचना इन भयकर कठोर आलोचनाओं के सामने क्या है जो अनेक ईसाई प्रचारक उन्हें ही कोसते हुए नहीं थकते उन्हे और आर्यसमाजियों को अपना सबसे प्रबल विरोधी समझते है ? वस्तुत ऋषि दयानन्द तो सबके हित चिन्तक थे। उनके लिये कोई शत्रु न था न वे किसी के दिल को दुखाना चाहते थे केवल सत्य का विशुद्ध रूप में वे सबके सन्मुख रखना चाहते थे और यही काय आर्य समाज कर रहा है। यह प्रसन्नता की बात है कि ईसाई विचारकों ने भी ऋषि दयानन्द तथा अन्य समालोचकों की समालोचना से लाभ उठाकर चमत्कारादि सृष्टिक्रम और बुद्धि विरुद्ध बातों की नई व्याख्या शुरू कर दी है। रेवरेन्ड स्टैन्ली जोन्स जैसे अच्छे ईसाई प्रचारक अब ईसाई मत के सिद्धान्तों पर बल न देकर केवल ईसा के जीवन को ही आदर्श रूप में रखने का प्रयत्न करते दिखाई देते हैं। 'The Story of Christ' by Giovanni Papini नामक पुस्तक में जो इतनी लोकप्रिय हुई कि सन् १६२३ में जब वह प्रथम बार प्रकाशित हुई उसके मार्च से अगस्त के अन्दर १० सस्करण निकले। ईसा के पानी को शराब के रूप में परिवर्तित करना अजीर के वृक्ष को शाप देकर उसे सदा के लिये फल रहित कर देना आदि की आलकारिक व्याख्या की गई है। उसके अनुसार The fig tree stands for Jewish religion which now produces nought but leaves—that symbolise the rites and ceremonies Jesus that is hungry for justice and for love sought in vain among those leaves for the sustaining fruit of mercy and holiness Let it wither away for all eternity then other people will bring forth the good fruit' (P 144)

अर्थात् अजीर के वृक्ष से तात्पर्य यहूदी मत से है जिस के ऊपर सिवाय बाह्यक्रिया कलाप रूप पत्तों के और कुछ नहीं। ईसा न्याय और प्रेम के लिये भूखा था इनसे उसकी तृप्ति नहीं हो सकती थी इसलिये इन के नाश का विचार किया ताकि अच्छे फल की अन्यत्र उपलब्ध हो सके।

४ रोटियों से ४००० की तृप्ति की भी ऐसी आलकारिक व्याख्या की गई है। Spiritual bread in itself is miraculous The bread of truth, the bread of joy, the mystic loaf is never consumed can never be consumed' इत्यादि (The story of Christ P 147)

अर्थात यहाँ साधारण रोटियों से तात्पर्य नहीं आध्यात्मिक भोजन से अथवा सत्य, आनन्द

आदि के रहस्यमय भोजन से मतलब है जो कभी समाप्त नहीं होता इत्यादि

इस ग्रन्थ मे Our Father in Heaven' की व्याख्या में लिखा है कि In Heaven का अर्थ यहाँ In spirit or human spirit अर्थात् आत्मा में विद्यमान परमेश्वर का है।

'Miracles in the New Testament" अर्थात् बाइबल मे चमत्कार नामक पुस्तक के लेखक रेवरेन्ड थॉम्पसन (Rev Thompson) ने भी इन चमत्कारों की ऐसी ही आलङ्कारिक व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। ईसा की मरियम कुमारी से उत्पत्ति के विषय मे उस पुस्तक में स्वीकार किया है कि The testimony for virgin birth is not so good (P 2.9) अर्थात् इस विषयक साक्षी बहुत अच्छी नहीं है। भूतों के निकालने आदि विषय में इस ग्रन्थ के लेखक ने कहा है कि उससे तात्पय पागल पन को दूर करने का था क्योंकि ईसा ने उस समय के प्रचलित विश्वास को अन्यों की तरह स्वीकार कर लिया था।' In this as in all other matters affecting the scientific knowledge of the age, he adopted the reservedly current theories'

सेन्टपीटर के पानी पर चलने का अर्थ इसग्रन्थ के लेखक It is a symbolical representation of Peter's readiness to go with Jesus both to prison and death" (Page 74.)

ईसा के साथ जेल वा मृत्यु के मुख में जाने के लिये उसकी तय्यारी बतलाते हैं। ऐसी ही व्याख्या वे अन्य चमत्कारों की करते हैं जिसे हम विस्तार भय से यहा नहीं दे सकते। यह सब प्रयत्न ऋषि दयानन्द तथा अन्य सुधारकों तथा समालोचकों द्वारों की गई समालोचना का परिणाम है इसमें सन्देह नहीं यद्यपि सम्भवत सब इसको स्वीकार न करेंगे। इस विषय में श्री रोमाँ रौला के वाक्यों को हम उद्धृत कर ही चुके हैं। स्व० स्वामी सर्वदानन्द जी सुनाया करते थे कि एक बार उनकी रेल गाड़ी में एक पादरी से बात चीत होगई। उन्होंने पूछा 'उत्पत्ति की पुस्तक' ((Genesis) मे जो लिखा है कि सूर्य चौथे दिन पैदा हुआ। जब सूर्य नहीं था तो पहले तीन दिनों का ज्ञान किस तरह हुआ। इस पर उसने उत्तर दिया--चौथे दिन से तात्पर्य चौथे दर्जे से है अर्थात् पहले ईश्वर दूसरे आकाश तीसरे हवा चौथे सूर्य। इसपर स्वामी जी ने पूछा यह समाधान कहा से सूझा ? पादरी ने उत्तर दिया जिसने आप को 'क्यों' कहना सिखलाया उसी ने हमें सिखलाया इत्यादि।

अब तो बडे बडे पादरी भी बाइबल की विज्ञान विरुद्ध बातों को मानने से इन्कार करने लगे हैं। बर्मिङ्घम के लाट पादरी डा० बार्न्स ने 'Science and Religion' पर रेडियो से भाषण करते हुये इस बात को स्पष्ट शब्दों में कह दिया है 'I wish to make it quite clear that many beliefs associated with religious faith in the past *must be abandoned* अर्थात् कई धार्मिक विश्वास जो भूतकाल में प्रचलित रहे हैं, उन्हें अवश्य छोड़ देना चाहिये क्योंकि वे विज्ञान विरुद्ध हैं। इन के उदाहरण पृथिवी का जगत् का स्थिर

निमन्त्रण

("विकल" कवि जी)

समय परीक्षा का आया है,
ओ ! ऋषि की सन्तान उठो
वीर शिवाजी के साहस,
राणा की अन्तिम आन उठो
धर्म यज्ञ की उन असख्य,
आहुतियों के अरमान उठो ।
सिर से बाँध कफन अब सवस,
करने को बलिदान उठो ॥
अपनी आँखों से देखोगे,
क्या तुम अपना होते ह्रास ?
जान भले ही जाय न होने,
पाय जब्त सत्यार्थ प्रकाश ॥

नारायण स्वामी दधीच की,
हड्डी का हो वज्र प्रहार ।
श्रद्धानन्द के पूत इन्द्र की,
उर मे हो भीषण हुकार ॥
आर्यावर्त के कण कण मे,
फिर ओ३म् नाम जाये गुँजार ।
बालक बूढे युवा युवतियाँ,
कहैं विपची को ललकार ॥
'हिन्दी,हिन्दू,हिन्द' विकल" का,
जब तक होता नहीं विनाश ।
हम भी देखें तब तक कैसे,
जब्त करै सत्यार्थ प्रकाश ॥

केन्द्र होना आदि देते हुए चमत्कारों के विषय मे कहा है 'If by miracles we mean large breaches in the uniformity of nature such miracles do not occur in human experience Here are typical results of scientific investigations *which all must accept*" (Science and Religion a Synposium P 57)

अर्थात् यदि चमत्कारों से तात्पर्य प्रकृति नियमों में भग है तो ऐसे चमत्कार मानवीय अनुभव में नही आते अत इन विज्ञान के परिणामों का अवश्य सब को स्वीकार करना ही चाहिये ।

जादू वह जो सर पर चढ़ कर बोले । ऋषि दयानन्द की समालोचना का उद्देश्य इस प्रकार पूरा हो रहा है इस बात का हमें हर्ष है । यदि अन्ध विश्वास की बातों को लोग छोड़ कर युक्ति युक्त व्याख्या करने लगें तो हमारे लिये यह प्रसन्नता की बात है ॥

अखिल भारतीय आर्य (हिन्दू) धर्म सेवा संघ की घोषणा

सत्यार्थ प्रकाश पर रोक

समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ है कि सिन्ध सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश को गैर कानूनी घोषित करने का विचार अभी तक नहीं छोड़ा है। इस निश्चय से समस्त हिन्दू जाति की धार्मिक भावना को गहरी चोट लगी है। आर्य समाज वृहद् हिन्दू जाति का एक अंग है। सत्यार्थ प्रकाश हमारा धार्मिक ग्रन्थ है और उस पर लगाई गयी रोक हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कठोर आघात होगा।

हम जोरदार शब्दों में सिन्ध सरकार से ऐसी आज्ञा प्रचारित करने का विचार त्याग देने का आग्रह करते हैं। अन्यथा इसकी प्रतिक्रिया हुए बिना न रहेगी। सिन्ध के प्रत्येक हिन्दू के पास सत्यार्थ प्रकाश के कम से कम १४ वें समुल्लास की हस्तलिखित प्रतियाँ पहुंचाई जायँगी। सिन्ध सरकार अपना निश्चय बदल कर हिन्दुओं के इस बढ़ते हुए असंतोष को दूर कर सकती है।

हम आर्य समाज, सनातन धर्म सभा एवं हिन्दू महासभा की देशव्यापी प्रत्येक शाखा सभाओं से अपील करते हैं कि वे भी उक्त वाक्य का प्रस्ताव पास करके सिन्ध सरकार के पास भेजें।

रामशंकर त्रिपाठी प्रधान मन्त्री,
अखिल भारतीय आर्य हिन्दू धर्म सेवा संघ,
विरला लाइन्स सब्जी मंडी, देहली।

सामाजिक-जगत्

सार्वदेशिक दयानन्द भिक्षु मंडल के समाचार

यह तो आर्य जनता को ज्ञात ही है, कि इस मण्डल की स्थापना आर्य सन्यासी और वानप्रस्थियों को सगठित करना और उनके द्वारा श्री महर्षि दयानन्द जी सरस्वती द्वारा निर्दिष्ट एव पुनरुज्जीवित वैदिक धम प्रचार करना इस उद्देश्य से की गई थी।

उद्देश्य पूर्ति

यद्यपि यह मण्डल का बाल्यकाल ही है, परन्तु अपने इस बाल्यकाल मे ही मण्डल आशातीत उन्नति करता दिखाई दे रहा है। हा भी क्यों न, जब महात्मा नारायण स्वामी जी जैसे महा पुरुष मण्डल की बागडोर अपने सुदृढ़ हाथों मे सँभाले हुये हैं। इस समय मण्डल की ओर से २० सन्यासी वानप्रस्थी कार्य कर रहे है जिन्हे मण्डल की ओर से प्रमाण पत्र दिये हुए है। इस मास में तीन महानुभावों को प्रमाण पत्र दिये गये हैं १ श्री स्वामी आत्मानन्द जी भिक्षु २ श्री महात्मा सत्यव्रती जी वानप्रस्थी ३ श्री ब्र० भास्करानन्दजी

सिन्ध प्रान्त में मण्डल की ओर से प्रचार में सहयोग

आर्य प्रतिनिधि सभा कराची के विशेष अनुरोध पर मण्डल ने तीन महात्मा भेजने का निश्चय किया है । श्री स्वामी आत्मानन्द जी भिक्षु जो इस समय राजस्थान मे कार्य कर रहे है एक मास में सिन्ध पहुच जायेंगे। ३ श्री महात्मा सत्यव्रत जी वानप्रस्थी इलाहाबाद, शिमला में प्रचार करने के बाद अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में सिध चले जायेंगे और जब तक प्रतिनिधि सभा को आपकी सेवाओं की आवश्यकता होगी तब तक वहीं कार्य करेंगे। श्री स्वामी नारायणानन्द जी जो इस समय हैदराबाद (दक्षिण) मे कार्य कर रहे हैं दीपावली तक सिध चले जायेंगे। इसी प्रकार ब्र० भास्करानन्द जी को डेरा गाजी खा भेजा जा रहा है वहाँ प्रचार की बडी जरूरत है। रियासत जम्मू (भद्रवा) से तार द्वारा २०) किराया आया है प्रचारार्थ श्री महाशय रामभरोसे जी वानप्रस्थी जा रहे हैं।

वृहत् यज्ञ व वेद प्रचार की आयोजना

देवबन्द जि० सहारनपुर के प्रसिद्ध सेठ श्री दयाराम जी के निवेदन पर मण्डल की ओर से आगामी अमावास्या से चारों वेदों द्वारा वृहत यज्ञ रचने तथा वेद प्रचार की आयोजना हो रही है।

साधु महात्माओं से निवेदन

जिन साधु महात्माओं को वैदिक धर्म प्रचार का उत्साह है उनसे प्राथना है कि वह मण्डल के साथ सगठित होकर वेद प्रचार मे सहयोग दें और मन्त्री मण्डल से प्रमाण पत्र मगालें, जिससे उनकी सेवाओं से लाभ उठाया जा सके, इस वक्त आर्य जनता की दृष्टि मण्डल पर विशेष रूप से लगी है। बाहिर से धडाधड मागें आ रही हैं। आशा है कि सन्यासी, वानप्रस्थी हमारी इस प्रार्थना पर ध्यान देंगे।

विशेष आवश्यकता

मण्डल की ओर से ४ वर्षों से एक धर्मार्थ औषधालय श्री वैद्य प्रेमानन्द जी वानप्रस्थी की अध्यक्षता में चल रहा था, किन्तु उनके अतिरोगी होने से औषधालय बन्द पड़ा है, जिसके लिये एक अनुभवी सन्यासी या वानप्रस्थी की आवश्यकता है। इसी प्रकार एक अनुभवी वानप्रस्थी की कार्यालय के लिये आवश्यकता है जो हिन्दी उर्दू अंग्रेजी जानते हों इन दोनों महानुभावों की निबाहार्थ उचित सेवा मण्डल की ओर से की जावेगी। आशा है पत्र व्यवहार करेंगे।

मन्त्री—

सुन्दरदास आर्य वानप्रस्थ

रशियन डाक्टर का शुद्धि संस्कार

आर्य समाज देहरादून ने गत रविवार को एक अंग्रेज लड़की का शुद्धि सस्कार किया। लड़की के पिता भी सस्कार के अवसर पर उपस्थित थे, और सस्कार से बहुत प्रभावित हुए। समाज की ओर से उनको हिन्दी व अंग्रेजी भाषा की पुस्तकें दी गईं। नाम प्रतिभा देवी रखा गया।

रूस के प्रसिद्ध डाक्टर रोमोरोव का प्रेम आर्य समाज की ओर बढ़ा। देहरादून समाज ने उनको शुद्ध कर उनका नाम डा० कृष्णकुमार रखा है डाक्टर साहब deningrale के एम० डी० हैं काबुल मे Soviet consulate मे रह चुके हैं। इस समय आप देहरादून मे हैं और अपनी प्रैकटिस करते हैं। इस शुद्धि की चारों ओर बहुत प्रशसा हो रही है।

—मन्त्री आर्य समाज देहरादून

एक सूचना—

प० सिद्धगोपालजी कविरत्न साहित्य वाचस्पति देहली सूचित करते हैं कि बहुत सी आर्य समाजें उन्हे प्रचारार्थ बुलाती हैं पर पत्रों पर पता ठीक न होने के कारण वे पत्र देर में मिलते हैं जिससे उत्तर मे भी विलम्ब हो जाता है। उनके साथ पत्र व्यवहार (१) आर्य समाज दीवान हाल देहली अथवा (२) द्वारा मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के पते पर करना चाहिये॥

राजस्थान के बाढ पीडितों की सहायता

आर्य कुमार सभा, नई देहली—(डी ए वी सैकैण्डरी हायर स्कूल) की ओर से राजस्थान प्रान्त के बाढ पीडितों को सहायता के लिये चार सौ ४००) रुपया इकट्ठा किया गया है। यह रक़म देशभक्त श्री कुंवर चान्दकरणजी शारदा प्रधान राजस्थान प्रान्तीय आर्य्य प्रतिनिधि सभा के नाम भेज दी गई है।

देवव्रत धर्मेन्दु

सचालक—आर्यकुमार सभा

"The Satyarth Prakash" and Arya's Duty.

The following resolution was passed unanimously by the Working Committee of the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha in its meeting held on 22-8-42 at Delhi

' In connection with the agitation going on for the proscription of a portion of the Satyarthprakash the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha, considers it necessary to issue the following declaration —

(a) The Satyarth Prakash is a religious book of the Arya Samajists, and is an object of reverence, love and protection for them as the religious books of the followers of other religions are for them This Sabha

AryaSamaj declares that no portion of the Satyathaprakash transgresses the proper limits of criticism, This Sabha notifies to all people that every Arya Samajist looks upon the protection of the whole Satyarth prakash as his duty and is prepared for the greatest sacrifice for this purpose The Sabha trusts that keeping this in view, the Government of India will take no steps against the book

(b) This Sabha directs all Arya Samajes and Aryas all over the world to keep themselves in readiness for a possible ordeal in this connection

(c) The Sabha directs all Arya Samajes that on 5-9-1943, they should hold a big public meeting and adopt a resolution on the lines of para (a) of this resolution, and send copies of that to

(1) The Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha, Delhi (2) The Provincial Arya Pratinidhi Sabha, (3) The Government of India, (4) The Provincial Government, (5) The Press "

राजस्थान के बाढ़ पीड़ितों की सहायता कीजिये

क्या मातृभूमि वृथा तुम्हारी विश्व में जननी बनी।
देते करोड़ों देश हित हैं अन्य देशों के धनी॥

३० जुलाई को मेवाड़ और मारवाड़ की पहाड़ियों में भारी वर्षा हो जाने के कारण भीम, देवगढ़ आदि अनेक तालाबों के बाँध टूट गये और इस कारण खारी नदी में भीषण बाढ़ आ गई। खारी नदी लगभग १०० मील लम्बी है। इस प्रकार कुछ ही घंटों में ४०० वर्ग-मील का इलाका जल-मग्न हो गया। लोगों को भाग कर बचने का भी अवसर नहीं मिला। कई हजार नर नारी व पशु मर गये अथवा बह गये। लाखों रुपयों की सम्पत्ति का नाश हो गया। कई गाँव मलियामेट हो गये।

बनास नदी, मानसी नदी, कोठारी नदी तथा खारी नदी इन सब के किनारे बसने वाले गाँवों को धन, जन की अपार हानि हुई है। गाँवों का दृश्य बड़ा करुणा जनक है। बाढ़ के कारण भीलवाड़ा से गुलाबपुर तक के मेवाड़ के ग्रामों में करीब ६ हजार आदमी तथा ५६ हजार पशुओं की क्षति बताई जाती है। यद्यपि मेवाड़ सरकार ने सहायतार्थ एक लाख रुपया प्रदान किया है तथापि इतनी बड़ी क्षति की पूर्ति के लिये यह रकम बहुत थोड़ी है और सार्वजनिक सहायता की अत्यन्त आवश्यकता है। इसी प्रकार जयपुर राज्य में मालपुरा निजामत की टोडा तहसील नास व खारी नदी की बाढ़ के कारण कई गाँवों को बहुत नुकसान पहुँचा है। जयपुर सरकार के पास बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों में सहायता पहुचाने के सम्बन्ध में बहुत से सुझाव रक्खे गये हैं। फिर भी इस क्षेत्र में भी जनतासे सहायता व सहयोग की भारी आवश्यकता है। अनेक सस्थाओं ने तथा जनता पीड़ित क्षेत्रों में अन्न, वस्त्र बाट कर बहुत सहायता पहुंचाई है। अजमेर-मेरवाड़े में—टाटगढ़ से लेकर देवली तक कई मेरवाड़े के गांव विजयनगर राजनगर, देवगढ़, बरल, अशारा, सदारी, गुलगॉव, चौसला, कादेड़ा, गुढा आदि अनेक गाव व कस्बे बर्बाद हो गये हैं। इनमें से जो लोग बच कर आये हैं, उनकी आत्म-कथा सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। बेचारे बे खबर लोग न तो खुद बच सके और न अपने बाल-बच्चों और धन को बचा सके। श्रीमती आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा तथा राजस्थान प्रान्तीय हिन्दू-सभा के कार्यकर्ता निरन्तर बाढ़-पीड़ित क्षेत्रों में दौरा कर रहे हैं। और यथाशक्ति अन्न व वस्त्र से सहायता पहुँचा रहे हैं। उन्होंने मृत पशुओं तथा मनुष्यों की लाशों को दफनाने में मदद पहुँचाई है और अन्न वा वस्त्र तथा सिरकिया जल विप्लव से पीड़ित

लोगों में बाँटी है।

ब्यावर, नसीराबाद, अजमेर आदि नगरों के व्यापारियों ने तथा मेयोकालेज, क्षत्रिय सभा के स्वयंसेवकों ने भी पर्याप्त सहायता पहुंचाई है। सरकारी सहायता केम्प भी स्थान २ पर खुल गये हैं और किसानों को अन्न बाँटा जा रहा है। परन्तु यह सहायता पर्याप्त नहीं है। अभी भी बहुत से गाँवों मे अनाज सिरकियों तथा कपड़ों की विशेष आवश्यकता है। सर्दी का मौसम सिर पर है। ग़रीबों के पास ओढने बिछाने के लिये कुछ नहीं है। इसलिये उन्हें सर्दी से बचने के लिये कम्बल, रुई की बन्डिया बाटनी होंगी। इसके अलावा मौसमी बुखार स बचने के लिये उपयोगी औषधियों की भी आवश्यकता है। इस प्रलयकारी बाढ़ ने हजारों घर बरबाद कर दिये, हजारों बच्चों व औरतों को अनाथ कर दिया, हजारों धनवानों को गरीब बना दिया। हजारों के पास खाने को दाना नहीं है, रहने को झोंपड़ी नहीं है और पहिनने ओढ़ने को कपड़ा नहीं है। सैकड़ों मलेरिया बुखार तथा अन्य फोड़े फुन्सी आदि की बीमारियों से ग्रस्त हैं। कुओं में मिट्टी भर गई है तथा मकान गिर गये हैं। खेती बिल्कुल बर्बाद हो गई है। अत हमारा धर्म है कि हम गरीब किसानों को मदद देकर उनको खेती करने लायक बनावें।

श्रीमती आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा तथा राजस्थान प्रांतीय हिन्दू-सभा निरन्तर जनता की बाढ़ के दिन से लेकर अब तक सेवा कर रहीं हैं और केन्द्रीय बाढ़ पीड़ित सहायक सभा जो अजमेर टाउन हाल में बनी थी उसके साथ भी सहयोग दे रही हैं। अत जनता का परम कर्त्तव्य है कि वह तन, मन, धन से सहायता और सहयोग देकर हमारे हाथ मजबूत करें ताकि हम जनता की और भी अधिक सेवा कर सकें। बाढ़ पीड़ित भाइयों की सहायता के लिये धन, अन्न, वस्त्र इत्यादि निम्निलिखित पतों में से किसी एक पते पर भेजना चाहिये।

निवेदक—

चाँदकरण शारदा	घीसूलाल एडवोकेट
प्रधान, राजस्थान प्रान्तीय हिन्दू-सभा,	प्रधान, आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा,
अजमेर	अजमेर

गुरुग्रन्थ साहेब में खण्डन

[लेखक—श्री 'देव' जी होशियार पुर (पञ्जाब)]

[हरदोखानपुर, होशियारपुर के निवासी श्री देवजी ने गुरुग्रंथ साहेब का भली भाँति अध्ययन करके एक विस्तृत लेख 'सार्वदेशिक' में प्रकाशनार्थ भेजा है जिसमें १०० वचन गुरुग्रन्थ साहेब से उद्धृत किये गये है। खेद है कि लेख देर में पहुँचने और स्थानाभाव के कारण हम उनमें से कुछ थोडे से वचनों को ही यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। —सम्पादक]

सत्यार्थ प्रकाश को देखकर आज मत मतान्तर के लोग चिढ जाते हैं। चिढने का कारण केवल एक है —स्वार्थ एव पक्षपात। यदि आधुनिक युग के निर्माता सत्यगुरु महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती निर्मित सत्यार्थ प्रकाशादि अनेक पुस्तकें स्वार्थ व पक्षपात रहित होकर पढ़ी जायें तो स्पष्ट ज्ञात हो जावेगा कि ऋषि का उद्देश्य न तो कोई नवीन पथ ["आज्ञा भई अकाल की तभी चलाओ पथ" की भाति] चलाने की इच्छा थी तथा न अपना पाण्डित्य दिखाने का अभिमान था प्रत्युत वह तो प्राचीन वैदिक सभ्यता जो कि अविद्या अधकार मे ग्रसित थी और विद्या रूपी सूर्य का प्रकाश करके मनुष्य मात्र का कल्याण चाहते थे। "परोपकाराय सता विभूतय"। भारत को जगद्गुरु ही नहीं अपितु ससार में "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" इस पवित्र वेदादेश द्वारा राम-राज्य चाहते थे। यदि आज ऋषि की समालोचनाओं *को दिल आज़ारी, गालियां तथा हरेक की डाढी और* पगड़ी पर हाथ डालना कहा जाये तो अपनी बुद्धि। प्रथम तो ससार का ऐसा कौनसा मत है जो कि एक दूसरे की आलोचना पर न टिका हुआ हो। द्वितीय डाढी और पगडी वाले आज ससार में दाल में नमक जैसे है यदि वे अपनी आकृति को देखकर उपरोक्त वाक्य कह कर सभी को सम्मिलित करके सर्वप्रियता चाहते हों तो यह भी ठीक नहीं है क्यों कि आपका इष्ट है ग्रन्थ साहब। जिसमें लिखा है कि "जो कुछ करे सु आपे स्वामी" म० ४ बैराडीं राग, इसका अनादर हो जाता है आपके अनुसार जो कुछ हो रहा है वह परमात्मा कर रहा है तो फिर काहे का शोक क्यों कि ईश्वर को जैसा कि सत्यार्थ प्रकाश मे समालोचना द्वारा सुधार विधि है ऐसा ही स्वीकृत है। रही बात आर्यसमाज की सर्व प्रियता की सो ससार जानता है जितना प्रचार आपका ५०० वर्ष का है तथा जितनी सख्या हो पाई है उससे कहीं अधिक सुव्यवस्था मे अधिक मनुष्य सख्या केवल ६० वर्षों में आर्यसमाज की सारे विश्व में पाई जाती है यह *सर्व-प्रियता है या अप्रियता,* अभी क्या देखना जादू वह जो सर पर चढ कर बोले। मेरा निजी विचार है कि सूर्य के प्रकाश के सामने चन्द्र नक्षत्रों की क्या आवश्यकता। यदि ससार में

मुसलमान ही सूर्य वत् हैं तो हिन्दू क्यों हैं तथा सिक्खों का पथ सूर्य वत् प्रकाशित है तो अन्य क्यों हैं इसी प्रकार प्रत्येक मत का समझो। आज ऋषि ने ठोकर लगाई प्रत्येक मत चेतन हो गया कोई अर्थ बदलने लगा, किसी से अर्थ बदले न जा सके तो नालिशें करनी आरम्भ की तथा बलिदान किये, कोई ऋषि की वसति देख कर दिल साडू कहने लगा। मै अधिक विस्तार न करके इस लेख मे सिद्ध करना चाहता हूँ कि गुरु ग्रन्थ साहेब मे भी अनेक स्थानों पर कठोर खण्डन है। ऋषि दयानन्द ने किसी को गाली नहीं दी यदि दी हो तो सिद्ध करके दिखाइये जिस प्रकार अन्य कई मत-मतान्तरों के प्रवर्तकों ने गोली और गाली दोनों का सहारा लिया देखिये आज कादिया में किस मत के ऊपर छापा नहीं मारा जा रहा है वह कृष्ण का अवतार अपने को वेदों से तथा गीता से सिद्ध कर रहा है बताइय छोटी गाली है जो कि कृष्ण को एक गौ-भक्षक बनाया जाय और वेदों को छोडकर लिङ्ग शिखा कटा कर नमाज पढे। प्रथम तो वेदों मे इस प्रकार की गप्प है ही नहीं यदि कुरान से सिद्ध करे तो ठीक है। इसी प्रकार कई ट्रैक्ट बे सर पैर के लिखे हैं जो कि खुल्लमखुल्ला आर्यसमाज के लिये भी तथा दूसरों के लिये भी दिल साडू गालिया कही जा सकती हैं। किन्तु हमारे प्यारे कुछ अकाली भाई इनको दिल साडू नहीं कहेंगे कदाचित् इन्हे आर्यसमाज से कुछ विरोध है जो कि हिन्दू जाति का सिर है जिसको ससार हैदराबाद सत्याग्रह के पश्चात् पूर्ण रीति से समझ रहा है क्या आर्यसमाज सनातन शुद्धि, सगठन करके हिन्दुओं को जीवित रखना नहीं चाहता है? खैर मैं अपने विषय में प्रवेश करके ग्रथ साहब (१४३० पेजी) से सप्रमाण लिख रहा हू जिससे जनताको ज्ञात हो जाय कि गुरुबाणी खण्डनात्मक व मण्डनात्मक विषय में कितनी प्रबल है:—

पढ़ २ पण्डित जोतकी थके भेखी भरमि भुलाइ।
सिरी राग म० ३ पृ० ६८॥

षटु सासत विचरत मुख गियाना।
पूजा तिलकु तीरथ इसनाना॥
निवली करम आसन चौरासीह इन महि साति न आवै जीव॥२॥
अनिक वरष कीए जप तापा।
गवनु कीया धरती भरमाता॥
इकु खिनु हिरदै साति न आवै जोगी बहुडि बहुडि उठि धावै जीव॥३॥
माझ राग म० ५ पृ० ६८

सिमृति सासत वेद बखाणै।
भरमे भूला ततु न जाणै॥
माझ राग म० ३ पृ० ११४

सतिगुरु न सेवहि मूरख अध गवारा।'
माझ राग म० ३ पृ० ११५

इस भाति पौराणिक तथा नास्तिक वाद आदि के खण्डन मे बडे कठोर शब्दों का प्रयोग किया गया है ससार में नास्तिक (चार्वाक इत्यादि) तथा पौराणिक मण्डल इन शब्दों को कैसे सहन कर सकता है। यदि उन्हें पता लग जावे। ग्रन्थ साहब का कोई पृष्ठ ऐसा नहीं है जिसमें इस भाति कठोर वचन नास्तिकों तथा अपनी दृष्टि में भूले मार्ग वालों को न कहे गये हों साधु वृन्द! श्रम पूर्वक ग्रन्थ साहब पढ़ २ प्रमाण प्राप्त कर लीजिये। ते साकत चोर जिन नाम

विसारिया, इत्यादि कहा तक लिखें) म ४ पृ १७०

धोती खोल विछाये हेठ ।
गरधप वागू लाहे पेटि ॥
पूजा तिलक करत इसनाना ।
छुरी काढि लेवै हथि दाना ॥
वेदु पढै मुखि मीठी वाणी ।
जोआकुइ तन सगै पराणी ॥

राग गौडी म० ५ पृ० २०१

अधम चडाली भई ब्राह्मणी सूदी ते सो सटाई रे ।

राग आसा म० ५ पृ० ३८१

ब्रह्मा विसनु महादेउ माहिआ ।

राग आसा म० ५ पृ० ३६४

पढि पढि पडित मोनी थाके भेषी मुकति न पाई ।

राग आसा म० ५ पृ० ४४०

पढ़ पुस्तक सन्ध्या वाद ।
सिल पूजसि बगुल समाध ॥
त्रैपाल तिहाल बिचार ।
गलि माला तिलकु ललाट ॥
दुइ धोती वसत्र कपाट ।
सभि फोकट निसचउ करम ॥

राग आसा म० १ पृ० ४७०

जे करि सूतकु मनीयै सभ तै सूतकु होइ ।
गोहे अतै लकडी अदरि कीड़ा होइ ॥
गोहे जेते दाणे अन के जीआ बाझु न कोइ ।
पहिला पाणी जी उहै जितु हरिआ सभु कोइ ॥
सूतकु किउ करि राखीऐ सूतकु पवै रसोइ ।
नानक सूतकु एव न उतरै गिआनु उतारे धोइ ॥

राग आसा म० १ पृ० ४७२

जोगी जती तपी सन्यासी बहुतीर्थ भ्रमना ।
लुजित मुजित मोनि जटाधर अति तऊ मरना ॥

राग आसा । कबीर । पृष्ठ ४७६

काजी तै कवन कतेब बखानी ।
पढ़त गुनत ऐसे सभ मारे किनहूँ खबर न जानी ॥
॥ रहाउ ॥
सकति सनहु करि सुनति करीयै मैन बदउगा भाई ।
जउरे खुदाइ माहि तुर्क करैगा आप नहीं कटि जाई ॥
सुनति कीये तुर्क जो होइगा औरत का किआ करीयै ।
अर्ध शरीरी नारि न छोडै ताते हिन्दू ही रहीयै ॥
छाडि कतेब राम भजु बउरे जुलम करत है भारी ।
कबीरै पकरी टेक राम की तुर्क रहे पचि हारी ॥

राग आसा । कबीर पृष्ठ ४७७

वेद पढे पढि ब्रह्मे जन्म गवाइया ।

राग आसा कबीर पृ० ४७८

पाती तोरे मालिनी पाती पाती जीउ ।
जिस पाहन कउ पाती तोरै सो पाहन निरजीव ॥
पाषान गढि के मूरति कीनी दे कै छाती पाउ ।
जे एह मूरति साची है तउ गडनहारे खाउ ॥
भातु पहिति अरु लापसी करकरा कासारु ।
भागनहारे भोगिया इसु मूरति के मुख छारु ॥

राग आसा० कबीर पृ० ४७६

रोजा धरे निवाज गुजारै, कलमा भिसति न होई ।
सत्तरि काबा घट ही भीतर जे करि जानै कोई ॥

राग आसा० कबीर पृ० ४८०

हम घर सूत तनहि नित ताना कनि जनेऊ तुम्हारे ।
तुम्ह तउ वेद पढहु गाइत्री गोबिंद रिदै हमारे ॥

राग आसा० कबीर पृ० ४८२

रोजा धरै मनावै अलहु सुआद ति जीअर सघारै ।
आपा देखि अवर नहीं देखै काहे कउ झख मारै ॥

काजी साहिबु एक तोही महि तेरा सोचि विचारि
न देखै।
खबारे न करहि दीनके बखरे ताते जनमु अलेखै ॥
राग आसा० कबीर पृ० ४८३
सदा २ सो सेवीयै सभ महि रहै समाइ।
अवर दूजा किउ सेवीयै जमै तै मरि जाय ॥
राग गूजरी म० ३ पृ० ५०६
अत काल जो मदिर सिमरै अैसी चिता महि
जे मरै।
प्रेत जोनि वलि २ अउतरै।
राग गूजरी त्रिलोचन पृ० १५२६
दरवेशी को जाणसी विरला को दरवेसु।
जे घरि २ हँढे मगदा धृगु जीवणु धृगु वेसु ॥
राग बिहागडा म० ३ पृ० ५५०
हिन्दू मूले भूले अखुटी जाही।
नारदि कहिआ सि पूज कराई।
अधे गुगे अध अधारु।
पाथर ले पूजहि मुगध गवार ॥
ओहि जा आपि डुबे तुम कहा तरण हारु ॥
राग बिहागडा म० १ पृ० ५५६
दुबिधा न पडउ हरि बिनु होरु न पूजउ
मढ़ै मसाणि न जाई। राग सोरठ म० १ पृ०६३४
सासतु वेद बकै खडो भाई कर्म करहु ससारी।
राग सोरठ म० १ पृ० ६३५
बुत पूज पूज हिन्दू मुये, तुरक मूये सिर नाई।
ओइ लेजारे ओइ ले गाडे, तेरी गति दुहू न पाई ॥
राग सोरठ कबीर पृ० ६५४
पूज शिला तीरथ बनवासा।
भरमत डोलत भये उदासा ॥
राग धनाश्री प १ पृ० ६८६

तीरथि न्हावण जाउ तीरथु नामु है।
तीरथु शब्द विचारु अतर गिआनु है ॥
राग धनाश्री म १ पृ० ६८७
नीच जाति हरि जपति उत्तम पदवी पाइ।
पूछहु विदुर दासी सुतै किसनु उतरिआ घरि
जिसुजाय।
रविदास चमारु उसतुतिकरे हरि कीरति नि
मिष इक गाई ॥
पतत जाति उत्तम भइया चार वर्ण पये
पग आई ॥
सूही राग म ४ पृ० ७३३
ब्रह्म बिसनु महादेउ त्रैगुण रोगी विचि
हउपै कार कमाई।
सूही राग म ४ पृ० ७३५
घरमहि ठाकुर नदरि न आवै
गलमहि पाहणु लै लटकावै ॥
भरमे भूला साकतु फिरता
नीरु बिरोलै खपि खपि मरता ॥ रहाउ ॥
जिस पाहन कउ ठाकुरु कहता।
ओहु पाहणु लै उस कउ डुबता ॥
गुनहगार लूण हरामी।
पाहण नाव न पारगिरामी ॥
राग सूही म ५ पृ ७३८-३६
हिन्दू अन्धा तुरकू काणा।
दुहाते गिआनी सिआणा।
हिन्दू पूजै देहुरा मुसलमाणु मसीत,
नामे सोई सेविआ जह देहुरा न मसीत ॥
राग गोंड नाम देव पृ० ८७५-७५
भसम चढ़ाय करहि पाखण्डु।
माया मोहु सहहि जम डडु ॥

विन्दु न राखहि जती कहावहि।
माई मागत त्रै लोभावहि ॥
मुद्रा फटक बनाई कानि ।
मुक्ति नहीं विद्या विज्ञान ॥इत्यादि
राग रामकली म १ पृ १०३।

जाति का गर्व न करीअहु कोई।
ब्रह्म विन्दे सो ब्राह्मण होई ॥
जाति का गर्बु न करि मूर्ख गवारा।
रागभैरव म० ३ पृ० ११२८

जो पाथर को कहते देव।
ताकी वृथा होवे सेव ॥
जो पत्थर की पाई पाय।
तिसकी घाल अजाई जाय ॥
अंतरि देव न जानै अंधु।
भ्रम का मोहिआ पावै फधु ॥
न पाथर बोलै ना किछु देइ।
फोकट कर्म निष्फल है सेव ॥
जो मृतक को चन्दन चढ़ावै।
उस ते कहहु कवनि फल पावै ॥
जो मृतक को विष्टा माहि रुलाई।
ता मृतक का क्या घट जाई ॥
कहत कबीर हौं कहौं पुकार।
समझ देख साकत गवार ॥
राग भैरव प० ५ तथा कबीर पृ० ११६०

(इस भाति की कठोर तथा गदे उदाहरणों व गालियों से की हुई समालोचना सत्यार्थ प्रकाश में कहां है ? मास्टर तारासिंह जी तथा उनके अनुयायी बताए।

जब सभ महि एकु खुदाइ कहत हो तौ किउ मुरगी मारे।

मुला कहहु नि आउ खुदाई।
तेरे मन का भरमें न जाई ॥

पकरि जीउ आनिया देह विनासी, माटी को बिस्मल कीआ।

किआ उजू पाक कीआ मुह धोया किया मसीति सिरु लाइआ ॥ इत्यादि।

विभास प्रभाती कबीर पृ० १३५०

कबीर माइ मूडउ तिह गुरु कीजाते भरमु न जाइ।
आप डुबे चहुवेद महि चेले दिये बहाइ॥पृ०१३७

कबीर पाहन परमेसुर कीआ पूजै सभु ससार।
इस भरवासे जो रहे बूड़े काली धार ॥
पृ० १३७१

कबीर मुला मुनारे किआ चढहि
साई न बहरा होइ।
जा कारन तू बाग देहि, दिल ही—
भीतर जाइ॥ पृ० १३७४

कबीर हज कावे हउ जाइआ—
आगे मिलिआ खुदाइ।
साई मुझ सिउ लरि परिआ—
तुझे किनि फुरमाई गाइ ॥
पृ० १३७५

कबीर भाग माछुली सुरा पान—
जो जो प्रानी खाहि।
तीरथ व्रत नेम कीये ते—
सभै रसातल जांहि॥ पृ० १३७७

कबीर बामनु गुरु है जगत का—
भगतन का गुरु नाहि।
अरझि उरझि के पचि मुआ—
चारहु वेदहु माहिं ॥
पृ० १३७७

ऊपर जितने प्रमाण लिखे गये हैं इन्ही का ग्रन्थ साहब में बार बार आगमन हुआ है विस्तार भय से सभी का सञ्चय नहीं किया। न सञ्चय करने का प्रयोजन ही है। प्रयोजन तो खण्डन मण्डन का था सो पूर्वोक्त लेख से प्रत्येक समझ सकता है। यदि ग्रन्थ साहब की समालोचना विस्तार से की जाय तो एक दूसरा ग्रन्थ साहब बन सकता है। प्रथम तो सिक्खों के मूल मन्त्र को देखो तो ज्ञात हो जायगा कि ग्रन्थ साहब मे क्या है? क्योंकि जो मूल मन्त्र है उसी का विस्तार होगा मूल मन्त्र में "अकाल मूरत" कहा है अर्थात् परमात्मा की मूर्ति नहीं है। अतः जिज्ञासु की तसल्ली के लिये काफी प्रमाण दिये जा चुके हैं, क्योंकि केवल मूल मन्त्र से सन्तुष्टि होना इस सत्यार्थ प्रकाश संघर्ष काल मे अनुचित है। आशा है विचारशील सिक्ख भाई मास्टर तारासिंह जी आदि के सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन का कभी साथ न देंगे॥

सम्पादकीय

मि० गजदर का अनर्गल भाषण—

१९ अगस्त के समाचार पत्रों मे निम्न समाचार पढ कर आर्य जनता के हृदय में विक्षोभ उत्पन्न हो गया कि 'पंजाब मुस्लिम लीग द्वारा आयोजित एक सभा में एक प्रस्ताव के द्वारा भारत सरकार और मुस्लिम बहुल प्रान्तों की सरकारों से 'सत्यार्थ प्रकाश' के १४वें समुल्लास को जब्त कर लेने का अनुरोध किया गया। सिन्ध के गृहसचिव श्री एम एच गजदर ने कहा कि सिन्ध सरकार ने इस मामले को अपने कानूनी सलाहकारों के सुपुर्द किया था। उनकी सम्मति मे सत्यार्थ प्रकाश को जब्त किया जा सकता है क्योंकि उस मे मुसलमानों तथा अन्य जातियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाली सामग्री वर्तमान है। तथापि आगे आपने कहा कि अपने हिन्दू सहयोगियों की प्रार्थना पर हम ने इस प्रश्न को भारत सरकार के निश्चय पर पर छोड दिया क्यों कि यह मामला अखिल भारतीय महत्त्व का है। श्री गजदर ने कहा कि **चूंकि सत्यार्थ प्रकाश धर्म पुस्तक नहीं है इसलिये इसे जब्त किया जा सकता है।"**

सिन्ध सरकार की ओर से जून मास के अन्तिम सप्ताह में जब यह सूचना पत्रों में प्रकाशित हुई थी कि वह सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती के सम्बन्ध मे प्राप्त आवेदन पत्रों पर विचार कर रही है तब समस्त आर्य जगत् में (जिस में धर्म प्रेमी लाखों हिन्दू भाई भी सम्मिलित थे) जो असन्तोष की ज्वाला प्रज्वलित हो उठी और

जिसके परिणाम स्वरूप सिन्ध सरकार ने ८ ७ ४३ को समाचार पत्रों में यह घोषणा करदी कि वह सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध कोई कार्यवाही करने का विचार नहीं रखती आर्यों का विश्वास था कि सिन्ध या कोई भी सरकार इस प्रकार का अविवेक पूर्ण विचार न करेगी न इस की सिफ़ारिश करेगी किन्तु सिन्ध सरकार के गृह सचिव माननीय मि० गजदर के ऊपर उद्धृत भाषण से (यदि उसकी पत्रों में प्रकाशित रिपोर्ट ठीक है) प्रतीत होता है कि अभी तक उसने आर्य जनता के धार्मिक और सामूहिक बल को पूर्णतया नहीं समझा और वह भारत सरकार द्वारा इस प्रकार के अविवेक पूर्ण, आर्य (हिन्दू) जनता की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कुठाराघात करने वाले कार्य का करवाना चाहता है। सिंध सरकार के कानूनी सलाहकारों ने सत्यार्थ प्रकाश की जब्ती के सम्बन्ध में जो सलाह दी हम उसे सर्वथा अमान्य समझते हैं। यदि सत्यार्थ प्रकाश को इस लिये ज़ब्त कराया जा सकता है कि उस मे मुसलमानों तथा अन्य जातियों की भावनाओं को ठेस पहुचानेवाली सामग्री विद्यमान है यद्यपि ऋषि दयानन्द ने इस बात को १४वें समुल्लास की अनुभूमिका में स्पष्ट कर दिया है कि 'यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य निर्णय के लिये लिखा गया है। न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठमूठ बुराई वा भलाई लगाने का प्रयोजन है जिसकी इच्छा हो वह माने वा न माने किसी पर बलात्कार नही किया जाता।'

इत्यादि, तो आर्य हिन्दू जनता को यह प्रश्न करने का अधिकार है कि क्या इस्लाम मे न विश्वास करने वालों (काफ़िरों) के प्रति अत्यन्त तिरस्कार सूचक तथा उनके साथ युद्ध तक की प्रेरक सामग्री कुरान मे विद्यमान नहीं है? मि० सेल कृत कुरान के अनुवाद से 'Kill the idolators where so ever you shall find them and take them prisoners and besiege them and lay wait for them in every convenient place' (Koran IX lo Sale's translation) Oh Prophet! *Wage war against the un believers and be severe unto them,* for their dwelling shall be hell (Koran IX 74 Sale's translation) If they turn back from the faith take them and kill them *where so ever you find them* (Koran IV 85 Sale s translation)

इत्यादि सैंकड़ों वाक्यों को उद्धृत किया जा सकता है किन्तु हमारे मुसल्मान भाई शायद उसके अथवा रौडवैल आदि के अनुवाद की (जो उसी आशय का है) प्रामाणिकता से इन्कार कर बैठें इसलिये हम सुप्रसिद्ध हसन निज़ामी कृत कुरान के उर्दू हिन्दी अनुवाद से कुछ उद्धरण देना पर्याप्त समझते हैं। "और मुसल्मानो! काफ़िरों से लड़ते रहो यहां तक कि फ़साद नामोनिशान को बाकी न रहे और दुहाई सारी खुदा की ही हो।"

(पा० वआलमू १० पृ० २४६)

"मुसल्मानो! इन किताब वालों में से भी जो लोग न खुदा पर पूरा ईमान रखते हैं और न प्रलय के दिन पर न सच्चे धर्म अर्था

इस्लाम धर्म को स्वीकार करते हैं उनसे भी लड़ो यहाँ तक कि ये अधीन और जलील होकर स्वयम् अपने हाथ से तुमको कर देने लगें।"

(पा० बअलम् १० पृ० २६८-२६६)

"ऐ पैगम्बर। काफिरों के साथ हथियार से जिहाद (युद्ध) करो और जहाँ तक बन पडे इन लोगों पर सख्ती करो।

संसार में तो इनकी सजा यह है और प्रलय में इनका ठिकाना नरक है और वह बुरा स्थान है।"

(पा० बअलम् १० पृ० २७८)

इस प्रकार की सामग्री के आधार पर यदि मुसलमानों से अन्य धर्मावलम्बी कुरान की जब्ती के लिये आन्दोलन करें क्या यह उचित होगा? नहीं क्योंकि इससे मुसलमान भाइयों की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कुठाराघात होता है। हां, मुसलमान बन्धुओं की इस मनोवृत्ति को बदलना अत्यावश्यक है ताकि जगत् में शान्ति रह सके। ऋषि दयानन्द की समालोचना का उद्देश्य यही था इसमे सन्देह नहीं।

यह कहना कि सत्यार्थ प्रकाश धर्म ग्रन्थ नहीं है सर्वथा अशुद्ध है। किसी पुस्तक के धर्म ग्रन्थ होने या न होने का निश्चय उस धर्म का मत के अनुयायी कर सकते हैं अन्य नहीं। जो मुसलमान, ईसाई, पारसी वा सिक्ख नहीं वे कुरान, बाइबल, जिन्द अवेस्ता या गुरु ग्रन्थ साहेब को अपना धर्म ग्रन्थ स्वीकार न करेंगे पर क्या इसी कारण इनका जब्त कराने का विचार किया जा सकता है। कभी नहीं। सत्यार्थ प्रकाश प्रकाश स्तम्भ है जिसने लाखों करोड़ों व्यक्तियों को ज्योति प्रदान की है, उनकी अन्दर की आंखें खोल दी हैं। ईश्वरीय ज्ञान वेद के तत्त्व को स्पष्ट सरल भाषा में प्रकट करनेवाले ग्रन्थों मे उसका स्थान सबसे ऊचा है क्योंकि उसके लेखक अमर कीर्ति योगिराज ऋषि दयानन्द हमारे ही नहीं बल्कि ऐन्ड्रू जैक्सन डैविस इत्यादि अमेरिकन योगियों के भी विचार में ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त (Inspired) महानुभाव थे। ऐसे हमारे पवित्र धर्म ग्रन्थ को कोई सरकार कानून का आश्रय लेकर भी हमसे छीन नहीं सकती। इसकी रक्षा के लिये समस्त आर्य सब प्रकार के त्याग और बलिदान के लिये उद्यत हैं जैसे कि आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने घोषणा की है। हमे विश्वास है कि इस बात को ध्यान में रखकर कोई सरकार इस पवित्र धर्म ग्रन्थ की जब्ती का विचार तक करने की मूर्खता न करेगी।

धर्म ग्रन्थों में खण्डन मण्डन—

यदि सत्यार्थ प्रकाश में खण्डन मण्डन होने के कारण उसे धर्म ग्रन्थ नहीं माना जा सकता और कट्टर मतावलम्बियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाला बताकर उसे जब्त कराया जा सकता है तो सभी धर्म ग्रन्थों पर यह दोष लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ हम जिन्द अवस्था, बौद्ध ग्रन्थ, बाइबल और कुरान को लेते हैं। पारसी मत के प्रवर्तक श्री जरदुश्त ने अपने समय मे प्रचलित देवताओं की पूजा का अत्यन्त प्रबल शब्दों में खण्डन किया। यहा तक कि उसके लिये वीदएवो। विदेव (देवों का विरोधी) इस शब्द का अवस्था मे अनेक स्थानों पर प्रयोग किया गया है।

यस्न नामक प्रसिद्ध पारसियोंके धर्मग्रन्थ भाग में जो वाक्य इस सम्बन्ध में पाये जाते हैं उनका अनुवाद 'Zoroaster' नामक पुस्तक के लेखक सुप्रसिद्ध पारसी विद्वान् प्रिन्सिपल वाडिया ने इन शब्दों में किया है। I forsake the Devas, the wicked, bad, wrongful originatioes of mischief, destructive and basest of beings I forsake the Devas and those like Deva
I forsake them hereby, publicly'

(Zoroaster P 38)

अर्थात् मैं देवों का परित्याग करता हू जो नीच, दुष्ट और शरारत के मूल कारण हैं, जो विनाशक और सब प्राणियों में सबसे नीच हैं। मै उन सब देवों और उनके सदृशों का परित्याग करता हूँ। मैं उनका खुले तौर पर सबके सामने परित्याग करता हूँ। इसी प्रकार यज्ञों मे पशु हिंसा आदि का प्रबल खण्डन अवस्था मे किया गया है।

बौद्ध ग्रन्थ—इसी प्रकार बौद्ध ग्रन्थ धम्म पद आदि मे जाति भेद, यज्ञों मे पशु हिंसा आदि का प्रबल शब्दों में खण्डन पाया जाता है। जन्म सिद्ध जाति भेद का खण्डन करते हुए श्री गौतम बुद्ध ने कहा है—

न जटाहि न गोत्तेन न जच्चा होति ब्राह्मणो।
यम्हि सच्चञ्च धम्मो च, सो सुची सो च ब्राह्मणो॥

(धम्म पद ब्राह्मण वग्गो श्लो० ३९३)

अर्थात् जटा धारण, ब्राह्मण गोत्र या ब्राह्मण कुल में जन्म आदि के कारण कोई ब्राह्मण नहीं होता। जिसमें सत्य और धर्म हैं वही पवित्र है और वही ब्राह्मण है।

किं ते जटाहि दुम्मेध किं ते अजिन साटिया।
अब्भन्तरं ते गहनं बाहिरं परिमज्जसि॥

(धम्म पद श्लो० ३९४)

अर्थात् हे मूर्ख जटाए रखने और मृग चर्म धारण करने आदि से तुझे क्या लाभ है? ऊपर ऊपर से तूने अपने को शुद्ध बना रक्खा है जब कि तेरे अन्दर अन्धकार भरा हुआ है। इत्यादि

बाइबल—

पुराने वसीयत नामे (Old Testament) मे देव तथा मूर्ति पूजकों की घोर निन्दा करते हुए यहा तक लिखा है कि--

'If thy brethren, the son of thy mother or thy daughter or the wife of thy bosom or thy friend, entice the secretly saying 'Let us go and serve other gods' thou shalt *surely kill him,* thine hand shall be *first to put him to death* and after wards the hand of all the people (Deuteronomy XIII 6-10)

अर्थात् यदि तेरे भाई, तेरा पुत्र, पुत्री, पत्नी, मित्र जो भी तुझे फुसलाकर कहे कि चलो हम दूसरे देवों की पूजा करें तो तेरा कर्तव्य है कि तू निश्चय से उनको मार डाल। तेरा हाथ उसे मारने के लिये सबसे पहले उठे। पीछे दूसरे लोग उस पर हाथ चलाकर उसके जीवन का अन्त कर दें।

'Cursed be the man that maketh any graven image, any graven and molten image, an abomination unto the Lord (Deut XXVII 15)" "O

do not this abominable thing that I hate" (Jeremiah XLIV 5).

अर्थात् जो ईश्वर की किसी प्रकार की मूर्ति बनाता या खुदाता है उसको शाप लगे। यह कार्य ईश्वर की दृष्टि में अत्यन्त घृणित है। ......हे मनुष्यो। इस निन्दित (मूर्ति पूजा) कार्य को न करो जिससे मैं घृणा करता हूँ॥

नये वसीयत नामे या New Testament में भी इस प्रकार के खण्डनात्मक वाक्य अनेक हैं। ईसामसीह को हमारे ईसाई भाई शान्ति और प्रेम का अवतार मानते हैं पर उसने उस समय के पुरोहितों (Scribes and Pharisees) के लिये Hypocrites, ye fools and blind, ye blind guides, ye serpents, ye generation of vipers, how can ye escape the damnation of hell ?" Matthew)

ऐ मक्कारो, मूर्खों और अन्धो, ऐ अन्धे मुखियो, ऐ सापों और विषैले साप के बच्चो। तुम कैसे नरकाग्नि से बच सकते हो इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया है। क्या ये कोमल शब्द हैं जो ऋषि दयानन्द के शब्दों पर इतना आक्षेप किया जाता है यद्यपि उनमें इतनी कठोरता नहीं। वहां तो युक्तियों का प्रयोग है।

जॉन के सुसमाचार (Gespeo according to John) तथा Acts of the Apostles इत्यादि में पाये जाने वाले 'He who does not believe in Christ is condemned already, because he has not believed in the only begotten Son of God." (John) Neither is th re salvation in any other name but the name of Jesus underheaven, given unto men where by we may be saved„ (Acts of the Apostles)

अर्थात् जो ईसा में विश्वास नहीं करता उसकी घोर दुर्गति होती है। ईसा के नाम को छोड़कर और जगत् में कोई नाम नहीं जिस से हमारी रक्षा हो सके इत्यादि वाक्य संकुचित मनोवृत्ति तथा असहिष्णुता को सूचित करते हैं।

कुरान और गुरु ग्रन्थ साहेब के खण्डनात्मक कुछ वचनों को हम से पूर्व उद्धृत किया जा चुका है अतः इस विषय में फिर लिखने की आवश्यकता नहीं। वस्तुतः बात यह है कि सब प्रेम पूर्वक मिलकर परस्पर विचार विनिमय से सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करने का प्रयत्न करें इसी में सब का कल्याण है॥

एक अभिनन्दनीय घोषणा—

पाठक अन्य अखिल भारतीय हिन्दू धर्म सेवा सङ्घ के प्रधान मन्त्री श्री पं० रामशंकर त्रिपाठी जी की घोषणा सत्यार्थ प्रकाश के विषय में पढ़ चुके हैं जिसमें उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश को सारी हिन्दू जाति का धर्मग्रन्थ बताते हुए उसकी जब्ती के विचार का तीव्र प्रतिवाद किया है। हम इस घोषणा का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। हमारा विश्वास है कि सभी विचारशील व्यक्ति इस घोषणा का स्वागत करेंगे। आज से कुछ वर्ष पूर्व मालाबार (मद्रास) के एक कट्टर ब्राह्मण श्री रंग ऐयर ने Father India में सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में यह घोषणा की थी "The Satyarth Prakash by Rishi Dayananda is *the Bible of every Hindu* to day, educated and un-educated, denizens of towns and residents of villages." (Father India, P. 116).

अर्थात् ऋषि दयानन्द-कृत सत्यार्थ-प्रकाश आज शिक्षित अशिक्षित नागरिक और ग्रामीण सब हिन्दुओं के लिये ईसाइयों के लिए बाइबल के समान धर्मग्रन्थ है। हमें विश्वास है कि सत्यार्थ-प्रकाश जैसे पवित्र धर्म-ग्रन्थ की रक्षा के प्रश्न पर सब विचारशील व्यक्ति मिल जायेंगे।

सत्यार्थ प्रकाश (उर्दू अनुवाद) आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब स्व० श्री पं० चमूपति जी

कृत सत्यार्थ प्रकाश के उर्दू अनुवाद का नया संस्करण छपवा रही है यह जानकर हमें प्रसन्नता हुई। इसके लिए १० हजार रु० की अपील कीगई है। यह हर्ष की बात है कि आर्यसमाज साबुन बाजार लुधियाना ने इस पवित्र कार्यार्थ २००) पंजाब प्रतिनिधि सभा के पास भेज दिये हैं। अन्य आर्य समाजों को भी इस विषय में लुधियाना आर्य समाज का जिसमें श्री लब्भूराम जी जैसे उत्साही कार्यकर्ता हैं अनुकरण करना चाहिये।

सत्यार्थ प्रकाशाङ्क:—

'सार्वदेशिक' का सत्यार्थ प्रकाशाङ्क पाठकों के हाथ मे शीघ्र पहुँचेगा। ४ से १० सितम्बर तक आर्य जगत् में सर्वत्र मनाई जानेवाली सत्यार्थ प्रकाश जयन्ती से पूर्व इसे प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जा रहा है ताकि उस अवसर पर इससे लाभ उठाया जा सके। इस अङ्क को सफल बनाने में जिन सुयोग्य विद्वानों और कवियों का सहयोग हमें प्राप्त हुआ है हम उन सबको हार्दिक धन्यवाद देते हैं। श्री विष्णुदत्त जी के लेख में भावावेश में प्रयुक्त प्रतिशोध सूचक कुछ वाक्य तथा श्री विकलजी की कविता का चतुर्थ पद्य उपेक्षणीय है। प्रेमी ग्राहक महानुभावों से हम आशा करते हैं कि वे यदि 'सार्वदेशिक' को उपयोगी पाते हैं तो उसके वर्ष में कम से कम ५ नये ग्राहक बनाने का उद्योग करके धर्म प्रचार के पुण्य भागी बनेंगे। जिन महानुभावों ने 'सत्यार्थ प्रकाशाङ्क' मगवाया है आशा है वे पत्र के स्थिर ग्राहक बनकर सञ्चालकों के उत्साह को बढाएगे।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति

बगाल मे पीड़ितों की सहायता—

'सार्वदेशिक' पत्र के छपते छपते कलकत्ता आर्य समाज के प्रधान और मन्त्री सेठ दीपचन्द्र जी और श्री रघुनन्दन जी के नाम से निम्न तार सार्वदेशिक सभा कार्यालय में प्राप्त हुआ है

'Aryasamaj Relief Society free kitchen Destitute house arranged Broad cast appeal for funds'

अर्थात् आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी, धर्मार्थ भोजनालय तथा सकटापन्न शरण गृहों का प्रबन्ध कर दिया गया है। सर्वत्र आर्थिक सहायता के लिये अपील कीजिये।

बगाल की वर्तमान अत्यन्त दयनीय अवस्था किसी से छिपी नहीं। इसे दूर करने के लिये उदार सहायता देना प्रत्येक का कर्तव्य है जो तुरन्त सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली अथवा मन्त्री आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी १९ कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता के पते पर भेजनी चाहिये।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

कन्या गुरुकुल देहरादून

कन्या गुरुकुल महा विद्यालय देहरादून का वार्षिकोत्सव ७ ८, ९ १० अक्टूबर को दशहरे के दिनों में समारोह सहित मनाया जाएगा। इस उत्सव की तय्यारियां प्रारम्भ हो गई हैं। इस कार्य के लिए श्री प० धर्मवीर जी वेदालंकार मुख्य धिष्ठाता गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की विद्यासभा ने कन्या गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता के रूप में उत्सव काल तक कार्य करने के लिए नियुक्त किया है। श्री मुख्याधिष्ठाता जी तथा श्रीमती विद्यावती जी आचार्या कन्या गुरुकुल ने स्त्री शिक्षा प्रेमी धनी मानी सज्जनों और देवियों से अपील की है कि वे गुरुकुल को इस महगाई के विकट समय में पुष्कल आर्थिक सहायता देकर यश और पुण्य के भागी बनें। स्नानागार, भोजन शाला तथा ब्रह्मचारिणियों के निवास के स्थिर प्रबन्ध की सख्त जरूरत है। इस के लिये कम से कम ३०००० रु० की आवश्यकता है। उदार धर्म प्रेमी सज्जन इस कमी को शीघ्र ही पूर्ण कर देंगे, ऐसी हमें पूर्ण आशा है॥

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।